साप्ताहिक आर्य मर्यादा

जालन्धर

आचार्य रामदेव जी

साप्ताहिक आर्य मर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर का मुख पत्र

वर्ष 10, अंक 15, 10 अप्रैल 1977,
तदनुसार 28 चैत्र, सम्वत् 2033,
दयानन्दाब्द 153

वर्तमान कार्यालय—आर्य समाज अड्डा होशियारपुर
जालन्धर

तार—आर्य प्रतिनिधि दूरभाष—5877
वार्षिक शुल्क 12) रु०

इस अंक का मूल्य एक रुपया

सम्पादक
श्री वीरेन्द्र एम० ए०
सभा मन्त्री

व्यवस्थापक
श्री वीरेन्द्र भारती

प्रस्तावना

श्रद्धेय स्वर्गीय आचार्य रामदेव जी का आर्य समाज के इतिहास में एक विशिष्ट स्थान है। उन्होंने अपना सारा जीवन आर्य समाज की सेवा और गुरुकुल कांगड़ी के निर्माण में ही लगाया था। देहावसान से कुछ समय पहले वह कन्या गुरुकुल देहरादून की स्थापना भी कर गये थे। यह संस्था उनको अमर स्मृति के रूप में आज भी चल रही है। आचार्य जी महर्षि दयानन्द के सच्चे अनुयायी थे और उन्हें हर समय वैदिक सिद्धान्तों के प्रचार व प्रसार की धुन लगी रहती थी। उनका अध्ययन बड़ा गम्भीर व विस्तृत था और वह विविध विषयों के पारदर्शी विद्वान्, व्याख्याता और सुलेखक थे। उनका जीवन सबके लिए प्रेरणादायक था।

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब कुछ समय से यह प्रयास कर रही है कि उनकी एक जीवनी प्रकाशित की जाये। सम्प्रति उनके कुछ लेख जो कि उन्होंने १९२६ में 'विशाल भारत' नामक मासिक पत्रिका में प्रकाशित किये थे, संकलित करके पुस्तक रूप में प्रकाशित किये जा रहे हैं। आशा है कि आर्य जनता इन लेखों के द्वारा श्री आचार्य जी के जीवन की एक झांकी देख सकेंगे, विशेषकर उनका लेख, एक भिक्षुक की झोली पढ़ने योग्य है, उससे अनुमान लगाया जा सकता है कि उन्होंने गुरुकुल कांगड़ी के नेता के लिये क्या कुछ किया ?

आचार्य पृथ्वीसिंह आजाद

प्रधान

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर

समर्पण

यह अंक समर्पित है आर्य जगत् के महान् विद्वान्, भारतीय इतिहास के मर्मज्ञ पण्डित, प्रभावशाली वक्ता, त्यागी, एवं तपस्वी, ओजस्वी व्यक्तिवान् तथा गुरुकुल कांगड़ी के यशस्वी आचार्य, आचार्य रामदेवजी को जिन्होंने अपने जीवन का एक-२ क्षण आर्य समाज के लिये अर्पित किया। आचार्य रामदेव जी आर्य समाज की उन विभूतियों में से थे जिनके नाम पर वास्तविक रूप से न केवल आर्य समाज अपितु भारतीय संस्कृति और सभ्यता का अभिमानी प्रत्येक व्यक्ति गर्व कर सकता है। अपनी युवावस्था से लेकर जीवन के अन्तिम काल तक वे अपने उद्देश्य की पूर्ति में लगे रहे।

स्वतन्त्र्य संग्राम के महान् सेनानी, गांधी जी के अनन्य भक्त, नारी शिक्षा के समर्थक और अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द जी के धर्म-पुत्र आचार्य रामदेव जी की ही लिखित कुछ रचनाएं हम आपकी सेवा में स्वामी श्रद्धानन्द बलिदान अर्द्ध-शताब्दी के उपलक्ष्य में यह भेंट कर रहे हैं जोकि १६२६ में मासिक पत्र 'विशाल भारत' में 'मेरे जीवन के कुछ पृष्ठ' नामक शीर्षक से प्रकाशित हुये थे।

काश ! कि हम भी उनके जीवन से कुछ प्रेरणा प्राप्त कर आर्य समाज की सेवा करने का व्रत ग्रहण करें।

—वीरेन्द्र भारती

स्वर्गीय आचार्य रामदेव

(ले० —माननीय स्वर्गीय श्री म० कृष्ण जी पूर्व सभा प्रधान)

स्वर्गीय आचार्य रामदेव और मैं सहपाठी थे। वे भी डी० ए० वी० कालेज के फर्स्ट इयर में पढ़ते थे और मैं भी। वे एफ० ए० पास करने के पश्चात् चले गये और उन्होंने प्रायवेट तौर पर से बी० ए० पास किया।

आर्य समाज के महान् नेता आचार्य रामदेव जी का जीवन कितना महान् था और जितनी उन्होंने आर्य समाज की जी-जान से सेवा की उसके उदाहरण इतिहास में बहुत कम मिलते हैं। उनके सहपाठी और आर्य जगत् के महान् नेता माननीय स्वर्गीय महाशय कृष्ण जो आचार्य रामदेव जी की मृत्यु के समय आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान थे, ने साप्ताहिक 'आर्य' ६ दिसम्बर १९५४ में एक खोजपूर्ण लेख लिखा था, पाठकों की दिलचस्पी के लिये लेख यहां उद्धृत किया जा रहा है। आशा है पाठकों को यह लेख पसन्द आयेगा।

—वीरेन्द्र भारती

बी० ए० पास करने के पश्चात् मैंने आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के अंग्रेजी साप्ताहिक पत्र का सम्पादन सम्भाला और वे ट्रेनिंग कालेज में एस० ए० वी० का डिप्लोमा लेने को आये। इस प्रकार हमारा परस्पर सम्बन्ध लगभग ४० वर्ष रहा। हमारा सम्बन्ध बड़ा घनिष्ठ रहा। भाई-

भाई के लिये कोई इतना त्याग न कर सकता था, जितना वे मेरे लिये करते रहे। मुझे स्मरण है कि १६२६ में जब मैं मार्शिल्ला के दिनों में जेल में डाल दिया गया, उन्होंने मेरे लिये क्या कुछ किया ? कभी वे मेरे लिए पं० मोतीलाल नेहरू से मिलने इलाहाबाद गये और कभी कहीं और। जितने दिन मैं जेल में रहा, वे मेरे लिए भटकते रहे। मैंने उनके गुण भी देखे और दोष भी। दोष किस मनुष्य में नहीं होते, किन्तु उनके दोष तो उनकी मृत्यु के साथ समाप्त हो गए, किन्तु उनके गुण बार-बार याद आते हैं। उनका सबसे बड़ा गुण यह था कि जिसे वे अपना मित्र या भाई बना लेते थे, उसके लिए सर्वस्व त्यागने के लिए तैयार होते थे। धन का त्याग तो उनके लिए साधारण सी बात थी। वे अपने समय तथा त्याग के लिए भी सर्वथा उद्यत रहते थे। जिसे वे एक बार अपना समझ लेते थे उसके हो लेते थे। और उस पर पूर्ण विश्वास रखते थे। यह तो सम्भव था कि वह इनके साथ विश्वासघात कर जाएं, किन्तु यह सम्भव न था कि ये अपने किसो मित्र या भाई से विश्वासघात करें उन्होंने ऋषि दयानन्द को अपना मन तथा मस्तिष्क भेंट किया और उनके ही रहे। उनके जीवन में कोई ऐसा समय नहीं आया, जब ऋषि के प्रति उनकी श्रद्धा में फर्क आया हो। अन्तिम समय तक वे उनके अनन्य भक्त रहे और उनकी भक्ति का यह परिणाम था कि उन्होंने आर्य समाज की सेवा में तन-मन और धन लगा दिया। उनमें असाधारण योग्यता थी और वे भी कई विषयों में। यदि वे राज्य की सेवा स्वीकार करते तो वे शिक्षा विभाग में उच्च से उच्च पदवी प्राप्त कर सकते थे। किन्तु उन्होंने ग्रेजुएट बनने और एस० ए० वी० का डिप्लोमा लेने के पश्चात अपनी सेवा गुरुकुल के अर्पण कर दी। वे उसके आजीवन सदस्य हो गए। उन्हें गुरुकुल की सेवा २० वर्ष करनी थी, किन्तु वे इससे भी अधिक काल तक उसकी सेवा करते रहे और जब उसकी सेवा से मुक्त हुए तो कन्या गुरुकुल की सेवा में लग गए और उसकी सेवा करते-२ ही

उन्होंने प्राण दे दिए इस प्रकार उन्होंने सारा जीवन आर्यसमाज की सेवा में लगा दिया। वे सारी आयु गुरुकुल तथा आर्य समाज से निर्वाह लेकर उसकी सेवा करते रहे। इसलिए उनके पास धन न हो सकता था न हुआ। इतना मैं अपने वर्षों के आधार पर कह सकता हूं कि उनमें यह साहस था कि यदि उनके पास धन होता तो वे लाखों रुपया आर्य समाज के अर्पण कर देते। रुपये को मिट्टी समझते थे। मैंने आचार्य रामदेव जी जैसा उदार तथा दानी बहुत कम देखा है। वे अपनी समर्थ से बढ़ कर दूसरों के लिये व्यय करने को तत्पर रहते थे और यही कारण है कि उनके अपने शब्दों में उनकी सारी पूंजी उनकी जेब में रहती थी।

पिछले दिनों रफी अहमद किदवाई का देहांत हुआ तो समाचार पत्रों में यह छपा कि वे ८०, हजार ऋण छोड गए हैं जो उनके मित्रों ने अदा किया है। इस बात के लिए किदवाई साहब की सराहना की गई है। आचार्य रामदेव ने अपने जीवन में उतना ही कमाया जितना कि किदवाई साहब को मिलता रहा है। किन्तु दूसरों की सहायता करने में वे श्री किदवाई से पीछे न थे। अन्तिम समय तक पेशगी पर ही गुजर होती रही। जब उनका अन्तिम समय आया तो उनके पास कोई पूंजी न थी, जिससे वे अपना इलाज कर सकते। यह जिम्मेवारी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब ने अपने ऊपर ली। सारांश यह कि आचार्य रामदेव ने अपनी युवावस्था में त्याग का जीवन व्यतीत करने का निश्चय किया और अन्त तक उस पर आरूढ़ रहे। उन्होंने अपना मन आर्य समाज की भेंट किया। दिन और रात के २४ घण्टे वे आर्यसमाज के हित का जीवन व्यतीत करते रहते थे। यहां तक आज कहा जा सकता है कि वे आर्य समाज के लिए पागल हो रहे थे। उसके लिए ये जीते थे और उसके लिये ही वे मरे। इन अर्थों में वे शहीद न थे कि आर्यसमाज के किसी शत्रु ने उन्हें गोली का निशाना नहीं बनाया। किन्तु इन अर्थों में वे निःसन्देह शहीद थे कि उन्होंने आर्य समाज की सेवा के लिए अपना स्वास्थ्य नष्ट कर लिया। वर्षों अवस्थ रहे। उनके रक्त का चाप बढ़ गया था। उनकी अवस्था यह हो गई थी कि औषधि बिना उन्हें रात को

नींद न आती थी। फिर भी वे आर्यसमाज अश्वमेध पुर के वार्षिक उत्सव पर गए। उनका स्वास्थ्य अच्छा न था। डाक्टर ने उन्हें देखा तो उनके रक्त का चाप बढ़ा हुआ था। उस दिन उनसे कहा कि आप भाषण न दें। उन्होंने उत्तर दिया कि 'मेरे भाषण की घोषणा हो चुकी है। इस लिए मैं भाषण देने से रुक नहीं सकता।' उन्होंने भाषण दिया और पहले शब्द यह कहे कि 'मेरे डाक्टर का परामर्श यह है कि मैं भाषण न दूं। किन्तु यदि आर्यसमाज की सेवा में प्राण निकल जाएं तो मेरे लिए सौभाग्य की बात होगी।' उन्होंने नेचर की चेतावनी की परवाह न की और नेचर ने उन्हें दण्ड दिया। ऐसे बीमार हुए कि फिर अच्छे न हुए।

वे और मैं आर्यसमाज जालन्धर के उत्सव पर इकट्ठे हुए। हम दोनों स्वर्गीय ला० वृन्दावन सोंधी के गृह पर ठहरे हुए थे। रात्रि को हम दोनों के भाषण हुए। पहले मेरा और फिर उनका। उन्होंने अपने भाषण के लिए डेढ़ घन्टा लिया। घर आए तो नींद की औषधि लेकर लेट गए। एक घन्टे के पश्चात उन्होंने बिजली का लैम्प जगा दिया। मैं भी जाग पड़ा और मैंने पूछा, 'क्या बात है?' उन्होंने उत्तर दिया कि 'शरीर टूट रहा है। नींद नहीं आ रही। नींद की और औषधि ले रहा हूं। १५ ग्रान पहले ले चुके थे, १० ग्रीन उन्होंने और ली। मैंने कहा कि जब आपका शरीर सहन नहीं कर सकता तो आप फिर भाषण क्यों देते हैं? और? भाषण भी इतना लम्बा।

दूसरे दिन वे हरिद्वार चले गए और मैं लाहौर चला गया। हरिद्वार जाते हुए उन्हें अर्द्धरंग का दौरा पड़ा, जो उनकी जानलेवा सिद्ध हुआ। मुझे हरिद्वार से पत्र आया कि उन्हें अर्द्धरंग हो गया। इस पर मैं लाहौर से देहली आया और स्वर्गीय ला० नारायणदत्त और मैं दोनों देहरादून पहुंचे, जहां आचार्य रामदेव जी थे। उसके पश्चात् वे कुछ काल जीवित रहे। किन्तु वे अपने मन तथा शरीर को पूरा विश्राम न देते थे। उस अवस्था में भी वे कन्या गुरुकुल की सेवा करते रहे और इधर उधर जाते भी रहे।

मुझे स्मरण है कि एक बार जब मैं सार्वदेशिक सभा की अन्तरंग सभा में सम्मिलित होने के लिए देहली आया तो वे भी यहीं थे। उस शिथिल शारीरिक अवस्था में भी मेरे साथ बलिदान भवन जाने की इच्छा

प्रकाट की ओर ले गए। उन्हें [illegible] भवन की सीढ़ियों पर चढ़ने में बड़ा कष्ट हुआ, किन्तु वे ऊपर पहुंच गए। १६३६ में जब हैदराबाद का सत्याग्रह हुआ, उनका रोग भयंकर रूप धारण कर रहा था। सत्याग्रह के लिए हैदराबाद जाने से पूर्व मैं दौरा करता हुआ देहरादून पहुंचा, तो वे उन दिनों गुरुकुल में थे, मैं उनसे मिला और हैदराबाद जाने के लिए आशीर्वाद मांगा। उन्होंने कहा कि 'जाओ और सफल होकर आना। यदि मेरा स्वास्थ्य ठीक होता तो मैं भी आपके साथ सत्याग्रहियों में होता।' मैं तो हैदराबाद चला गया। मेरे पीछे उनका स्वास्थ्य बिगड़ता गया और जब मैं वहां लौटा तो उनका स्वस्थ्य बहुत बिगड़ चुका था। अक्तूबर १६३६ में वे चिकित्सा के लिए देहली आए और वे ला० नारायण दत्त जी की कोठी पर रहे। मैं भी उनसे मिलने के लिए लाहौर से देहली आया। दिसम्बर में उनका स्वास्थ्य बहुत ही बिगड़ गया। मैं देहली में था, जब यह सूचना मिली कि वे मृत्यु शैय्या पर पड़े हैं। यह सुनते ही ला० नारायणदत्तजी और मैं देहरादून पहुंच गए। वे उस समय मूर्छित थे। उनकी धर्मपत्नी जी ने उन्हें हिलाया। उन्होंने आंखें खोलीं तो देवी ने मेरी ओर इशारा करके यह पूछा कि ये कौन है? बड़ी कठिनाई से उनके मुह से यह शब्द निकले कि 'भाई साहब' मुझ से भी यह दृश्य न देखा गया और नेत्रों में अश्रु लिए हुए बाहर चला आया। उसके एक, दो दिन पश्चात् वे हमसे जुदा होगये।

मुझ से कोई पूछे तो मैं कहूंगा कि आचार्य रामदेव आर्यसमाज के लिये शहीद हुये और उन्होंने आर्यसमाज पर अपना सब कुछ वार दिया आर्यसमाज से उन्हें अथाह प्रेम था। ऐसा प्रेम बिरले पुरुषों में ही देखा जाता है। वे आर्य समाज पर अपना सब कुछ स्वाहा करने को तत्पर रहते थे। उनकी गणना आर्यसमाज के गिने चुने विद्वानों में थी और उन्होंने विद्वत मण्डली के समक्ष आर्यसमाज का उज्ज्वल तथा सुन्दर रूप पेश करने का भरसक यत्न किया। उनकी सेवाएं अनगिनत हैं। किन्तु यह एक लेख में गिनाई नहीं जा सकतीं।

— —

आचार्य रामदेव

तप त्याग मूर्ति मान थे आचार्य राम देव।
प्राचीनता की आन थे आचार्य राम देव॥

कर्मठ थे धर्मवीर थे आलिम थे बा अमल।
कोरे नहीं विद्वान थे आचार्य राम देव।

उत्कठ थे आर्य सभ्यता के परम पुजारी।
इस रागिनी की तान थे आचार्य राम देव॥

गुरुकुल शिक्षा प्रणाली को समझे थे अपने प्राण।
गुरुकुल के भी यह प्राण थे आचार्य राम देव॥

पश्चिम के किले तोड़ने की मैगजीन से।
गुरुदत्त के समान थे आचार्य राम देव॥

वैदिक था इष्ट धर्म दयानन्द थे गुरु।
इसका ही करते गान थे आचार्य राम देव॥

भारत में दृष्टि आयें मुलभा और गार्गी।
नारी अभीष्ठोत्थान थे आचार्य राम देव।

पश्चिम को चाहते थे वह पूरब का पुजारी।
इस स्वप्न पर बलिदान थे आचार्य राम देव॥

सत्यार्थ पाठ पढ़ाया था टालस्टाय को।
गुरु के गुरु यह महान थे आचार्य राम देव॥

'ठाकुर' ले भिन्न पुण्य कीर्ति स्वयं सिधारे।
यश किए हमको दान थे आचार्य राम देव॥

—ठाकुर उदय सिंह 'ठाकुर'

पंडित गुरुदत्त विद्यार्थी

मेरे पिता पंजाब के एक सुप्रसिद्ध रईस सरदार के अभिभावक और शिक्षक थे सरदार साहब के साथ मेरा बड़ा स्नेह का सम्बन्ध था। जिन दिनों मेरी आयु केवल आठ वर्ष की ही थी, उन दिनों आर्यसमाज के सुप्रसिद्ध नेता पंडित गुरुदत्त बीमार हुए। उनकी बीमारी बहुत बढ़ गई। कुछ लोग तो उनके जीवन से भी निराश हो चले थे। सरदार साहब पंडित गुरुदत्त के भक्तों में से थे। पंडित जी की बीमारी का समाचार सुन कर वह उन्हें अपने अपने साथ स्वास्थ्य सुधार के लिऐ मरी पहाड़ पर ले गऐ। मेरे पिता और मैं भी मरी में ही था। हम सब लोग एक ही मकान में रहते थे। मैं उन दिनों बालक ही था, इसलिए पंडित जी की संगति से कोई विशेष लाभ तो न उठा सका था तथापि मैं अपना काफी समय उन्हीं के पास व्यतीत किया करता था। पंडित जी भी मुझ से बहुत स्नेह करते थे।

एक दिन रात के समय बातचीत के सिलसिले में सरदार साहब ने पंडित जी से पूछा कि—बृहदारण्यक उपनिषद् में लिखा है कि गर्भवती स्त्री उक्षव का भक्षण करे उक्षव का अर्थ है बैल! लिहाजा उपनिषदों में मांस-भक्षण का विधान हैं और अवश्य प्राचीन आर्य गाय का मांस खाते थे।

पंडित जी ने इस बात का क्या जवाब दिया, यह मुझे स्मरण नहीं, परन्तु इतना मुझे अवश्य याद है कि पंडित जी उस समय उठ कर बैठ गए थे और खूब धारावाहिक रुप से सरदार साहब के तर्क का खण्डन कर रहे थे। सरदार साहब का भी वैदिक साहित्य में अच्छा प्रवेश था। अतः खूब गहरी शास्त्र चर्चा चल पड़ी। मैं उस शास्त्री चर्चा को भले ही समझ नहीं रहा था परन्तु उसमें मुझे सचमुच एक विशेष प्रकार का स्वाद अनुभव हो रहा था। जो थोड़ी बहुत बातें मेरी समझ में आती थी, उनमें से मुझे पंडित की का पक्ष अतीव प्रबल मालूम हो रहा था। मैं

एकटक स्थिर दृष्टि से पंडित जी के प्रतिभा-पूर्ण चेहरे पर दृष्टि जमाए हुए था। सरदार साहब जो सवाल करते थे, पंडित जी एकदम समाधान कर देते थे। इस वादविवाद में घंटों निकल गए। बीच में सरदार साहब ने मुझे सोने को कहा परन्तु उन्हें क्या मालूम था कि वह शास्त्रीय चर्चा पूरी समझ में न आने पर भी मैं कितना आनन्द अनुभव कर रहा था। पिता जी ने भी दो-चार बार मुझे सोने के लिए बुलाया परन्तु मैं उठा नहीं। ११ बजे सरदार साहब ने पंडित जी से कहा—पंडित जी आप बीमार हैं। आपके लिए अधिक देर तक जागना जचता नहीं। इतनी देर तक आपको जगाए रख कर मैंने भी अच्छा नहीं किया। इस समय आराम कीजिए। फिर कल यही चर्चा करेंगे। परन्तु इस तरह पंडित जी मानने वाले नहीं थे। उन्होंने कहा मेरी नींद अब मारी गई है। जब तक आपको ला-जवाब न कर दूंगा, तब तक नहीं सोऊंगा।

सरदार साहिब आखिर नौजवान ही थे। वादविवाद पुनः आरम्भ हो गया। दोनों वीर एक घण्टे तक डटे रहे। १२ बजे के बाद सरदार साहिब पूरी तरह से ला-जवाब हो गए। उन्होंने स्पष्ट शब्दों में स्वीकार कर लिया कि मेरी वह धारण भ्रान्त थी। तब कहीं वह वाद-विवाद समाप्त हुआ।

१८ वर्ष हुए अपने इतिहास का प्रथम खण्ड लिखते हुए मुझे उपनिषद के इसी प्रकरण पर लिखने का अवसर प्राप्त हुआ था। तब तक मुझे यह तो स्मरण नहीं रहा था कि पंडित गुरुदत्त ने इस शंका का क्या समाधान किया था परन्तु पंडित जी के धार्मिक उत्साह, प्रतिभा और समझाने की शक्ति का जो चित्र मेरे हृदय में उस समय अंकित हुआ था, वह आज तक भी कायम है। सच्ची लग्न का वह एक जीता-जागता उदाहरण था। इस छोटी-सी घटना ने मुझ बालक के कोमल हृदय पर स्थायी प्रभाव डाला। इसने मुझे अधिक और गम्भीर स्वाध्य के लिए प्रेरित किया। यहां तक कि बड़े होकर अधिक पढ़ना मेरी मनोवृत्ति का एक भाग बन गया। आज जब डाक्टर लोग मुझे मेरे स्वास्थ्य-सुधार के लिए कम पढ़ने का उपदेश देते हैं और प्रयत्न करने पर भी मैं अपने को इस आदेश के पालन में असमर्थ पाता हूं तो तब कभी कभी पंडित गुरुदत्त जी की उस दिन वाली घटना को कभी कभी स्मरण किया करता हूं।

आज से ३५-४० वर्ष पूर्व आर्यसमाज के सदस्यों की संख्या तो अब-की अपेक्षा कम थी, परन्तु उन दिनों आर्य पुरुषों में उत्साह और लग्न की मात्रा बहुत अधिक थी ! उन दिनों समाज के उत्सवों से जो नगर-कीर्तन हुआ करते थे, उसकी चमक-दमक तो शायद आज कल के समान न होती हो परन्तु उन दिनों के नगर-कीर्तनों में आर्य सज्जन जिस उत्साह प्रेम और लग्न का प्रदर्शन किया करते थे, वह अब कहीं दिखाई नहीं देती।

करीब ४८ वर्ष हुए पेशावर-आर्यसमाज का वार्षिकोत्सव देखने का मुझे अवसर मिला था। पंडित गुरुदत्त जी भी पेशावर ही में थे। मेरी पहाड़ वाली हमारी सारो टोली पेशावर चली आई थी। हम लोग एक किराये के मकान में रहते थे। पेशावर समाज के उस नगर-कीर्तन का दृश्य आज तक मेरा आंखों में अंकित है। नगर कीर्तन हो रहा था। सब सज्जन चाहे वे जवान हों, बूढ़े हों या बच्चे, खुल कर गा रहे थे। क्रम से अनेक भजन-मंडलियां गाती हुई प्रचार कर रही थीं। मैं भी एक मण्डली में सिर हिला-हिला असाधारण ऊंचे स्वर में गा रहा था। उन दिनों आर्यसमाज के उत्साह ने मुझ में गाने का शौक भी पैदा कर दिया था। आज जब कि मैं यत्न करके भी एक लाइन तक नहीं गा सकता, यह याद करके मुझे हैरानी होती है कि बचपन के उन सुहावने दिनों में मैं खूब दिल खोल कर गाता था और उन दिनों मेरा स्वर भी कम से कम बुरा नहीं था। कुछ लोगों ने देखा कि एक छोटा लड़का खूब ऊंचे स्वर से गा रहा है, वे अपना मन बहलाव करने का प्रलोभन न रोक सके। मुझे मण्डली से अलग बुला कर उन्होंने मुझे चारों ओर से घेर लिया। वे मुझे उत्साह दे-देकर मेरा गाना सुनने लगे। मैं भी निसंकोच भाव से अपना उन्मुक्त संगीत सुनाता रहा।

किसी ने कहा—एक लैक्चर भी दो।

मैं झट से लैक्चर के लिए भी तैयार हो गया। मूर्ति खण्डन पर गरज गरज कर मैं ने एक लैक्चर दे डाला। धीरे धीरे वे लोग खिसकने लगे। अब अपना लैक्चर समाप्त करके मैंने चारों ओर निगाह दौड़ाई, तब नगर-कीर्तन कहीं न दिखाई दिया। न मालूम सब मण्डलियां किस ओर को बढ़ गई थीं। पेशावर के बाजार में वैसे भी काफी भीड़ रहती है।

नगर के मार्ग मेरे जाने हुए नहीं थे इस भीड़ भट्टके में भटक गया और दो-एक घण्टे तक उसी तरह घूमता रहा।

सरदार साहिब ने जब अपने पास मुझे न देखा, तब उन्हें चिन्ता हुई। उन्होंने अपना नौकर मेरी तलाश में भेजा, परन्तु वह मुझे ढूंढ न सका। कुछ देर बाद भाग्य से उन लोगों में से, जिन्होंने मुझे अलग बुला कर मेरा गाना सुना था, दो चार व्यक्तियों ने मुझे भटकता देख कर पूछा तुम यहां कैसे घूम रहे हो ?

मैंने कहा—मुझे रास्ता याद नहीं रहा।

एक आदमी ने पूछा—तुम्हें कहां जाना है ?

मैंने कहा—आर्यसमाज के नजदीक।

उसी आदमी ने फिर पूछा—तुम किसके लड़के हो।

मैंने फिर उत्तर दिया—पंडित गुरुदत्त विद्यार्थी के पास ले चलो। मैं थक गया था। वह आदमी मुझे गोद में उठा कर आर्यसमाज मंदिर में ले आया। पंडित जी गैलरी में बैठ कर कुछ सज्जनों से बातचीत कर रहे थे। मुझे उस व्यक्ति ने उन्हीं के पास ले जा कर खड़ा कर दिया पंडित जी ने एकदम मुझे गले लगा कर पूछा—'कहां' तुम गुम हो गए थे।

मैंने उन्हें अपनी सारी कहानी कह सुनाई। मेरे व्याख्यान देने की बात सुन कर वे बड़े खुश हुए। मेरी पीठ ठोंक कर उन्होंने कहा—शाबास—। किसी समय तुम भी कुछ बन जाओगे।

पडित जी ने फिर पूछा—यह तो बताओ कि तुम यहां पहुंचे किस तरह ?

मैंने कहा—'आपका नाम लेकर।'

उन्होंने पूछा—मेरा नाम क्यों लिया। पिता जी का या
सरदार साहिब का नाम क्यों नहीं लिया ?'

मैंने बाल-सुलभ स्पष्टवादिता से कहा—उन्हें जानता ही कौन है। आप तो नेता हैं। आपको सभी लोग जानते हैं, यही सोच कर मैंने यह चालाकी की।'

पंडित जी खूब हंसे । प्यार से मेरे सिर पर हाथ-फेरते हुए उन्होंने कहा—'बड़े चालाक हो ।'

पंडित जी जब तक जीवित रहे, मुझ से बड़ा स्नेह करते रहे । वे मुझे योग्य बनाने के लिए जान बूझ कर वाद-विवाद छेड़ देते थे,— मुझ से तरह तरह के प्रश्न करते थे । बच्चों को प्यार करना उनके स्वभाव में शामिल था । अवसर पाकर बच्चों से ही खेलते । उनके मनोविनोद का यही सर्वश्रेष्ठ साधन था । अकसर अपनी जेब में खाने की कोई चीज भर वे बच्चों से कहते कि जो यह चीज छीन लेगा यह उसी की ही जाएगी । ऋषि दयानन्द के बाद आर्यसमाज का वह सर्वश्रेष्ठ नेता, पंजाब यूनिवर्सिटी का योग्यतम एम-ए-और विज्ञान के क्षेत्र का वह चमकता हुआ सितारा जब इस तरह उन्मुक्त-भाव से बच्चों में हिल-मिल कर खेलता था, तब वह दृश्य सचमुच पवित्रतम और स्वर्गीय होता था । आज जब मैं वह दृश्य स्मरण करता हूं, तब यही ख्याल आता है कि महापुरुषों में वास्तव में ही सरलता की पराकाष्ठा होती है ।

मास्टर दुर्गाप्रसाद

एक दिन मैं कहीं इधर-उधर से घूम-फिर कर घर वापिस आया, तो देखा कि एक बहुत ही भव्य शरीर के कोई सज्जन घर के बरामदे में कुर्सी पर बैठ कर सरदार साहिब से बातचीत कर रहे हैं। मैं विस्मय और श्रद्धा से उस महात्मा की ओर देखने लगा। लम्बा-चौड़ा डोल-डौल गठा हुआ शरीर, लम्बी दाढ़ी, गोरा रंग और बिलकुल सफेद बाल। सिर और दाढ़ी-मूंछ के सभी बाल चांदी की तरह उजले थे। इस पर भी चेहरे पर कोई झुर्री नहीं थी। चेहरा तपे हुये कुन्दन की भान्ति दमक रहा था। मैं स्तब्ध भाव से खड़ा रहकर उसपवित्र मूर्ति की ओर देखने लगा। मेरी उम्र इन दिनों लगभग १२ वर्ष की ही होगी। वह सरदार साहिब से मांस भक्षण के विरोध में बातचीत कर रहे थे।

उन दिनों लाहौर की आर्यसमाज में मांस भक्षण के सम्बन्ध में मतभेद नया नया ही उठा था, परन्तु जब तक इस प्रश्न पर दो समाजें न बनी थीं। मास्टर साहिब मांस भक्षण के कट्टर विरोधी थे। वे डी०-ए० वी० मिडल स्कूल हैडमास्टर थे। यह सवाल उठते ही उन्होंने स्कूल से एक साल की छुटटी ले ली, और शहर में मांस-भक्षण के विरुद्ध आन्दोलन करने लगे। इसी बीच में आर्यसमाज में दो पार्टियां बन जाने पर उन्होंने स्कूल से त्याग पत्र दे दिया। वे दिन-रात समाज सेवा का कार्य ही करने लगे नगर में उन्होंने एक निरामिष भोजन प्रचारिणी सभा भी कायम की थी। लाहौर में उनका एक निजी प्रैस भी था। प्रैस का नाम विरजानन्द प्रैस था। इस प्रैस से मास्टर साहिब हरविगर आफ हैलथ नाम का एक

अंग्रेजी पत्र निकालते थे। इसके सम्पादक भी आप स्वयं ही थे। निरामिष भोजन के तो वह इतने कट्टर समर्थक थे कि उन्हें अपने समय के संसार-भर के निरामिष भोजियों में एक विशेष स्थान प्राप्त हो गया था। यूरोप और अमेरिका के अधिकांश निरामिण भोजन-प्रचारकों से उनका पत्र व्यवहार रहता था।

मास्टर साहिब का आचार भी बहुत उन्नत और पवित्र था। आजीवन ब्रह्मचारी रहे, स्वाध्याय का तो मानो उन्हें व्यसन था। वैदिक और अंग्रेजी साहित्य दोनों की गम्भीर पुस्तकें आप दिन-रात पढ़ा करते थे।

मास्टर दुर्गाप्रसाद के दर्शन करते ही मैं इतना प्रभावित हुआ कि उनके यहां आने जाने लगा। वह भी मुझ से स्नेह करने लगे। मुझे वह मांस-विरोध में हिन्दी की छोटी छोटी पुस्तकें पढ़ने के लिए दिया करते मास्टर साहिब सुप्रसिद्ध यूरोपियन विद्वान् एण्ड्रयू जेक्सन डेविड के अनन्य भक्त थे। अनेक वर्षों के बाद जब मैं अंग्रेजी किताबें पढ़ने लायक हो गया, तब उन्होंने डेविड साहिब की बीयान्ड दी वैली नामक पुस्तक मुझे पढ़ने को दी। इस पुस्तक में ऋषि दयानन्द के सम्बन्ध के कुछ वाक्य मैंने खूब अच्छी तरह घोट लिए थे। उन वाक्यों का भाव यह था कि पूर्व में एक छोटी-सी चिन्गारी पैदा हुई। लोगों ने पहले उसे बड़ी उपेक्षा के साथ देखा। अब वह बढ़ने लगी, तब ईसाई, मुसलमान तथा अन्य महानुभावों ने उसे बुझाने का भरसक प्रयत्न किया परन्तु आश्चर्य यह है कि वह आग इन प्रयत्नों से और भी अधिक भड़क उठी। वह किसी के वश की न रही। मैं देख रहा हूं कि आग शीघ्र ही संसार-भर में व्याप्त होकर जो कुछ कलुषित और पापपुण्य है, उसे भस्म कर देगी। यह चिन्गारी स्वामी दयानन्द के रूप में पैदा हुई।

अपने विद्यार्थी जीवन के व्याख्यानों में मैं सदैव इन वाक्यों को अवश्य और बड़े जोश के साथ उद्धत किया करता था—'शीघ्र ही वह समय आने वाला है, जब यूरोप और अमेरिका के महाद्वीप भी वैदिक धर्म के नाद से गूंज उठेंगे, जब लन्दन और न्यूयार्क के गिरजों पर भी ओ३म्

के झण्डे फहराने लगेंगे।

मास्टर दुर्गाप्रसाद की तपस्या भी उनके स्वाध्याय की तरह बढ़ी चढ़ी थी। वे नमक बिल्कुल नहीं खाते थे। अनेक वर्षों तक वे केवल दिन में एक ही समय भोजन करते रहे। इतने बड़े विद्वान् होते हुए भी वे भोले इतने थे कि धर्म के नाम पर वह अनेक बार दुष्ट लोगों से ठगे भी गए। मास्टर जी ने—'वेदास मेड इजी' नाम से दो पुस्तकें भी लिखी थीं। इन पुस्तकों में ऋग्वेद के कुछ सूक्तों का सरल ढंग से अंग्रेजी और संस्कृत में अनुवाद किया गया है। मेरी राय में इन दोनों पुस्तकों का आर्यसमाज के अंग्रेजी साहित्य में एक विशेष स्थान है। आज भी ये पुस्तकें पढ़ते हुए मेरे मानसिक नेत्रों के सम्मुख उस ऋषि-तुल्य भव्य मूर्ति का चित्र खिंच आता है।

लाहौर आर्यसमाज का सन् १८६२ का वार्षिकोत्सव डी-ए-वी-कालेज की नई इमारत में हुआ था। तब तक समाज में दो दल नहीं बने थे। संभवत: सम्मिलित आर्यसमाज का वह अंतिम ही उत्सव था। उन दिनों आर्यप्रतिनिधि सभा पंजाब का वार्षिक अधिवेशन भी लाहौर आर्यसमाज के वार्षिकोत्सव के साथ ही साथ हुआ करता था। सन् १८६२ के इस अधिवेशन में सभा के सम्पूर्ण अधिकारी बदल दिए गए। उससे पूर्व लाला हंसराज जी प्रधान थे, इस निर्वाचन में उनकी जगह मास्टर दुर्गाप्रसाद जी प्रधान चुने गए थे।

उन दिनों लाहौर आर्यसमाज के वार्षिकोत्सव के प्रधान का कार्य भी सभा के प्रधान महोदय ही किया करते थे। नये प्रधान का चुनाव हो जाने पर भी सन् १८६० के वार्षिकोत्सव का प्रबन्ध लाला हंसराज जी के हाथ में ही रहा।

इधर जलसा हो रहा था, उधर थोड़ी ही दूर पर एक हाल में आर्य प्रतिनिधिसभा पंजाब की बैठक हो रही थी। लाला हंसराज जी सभा में थे। इसलिए जलसे का प्रधानता लाला अमीरचन्द कर रहे थे। उन दिनों आर्यसमाज में मांस भक्षण का सवाल जोरों पर था। प्रोग्राम के अनुसार जब पंडित वासदेव नामक एक गायक की भजन गाने की बारी आई,

तब वह एक भजन गाने लगा, जिस की पहली दो लाइनें निम्न लिखित थीं—

कचौरी की कदर तुम क्या जानते हो।

तुम तो हड्डियां ही सदा चबा जानते हो।

लोग इस भजन को खूब मजा लेकर सुन रहे थे कि लाला अमीरचन्द ने पंडित वासुदेव को गाने से रोक दिया। उनकी दृष्टि में यह भजन आक्षेप योग्य था। लोग ऊंचे स्वर से चिल्लाये—'शर्म। शर्म।' परन्तु उपप्रधान महोदय ने इसकी प्रवाह नहीं की। प्रोग्राम के अनुसार अब मास्टर दुर्गादास का व्याख्यान होना चाहिए था। लाला अमीरचन्द के आदेशानुसार वे व्याख्यान के लिए खड़े तो हुए परन्तु लोगों के फिर—'शर्म-शर्म' चिल्लाने के कारण उन्हें बैठ जाना पड़ा। लोग चिल्लाये—भजन, भजन, भजन, परन्तु लाला अमीरचन्द ने मास्टर जी से कहा कि मैं प्रधान हूं इसलिए मेरी आज्ञा से आपको अपना व्याख्यान शुरु कर देना चाहिए। मास्टर जी नियन्त्रण के कट्टर समर्थक थे। वे फिर से मंच पर आकर लैक्चर के लिए खड़े ही गए। परन्तु लोगों की चिल्लाहट के मारे वे अपना व्याख्यान शुरु न कर सके।

यह शोर प्रतिनिधि सभा में भी सुनाई दिया लाला हंसराज जी शीघ्रता से मण्डप में पहुचे। सारी बात सुन कर उन्होंने आज्ञा दी—"भजन को बीच में बन्द करना अनुचित था। वह भजन फिर से गाया जावे।"

फिर क्या था। पंडित वासुदेव को लोगों के आग्रह से लगातार पांच छः बार वही भजन गाना पड़ा। एक-एक लाइन के बाद तालियां पिटती थीं। पूरे ४५ मिनट तक सिर्फ यही एक भजन गाया जाता रहा। इस भजन के बाद मास्टर जी अपने लैक्चर के लिए के लिए खड़े हुए। व्याख्यान के लिए आपने विषय भी पूरी तरह से दार्शनिक ही चुन रखा था। मास्टर जी का वह व्याख्यान आर्यसमाज के दूसरे नियम पर था।—'ईश्वर न्यायकारी होते हुए दयालु किस तरह हो सकता है। ऐसे होहल्ले के बाद इतना गम्भीर व्याख्यान देने का ढंग इतना रोचक और आकर्षक था कि उनके लम्बे व्याख्यान में एक भी श्रोता अपने स्थान से नहीं हिला। पूरी शान्ति के साथ सब लोग यह दार्शनिक व्याख्यान सुनते रहे। मास्टर

साहिब की वाणी में कुछ ऐसा ही आकर्षण था।

सन् १८९२ के चुनाव से आर्य-जनता का रुख स्पष्ट हो गया। यह देख कर मांस-भक्षण के हिमायती लोगों को भय हुआ कि कहीं डी-ए-वी-कालेज की प्रबन्धक समिति से हम लोगों की मुख्यता जाती न रहे। उन्हें यह विश्वास हो गया कि यदि यही अवस्था रही, तो पंडित गुरुदत्त विद्यार्थी का दल ही कालेज की प्रबन्ध-समिति में बहुमत प्राप्त कर लेगा। पडित जी कालेज में वेद-वेदांगों की शिक्षा देने के पक्ष में थे—इसका अभिप्राय यह था कि कालेज का स्वरूप ही बदल डाला जावे।

डी-ए-वी- कालेज की प्रबन्ध-समिति के निर्वाचन के लिए तब तक यह नियम था कि जो समाज कालेज को एक निश्चित राशि एक साथ दे दे, उस समाज की अन्तरंगसभा के सम्पूर्ण सदस्य डी-ए-वी- कालेज-समिति के सदस्य समझे जाते थे। यह डी-ए-वी- कालेज समिति ही कालेज की प्रबन्ध समिति का प्रति तीन वर्षों के बाद निर्वाचन किया करती थी। इस कालेज समिति में लाहौर आर्यसमाज में पंडित गुरुदत्त के अनुयायियों का बहुत प्रभाव पड़ा था। इसलिए यह लगभग निश्चित ही था कि नये चुनाव में प्रबन्ध समिति की रचना बिलकुल बदल जाएगी। नया निर्वाचन सन् १८९४ में होता था। अतः दूसरे पक्ष के लोगों ने सन् १८९३ में अनारकली बाजार में एक नई समाज की स्थापना कर दी, और पुरानी आर्यसमाज, जिसका मंदिर वच्छोवाली में था, नाजायज करार दे दिया। यही काम पंजाब के अन्य कई नगरों में भी किया गया।

परन्तु लाहौर आर्यसमाज के उत्साही सदस्यों को यह धांधली सहन न हुई। शान्ति-पूर्वक, परन्तु दृढ़ निश्चय से वे लोग चुनाव के दिन की प्रतीक्षा करने लगे। आखिर वह दिन भी आ ही गया। डी-ए--वी- कालेज के हाल में कालेज-समिति का अधिवेशन होना था। वच्छोवाली समाज के सभी सदस्य, जिनमें मास्टर दुर्गाप्रसाद और लाला केदारनाथ भी शामिल थे, निम्न-लिखित गीत गाते हुए जुलूस बना कर सभा-स्थान की ओर चले।

सदाकत के लिए गर जान जाती है, तो जाने दो।
मुसीबत पर मुसीबत सिर पै आती है, तो आने दो।

मैं भी इस मण्डलो में शामिल था और खूब उत्साह के साथ यह गीत गा रहा था ।

यह मण्डली डी-ए-वी- कालेज के दरवाजे पर पहूंची । वहां अनेक वालंटियर खड़े थे । उनमें से एक वालंटियर ने कहा—टिकट दिखाओ । टिकट ।'

लाला केदारनाथ वच्छोवाली आर्यसमाज के मन्त्री थे, उन्होंने पूछा--टिकट कैसा ? हम लोग तो नियमानुसार मैम्बर हैं । हमें अन्दर जाने दो ।'

वालैंटियर कोई बेवकूफ नौजवान था, उसने बहस न करके अपनी ताकत से काम लेना चाहा। जोश में आकर उसने मन्त्री जी पर हाथ चला दिया । फिर क्या था । लोगों ने लाठियों से उसकी खबर ली । अन्य सब वालेंटीयर भी भाग चले । मण्डली वही भजन गाती हुई सहन में दाखिल हो गई है । इस समय तक सभा-भवन के बाहर एक मजबूत ताला जड़ दिया गया था। इस भवन में लाला हंसराज प्रिंसिपल डी-ए-वी- कालेज लाला लालचन्द प्रधान प्रबन्ध समिति और लाला लाजपतराय—जो पीछे से देश के सर्वश्रेष्ठ कोटि के नेता बने आदि कालेज पार्टी के नेता बन्द होकर बैठे थे । बच्छोवाली समाज के सभी सदस्य सहन में जमीन पर बैठ गए । लाला दुर्गाप्रसाद खड़े होकर व्याख्यान में देने लगे थोड़े दिन पूर्व डी-ए-वी- कालेज के हिमायती बाबा छज्जूसिंह ने एक लेख में लिखा था कि हमें चाकू के बल पर यह लड़ाई कायम रखनी चाहिए । मास्टर दुर्गाप्रसाद उस ऐतिहासिक सभा में छाती को नंगी करके खड़े हो गए और उन्होंने कहा—'मेरे भाइयो, तुम चाकू के बल पर लड़ाई जारी रखना चाहते हो । में बूढ़ा हूं । मैं मांस नहीं खाता इसलिए तुम्हारी नजर में और भीअधिक कमजोर हूं । तुम मांस खाते हो और अपने को ताकतवर समझते हो । यदि तुम में से किसी को साहस है, तो वह आवे और मुझ वृद्ध की नंगी छाती पर चाकू चलावे ।'

परन्तु कोई न आया । बूढ़ा शेर सचमुच ऐसा ही वीर था ।

पीछे से महात्मा मुन्शीराम जी के समझाने पर वच्छोवाली समाज के सदस्यों ने इस झगड़े को बढ़ाना उचित नहीं समझा। यदि वे चाहते, तो अपनी शक्ति या अदालत की मदद से कालेज पर अवश्य ही अधिकार कर सकते थे। परन्तु महात्मा मुन्शीराम जैसे उदार नेता की मौजूदगी में आर्य सज्जनों ने घर में ही लड़ाई ठानना उचित न समझा।

उस दिन से आर्यसमाज में महात्मा दल और कलचर्ड-दल नाम से दो दल बन गए। कालान्तर में उनका नाम घास-पार्टी और मांस-पार्टी पड़ा। आजकल इनके नाम गुरुकुल दल और कालेज दल है।

डा० चिरंजीव भारद्वाज

डा. भारद्वाज विलायत से लौट आए। लाहौर में रह कर चिकित्सा द्वारा आजीविका करने लगे। उसी वर्ष वह लाहौर आर्यसमाज के प्रधान चुन लिए गए। मैं और वे एक प्राण दो शरीर बन गये। वे मुझ से कहा करते थे 'देव'। मैं उन्हें सम्बोधन करता था 'चिरि'। मेरे घर को अपना घर समझते थे और उन के घर को मैं अपना घर। उन के पास फ़ुरसत कम होती थी। फिर भी वे मेरे यहां अवश्य आते जाते थे। सम्बन्ध बहुत निकट का हो जाने पर, दोषों का ज्ञान हो जाने से, प्राय: भक्ति कम हो जाती है और दया तथा प्रेम बढ़ जाते हैं, परन्तु इस मामले में मेरा उन का ज्यों-ज्यों सम्बन्ध बढ़ता गया, त्यों-त्यों भक्ति भी बढ़ती गई। उन के जीवन का एक ही चर्म उद्देश्य मैंने देखा, और वह था 'सत्य'। यहां तक कि उन्होंने अपने दोनों पुत्रों का नाम भी सत्यव्रत और सत्यकाम ही रखा। इन की एक कन्या थी, उस का नाम भी उन्होंने सत्यव्रता रखा। जीवन—भर में सब से ज्यादा उन्होंने सत्यार्थ प्रकाश का ही स्वाध्याय किया। मेरे साथ मिल कर उन्होंने सत्यार्थ प्रकाश का अंग्रेजी अनुवाद भी किया। उस का अनुवाद करते हुये एक भी पृष्ठ शायद ऐसा न गया हो जिस पर मेरी उन की बहस न हुई हो। उन का सत्य प्रेम इतना निर्मल था कि इस के लिये उन्हें लोक लाज की भी परवाह न थी। उन के प्रधानत्व में आर्यसमाज के वार्षिकोत्सव पर वार्षिक विवरण सुनाते हुये प्रमादवश मन्त्री महोदय ने एक राशि को दो बार सुना दिया। डाक्टर साहब को यह बात इतनी खटकी कि उन्होंने मन्त्री महोदय की असावधानता के लिये तीन बार क्षमा प्रार्थना की।

आर्यसमाज के उसी उत्सव पर मौलवी सनाउल्ला और स्वामी योगेन्द्रपाल का वादविवाद भी हुआ था। इस से मैं स्वामी जी के उत्तर लोगों को नापसन्द आ रहे थे, कुछ कमजोर से प्रतीत होते थे। लोग चाहते थे कि स्वामी जी के स्थान पर किसी और विद्वान को खड़ा किया जाए, परन्तु स्वामी जी के हटाने से भी तो आर्यसमाज का रोब घटता था, इस लिए कुछ समझदार महानुभावों ने प्रधान जी को राय दी कि आप यह सूचना दीजिए कि स्वामी जी की आवाज धीमी है, अतः स्वामी नित्यानन्द जी को खड़ा करते हैं। सत्यप्रेमी भारद्वाज इस निर्देश पर सचमुच गुस्सा हो गए। उन्होंने कहा –चाहते हो सत्य प्रेम के लिए मुबाहसा करवाना और उस के लिए बुलवाते हो मुझ से झूठ।'

लोग भला इस बात का क्या जवाब देते। थोड़ी देर में प्रधान जी मंच पर खड़े होकर यह घोषणा करते हुए सुनाई दिए—'हम देख रहे हैं कि हमारे प्रतिनिधि स्वामी योगेन्द्रपाल जी विषयान्तर बात करते हैं, ठीक उत्तर नहीं देते, अतः आर्यसमाज का प्रतिनिधित्व करने के लिए मैं उन के स्थान पर स्वामी नित्यानन्द जी को नियुक्त करता हूं।

यह घोषणा लोगों को एक चमत्कार के समान प्रतीत हुई, और इस से सब से अधिक चकित हुए स्वयं मुसलमान भाई हैं मौलवी सनाउल्ला तो इस घटना के बाद सारी उमर डाक्टर साहब की तारीफ करते रहे। वे कहा करते थे—भाई, समाज का प्रधान तो एक ही देखा। स्वामी योगेन्द्रपाल इस घटना से डाक्टर जी पर बहुत नाराज हो गए, मगर जनता डाक्टर जी से सन्तुष्ट थी।

डाक्टर भारद्वाज को शुद्धि का प्रथम प्रचारक समझना चाहिए। बड़ौदा में रहते हुए उन्होंने डेढ़ जाती के बहुत से अछूतों को आर्य बनाया था। उन की शिक्षिता कन्याओं के विवाह भी ब्राह्मण आदि कुलों में उत्पन्न पुरुषों सें करवा दिए थे। इस घटना के काफी देर बाद धर्मपाल मुसलमान से आर्य बना। यह पहला मुसलमान ग्रेजुएट था, जो आर्य बना। इस कारण डाक्टर साहब स्वभाव से उसकी और आकृष्ट हुए! वह उनके घर आने-जाने लगा। बहिन सुमंगली देवी को वह माता जी कहकर बुलाया करता था। धर्मपाल के आने पर भारद्वाज जी ने आर्य धर्म

सभा को पुनरुज्जीवित किया। मैं भी इस सभा में सम्मिलित हुआ। धर्मपाल को सभा का मन्त्री बनाया गया। धर्मपाल डाक्टर जी के घर में ही बच्चों की तरह से रहता था। भाग्य से मेरी बांह में फोडे निकल आए। इस लिए मुझे भी ईलाज के लिए डाक्टर जी के घर लाहौर में आ जाना पड़ा। धर्मपाल ने उन्हीं दिनों एक अपराध किया था जिसका यहां वर्णन करना उचित नहीं। अपनी साहसी प्रवृत्ति के कारण एक दिन मैंने साफ शब्दों में धर्मपाल से उसका अपराध कह सुनाया। वह भडक उठा और डण्डा उठा कर मुझे मारने के लिए झपटा। इसी समय बहन सुमंगली भाग कर उसके और मेरे बीच में आगई। उनकी उपस्थिति में वह मुझ पर प्रहार न कर सका। में तो बच गया, परन्तु मेरी बहन को उस पर इतना अधिक क्रोध आया कि जब डाक्टर साहब घर वापस आए, तब उसने उनसे कहा कि धर्मपाल अब यहां नहीं रह सकता।

सारी घटना सुन कर डाक्टर जो ने धर्मपाल को मेरे पांव पकड कर माफी मांगने को कहा। इतना तो उसने कर दिया, परन्तु आपने अपराध के लिए वह डाक्टर जी द्वारा बताया हुआ प्रायश्चित करने को तैयार नहीं था। उस कारण डाक्टर जो ने उसे घर से बाहर कर दिया। एक रात उसने रावी के किनारे काटी। फिर वह समाज के मुखियाओं के वैयक्तिक मतभेद का अनुचित लाभ उठा कर लोगों को डाक्टर जी के विरुद्ध उभारने लगा। यहां तक कि डाक्टर जी के घर की छोटी-छोटी बातों और बातचीतों के आधार पर उसने महात्मा पार्टी के सर्वमान्य नेता महात्मा मुन्शीराम जी को धोखा देने का प्रयत्न किया। इस मामले का पंच भी महात्मा जी को ही नियुक्त किया गया। उन्होंने धर्मपाल को यह सजा दी कि छः मास तक सार्वजनिक जीवन से पृथक रहे। धर्मपाल को अपने अपराध पर पश्चाताप तो था ही नहीं, अतः वह और अधिक भडका। उसने हमारे विरुद्ध एक किताब छपवाई। उसमें डाक्टर भारद्धाज जी के निजी चरित्र पर घृणित और गन्दे आक्षेप किए। डाक्टर साहब उन दिनों लाहौर आर्यसमाज के प्रधान और प्रतिनिधि सभा पंजाब के मन्त्री थे। उनका चरित्र तो तपे हुए कुन्दन की तरह उजला और पवित्र था। उन्होंने प्रतिनिधि सभा की अन्तरंग समिति में कहा कि

धर्मपाल ने मेरे चरित्र पर आक्षेप लगाए हैं। मैं उनके लिए अदालत में नहीं जाना चाहता। इसका न्याय मैं सभा द्वारा करवाना चाहता हूं कि वह मामले की जांच करके यदि मुझे दुराचारी पाए, तो मुझे दण्डित करे, अन्यथा धर्मपाल को दण्डित किया जाए।

सभा की ओर से धर्मपाल से उत्तर मांगा गया। उसके पास कोई आधार तो था ही नहीं जिस वह पेश करता। उसने बहाना किया कि— डाक्टर शक्तिशाली है. सभा के मन्त्री हैं उनके विरुद्ध कहने की हिम्मत ही कौन करेगा।

यह बात मालूम होते ही डाक्टर जी ने सभा के मन्त्री के पद से त्यागपत्र दे दिया।

अब और कोई बहाना तक न मिलने से धर्मपाल सभा को ही गालियां देने लगा इस पर सभा के प्रधान जी की अनुमति से डाक्टर जी ने धर्मपाल पर अदालत में मानहानि का दावा किया। धर्मपाल ने समझा कि अदालत में तो उनके चरित्र पर धूल उड़ाने का और भी अच्छा मौका है। उसने डाक्टर जी के विचारों से मतभेद रखने वाले महानुभावों का आश्रय लिया। परन्तु वे लोग भी डाक्टर जी के व्यक्तिगत चरित्र से इतने अधिक प्रभावित थे कि उन्होंने अदालत में यही कहा कि मतभेद होना और बात है परन्तु व्यक्तिगत चरित्र की दृष्टि डाक्टर साहब का जीवन बहुत उन्नत है! ब्रह्म् समाज के एक नेता जब गवाह के कटघरे में लाए गए और अदालत ने उनसे पूछा कि डाक्टर भारद्वाज के चरित्र के सम्बन्ध में आपकी क्या राय है, तो उन्होंने कहा कि यदि जरूरत हो, तो मैं अपनी धर्मपत्नी या अपनी कन्या को डाक्टर जी के कमरे में रात भर अकेला उन्हीं के पास छोड सकता हूं।

अदालत ने कहा— 'अब मुझे आपसे और कोई प्रश्न पूछने की आवश्यशकता नहीं।'

इसी मामले में एक और घटना भी हुई, जिसने डाक्टर जी के चरित्र को और भी अधिक चमका दिया। धर्मपाल जिन दिनों पुत्र की तरह से डाक्टर जी के घर रहा करता था, उन्हीं दिनों डाक्टर जी अपने एक नवयुवक आर्यसमाजी एक मित्र के घर में बहुत आया जाया करते

थे। एक दिन इसी मजाक में देवी सुमंगली ने उस नवयुवक का नाम लेकर कह दिया कि वह तो मेरी सौत है जो तुम उसके घर में खूब आते जाते हो। बहन सुमंगली के इस वाक्य का धर्मपाल नाजायज लाभ उठा कर डाक्टर साहब से अदालत में यह जवाब पूछा—'क्या आपकी धर्मपत्नी ने आपसे यह बात कभी की थी या नहीं?'

डाक्टर साहब के वकील ने यह आवश्यक समझा कि भारद्वाज इस घटना की सच्चाई से इन्कार कर दे। यह साफ था कि सुमंगली का वह अभिप्राय: तो था नहीं, जिसके लिए धर्मपाल इस वाक्य को पेश कर रहा था। तथापि सत्यनिष्ट भारद्वाज इस वाक्य को मिथ्या किस तरह कहते। उनके वकील ने उनसे कहा—'कह देना मुझे याद नहीं' 'परन्तु डाक्टर साहब ने कहा— यह भी कैसे कहूं, क्योंकि मुझे तो याद है।'

अन्त में हार कर वकील साहब इस मामले में मेरी मदद लेने लगे। मैंने भी उन्हें मदद देने से इन्कार कर दिया। साथ ही मैंने उन्हें यह भी समझा दिया कि कल्पना करो— कि यदि मैं तुम्हारे कहने से डाक्टर साहब को इतना-सा गोलमाल करने की सलाह भी दू, तो मुझे मालूम है कि वह इस मामले में सलाह भी न मानेंगे।'

अन्त में खुली अदालत में धर्मपाल के वकील नें उनसे यही प्रश्न किया। डाक्टर साहब नें अदालत से कहा—क्या प्रश्न का उत्तर अवश्य दूं?'

अदालत ने कहा——'हां।'

सत्यवीर भारद्वाज ने कहा—'यह बात सत्य है।'

बस मजिस्ट्रेट का रुख एकदम बदल गया। इस घटना के बाद उसने बहुत अधिक गवाहियां आदि लेना भी व्यर्थ समझा। उन्हीं दिनों धर्मपाल डिप्टी कमिश्नर के पास डाक्टर साहब को राजद्रोही सिद्ध करने में भी गया, परन्तु डाक्टर महोदय की इस सत्यनिष्ठा के सामने उसकी दाल न गली। मजिस्ट्रेट ने एक बहुत ही सख्त फैसला लिखा और धर्मपाल पर ५००) जुर्माना किया।

इस निर्णय में उसने डाक्टर साहब के चरित्र की बडी

तारीफ की थी।

महात्मा मुन्शीराम जो प्रथम व्यक्ति थे, जिन्होंने डाक्टर भारद्वाज यह अभियोग जीतने पर अखबार में बधाई दी। धर्मपाल अभी तक समझता था कि महात्मा जी मेरे तरफदार हैं। इस घटना से वह उनसे भी नराज हो गया। उसने उनके बिरोध में भो एक पुस्तक लिख मारी। फलतः उसे आर्यसमाज से ही पृथक होना पडा। आजकल उसने अपने को गाजीमहमूद धर्मपाल अब्दूल गफूर नाम से मशहूर किया है और आर्यसमाज को गाली देकर वह अपना पेट पालता है।

यदि मेरी ये पंक्तियां पढ़ने का अवसर धर्मपाल को भी मिले, तो मैं उसे साफ शब्दों मैं कह देना चाहता हूं कि ये पंक्तियां मैंने उसकी पोल खोलने के लिए नहीं, बल्कि डाक्टर साहब के चरित्र की उज्ज्वलता के लिए ही लिखी है।

अवस्थाओं के फेर से डाक्टर साहब को यह देश छोडना पडा। कुछ समय बर्मा रह कर मारिशस चले गए। वहां वह पोर्टलुई नगर में प्रैक्टिस करने लगे। डाक्टर जी के हाथ में यश था। वह शीघ्र ही हजारों रुपया कमाने लगे। एक मोटर भी खरीद ली, परन्तु डाक्टर चिरंजीव किस तरह होते, यदि धन कमाना ही उनके जीवन का उद्देश्य होता। अपनी प्रैक्टिस शीघ्र ही बहुत अच्छी हो जाने पर उन्होंने वहां आर्यसमाज की स्थापना भी कर दी। विदेश में वह आर्यसमाज के प्रथम दूत थे वहां उन्होंने हजारों भारतीयों को आर्य बना दिया। यहां तक कि मारिशस की एक पृथक प्रतिनिधि सभा भी कायम कर दी।

धीरे-धीरे मारिशस सनातन धर्मावलम्बी भारतीयों को डाक्टर साहब का यह कार्य खटकने लगा। वे लोग एक डैपुटेशन बना कर उनके पास आए और कहा— 'आप यहां आर्यसमाज का प्रचार का कार्य बन्द कर दीजिए वरना हम लोग भविष्य में आपसे अपना इलाज करवाना ही छोड़ देंगे। आप की बजाय, हम फिर से युरोपियम डाक्टरों के पास ही आया करेंगे।

डाक्टर साहब ने हंस कर कहा—'आप लोगों के परामर्श के लिए

धन्यबाद । मैं अपना काम बन्द नहीं कर सकता। हां अपने इलाज के लिए आप स्वतन्त्र हैं। चाहे आप मेरे पास आवें या किसी और डाक्टर के पास जावें।'

बस इस दिन के बाद से धर्म के नाम पर इस यशस्वी डाक्टर की चिकित्सा का बहिष्कार कर दिया गया। लोग धरना देने लगे। डाक्टर साहब की आय एकदम घट गई। आर्यसमाजी गरीब थे, वह डाक्टर जी को उनकी सेवाओं का बदला धन से न दे सकते थे। परिणाम यह हुआ कि उनका गुजारा भी कठिन हो गया। शीघ्र ही उन्हें मोटर बेच देनी पडी। धीरे-धीरे नौकर हटा दिए गए। नौबत यहां तक पहुंची कि धोबी की धुलाई देने तक को डाक्टर साहब के पास पैसों की कमी हो गई। सुमंगली देवी इन दिनों सचमुच डाक्टरजी की अनथक सेवा किया करती थी। सारी उमर आराम से व्यतीत करने की आदत होने पर भी वह स्वयं कपड़े धोती थी, रोटी पकाती थी और झांडू देकर घर बुहारती थी। पति-पत्नी दोनों हंसते हुए इन आपत्तियों का सामना करते थे। डाक्टर साहब ने गरीब आर्यो की सन्तानों के लिए स्कूल भी खोल रखा था। वह और देवी सुमंगली स्वयं ही इस स्कूल में पढ़ाया भी करते थे।

डा० चिरंजीव मारीशस से पुनः लाहौर से वापस आ गए थे लाहौर ही में उन्होंने अपनी प्रैक्टिस शुरु की थी। अब वह बिलकुल बदल गए थे उन्हें अब अपनी आजीविका की चिन्ता न रही। चिन्ता थी तो सिर्फ दुःख पीडितों की सेवा करने की । वह अब किसी से कोई फीस नहीं मांगते थे। कोई किसी रोगी को देखने के लिए अपने घर ले जाता था तो उससे भी फीस नहीं लेते। यदि कोई पूछता डाक्टर साहब आप की फीस क्या है ?'

डाक्टर साहब अपनी स्वाभाविक पवित्र मुस्कराहट के साथ जवाब देते — 'शून्य से लेकर १९ रू० तक, जितनी तुम्हारी सम्थर्य हो।'

डा० चिरंजीव का उद्देश्य मनुष्य की सेवा था। दरिद्रनारायण के उस सच्चे उपासक के घर जा कर एक दिन मूझे सचमुच ही एक स्वर्गीय दृश्य देखने को अवसर मिला । मौजूदगी में ही एक दरिद्रसा

व्यक्ति अपनी बीमार पत्नी को डाक्टर साहब के घर लाया। वह बेचारी महीनों से बीमार थी। सूरत देखते ही प्रतीत होता था कि मानो मौत खिलवाड कर रही है। डाक्टर चिरंजीव ने उसकी परीक्षा की, उसके लिए नुस्खा लिखा और अपने कम्पाडर से कह कर उसके लिए मुफ्त ही दवाई बनवा दी। उस व्यक्ति ने बड़ी नम्रता से पूछा— महाराज। इसे खाने के लिए क्या चीज दूं।'

डाक्टर साहब ने कहा—इसे दूध के अतिरिक्त और कोई चीज खाने को मत देना।

वह आदमी दो तीन क्षणों तक तो डाक्टर साहब की तरफ देखता रहा। इसने बाद उसकी रुलाई फूट पडी। वह कातरभाव से सिसक कर रोने लगा। डाक्टर साहब के महानुभुति पूर्ण हृदय को यह देख कर ठेस पहुंची। उन्होंने आश्वासन के तौर पर कहा—'क्यों भाई रोते क्यों हो?

वह आदमी पहले तो डाक्टर कुछ न बोला, परन्तु डाक्टर साहब के जोर देने पर उसने कहा—'जो आदमी अपनी पत्नी की बीमारी में दवा तक के लिए पैसे नहीं दे सकता, वह दूध का कैसे इन्तजाम करेगा?

डाक्टर साहब ने अपनी जेब में हाथ डाला। कुछ रुपए निकाले और उस गरीब को देकर कहा—'जाओ भाई। इन रुपए से अपनी पत्नी को दूध पिलावो। जब ये समाप्त हो जावें, तो मुझ से और ले जाना।'

वह अनपढ़ आदमी डाक्टर साहब से धन्यवाद तो नहीं कह सका परन्तु उस दरिद्र का एक एक रोम डाक्टर साहब के लिए सहस्रों सफल आशीर्वादों की वर्षा कर रहा था। उस दिन के बाद से भी डाक्टर साहब ने उस असहाया नारी की इस तरह चिकित्सा की, जिस तरह वह किसी करोड़पति की चिकित्सा कर रहे हैं। परिणाम यह हुआ कि वह मौत के मुंह में जाने से बच गई।

यह घटना शीघ्र ही मशहूर हो गई। गरीबों और पीडितों को मानों नारायण मिल गया। उनका निवास स्थान पीडितों के लिए एक सच्चा तीर्थ बन गया। डाक्टर साहब का एक-एक मिनट बीमारों की

सेवा में कटने लगा। उनकी आमदनी भी कम न थी, क्योंकि उनके यहाँ इलाज के लिए आने वाले धनी मरीजों की संख्या भी कम न थी। इस पर भी उनका जीवन बिलकुल सादा था। वह अपने विलास के लिए जरा भी खर्च नहीं करते थे। वह सादे मकान में रहते, सादे कपड़े पहनते और सादा ही भोजन करते। वह पहले पंजाबी एफ आर-सी-एस थे। उनके हाथों में यश था। उनका घर एक अच्छे बडे अस्पताल के समान चिकित्सा के सभी तरह के सामानों से पूर्ण था। बीमारों का इलाज करने के साथ ही साथ वह उनकी नैतिक तथा आत्मिक चिकित्सा भी किया करते थे। परिणाम यह हुआ कि वह शीघ्र ही लाहौर में एक महात्मा के समान पूजे जाने लगे। नगर की जिस गली से वह निकल जाते, उसी के गरीब लोग खड़े होकर उन्हें हार्दिक आशीर्वाद देते थे।

डाक्टर साहब 'पापरोग' खरीदने वाले धनी लोगों की खबर लेना भी खूब जानते थे। एक दिन मेरी मौजूदगी में ही एक धनी उनके पास इलाज के लिए आया। डाक्टर सहाब ने उससे पूछा—'तुम्हें क्या शिकायत है?'

उसने कहा—'अलग कमरे में चल कर सुनिये।'

डाक्टर साहब ने कहा— 'यहीं पर कहो। इनसे घबराने की कोई आवश्यकता नहीं। परन्तु वह अब भी हिचकिचा रहा था, अतः डाक्टर साहब ने उस से कहा—'अपनी बीमारी का नाम कागज पर लिख दो।'

कागज के एक पुर्जे पर उसने लिखा—'सिफलिस।

डाक्टर साहब ने एक और पुर्जे पर फीस ६४)लिख कर उसके सामने कर दिया। वह घबरा कर बोला—'डाक्टर जी आप तो कमाल करते हैं। सिविलसर्जन तक तो ३२) लेते हैं और आप ६४) मांगते हैं। यह कहां का न्याय है?'

डाक्टर साहब ने इस बार गम्भीरता से कहा—'भले आदमी यह तो बताओ कि यह बीमारी तुम ने खरीदी कितने रुपए देकर। क्या ६४) इन से अधिक हैं। जाओ तुम्हारा इलाज मैं नहीं करूंगा। इलाज होगा, तो डबल फीस पर ही और साथ ही तुम्हें यह प्रतिज्ञा करनी होगी कि भविष्य में सदाचारी रहोगे।'

वह पापरोगी शीघ्र ही डाक्टर साहब के घर से खिसक गया। उस के बाहर होते न होते डाक्टर जी मेरी तरफ देख कर जोर से खिलखिला कर हंस पड़े।

मैं कट्टर आर्यसमाजी हूं। अपने लिए मैं ऋषि दयानन्द की एक-एक बात को प्रामाणिक मानता हूं, फिर भी आध्यात्मिक रहस्यवाद पर मेरा विश्वास है। मुझे ज्ञात है कि पाखण्डी लोग धन के लोभ से इस विद्या का दुरुपयोग भी करते हैं, तथापि इस की सत्यता पर भी मेरा विश्वास है, क्योंकि इस सम्बन्ध में मेरे अनेक व्यक्तिक अनुभव भी है। अपने जीवन की जिन घटनाओं का उल्लेख मैं यहां करने लगा हूं, उसको गणना भी आध्यात्मिक रहस्यवाद में की जा सकती है।

एक रात नींद में मुझे स्वप्न आया, एक जहाज पर सवार होकर मैं समुद्र यात्रा कर रहा हूं। सांझ के समय मैं रेलिंग के सहारे जहाज के डेक पर खड़ा होकर समुद्र के अनन्त वितीर्ण वक्षस्थल की ओर देख रहा हूं। इसी समय दूपार एक और जहाज आता हुआ दिखाई दिया। क्रमश: यह जहाज बहुत निकट आ गया। मुझे दिखाई दिया कि दूसरे जहाज के डेक पर अकेले डा० चिरंजीव भारद्वाज खड़े हैं। सहसा उन की दृष्टि मुझ पर पड़ी और ऊंची आवाज में उन्होंने अंग्रेजी की एक कविता का एक पत्र पढ़ा, जिस का भावार्थ है—'जहाज एक बार समुद्र में मिलते हैं और फिर अपने अपने रास्ते पर चले जाते हैं।'

उसी समय मेरी नींद उचट गई। मेरी अन्तरात्मा ने कहा—अवश्य ही मेरे मित्र का कोई भारी अनिष्ट होने वाला है। मैं उठा, और मैंने अंग्रेजी कविता की वह पक्ति नोट कर ली। उस से पूर्व आज तक मैंने वह लाइन न कहीं पढ़ी थी और न सुनी ही थी। रात भर मुझे नीद न आई। मैं चिंतित रहा। प्रातःकाल ८ बजे मुझे तार मिला—'डा० जिरंजीव बहुत अधिक बीमार हैं। एकदम चले आओ।'

उसी समय मैं लाहौर के लिए रवाना हो गया। मेरे मित्र पर हैजे ने आक्रमण किया था। मैंने लाहौर पहुंच कर देखा कि लाहौर के सभी बड़े से बड़े डाक्टर मेरे मित्र की जी जान से बिना एक भी पैसा लिये, चिकित्सा कर रहे हैं। मालूम होता था कि डाक्टरों ने इस मामले में मौत से लड़ाई करने का संकल्प कर लिया है। डा० बेलीराम, डा०

हीरा लाल, डा० बाल कृष्ण, डा० सदरलैण्ड, डा० निहालचन्द, डा० धनपतराय—वे लोग उन दिनों लाहौर के सर्वश्रेष्ठ डाक्टर समझे जाते थे। रात को डयूटी भी डाक्टर लोग ही दिया करते थे। हस्पतालों की नर्सेज डाक्टर चिरंजीव की शुश्रुषा करने को लालायित नजर आती थी। यह सब इस लिये कि डा० चिरजीव का व्यक्तित्व पंजाब के डाक्टरों के लिये सम्मानप्रद था। अपनी योग्यता और सेवा इन दोनों दृष्टियों से लाहौर में उन्हें जो स्थान प्राप्त था, वह डाक्टरों के लिये ही प्रशंसास्पद था। मैं भी दिन रात जाग कर अपने मित्र की किंचिन्त सेवा करने का प्रयत्न करता था। डा० चिरजीव पर से हैजे का प्रभाव तो जाता रहा, परन्तु उन्हें यूरोपिया हो गया। इस बीमारी के दौरो में कई बार उन्हें सरसाम भी हो जाता था। इस अर्ध चेतनामय पागलपन की दशा में भी वह दर्शन और धर्म की चर्चा ही करते थे। आठ दिनों तक मुझे उन की सेवा करने का अवसर मिला, इस के बाद वह पवित्रात्मा अपने भौतिक देश को छोड़ कर स्वर्ग चली गई।

उस अंतिम समय में भी मैं अपने मित्र के सिरहाने ही बैठा था। उन के वियोग ने मेरा दिल तोड़ दिया। मैं बच्चों की तरह फूट फूट कर रोया। मुझे याद नहीं कि अपने इस जीवन में मैं और कभी इस दिन से अधिक रोया होऊं। मेरे बचपन में ही मेरी युवती बहन का देहान्त हुआ था, मेरे दो भाई और मेरे पूज्य पिता भी मेरे युवाकाल में ही परलोक सिधारे, परन्तु उस दिन की तरह मुझ में से आंसुओं का सोता और कभी नहीं फूटा। उस दिन मेरा वह अभिन्न हृदय मित्र उठ गया। आर्यसमाज का वह यशस्वी सेवक उठ गया, वैदिक सिद्धान्तों का विद्वान् एवं सच्चा ब्रह्मण उठ गया और सब से बढ़ कर दरिद्रनारायण का वह सच्चा सेवक उठ गया। शहर भर में रोना-धोना मच गया। मुझे याद है उस महात्मा की अर्थी के साथ सैकडों गरीब इस तरह रोते चीखते हुए चल रहे थे, जिस तरह उनके पिता के देहान्त हो गया हो। नगर के मरीजों में बहुत दिनों तक मातम छाया रहा। सचमुच वह ऐसा ही दरिद्रवत्सल था। जिन लोगों को कभी उस सच्चे ब्रह्मण के संसर्ग में आने का अवसर मिला हैं, वे उसकी याद में आज तक भी आंखों में आंसू भर कर रोते हैं।'

"शहीद लेखराम"

सन् १८९५ में मुझे मिडिल की परीक्षा देनी थी। आर्य समाज में उस समय तक दो दल मांस-पार्टी और घास पार्टी के बन चुके थे। मैं भी इसी वर्ष मांस पार्टी का एक उत्साही सदस्य बन गया। दो तीन वर्षों तक इसी दल में रहा। मांस पार्टी में शमिल मैं भी एक विचित्र बात पर हुआ। पहले मैं मांस भक्षग के विरोध में था। अपने इसी मन्तव्य को लेकर मैं लाला हंसराज जी के बड़े भाई लाला मुल्कराज जी से भिड़ पड़ा। वे आयु में मुझ से बहुत बड़े थे। मांस भक्षण के वे सब से वेद प्रचारक समझे जाते थे नवयुवकों में अहं-भाव स्वाभाव से बहुत होता है, मुझ में तो इसकी मात्रा बहुत बढ़ी चढ़ी थी। बालक होते हुये भी मैंने यह शपथ कर ली कि यदि मैं लाला मुलकराज जी से विवाद में हार गया, तो मांस खाना शुरू कर दूंगा। बहस हुई और मैं सचमुच हार गया। मैं अपने वचन पर पक्का रहा। लाला जी ने उसी समय बाजार से मांस मंगवाया और मैंने उसे खाया, परन्तु अपने पुराने सस्कारो के कारण दो-तीन बार से अधिक मांस न खा सका। यद्यपि मांस पार्टी का तरफदार मैं दो तीन वर्षो तक रहा। मैं उन दिनों नामुस्लिम की तरह जोशीला था। महात्मा पार्टी के बच्छोवाली समाज में जाना मैं गुनाह समझता था, मगर फिर भी मुझे वहां हर सप्ताह जाना होता था। मांस पार्टी के नेता लाला हंसराज जी ने मेरे जिम्मे यह डयूटी लगा दी थी कि मैं उस समाज के साप्ताहिक अधिवेशन में सम्मिलित होने वाले सदस्यों और दर्शकों की गिनती करके उन्हें बतलाया करूं।

उन्हीं दिनों बच्छोवाली समाज के एक साप्ताहिक अधिवेशन में मैंने देखा कि एक हट्टा-कट्टा पंजाबी जवान व्याख्यान देने के लिये समाज की वेदी पर आया। वह लुधियाना के कपड़े का बन्द गले वाला कोट पहने था, परन्तु कोट के ऊपर वाले बटन खुले हुये थे। सिर पर पगड़ी थी। उसका कद बहुत लम्बा था। देखने में वह व्यक्ति एक पहलवान प्रतीत होता

था। वेदी पर आते ही उसने व्याख्यान शुरू कर दिया। वह बड़े ऊंची आवाज में और जल्दी जल्दी बोलता था। अपने पास बैठे हुये एक महाशय से मैंने पूछा—यह कौन है उसने आश्चर्य से उत्तर दिया—तुम्हें यह भी नहीं मालूम, यह आर्य समाज के सुप्रसिद्ध विद्वान् प्रचारक पण्डित लेखराम जी हैं। मैं व्याख्यान सुनने लगा। सुनाने क्या लगा व्याख्यान ने स्वयं मुझे अपनी तरफ आकृष्ट कर लिया। पण्डित जी एक घण्टे तक बोले। उनका भाषण सचमुच ज्ञान का भण्डार था। अपने व्याख्यान में उन्होंने इतने आधिक वेद मन्त्रों, फारसी, अरबी के वाक्यों तथा यूरोपियन विद्वानों के प्रमाण और उद्धरण दिये कि मैं आश्चर्य चक्ति रह गया। मेरे दिल में आया, यदि व्याख्याता बनना हो इसे आदर्श बनाना चाहिए। मैंने सचमुच उन्हें अपना आदर्श बनाया। उस दिन के बाद से मैं जो कुछ पढ़ता, उसे याद करने की कोशिश करता। पुस्तकों पर निशान लगाने की आदत भी मैंने उसी दिन से डाली। दस-बारह वर्षो के बाद पड़े हुए उद्धरणों जो मैं अपने रजिस्टर में लिखने लगा। आज मेरे इस तरह के रजिस्टर बहुत संख्या में है, और मैं उन्हें अपनी अमूल्य सम्पत्ति समझता हूं। पण्डित जी का व्याख्यान सुन कर मुझ पर यह प्रभाव पड़ा था कि वे संस्कृत, फारसी, अंग्रेजी और अरबी के प्रकांड विद्वान हैं, परन्तु पीछे से यह जानकर मेरे आश्चर्य की सीमा न रही कि वे संस्कृत बहुत थोड़ी जानते हैं और अंग्रेजी तो बिल्कुल नहीं जानते। हां, अरबी और फारसी अवश्य जानते थे।

मैं चकित था कि एक भाषा का बिल्कुल ज्ञान न होते हुए भी ये उसके इतने अधिक प्रमाण किस तरह सुनाते हैं। मजा तो यह है कि उन प्रमाणों में एक भी अशुद्ध नहीं होता। यह रहस्य भी एक दिन खुल गया, एक दिन मैं रविवार के अतिरिक्त किसी और दिन बच्छोवाली आर्यसमाज के मन्दिर में गया। वहां एक टोली जमा थी। कौतुहल वश मैं भी उसी में शामिल हो गया। वहां देखा पण्डित लेखराज जी को ग्रेजुएटों को घेर कर बैठे हैं। एक ग्रेजुएट को वे बड़ी जोर से डांट बता थे। बी० ए० पास करके भी तुमने अंग्रेजी नहीं सीखी। मैक्समूलर

के एक उद्धरण का तुमने अशुद्ध अनुवाद किया है। वह ग्रेजुएट बिल्कुल सटपटाया हुआ था। तथापि उसे मालूम था कि पण्डित जी अंग्रेजी नहीं जानते। साहस करके उसने कहा यह आपको कैसे मालूम? पण्डित जी ने दूसरे ग्रेजुएट से कहा—बताओ भाई, इसने क्या गलती की है। दोनों नए-नए ग्रेजुएट एक दूसरे से पिल पड़े। थोड़ी देर के बाद विवाद के बाद पहले ग्रेजुएट ने स्वीकार किया कि उसका अनुवाद अशुद्ध था पीछे से मुझे मालूम हुआ कि पण्डित जी सदैव ऐसा ही करते हैं। संस्कृत के उद्धरणों के लिए संस्कृतज्ञों को और अंग्रेजी के लिये अंग्रेजी के लोगों को एक दूसरे से भिढ़ा कर वे इन दोनों भाषाओं के प्रमाण जमा करते है। मुझ पर पण्डित जी के इस सत्य प्रेम और स्वपक्ष पुष्टि की निष्ठा ने बहुत गहरा प्रभाव डाला। मैंने सोचा, जो व्यक्ति एक भाषा बिल्कुल न जानते हुए भी इतने अध्यवसाय से उसके प्रमाण जमा कर सकता है, उसके मार्ग में कोई कठिनाई अंकुरित नहीं हो सकती।

पं० लेखराम जी जहां एक ओर असाधारण विद्वान थे वहां दूसरी ओर वे एक वीर शहीद की भांति निर्भीक और साहसी भी थे। मेरे एक मित्र ब्रह्म समाज के नेता ने उसका नाम आर्य समाज का अली रखा था।

अपने विवाह के बाद एक दिन मैं लाला मुंशी राम जी के निवास स्थान पर बैठा था। उन दिनों खाला जी कहलाते थे। उसी समय पं० लेखराम जी उनसे मिलने के लिये उनके मकान पर आये। ला० मुंशी राम जी उन दिनों आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान थे और पं० लेखराम जी सभा के वैतनिक उपदेशक। आर्यसमाज के अनेक अधिकारी

आर्यसमाज के वास्तविक आजन्म सेवकों को, जो असल में आर्यसमाज के के प्राण हैं, केवल इसलिये सभा का वेतन भोगी सेवक समझते हैं क्योंकि अपना सम्पूर्ण समय आर्य समाज की सेवा में व्यय कर देने के कारण उनके लिये सभा से आजीविका मात्र वृति लेना आवश्यक होता है, परंतु उन दिनों यह बात न थी। प्रतिनिधि सभा तब उपदेशकों का मान करना जानती थी यहां तक सभा के अधिकारी प्रभावशाली प्रचारकों से चुपचाप डांट खाने में भी अपनी मानहानि नहीं समझते थे। जब पं०

लेखराम जी मकान पर आये, प्रधान जी उठे और पंडित जी के बैठ जाने बाद ही बैठे। नमस्कार के बाद प्रधान जी ने कहा—सभा के कार्यालय से सूचना दी गई थी कि इस सप्ताह आप नगर में प्रचार के लिये जा जायेंगे, परन्तु अब आप का प्रोग्राम बदल दिया है। आप अब नहीं जाइएगा।

पण्डित जी ने पूछा—यह किस लिए ?

प्रधान जी ने उत्तर दिया—मुझे विश्वस्त सूत्र से विदित हुआ है कि...ये मुसलमान आप के प्राण लेने का कुचक्र रच रहे हैं। यदि आप को अपने जीवन की चिन्ता नहीं, तो मुझे उस की परवाह करनी ही चाहिए न।

न मालूम क्यों, पण्डित जी को क्रोध आ गया। वे असाधारण जोश में आकर बोले—लाला जी ! आप जैसे डरपोक यदि संस्था में बहुत अधिक बढ़ गये, तो आर्य समाज का बेड़ा डूब जायेगा। मैं मरने से नहीं डरता। अब तो मैं अवश्य ही वहीं जाऊंगा।

प्रधान जी तब भी मुस्करा रहे थे। इस बार उन्होंने नियन्त्रण से काम लेना चाहा। उन्होंने कहा—मैं सभा के प्रधान की हैसियत से आप का जाना आवश्यक समझता हूं, इस लिये मैंने आप का प्रोग्राम बदल दिया है। मेरी आप से प्रार्थना है कि अब बताए हुये प्रोग्राम का ही अनुसरण करें।

अब की बार पण्डित जी ने जरा नम्र आवाज में जवाब दिया, परन्तु उन की जिद उसी तरह कायम थी। उन्होंने कहा—मुझे मालूम है कि आप को मुझ से मोह है, उस मोह में कायरता पूर्ण वकालत मिला कर आप मुझे—न जाने के लिये बाधित करना चाहते हैं, परन्तु मैं यह स्पष्ट शब्दों में कह देता हूं कि अब तो जरूर वहीं जाऊंगा। यदि आप वहां मुझे सभा की तरफ से नहीं भेजेंगे, तो मैं अवैतनिक अवकाश लेकर अपने किराये से वहां जाऊंगा।

मुझे स्मरण हैं उन दिनों पंडित जी सभा से केवल ५०) मासिक वेतन पाते थे। प्रधान जी भला उन की इस निर्भीक घोषणा का क्या

जवाब देते ? उन्होंने केवल इतना ही कहा—आप जहां चाहें जा सकते हैं अब मैं आपको किसी बात के लिए वापिस नहीं करूंगा। सचमुच हमारी सभा का यह सौभाग्य है कि आप जैसे वीर पुरुष की सेवा उसे प्राप्त है ।

एक दिन लाहौर की सनातन धर्म सभा में किसी सनातनी पण्डित का व्याख्यान था। मै भी वह व्याख्यान सुनने गया था। वह व्याख्यान मैंने बड़े ध्यान से सुना था, उस का सार मुझे याद हो गया।

भाषण सुनने के बाद घर की तरफ लौटते हुये राह में ही अचानक पण्डित लेखरामजीसे मुलाकात हो गई। वे मेरा नाम जानते थे। उन्होंने मुझ से पूछा—कहां से आ रहे हो ? मैंने कहा सनातन धर्म सभा के भवन से। उन्होंने पूछा—वहां क्या करने गये थे ? मैंने उत्तर दिया—व्याख्यान सुनने। पण्डित जी ने पूछा—व्याख्यानमें क्या क्या बाते सुनीं ? मैंने उस भाषण का सारांश पण्डित जी को सुना दिया। पण्डित जी ने मेरी पीठ पर हाथ रख कर मुझे शाबाश दी और कहा—शाबाश, प्रत्येक चीज को इसी तरह ध्यान से सुना करो। मैंने पूछा—क्या इस व्याख्यान की बातें ठीक हैं ? पण्डित जी ने एकदम उत्तर नहीं दिया, और कहा मेरे यहां आना, मैं तुम्हें इन सभी बातों का विस्तृत उत्तर दूंगा। पण्डितजी सचमुच अपने विश्वासों के इतने ही पक्के थे। उन्हें कभी यह आशंका तक न होती थी कि मेरे विचारों में कोई अशद्धि या भ्रांति भी हो सकती है। अपने विपक्षियों की बातें तो वे बड़ी सभ्यता और शांति से सुनते थे, परन्तु उन के दिल में यही होता था कि व्यक्ति गुमराह और अशुद्ध विचारों का है।

डा० चिरंजीव भारद्वाज

सन् १९१८ में लाहौर में सिरमुन्नी समाज के नाम से एक नया आर्य समाज खुलने की मजेदार चर्चा पढ़े-लिखे लोगों में जोरों पर थी। लोगों में मशहूर था कि बच्छोवाली समाज (महात्मा पार्टी की समाज) के बहुत से नौजवान सदस्य इस सिरमुन्नी समाज की ओर खिंचे जा रहे हैं। ठीक संख्या पता लगाने पर मालूम हुआ कि ६ जवान इस

समाज के मेम्बर बन चुके हैं। मैं भी जवान था और अभी ताजा-ताजा ही कलचड़ दल से महात्मा दल से सम्मिलित हुआ था। अपने एक मित्र से मैंने पूछा कि भाई, यह सिरमुन्नी समाज किस चीज का नाम है। मेरे मित्र किसी चीज का वर्णन करने में सिद्धहस्त थे। उन्होंने कहा--डाक्टर भारद्वाज नाम के एक उत्साही नौजवान हैं। अपनी अध्यक्षता में बहुत से अन्य युवकों को साथ लेकर उन्होंने इस नई संस्था की स्थापना की हैं। इस संस्था का वास्तविक सिरमुन्नी समाज नहीं, आर्य धर्म सभा हैं। इस सभा का उद्देश्य आर्य समाजियों में ऋषि दयानन्द के व्यवहारिक जीवन सम्बन्धी सिद्धांतों को असली तौर से शुरू करना है। आज कल तो अधिकांश आर्य समाजी सिर्फ कहने भर के ही आर्य हैं, समाज के प्रधान तक बन जाते हैं और श्राद्ध के दिन ब्राह्मणों को भोजन भी कराते हैं। माघी के दिन चावल का संकल्प किसी ब्राह्मण के नाम पर न सही, अनाथालय के नाम पर ही सही किया जाता है। किसी ने कहा केश आदि धारण कर रखे हैं, तो कोई संध्या भी कर लेता है और साथ जपजी का पाठ भी। समाज भी होता है और गुरुद्वारा भी। लोगों को यही भय होता है कि न जाने मरने के बाद कौन सी बात सच निकले। सन्ध्या के साथ विष्णु सहस्र नाम का भी पाठ कर लेने में हर्ज ही क्या है यही न कि थोड़ा समय अधिक लग जायेगा. परलोक के लिये इतना ही सही। भारद्वाज बड़े उत्साही हैं। उन्हें यह बरदाश्त नहीं. इसी कारण उन्होंने यह सभा खोली है। इस सभा का उद्देश्य हैं परदा जन्म मूलक जात-पात और परम्परागत रूढ़ियों को तोड़ना। सभा का सदस्य बनने के लिये व्यक्ति को एक बार सिर के बालों का मुण्डन करना होता है। इसी कारण लोगो ने इस सभा का नाम सिरमुन्नी समाज रख छोड़ा है।

इस वर्णन में सभा की ओर आकृष्ट हुआ। अपने उत्साह के कारण इस सभा ने लाहौर में एक विचित्र सनसनी पैदा कर दी। शुरू-शुरू में जब किसी नये सदस्य का प्रवेश संस्कार किया जाता था तब लोग बड़ी संख्या में कोतुहलवश उसे देखने में जाते थे। लाला हंसराज जी तथा पं० आर्य मुनि जी इन दर्शकों में थे। डा० साहब ने स्वयं अपने

घर से बिल्कुल पर्दा हटा दिया था। इस बात से लोगों में असन्तोष भी था। भारद्वाज की तारीफ करने वाले लोग भी थे। कहा जाता था कि भारद्वाज जी को महात्मा दल से बड़ी आशा थी, परन्तु पण्डित लेखराम जी की शहादत के परिणाम स्वरूप जब थोड़ी देर के लिये दोनों पार्टियां मिल गईं तब वे अपने सिद्धांतों के सम्बन्ध में समाज की ओर से निराश हो गये और उन्होंने यह आर्य धर्म सभा कायम की। मेरे दिल में इस संस्था के सदस्यों से मिलने और परिचय बढ़ाने की इच्छा उत्पन्न हुई, दिल्ली के डाक्टर सुखदेव जी मेरे मित्र थे। वे भी इस सभाके सदस्य थे। उन्हीं के द्वारा मुझे सभा के अन्य सदस्यों से परिचय प्राप्त करने का अवसर मिला। वे लोग थे—डा० चिरञ्जीव भारद्वाज, जो इस सभा के संस्थापक और प्राण थे, डा० लभूराम जो पीछे से स्थिर रूप से विलायत चले गए, पं० चरणदास जिन का अब देहान्त हो गया है, पं० लक्ष्वीरसिंह जिन का एक ही फेफड़ा काम करता था। फिर भी शास्त्रार्थ करने को तैयार रहते थे। इन के बारे में मशहूर था कि ये कुरान शरीफ की मुदा अपनी कोख में रखते हैं। डा० धर्मवीर जी बरसों तक विलायत रह कर अब लाहौर में प्रैक्टिस कर रहे हैं। इन सब शक्तिशाली और दृढ़ निश्चयी नवयुवकों से परिचय प्राप्त कर के मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। खासकर डा० भारद्वाज के व्यक्तित्व ने तो मुझे बहुत प्रभावित किया। अपने अनुयायियों पर उन का प्रभाव एक गौरव की वस्तु थी। दृढ़ निश्चय, आत्मविश्वास, निर्भयता, अपने सिद्धांतों का ज्ञान और युक्ति की प्रगढ़ता—ये सब बातें थीं, जिन से वह अपने नवयुवकों के नेतृत्व को अधिकार पूर्वक कायम रख सकते थे, यद्यपि बहुत से लोग मुझे तब तक कालेज पार्टी का भेदिया ही समझते थे, फिर भी भारद्वाज और डा० धर्मवीर ने बहुत शीघ्र मुझे अन्तरंगता से अपना लिया।

मैडिकल कालेज की अन्तिम परीक्षा में डा० भारद्वाज फेल हो गये थे, परन्तु उन्होंने भारत में बैठे-बैठे ही एम० डी० की डिगरी मंगवा ली, इस के बाद वे बड़ौदा चले गये, और मेरी उन की मुलाकातें बन्द हो गईं। बहुत दिनों बाद लाहौर ही में उन की धर्मपत्नी श्रीमती सुखली देवी तथा उन की बहन कुमारी केसरी देवी से मेरा परिचय हुआ। डाक्टर साहब हिप्नोटिज्म भी जानते थे। केसरी उचित माध्यम थी।

उसी पर वे अपने परीक्षण किया करते थे। जिस दिन मैं डा० साहब के यहां पहुंचा, उन के पास लाहौर ही के एक महाशय भी आये हुये थे। आज हिप्नोटिज्म का तमाशा देखिये। मैंने इस से पूर्व केवल एक बार ही इस विद्या का चमत्कार देखा था, अस्तु डाक्टर साहब ने केसरी पर प्रभाव किया और मेरे साथ जो दूसरे महाशय बैठे थे, उन की तरफ देख कर कहा—इन महाशय के घर जाओ और वहां के समाचार लाओ।

हम लोग केसरी की तरफ बड़े कौतुहल से देख रहे थे। वह थोड़ी देर तो चुप रही। इस के बाद उस ने कहा—इन के घर में सिर्फ एक कमरा है, उस के सामने बरामदा है, दालान बहुत तप है। इस दालान में एक युवती और एक बुढ़िया बैठी है। ये दोनों परस्पर गाली-गलौच कर रही हैं।

वे महाशय चौक कर खड़े हो गये। उन्होंने कहा—ओहो मेरी मां स्त्री लड़ रही होगी। यह कह कर वे घर चले गये। केसरी की बात सचमुच सही थी। डाक्टर साहिब हिप्नोटिज्म से चिकित्सा भी किया करते थे।

अमेरिका की मुफ्त में प्राप्त की हुई एम० डी० उपाधि को अपने नाम के साथ लगाते हुए डा० साहिब को लज्जा प्रतीत होती थी। डा० धर्मवीर भी मैडिकल कालेज की परोक्षा में फेल हो गए थे—और उन्होंने अमेरिका ही से एम. डी. मंगवा ली थी। अतः दोनों मित्र अपने को लज्जित अनुभव करते थे। एक दिन जालन्धर में मुझे पत्र मिला कि दोनों मित्र चिकित्सा की उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिये विलायत चले गए हैं।

महात्मा मुन्शीराम जो की कन्या अमृतकला का विवाह अन्य मूलक जात-पात तोड़ कर डा० सुखदेव जी से हुआ। देवी अमृतकला से मेरा घनिष्ठ सम्बन्ध था। उसे मैं अपनी छोटी बहन समझा करता था। महात्मा गांधी जी तो मेरे धर्म पिता थे ही, अत: सम्बन्ध और भी घनिष्ठ हो गया था। डा० सुखदेव जी भी मेरे पुराने मित्र थे और वह विवाह कराने में भी मेरा बड़ा हाथ था, अत: अत: इस नवीन परिवार से मेरा घनिष्ठ सम्बन्ध होना स्वाभाविक ही था।

डा० सुखदेवजी की लड़की का नामकरण संस्कार था। मुझे तो उसमें आना ही था। डाक्टर साहब ने डा० भारद्वाज की धर्मपत्नी श्रीमति सुमंगली देवी को भी निमंत्रित किया। घर आई। संस्कार में वह और हम लिखे। निश्चित रूप से हम दोनों की बातचीत का एक ही विषय हो सकता था। चिरंजीव भारद्वाज मेरे घनिष्ट मित्र थे और वे तो उनका उत्तम भाग ही थी। फिर किसी और बात की चर्चा का अवसर ही कहां हो सकता था। भाग्य से थे भी दोनों ही बोलने वाले। हम दोनों उनकी प्रशंसा करने लगे। खूब देर तक यह प्रकरण चला। विदा होते समय देवी सुमंगली ने कहा 'पत्र लिखते रहा कीजिए।' उस समय से पूर्व मेरा किसी महिला से पत्र व्यवहार न था। इसी के कारण मैंने कहा-पत्र व्यवहार का प्रारम्भ आप ही की ओर से होना चाहिए।

इसके तीसरे दिन ही उनकी चिट्ठी मेरे पास आई और उसी दिन मैंने उनका जबाब दिया। फिर तो पत्र व्यवहार का सिलसिला जारी ही रहा। कई मास बाद सुमंगली देवी जी का मुझे एक पत्र मिला। उसमें बहुत संक्षेप में लिखा था कि एक दम लुधियाना चले आइये। मैं बड़ी चिन्ता में पड़ा। इसका क्या जबाव दें। भारद्वाज जी विलायत हैं। इस देश का वायुमण्डल इस सम्बन्ध में बहुत ही सन्देहपूर्ण और विषक्त है। यहां तो वैसे ही लांछन लगाने से बाज नहीं आते, फिर एक देवी के घर आने जाने का मतलब तो लोग कुछ और समझेंगे। यह प्राचीन भारत तो है नहीं कि द्रोपदी अपने को कृष्ण का मित्र कह सके, या कौशल्या अपने को जनक की सखी उद्घोषित कर सके। दूसरी तरफ सुमगली देवी मेरे मित्र की पत्नी ही नहीं। मेरी बहिन थी। अतः इसे मैं अपना आवश्यक कर्त्तव्य समझता था कि बुलवाये जाने पर उसकी सहायता करूं। इस कारण मैं कुछ किंकर्त्तव्य विमूढ़ सा बन गया। बहुत देर तक यह निर्धारित ही न कर सका कि इस अवस्था में मुझे क्या करना चाहिए। अन्त में मैंने सोचा, मेरा धर्म मुझे आज्ञा देता है कि इस अवस्था में मैं वहां अवश्य जाऊं। मुझे ख्याल आया, क्या हिन्दुओं की धर्म बहिन नहीं होती। कौन पतित से पतित हिन्दू भी मित्र की पत्नी की सहायता करना पाप समझूंगा। बस, मुझ में साहस की भावना जाग्रत हो गई। मैंने

निश्चय कर लिया कि मैं कायर नहीं बनूंगा । लोकाचार की उपेक्षा करके मैं अपना कर्त्तव्य पालन करूंगा ।

दूसरे दिन मैं लुधियाना जा पहुंचा । वहां एक और कठोर परीक्षा मेरी प्रतीक्षा में थी । बहिन सुमंगली ने मुझ से कहा—अपनी अन्तरात्मा की आवाज तथा अपने पति देव की इच्छा पूर्ण अनुमति से मैं यहां के बहुत से सामाजिक कार्यों में हिस्सा लेती हूं । यहां की कन्या पाठशाला में, मैं पढ़ाती हूं । स्त्री समाज में भाषण देती हूं । मेरे पति विलायत से प्रायः अपने सभी पत्रों में उपदेश दिया करते हैं—मेरे उद्देश्यों को कभी न भूलना, स्त्रियों से परदे की बुराई को दूर करना और उन्हें वैदिक सिद्धान्तों को सन्देश सुनाते रहना । प्रिय, मेरी आत्मा को तुम से बड़ी २ आशाएं हैं । परन्तु दूसरी तरफ मेरे पिता मेरी इन कृतियों में अपना अपमान समझते हैं । वे कहते हैं कि सुमंगली मेरी नाक काट रही है, पहले वे मुझे तरह तरह से समझाया ही करते थे, परन्तु अब तो उन्होंने मेरे इन कार्यों को जिस किसी तरह बन्द कर देने का निश्चय ही कर लिया है । वे कहते हैं कि कम से कम जब तक मेरे पास हो तब तक मेरी इच्छा के अनुसार ही चलो, भले धर की लड़कियां घर में ही रहती हैं, ऐसे काम नहीं करतीं । मुझ से अब ये बातें नहीं सही जाती ! मैं बहुत दुविधा में हूं, पति की बात मानूं या पिता की । आप मुझे आदेश दीजिये कि इस अवस्था में क्या करूं ?

मैं फिर चिन्ता में पड़ा, देवी सुमंगली के प्रश्न का उत्तर दूं । यदि पिता की बात मानने को कहता हूं, तो यह अपनी आत्मा पर अत्याचार करना है । यदि पति की बात पर दृढ़ रहने की बात कहता है तो उसके परिणामों की भी मुझे ही सहन करना होगा । हे ईश्वर अपनी बहन को क्या राय दूं ?

अन्त में मेरी साहस की स्वाभाविक भावना पुनः विजयी हुई । समंगली को मैंने यही राय दी कि वह अपने पति की आज्ञा का ही अनुसरण करे । उसका यह निश्चय जान कर उसके पिता ने कहा—तो फिर अब तुम मेरे यहां नहीं रह सकती । उसके पति को कभी यह स्वप्न में भी आशा न थी कि मेरी पुत्री की मेरी इतनी बड़ी धमकी का सामना कर

सकती है और फिर कोई अन्य व्यक्ति चाहे वह सुमंगली का धर्म भाई ही क्यों न हो, उसे अपने घर ले जाने का साहस कर सकता है, परन्तु उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा, जब मैंने उनसे कहा—तो फिर वह अपने भाई के घर चली जाएगी।

यह बात उन दिनों की है, जब किसी घर में परदा हटाने को भी भारी पाप समझा जाता था और यह बात लोगों को असम्भव कल्पना प्रतीत होती थी कि कभी परदा भी हट जाएगा। बहन सुमंगली तो पहले ही तैयार थी। अब उसके पिता चकराये। जो बात कभी उनकी कल्पना में भी न आई थी, वह प्रत्यक्ष दिखाई दे गई। वह घबरा गए। उन्होंने झट से कहा—सुमंगली मेरे ही पास रहे चाहे जिस तरह रहे।

अब उसकी बारी थी। उसने मुझे समझा दिया कि पिता जी से यह कह दो कि यदि कभी मेरी बहन को आप इस तरह से तंग करेंगे तो मैं अवश्य ही उसे अपने यहां ले आऊंगा। उसने यही बात उनसे कह दी, और मैं फिर जालन्धर लौट गया।

इस घटना से हमारे सम्बन्ध और भी अधिक दृढ़ हो गये। देवी सुमंगली ने यह घटना अपने पति को भी लिख दी थी, कुछ ही सप्ताहों के बाद डाक्टर भारद्वाज का एक लम्बा चौड़ा प्रेम पत्र मेरे पास आया। इसमें उन्होंने लिखा था—पुरानी स्मृतियों के नाम पर मेरी पत्नी की खोज खबर लेते रहिए, उसके हृदय में आपके लिये विशेष अनुभूति है।

———

धर्मपिता स्वामी श्रद्धानन्द जी के संस्मरण

विवाह के लिए मेरी बारात जालन्धर गई थी। लाला हंसराज जी मेरे मौसेरे भाई हैं। वह भी मेरी बारात में सम्मिलित थे। मेरी पत्नी कुछ वर्षों तक कन्या महा विद्यालय जालन्धर में शिक्षा ग्रहण कर चुकी थी, अतः विवाह में कन्या पक्ष की ओर से लाला देवराज जी और लाला मुंशी राम जी भी सम्मिलित हुए थे। मेरी आयु उस समय केवल १३ वर्ष की ही थी, फिर भी मुझ में अपनी कालेज पार्टी के लिए अदम्य उत्साह था। आर्य समाज की दूसरी पार्टी—महात्मा पार्टी—को मैं आर्य समाज का कट्टर शत्रु समझता था। संस्कार में लाला हंसराज जी मेरे निकट ही बैठे हुए थे। मुझे उसी समय दिखाया गया—महात्मा पार्टी का नेता मुंशीराम वह सामने बैठा हुआ है। मैंने उन्हें आज पहली बार देखा। मेरी आंखों में उनके लिए अश्रद्धा, क्रोध और अपमान भरा हुआ था। मैंने सोचा यही व्यक्ति आर्यसमाज की आंतरिक अशांति का मूल कारण है।

पन्द्रह दिन बाद मैं अपने ससुराल में गया। चार-पांच दिन वहां रहना आवश्यक था। मैं समझता था कि ससुराल में इतना समय यों ही कट जाएगा, इसलिए मैं कोई पुस्तक अपने साथ नही ले गया था। परन्तु मेरी यह धारणा गलत साबित हुई। मेरे लिये दिन काटना मुश्किल हो गया। मुझे बचपन से ही पढ़ने का व्यसन है, परन्तु अपने श्वसुरालय में पढ़ने योग्य कोई पुस्तक मैं प्राप्त न कर सका। दूसरे दिन मुझे मालूम हुआ कि लाला मुंशी राम की लायब्रेरी में अच्छी-अच्छी

पुस्तकों का संग्रह है। अभी दो दिन मुझे जालन्धर में और काटने थे। मैं यह प्रलोभन रोक न सका। प्रातः काल ही लाला मुंशी राम के घर उपस्थित हुआ। आज मुझे पहली बार उनसे बातचीत करने का अवसर प्राप्त हुआ। उस समय तक मेरी कोई विशेष बातचीत नहीं हुई थी, और न कोई विचार-विनिमय ही हुआ था। परन्तु इस पहली मुलाकात में ही मैं उनकी ओर आकर्षित हो गया। मैंने अनुभव किया, उनकी आंखों में विशेष आकर्षण है, उनकी वाणी में एक विशेष प्रभाव है। यह व्यक्ति चाहे कुछ और हो या न हो, आर्य समाज का शत्रु नहीं हो सकता केवल दस मिनट की मुलाकात में ही मेरा हृदय उनकी ओर आकर्षित हो गया और उनके हृदय में मेरे लिये प्रेम उत्पन्न हो गया।

२

सन् १८९८ की बात है। मैं तब डी० ए० वी० कालेज लाहौर के द्वितीय वर्ष में पढ़ता था। उन दिनों कालेज पार्टी स्त्रियों को उच्च शिक्षा देने के विरुद्ध थी, परन्तु महात्मा पार्टी वालों ने तो जालन्धर में कन्या महाविद्यालय ही खोल रखा था। दोनों पार्टियों के सिद्धांतों में यह भी एक भारी भेद था। तब तक गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना नहीं हुई थी, इस कारण महात्मा पार्टी की मुख्य संस्था जालन्धर का कन्या महाविद्यालय ही समझी जाती थी। इस समय मैं लाला मुंशी राम जी से अनेक बार मिल चुका था। इन्हीं दिनों मैंने जान स्टआर्ट मिल की (सब्जेक्शन आफ वीमेन) नामक पुस्तक पढ़ी थी। इसका मेरे विचारों पर बड़ा भारी प्रभाव पड़ा। मिल की अकाट्य युक्तिओं ने मुझे स्त्रियों को पुरुषों के समान अधिकार लेने का कट्टर पक्षपानी बना दिया। इस सम्बन्ध में मेरे विचार इतने अधिक क्रांतिकारी हो गए, जितने मुझे सम्भवतः आज, इस आयु में भी न होंगे। वह यह पुस्तक पढ़ कर किंतु एक बार फिर लाला मुंशी राम जी से मिलने का अवसर प्राप्त हुआ। मैंने देखा कि वह भी मेरे विचारों से पूर्णतया सहमत हैं।

इस वर्ष मैं डी-ए-वी कालेज के-पार्टी के मुख पत्र आर्य मैसेन्जर (Arya Messenger) का सम्पादक भी था। यह पत्र अंग्रेजी में प्रकाशित होता था। जालन्धर से लाहौर वापिस आकर मैंने इस पत्र में एक कहानी

प्रकाशित की। इस कहानी की नायिका कन्या-महाविद्यालय जालन्धर की प्रतिनिधि रुप थी। विवाह के अनन्तर उसने अपने आचरण और शिक्षा के प्रभाव से अपने आचार-भ्रष्ट पति का उद्धार कर दिया। मेरी इस कहानी का उद्देश्य कन्या महाविद्यालय जालन्धर की दिल खोल कर प्रशंसा करने का था। इसलिए डी. ए. वी. कालेज-पार्टी में इस कहानी के विरुद्ध बहुत आन्दोलन हुआ। लोग इस बात को सह नहीं सके। डी·ए·वी कालेज का मुख पत्र और उसमें महात्मा-पार्टी के कन्या महा-विद्यालय जालन्धर की प्रशंसा। कालेज के कर्णधार इस भारी अनर्थ को सह नहीं सके। यहां तक कि लाला हंसराज जी ने भी मुझे बुला कर भविष्य में ऐसा न करने का आदेश दिया।

उपर्युक्त घटना के दो वर्ष बाद मेरे क्रान्तिकारी विचार क्रियात्मक रुप धारण करने लगे। मैं अब कालेज के तृतीय वर्ष की पढाई लगभग समाप्त कर चुका था। मैंने अपने घर में पर्दा उठा देने का निश्चय किया। इसी उद्देश्य से एक दिन घर आकर मैंने अपने दो तीन मित्रों का परिचय अपनी पत्नी से करा दिया। उन दिनों यह घटना आजकल की उपेक्षा बहुत अधिक असाधारण थी। मेरे घर भारी आन्दोलन उठ खडा हुआ। घर के लोग मुझ पर ताने कसते थे, परन्तु मैं उनको किसी बात का जवाब नहीं देता था। सारा दिन तो इसी प्रकार निकल गया, परन्तु रात को पिता जी ने मुझे अपने पास बुलाया। मैं स्वयं इसी बात की प्रतीक्षा कर रहा था। उस समय रात के १० बज चुके थे।

पिता जी ने कहा—'तुम्हारी बदौलत आज हमारे घर में वह दुर्घटना हो गई, जो आज तक कल्पना से भी परे थी। तुमने अपने परि-वार की नाक काट दी।

मैंने धीमे स्वर में उनका विरोध किया। उन्होंने मुझे बहुत तरह से समझाया, परन्तु मैं उनसे सहमत नहीं हो सका। मैं बार-बार यही कहता रहा कि भविष्य में भी ऐसा ही करता रहूंगा।

आखिर तंग आकर उन्होंने कहा—यदि तुम्हें इस घर में रहना हो, तो तुम्हें इस सम्बन्ध में मेरी आज्ञा का पालन करना ही होगा।

मैंने अपनी बात एक बार और दुहरा दी– मैं तो यही उचित समझता हूं और भविष्य में भी इसी तरह रहूंगा।

पिता जी क्रोध में आ गये। उन्होंने नाराजगी में कहा– अब तुम्हें यह घर छोड़ देना पड़ेगा।

मैंने धीमे स्वर में कहा जो आपकी आज्ञा।

क्षण भर बाद मैंने फिर पूछा—कब निकलूं ? अभी या कल प्रातः काल ?

उन्होंने भर्राई हुई आवाज में उत्तर दिया—प्रातः काल।

प्रातः काल मैं कुछ पुस्तकें लेकर ही डी० ए० वी० कालेज पहुचा वहां पहूंच कर मुझे मालूम हुआ कि मुझे एक सप्ताह के लिए निकाल दिया गया है।

मैं अपना बस्ता बगल में दबा कर डी० ए० वी० कालेज के हाते से बाहर हो गया। इस समय मैं अपने घर और कालेज, दोनों से बहिष्कृत हो चुका था। बहुत देर तक मैं यूं ही बिना उद्देश्य के लाहौर की बाहर की सड़क पर धीमे-धीमे चलता चला गया। अन्त में दोपहर के बाद गोल बाग के एक पेड़ की साया में बस्ता में रखकर बैठ गया। गोल बाग की पगडण्डी और पास के राजपथ पर लोग आ-जा रहे थे। शाम हो जाने के कारण पेड़ के घने पत्तों में चिड़ियां चहचहाने लगी थीं। इन सब में कुछ भी नई बात न थी। आज से पूर्व भी मैं बीसियों बार इस पेड़ के नीचे से गुजर चुका था, परन्तु आज मेरे लिये सभी कुछ नया हो गया था। मेरा बरसों का परिचित लाहौर शहर भी मेरे आज बिल्कुल अपरिचित के समान बन गया। उस पेड़ की घनी साया में घण्टों तक बैठकर मैंने खूब सोचा कि कहां जाऊं, परन्तु कुछ न सूझ पड़ा।

---

१. मुझ पर दो अभियोग लगाये गये थे। पहला तो यह कि मैंने महात्मा पार्टी के वेद प्रचार फंड में धन जमा करने का प्रयत्न किया है। दूसरा यह कि मैं डी० ए० वी० कालेज में महात्मा पार्टी का प्रचार किया करता हूं। अन्त में मुझे यह आज्ञा दी गई कि मैं महात्मा पार्टी के वेद प्रचार फण्ड के लिये एकत्र किये गये धन को वापिस लौटा दे। यह स्वीकार न करने पर मुझे डी० ए० वी० कालेक से प्रमाण पत्र लेकर पृथक हो जाना पड़ा। —लेखक

सूर्यास्त से थोड़ी देर पूर्व मेरे एक दोस्त अचानक वहां आ निकले। उन्होंने मुझे इस प्रकार पेड़ के नीचे बस्ता लिये हुये उदास बैठा देखकर पूछा—इस तरह यहां क्यों बैठे हो ?

उत्तर में मैंने उन्हीं से पूछा—तो फिर कहां जाऊं ?

उन्होंने बहुत ही आश्चर्य से कहा—कहां जाऊं का क्या मतलब, अपने घर जाओ और कहां ?

मैंने उन्हें सारी घटना कह सुनाई। वह मुझे अपने घर ले गये। मुझे आश्रय मिल गया[१],

चार-पांच दिन में यह घटना जालन्धर में लाला मुन्शीराम जी को ज्ञात हुई। वह अगली ही गाड़ी से लाहौर पहुचे। लाहौर में मेरे मित्र के मकान पर पहुंच कर उन्होंने मुझे बुलाया। मुझे एक टक देखते रहकर उन्होंने कहना शुरू किया—रामदेव ! आज से तुम मेरे पुत्र हो। घर से निकाले जाने की तुम कोई चिन्ता न करो। मैं तुम्हारा पालन करूंगा। किसी दूसरे कालेज में तुम्हें एम० ए० तक पढ़ाऊंगा।

मेरी आंखों में आंसू भर आये—यह कैसी महान् आत्मा है। मेरा गला भर आया। घर से निकलने के बाद आज पहली बार मेरी आंखों में आंसू आये। मैंने सचमुच एक नवीन पिता प्राप्त कर लिया।

परन्तु मुझे यह ज्ञात न था कि लाला मुन्शीराम दिन-रात सामाजिक कार्यों में व्यस्त रहने के कारण वकालत छोड़ चुके थे। इसलिये उन पर अपने कारण से आर्थिक बोझ डालना मुझे स्वीकार न था। उन्होंने बार-बार मुझे पुनः कालेज में प्रविष्ट होने की प्रेरणा की, परन्तु में तैयार न हुआ। आखिर उन्होंन मुझे 'आर्य पत्रिका' के सम्पादकीय विभाग में काम दिलवा दिया।

---

१. दो दिन बीत गये। मेरे पिता जी से मेरा निष्कासन सहा न गया। आखिर पिता का ही दिल तो था। उन्होंने मुझे बुलवा भेजा। अब मेरी बारी थी। मैंने उठकर घर जाने से इन्कार कर दिया।

मेरे धर्म पिता लाला मुन्शीराम अब महात्मा मुन्शीराम बन चुके थे। अब उनका सम्पूर्ण समय सामाजिक सेवा में ही व्यतीत होता था। अपने व्यक्तित्व को उन्होंने आर्यसमाज के साथ एक कर दिया था। मैं भी इन दिनों जालन्धर छावनी के विक्टर हाई स्कूल में हैडमास्टर के पद पर नियुक्त था। इस कारण मुझे प्रति दिन महात्मा जी के दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त होता था प्रति दिन उनके निवास स्थान पर जाकर मैं उनके विचार द्वारा लाभ उठाया करता था।

महात्मा जी ने सुमित्रा देवी नामक सौभाग्यवती कन्या नो अपनी धर्म-पुत्री बनाया था। सुमित्रा देवी कन्या महाविद्यालय जालन्धर में शिक्षा ग्रहण करती थी। विवाह योग्य आयु हो जाने पर महात्मा जी ने इन कन्या का विवाह जातपात के बन्धन तोड कर करने का निश्चय किया खोज करने पर उन्हें इस कन्या के लिए डा० गुरुदत्त नामक एक सुयोग्य वर भी प्राप्त हो गया। महात्मा जी अपनी धर्म पुत्री के इस आदंश विवाह की तैयारी करने लगे।

एक दिन सन्ध्या के समय मैं महात्मा जी के स्थान पर पहुंचा। मैंने कुछ विस्मय के साथ देखा, सदैव प्रसन्नता ओर उत्साह के भण्डार बन कर रहने वाले महात्मा मुन्शीराम आज कुछ उदास प्रतीत होते हैं।

कुछ देर तक उनके पास यों ही चुपचाप बैठें रहकर मैंने पूछा—

महात्मा जी। आज आप उदास क्यों हैं ?'

वह चुप ही रहे। उन्होने कोई उत्तर न दिया। मैंने बड़े आग्रह से कई बार उनकी उदासी का कारण पूछा। अन्त में मेरे बहुत अनुरोध करने पर उन्होंने उत्तर दिया—मेरी उदासी के दो कारण हैं। पहला तो यह कि सुमित्रा देवी का विवाह में जाति-बन्धन तोड़कर कर रहा हूं, इससे लोग मुझ से अत्यन्त नाराज हैं। यह नाराजगी यदि मुझ तक ही सीमित रहती, तब तो कोई बात न थी, परन्तु मेरे साथ ही साथ लोग तुम्हें भी गालियां देते हैं। क्यों कि तुम भी इस काम में मेरे मददगार हो। लोग तुम्हें गुरुदत्त का साला कहते हैं। मेरे कारण तुम्हें भी कष्ट हो रहा है। यह बात मुझे सहन नहीं होती।

मैंने बीच में ही रोक कर कहा—'इसमें क्या बुराई है ? मैं स्वयं सुमित्रा को अपनी धर्म बहन समझता हूं। लोग मुझे सैंकड़ों बार गुरुदत्त का साला कहें, मैं इससे जरा भी बुरा न मानूंगा।'

महात्मा जी जरा मुस्कराए। अब उनका चेहरा उतना उदास न रहा। उन्होंने फिर कहना शुरू किया—'खैर' मेरी उदासी का दूसरा कारण यह है कि मैं सुमित्रा का विवाह गुरुदत्त से करने जा रहा हूं, इस लिए मेरे सम्पूर्ण रिश्तेदार मुझ से बहुत नाराज हैं ? कई दिनों से भाई मुझे अलग कर देने की धमकियां दे रहे थे, आज मुझ से यह सहा न गया। मैंने अभी कुछ समय पूर्व ही घर की सब चाबियां भाई को दे दी हैं। अब इस घर में मेरा कुछ भी नहीं रहा। मैंने सभी कुछ अपने भाई को दे दिया इस समान से अब मेरा कोई सम्बन्ध नहीं।'

मैं कुछ उत्तेजित हो उठा। मैंने कहा—'नही' आपने यह ठीक नहीं किया। आपको सामान का बटवारा करने को तैयार हो जाना चाहिए था। इस प्रकार सारा समान छोड़ कर आपने ठीक नहीं किया।'

उन्होंने पूछा—'क्यों।' मुझे तो इस अवस्था में यही उचित प्रतीत होता है। मेरे कारण भाई क्यों कष्ट सहें ? लोग उन्हें भी तो सता रहे हैं।'

मैंने कहा—'आप अपनी दृष्टि से तो इतना बड़ा त्याग बड़ी खुशी कर सकते हैं, परन्तु आपकी सन्तानें भी तो हैं। उनके लिए भी तो अवश्य कुछ चाहिए।'

उन्होंने बड़ी निश्चिन्तता से उत्तर दिया—'अपनी सन्तानों का पालन स्वयं अपने बाहुबल से करूंगा। इस बात की मुझे जरा भी चिन्ता नहीं है।'

मैं सहसा पूछ बैठा—'तो फिर आप उदास क्यों हैं ?. महात्मा जी ने बड़ी शान्ति से उत्तर दिया—'आज तक मैं स्वयं अपने परिवार को पालता रहा हूं। अपने भाइयों की सब आवश्यकताओं को पूरा करना मैं

अपना कर्त्तव्य समझता रहा हूं। आज अपना सम्पूर्ण सामान एक साथ छोड़ कर मैं जब यह सोचता हूं कि अपने भाईयों को अब भविष्य में कहां से दे सकूंगा, तो मेरा हृदय बोझ से दब जाता है।'

मानवीय चिन्ता का यह दैवी कारण मेरी कल्पना से भी परे की वस्तु हैं। मैं कुछ भी न कह सका, चुपचाप विस्मय से उस महात्मा की ओर देखने लगा।

गुरुकुल कांगड़ी का वार्षिकोत्सव है। खूब चहल-पहल है, बड़ी संख्या में हम लोगों के ईष्टजन और मित्र वगैरा आये हुये हैं। सारा दिन मिलने जुलने में ही बीत जाता है। इन्हीं दिनों प्रातःकाल के समय मास्टर आत्माराम जी अमृतसरी मेरे पास आये। आते ही उन्होंने कहा—एक बात सुनिये।

मैंने पूछा—क्या ?

उन्होंने बड़ी सतर्कता से उत्तर दिया—पिछले 'सद्धर्म प्रचारक' में आर्य भ्रातृ सभा का पक्ष लेकर जो लेख प्रकाशित हुआ है, उसके सम्बन्ध में मैंने अभी-अभी महात्मा जी से कह आया हूं कि वह लेख रामदेव जी का ही लिखा हुआ है।

इस लेख में महात्मा मुन्शीराम जी पर बहुत से व्यक्तिगत ताने और आक्षेप थे, इसीलिये मैंने चौंक कर कहा—वह लेख तो आपने भी लिखवाया है, फिर उसे केवल मेरे नाम पर ही आप किस तरह डालना चाहते हैं।

मास्टर जी ने बड़ी समझदारी के स्वर में कहा—क्या हो गया। आप ही कुर्बानी का बकरा बन जाइए। आपका महात्मा जी से विशेष सम्बन्ध है। आप से यदि वह कुछ नाराज भी हो गये, तो कोई खास हर्ज नहीं।'

एक बार मास्टर जी से सत्य के नाम पर अपील करके भी मैं शहीद बनने को तैयार हो गया।

मास्टर आत्माराम जी वहां से चले गये। मैं अकेला बैठकर इस विचित्र परिस्थिति पर विचार करने लगा। इसी समय डिंगा निवासी

श्री भगतराम जी ने आकर मुझ से कहा—चलो, महात्मा मुन्शीराम जी तुम्हें बुलाते हैं।

मुझे विश्वास था कि मैंने धर्म पिता के सामने कोई बात छिपा रखना मेरे लिये आसान नहीं है। साथ ही मैं मास्टर आत्मा राम जी से शहीद बनने का वायदा भी कर चुका था, अतः मैंने उनके पास जाने से इंकार कर दिया। परन्तु भगतराम जी मुझ से आयु में बड़े थे। उनके सामने मेरा बस न चल सका। वह जबरदस्ती महात्मा जी के पास खींच ही लाए।

आज गंगा की बाढ़ के कारण गुरुकुल के अधिकांश कच्चे मकान भस्मसात हो चुके हैं परन्तु वह कमरा अपने साथ के अधिकांश कमरे बह जाने पर भी लगभग उसी तरह से विद्यमान है। यह उनका कार्यालय था। कमरे में वह अकेले ही बैठे हुये थे। उनका चेहरा अत्यधिक गम्भीर था। मैं कमरे में प्रविष्ट होकर उनके सामने ही एक कुर्सी खींच कर बैठ गया। वे चुपचाप बैठे हुये थे।

मेरी आंखों में आंसू भर आये। महात्मा जी की आंखों से भी आंसू झरने लगे। कुछ देर तक चुपचाप इसी प्रकार हम आंसू बहाते रहे, इसके बाद उन्होंने पूछा—'सद्धर्म प्रचारक' में वह लेख तुम्हारा ही लिखा हुआ है?

मैंने कहा—'मेरा ही समझिए।

उन्होंने कहा—चालाक बनने की कोशिश न करो। मुझे ठीक मालूम हैं कि वह लेख केवल तुम्हारा लिखा हुआ नहीं। झूठ बोलने के लिये जो साहस चाहिये, वह तुम में नहीं है।

मेरी रुलाई अब फूट पड़ी। सिसकियां भरते मैंने कहा—इस लेख का उत्तरादायित्व तो मुझ पर ही है, मुझे क्षमा कीजिये।

इसके कुछ दिन बाद महात्मा मुन्शीराम जी का एक पत्र मुझे प्राप्त हुआ। उसका निम्नलिखित अंश मैं आजन्म नहीं भूल सका।

अर्थात् मैंने अपना एक पुत्र लगभग खो दिया था, परन्तु ईश्वर का धन्यवाद है कि वह मुझे पुनः प्राप्त हो गया।

सामाजिक जीवन में अनेक परिवर्तन हुये। आर्य समाज के सम्मुख बहुत सी नई-नई समस्याएं आई। अनेक आन्दोलन हुये। कभी किसी विषय में महात्मा मुन्शीराम जी से मेरा मत मिला, कभी भी नहीं मिला। मेरे धर्म पिता और मुझ में अनेक सम्मति भेदों के अवसरों पर लेखों द्वारा गरमागरम बहस भी हो गई। कई अवसरों पर मैंने उसका लिहाज भी नहीं किया और उन्होंने भी मुझे नहीं छोड़ा। यह कुछ हुआ। हमारे सामाजिक सम्बन्ध में कुछ कठोरता भी आ गई। कई बरस इसी तरह निकल गए।

इन्हीं दिनों यह घोषणा हुई कि महात्मा मुन्शी राम जी शीघ्र ही संन्यास लेने वाले हैं। साथ ही गुरुकुल की स्वामिनी सभा ने मुझ से यह अनुरोध किया कि मैं गुरुकुल के आचार्य का कार्य सम्भाल लूं। मैं कुछ हिचकिचाया। कारण यह था कि गुरुकुल के प्रबन्ध की छोटी-मोटी बातों पर मतभेद रहा था। मैंने सोचा चलो महात्मा जी के सामने दिल खोल कर रख दें। इसके बाद जो कुछ होगा, देखा जाएगा।

रात को सोने से पूर्व मेरे सामने महात्मा मुंशी राम जी का संन्यास अपने धर्म पिता के संन्यास के रूप में आया। मैं तत्कालिक कलहों को भूलने लगा। मुझे धर्म पिता का वह पुण्य और प्रेममय सम्बन्ध स्मरण आया, जो उन्होंने मेरे घर से निकाले जाने के बाद मुझ से स्थापित किया था। मुझे अपने गुरु का यह वाक्य याद आया--ईश्वर का धन्यवाद है कि मैंने अपना पुत्र पुनः प्राप्त कर लिया। मैं विचलित हो उठा। मेरे हृदय का सम्पूर्ण वैमनस्य एक साथ भस्म हो गया। मैंने शीघ्र ही अपने धर्म-पिता के दर्शन करने का निश्चय किया।

महात्मा मुन्शी राम जी अपने गंगा तट के बंगले में अकेले बैठे हुये थे। मैं उनके पास पहुंचा। उन्हें नमस्कार करके बडी धीमी और शांत आवाज में मैंने कहा—महात्मा जी, यदि आप मेरे लिए वही धर्म-पिता मुन्शी राम बन सकते हो तो मैं कुछ निवेदन करना चाहता हूं।

वह कुछ क्षणों तक बड़ी भावमयी दृष्टि से मेरी तरफ देखते रहे, फिर बोले—रामदेव । आज नहीं, आज से १५ दिन पूर्व मेरे दिल से तुम्हारे प्रति सब प्रतिकूल नष्ट हो चुके है । अब हमारे बीच में कोई खाई नहीं रही। हम दोनों का सम्बन्ध पवित्र और अटूट हैं। मैं स्वयं दो एक दिन में तुम्हें बुला कर अपना दिल साफ कर देने के लिये कहने वाला था, कहो, क्या कहना चाहते हो ?

मेरा हृदय अपने धर्म पिता के प्रति श्रद्धा और सम्मान से भर उठा। मैंने कहा—'महात्मा जी, स्वयं संन्यास ले लेने के उपरांत आप गुरुकुल किसे सौंपना चाहते हैं ?

उन्होंने शीघ्रता से उत्तर दिया—तुम्हें । इस सम्बन्ध में मेरे हृदय में कोई विकल्प ही नहीं है । मेरा पूर्ण विश्वास है कि मेरी वास्तविक भावना को तुम ही भली प्रकार समझते हो। लोगों का ख्याल है कि हम दोनों के विचार परस्पर बहुत प्रतिकूल हैं, परन्तु वास्तव में यह बात सही नहीं है। हम दोनों में मतभेद बहुत कम है और एक मत बहुत ज्यादा। मुझे विश्वास है कि मेरे बाद तुम सफलता से गुरुकुल का संचालन कर सकते हो। तुम में कमजोरियां भी हैं। मैं उन कमजोरियों को जानता हूं. परन्तु कमजोरियां किसमें नहीं होतीं ? मुझ में भी तो अनेक बड़ी-२ दुर्बलताएं हैं।

अपने धर्म पिता के इस आदेश को कर्तव्य का आह्वान समझा। मेरी सब सुविधायें दूर हो गयीं । मैंने गुरुकुल के आचार्य पद का भार लेने का निश्चय कर लिया।

समय गुजरता चला गया। पिता-पुत्र के मतभेद वहीं समाप्त नहीं हो गए थे, अनेक सिद्धान्तों के प्रश्नों पर फिर से मतभेद उत्पन्न हुए। अनेक मतभेद मिट गए, अनेक बनें रहे। परन्तु इन मतभेदों से हमारे हार्दिक पवित्र सम्बन्ध में जरा भी आंच न पहुंची।

धर्म पिता के महाबलिदान से कुछ मास पूर्व मैंने उनसे प्रार्थना की कि आप शेष जीवन गुरुकुल में ही बिताइए। गुरुकुल में रह कर कुल-

वासियों में नवीन स्फुर्ति का सचार कीजिए। यह प्रार्थन स्वीकार हुई स्वामी जी ने गुरुकुल में रहने के लिए गुरुकुल की स्वामिनी-सभा को पत्र लिखा—

गुरुकुल की स्वामिनी सभा को इससे बढ़ कर प्रसन्नता औरकिस बात से ही सकती थी। परन्तु इस सम्बन्धमें सभा ने जो प्रस्ताव स्वीकार किया, उसकी रचना स्वामी जी को खटकी। उन्होंने गुरुकुल में आकर रहने का विचार छोड़ दिया। मैं सभा के उस अधिवेशन में उपस्थित न था, इस कारण यह घटना मुझे कुछ समय बाद मालूम हुई।

स्वामी जी ने अब कनखल में ही मकान बनवा कर रहने का निश्चय किया। जमीन के लिये उन्होंने बयाना भी दे दिया। गुरुकुल की स्वामिनी सभा (आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब की अन्तरंग सभा) को जब यह बात ज्ञात हुई, तो सभा के सब सदस्यों को बहुत अधिक दुःख हुआ। स्वामी जी सभा से बहुत नाराज हो गए थे, किसी महानुभाव को स्वामी जी के पास जाकर सभा का वास्तविक भाव स्पष्ट करने की आवश्यकता थी। कुछ दिनों बाद जब जमीन के सम्बन्ध में कनखल पधारे, तब मैं स्वामी जी की सेवा में पहुंचा।

बातचीत के सिलसिले में मैंने उनसे निवेदन किया—

स्वामी जो, अन्तरंग सभा के प्रस्ताव का वह अभिप्रायः नहीं था, जो आपने लिया हैं।

स्वामी जी ने उत्तर दिया—यह भी सम्भव है। परन्तु प्रस्ताव को ऐसा गोलमाल बनाया ही क्यों गया, जिससे कोई दूसरा मतलब लिया जा सके?

मैंने स्वीकार किया कि सचमुच प्रस्ताव में कुछ भी अस्पष्टता नही होनी चाहिए थी। साथ ही मैंने निवेदन किया—अन्तरंग सभा के उस अधिवेशन में मैं उपस्थित नहीं था, अन्यथा यह नौबत कदापि न आती।

स्वामी जी ने आश्चर्य से पूछा—तुम उस अधिवेशन में नहीं थे।

मैंने उत्तर दिया—जी नहीं।

मेरे धर्म-पिता ने कुछ मुस्करा कर उत्तर दिया—'तो फिर मुझे अब अन्तरंग से कोई शिकायत नहीं रही।'

मैंने अनुरोध किया—'तो फिर गुरुकुल में ही चलकर रहिए।'

उन्होंने कहा—अब तो मैं जमीन का बयाना भी दे चुका हुं।

मैंने हठ किया— मेरी खातिर उसे जाने दीजिए।

स्वामी जी तैयार हो गए। मैंने उनसे यह भी निवेदन किया कि मैं अन्तरंग सभा का प्रस्ताव बदलवा दूंगा। स्वामी जी ने अब गुरुकुल चल कर रहने का पूर्ण निश्चय कर लिया।

परन्तु विधाता को शायद यह बात मंजूर न थी पहले तो वे कुछ आवश्यक कामों में व्यस्त रहे। फिर दिसम्बर के शुरू में वह बीमार पड़ गए।

उस महान् आत्मा के अमर-पद प्राप्त करने से केवल चार दिन पूर्व ही गुरुकुल-कागड़ी का स्नातक चिरंजीव केशवदेव दिल्ली में उनके दर्शनों के लिए गया। स्वामी जी तब रोग शैया पर लेटे हुए थे अपने एक शिष्य को अपने दर्शनों के लिए आया देख कर स्वामी जी उठ कर बैठ गए। केशव के सिर पर हाथ रख कर वेदमन्त्र पढ कर उन्होंने उसे आर्शीवाद दिया।

बातचीत के प्रसंग में उन्हें ज्ञात हुआ कि केशव देव शीघ्र ही मद्रास जा रहे हैं। स्वामी जी को यह ज्ञात था कि मैं उस समय कलकत्ते में गुरुकुल के लिए धन-सग्रंह का कार्य कर रहा था, इसलिए उन्होंने केशव देव से पूछा—क्या तुम कलकत्ता होते हुए मद्रास आओगे ?

केशवदेव के यह स्वीकार करने पर उन्होंने कहा—कलकत्ता में राम देव से मिलकर उन्हें मेरा एक सन्देश सुना देना।

केशव देव ने कहा—आज्ञा कीजिए।

स्वामी जी ने उत्तर दिया—रामदेव से कहना कि चाहे हम दोनों में कितने ही मतभेद क्यों न हों, फिर भी हम दोनो के विचारों में बड़ी समानता है। गुरुकुल से प्रति मेरी भावना को केवल वही समझते हैं। उनसे कहना कि चाहे गुरुकुल को किसी स्थान पर ले जाए, इस सम्बन्ध

में अब मेरा कोई मतभेद नहीं रहा। परन्तु गुरुकुल का वह स्वंय संचालन करें। गुरुकुल की भावना को वह स्वयं सचालन अवश्य जीवित बनाए रखें, यह मेरा उनके प्रति आदेश है।

परन्तु भाग्य चक्र से केशवदेव के कलकत्ता पहुचने से पूर्व ही वह महान् आत्मा यह लोक छोड़ कर चली गई।

आज अपने अन्तःकरण की साक्षी देकर मैं यह कहता हूं कि मैं अपने धर्म-पिता का आदेश पालने के उद्देश्य से ही अभी तक गुरुकुल कांगड़ी का भारी बोझ अपने कंधों पर लिये हुए हुं। मेरा प्रतिज्ञात सेवा-काल पर्याप्त समय से समाप्त हो चुका है। यदि मैं चाहूं तो गुरुकुल के उत्तर-दायित्व से मुक्त हो सकता हूं। मेरा स्वास्थ्य भी अब काफी बिगड चुका है। वह मुझे अब इतनी बड़ी प्रबन्ध-सम्बन्धी उलझनों में पड़ने की आज्ञा नहीं देता। फिर भी मैं यह भारी बोझ सम्भाले हुए हूं। इसका केवल मात्र एक ही कारण है, वह है अपने धर्म-पिता का अन्तिम आदेश।

मुझे मालूम है, मेरे कुछ स्नेही मेरे अब तक गुरुकुल में जमे रहने के कारण मुझे पर कुपित हैं कुछ सज्जन मुझे देख कर चिन्तित भी हैं, कुछ आश्चर्य में है, और कतिपय महानुभाव यह भी समझ सकते हैं कि इस बुढ़ापे में संन्यास और उच्चाभिलाषा के वशीभूत होकर ही मैं गुरुकुल की बागडोर को अपने हाथों से नहीं छोड रहा हूं यह सब कुछ मैं जानता हूं, पर यह सब जानते हुए भी में गुरुकुल को इस दशा में छोड़ नहीं सकता। अपने धर्म-पिता को अमानत को यथोचित व्यवस्था किए बिना मैं कदापि नहीं छोड़ सकूंगा। कभी-कभी इन झंझटों और उलझनों से तंग आकर यह इच्छा भी होती है कि तुम्हें इससे क्या लेना है। अपने स्वास्थ्य को सुधारने के लिए अब आराम करो, परन्तु अगले ही क्षण अपने धर्म-पिता की अमर आत्मा का पवित्र स्मरण मेरी सब कमजोरियों को दूर कर देता है। कुल-पिता का अपने प्रति अन्तिम आदेश मुझे सच्ची राह दिखाता है, और मैं नये उत्साह से कार्य करने लगता हूं।

मैं एक ऐसा सैनिक हूं, जिसका सेनापति उसे अपना सम्पूर्ण उत्तर-दायित्व सौंप गया है गुरुकुल की इस अयोध्या में आज श्रीराम नहीं रहे। वह अपने सेवक हनुमान को सम्पूर्ण उत्तरदायित्व अमानत के तौर पर सौंप गए हैं। मैं भी आज स्वामी श्रद्धानन्द जी की अमानत सम्भाले हुए हूं। आज मैं एक योग्य उत्तराधिकारी की तलाश में हूं, जो इस अमानत को भली प्रकार कायम रख सके, जो श्रद्धानन्द की भावना मे रंगा हुआ हो। जिस दिन मुझे ऐसा उत्तराधिकारी मिल जायगा, उसी दिन मैं उसे अपने धर्मपिता की यह पवित्र अमानत सौंप कर निश्चित हो जाऊंगा।

भिक्षुक की झोली

गुरुकुल का दसवां वार्षिकोत्सव था। अब उसे सत्रह बरस बीत चुके हैं। उन दिनों प्रति वर्ष २० या २५ नए विद्यार्थी ही गुरुकुल में प्रविष्ट किये जाते थे। अपने बालकों को गुरुकुल में पढ़ाने की इच्छा से जो लोग उन्हें गुरुकुल में लाते थे, उनकी संख्या कभी-कभी ७० से भी ऊपर पहुंच जाती थी। इस कारण वार्षिकोत्सव पर बालकों के चुनाव बड़ी प्रतिस्पर्धा रहती थी। आयु, शिक्षा और स्वास्थ्य आदि के आधार पर ही इन बालकों का चुनाव किया जाता था। उस साल मुझे चुनाव-समिति का अध्यक्ष नियुक्त किया गया था। इस पद पर कार्य करके मुझे अनेक नये-नये अनुभव मिले। इनमें से एक अनुभव तो इतना मधुर और इतना पवित्र है कि मैं उसे आजीवन नहीं भुला सकता।

हमारी चुनाव समिति के सम्मुख एक देवी अपने बच्चे को लेकर आई। देवी एक कुलीन और धनी घराने की प्रतीत होती थी। उसके चेहरे पर उज्जवल चारित्र्य, लज्जाशीलता और मधुरता की छाप स्पष्ट रूप से झलक रही थी। देखकर हृदय में श्रद्धा का भाव उदय होता था। वह अकेली थी, मैंने पूछा—'इस बालक के पिता कहां है ?

देवी ने उत्तर दिया—'वे आर्यसमाजी नहीं हैं। गुरुकुल पर उनको श्रद्धा भी नहीं है। मैं उनसे हट करके ही इस बालक को गुरुकुल में प्रविष्ट करने के लिए लाई हूं। उन्होंने मेरे इस काम में सहयोग नहीं दिया। इसी कारण वे नहीं आए।'

उस समय कोई और विशेष बातचीत नहीं हुई। बालक स्वस्थ और प्रतिभाशाली था। उसे प्रविष्ट करने के लिए चुनाव कमेटी को कोई विशेष परीक्षा नहीं लेनी पड़ी।

अगले ही दिन उस देवी ने गुरुकुल के मुख्याधिष्ठाता महात्मा मुंशी राम जी को एक पत्र लिख कर उनसे मिलने की इच्छा प्रकट की। महात्मा जी अत्याधिक कार्य से व्यग्र थे, अतः उन्होंने मुझे उस देवी से मिल कर उसकी इच्छा जानने का आदेश दिया। देवी के निवास स्थान पर पहुंचते ही उसने नमस्कार करके मुझसे कहा—भाई जी ! क्षमा कीजिएगा। मैंने आपको विशेष कार्य से ही यहां आने का कष्ट दिया है।

मैंने पूछा—कहिए क्या सेवा है ?'

देवी ने उत्तर दिया—'पिछली सारी रात मुझे नींद नहीं आई, मैं एक चिन्ता से व्यथित नहीं हूं। कल रात को मेरे पास ही ठहरे हुए परिवार का एक बालक बुरी तरह से रो रहा था। उसके मां-बाप उसे गुरुकुल में प्रविष्ट करने की इच्छा से यहां लाये थे, परन्तु चुनाव कमेटी की परीक्षा में वह उतीर्ण न हो सका। उसके मां-बाप अब लाचार थे, परन्तु वह गुरुकुल में दाखिल होने के लिये जिद्द कर रहा था। मुझ से बालक का वह हार्दिक कष्ट नहीं देखा गया, इसी कारण मुझे सारी रात नींद नहीं आ सकी। आपने मुझ पर दया करके मेरे बच्चे को तो गुरुकुल में दाखिल कर लिया है। क्या आप इस बालक को भी दाखिल करने की कृपा कर सकेंगे ?'

मैंने बड़ी नम्रता से देवी के सामने गुरुकुल की अवस्थाओं और नियमों का वर्णन किया। मैंने कहा—'अभी तक हमारे पास जितना प्रबन्ध है, उससे अधिक बालकों को प्रविष्ट कर लेने से दोनों पक्षों को हानि ही होगी। परन्तु वह देवी नहीं मानी। उसने कहा—'मैंने आपको भाई जी कहकर बुलाया है। आप मेरे भाई बन चुके। अब तो जिस किसी तरह भी हो आपको यह कार्य करना ही होगा।'

ऐसी पुण्यशीला बहन पाकर मैंने अपने को धन्य माना, परन्तु मैं

गुरुकुल के नियमों से लाचार था। मुझे ज्ञात था कि गुरुकुल में अभी १० और बालक प्रविष्ट किये जायेंगे, परन्तु उनके लिये जो शर्त रखी गई थी मुझे विश्वास था कि वह शर्त इस देवी के सामने रखने से कोई लाभ न होगा क्योंकि देवी का उस बालक के साथ कोई रिश्ता तो है ही नही। दोनों एक नगर के रहने वाले भी नहीं हैं। देवी ने कल रात से पूर्व कभी इस बालक को देखा भी न था। इसलिए मैं चुप ही रहा।

देवी ने मुझे चुप देखकर फिर कहा—'आप मेरी प्रार्थना स्वीकार न करेंगे ?

और कोई जवाब न सूझने के कारण मैंने कह दिया—'आज भी गुरुकुल में दस नये बाल प्रविष्ट किये जायेंगे, परन्तु आज प्रविष्ट होने वाले बालकों के लिए यह आवश्यक है कि उनके अभिभावक सम्पूर्ण शुल्क अर्थात १५०० रु० इसी समय गुरुकुल में जमा करवा दें।'

देवी ने कहा—'उसके मां-बाप तो बिल्कुल निर्धन हैं। उनके लिए यह शर्त पूरी करना असम्भव है।'

यह कह कर देवी चुप हो रही। मुझे विश्वास था कि अब वह कुछ न कह सकेगी, मुझे उस बालक के माता-पिता की आर्थिक दशा भली प्रकार मालूम हो गई थी।

परन्तु दो-एक मिनट के बाद सहसा उस देवी ने बड़े उत्साह के साथ कहा—'इस बालक के लिए मैं अपनी ओर से १५०० रु० देती हूं। अब तो आप इसे प्रविष्ट कर लेंगे।

मैं अचम्भे में आ गया। क्या अभी तक इस देव-भूमि में ऐसी माताएं मौजूद हैं, जो एक अपरिचित बालक के किसी अच्छे उत्साह के लिए अपना हजारों रुपया न्योछावर करने को तैयार हैं। मैं गद्‌गद् हो गया। मेरा सिर उस पुण्यमयी देवी के लिए श्रद्धा से झुक गया। मुझे विश्वास हो गया कि भारतीय सभ्यता सचमुच इसी तरह की स्वर्ग की देवियों के आधार पर ही जीवित है। इसी समय उस देवी ने १००० रु०

के नोटों का पुलिन्दा मेरे सामने रखते हुए कहा—शेष ५०० रुपए घर जाते ही भेज दूंगी।'

यह कल्पनातीत दृष्य देखकर मैं अभी तक अचम्भे में डूबा हुआ था।

इन पिछले सत्रह बरसों में मेरा उस देवी से बहुत घनिष्ट सम्बन्ध रहा है। इस देवी से ज्यों-त्यों मेरा परिचय बढ़ता गया, त्यों-त्यों उसके प्रति मेरी श्रद्धा बढ़ती गई। अब उस देवी का पुत्र गुरुकुल का स्नातक बन चुका है और इससे भी मेरा घनिष्ट सम्बन्ध है, यह पतिपरायणा देवी अपने सम्पूर्ण जीवन में यदि कभी अपने पति से रुष्ट हुई है, तो केवल दान के सम्बन्ध में। उसके पति एक उच्च सरकारी पदाधिकारी थे—देवी उनकी कमाई का बहुत सा भाग दान में दे देने के लिये सदैव उन्हें बाधित करती रही है।

(२)

गर्मियों के एक सायंकाल को मैं गुरुकुल के महता द्वार से थोड़ी दूर निकल कर सैर के लिये अकेला जा रहा था। द्वार से थोड़ी ही दूरी पर मुझे मैले कुचैले कपड़ों वाली देवी गुरुकुल की ओर धीरे-धीरे आती हुई मिली। उसकी आयु चालीस बरस से अधिक होगी। उसके चेहरे पर गहरी व्यथों की छाप स्पष्ट रूप से झलक रही थी, इस पर देवी कुलीन प्रतीत होती थी। मेरा ध्यान हठात् उसकी ओर आकृष्ट हो गया। देवी निकट आ गई थी। मैंने कहा—माता जी, नमस्ते।'

मैंने उत्तर दिया—'अब आप गुरुकुल की भूमि में पहुंच गई हैं।

देवी ने फिर पूछा—'गुरुकुल के बड़े पंडित जी कहां हैं?'

मैंने कहा—'माता जी! आज्ञा कीजिए।

देवी को जब मालूम हुआ कि गुरुकुल का आचार्य में ही हूं तब वह मेरे पैरों की तरफ नमस्कार करने के लिए झुकी। मैंने उसे ऐसा करने से मना किया। इसके बाद आंखों में आंसू भर कर देवी ने अपने मैले-कुचैले कपड़ों को टटोलना शुरू किया। थोड़ी देर में एक फटे हुए मैले

कपड़े की गांठ खोलकर देवी ने चांदी के सात रुपए बाहर निकाले। मैं देवी के हृदय की उदारता पर मन ही मन विस्मित हो हो रहा था कि उसने कहा—'यह मेरी ओर से नहीं, बल्कि मेरे पुत्र की ओर से गुरुकुल को दान है। मेरा एक ही लड़का था। उसकी उमर २०-२२ बरस की थी। पर थोड़े दिन हुए भगवान ने उसे मुझ अभागिन से छीन लिया। मैं सनातनी हूं। परन्तु मेरा पुत्र पिछले दो बरसों से गुरुकुल के जलसों पर आता रहा है। गुरुकुल के इन जलसों ने उस पर कुछ ऐसा जादू किया कि वह नियम पूर्वक प्रतिदिन आर्यों की सन्ध्या और हवन करने लगा। भगवान के दूत जब उसकी आत्मा को लेने आए, तो मैंने उससे पूछा—'बेटा तेरी कोई मर्जी है।

मेरे लाल ने अटकते-अटकते उत्तर दिया —'अम्मा, मेरी एक ही ख्वाहिश है। मेरे मरने के बाद मेरा सामान बेचकर, उससे जो रुपए मिले, उन्हें हरिद्वार जाकर अपने हाथों से गुरुकुल के बड़े पंडित जी को दे आना।

इतना कह कर वह देवी अपने पुत्र की याद में फूट-फूट कर रोने लगी। मैं देवी को आश्वासन देकर उसे गुरुकुल की अतिथिशाला में ले गया।

अपने तीस वर्ष के सार्वजनिक जीवन में गुरुकुल और आर्यसमाज के लिए मैंने लाखों रुपया दान एकत्र किया है। अनेक करोड़पति राजा और महाराजाओं से मुझे बड़ी-बड़ी रकमें भी प्राप्त हुई हैं, परन्तु इतना अधिक पवित्र और इस प्रकार उत्तरदायित्व का स्मरण कराने वाला धन मुझे और भी कभी प्राप्त हुआ है, इसमें सन्देह है। ये सात रुपए मुझे सात लाख रुपयों से बढ़ कर प्रतीत हो रहे थे।

उस दिन दो बातें बड़े स्पष्ट रूप में मेरे सम्मुख आईं। पहले तो अपने गम्भीर उत्तरदायित्व का स्मरण हुआ— मुझ पर उस पवित्र कुल का उत्तरदायित्व है, जिस में ऐसा देव दुर्लभ दान आता है। दूसरा यह

हुआ कि करोड़पति होते हुवे भी वे महात्मा गांधी के अनन्य भक्त हैं, और स्वयं बिलकुल सादी तरह रहते हैं। उन के मकान में बिजली तक भी नहीं। मेरी इच्छा इस अद्भुत व्यक्ति से मिलने कई हुई, परन्तु उन महाशय ने, जो मुझे डा० प्राणजीवन महता का परिचय दे रहे थे, अन्त में यह भी कह दिया कि डाक्टर साहिब आर्य समाजी नहीं हैं, इस लिये आप उन से कोई विशेष दान की आशा न कीजिये।

अगले ही दिन मैं डाक्टर साहिब के बंगले पर पहुंचा। डाक्टर साहब का यह बंगला रंगून शहर से बाहर है। बंगला बिलकुल मामूली है। उस का सामान और भी अधिक सादा है। देखने से वह कोई सत्याग्रह आश्रम प्रतीत होता है। मैं मकान की सादगी देख कर मन ही मन मुग्ध हो ही रहा था कि डाक्टर साहिब के दर्शन हुए। उन्हें देख कर श्रद्धा उमड़ती है। खासकर मुझे तो उन से मिल कर बहुत ही अधिक प्रसन्नता हुई। उन से मिल कर मैं चन्दे की बात तो भूल ही गया। साहित्यिक चर्चा छिड़ गई। मैंने देखा कि राष्ट्रीय शिक्षा के सम्बन्ध में डाक्टर साहब के विचार खूब परिपक्व हैं! इस विषय पर उन्होंने मुझे अपना एक लेख भी पढ़ने को दिया, उसे पढ़ कर मेरा हृदय खिल उठा। मुझे उन का घर एक मन्दिर के समान प्रतीत होने लगा।

बातचीत का सिलसिला बदल कर प्राचीन इतिहास पर जा पहुंचा। इस सम्बन्ध में मैंने अपने विचार और अपना दृष्टिकोण उन के सम्मुख पेश किया। डाक्टर साहब का चेहरा खुशी से चमक उठा। मेरे विचार सुन कर वे बहुत ही अधिक प्रसन्न हुए। शायद बहुत दिनों के बाद उन्हें एक अपने जैसा खब्ती आदमी मिला था। वह और मैं दोनों एक ही मर्ज के मरीज थे, इस लिए दोनों की खूब खुल कर छनी। मैंने सदा अपने को भारतीय सभ्यता का जुनूनी समझा है। मेरे मित्र सदा मुझे पागल, खब्ती और एक हवस समझते रहे हैं। वे मुझ से यह कहते रहे हैं कि तुम

कि गुरुकुल का वार्षिकोत्सव अब स्वयं अपने में एक अलग संस्था बन चुका है।

(२)

सन् १९२२ में पं० विश्वम्भरनाथ जी गुरुकुल के मुख्याधिष्ठाता थे। मैं उन दिनों लाहौर में था। गुरुकुल के उस वर्ष के उत्सव से पूर्व उन्होंने मुझ से अनुरोध किया कि मैं गुरुकुल के लिये धन संग्रह करने के उदेश्य से कलकत्ता जाऊं। मैंने यह बात स्वीकार कर ली! कलकत्ते जाकर गुरुकुलके लिये कई हजार रुपया एकत्रित किया, फिर जी में आया कि चलो बर्मा का भी चक्कर लगा लिया जाए। मेरा यह कार्य सचमुच एक साहस मात्र ही था, क्योंकि तब तक बर्मा में मेरा परिचय बहुत ही कम लोगों से था। उस पर सन १९२१ में हां गुरुकुल के संस्थापक श्रद्धेय स्वामी श्रद्धानन्द जी गुरुकुल के लिये वहां से एक बड़ी भारी रकम ला चुके थे। फिर भी हिम्मत कर के मैं रंगून जा ही पहुंचा। वहां आर्य सज्जनों से मिला, परन्तु सभी ने निराशा दिलाई। सब लोगों को मेरा आना अवांछनीय, अनुचित और व्यर्थ प्रतीत हुआ। परन्तु मैं जल्दी निराश होने वाला व्यक्ति नही हूं, अतः वहां मोर्चा लेकर डट ही गया।

एक दिन एक महाशय ने बातचीत में मेरे सम्मुख रंगून के डा० प्राणजीवन महता का जिक्र किया! उन की विचित्र उपाधियों ने मेरा ध्यान अपनी तरफ खींचा। वे एक तरफ आक्सफोर्ड के एम० ए० हैं, दूसरे वे बारिस्टर एट-ला हैं और तीसरे, वे विलायत के एक विश्वविद्यालय के एम० डी० हैं। इस पर भी मजा यह है कि न तो वे कहीं प्रोफेसर हैं, न वकालत करते हैं और न चिकित्सा का कार्य ही करते हैं। वे हीरे मोतियों का व्यापार करते हैं, और अपने इसी व्यापार की बदौलत वे लाखों रुपया कमा चुके हैं। डा० महता की इस विचित्रता ने मुझे अपनी ओर खींचा। ऐसे अजीब मनुष्य सम्भवतः इस सम्पूर्ण पृथ्वी पर हो बहुत कम होंगे। इस पर यह जान कर मुझे और भी आश्चर्य

सदैव प्राचीन सभ्यता में गुण ही गुण और नवीन सभ्यता में दोष देखते हों। मैं उन्हें सदैव यही उत्तर देता रहा हूं कि मनुष्य जीवन के प्राचीन आदर्श मुझे निर्दोष प्रतीत होते हैं, यदि उन में कोई त्रुटि हो, तो मुझे बताओ। वे कहते थे—आदर्श तो क्रिया में नहीं आते। प्राचीन काल के आदर्श प्राचीन काल में भी क्रियात्मक रूप धारण नहीं कर सके।' इस बात पर सदैव हंस कर यही उत्तर देता था कि भाई आदर्श तो सदैव उस क्षितिज के समान होते हैं, जहां आसमान और पृथ्वी मिलते हुए से दिखाई देते हैं। उन तक पहुंचा ही नहीं जा सकता। परन्तु इस का यह अर्थ नहीं कि हम आदर्श शून्य हो जायें। जिस जाति या राष्ट्र के सम्मुख ऊंचे आदर्श नहीं वह जीवित ही नहीं रह सकता, क्योंकि उस के पास फिर कोई शक्ति ही नहीं रहती। परन्तु इस पर भी मेरे अनेक मित्र, जिन में अनेक आर्यसमाजी भी सम्मिलित हैं, मुझे इस अंश में अभी तक कट्टर और सिडी समझते हैं। परन्तु साथ ही उन की दृष्टि में मेरा यह मर्ज लाइलाज और संक्रामक भी हैं। मजा तो यह है कि मेरा यह मर्ज धीरे-धीरे उन पर भी असर कर रहा है।

परन्तु डाक्टर महता की दशा इससे भिन्न थी। मेरी तरह वे भी पहले ही से भारतीय सभ्यता के जुनूनी निकले। उनका मेरा मिलना सचमुच दो दीवानों के मिलने के समान हुआ। खुब गुजरेगी जब मिल बैठेंगे दीवाने दो। बैठे-बैठे घण्टों निकल गए, परन्तु हमारी विद्या-सम्बन्धी बातचीत का सिलसिला नहीं टूटा।

जो सज्जन मुझे अपने साथ डा० महता के निवास-स्थान पर ले गए थे, वह इतनी देर तक बैठे बैठे बिलकुल ऊब गए। जब उन्होंने देखा कि घण्टा बीत जाने पर भी हमारी बातचीत का प्रवाह जरा भी सुस्त नहीं पड़ा, तब उनके धैर्य का बांध टट गया। उन्होंने झुंझलाकर मेरे कान में कहा—इसी तरह सारा दिन गप्पों में ही बिताओगे या कुछ चन्दा भी इकट्ठा करना है?

मैं जैसे नींद से जाग उठा। अपने आने के उद्देश्य का स्मरण आते ही मैंने डाक्टर साहब से गुरुकुल का प्रसंग छेडा । मैंने सीधे शब्दों में इतना ही कहा—डाक्टर साहब, मैं ब्रह्म में गुरुकुल के लिए धन-संग्रह करने के उद्देश्य से आया हूं। आप कुछ सहायता दीजिए।

डाक्टर साहब ने पूछा—आप मुझ से किस काम के लिए कितना रुपया चाहते हैं।

मेंने डरते-डरते उत्तर दिया—आप गुरुकुल को ५०००) रु० इस उद्देश्य से दीजिए कि उससे एक अछूत विद्यार्थी सदेव निःशुल्क शिक्षा प्राप्त कर सके।

डाक्टर महता को मेरा यह निर्देश पसन्द नहीं आया। इस काम के लिए ५०००) देने में उन्होंने अनिच्छा प्रकट की।

मैं निराश हो गया। मैंने सोचा कि अब तो डाक्टर सहाब से केवल १००) या २०० रु० ही मिल सकेगा। इसीलिए इस सम्भावना को कुछ बढा कर मैं ५००) रु० की मांग करने ही वाला था कि मैंने अचानक उनसे ही पूछ लिया, तो फिर आप स्वंय ही किसी कार्य का निर्देश कीजिए।

डाक्टर साहब ने उत्तर दिया—मैं तो आपके प्राचीन भारतीय सभ्यता के जुनुनी ही गुरुकुल से पैदा करना चाहता हुं।

मेरी जाती हुई आशा फिर लौट आई। इस बार मैंने साहस करके कहा—इसका उपाय तो यही है कि गुरुकुल में भारत वर्ष के प्राचीन इतिहास का इसी दृष्टिकोण से अध्ययन करने के लिए एक गद्दीस्थापित की जाए, गुरुकुल में किसी विषय की एक गद्दी स्थापित करने के लिए ३०००) रु० स्थिर कोष में जमा करने का नियम है।

मुझे उम्मीद थी कि डाक्टर साहब इस मार्ग से घबरा कर बात-चीत का सिलसिला ही बदल देंगे, किन्तु वे कुछ भी न कह कर चुपचाप सोचने लगे।

थोड़ी देर बाद डाक्टर साहब ने कहा—'मैं इस सम्बन्ध में अपने पुत्रों की सलाह लेना आवश्यक समझता हूं। परसों प्रातःकाल तक मैं स्वयं आप के निवास-स्थान पर ही इस बात की सूचना भिजवा दूंगा।'

उन दो दिनों में मेरी जो अवस्था रही, उसे मैं ही अनुभव कर सकता हूं। कभी हृदय निराश होता था और कभी आशा से भर उठता था। तब तक मुझे किसी एक दानी ने एक साथ ३० हजार रुपया प्राप्त नहीं हुआ था। इस लिये एक विचित्र सी दशा में मेरे वे दोनों दिन निकले। तीसरे दिन के प्रातःकाल डाक्टर साहब के एक सुपुत्र ने मेरे निवास स्थान पर आकर मुझे सूचना दी—'पिता जी ने गुरुकुल को ३० हजार रु० देने का पूर्ण संकल्प कर लिया है। आप जब चाहें, तभी आप को यह रुपया वसूल हो जायेगा।'

दान का यह अनुभव इतना मधुर था कि इस के रस का विश्लेषण करना कठिन है।

(४)

गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना के ६ वर्ष बाद गुरुकुल की भिक्षा-मण्डली कराची नगर में गई। मैं इस मण्डली का मुखिया था। कराची निवासियों ने इस मण्डली के साथ पूरा सहयोग दिया। नगर के सेठों तथा आर्य सज्जनों ने अपनी अपनी निष्ठा तथा शक्ति के अनुसार पर्याप्त धन गुरुकुल को दिया। हम लोग अपना काम लगभग समाप्त कर चुके थे कि लोगों ने हमें कराची के एक अत्याधिक धनी, परन्तु उस से भी बढ़ कर कंजूस सेठ का नाम बताया। हमें ज्ञात हुआ कि उस सेठ के पास ८५ लाख रु० नकद जमा है, परन्तु वह किसी डैपूटेशन को एक पाई तक भी नहीं देता। जब कभी कोई मण्डली उस के पास जाती है, तो कठोर व्यवहार खुश्क युक्तियों तथा बहानों की बौछार कर के उसे परेशान करता है। मेरे जी में आया कि एक बार इस महापुरुष के दर्शन कर के अपनी शक्ति आजमानी चाहिये—और कुछ न भी सही—कतिपय नये मनोवैज्ञानिक अनुभव ही सही। बस, मैं अकेला, एक स्थानीय

आर्यसज्जन को साथ लेकर सेठ जी की दुकान पर पहुंचा। वहां पहुंच कर मुनीम के दर्शन-मात्र करने से ही मैं समझ गया कि आज कैसे सज्जन से पाला पडा है। मुनीम जी ने देखा कि कोई झक्की-सा आदमी रसीद-बुक हाथ में लिये दुकान की ओर चला आ रहा है। हमारे मुख से कोई बात सुने बिना ही वह गरजकर बोल उठे—'जाओ, जाओ, यहां कुछ नही मिलेगा। मुफ्त में अपना समय खराब करने आए हो।'

'मैंने कहा—"मिलेगा या नही मिलेगा, इस सम्बन्ध में हम कुछ नही पूछ रहे हैं। यह बताओ कि सेठ जी कहां हैं?'

मुनीम ने तमक कर कहा—'यहां नही हैं। घर पर हैं।'

मैने पूछा—वह कब तक आयेगे।'

मुनीम ने कहा—'डेढ़ घंटे बाद।'

हम लोग इतने लम्बे अरसे की बात सुन कर भी बैठने को तैयार हो गए, यह देख कर मुनीम महाशय मुस्करा उठे। उन्होंने कहा—'आप लोग क्यों मुफ्त की डांट खाना चाहते हैं। जाइये अपना काम कीजिये।'

मुनीम की बात पर कोई ध्यान न देकर हम लोग एक तरफ होकर बैठ गये। अब मुनीम की मुस्कान देखने लायक थी। वह शायद यह सोच रहा था कि आज फिर उसे एक मजेदार तमाशा देखने को मिलेगा।

सचमुच पूरे डेढ़ घटे के बाद ही सेठ साहब वहां तशरीफ लाये। मुनीम ने पहले ही पट्टी पढ़ा दी थी। इस लिए आप नाक भौं सिकोड़ कर दुकान मे प्रविष्ट हुए। सेठ के चेहरे पर अशान्ति, असन्तोष और क्षोभ की छाप स्पष्ट दीख रही थी। उस की नाक बता रही थी कि वह बड़े दृढ़ संकल्प का मनुष्य है। उस की आंखों से बुद्धि की तीव्रता टपकती थी। उसे हजामत किए हुये कई दिन हो चुके थे। कपड़े कुछ कुछ मैले थे। मालूम होता था कि उस ने प्रकृति द्वारा दी हुई सम्पूर्ण सुन्दरता

को कुचल डालने का निश्चय कर रक्खा है। आप ने अन्दर आते ही स्वयं पूछा—'चन्दा लेने आये हैं?'

'जी हां।'

'किस के लिये ?'

'गुरुकुल के लिए।'

सेठ जी तमक कर बोले—'वह तो आर्यसमाज का है और मैं सनातनी हूं। मैं क्यों गुरुकुल को मदद दूं।' मालूम होता था कि आप ने एक ही वाक्य के द्वारा सेठ जी हम लोगों को दुकान के बाहर खदेड़ देना चाहते हैं।

मैंने बड़ी शांति से उत्तर दिया—'संस्कृत और हिन्दी की पढ़ाई, ब्रह्मचर्य, सादगी आदि बातों को तो आप भी अच्छा मानते हैं न?'

सेठ जी तिलमिला उठे—आप तो लड़कों को चौदह साल तक कैद में रखते हैं।

मैंने कहा—नहीं, वहां तो बड़ी स्वतन्त्रता का वायु मण्डल है। प्रकृति-माता की गोद में ब्रह्मचारी में बड़ी प्रसन्नता से रहते हैं।

सेठ जी ने इस बात को स्वीकार नहीं किया। अब मुझे भी कुछ आवेश आ गया। मैंने बड़ी गम्भीरता से कहा—असल में देखा जाए, तो कैदी आप हैं। आप धन के कैदी हैं। आपके पास लाखों रुपया है, पर आप तो केवल पहरेदार हैं।

इसी प्रकार की बहुत सी खरी-खरी बातें मैंने सेठ जी की सेवा में निवेदन की। मेरे मुंह में न जाने कैसा जादू आ गया था कि सेठ जी पिघल गए। वह बोले—आज आपने मुझे मेरा सच्च स्वरूप दिखाया है। मुझे क्षमा कीजिए। आपकी रसीद-बुक में जो रकम सब से बड़ी लिखी हुई हो, वह मेरे नाम पर भी लिख लीजिए। मैंने वह मात्रा दिखाई। सेठ जी ने उसी समय नकद रुपए गिन दिए। वह मुझे नीचे तक पहुंचाने

भी आए नीचे आकर फिर मुझ से वादा किया कि गुरुकुल आकर वह काफी बड़ी रकम गुरुकुल को और देगें। विदा होते समय सेठ जी ने तीन बार झुक झुक कर नमस्कार किया। आज मैं अपनी सफलता पर बहुत चकित व प्रसन्न था। अन्य लोग भी इस सफलता पर बहुत चकित हुए।

शोक है कि शीघ्र ही स्वर्गवास हो जाने के कारण फिर कभी सेठ जी के दर्शन न हो सके।

(५)

कराची की उपर्युक्त घटना से मेरी हिम्मत बहुत बढ़ गई। मैं भिक्षा-वृत्ति के सम्बन्ध में बिलकुल निधडक बन गया। परिणाम में मुझे प्रायः सदेव सफलता मिलती रही कही पर भी बिलकुल निराश नहीं होना पडा, परन्तु पर्याप्त समय के बाद मुझे एक जगह मुंह की खानी पड़ी। मं बम्बई गुरुकुल के लिए धन-सग्रह करने गया। वहां मुझे पर्याप्त सफलता मिली। बम्बई के पंजाबी व्यापारियों ने जी खोलकर गुरुकुल को धन दिया। इसी सिलसिले में मुझे एक रायबहादुर व्यापारी का नाम बताया गया। मुझे ज्ञात हुआ कि वह सेठ सरकार का अत्यधिक खुशामदी है,। गैर सरकारी कामों में मदद देना वह गुनाह समझता है। फिर भी अपनी शक्ति की आजमाइश करने के लिए मे उस सेठ के पास पहुचा।

गुरुकुल के लिए चन्दे का नाम सुनते ही सेठ साहब ने पूछा—'क्या गुरुकुल का सरकार से ताल्लुक है?'

मैंने बड़े जोश से उत्तर दिया—'कदापि नहीं। गुरुकुल तो कट्टर असहयोगी है। उसका उद्देश्य स्वराज्यवादी और देशभक्त नवयुवक उत्पन्न करना है।'

सेठ जी ने बड़ी समझदारी के स्वर में कहा—'तो आप राजद्रोही हुए न?'

मैंने कहा—राजद्रोही नहीं, देशभक्त।'

सेठ साहिब तनकर बैठ गए और बोले—'देशभक्त का अर्थ ही है राजद्रोही। मैं सरकारी आदमी हूं, सरकार ने मुझे रायबहादुर बनाया है। आप लोगों के पास क्या धरा है ? मैं सरकार की खिदमत करता हूं, और वह मेरा सम्मान करती है। मैं आपको रुपया क्यों दूं ?'

और कोई उत्तर न देकर मैंने कहा—'चलिये, परोपकार के नाम पर ही सही, कुछ तो मदद कर दीजिये।'

परन्तु सेठ जी पिघलने वाले प्राणी न थे। आपने फर्माया—मेरा परोपकार तो मेरे परिवार तक सीमित है। आप लोग मेरे क्या लगते हैं ?'

मैंने खिज कर कहा—'सरकार आपकी क्या लगती है'

सेठ साहब ने कहा—'सरकार मेरी मां-बाप है। उसने मुझे रायबहादुर बनाया है। इस रायबहादुरी की बदौलत आपके स्वराज्यवादी भी मुझे बड़ा आदमी समझते हैं। आप लोग चाहे कितना ही 'स्वराज्य-स्वराज्य' चिल्लाएं आपके दिलों में सरकारी खिताबों के लिए इज्जत का भाव जरूर मौजूद है।

मैंने गम्भीरता पूर्वक कहा—सेठ साहब। सरकार अब और थोड़े ही दिन की मेहमान है। जमाना बड़ी तेजी के साथ बदल रहा है। स्वराज्य हो जाने के बाद आपको कौड़ी के दाम भी न पूछेगा। इसलिए अच्छा यह है कि आप अभी से किसी मजबूत जहाज में अपनी सीट रिजर्व करवा लें, ताकि जिस दिन आपके मां-बाप कूच करें, उस दिन आप भी उनकी चरणसेवा करते हुए इस देश का बोझ हलका कर दें।

मैं समझता था कि इस ताने से सेठ साहब कम से कम कुछ गम्भीर तो अवश्य बन जाएंगे। परन्तु मेरे आश्चर्य का पारावार न रहा। जब असह्य बेशर्मी से सेठ साहब बोले—'आपके इस दोस्ताना मशवरे के लिए मैं आपका अहसानमन्द हूं। मैं जरूर ऐसा ही करूगा। अब आप मेहरबानी करके यहां से तशरीफ ले जाएं।'

सन् १९२६ के दिसम्बर मास में गुरुकुल के संस्थापक श्रद्धेय स्वामी श्रद्धानन्द जी शहीद हुए। इसके तीन मास बाद ही गुरुकुल-कांगड़ी की रजत जयन्ती होनी थी। कुलपिता के दैवीय बलिदान से बड़ा उत्साह फैला। गुरुकुल प्रेमियों ने दिल खोलकर स्वयं गुरुकुल की सहायता की। मैं उन दिनों कलकत्ता में गुरुकुल के लिए धन संग्रह का कार्य कर रहा था। वहां मुझे लोगों के इस सदुत्साह के अनेक मधर अनुभव प्राप्त करने का सौभाग्य मिला। एक दिन कलकत्ता हाईकोर्ट के एक जस्टिस ने मुझे फोन द्वारा अपने यहां आने का निमन्त्रण दिया।

उन्होंने स्वर्गीय स्वामी श्रद्धानन्द जी की पुण्य स्मृति में दो-चार शब्द कहकर गुरुकुल के लिए चुपचाप अयाचित रूप से ही ५०० रु० निकाल कर रख दिये, और यह दान गुप्तदान के रूप में लिया गया। इसी प्रकार और भी बहुत से मधुर अनुभव प्राप्त हुए।

उन्हीं दिनों एक अत्यधिक कटु अनुभव भी मुझे मिला। मैं एक प्रमुख मारवाड़ी सेठ के पास धन-संग्रह के लिये गया। मेरी प्रार्थना सुन कर सेठ जी ने कहा---आप लोग तो मूर्ति पूजा का खण्डन करते हैं न ?'

मैंने कहा—गुरुकुल तो एक शिक्षणालय है। फिर हम आर्यसमाजियों और हिन्दुओं में बहुत सी बातें समान भी तो हैं। गुरुकुल भारतीय सभ्यता का केन्द्र है। इन जागृति के दिनों में गुरुकुल के संस्थापक स्वामी श्रद्धानन्द ने हिन्दुओं में शुद्धि का मन्त्र फूंक कर हिन्दुओं का उपकार किया है कि नहीं ?'

शुद्धि का नाम सुनकर मानों सेठ जी को आग लग गई। वह बड़े क्रोध से बोले—शुद्धि ने तो हमारा सत्यानाश कर दिया।

मैंने कहा—हिन्दू लोग अन्य मतों को तो स्वीकार कर सकें, परन्तु अन्य मत वाले हिन्दू धर्म में प्रविष्ट न हों। इस नीति से तो एक दिन हिन्दुओं का नाम भी दुनिया से मिट जायेगा।

सेठ साहब मूर्खतापूर्ण हंसी हंसकर बोले—हमारे जिन्दगी तक तो हिन्दू जाति समाप्त होती नहीं। इसके बाद देखा जायेगा। अभी तो २२ करोड़ हिन्दू बचे हुये हैं।

मुझे ज्ञात था कि कुछ ही समय पूर्व सेठ साहब के एक पूज्य व्यक्ति ने इस्लामिया कालेज को एक बड़ी रकम दान दी थी, इसीलिये मैंने प्रसंग बदल कर कहा—मुसलमान लोग भी तो मूर्ति पूजक नहीं। फिर आपके मित्र इस्लामिया कालेज को क्यों दान दिया ?'

सेठ साहब ने बड़े गर्व से कहा—हम लोग तो सांप की पूजा करने वाले हैं। इस्लामिया कालेज क्या, मैं तो मसजिदों में भी दान भिजवाता हूं। मुसलमान लोग सांप की तरह हैं, जिन्हें दूध पिलाने से अपनी रक्षा होती है। हम लोगों ने तो रुपया दे देकर सरकार और मुसलमान दोनों को सन्तुष्ट किया था, परन्तु आर्यसमाजियों ने हिन्दुओं को मुसलमानों के मुकाबले में भड़का कर ये लड़ाई झगड़े खड़े कर दिए हैं। आप आर्यसमाजी तो हमारे दुश्मन हैं। आप लोगों ने हिन्दू-मुसलमानों की लड़ाई करवा दी है, और उस का नतीजा हम मारवाड़ी सेठों को उठाना पड़ रहा है—मैं आप लोगों को क्यों कर मदद करूं ?'

मैं भला ऐसे बहादुर आदमी की बात का क्या उत्तर देता ? अपनी जाति के भाग्यों को कोसता हुआ मैं अपने निवास स्थान पर लौट आया।

आर्य मर्यादा

आर्य समाज शताब्दी विशेषांक

महर्षि दयानन्द जी सरस्वती

ओ३म्

महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा संस्थापित

आर्य समाज के शत वर्ष की आयु में प्रत्येक संसार के मनुष्यों की शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति की चाह के साथ वेद का सन्देश लिए-जो लगातार प्रगति कर रहा है और तन, मन और धन से आप के पावन सहयोग का कृतज्ञता से स्वीकार करता है। उस विनम्र तपस्वी-के कर कमलों में यह पत्रिका का यह अंक सादर समर्पित है।

पत्रिका परिचय-

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब, गुरुदत्त भवन, कृष्ण चौक जालन्धर पंजाब से प्रकाशित सम्पादक, प्रकाशक एवं व्यवस्थापक श्री वीरेन्द्र जी एम. ए. (मन्त्री) आ. प्र. नि. सभा-पंजाब) सह सम्पादक-श्री पं. विद्यानन्द वेदालंकार एवं श्री वीरेन्द्र भारती।

वर्ष 8 अंक 15 13 अप्रैल 1975 तदनुसार 1 वैशाख सं. 2032

इस अंक का मूल्य 1.50 डेढ़ रुपया

यह साप्ताहिक पत्र है। वार्षिक मूल्य 12) बारह रुपए।

विषय सूचि

रजिस्ट्रेशन नं. पी. जे. एल. ५५

सम्पादकीय–

भारत की सांस्कृतिक क्रान्ति की शताब्दी

१२ अप्रैल को आर्य समाज अपने जन्म की एक शताब्दी समाप्त करेगा। यदि हम पिछले सौ वर्ष के इतिहास पर दृष्टिपात करें तो इस परिणाम पर पहुंचेगे कि पिछले सौ वर्षों में इस देश में धार्मिक, राजनैतिक और सामाजिक क्रान्तियां देखी हैं। जब महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती ने आर्य समाज की स्थापना की थी तो उसके कुछ ममय उसी के साथ देश में एक नई जागृति का प्रादुर्भाव हुआ था। आज हम जो जागृति अपने देश में देखते हैं यदि हम उसकी पृष्ठ भूमि को समझने का प्रयास करें तो इस परिणाम पर पहुंचेंगे कि उसमें किसी न किसी रूप में आर्य समाज का ही योगदान रहा है। जो सामाजिक और धार्मिक जागृति आज हम देख रहे हैं उसका तो सारा ही श्रेय आर्य समाज को ही मिलना चाहिए। मैं तो यह भी कहूंगा कि यदि आज इस देश में हिन्दू जाति जीवित हैं तो वह कुछ आर्य समाज के कारण। आज से सौ वर्ष पहले हमारी जो अवस्था थी, जब हम उसे याद करते हैं और उस काल का इतिहास पढ़ते हैं तो कई बार दिल कांप उठता है और हम सोचने लगते हैं कि क्या हमारा इतना अधिक पतन हो चुका था कि जो भी उठता था हमें खाने को दौड़ता था। एक तरफ ईसाई दूसरी तरफ मुसलमान यह समझते थे कि हिन्दू एक अनाथ जाति है जिसका कोई भी रक्षक नहीं है हमारे धर्म पर हमारी संस्कृति पर, हमारे इतिहास और हमारी परम्पराओं पर चारों ओर से आक्रमण हो रहे थे और आक्रमणकारी यह समझते थे कि यदि एक बार हिन्दू जाति का महत्व इस देश में समाप्त हो जाए तो फिर भारत का नामो-निशान तक दुनिया में न रहेगा भारत ही न रहता तो भारत की संस्कृति क्या रहती। हमारे वेद और उपनिषद् कहां रहते हमारी रामायण और महाभारत कहां होती ? हमारी गीता को कौन पढ़ता। राम और कृष्ण का कौन नाम लेता और हमारी परम्पराओं को कौन जीवित रखता। ऐसे समय में एक महा पुरुष ने जन्म लिया। उसने सारे संसार को ललकार कर कहा कि भारत की प्राचीन संस्कृति उसका धर्म उसका इतिहास और उसकी परम्पराएं ऐसी हैं जिनके आगे कोई नही ठहर सकता। उसने विदेशी धर्माचारियों को चुनौती दी कि उसके साथ आएं और शास्त्रार्थ करें। उस महापुरुष का नाम था, महर्षि दयानन्द सरस्वती। महर्षि दयानन्द ने अपनी अमर कृति सत्यार्थ प्रकाश में

दूसरे धर्मों के विषय में जो कुछ लिखा है कई लोग उस पर आपत्ति करते है परन्तु वह यह भूल जाते हैं कि सौ वर्ष पहले देश में जो परिस्थितियां थीं उनमें यदि महर्षि दयानन्द उन चुनौतियों को स्वीकार न करते, जो कभी मुसलमानों की ओर से, कभी ईसाइयों की ओर से और कभी हिन्दुओं के मठाधारियों की ओर से की जा रही थीं तो उसका परिणाम सिवाये इस के और कुछ न होता कि हिन्दू जाति हतोत्साह होकर अपने हथियार डाल देती और विदेशी विचार धारा का इस देश पर इतना प्रभाव हो जाताकि जिसके आगे ठहरना हमारे लिये असम्भव हो जाता। महर्षि दयानन्द की ललकार ने सोई हुई हिन्दू जाति को फिर से जगा दिया। उसके मुर्दा शरीर में एक नये जीवन का संचार कर दिया। उसे स्वाभिमान सिखा दिया और उसे इस योग्य बना दिया कि वह संसार से टक्कर ले सके। जब महर्षि दयानन्द यह सब कुछ कर रहे थे तो उनके सामने यह प्रश्न आया कि उनके जीवन में तो सब कुछ हो जाएगा। उसके पश्चात् उनकी विचार धारा का प्रचार कौन करेगा और जो काम उन्होंने प्रारम्भ किया है उसे आगे कौन चलायेगा। इसी विचार को और इसी उद्देश्य को सामने रखते हुये उन्होंने आज से पूरे सौ वर्ष पहले आर्य समाज की स्थापना की।

पिछले एक सौ वर्षों में आर्य समाज ने जो कुछ किया है, वह संसार के सामने है। मेरा यह विश्वास है कि इस देश में सांस्कृतिक जागृति पैदा करने के लिये जो कुछ आर्य समाज ने किया किसी दूसरी संस्था ने नही किया। हमारे विधान का एक २ पृष्ठ मेरे इस विचार की सम्पुष्टि करता है। अछूत उद्धार, स्त्रियों के लिये समान अधिकार, हिन्दी को राष्ट्र भाषा का स्थान, गोरक्षा, शराब बन्दी, स्वदेशी का प्रचार और सबसे बढ़कर स्वदेश भक्ति। इन सबका नाद तो सबसे पहले आर्य समाज ने ही लगाया था। महात्मा गांधी ने तो अपना आन्दोलन १९१९-२० में प्रारम्भ किया लेकिन महर्षि दयानन्द सरस्वती ने तो १८७५ में आर्य समाज की स्थापना करते समय जो कार्यक्रम उसके सामने रखा था उसमें उन सब बातों का उल्लेख था जिनके आधार पर महात्मा गांधी ने अपनी स्वाधीनता की लड़ाई शुरू की। इसलिये यदि हम महर्षि दयानन्द को स्वाधीनता के अग्रदूत कहे तो यह गलत न होगा।

आज का दिन प्रत्येक भारतवासी के लिये और विशेषकर प्रत्येक आर्य समाजों के लिये एक विशेष महत्व रखता है।। १०० वर्ष किसी भी संस्था के जीवन में कोई थोड़ा समय नही होता, जो संस्था सौ वर्ष तक संघर्ष करती रही हो जिसने अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिये बड़े २ बलिदान दिये हों, जिसने कई शहीद पैदा किये हों, वह अपने १०० वर्ष के इतिहास पर जितना भी गर्व करे थोड़ा है। परन्तु हमें यह न भूलना चाहिये कि इस शताब्दी के साथ हमारा काम समाप्त नहीं होता। केवल हमारे इतिहास का एक अध्याय समाप्त होता है और दूसरा प्रारम्भ होता है। हमने जो कुछ पिछले सौ वर्ष में किया वह अन्धकार को दूर करने के लिये था। वह बहुत कुछ दूर हो गया परन्तु हम यह नहीं कह सकते कि यह बिल्कुल ही दूर हो गया। आज भी प्रतिक्रियागामी शक्तियां हमारे किये-कराये पर पानी फेरने का प्रयत्न कर रही हैं, हमें उनसे

सावधान रहना है। १०० वर्षों में हम जहां पहुंचे हैं अब हमें उस से आगे चलना है। महर्षि दयानन्द ने हमारे सामने जो लक्ष्य रखे थे उनमें सबसे बड़ा था 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' अर्थात् सारे संसार को आर्य बनाना। यह लक्ष्य बहुत बड़ा है? इसकेलिये हमें बहुत कुछ करना। इसलिये आओ हम सब मिलकर दूसरी शताब्दी में पदार्पण करते हुये यह संकल्प करें कि यदि पहली शताब्दी में महर्षि दयानन्द के कृण्वन्तो विश्वमार्यम् के संकल्प को हम पूरा नहीं कर सके तो दूसरी शताब्दी में उसे पूरा करने का प्रयत्न करेंगे। एक समय था जबकि हमारे भजनीक गाया करते थे 'आएंगे खत अरब से जिनमें लिखा होगा. गुरुकुल का ब्रह्मचारी हलचल मचा रहा है' इसका कुछ अभिप्राय: था तो केवल यह कि हमने आर्य समाज का सन्देश उन लोगों तक भी पहुंचाना है जो आज तक इसे सुनने को तैयार नही हुये। अब हमने अपने कार्यक्रम को एक नई दिशा देनी है और कृण्वन्तो विश्वमार्यम् के महर्षि के के स्वप्न को साकार बनाना है। यही आर्य समाज की जन्म शताब्दी का सन्देश है।

—वीरेन्द्र

जन्म शताब्दी अंक के पश्चात्

'आर्य समाज विशेषांक'

आर्य समाज की जन्म शताब्दी के उपलक्ष में आर्य मर्यादा का १०० पृष्ठों का विशेषांक पाठकों के हाथों में है। इसमें देश के उच्चकोटि के विद्वानों, लेखकों और आर्य समाज के नेताओं के लेख हैं। इस अंक का मूल्य केवल एक रुपया पच्चास पैसे रखा गया है। आर्य समाजों के अधिकारियों से निवेदन है कि वह शीघ्र से शीघ्र अपने आर्डर भिजवाने की कृपा करें।

जन्म शताब्दी के उपलक्ष में आर्य मर्यादा का कार्यालय २० अप्रैल को बन्द रहेगा और इसलिये २० अप्रैल का अंक प्रकाशित नहीं होगा। परन्तु २७ अप्रैल का अंक फिर एक विशेषांक होगा और यह 'आर्य समाज' विशेषांक होगा। इसमें भी बड़े २ विद्वानों व उच्चकोटि के लेखकों के लेख होंगे। आर्य जनता व आर्य समाज के अधिकारियों से प्रार्थना है कि वह अभी से अपने इस अंक को सुरक्षित करवा लें। यह अंक कम से कम ५० पृष्ठ का होगा और इसका मूल्य ७५ पैसे होगा।

—व्यवस्थापक वीरेन्द्र भारती

वो है देव गुरु अपना

ले०—वीरेन्द्र-कुलदीप 'साथी')

तर्ज—आन मिलो सजना...+।

वार दिया था जग पर जिसने, सब कुछ अपना,
वो है देव गुरु अपना—है अपना, देव गुरु अपना,

१, शिवरात्रि का दिन था जब आया,
मूल शंकर को वृत था रखाया,
शिव प्रतिमा पर चूहा था आया,
जिसने मूल को ज्ञान दिलाया,
हो...... शावा-२
सच्चे शिव को पाने का था
जिसका ये सपना—वो है देव गुरु अपना,

२. विरजानन्द के चरणों में आया।
जिसने वेदों का ज्ञान दिलाया,
दक्षिणा में दी लौंगों की थाली,
पर गुरु की थी मांग निराली,
हो...... शावा-शावा,
करो वेद प्रचार जगत में-गुरु का था कहना,
वो है देव गुरु अपना—है अपना—१

६. मिलके बोलो जैकारे ऋषि के,
वेदों वाले प्यारे ऋषि के,
करो लक्ष्य भी पूरे ऋषि के,
पड़े हैं जो अधूरे ऋषि के,
हो...... शावा-शावा
आर्य राष्ट्र का पूरा होगा
'साथी' तभी सपना—वो है देव गुरु अपना,
है अपना—देव गुरु अपना ।

———————

आर्य समाज ने क्या किया ?

—लाला रामगोपाल शालवाले, प्रधान सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा

सम्वत् १६३२ विक्रमी चैत्र शुक्ला १ शनिवार को बम्बई नगर के गिरगांव मुहल्ले में डा० मणिकचन्द की वाटिका में महर्षि दयानन्द सरस्वती के कर कमलों द्वारा प्रथम आर्य समाज की स्थापना की गई ।

वेद धर्म प्रचारक सभा की नींव रखी गई। कुरीतियों से जकड़ी हुई आर्य जाति के सुधार का कल्पतरु आरोपित किया गया । भारतवर्ष में नूतन जीवन जागृति उत्पन्न करने का सफल साधन उपस्थित किया गया। आर्य जाति की मान-मर्यादा की रक्षा के लिए धर्म प्रचारकों की वेष-भूषा में सैनिक संगठन का प्रादुर्भाव हुआ। गोरे अंग्रेजों की प्रभुता के वक्ष स्थल पर गहरी चोट करने तथा अपने देश में अपना साम्राज्य स्थापित करने के लिए क्रान्तिदर्शी दयानन्द ने धार्मिक, सामाजिक एवं राजनैतिक क्रान्तिकारियों की अद्वितीय टोली का निर्माण किया ।

पतनोन्मुख भारत

आर्य समाज की स्थापना से पहले भारतवर्ष विशेषकर हिन्दू जाति अनेक प्रकार की कुरीतियों में पड़ी जर्जरी भूत हो रही थी। ७०० वर्ष के मुसलमानी राज्य एवं १७५ वर्ष की अंग्रेजी गुलामी के कारण अपना धर्म देश तथा जातीय गौरव अत्यन्त हीन अवस्था को प्राप्त हो चुका था तेजी के साथ हिन्दू मुसलमान हो रहे थे समूचे भारत में प्रतिदिन १४४ हिन्दू राम और कृष्ण के पवित्र धर्म को त्याग कर मुसलमान हो जाते थे। ईसाई पादरी बड़ी शीघ्रता के साथ लाखों की संख्या में प्रतिवर्ष चोटी धारी हिन्दुओं को ईसा की भेड़ों में शामिल किया करते थे। यहां तक कि एक प्रसिद्ध ईसाई पादरी ने काशी के महामहोपाध्याय पं० नीलकण्ठ शास्त्री को शास्त्रार्थ में हराकर ईसाई बना लिया। उनके ईसाई बनने के अनन्तर देश के अनगिनत ब्राह्मणों को ईसाई बनाया गया। सरकारी सहायता में करोड़ों रुपया खर्च करके दासता की कड़ियों को पक्का करने के निमित भारतवासियों के हृदयों को भारतीयता के शून्य कर काले अंग्रेजों का निर्माण करने के लिये लार्ड मैकाले की स्कीम के अनुसार सैंकड़ों स्कूल कालिज और गिरजा घर खोलकर हिन्दू जाति के बालको की अधः पतन रूप्री वधशालाएं तैयार की गई।

बाल-विवाह, वृद्ध-विवाह, अनमेल विवाहों की महापतनशालाएं विधवाओं की संख्या बढ़ने का कारण बन रही थीं और क्रमशः २५ हजार की संख्या में प्रतिवर्ष मुसलमानों के घर बसाने का कारण बनती थीं। किसी के हाथ का छुआ-हुआ अन्न खा लेने मात्र से हजारों हिन्दुओं को अपने भाई बन्धुओं द्वारा ही जाति बहिष्कार करके मुसलमान ईसाई बनने के लिये विवश किया जाता था ।

अन्ध विश्वास और गुरुडम के मिथ्या विश्वास ईश्वर पूजा के स्थान पर जड़ पूजा, शैव, शाक्त वैष्णव आदि मत-मतान्तरों की वृद्धि जातीय संगठन के सूत्रों को तोड़-तोड़कर हिन्दू धर्म को कच्चे सूत के धागे की उपमा दिलवाने का कारण बन रहे थे। विधर्मी और अंग्रेजी सरकार के एजेण्ट ईसाई पादरियों की ओर से सीता का छिनाला, रंगीला कृष्ण जैसे २३४ छोटे बड़े गन्दे ट्रैक्ट प्रकाशित हो चुके थे किन्तु गाढ़ निन्द्रा में सोई हुई हिन्दू जाति में कोई इन घृणित आक्षेपों का उत्तर देने वाला न था। मानवीय मार्ग के

महान् स्रोत भगवान वेद को तो ऋषि सन्तान सर्वथा भूल चुकी थी।

ऐसी महान् गम्भीर एवं भयानक परिस्थिति में भारतवर्ष तथा आर्य जाति विदेशी मृत्यु का ग्रास बनकर सदैव के लिये प्राचीन पूर्वजों की पवित्र धरोहर अपना धर्म और संस्कृति को बाहरी रंग में रंगने की मूर्खतापूर्ण तैयारी कर रही थी।

महर्षि दयानन्द ने ऐसी भयानक स्थिति में जब अन्दर और बाहर के शत्रु हर प्रकार से आर्य जाति को पूर्ण रूप से नष्ट करने की योजनाएं बना चुके थे, आन्तरिक कुरीतियों तथा बाहरी आक्रमण के बचाव के लिये लुप्तप्राय: प्राचीन वैदिक धर्म के उत्थान के लिये आर्य समाज की स्थापना की।

आर्य समाज ने इस सम्बन्ध में कहां तक सफलता प्राप्त की, निम्न सूत्र रूप से लिखे वाक्यों पर ध्यान दीजिये। आर्य वीरों ने किस प्रकार चौमुखी लड़ाई लड़ी, इतिहास इसका साक्षी है।

(१) सर्व प्रथम आर्य समाज के प्रवर्त्तक ने ही सन् १८७५ में सत्यार्थ प्रकाश द्वारा अपने देश में अपने राज्य की घोषणा कर स्वराज्य शब्द द्वारा विदेशी शासन को उखाड़ फैंकने की प्रबल प्रयास किया था। भारतीय तत्व ज्ञान तथा परम्परा की रक्षा तथा विदेशी विचार धारा का उन्मूलन ही आर्य समाज का प्रधान ध्येय रहा। इंडियन नेशनल कांग्रेस की स्थापना सन् १८८५ में एक अंग्रेज ह्यूम महोदय द्वारा भारत में अंग्रेजी शासन को बलवान बनाये रखने के लिए हुई थी उस समय पूर्ण स्वराज्य का स्वप्न तक कांग्रेस के सामने न था। केवल कुछ साधारण सुधार और पदों की मांग की जा रही थी।

(२) ईसाई मुसलमानों से हिन्दू जाति की रक्षा के निमित्त शुद्धि आन्दोलन का श्री गणेश कर आर्य समाज के नेता अमर हुतात्मा श्री स्वामी श्रद्धानन्द, धर्मवीर पं० लेखराम ने अपने प्राणों की बाजी लगाकर भारत भर में फैले हुए इस्लाम और ईसाइयत का मुंह मोड़ दिया था। आर्य समाज के विरोधी भी मुक्त-कण्ठ से प्रशंसा करते हैं कि आर्य समाज ने ही मुसलमान व ईसाई प्रचारकों से प्रबल शास्त्रार्थ-समर में विजय पाकर धर्म और जाति की भारी सेवा की है।

(३) छुआ-छूत का निवारण, अछूतोद्वार के प्रबल आन्नदोलन का सूत्रपात करके आर्य समाज ने जाति के कटते हुए पैरों की सुरक्षा कर हिन्दू जाति को लंगड़ा होने से बचा लिया। मौ० मुहम्मद अली और ख्वाजा हसन निजामी के ७ करोड़ अछूतों को बांट लेने अथवा मुस्लिम बना लेने के घृणित स्वप्नों पर भारी तुषारपात किया। इस सम्बन्ध में कितने बलिदान हुए, कितने आर्य वीरों को जातिबहिष्कार के दुःख उठाने पड़े यह तो तत्कालीन इतिहास के विद्यार्थी ही जानते हैं। यथेमावाच कल्याणी का वैदिक नारा लगाकर स्वामी दयानन्द ने चारों वर्णों को समान रूप से वेदाधिकार देने की पुनीत घोषणा की थी।

अंग्रेजी सरकार का कोप

अंग्रेजी सरकार के एजेण्ट भी आर्य समाज की गतिविधि से अपरिक्ति न थे। किसी न किसी प्रकार से वे जागृति के इस आन्दोलन का दमन करने की तैयारी कर रहे थे, सर्व प्रथम पटियाला नरेश जो भारत में अंग्रेजों का प्रधान पिट्ठू था आर्य समाज के दमन के लिए चुना गया।

रातो-रात पटियाला के ७० आर्य वीरों को राजद्रोह का आरोप लगाकर गिरफ्तार कर लिया गया। इसी प्रकार धौलपुर रियासत में आर्य समाज के कार्यकर्ताओं पर अभियोग लगाकर मुकद्दमे चलाए गए।

(क्रमशः)

वैदिक धर्म और उसकी सार्वभौमता तथा व्यवहारिकता

(ले०—आचार्य प्रियव्रत जी वेद वाचस्पति भूतपूर्व कुलपति, गुरुकुल कांगड़ी विश्व विद्यालय हरिद्वार)

आप के लिखे वैदिक साहित्य पर ग्रन्थ बहुत लोकप्रिय हुए हैं। —सम्पादक

१—जब परमात्मा ने सृष्टि के आरम्भ में मनुष्य को उत्पन्न करके उसे आंखें दी थीं उसी समय उसकी आंखों को सहायता देने के लिए सूर्य का प्रकाश भी दे दिया था। मनुष्य आंखें खोलकर चले और सूर्य के प्रकाश से सहायता ले तो उसे पता लगता रहेगा कि झाड़ी-झंखड़ों, कांटे-कंटीलों ईंट-पत्थर, गढ़े, टीलों आदि से रहित साफ-सुथरा और सीधा मार्ग अपने गंतव्य स्थान तक पहुंचने का कौन सा हैं। इसी भान्ति हमारी मन की बुद्धि को आंखों की सहायता देने के लिए प्रभु ने सृष्टि के आरम्भ में ही वेद रूपी सूर्य के ज्ञान का प्रकाश भी दे दिया था। हम मन से, बुद्धि से, विचार पूर्वक वेद का अध्ययन करें और वहां से जो ज्ञान प्राप्त हो उसे भली-भान्ति समझ लें तो हमें पता चलता रहेगा कि हमारे जीवन का उद्देश्य क्या हैं, हमें क्या करना चाहिए और क्या नहीं करना चाहिए। वेद से प्राप्त इस ज्ञान के अनुसार आचरण यदि हम करने लग जाएं तो हमारा जीवन सभी दृष्टियों से पूर्ण सफल बन जाएगा। वेद का यह उपदेश किसी विशेष देश और किसी विशेष जाति के लिए नहीं है। यह उपदेश प्रभु ने धरती पर रहने वाले सभी मनुष्यों और सभी जातियों के लिए दिया है। जिससे मानव मात्र अपने जीवन को सब प्रकार की सुख समृद्धि से भरपूर बना सके। इस प्रकार वेद के उपदेश, वेद का धर्म सार्वभौम है।

२—वेद में प्रभु ने स्वयं कहा है कि 'मैं वेद की इस कल्याणकारिणी वाणी को सब मनुष्यों को उनके कल्याण के लिए दे रहा हूं (यजु: २६.२) एक दूसरे स्थान पर वेद इसी सम्बन्ध में कहता है कि 'हे मनुष्यो मैंने माता की भान्ति कल्याण करने वाले वेद को तुम्हारे लिए प्रस्तुत कर दिया है, वेद का यह ज्ञान मनुष्य को उद्यमशील बना देता है: और उसके हृदय और मन को पवित्र कर देता हैं, इसके ज्ञान से तुम्हें लम्बीं आयु प्राप्त होगी, बलिष्ठ प्राण-शक्ति प्राप्त होगी, गौ आदि उपयोगी पशु प्राप्त होंगे, कीर्ति प्राप्त होगी, धन-सम्पत्ति प्राप्त होगी, ब्रह्म तेज प्राप्त होगा और अन्त में ब्रह्म लोक अर्थात् मोक्ष प्राप्त होगा जिससे तुम ब्रह्मा-नन्द रस का पान कर सकोगे। (अथर्व १९-७१-१) वेद के इन और ऐसे ही अन्य स्थलों से अत्यन्त स्पष्ट है कि वेद का धर्म मानव मात्र के लिए दिया गया सार्वभौम धर्म है। वेद के प्रचारक हम आर्य समाजियों की भी यही मान्यता है। हम मानव मात्र के कल्याण को लक्ष्य में रखकर वेद का धरती भर में प्रचार करना चाहते हैं। वेद के उप-देश व्यक्ति और समाज में मनुष्य के लिए कितने हितकारी हैं और उसे कितना ऊंचा उठाने वाले हैं इसे दिखाने के लिए हम यहां वेद

की कुछ शिक्षाओं की ओर पाठकों का ध्यान आकृष्ट करना चाहते है।

३—वेद कहता है कि ईश्वर हम सब मनुष्यों का माता और पिता है' (ऋग् ८-९८-११) और 'हम उस अमर परमात्मा के पुत्र हैं' (ऋग्० १०-१३-१) इसका स्पष्ट भाव यह है कि हम धरती के सब मनुष्य आपस में भाई-भाई हैं और इसलिये हम सबको एक दूसरे को आपस में भाई की दृष्टि से देखना चाहिए तथा जिस प्रकार एक माता से उत्पन्न भाई एक दूसरे की सहायता करने और एक दूसरे का कष्ट दूर करने के लिये सदा तत्पर रहते हैं उसी प्रकार हम सब परमात्मा के पुत्रों को भी एक दूसरे की सहायता करने और एक दूसरे का कष्ट दूर करने के लिये तत्पर रहना चाहिये। किसी मनुष्य को किसी दूसरे मनुष्य की किसी प्रकार की हानि नहीं करनी चाहिए और उसे किसी प्रकार का कष्ट नहीं देना चाहिये, प्रत्युत उसके कष्ट दूर करने का प्रयत्न करना चाहिये। बल्कि पशु-पक्षियों को भी कष्ट नहीं देना चाहिये, वे भी परमात्मा के पुत्र हैं और हमारे भाई ही हैं।

४—वेद का उपदेश हैं कि 'हमें प्राणी मात्र को मित्र की दृष्टि से देखना चाहिए और ऐसा प्रयत्न करना चाहिये कि सभी प्राणी हमें मित्र की दृष्टि से देखें, सभी को आपस में एक दूसरे को मित्र की दृष्टि से देखना चाहिये (यजु० ३६-१८)। मित्र का शब्दार्थ स्नेह करने वाला होता है। इसका एक अर्थ मृत्यु से, विनाश से, रक्षा करने वाला भी होता है। मित्र आपस में एक दूसरे से स्नेह किया करते हैं और एक दूसरे की विनाश से तथा सभी प्रकार की हानियों से रक्षा किया करते हैं। हमें प्राणी मात्र को अपना मित्र समझ कर उनसे स्नेह करना चाहिये और स्नेही मित्र जिस तरह एक दूसरे का हित किया करते हैं उसी प्रकार प्राणी मात्र का हित करने में हमें तत्पर रहना चाहिये, तथा जैसे स्नेही मित्र एक दूसरे की विनाश से रक्षा किया करते हैं उसी प्रकार हमें देखना चाहिए कि कोई प्राणी अपनी किसी गलती के कारण विनाश को न प्राप्त हो जाये, कोई हानि न उठा ले। हमें उसकी भूल सुधारने का भरसक प्रयत्न करना चाहिये। हमें अपनी ओर से तो किसी के विनाश में और किसी की हानि करने में प्रवृत्त होना ही नहीं चाहिये।

५—हमें आपस में एक दूसरे को कितने गहरे प्रेम से देखना चाहिये। इस सम्बन्ध में वेद के द्वारा परमात्मा आदेश देते हैं कि 'हे मनुष्यो तुम सब अपने हृदय एक बनाकर रखो, अपने मन एक बना कर रखो, तुम आपस में द्वेष मत करो, तुम सब आपस में एक दूसरे को इस प्रकार प्रेम से चाहो जिस प्रकार कि एक गौ अपने ताजे पैदा हुये बछड़े को चाहा करती हैं' (अथर्व० ३-३०-१) प्रेम की प्रगाढ़ता को दिखाने के लिये वेद ने बछड़े और गौ को इस उपमा में कमाल कर दिया है। मनुष्य माता का अपने पुत्र के प्रति प्रेम तो फिर भी कुछ स्वार्थ छिपा रहता हैं कि यह कभी आगे भविष्य में मेरी सेवा करेगा और मुझे सुख देगा। परन्तु गौ में अपने ताजे पैदा हुये बछड़े के प्रति प्रेम में इस प्रकार का तनिक सा भी स्वार्थ छिपा नहीं होता, आगे चलकर कुछ अरसे के बाद तो ये एक दूसरे को कतई भूल जाते हैं। उन्हें यह भी बिल्कुल स्मरण नहीं रहता कि यह मेरा पुत्र हैं और यह मेरी माता है। गौ का बछड़े के प्रति स्वार्थ निःस्वार्थ प्रेम रहता है। हम सब मनुष्यों में, चाहे हम किसी राष्ट्र के निवासी हों और चाहे सारी धरती के निवासी हों, आपस में इतना गहरा प्रेम रहना चाहिए जितना गौ का ताजे उत्पन्न हुए अपने बछड़े के प्रति होता है तथा इतने गहरे प्रेम में भरकर एक दूसरे का हित साधन करना चाहिए। तभी राष्ट्रों और धरती के सब निवासी

भरपूर उन्नति कर सकेंगे और अपने प्रदेशों और घरों को सुख का धाम बना सकेंगे।

६—वेद मनुष्यो में परस्पर के व्यवहार में ऊंच-नीच के विचार और बर्ताव को स्वीकार नहीं करता। वेद आपसके व्यवहार में पूर्ण समानता और सन्मान के आचरण का उपदेश करता है वेद में कहा गया है कि मनुष्यों में कोई बड़ा और कोई छोटा नहीं है, सब आपस में भाई है. सबको मिलकर अपने राष्ट्र और समाज के सौभाग्य की वृद्धि करनी चाहिए, परमात्मा सब का पिता है और पृथ्वी सबकी माता है ऐसा जानकर सब भाई-भाई की भान्ति मिलकर काम करेंगे तो धरती माता सबके लिए भान्ति-भान्ति के ऐश्वर्य और भोग प्रदान करेगी तथा सबके जीवन के दिन सुदिन बनें रहेंगे (ऋग्० ५-६०-५) यदि वेद की इस शिक्षा पर किसी देश के सब लोग आचरण करने लग जाएं तो उनका कितना कल्याण हो सकता है।

७—मनुष्य समाज की सर्वतोमुखी उन्नति और सुख समृद्धि के लिए वेद में स्थान-स्थान पर अत्यन्त महत्वपूर्ण उपदेश दिये गये हैं। एक स्थान पर कहा है कि 'हे मनुष्यो तुम एक दूसरे के लिये सुन्दर मीठी वाणी बोलो' (अथर्व० ३-३०-५) एक अन्य स्थान पर कहा है कि 'हे मनुष्यो तुम्हारे पानी पीने के स्थान समान हों, तुम्हारा अन्न का सेवन समान हो, तुम स्नेह के बन्धन में समान रूप से बन्ध कर रहो, मिलकर ज्ञान स्वरूप परमेश्वर की उपासना करो और मिलकर अपने यज्ञ किया करो, तुम सब इस प्रकार मिलकर रहो जैसे कि रथ चक्र की नाभि के चारों ओर उसके अरे मिले हुये रहते हैं, (३-३०-६०) एक दूसरे स्थल पर वेद कहता है कि 'सब प्रकार के ऐश्वर्य के अभिलाषी हे मनुष्यो तुम सब परस्पर मिलकर रहो, मिलकर चलो, प्रेम से मिलकर बातचीत करो तुम्हारे मन मिलकर परस्पर सहयोग से ज्ञान प्राप्त करें जिस प्रकार कि तुम से पहले के विद्वान् पुरुष मिलकर परस्पर सहयोग से विविध प्रकार का ज्ञान प्राप्त करते हुये अपने लिये ऐश्वर्य और अभ्युदय के अपने अपने भाग को प्राप्त करते रहे हैं। 'ऐश्वर्य के अभिलाषी तुम सबका गुप्त और गम्भीर विषयों की मन्त्रणा करने, विचार करने, का स्थान समान हो जिसमें तुम समान रूप से जा सको, तुम्हारी राज्य सभाएं और दूसरी सभाएं समान हों जिनके सदस्य सब बन सकें, तुम्हारा मन समान हो जिसमें परस्पर के लिये प्रेम हो, तुम्हारा मन से प्राप्त किया जाने वाला ज्ञान भी एक साथ हो अर्थात् परस्पर के सहयोग से प्राप्त किया जावे तुम सबको समान रूप से मिलकर की जाने वाली मन्त्रणा और विचार की मैं परमेश्वर मन्त्रणा देता हूं सलाह देता हूं, तुम सबको समान रूप से परस्पर के लिये किये जाने वाले त्याग के द्वारा ऐश्वर्य और अभ्युदय प्राप्ति के यज्ञ में नियुक्त करता हूं। 'तुम सबके संकल्प समान हो, तुम्हारे हृदय एक समान हों, तुम्हारा मन एक समान हो जिससे तुम्हारा भली-भान्ति परस्पर मिलकर साथ रहने से होने वाला ऐश्वर्य और अभ्युदय हो सके, (ऋ० १०-१९१-६-४)। वेद के इन उपदेशों के अनुसार धरती के मानव यदि चलने लग पड़े तो कौन सा ऐसा राष्ट्र होगा जिसके निवासी सब प्रकार की उन्नति, ऐश्वर्य और अभ्युदय तथा सब प्रकार की सुख समृद्धि के सर्वोच्च शिखर पर नहीं जा चढ़ेंगे।

८—हम सभी मनुष्यों को जीवन का एक बड़ा भाग विवाहित होकर गृहस्थाश्रम में कुटुम्बके रूपमें रहकर बिताना पड़ता हैं। हमें गृहस्थ होकर कुटुम्ब का अपना जीवन किसी प्रकार बिताना चाहिये इस सम्बन्ध में भी वेद में बड़े मार्मिक उपदेश दिये गये हैं। वहां कहा गया है कि 'भाई भाई से द्वेष न करे, बहिन-बहिन से द्वेष न करे,

घर के सब निवासी मिलकर चलने वाले बनो कर्मों और नियमों का समान रूप से पालन करो और एक दूसरे के साथ मंगल कारक भद्रवाणी बोलो, (अथर्व० ३-३०-३)। पुत्र पिता का अनुवृत हो अर्थात् उसके अनुकूल कर्म करने वाला हो. माता के साथ एक मन वाला हो, पत्नी पति के लिए मधुरता युक्त मीठी और सुख शान्ति देने वाली वाणी को बोले, (अथर्व० ३-३०-२)।

अथर्व वेद के चौदहवें काण्ड के प्रथम और द्वितीय सूक्त में तथा ऋग्वेद के दसवें मण्डल के ८५वें में विवाह और गृहस्थ जीवन के सम्बन्ध में बड़े विस्तृत रूप में चर्चा की गई है और गृहस्थ जीवन को सुख का धाम बनाने के लिए बड़े महत्व के उपदेश दिये गये हैं और स्त्रियों की बहुत ऊंची तथा आदरणीय स्थिति रखी गयी है। उन सूक्तों के सारे उपदेशों और विचारोंको इस लघु लेख में दे सकना सम्भव नहीं है। अन्य अनेक स्थलोंमें भी गृहस्थी जीवनके सम्बन्ध में वेद में बड़े महत्वपूर्ण उपदेश दिये गये हैं। इस लघु लेख में उन सब स्थलों का उल्लेख नहीं किया जा सकता। स्थाली पुलाक न्याय से गृहस्थ जीवन के विषय में वहां से दो बातें ही यहां लिखी जा रही हैं। वहां कहा है कि 'स्त्रियां कभी किसी प्रकार के कष्ट के कारण रोने नहीं पावे, उनके स्वास्थ्य का ध्यान रखा जाए जिससे वह नीरोग रहें तथा उन्हें पहनने के लिए भान्ति-भान्ति के रत्न दिए जाएं (अथर्व० १२-२-३१)। गृह पत्नी को घर के सब लोगों को अपने वश में रखना चाहिये। (अथर्व० १४-१-२०)॥ गृह पत्नी को घर के सब लोगों पर राज्य करने वाली सामाज्ञी होना चाहिए श्वसुर पर, देवरों पर, ननदों पर और सासों पर राज्य करने वाली सामाज्ञी होना चाहिये (अथर्व० १४-१-४४) गृह पत्नी को अपने घर का मंगल करने वाली और उसे बढ़ाने वाली होना चाहिये, वह पति को सुख देने वाली और सास को सुख देने वाली हो, (अथर्व० १४-२-२६)। पति-पत्नी को सदा हंसते खेलते रहकर हर्ष में रहना चाहिए तथा सुन्दर घरों में रहकर सुन्दर सन्तानें उत्पन्न करनी चाहिएं। (अथर्व १४-२-४३) पति-पत्नी को कभी एक दूसरे से वियुक्त नहीं होना चाहिए सारी आयु एक साथ रहकर भोगनी चाहिए। (अथर्व १४-१-२२) ऋ० १०-८५-४२) पति-पत्नी चकवे और चकवी की तरह सदा इकट्ठे रहें और उन्हें एक साथ रहकर सारी आयु भोगनी चाहिये, अथर्व १४-२-६४)। अर्थात् उनमें तलाक कभी नहीं होनी चाहिए। विवाहित पति पत्नी और घर के अन्य सब लोग यदि इन पंक्तियों में उद्धृत वेद के उपदेशों तथा इसी प्रकार के अन्य स्थलों में दिये उपदेशों के अनुसार अपना जीवन जिताते रहें तो सचमुच धरती के सब लोगों के गृहस्थ जीवन स्वर्गधाम बन सकते हैं।

९—मानव की सारी उन्नति, ऐश्वर्य, अभ्युदय और सुख समृद्धि का मूल आधार उसकी शिक्षा है, उसे शिक्षा काल में जैसी शिक्षा दी जायेगी वह वैसा ही बन जायेगा, वह अपनी शिक्षा के अनुसार ही कार्य करेगा। यदि उसकी शिक्षा अच्छी है तो वह अच्छा बन जायेगा और अपने संसार को अच्छा बना लेगा और यदि उसकी शिक्षा बुरी है तो वह बुरा बन जायेगा तथा अपने संसार को भी बुरा बना लेगा। वेद में बालकों की शिक्षा का बड़ा महत्वपूर्ण स्थान है अथर्व वेद के ११वें काण्ड का पांचवां सूक्त बड़े बड़े २६ मन्त्रों का सूक्त है। इस सूक्त को ब्रह्मचर्य सूक्त कहा जाता है। इसमें बालकों की शिक्षा का ही वर्णन है। वेद के अन्य अनेक स्थलों में भी बाककों की शिक्षा के सम्बन्ध में

निर्देश दिये गये हैं। वेद में विद्यार्थी को ब्रह्मचारी कहते हैं और विद्यार्थी काल को ब्रह्मचर्याश्रम। प्रत्येक बालक के लिये कम से कम २५ वर्ष की आयु तक और बालिका के लिये कम से कम १६ वर्ष की आयु तक ब्रह्मचर्याश्रम में रहना आवश्यक है। इस अवधि में कोई बालक विवाह नही कर सकेगा। वह पूर्ण संयम का जीवन व्यतीत करेगा तथा भान्ति-भान्ति के विद्या-विज्ञानों का अध्ययन करेगा। उसे भौतिक विज्ञान भी पढ़ाये जाएंगे तथा आध्यात्मिक विद्या भी पढ़ाई जायेगी। यम-नियमों और प्राणायाम आदि का अभ्यास कराके उसे योग की साधना भी कराई जायेगी। वेदादि शास्त्रों का भी अध्ययन उसे कराया जायेगा। इस सारी शिक्षा का परिणाम यह होगा कि जहां उसका विविध विषयों का ज्ञान बहुत ऊंची कोटि का हो जायेगा वहां उसके व्यवहारिक जीवन में पवित्रता आ जायेगी और वह वेद की उन ऊंची सामजिक शिक्षाओं को भी जीवन में ढालने वाला बन जायेगा जिनका कुछ थोड़ा सा उल्लेख ऊपर किया गया हैं। किसी भी राष्ट्र के बालकों को उनके विद्यार्थी काल में यदि इस प्रकार की शिक्षा दी जाने की व्यवस्था हो जाये तो उसके निवासियों का नैतिक जीवन कितना ऊंचा हो जायेगा और वह भौतिक ऐश्वर्य और अभ्युदय के किस ऊंचे शिखर पर पहुंच जायेगा इसकी भली-भान्ति कल्पना की जा सकती है।

१०—प्रत्येक मनुष्य की पांच प्रधान आवश्यकताए हैं। वे हैं १. घर २. भोजन ३. वस्त्र ४. चिकित्सा ५. शिक्षा। प्रत्येक व्यक्ति को रहने के लिए अच्छा हवादार और रोशनीदार खुला मकान मिलना चाहिए। उसे स्वास्थ्यबर्धक पौष्टिक भोजन खाने को मिलना चाहिये उसे सर्दी-गर्मी से बचाव के लिये ऋतुओं के अनुकूल वस्त्र पहनने को मिलने चाहिए। रोगी हो जाने पर अच्छी से अच्छी चिकित्सा उसे मिल सकनी चाहिये और ऊंची से ऊंची शिक्षा मिल सकनी चाहिये। वेद में स्थान-स्थान पर मनुष्य की उन पांच मूलभूत प्रधान आवश्यकताओं की पूर्ति के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण उपदेश दिये गये हैं वेद के अन्न सूक्तों और कृषि सूक्तों उसके शाला (घर) सूक्तों, उसके वस्त्रों सम्बन्धी प्रकरणों, उसके आयुर्वेद विषयक सूक्तों तथा उसके शिक्षा विषयक सूक्तों और प्रकरणों में मनुष्य मात्र की इन पांचों आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये विस्तृत उपदेश दिये गये हैं। वेद के सभी प्रकरण ध्यान से पढ़ने योग्य हैं। यदि वेद के इन उपदेशों के अनुसार आचरण होने लगे तो धरती का कोई भी निवासी अपनी इन पांचों आवश्यकताओं से वंचित नहीं रह सकता।

११—मनुष्य की इन आवश्यकताओं की पूर्ति में बाधक तीन कारण होते हैं वे हैं—१. अभाव, २. अज्ञान और ३. अन्याय। यदि राष्ट्र में इन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए आवश्यक सामग्री का अभाव है तो उसके निवासियों की ये आवश्यकतायें पूरी नहीं हो सकतीं। इन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए आवश्यक सामग्री उत्पन्न करने का ज्ञान यदि राष्ट्रवासियों को नहीं है अथवा उत्पन्न सामग्री का सदुपयोग करने का ज्ञान उन्हें नहीं है तो भी उनकी ये आवश्यकतायें पूरी नही हो सकती और यदि इन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए आवश्यक सामग्री तो राष्ट्र में पर्याप्त उत्पन्न होती है। परन्तु कुछ अन्यायी और अत्याचारी लोग उस सामग्री को जनता तक पहुचने नहीं देते अथवा उसे लोगों से छीन लेते हैं तो भी जनता की ये आवश्यकतायें पूरी नहीं हो सकतीं। अभाव, अज्ञान और अन्याय इन तीनों को राष्ट्र से दूर

करने के उपाय भी वैदिक धर्म बताता है। वेद के पुरुष सूक्तों (ऋ० १०-६० यजु० ३१ अथर्व० १६-६) और अन्य विभिन्न स्थलों पर वेद में वर्णाश्रम व्यवस्था का उपदेश किया गया है। समाज के व्यक्तियों को उनके गुण कर्मों के आधार पर ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र इन चार वर्णों में विभक्त किया जाए और प्रत्येक व्यक्ति के जीवन को ब्रह्मचर्य गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्याम, इन चार आश्रमों में विभक्त किया जाये। वर्णाश्रम व्यवस्था गुण-कर्म पर आधारित है, जन्म पर नहीं: ब्राह्मण वे लोग होंगे जो विभिन्न प्रकार के ज्ञान-विज्ञानों का आविष्कार और प्रचार करेंगे जो सत्य की खोज और प्रचार में ही अपना जीवन सर्मपित कर देंगे और इस प्रकार राष्ट्र में से भान्ति-भान्ति के अज्ञानों को दूर करने का वृत ले लेंगे: क्षत्रिय वे लोग होंगे जो राज्य प्रवन्ध का काम सम्भाल कर जनता में किसी को किसी पर अन्याय नहीं करने देंगे और इस प्रकार राष्ट्र में से अन्याय को मिटाने का वृत ले लेंगे। वैश्य वे लोग होंगे जो पशु-पालन खेती और भान्ति-भान्ति के उद्योग धन्धों के द्वारा भान्ति-भान्ति की उपभोग सामग्री को उत्पन्न करेंगे और व्यापार द्वारा उसे सर्व-साधारण जनता तक पहुचाने का काम करेंगे और इस प्रकार राष्ट्र में से उपभोग सामग्री के अभाव को दूर करने का वृत ले लेंगे। शूद्र वे लोग होंगे जो पढ़ाने लिखाने का पूरा अवसर देने पर भी कोई भीं बुद्धि से करने का काम नहीं सीख सकेंगे। ये लोग टोकरी ढोने आदि के शारीरिक श्रम के काम ही कर सकेंगे। ये लोग शेष तीन वर्णों की सेवा करके उन्हें अपने काम करने का अधिक अवसर देकर उनकी सेवा द्वारा राष्ट्र की सेवा करेंगे और इस सेवा को ही अपना वृत बना लेंगी। ब्रह्मचर्याश्रममें राष्ट्र का प्रत्येक बालक भान्ति-भान्ति के विद्या विज्ञानों को सीखेगा और अपनी रुचि और योग्यता के अनुसार किसी एक वर्ण में दीक्षित होकर उसके कार्यों के द्वारा राष्ट्र की सेवा का वृत लेगा। गृहस्थाश्रम में सभी अपने-अपने बर्णों के कार्योंके द्वारा राष्ट्र की सेवा का कार्य करेंगे। बानप्रस्थ में सम्पत्ति अर्जित करने का काम बन्द करके सब लोग साधना और आत्म चिन्तन का काम करेंगे तथा गुरुकुलों में जाकर अपनी योग्यता के अनुसार राष्ट्र के बालकों को निःशुल्क शिक्षा देने का काम भी करेंगे। संन्याश्रम सब के लिए आवश्यक नहीं है। जो लोग ब्राह्मण वृत्ति के होंगे और जिनमें पूर्ण वैराग्य उत्पन्न हो जाएगा वे ही लोग संन्यास ले सकेंगे। ये संन्यासी लोग सारी धरती को अपना घर और उसके सब निवासियों को अपना कुटुम्ब समझेंगे। ये लोग मानव मात्र के कल्याण की कामना से सत्य और धर्म का उपदेश करते हुए धरती पर विचरण करेंगे। ये लोग पुत्रों की कामना, धन की कामना और यश की कामना से सर्वथा दूर रहेंगे! सब प्रकार के लोभ से दूर रहकर संन्यासी लोग प्रभु चिन्तन में मग्न रहेंगे और मानव समाज को सन्मार्ग दिखाने का काम करेंगे। धरती के लोग जब वर्णाश्रम व्यवस्था की पद्धति से अपना जीवन बिताने लगेंगे तो उनके जीवन में किसी प्रकार का अभाव और कष्ट नहीं रहेगा और उनके जीवन में आनन्द की गंगा बहने लगेगी।

१२—वेद में त्याग के जीवन पर बहुत बल दिया गया है। एक स्थान पर वेद में कहा गया है कि जो व्यक्ति अपनी भोगसामग्री को अकेला ही खाता है, बांट कर नहीं खाता वह पाप ही खाता है। (ऋ० १०-११७-६)। एक अन्य स्थल पर वेद कहता है कि 'ईश्वर इस जगत् में सर्वत्र व्याप्त है अतः वह सबके कामों को देख रहा है इसलिए हे मनुष्य तू त्याग पूर्वक पदार्थों का भोग कर, किसी की सम्पत्ति की ओर लोभ की दृष्टि

से मत देख, (यजुः ४०-१)। सब लोग यदि त्यागमय जीवन व्यतीत करने लग पड़ें तो किसी के पास भी धन सम्पत्ति का आवश्यकता से अधिक संग्रह नहीं होगा और इस कारण सबको अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए आवश्यक धन सम्पत्ति उपलब्ध हो सकेगी। लोभ लालच की वृत्ति से व्यक्ति में जो अनेक बुराइयां आ जाती हैं जो उसे पतित कर देती हैं उनसे भी त्याग का जीवन व्यतीत करने वाला व्यक्ति बचा रहेगा तथा उसकी बराइयों से समाज को कलुषित और पीड़ित नहीं होना पड़ेगा। ऊपर संकेतित वर्णाश्रम व्यवस्था की पद्धति व्यक्ति में त्याग की भावना को जगाने और बद्धमूल करने में बड़ी सहायक होती है।

१३—वेद का धर्म एकेश्वरवादी है। वह बहु देवता वादी नहीं हैं बहु देवता वाद के कारण मनुष्यों में अनेक प्रकार के विवाद और झगड़े चलने लगते हैं। जिससे लोगों को भांति-भांति के कष्ट भोगने पड़ते हैं। एकेश्वर वाद के सिद्धांतों में यह न्यूनता नहीं रहेगी। इस सम्बन्ध में वेद कहता हैं 'ईश्वर न दो है न तीन हैं, न चार है, न पांच न छः है, न सात है, न आठ है न नौ है, और न ही दस है, वह अकेला वर्तमान है, वह एक ही है। (अथर्व० १३-४०-२-१६—१८-२० वेद मे जो अग्नि और इन्दु आदि नाम आते हैं वे किन्हीं पृथक्-पृथक् व्यक्तित्व और सत्ता रखने वाले देवताओं के नाम नहीं हैं। वे उसी एक ईश्वर के नाम हैं जोकि उसके भिन्न-भिन्न गुणों के कारण हैं। ऋग्वेद के १-१६४-४६ मन्त्र में तथा यजुर्वेद के ३२-१ मन्त्र में इसे भली-भान्ति स्पष्ट कर दिया गया है। अन्य अनेक स्थलों पर भी वेद में इस बात को अति स्पष्ट कर दिया गया है। ईश्वर के स्वरूप के सम्बन्ध में भी वेद की मान्यता बहुत स्पष्ट है। वेद के अनुसार ईश्वर का कोई शरीर नहीं, वह एक देशी नहीं है, वह सर्व व्यापक है और उसमें कोई विकार नहीं है। वेद कहता हे 'वह ईश्वर सर्व व्यापक है, ज्योति स्वरूप है, उसका कोई शरीर नहीं हैं, इसीलिए उसमें कोई घाव नहीं हो सकता, और न ही उस में नस-नाड़ियां हो सकती हैं. वह शुद्ध स्वरूप है, पाप उसको छू नहीं सकता वह क्रांतदर्शी ज्ञानी है मनन शक्ति से युक्त बुद्धिमान है। सर्वत्र विद्यमान है, उसका उत्पन्न करने वाला कोई नहीं है वह स्वयं ही सदा से विद्यमान है, और वह अनादि काल से जगत् के पदार्थों का ठीक-ठीक निर्माण करता आ रहा है, (यजु० ४२-८)। उसकी मूर्ति या प्रतिमा भी नहीं हो सकती, क्योंकि उसका कोई शरीर ही नहीं है। यजुर्वेद के ३२-२ मन्त्र में उसकी प्रतिमा होने का स्पष्ट निषेध किया गया है। ऐसे निरकार और सर्व-व्यापक ईश्वर की उपासना का ही वेद में विधान किया गया है। ईश्वर को सर्व व्यापक जानकर लोग कहीं भी उससे छिपकर पाप नहीं कर सकेंगे तथा उसे घट-घट का वासी जानकर अपने हृदय में ही उसके गुणों का चिन्तन करेंगे। वैदिक धर्म में वर्णित इस प्रकार के ईश्वर की सत्ता को धरती का कोई भी गहराई से सोचने वाला व्यक्ति आसानी से स्वीकार करेगा।

१४—इस प्रकार ऊपर के पृष्ठों में वर्णित वेद की शिक्षायें और मान्यताएं तथा वेद की अन्य मान्यताएं और उपदेश भी, सार्वभौम हैं, धरती के सब मनुष्यो के लिये हैं और धरती के सभी मनुष्य उनके अनुसार अपना क्रियात्मक जीवन बनाकर उन्हें अपने व्यवहार में लाकर लाभ उठा सकते है। वेद की कोई भी शिक्षा अव्यवहारिक नहीं है। वेद का धर्म एक सार्वभौम और व्यव-वहारिक धर्म हैं। जब विश्वमें सर्वत्र इस धर्म का प्रचार हो जायेगा और सब लोग इसके अनुसार जीवन बिताने लगेंगे तभी धरती पर सच्चे सुख और सच्ची शान्ति का साम्राज्य स्थापित हो सकेगा।

१, वर्णाश्रम व्यवस्था के सिद्धान्त पर हमने 'मेरा धर्म' नामक अपनी पुस्तक के 'वैदिक समाज व्यवस्था' नामक अध्याय में बहुत विस्तार से विचार किया है। जो लोग वर्णाश्रम व्यवस्था के सिद्धान्त को भली-भान्ति समझना चाह वे हमारी उक्त पुस्तक को अवश्य पढ़ें।

व्यंग बड़ाई

(रचयिता—श्री राधेश्याम पाण्डे)

मेरा देश बड़ा है ज्ञानी,
मानव धर्म आर्य वरदानी ।

कृषक किलोलें करे, उद्यमी हर्ष पावें ।
मन-मयूर नाचें कृषकों में गति लावें ।
गंगा यमुना की धरती है शस्य श्याभला ।
गीत मनोहर गावे प्रतिदिन सुजला-सुफला ।

हरषे चांद सितारे उन्नत पै ज्ञानी,
समय-समय पर बादल देते हैं पानी,

सुन्दर शस्त्र धारते सैनिक मस्ताने ।
आजादी के सपन विचारें मर्दाने ।
नेताओं ने नमन किया है धरती को ।
नित्य नागरिक हिल-मिल गाते हैं गाने ।

छन्द बोलते यहां वास्तविक मृदु वानी,
पुरवा पथ से प्यार कर रहे बे मानी,

वित्त बहादुर जाने कितने भार झेलते ।
गुप-चुप मिलते शतरञ्जों में खेल खेलते ।
भार बन गये हैं अफसर साही के चेले ।
फायल भरना काम बैठकर दण्ड पेलते ।

क्योंकि मिली है भगत बनी बिल्ली पटरानी,
चूहों की यूं उछल-कूद होती नू रानी,

व्यंगकार की बात कहीं ओछी पड़ जावे :
तुवक तान से तरबूजा यूं ही झड़ जावे ।
मामूली सी बात भूख की तानाशाही ।
भूखे की क्या बात भूख सबको गड़ जावे।

भंज लिखूं मैं और मरे सनकी की नानी,
मुझे वास्तविकता लिखने में है हैरानी,

आर्य समाज एक नये युग का निर्माण करने का श्रेय प्राप्त करे

(ले०—श्री रघुनाथ प्रसाद पाठक दिल्ली)

१२ अप्रैल १९७५ को आर्यजगत्, आर्यसमाज स्थापना शताब्दी दिवस मनाएगा। उस दिन का विस्तृत कार्यक्रम पृथक् प्रकाशित किया गया है जो आर्य समाजों को भी भेजा जा चुका है। आशा है आर्य समाजें एवं आर्य जनता इस दिवस को गम्भीरता एवं पूर्ण समारोह से मनाएंगे।

महर्षि दयानन्द के प्रादुर्भाव का कारण प्रायः इस सर्वतन्त्र सिद्धान्त के अनुसार कि महा पुरुषों के जन्म का कारण तत्कालीन परिस्थितियां हुआ करती हैं तत्कालीन परिस्थितियां ही थीं। इन पर एक दृष्टि डाल लिना उपयोगी होगा—

१—वेदों के नाम से लोग परिचित थे परन्तु उनकी शिक्षाओं से सर्वथा अनभिज्ञ थे।

२—प्राचीन संस्कृति और सभ्यता का स्थान विदेशी संस्कृति और सभ्यता ले रही थी।

३—हिन्दी पढ़ना फैशन के विरुद्ध था। उस समय अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त व्यक्ति हिन्दी को गन्दी कहने लगे थे।

४—बाल-विवाह, वृद्ध विवाह का होना विधवा विवाह का न होना आदि २ अनेक कुरीतियां समाज की जड़ों को खोखला कर रही थीं। एक २ दो २ वर्ष की विधवाओं की कमी न थी।

५—कर्म का निरादर और भाग्यवाद का बोल-बाला था।

६—ईसाई और मुसलमान सभी हिन्दुओं को अपने खेती समझ कर अपनी संख्या वृद्धि कर रहे थे।

७—जन्म की जाति, खान-पान में छूत-छात ने हिन्दू समाज को छिन्न-भिन्न कर रखा था। शूद्रों और दलितों के साथ उच्च जाति कहे जाने वाले लोगों का व्यवहार अत्यन्त अनुचित था अतः ये लोग खुल्लम-खुल्ला ईसाई और मुसलमान बन रहे थे।

८—स्त्रियों का निरादर था।

९—एक ईश्वर के स्थान में करोड़ों देवी-देवताओं की पूजा प्रचलित हो गई थी। मूर्ति-पूजा का प्रचार बराबर बढ़ रहा था। लोग ज्योतिषियों और धूर्त पण्डों पुजारियों के जाल में फंसकर अपना सर्वस्व स्वाहा कर रहे थे।

१०—दान की प्रथा बिगड़ी हुई थी। मुफ्त-खोरे दान का दुरुपयोग करते थे।

ये और इस प्रकार की अनेक परिस्थितियां थीं जो महर्षि दयानन्द के प्रादुर्भाव का कारण बनीं। उन्होंने समस्त आयु इन सुधारों में लगाई। वेदों का प्रचार किया और इस कार्य को जारी रखने के लिए आर्य समाज की स्थापना की।

आर्य समाज ने अपने कर्त्तव्य का बड़ी वीरता निर्भीकता और योग्यता के साथ पालन किया और इसके लिए बड़े से बड़े त्याग और बलिदान को तुच्छ समझा।

महर्षि दयानन्द और आर्य समाज की विचार धारा और कार्यो का प्रभाव यदि एक शब्द में बताया जाये तो यह कहना होगा कि इन्होंने भारत और भारत से बाहर के लोगों की विचार धारा में सुधारात्मक परिवर्तन किया जिसके फलस्वरूप लोग सुधार की परिभाषा में सोचने और बोलने लगे। दूसरे शब्दों में धार्मिक मानसिक सामाजिक एवं राजनैतिक दासताओं के प्रति लोग सजग होकर उनसे मुक्त होने की आकांक्षा करने लगे। आज की सुधार प्रवृत्ति पर महर्षि दयानन्द और आर्य समाज के प्रभाव की छाप दृष्टिगोचर होती है।

बाल-विवाह कम हुये। विधवा-विवाह प्रचलित हुये। स्त्रियों की शिक्षा जारी हुई, उनके प्रति हीनभावना उच्च भावना में परिवर्तित हुई, दलितों और पतितों के उद्धार कार्य का सूत्रपात हुआ। शिक्षा का प्रेम बढ़ा, शुद्धि जारी हुई लाखों ईसाई मुसलमान शुद्ध करके हिन्दू बनाये गये। मन्दिरों का स्थान धर्मशालाओं ने लिया, मूर्ति पूजा और अन्धविश्वासों के प्रति अरुचि उत्पन्न हुई और बढ़ी। सबसे बढ़कर पश्चिम के अन्ध-अनुकरण पर बज्र प्रहार हुआ और लोग अपनी संस्कृति, अपनी विद्या, अपने धर्म, अपने देश और अपनी राष्ट्रीयता से प्रेम करना सीखे। एक प्रकार से आर्य समाज का प्रादुर्भाव उस समय हुआ जबकि पश्चिम की आक्रमणात्मक संस्कृति ने भारत विजय का अभियान छेड़ा हुआ था और हिन्दू संस्कृति और हिन्दू धर्म का दिया टिम-टिमा रहा था।

इस्लाम, ईसाइयत बौद्ध एवं जैन इत्यादि मतों पर भी आर्य समाज का प्रच्छन्न प्रभाव कम नही पड़ा। वे अपने मतों की बुद्धि संगत व्याख्या और अपनी कुरीतियों के निवारण का यत्न करने लगे।

इस्लाम पर प्रभाव यह हुआ कि कादयानी समुदाय अस्तित्व में आया। कुरान शरीफ की पुरानी टीकाओं का मूल्य घटा, उनके स्थान में कई टीकाएं इस प्रकार की लिखी गई जिससे कुरान के नये अर्थ करके उसका रूप बदला जाने लगा। कलकत्ता हाई कोर्ट के भूतपूर्व जज अमीर आर्ली ने स्प्रिट आव इस्लाम) लिखकर परदे और एक समय में बहु विवाह को इस्लाम के विरुद्ध ठहाराया।

बौद्ध और जैन अब अपने को नास्तिक नहीं कहते। वे इस बात से अप्रसन्न होते हैं कि उनके दर्शन नास्तिक दर्शन क्यों कहे जाते हैं?

ईसाइयों में दो सम्प्रदाय बने, एक नूतन-कालीन दूसरे पुरातन वादी। पहले सम्प्रदाय वाले बाईबल में अनेक त्रुटियों का होना स्वीकार करते हैं और उसका सुधार चाहते हैं। हार्ड वर्ड विश्वविद्यालय के एक प्रिंसिपल ने ईसाई सम्प्रदाय में इस प्रकार का परिवर्तन करने का प्रस्ताव किया था कि जिससे मनुष्य का ईश्वर से साक्षात् सम्बन्ध स्थापित हो सके। किसी माध्यम की आवश्यकता न रहे। ईसाई मुरदे जलाने लगे। उनकी प्रार्थनाओं में शव के जलाने के बाद की प्रार्थना ब्रिटेन की पार्लियामैंट से स्वीकृत हो गई है।

पश्चिमी विद्वानों की सम्मतियों पर भी महर्षि दयानन्द की वेदार्थ शैली का प्रभाव पड़ा मैक्स मूलर ने जहां वह पहले वेदों को गडरियों के गीत बताया करता था वेदों की महिमा और

भारतीय दर्शन की गरिमा को स्वीकार किया। विदेशों में संस्कृत पढ़ने और भारतीय धर्म एवं दर्शन को जानने की उत्कण्ठा प्रबल हुई!

इस समय देश-विदेश में लगभग ४००० आर्य समाजें २१ प्रान्तीय सभाएं हैं तथा संस्थाओं का जाल बिछा हुआ है, जो लोकोपकार और शिक्षण का कार्य करती हुई करोड़ों व्यक्तियों को प्रकाश देती है और उनके सुधार एवं शिक्षण का प्रबन्ध करती हैं।

स्वतन्त्रता की प्राप्ति के पश्चात् जिन नमूनो पर देश का निर्माण किया जा रहा है वे भारतीय जीवन दर्शन और उसकी प्रतिभा के विपरीत है अतः इनसे देश का हित न हो सकेगा। इन्ही के कारण जीवन के मूल्य तिरस्कृत हो रहे हैं। संस्कृति के नाम पर सार्वजनिक नाच-गान, अश्लील सिनेमा चित्र, मदिरा, मांस का प्रचार, भ्रष्ट परिवार नियोजन, हत्या, लूट, डकैती, अपहरण, बलात्कार, व्यभिचार आदि अपराधों में वृद्धि, भ्रष्टाचार, विद्यार्थियों में चरित्र एवं अनुशासनहीनता आदि २ ऐसी बुराइयां हैं, जिन को आर्य समाज निष्क्रिय दर्शक के रूप में खड़ा नहीं देख सफता।

इन बुराइयों तथा धार्मिक अन्धकार अन्ध-विश्वासों का प्राबल्य नास्तिकता एक संशयवाद की वृद्धि, दहेज प्रथा की वीभत्सता जात-पात आर्य और द्रविड़ की समस्या, गुरुडम का प्रचार आदि २ समस्याओं का निराकरण करमे में एक मात्र आर्य समाज ही सक्षम है और उनका निराकरण करना उसका दायित्व है। धार्मिक और सामाजिक क्षेत्र में व्याप्त अराजकता को दूर भगाकर एक बार पुनः आर्य समाज को अपने अस्तित्व की अनुभूति करानी है।

आज जनता उपदेश के साथ उदाहरण भी देखना पसन्द करती है: अतः आर्यजनों को इस दिशा में विशेष सावधान रहने की आवश्यकता है। साथ ही ऐसे व्याख्यानों और साहित्य की आवश्यकता है जो तुलना में उत्कृष्ट हो।

यदि आर्यजन अपने स्वाध्याय और उच्च चरित्र के बल पर वैयक्तिक रूप में प्रचार का कार्य अपना लें और वैतनिक व अवैतनिक प्रचारकों पर स्थानीय प्रचार कार्य के लिये निर्भर न रहें, जिन बुराईयों को दूर करने का आर्य समाज का बीड़ा उठायें उनसे वह और उसके सदस्य मुक्त हों, आर्य समाज का संगठन और अनुसन्धान कार्य अत्यन्त दृढ़ और व्यवस्थित हों, अनुपयोगी संस्थाएं बन्द हो जाएं इमारतों की अपेक्षा साहित्य विशेषतः सत्यार्थ प्रकाश के संसार की सारी भाषाओं में अनुवाद वेदों के अंग्रेजी भाषा के अनुवाद महर्षि की जीवनी का संसार की विविध भाषाओं में प्रकाशन व सृजन और प्रचार में पैसा लगाने की प्रवृत्ति बन जाये, वैयक्तिक स्वार्थ की सिद्धि के लिये आर्य समाज का दोहन बन्द हो जाये, आर्यजनों में महर्षि की वास्तविक भावना घर कर जाए, सामयिक प्रबाहो में आर्यजनों का बहना रुक जाये, हिन्दू समाज का संशोधन और रक्षक बना रहने पर भी आर्य समाज का पृथक उज्जवल अस्तित्व बना रहे. शूद्रो और दलितों को आत्म सात करने की परिपाटी पड़ जाये, संस्कृत और हिन्दी को पूर्ण प्रोत्साहन मिल जाये, तो निश्चय ही आर्य समाज देश और विदेश में भोगवाद की संस्कृति से उत्पन्न खाली जगह को भरता हुआ एक नये युग का निर्माण करने का श्रेय प्राप्त कर सकता है जिसके लिये प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में उस को आह्वान किया जा रहा है।

———

ऋषि ऋण

(लेखक—शान्ति स्वरूप शर्मा, गांधी नगर देहली)

—०—

(१)

अब तक यह होता आया है, मेरे बल पर मुल्ला, पादरी, पंडे, पुजारी।
सन्मुख बैठी। भक्त भीड़ को, मूढ़ और नादान समझ कर।
कंठी, माला, क्रोस पहन कर, पत्थर, पाषाणों को भगवान समझ कर।
धर्म यहां वतलाते आये, स्वार्थ हित बहकाते आये !

(२)

रोली, चन्दन, पुष्प, चढ़ाकर, मूर्ति, चित्रों को खूब सजा कर।
आरती बन्दना जोरों से गाकर, लड्डू, पेड़े वहां चढ़ा कर।
मूढ़ मांगते मन इच्छाएं, पर जड़ पत्थर से क्या वे पायें ?
समझ, बुद्धि का काम नहीं है, अन्ध श्रद्धा का नाम यही है।

(३)

कुछ वर्षों पहले का किस्सा, रात अन्धेरी, घन घोर घटाएं।
भक्त भीड़ थी अच्छी खासी, व्रती, भूखे कष्ट झेल कर।
शिव मन्दिर में बैठे जाकर, शिव पिंडी पर भोग चढ़ा कर।
देख रहा इक भोला बच्चा, तन का सुन्दर मन का सच्चा।
रात्रि में शिव प्रकट होंगे, दर्शन दे कृतार्थ करेंगे।

(४)

चूहा तभी दौड़ कर आया, मिष्टान्न, भोग का अम्बार पाया।
खाई खूब भर पेट मिठाई, फिर आंख दिखा कर पूंछ हिलाई।
मानो कहता सच्चा शिव मैं, जो सब खाता भोग मिठाई।
इस पिंडी को छोड़ मुझे ही पूजो, चेतन्य पूजा लाती चतुराई।
बच्चा सब कुछ देख रहा था, पर उसकी कुछ समझ न आई।

(५)

देख इसे बालक घबराया, निद्रा में सब जन को पाया।
कहा जोर से सुनो पिता जी, चूहा कितना है ये पाजी।

शिव शंकर ने नहीं भगाया अपना भोग बचा न पाया।
जो अपने को बचा न सकता, कैसे जग का पालन कर्ता।
लगता मुझ को सब यह धोखा, सच्चा शिव कहीं और अनोखा।

(६)

पिता सत्य बात बतलाओ, मन मेरे का भ्रम मिटाओ।
सीधा साधा प्रश्न पूछता, पत्थर शिव कैसे हो सकता।
पिता कहा मत शंका लाओ, परम्परा प्रथा धर्म अपनाओ।
उसको कोई बता न पाया, सच्चे प्रभु पाने को मन ललचाया।
घर को छोड़ भगा वो त्यागी, प्रभु भक्त सच्चा अनुरागी।

(७)

भगा फिरा नगरी और जंगल, कैसे प्रभु मिल सके सुमंगल।
जिसने खोजा उसने पाया, अन्त सत्य गुरु सन्मुख आया।
प्रज्ञा चक्षु निरभिमानी, वेद शास्त्र के अद्‌भुत ज्ञानी।
प्रभु, मानव, जग भेद बताया, क्यों मानव इस जग में आया।
आदर्श गुरु, शिष्य संन्यासी, वेद, शास्त्र, प्रभु के अभिलाषी।

(८)

कठिन परिश्रम शिक्षा पाई, प्रभु ज्योति मन मन्दिर आई।
प्रभु, सृष्टि का ज्ञान सरोवर, मानव जान कर चढ़ता ऊपर।
जग में वेद ज्ञान फैलाओ धर्म नाम पर पाखण्ड मिटाओ।
अविद्या अन्धकार है भारी, ब्रह्मचारी रह बनो प्रचारी।
आर्य जगत को फिर बनाओ, वेद पताका जग में फहराओ।

(९)

वह बालक बन गया दयानन्द, दण्डी विरजानन्द गुरु पावन।
आर्य समाज पौधा था लगाया, दश नियमों का सूत्र बताया।
गाली ईंट और पत्थर खाये, सन्मुख अनेक प्रलोभन आये।
अचल रहा यह सत्य पुजारी, मूढ़, प्रजा थी शत्रु सारी।
विष देकर उसको बिछड़ाया, जिसने हमको सुधा पिलाया।

(१०)

ऋषि का कितना काम पड़ा है, पूर्ण करने हित कौन खड़ा है ?
प्रश्न गगन में बोल रहा है, 'शांत' हमें आज तौल रहा है।
हम सब को कितना करना है, कैसे ऋषि ऋणि को भरना है।
आगे सदा पग बढ़ता जाये. शताब्दी वर्ष नव शौर्य दिखाए।
वैदिक नाद सुनाते जाओ. ऋषि के स्वरूप साकार बनाओ।

आर्य समाज के प्रहरियो !

(ले०—श्री शंकर सिंह वेदालंकार एम. ए.)

अपने अतीत को देखो, अपने वर्तमान का पर्यवेक्षण करो और अनागत की सुदृढ़ भूमिका बनाने के लिये सन्नद्ध हो जाओ। तुमने भारतीय जन मानस में व्याप्त मिथ्या रूढ़ियों का, प्रबल पाखण्डों का, जन्मना वर्णवाद का, बाल-विवाह का, वैदेशिक संस्कृति और सभ्यता का प्रचण्ड विरोध किया है। तुमने विधवाओं के आंसू पोंछे हैं, तुमने अनाथों को सनाथ बनाया है, तुमने गोरक्षा की सात्विक साधना की है तथा राष्ट्र की मुक्ति के लिए अपना शोणित बहाया है। समाज सुधार करते २ कभी तुम बहिष्कृत किये गये, कभी तुम्हें दण्ड दिया गया। कभी तुम्हें अप्रत्याशित यातनाएं भी दी गयीं पर तुमने सब कुछ सहा ? आंग्ल अजगरों का मुंह तुमने कुचला वैदिक संस्कृति के ऊपर छायी, भयावही मेघमाला को तुमने छिन्न-भिन्न किया. तुम कही सिंह से गरजे. जो कही कोयले से कूके, कहीं पियूष बरसाया, कहीं गरल उगला, पर सब किस के लिये ? जाति के लिये, समाज के लिये. राष्ट्र के लिये, नहीं-नहीं विश्व के लिये भी।

पर आज कुछ सुप्त से, व्यथित से, व्याकुल से श्रान्त से, निराश से. पारस्परिक मनोमालिन्य से, अपने जीवन में ही उलझे दिखाई पड़ रहे हो जिन विभूतियों ने अपने श्रेष्ठ कर्मचक्र से समाज में परिवर्तन की लहर चलायी थी आज वहीं विकसित सुमन वाटिका के सबल विध्वंसक क्यों बने हुये हैं। महर्षि दयानन्द का सन्देश तुम्हें नियन्त्रित नहीं कर पा रहा अथवा तुम उसकी उपेक्षा कर स्वच्छन्दता और स्वेच्छा चारिता का पथ अपना रहे हो। जिस फूट ने महाभारत की आयोजना की, जिस भेद ने भारत को परतन्त्र किया, क्या वही तुम्हें अपने आकर्षण में नहीं खींच रहा। देखना कहीं विश्व विजयिनी ऊर्जा यों ही ध्वस्त न हो जाये।

याद करो स्वामी श्रद्धानन्द जी, स्वामी दर्शनानन्द को, धर्मवीर पंडित लेखराम को, महात्मा हंसराज को और मुनिवर गुरुदत्त विद्यार्थी को उन्होंने अपने त्याग से अहर्निश सतत प्रयत्न से समाज की पुष्प वाटिका को हरा-भरा रखा है। तुम अपने को देखो, अपने समाज को देखो, गुरुकुलों विद्यालयों और महा विद्यालयों पर दृष्टि डालो जिनके लिये तुमने अपने श्रम का बलिदान किया है, प्राणों की आहुति दी है अपने रुधिर की रक्तिम धार बहाई है कहीं पथ-भ्रष्ट तो नहीं हो रहे। कहीं अपने उद्देश्यों और

सिद्धान्तों से दूर तो नहीं चले गये। उनकी क्रिया पद्धति कहीं दोषपूर्ण और विश्रृंखल तो नहीं हो गयी। वहां आर्यत्व है या अनार्यत्व। वहां गुण पूज्य हैं या अर्थ। वहां सत्कर्म प्रतिष्ठित है या दुष्कर्म। वहां गुरुता है या लघुता। गौरव है अथवा पतन। सबको आंखे फाड़ कर बुद्धि और विवेक के कपाट खोल कर देखो। जहां जो कमी है दूर करो। व्यक्तिगत स्वार्थो का राष्ट्र गत तथा विश्वगत हित में अनुष्ठान करो। इसके लिए तुम्हें संघर्ष करना पड़े तो करो अपनों को दण्ड देना पड़ें तो दण्ड दो। वैमत्य के प्रचण्ड वेग को सहना पड़े तो सहन करो। सामाजिक सर्वहितकारी नियम में परतन्त्र रहने का व्रत लो दयानन्द की भूतल व्यापिनी आर्ष धारा को उन्मुक्त प्रवाहित करने के लिए कल्याणमयी कुल्याओं का निर्माण करो।

जब मैं अतीत के स्वर्ण विहान को देखता हूं तो मेरा मन, मेरा हृदय, मेरी आत्मा आनन्द सरोवर में स्नात हो उठती है। कैसे थे वे त्यागी सत्पुरुष, कैसे थे वे राग विमुक्त परिव्राजक, कितनी थी उनमें कर्मशीलता, कितनी थी उनमें सजगता और अभिमान रहितता, पर आज जब वर्तमान को आंखें देखता हूं तो स्तब्ध रह जाती हूं। सर्वत्र विक्षुब्धता, नैराश्य लोभ और पद लोलुपता। क्या हमारा अनागत इन्हीं इष्टिकाओं की नींव पर खड़ा होगा। आर्यो अतीत के स्वर्ण को वर्तमान में रजत से, कांस्य बना कर अनागत में उसे आयस (लोहा) बनाने का प्रयास मत करो।

क्योंकि नीतिविदों ने स्वर्ण को शीघ्र द्रवणशील कहा है, उसके द्रवत्व से अन्य अनेक उपकारों रूपों की अवतारणा की जा सकतीं है। भंग होने की सहज सम्भावना भी नहीं होती। यह नयन विमुग्धकारी, गौरवबर्धक और मूल्य में भी अमूल्य होती है। रजत में धवलिमा है, धवलिमा रसहीनता की सूचक है जैसे इक्षु दण्ड से रस निकल जाने पर उसकी खोई श्वेत वर्ण वाली रह जाती है फिर उसका कोई मूल्य नहीं रहता, इसी प्रकार हथेलियों को निपीड़ित करने पर चर्म पटल धवल हो जाता है रक्त अन्यत्र स्थान ग्रहण कर लेता है वह स्थान रक्तहीन होकर जीवनहीनता का संकेत करता है। इस में केवल बाह्य आडम्बर होता है जो आज दृष्टिगोचर हो रहा है। मेरी दृष्टि में यह आर्य समाज का रजत युग है। स्वर्ण युग बीत चुका अनागत हमें लौह रूप में परिणित होने की सूचना दे रहा है। लौह संघर्ष का द्योतक है। लोहा लोहे को काटता है। उससे निर्मित अस्त्र विघटन का स्वर उद्बुद्ध करते हैं कहीं आर्यों का यह रूप उन्हें मिटाने का सूत्र न बन बैठे, हमें सतत् द्रवणशील प्रसरणशील और बहुमूल्य बने रहने की चेष्टा करनी है, ताकि हमारी तेजस्विता में कोई बाधा उपस्थित न हो।

तुम्हारे जीवन का स्वर्ण स्वर्ण, जीवन में व्याप्त रहे और तप कर कुन्दन बने, इस के लिये जग में जलने वाली नूतन अग्नियों में तुम्हें कूदना पडेगा। नवावतारों की पोल खोलनी पड़ेगी। राष्ट्र विद्रोही सम्प्रदायों का संहार करना पड़ेगा। अर्थ के अधिकार से मुक्त होने के लिये गुणाधिकार का पावन प्रवाह बहाना पड़ेगा। कञ्चन कामिनी को त्रिगुणात्मिक वृत्ति से विमुक्त होकर हमें जीवन के श्रेष्ठ आयामों का अनुसन्धान करना पड़ेगा। युगानुरूप कार्य प्रणाली का संचालन और निज सिद्धान्तों का बौद्धिक नियमन करना पड़ेगा।

इसका तात्पर्य यह नहीं कि वैदिक सिद्धान्त बौद्धिकता से परे हैं किन्तु इस वैज्ञानिक युग में उस अतीन्द्रिय सत्ता को एवं उन अतीन्द्रिय नियम को नवीन और ग्राह्य रूप में रखना पड़ेगा, जिससे वर्षा ऋतु के समय स्वतः उगने वाली नाशक तृणराजि के समान साम्प्रदायिक मण्डलियों का जन्म न हो।

हम बनें अग्नि से दाहक,
पाखण्ड जलाने वाले।
हम बने सोम से शामक,
सब ताप मिटाने वाले ॥
हम में जलती हो ज्वाला,
घन तामस मिटाने को
अति तप्त निदाघ निलय में,
नव मलयज बन जाने को।
हम विश्व मंच पर जाकर,
कोकिल से कू-कू बोलें।
श्रुति के पावन मन्त्रों का,
अनुराग पटल बढ़ खोले।
जगती पा जाये जीवन,
संगीत के साम-गानों से।
भारती ज्ञान हरषाये,
जग भर के सम्मानों से।

प्रचार समाचार

(१) संघोल (लुधियाना) १५ मार्च को पं० रामनाथ जी सिद्धांत भूषण ने रात्रि में वार्तालाप एवं शंका धान के साथ बहुत प्रभावशाली वातावरण तैयार किया। स० हरदेव सिह जी की कोठी पर हवन १६ मार्च को कराया। पंचयज्ञों पर आप के प्रवचन से जनता मुग्ध हो गई। २१) सभा को दान प्राप्त हुए।

यहां आर्य समाज की स्थापना भी होगी।

(२) आर्य समाज मुकलान (हिसार) में शिवरात्रि पर बोधोत्सव बड़ी धूमधाम से मनाया गया। श्री स्वामी प्रेमानन्द जी के भजन एवं प्रो० रामविचार जी एम० ए० के उपदेश से जनता बड़ी प्रभावित हुई। श्री बजरंग लाल जी, श्री मोमन चन्द्र जी दरयासिंह जी ने इस प्रबन्ध को सफल बनाया।

(३) आर्य समाज पुतलीघर अमृतसर में ऋषि बोधोत्सव १२ से १६ तक मनाया गया। श्री धर्मदेव जी का आकर्षक व्याख्यान एवं पं० भगतराम जी के भजन हुए।

१९ मार्च को बोधोत्सव भी पंजाब रोडवेज कालोनी में बहुत धूमधाम से मनाया गया। हवन एवं झण्डोत्तोलन के बाद कार्य आरम्भ हुआ। श्रीमती सुमन हांडा, श्रीमती आशारानी एवं श्रीमती गीता कुमारी की कविताएं श्री भोलानाथ तिवारी, श्री हंसराज खादिम, लाला लाल चन्द जी एवं श्री नन्द किशोरजी ने ऋषि जीवन पर प्रकाश डाला।

हमारा प्यारा आर्य समाज

ले० श्री डा० सूर्य देव शर्मा साहित्यालंकार एम. ए. एल. टी. डी-लिट्, अजमेर)

(१)

अमेरिका के योगी जैक्सन ने जिस को पहचाना था,
"विश्व मध्य प्रज्वलित अग्नि की ज्वाला" जिसको माना था।
दम्भ द्वेष का दाहक जग का पुण्य प्रबाह को जाना था.
पाश्चात्यों ने भौतिक मद को त्याग जिसे अपनाया था ॥
बनाता जग का बिगड़ा काज।
हमारा प्यारा आर्य समाज ॥

सब भारतीय नेताओं ने जिसकी महिमा का गान किया,
ठाकुर रविन्द्र, गांधी जी ने, नेता सुभाष ने मान किया।
ऋषि दयानन्द ने नीब डाल जिसका सुभवन निर्माण किया,
जिसने अपना सर्वस्व लगा इस आर्य जाति का त्राण किया ॥
सजाया स्वतन्त्रता का साज।
हमारा प्यारा आर्य समाज ॥

(३)

जिसके प्रकांड विद्वानों ने, साहित्य सृसन-संस्कार किया,
गायक कवियों ने जनजन में, नव जागृति का संचार किया।
जिस के त्यागी संन्यासी विद्वज्जन ने धर्म प्रचार किया,
नित अनगिनत वीर शहीद हुये, निज तन मन धन सब वार दिया ॥
रखी भारत माता की लाज।
हमारा प्यारा आर्य समाज ॥

(४)

शुभ शास्त्रार्थ के मैदानों में जिसके जमे अखाड़े थे,
नित मियां मौलवी, पोप पादरी जिसने सभी पछाड़े थे।
दिग्गज पंडित पौराणिक जन जैनों के होश बिगाड़े थे,
हरनगर प्रांत अरु देश विदेशों मे विजय ध्वज गाड़े थे ॥
गिरा बन दम्भ दुर्ग पर गाज।
हमारा प्यारा आर्य समाज ॥

क्या निजी पूर्वजों की गाथा, अब आर्य समाजी भूल गये ?
"कृण्वन्तो विश्व आर्यम्" को क्या नारा देकर फूल गये ?
क्या श्रेष्ठ उच्च वे लक्ष्य आज आलस्य झूले में झूल गये ?
क्या विश्व आर्य बन गया ? हटीले हट क्या संकट शूल गये ?
वेद का "आर्य" उदित क्या आज ?
बता तू प्यारे आर्य समाज ॥
नहीं, तो लगा तेज हुंकार।
जगत में गूंजे श्रुति झंकार ॥
यही है 'शताब्दि" का सन्देश।
वेद ध्वनि गूंजे देश विदेश ॥
सूर्य ।'

ऋषि मेला

आर्य समाज भार्गवनगर में वेद मन्दिर है। जहां प्रतिवर्ष ६ से ११ मार्च तक मेला लगता है। यह इस वर्ष भी बड़ी धूमधाम से मनाया गया। भार्गव नगर की सजावट ही दर्शनीय नहीं थी अपितु लगातार जगह २ से बैंड बाजे के साथ जयकारा लगाते आर्य जत्थों के आने का दृश्य भी था। जनता आर्य समाज मन्दिर में समा नही रही थी। लोग सड़कों पर इकट्ठा होते जा रहे थे।

नगर के लोगों का उत्साह भी आकर्षक था। हर तरफ मकानों पर 'ओ३म्' के झण्डे लगे थे। गलियों पर जाल ताने हुए थे। ११५ गेट बने हुए थे।

जलूस में घोड़ों पर प्रसिद्ध आर्य पुरुष बैठे थे। चार बैंड बाजे साथ चल रहे थे। जलूस इतना उत्साहवर्धक था कि पुराने आर्य समाजी विभाजन से पूर्व की याद करने लगे थे। इसमें जालन्धर के सभी प्रसिद्ध आर्य समाजी शामिल थे।

कार्यक्रम भी आकर्षक था। यज्ञ में यजमानों ने ५००) आर्य समाज को दान दिया। तीन दिनों तक मेला इसी के कारण इतना उत्साह प्रद रहा। इसमें ४ चोटी के सन्यासी एवं कुछ उच्च कोटि के भजनीक एवं उपदेशकों ने भाग लिया था।

रात की शानदार दीपमाला आकर्षक थी। जनता के ऊपर पड़े प्रभाव का द्योतक दान जो १० हजार रुपया था। वह इस आयोजन की सफलता का पारितोषिक था।

स्थापना शताब्दी और आर्य समाज की उन्नति की दश सूत्री कार्यक्रम

(लेखक—आचार्य धर्मदेव विद्यामार्तण्ड—देवमुनि वानप्रस्थ—आनन्द कुटीर ज्वालापुर)
भू. पू. प्रधान सार्वदेशिक धर्मार्थ सभा देहली

सामवेद संहिता पर अंग्रेजी में भाष्य लिखा है ! आप १९२१ ई० में गुरुकुल कांगड़ी के स्नातक हुए ! आप की आयु लगभग ८६ वर्ष है। आप का जन्म मुलतान में हुआ था ! आप भारतीय समाज शास्त्र पर विद्या वाचस्पति हुए। आप की विद्वत्ता से गुरुकुल कांगड़ी ने अपने विश्वविद्यालय की सर्वोच्च विद्यामार्तण्ड उपाधि दी ।

—सम्पादक

आजकल सभी प्रान्तों में आर्य समाज स्थापना शताब्दी की जो १२ अप्रैल को प्रत्येक नगर और ग्राम में जहां आर्यजन निवास करते हैं सोत्साह मनाई जानी है और फिर २४ से २८ दिसम्बर तक बम्बई में तथा १९७६ में देहली में मनाई जानी है ! उत्तर प्रदेश में मेरठ और कानपुर में शताब्दी समारोह के रूप में दो बड़े सम्मेलन में किये जा चुके हैं और गोरखपुर में उसकी तैयारी हैं ! पंजाब में अमृतसर और लुधियाना में दो बड़े आर्य सम्मेलन हो चुके हैं और मई में आर्य प्रादेशिक सभा की ओर से यमुनानगर (अम्बाला) में आर्य सम्मेलन बड़ी शान से होने वाला है। हैदराबाद में भी मई में ऐसा बड़ा सम्मेलन आयोजित किया जा रहा है। इन सम्मेलनों से जनता में जागृति अवश्य आती है और इनकी अपनी उपादेयता है। किन्तु मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि इन पर धन-जन शक्ति का जितना व्यय होता है उसकी तुलना में लाभ कम होता है। सम्मेलनों में धुआंधार भाषण हो जाते हैं। और अनेक प्रस्ताव पारित कर दिये जाते हैं परन्तु प्रायः उन प्रस्तावों को क्रियात्कक रूप नही दिया जाता । अतः वैयक्तिक, पारिवारिक या सामाजिक जीवनों में कोई विशेष परिवर्तन नहीं होने पाता। उत्तम साहित्य निर्माण, परिवारों के वैदिकीकरण तथा अन्य ठोस कार्यक्रम की ओर अब भी आर्य जनता का ध्यान कम है अतः आर्य समाजों को वर्तमान अवस्था सन्तोषजनक नहीं है ! आर्य समाज की वास्तविक उन्नति के लिये दशसूत्री कार्यक्रम प्रस्तुत करने से पूर्व मैं आर्य जनता का ध्यान अमर धर्मवीर स्वा. श्रद्धानन्द जी महाराज के निम्नलिखित महत्वपूर्ण सन्देश की ओर आकृष्ट करना अपना कर्त्तव्य समझता हूं जो उन्होंने मेरी प्रार्थना पर २१-५-२४ को मेरे द्वारा भेजा था। उस सन्देश में श्रद्धेय स्वामी जी ने आर्यों को सम्बोधित करते हुये लिखा था —

"तुम यह मत भूलो कि वैदिक धर्म कोई सम्प्रदाय वा पन्थ नही है ! यह वह सत्य सनातन धर्म है जिसके बिना संसार की सामाजिक व्यवस्था एक पल भी नहीं रह सकती। प्राचीनकाल में असंख्यात आध्यात्मिक कार्यो को

खोलने वाली चाबी तुम्हारे हाथों में दी गई थी, और अब भी अशान्त संसार को शान्ति देना तुम्हारा ही काम है। आज गम्भीर भाव से यह प्रतिज्ञा करो कि (क) तुम दैनिक पंच महायज्ञों के अनुष्ठान में प्रमाद न करोगे (ख) तुम अस्वाभाविक जाति भेद के बन्धनों को तोड़ कर वर्णाश्रम व्यवस्था को अपने जीवन में परिणत करोगे (ग) तुम अस्पृश्यता के कलंक का समूल नाश कर दोगे और तुम आर्य समाज के सार्वभौम मन्दिर का द्वार, मत, सम्प्रदाय, जाति और रंग आदि के भेदभाव का कुछ भी विचार न करके मनुष्यमात्र के लिये खोल दोगे, परम पुरुष परमात्मा इस गम्भीर प्रतिज्ञा के पालन में तुम्हारे सहायक हों।"

मैं इस सन्देश को आर्य समाज की वास्तविक उन्नति का मूल मन्त्र समझता हूं। इसे तथा आर्य समाज की वर्तमान असन्तोषजनक अवस्था को ध्यान में रखते हुये निम्नलिखित कार्यक्रम उसको उन्नत करने के लिये प्रस्तुत करता हूं —

(१) आर्य को अपना वैयक्तिक जीवन वैदिक आदर्शों के अनुकूल सर्वथा, सत्यमय और प्रेममय बनाने का अधिकतम प्रयत्न करना चाहिये जिससे वे अपने जीवन द्वारा अपने सम्पर्क में आने वाले लोगो को भी पवित्र और उन्नत कर सकें। उन्हे अपने जीवन को उन्नत बनाने के लिये प्रतिदिन दोनों समय सन्ध्योपासना, कम से कम एक समय सपरिवार हवन तथा वेदों का स्वाध्याय श्रद्धापूर्वक अवश्य ही करना चाहिये।

आर्यो के जीवन में तर्क के साथ श्रद्धा का पूर्ण समन्वय होना चाहिये जिसकी न्यूनता प्राय: देखने में आती है।

(२) पारिवारिक जीवनों को आर्य बनाना अत्यावश्यक है क्योंकि महिलाओ के हार्दिक सहयोग के बिना वैदिक धर्म का प्रचार और आर्य समाज की उन्नति सर्वथा असम्भव है। यज्ञों और संस्कारों को जब वे श्रद्धापूर्वक और आवश्यक व्याख्या सहित किये जाएं तो वैदिक धर्म के प्रचार में अत्यधिक सहायता मिलती है। क्योंकि उनमें सर्व साधारण आस्तिक जनता की श्रद्धा अब तक बनी हुई है।

पारिवारिक सत्संगों का आयोजन और आर्य समाज के सत्संगों में आर्य सदस्यों को सपरिवार जाने का यथा सम्भव प्रयत्न करना चाहिये। आर्य महिला समाजों के द्वारा महिलाओं में विशेष प्रचार जो संगीत रोचक कथादि द्वारा उत्तम हो सकता है, इस उद्देश्य की पूर्ति में सहायक होंगे। संस्कार शुद्ध रीति से श्रद्धापूर्वक किये जाने चाहिये जिनमें अवैदिक प्रथाओं का समावेश न होने देना चाहिये।

(३) कुमार कुमारियों और युवक युवतियों में उत्तम प्रचार के बिना आर्य समाज का कार्य आगे नहीं बढ़ सकता। इसके लिये आर्य कुमार सभाओं अथवा आर्य युवक सभाओं को आर्य समाजों की ओर से प्रोत्साहन दिया जाना चाहिये और उन समाजों को भी आर्य समाज के कार्य में पूर्ण हार्दिक सहयोग देना चाहिये।

आर्य कुमारी समाजों और आर्य महिला समाजों की स्थापना भी महिलाओं में विदुषी देवियों द्वारा प्रचार के लिए उपयोगी है। इन सब को आर्य समाज के साप्ताहिक तथा अन्य सत्संगों और विशेष समारोहों में भी आने की प्रेरणा करनी चाहिये। आजकल के युवक युवतियों में विलासिता, मद्य मांस धूम्रपान आदि की प्रवृत्तियां बढ़ रही हैं। आर्य कुमार और युवक समाजों द्वारा इन निन्दनीय प्रवृत्तियों को रोकने का विशेष यत्न करना चाहिये। इसी प्रकार आर्यवीर दल को भी अधिक शक्तिशाली और उपयोगी बनाने की आवश्यकता है। आर्य समाजों और आर्य कुमार सभाओं का सम्बन्ध

पिता पुत्र का सम्बन्ध होना चाहिए न कि प्रतिद्वन्दियों का, जैसा कि दुर्भाग्यवश कई स्थानों पर दृष्टिगोचर होता है।

(४) आर्यों के सामाजिक जीवन को भी वैदिक आदर्शानुकूल बनाना आर्य समाज की उन्नति के लिये नितान्त आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य है। आर्य समाज के साप्ताहिक सत्संगों के अन्त में ऋग्वेद के १०.१९१ मन्त्रों का पाठ करने की (जिसे संगठन सूक्त के नाम से पुकारा जाता है) पद्धति प्रचलित है।

जिनमें—

"संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि
जायताम्।
देवा भागं यथा पूर्वे संजानाना उपासते॥
समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति"

इत्यादि मन्त्रों द्वारा मिलकर प्रेम से बोलने, चलने, समान व्यवहार करने तथा मनों और हृदयों को मिलाकर पूर्ण सहयोग से कार्य करने का आदेश है। किन्तु इस पर आर्य लोग कहां तक व्यवहार करते हैं यह आर्य समाज की आन्तरिक अवस्था जानने वाले सब जानते हैं जैसेकि पूज्य स्वा. आत्मानन्द जी सरस्वती ने लिखा था कि शायद ही कोई भाग्यशाली आर्य समाज होगा जिसमें दो पार्टियां न हों। "आर्य समाज ही नहीं, आर्य प्रतिनिधि सभाओं तक में दो बराबर विरोधी संगठन कई प्रान्तों में बन गये हैं। शताब्दी समारोह की एक बड़ी सफलता यह होगी कि जहां आर्य समाजों या आर्य प्रतिनिधि सभाओं में परस्पर विरोध है उनका निर्णय सरकारी न्यायालयों द्वारा नहीं अपितु सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा अथवा प्रान्तीय प्रतिनिधि सभाओं द्वारा निर्धारित न्यायार्यसभा द्वारा कराया जाये। इस दिशा में तत्काल गम्भीर प्रयत्न किया जाना चाहिये ताकि सब आर्य नर नारी मिल कर शताब्दी समारोह को मना सकें। जो आर्य पारस्परिक विवाद के निपटाने के लिये अदालत की शरण में जावें उनका सामाजिक बहिष्कार किया जाए और उसे आर्य समाज की सदस्यता से भी पृथक कर दिया जाय, जहां न्यायार्य सभायें न हों आर्य समाज में इस समय बड़े-बड़े न्यायाधीश, वीतराग संन्यासी तथा परम विद्वान् तपस्वी वानप्रस्थ विद्वान् विद्यमान है, उनके द्वारा इन विवादों का निपटारा कराया जाना चाहिये। आर्य समाजों, आर्य प्रतिनिधि सभाओं और सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के अधिकारी उन्हीं सुयोग्यपूर्ण सदाचारी सन्ध्या हवन स्वाध्यायादि का श्रद्धापूर्वक सपरिवार आचरण करने वाले व्यक्तियों को बनाया जाय जो अपना अधिक से अधिक समय सामाजिक कार्यों के लिये दे सकें।

(५) वैदिक धर्म का प्रचार आर्य समाज की विशेषता है, अतः आर्य समाजों, प्रतिनिधि सभाओं और सार्वदेशिक सभा के कार्यक्रम में उसकी प्राथमिकता और मुख्यता देना चाहिये किन्तु संस्थाओं के चक्कर में इस ओर बहुत कम ध्यान दिया जाता है। आर्य समाजों के विद्यालयों में भी धर्मशिक्षा का प्रायः अभाव है। सुयोग्य प्रचारकों द्वारा जिनको अत्यन्त आदर की दृष्टि से देखा जाना चाहिये वैदिक धर्म के सब क्षेत्रों में व्यापक प्रचार की व्यवस्था अत्यावश्यक है। प्रचारक की उत्तरदायिता बड़ी भारी होती है क्योंकि इसे उनका चरित्र निर्माण करना है अतः वेदों के अच्छे मननशील विद्वान्, पूर्ण सदाचारी, अनुभवी महानुभावों को ही प्रचारक पद पर नियुक्त करना चाहिये। ऐसे ही सर्व साधारण में प्रचारार्थ वैदिक सिद्धांत और संगीत शास्त्र के ज्ञाता सज्जनों की भजनीकों के रूप में नियुक्ति करनी चाहिये। विदेशों में सुयोग्य अनुभवी प्रचारकों द्वारा प्रचार की विशेष व्यवस्था करानी चाहिये।

(६) यथा सम्भव प्रत्येक आर्य समाज में एक

गम्भीर विद्वान् पूर्ण सदाचारी प्रभावशाली वैदिक धर्म के प्रचार की लग्न वाले, महानुभाव की पुरोहित के रूप में नियुक्ति करके उसे मार्गदर्शक के रूप में मान देना चाहिये। पुरोहित का अर्थ ही "पुर एवं दर्धात" अर्थात् जिसको प्रत्येक कार्य में आगे रक्खा जाय—यह है किन्तु दुर्भाग्यवश अनेक आर्य समाजों के अधिकारी पुरोहित की समाज का भृत्य या सेवक समझते और उसे उचित मान नहीं देते, यह अनुचित बात है। पुरोहित महानुभावों को भी इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिये कि परिवारों के सब लोग, संध्या हवन स्वाध्यायादि नियमपूर्वक करें तथा उनके बालक बालिकाओं को धर्म की शिक्षा दी जाय। पुरोहितों का सबसे अधिक ध्यान लोगो के जीवनों को सच्चे आर्य जीवन बनाने की ओर होना चाहिये जिसकी बड़ी कमी दिखाई देती है। तर्क के साथ श्रद्धा का पूरा समन्वय हो। आर्यों में ही इसका पूरा प्रयत्न उन्हें करना चाहिये।

वेद भाष्य प्रकाशन अंग्रेजी में—

(७) मौखिक प्रचार की अपेक्षा भी उत्तम साहित्य निर्माण और इसके प्रकाशन की व्यवस्था प्रचार दृष्टि से अत्यावश्यक है। उच्च सुशिक्षित विद्वानों के लिये, युवक युवतियों के लिये, कुमार कुमारियों, बालक बालिकाओं के लिये भिन्न-भिन्न प्रकार के साहित्य की जो हिन्दी, संस्कृत, प्रादेशिक भाषाओं के अतिरिक्त देश विदेश के सुशिक्षित वर्ग के लाभार्थ अंग्रेजी तथा अन्य विदेशीय भाषाओं में भी हो, बड़ी भारी आवश्यकता है। उत्कृष्ट कोटि के साहित्य के बिना स्थायी प्रचार नितान्त असम्भव है। स्थापना शताब्दी के उपलक्ष्य में सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा वेदों के भाषा भाष्य के प्रकाशन के अतिरिक्त अंग्रेजी में भी वेदभाष्य करवा कर प्रकाशन करना चाहती है और ऋग्वेद के अंग्रेजी भाष्य का १०१६ पृष्ठों का प्रथम खण्ड छप भी चुका है। किन्तु जहां मैंने ऋग्वेद के दशों मण्डलों का अंग्रेजी भाष्य १०९१३ पृष्ठों में ३० अक्तू० १९७४ को ७ वर्षों के घोर परिश्रम के पश्चात् पूरा कर लिया है वहां खेद है कि उसके अगले ७ खण्डों और सामवेद के मेरे अंग्रेजी भाष्य के पुनर्मुद्रण की व्यवस्था अब तक आर्थिक कठिनाई के कारण नहीं हो पाई। मेरा निवेदन है कि शताब्दी के साहित्यिक कार्यक्रम से इस वेद भाष्य के कार्य को विदेशों में प्रचार की दृष्टि से प्राथमिकता दी जानी चाहिये और सभी धर्म प्रेमियों को इस कार्यार्थ सभा को उदार आर्थिक सहयोग देना चाहिये। अन्य उत्तम साहित्य के निर्माण और प्रकाशन की भी अति शीघ्र व्यवस्था करनी चाहिये। सत्यार्थ प्रकाश को सस्ते मूल्य पर उत्तम रूप से शुद्ध छपवा कर (भिन्न-भिन्न भाषाओं में) उसका अधिक से अधिक प्रचार करना चाहिये।

(८) स्वशुद्धि और दलितोद्धार की ओर भी प्रचारकों और आर्य प्रतिनिधि सभाओं को अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है। जातिभेद और अस्पृश्यता के हटाये बिना यह सम्भव नहीं कि इन उक्त आन्दोलनों में सफलता मिल सके। अतः क्रियात्मक प्रचार की अति विशेष आवश्यकता है ताकि शुद्धिशुदा व्यक्ति यह न अनुभव करें कि उनके लिये आर्य समाज में कोई स्थान नहीं किसी प्रकार के भेदभाव के बिना उनको अपने अन्दर पूर्णतया मिला लेना चाहिये। अन्तर्जातीय विवाहों को युवकों में अधिकाधिक प्रोत्साहित करना चाहिये।

(९) पाखण्ड खण्डन तथा प्रेमपूर्वक शास्त्रार्थ-

महर्षि दयानन्द ने अपने जीवन की भी पर्वाह न करते हुये पाखण्ड का निर्भयता से खण्डन किया और हरिद्वार में कुम्भ के अवसर पर अत्यन्त प्रतिकूल परिस्थिति में भी पाखण्ड खण्डिनी पताका फहराई, निर्भय होकर पौराणिकों, जैनियो, ईसाइयों और मुसलमानों से शास्त्रार्थ किये आर्य विद्वान भी बहुत समय तक इस परम्परा का अनुसरण करते रहे। इसका परिणाम यह होता था कि लोगों में विवेक

शक्ति जागृत होती थी, और मत मतान्तरों के लोग भी कुछ भयभीत रहते थे, सब ने अपने मन्तव्यों की तर्क संगत व्याख्या का यत्न किया था किन्तु अब कुछ वर्षों से राष्ट्रीय एकता की लोकप्रियता के नाम पर यह निर्भय, पाखण्ड-खण्डन की प्रवृत्ति बहुत कम हो गई है जिसका परिणाम यह हो रहा है कि राधास्वामी सम्प्रदाय ब्रह्मकुमारी सम्प्रदाय, बाल योगेश्वर का हंस-मत, आनन्द मार्ग, आचार्य रजनीश सम्प्रदाय, बाबा सत्यसाईं सम्प्रदाय, निरंकारी मत आदि सम्प्रदाय बढ़ते जा रहे हैं और प्रतीत होता है कि कल्पित भगवानों की बाढ़ आ गई है। आर्य विद्वानो का कर्तव्य है कि इन मतों के ग्रन्थों का अनुशीलन करके उनकी विविधि हानिकारक बातों का पत्र, पत्रिका. पुस्तकादि द्वारा खण्डन करें और उन्हें प्रेमपूर्वक शास्त्रार्थ के लिए भी ललकारें, ऐसे ही ईसाई, मुसलमान, जैनादि मतों की भी बुद्धि विरुद्ध बातों का निर्भयता से निराकरण करना चाहिये।

(१०) मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि आर्यों में भी स्वदेशभक्ति की भावना कम हो रही है और पाश्चात्य वेषभूषादि को लोग अपना रहे हैं, यज्ञों और संस्कारों में भी बहुत बार मैंने यजमानों को पाश्चात्य वेषभूषा में देखा है, घरों में भी माता पिता चाचा चाची के स्थान पर मम्मी, डैडी या पापा, अंकल, आँटी आदि का प्रयोग फैशन समझा जाता है, इस अराष्ट्रीय प्रवृत्ति के विरुद्ध भी आर्य प्रचारकों को अति विशेष कार्य करने और सच्ची देशभक्ति और राष्ट्रीयता की भावना को जागृत करने की आवश्यकता है, संस्कृतनिष्ठ हिन्दी सचमुच राष्ट्रभाषा और संस्कृत को अनिवार्य भाषा के रूप में सर्वत्र पढ़ाया जाए और प्रोत्साहित किया जाए. इसके लिये भी आर्य प्रचारकों आर्य समाजों, प्रतिनिधि सभाओं तथा सार्वदेशिक सभा के अधिकारियों को निरन्तर आंदोलन करने की आवश्यकता है, वैदिक राजनैतिक आदर्शों को भी जनता में फैलाने तथा उनसे देश के राजनैतिक जीवन को पवित्र बनाने की बड़ी भारी आवश्यकता है, राजार्यसभा को यदि एक सुसंगठित शक्तिशाली सभा राजनैतिक कार्यकर्त्ताओं के मार्ग प्रदर्शनार्थ बनाया जा सके तो बहुत ही अच्छी बात होगी, यद्यपि यह खेद की बात है कि अब तक इस के विषय में अनेक प्रयत्न विशेष सफल नहीं हो सके, किसी भी अवस्था में जनसम्पर्क बढाने के लिये भी यह आवश्यक है कि देशहित में गोवध निषेध, मद्य निवारण भ्रष्टाचार निवारणादि आंदोलनों को प्रबल रूप से संचालित किया जाए।

संकुचित प्रान्तीयता का परित्याग करके सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधिसभा की अन्तः राष्ट्रीय उपदेशक विद्यालय की स्थापना, वेदों के देश विदेश की भाषाओं में अनुवाद, सत्यार्थप्रकाश के सब भाषाओं में अनुवाद करा कर सर्वत्र प्रचार आदि योजनाओं को सफल बनाने के लिए सब आर्य नर नारी पूर्ण नैतिक और आर्थिक सहयोग दें तो शताब्दी समारोह नव-जीवनदायक और स्फूर्ति का संचारक बन सकता है, सर्वशक्तिमान भगवान सब प्रकार के भेद भुलाकर आर्यों को अपने कर्तव्य पालन की शक्ति प्रदान करें।

'षडाधार'

(लेखक :—वेद प्रकाश शास्त्री मद्दयानन्द गुरुकुल गंगीरी अलीगढ़)

ओम सत्यं वृहदृतमुग्रं दीक्षा तपो यज्ञः पृथिवीं धारयन्ति ।
सनो भूतस्य भव्यस्य पत्न्युरुं लोकं पृथिवीं नः कृणोतु ॥

(१) (वृहद् सत्यं) विशाल सत्य (२) उग्रं ऋतं) उग्र अनुशासन (३) (दीक्षा) दृढ़संकल्प (४) (तपः) श्रम (५) (ब्रह्म) विवेक (६) (यज्ञः) संगठन, सङ्गतिकरण। ये पृथ्वी की रक्षा करते हैं।

प्रत्येक व्यक्ति में मातृभूमि के प्रति सत्यनिष्ठा हो, उसकी उन्नति की कामना को विशाल सत्य समझें। जो व्यक्ति जहां के अन्न, जल वायु से जीवन धारण करते हों यदि उस राष्ट्र की उन्नति को विशाल सत्य न मानते हों, अपना स्वार्थ प्रेम दूसरे राष्ट्र से करते हों ऐसे कृतघ्नी पामर राष्ट्रद्रोही दण्डनीय हैं। अतः मन्त्र में प्रथम विशाल सत्य कहा। यह समस्त राष्ट्र ही विशाल सत्य है। राष्ट्र की अपेक्षा प्रान्त, जिला, नगर, समाज एवं व्यक्ति अल्प सत्य हैं। विशाल सत्य की रक्षणार्थ अल्प सत्य की बलि दी जा सकती है परन्तु अल्प सत्य के लिए विशाल सत्य को क्षीण नही किया जा सकता। शरीर की रक्षा हेतु शरीर के किसी हिस्से को काटा जा सकता है। किन्तु उस हिस्से की रक्षा हेतु शरीर को नष्ट नहीं किया जा सकता है। वहुत के हितार्थ अल्प को बलिदान किया जा सकता है परन्तु अल्पके हितार्थ वहु की बलि नहीं दी जा सकती है। सारांश यह है कि पूर्ण की रक्षा में अंश स्वतः सुरक्षित है। पूर्ण का विनाश प्रत्येक अंश का विनाश है।

इस विशाल सत्य की रक्षा के लिए नियमानुकूल जीवन, आत्मसंयम होना नितान्त आवश्यक है। क्योंकि उग्र अनुशासन कठोर अनुशासन से सम्भव नहीं है वह तो नियमानुकूल जीवन और आत्मसंयम से ही हो सकता है। जिन राष्ट्र के शासकों में उग्रता तेजस्बिता नहीं है वे पदे-पदे राष्ट्र का अपमान करते हैं। पुरुषोत्तम राम की उग्रता से सारे राक्षसवंश का ध्वंस हुआ और सोने की लंका ध्वस्त हो गयी। लङ्का वर्मा, इन्डोनेशिया और अफ्रीका में भारतीय वंशानुवंश रह रहे थे उनको भारतीय कह कर निकाला गया क्योंकि सब जानते हैं कि भारत में उग्रता की कमी है। नागालैण्ड की पृथक रखने की समस्या श्री नेहरू की स्वयं उत्पन्न की हुयी है इसी प्रकार गोवा काश्मीर को पृथक रखने में हम स्वयं पापी हैं। शेख अब्दुल्ला के कहने पर काश्मीर में जनमत की आवाज स्वयं नेहरू ने पैदा की जब कि काश्मीर महाराजा ने बिना शर्त के विलय का प्रार्थना पत्र दे दिया था शेख अब्दुल्ला नेहरू का परम मित्र था अतः उन्हें केवल उसी का विश्वास था। यद्यपि डा. श्यामा प्रसाद मुकर्जी ने अब्दुल्ला की मक्कारी से सचेत करने के लिए नेहरू से अनेक बार कहा परन्तु राष्ट्रद्रोही पर विश्वास किया राष्ट्र प्रेमी का नहीं जो आज तक हमारी समस्या बनी है इसका इलाज केवल उग्रं ऋतं अर्थात् कठोर अनुशासन ही है क्योंकि अनुशासन अथवा मर्यादा पालन ही राष्ट्र की आत्मा है।

राष्ट्र के साथ सत्य भावना रखते हुए और आत्मना उग्र शासन में रहते हुये उसे राष्ट्र की

अभिवृद्धि तथा उसके उदय के लिये दीक्षा अथवा दृढ़ सङ्कल्प लेकर उसमें जुट जाना चाहिए। राष्ट्र की सुराष्ट्रता एवं राज्य की सुराज्यता को चिरस्थायी रखने के लिए न्यूनताओं को दूर कर पूर्णता का आधान करना चाहिये। अज्ञान, अन्याय, अभाव को दूर करते हुए भय. भ्रष्टाचार तथा शोषण को भगाना है। यह नहीं कि जनता को विश्वास दिलाया कि "काश्मीर पर पाकिस्तान का जिस भाग पर अवैध अधिकार है उसे वापिस लेकर रहेंगे।" चीनियों ने लद्दाख और नेफा पर १४ हजार वर्गमील भूमि पर बलात् अधिकार किया है उसे हम एकत्र लेकर रहेंगे," परन्तु शान्तिमिशन में शेख अब्दुल्ला आदि राष्ट्रद्रोहियों को भेजकर तथा किया कि "अक्साइचिन जो भारत का भूभाग है उसे चीन को पट्टे पर दे दिया जाये और पाकिस्तान से उसकी इच्छानुसार काश्मीर प्रदेश देकर संधि कर ली जावे।" यह क्या दृढ़ संकल्प का महत्व है? नीतिकारों के अनुसार बल का संचय करना चाहिए परन्तु ये नीतिज्ञ शान्ति की पुकारों से युद्ध को रोकना चाहते हैं शत्रु से द्विगुण सशक्त होना पड़ेगा। अपने उदात अतीत को बल और दृढ़ संकल्प द्वारा वर्तमान में परित कर उपस्थित कर देना है। वेद को पुनः विश्वधर्म और देववाणी को पुनः विश्व भाषा बना सार्वभौम चक्रवर्ती आर्य साम्राज्य की स्थापना कर समस्त विश्व को एक अखण्ड अभंग परिवार बनाना है। इस को लाने के लिए होना चाहिए दृढ़ संकल्प।

परन्तु दृढ़ संकल्प बिना तप के पूर्ण नहीं हो सकता क्योंकि तपशील व्यक्ति ही संकल्पों की पूर्ति किया करते हैं। उपर्युक्त सकल्प शुभ है, उदात्त है इन की पूर्तिमे तप द्वारा जुट जाना चाहिए। महातपस्वी महाराणा प्रताप ने चित्तौड़ के उद्धार के लिए सुखों को त्याग जंगलों में घास की रोटियां खायी थीं। तपस्वी तपोनिष्ठ व्यक्ति मातृभूमि के लिए हंसते-२ फांसी को जयमाला के रूप में धारण करता है। चीन (१९६८) में जतता में तप त्याग की भावना प्रादुर्भूत हुयी थी परन्तु शासकों की विलासिता ने उन सबका उत्साह समाप्त कर दिया। उन को तप त्याग का पारितोषिक भुखमरी महंगाई के रूप में मिला। तपशील होकर संकल्पों की पूर्ति में विश्व का सौभाग्य खेल रहा है। आर्य कठिनाइयों से प्यार करते हैं। विपुल तप ही महत्व कार्यो के लिए अनिवार्य है आगे कहा :-

'ब्रह्म' अर्थात् ब्रह्मचर्य द्वारा इन्द्रियदमन करना, विवेक शील बन उद्देश्यों की पूर्ति करना। क्योंकि भोगी विषयी राष्ट्र नष्ट हो जाते हैं। चाणक्य ने कहा :—

'राज्यस्य मूलं जितेन्द्रियता' राज्य की जड़ जितेन्द्रियता है। अथर्व वेद में कहा है :—

'ब्रह्मचर्येण तपसा राजा राष्ट्रं विरक्षति' ब्रह्मचर्य और तप से राजा राष्ट्र की रक्षा करता है। आज शहरों में सहशिक्षा अनैतिकता, विलासता और गन्दे अश्लील सिनेमों के प्रारंभ होने से नवयुवक नवयुवतियों के अवैध यौन सम्बन्ध स्थापित हो गए। समस्त शासक वर्ग ब्रह्मचर्य हीन होकर अविवेकशील हो गये क्योंकि इन का जीवन शहरों से प्रारम्भ हो गया जब कि इतिहास साक्षी है कि शासन जंगलों से चलता है और जंगल में ही ब्रह्मचर्य विवेक रह सकता है, अब तो भ्रूण हत्या अवैध नहीं है ऐसा कानून पास कर व्यभिचार बढ़ गया यह शासकों का अजितेन्द्रिय होना ही है। इसीलिए पदे-पदे विवेकशील रह कर सतर्कता सावधानी बरतनी पड़ेगी। विदेशों और विदेशियों के अनुकरण के अनुसार शासन चलाना अविवेकपूर्ण कार्य है। बुद्धिमानी यही है कि हम जितेन्द्रिय एवं विवेकशील बन अपनी परम्पराओं मर्यादाओं के आधार पर पुरातन राष्ट्र का निर्माण करें।

अन्तिम सर्वातिशय आवश्यक आधार यह है यज्ञ संगठन अथवा संगतिकरण। जो भी असंगठन करने वाले तत्व हैं उन सबको निर्मूल कर राष्ट्र को अखण्ड अविभक्त बनाया है, विभिन्नताओं को दूर कर एकरूपता लानी है। एक देश एक राष्ट्र, एक सम्राट, एक भाषा, एक संस्कृति एक धर्म, एक वेश, एक रूप, का आदर्श जभी हो सकता है। जब हम सुसंगठित हो, दलीयता, पार्टीयता आदि को समाप्त कर दें।

वर्तमान का एक सिरा भूत है, दूसरा भविष्य है। यदि हम अपनी भूलों को सुधार कर उपर्युक्त षडाधारों को धारण कर वर्तमान का सदुपयोग कर लेते हैं तो भविष्य भव्य बना देंगे वर्तमान बहुत बड़ा महत्व है अतः वर्तमान की साधना से ही राष्ट्रोदय सम्भव है।

अमर रहे प्रिय आर्य समाज

(लेखक क०—आचार्य धर्मदेव विद्यामार्तण्ड (देवमुनि वानप्रस्थ) आनन्द कुटीर ज्वालापुर)

(१)

धर्मोद्धारक विश्वसुधारक, अमर रहे नित आर्य समाज।
दीन अनाथ दरिद्रसहायक. अमर रहे नित आर्य समाज ॥

(२)

करना है उपकार विश्व का, जिसका अति उदात्त उद्देश्य।
सकल जगत को उन्नत करता, अमर रहे वह आर्य समाज ॥

(३)

शारीरिक आत्मिक सामाजिक, सब प्रकार की उन्नति का।
मार्ग बता आदर्श दिखाता, अमर रहे नित आर्य समाज ॥

(४)

वेद धर्म यह सार्वभौम है, इसके बिना नहीं कल्याण।
इसका प्रचार जग में करता, अमर रहे नित आर्य समाज ॥

(५)

जातिभेद को दूर भगाता, अस्पृश्यता कलंक मिटाता।
प्रेम भाव को सदा बढ़ाता, अमर रहे प्रिय आर्य समाज ॥

(६)

वेद सत्यविद्या के पुस्तक, वे ही हैं सर्वोदय साधक।
सच्चा उनका बना प्रचारक, अमर रहे प्रिय आर्य समाज ॥

(७)

अन्धकार है फैला जग में, दुराचार है बिस्तृत जग में।
वेद ज्योति से तम बिनसाता, अमर रहे प्रिय आर्य तमाज ॥

(८)

शिक्षा का आदर्श दिखाता, फिर समाज आदर्श बनाता।
पाखण्डों को दूर भगाता, अमर रहे प्रिय आर्य समाज ॥

(९)

नव जीवन का ही संचार, दूर सभी हों भ्रष्टाचार।
आर्यो में स्थिर सत्याचार, अमर रहे तब आर्य समाज ॥

(१०)

परमेश्वर की करुणा होवे, दयानन्द ऋषि सुमिरन होवे।
उतारता ऋषि ऋण सुकृत्य से, अमर रहे प्रिय आर्य समाज ॥

आर्य समाज का स्वरूप

(ले०—पूर्णचन्द एडवोकेट, भूतपूर्व प्रधान सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली)

आर्य समाज की स्थापना सारे संसार में वैदिक धर्म के पुनः प्रचार के लिये की गई। महर्षि दयानन्द की धारणा थी कि सारे संसार में महाभारत के समय तक केवल वैदिक धर्म का ही प्रचार था और उसी धर्म के आधार पर राजनीति का संचालन होता था चक्रवर्ती राज्य और चक्रवर्ती धर्म दोनों में समन्वय वैदिक धर्म की विशेषता है। आर्य समाज के नियमों में भी उस का छठा नियम आर्य समाज का उद्देश्य संसार का उपकार करना बतलाया है और संसार के उपकार की बड़ी सुन्दर परिभाषा की है संसार का प्रत्येक व्यक्ति हर प्रकार की उन्नति करने वाला हो अर्थात् शारीरिक, मानसिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति सबकी हो, जो इस प्रकार उन्नत होंगे उनका नाम आर्य होगा और ऐसे श्रेष्ठ सज्जन सर्वांगपूर्ण व्यक्तियों के समुदाय का नाम आर्य समाज होगा। ये ही धर्म का व्यवहारिक रूप समझना चाहिए। धर्म व्यक्तियों को श्रेष्ठ और सदाचारी बनाने के लिए है। मनुष्य जीवन का लक्ष्य धर्म, अर्थ एवं काम की व्यवस्था का है और धर्म का जो स्वरूप वेदों के प्रकाश में महर्षि ने दर्शाया है वह भी सर्वांगपूर्ण है। प्राचीनता, तर्क का समावेश और व्यवहारिक जीवन से सम्बन्धित होना धर्म के लक्षण हैं। महर्षि ने प्राचीनता की दृष्टि से केवल वेदों को ही स्वतः प्रमाण माना है। धर्म के जगत् में प्रचारक और संस्थापक संस्थाओंने धर्म के विषय में तर्क को स्थान नहीं दिया है। महर्षि ने तर्क का बड़े विस्तार से प्रचार किया है। धर्म के हर अंग में तर्क की कसौटी को आवश्यक माना है अपने अमर ग्रंथ सत्यार्थ प्रकाश को प्रश्न और उत्तर के रूप में रचा है। स्वयं अपने प्रतिपादित सिद्धान्तों पर दूसरों को प्रश्न उठाने के लिये प्रोत्साहन दिया है। इस प्राचीनता और तर्क के साथ जो सबसे बड़ी विशेषता है वह यह कि धर्म को व्यवहारिक जीवन का सर्वांगपूर्ण आधार बताया है। धर्म का सबसे मौलिक रूप ईश्वर की सत्ता में विश्वास और उसके गुण कर्म और स्वभाव को बुद्धि से समझ कर और उनको जानना और फिर उनको मानना और उनके आधार पर व्यवहारिक जीवन का निर्माण करना है। ईश्वर क्या है, महर्षि ने अपने साहित्य में अनेक स्थलों पर ईश्वर के गुणों का वर्णन किया है। सबसे अधिक बल दो गुणों पर है। ईश्वर निराकार, अजन्मा और अमर है। इससे परलोक सम्बन्धी पाखण्ड का निराकरण हो जाता है। मूर्ति पूजा, साकार पूजा भिन्न-भिन्न मतों और सम्प्रदायों में भिन्न-भिन्न रूप से प्रचलित है। यदि ईश्वर निराकार और अजन्मा है तो मूर्ति पूजा, साकार पूजा और अवतारवाद का पूर्ण रूप से निकारण हो जाता है। दूसरा विशेष गुण ईश्वर के सम्बन्ध में ईश्वर को न्यायकारी और कर्मफल दाता मानना है। सम्प्रदायों और मतों में ईश्वर का नाम लेने व प्रार्थना करने से पापों के क्षमा हो जाने की भावना सम्मुख आती है। महर्षि ने इस गुण को सम्मुख रख के

वल पूर्वक बताया है कि किए हुए पापों को विना फल भोगे कोई बच नहीं सकता और सच्चाई से धार्मिक जगत् के बहुत से कल्पित विचारों का सुधार हो जाता है सस्ती मुक्ति की आशा और उसका प्रचार परलोक सम्बन्धी पाखण्ड का वड़ा आवश्यक अंग है। उसका समाधान ईश्वर के स्वरूप को ठीक रूप से समझ लेने से हो जाता है। लोक सम्बन्धी पाखण्डों में भी ईश्वर की सत्ता में ठीक विश्वास बड़ा उपयोगी है। बेईमानी, भृष्टाचार अपराध तब ही पनपते हैं जब ईश्वर को व्यापक अन्तर्यामी और कर्म फल प्रदाता की भावना सम्मुख नहीं रहती। बेईमानी शब्द बड़ा शिक्षाप्रद है। ईमान ईश्वर की सत्ता में विश्वास का नाम है। जब ईमान नहीं रहता वह डिग जाता है तो बेईमानी और दुराचार का सामृाज्य फैल जाता है! इस दृष्टि से ईश्वर सम्बन्धी प्रचार महर्षि की सबसे उत्तम और आदरणीय शिक्षा है शपथ का महत्व भी सम्मुख आ जाता हैं। शपथ ईश्वर को हाजिर और नाजिर मानकर और जानकर सत्य बोलने की प्रतिज्ञा करना है। महर्षि वैदिक धर्म के प्रकाश में व्यवहारिक आस्तिकता के प्रचारक और समर्थक थे।

हमारा कर्त्तव्य

आर्य समाज के सार्वजनिक और विश्व व्यापी स्वरूप को चरितार्थ करने के लिए हमें आर्य समाज के तीनों मुख्य अंगों में ढालना चाहिए। वे तीन अंग प्रवेश, प्रचार और प्रबन्ध है। प्रवेश से अभिप्राय: सदस्यता से है। आर्य समाज का सदस्य बनने का अधिकार मनुष्य मात्र को है जो १८ साल से ऊपर का व्यक्ति वैदिक धर्म के सिद्धान्तों को जानना और मानना चाहे उसके लिये आर्य समाज का द्वार खुला रहना चाहिए। वर्तमान समय में ऐसा प्रतीत होने लगा है कि यह संस्था केवल हिन्दुओं के लिये या हिन्दुओं की है परन्तु यह बात ठीक नहीं। जब आर्य समाज की स्थापना १८७५ में हुई थी उसी समय अमेरिका में थियोशोफिकल सोसाइटी की स्थापना हुई थी। आर्य समाज और थियोशोफिकल सोसाइटी में मेल हुआ महर्षि ने यह आदेश जारी किया कि थियोशोफिक्ल सोसाइटी के जितने सदस्य हैं वे आर्य समाज के सदस्य माने जाएंगे। महर्षि के पत्र में लिखा हुआ है जो दयानन्द पत्रावली में प्रकाशित है। आरम्भ में कुछ सिख और जैनी भी सदस्य बने। कोई प्रवेश संस्कार नहीं हुआ। एक मुसलमान भी बिना नाम बदले सदस्य बना। आर्य समाज गणेश गंज, लखनऊ में दोस्त मुहम्मद का नाम सदस्यों के रजिस्टर में अंकित है। अब शताब्दी मनाते समय अति आवश्यक है कि इस का द्वार सदस्य बनने के लिये सवके लिये खोल दिया जाये। प्रवेश के साथ प्रबन्ध वाली बात भी सार्वजनिक दृष्टिकोण में समझ लेनी है। आर्य समाज के नियमों में महर्षि ने सभासदों में से आर्य सभासद बनने का आधार चरित्रवान् होना निर्धारित किया है और इस दृष्टि से प्रजातन्त्र के युग में आर्य समाज का विधान सबसे विशेष और आदरणीय हैं। आर्य समाज के अन्दर भी और आर्य समाज के वाहर भी सारा बल वोट पर निर्भर है। वोट राष्ट्र की सम्पत्ति है। इसका दुरुपयोग आपत्ति जनक है यदि वोट लेने देने में सदाचार की बात जोड़ दी जाए तो आर्य समाज का भी पूर्ण रूप से भला होगा और राजनीति में भी पूर्ण रूप से सुधार हो जाएगा। आर्य समाज में भी कभी-कभी निर्वाचन में विजय प्राप्ति के लिये और पद प्राप्ति के लिए कभी-कभी प्रतिज्ञा का भंग हो जाता है। इसमें बहुत सावधान होने की आवश्यकता है यदि आर्य समाज और उसकी

संस्थाओं का प्रबन्ध सदाचार के आधार पर होने लगे तो हर प्रकार की उन्नति सम्भव हो जायेगी और प्रबन्ध व्यवस्था सर्वांगपूर्ण होगी। प्रवेश और प्रबन्ध के साथ प्रचार पर भी ध्यान देना है। प्रचार सबकी उन्नति के लिये उनको तैयार करना है। आर्य समाज जब जान का खतरा था तब आगे रहा। अकाल और प्लेग के समय में जान लड़ा दी। जब मान का खतरा आया और स्वराज्य आन्दोलन चला तो लाखों आर्य समाजियों ने तन- मन, और धन से सहयोग दिया। अब स्वराज्य मिल जाने पर आजादी के नाम पर ईमान का खतरा है। आर्य समाज को बल पूर्वक चरित्र निर्माण के लिये प्रचार करना चाहिये और पाखण्ड खण्डन के के लिये भी। ये दोनों कार्य आर्य समाज के कार्यक्रम के आवश्यक अंग रहें और इनके सम्बन्ध के विभाग भी सार्वदेशिक सभा में रहें। अब जुट जाना चाहिये। सफल प्रचार का सबसे प्रबल साधन दैनिक पत्र है एक दैनिक पत्र ईमान के नाम से तुरन्त निकालना चाहिये। लिमिटेड कम्पनी बनाकर हिस्से वेच कर वर्तमान उत्साह के समय में दैनिक पत्र निकालने में सफलता मिल सकती है। इस समय बैलटका युग है। बैलट का दुरुपयोग हो रहा हैं इसलिए बुलेट अर्थात् गोली चल रही है यदि सच्चाई का प्रचार होगा और वोट सच्चाई के आधार पर होगी तो शान्ति का भी साम्राज्य हो जायेगा।

नई समाज

आर्य समाज की जन्म शताब्दी के उपलक्ष्य में ग्रा. भैरो भैणी, रोहतक में सात दिन रात्रि को ८ से १० बजे तक पं. यशपाल शान्तनु आर्य समाज महम का निरन्तर वेदोपदेश-सत्संग-कथा तथा १४-३-७५ को प्रातः हवन हुआ जिस में बहुत बच्चों व नवयुवकों ने यज्ञोपवीत धारण किए अनेकों ने धूम्रपान न करने की प्रतीज्ञा की तद्न्तर ३१ सदस्य बना कर नई आर्य समाज कायम की।

ओम् प्यारे

(लेखक—वेदराही सोहन लाल ब्रह्मचारी अमरपुर)

ओ३म् प्यारे को तूने न जाना रे।
रहा दुनिया में हरदम दिवाना ।।
जप, योग न संध्या किया सवेरे शाम।
एक बार भी प्रेम से, लिया न ओ३म् का नाम ।।
इसमें करता हैं लाखों बहाना रे।
ओ३म् प्यारे को तूने न जाना रे ।।

धन-दौलत से एक दिन खाली होगा हाथ।
अन्त समय ओ३म् का भजन चलेगा साथ।
भरले भक्ति का दिल में खजाना रे ।।
ओ३म् प्यारे को तूने न जाना रे ।।

जो करना है सो करले क्यों बैठा है मौन।
पल-पल में प्रलय होती कल की जाने कौन।
व्यर्थ न जीवन गंगावना रे।
ओ३म् प्यारे को तूने न जाना रे।

ओ३म् के जप से आत्मा होगा बलवान।
हर रोशन व गुलशन में है वो भगवान।
मन को यही समझाना रे।
ओ३म् प्यारे को तूने न जाना रे ।।

ओ३म् नाम है सोहन' खेवनहार ।
जिसने जपा होगा बेड़ा पार ।।
इसके भजन में मत कर बहाना रे।
ओ३म् प्यारे को तूने न जाना रे ।।

"भारत देश"

(लेखक—राधे श्याम 'आर्य' एडवोकेट पूरे दरियाव लाल सुलतानपुर (उ० प्र०)

जिस के सुत हो आए पहले,
मंगल-चन्द्र नक्षत्रों पर ।
लिखी हुई जय-गाथा जिनकी—
रविमण्डल के पत्रों पर ।।
अनल-अनिल के तत्वों से—
थे होते शर-सन्धान जहां।
नए नए होते रहते थे—
सारे अनुसन्धान जहां ।।
ध्रुव-प्रहलाद जहां पा लेते—
वेद-रीति से शम्भु-महेश ।
अनुसन्धानों की धरणी जो—
वही हमारा भारत देश ।।

दयानन्द सा ज्योति-प्रसारक,
जिसकी धरती पर आया ।
जिसकी सत्य-शलाका छू कर—
भूमण्डल अति हर्षाया ।।
ज्योतिष्मान् किरण से सत की—
किया प्रकाशित अवनी-अम्बर ।
वेदों का दृष्टान्त दिखा कर—
निर्मलमय कर दिया चिदम्बर ।।
सुप्त राष्ट्र को सहस जगाया,
जागृति का दे नव सन्देश !
जाग्रततम है, जिसका विवेक,
वही हमारा भारत देश ।।

जिसके तट पर मिलता रहता—
नर को मंगलमय बरदान।
जिसका होता रहता संतत—
भू पर सौम्य सरस-सम्मान ।।
जहां है सदा छाया रहता—
मानवता का अखिल विधान ।
जहां खेलता रहता सद्गुण—
होता नवनिर्माण महान ।।
जिसके कण-कण में आहित है,
आर्य धर्म का नव-उपदेश ।
सिंहनाद है जहां घहरता—
वही हमारा भारत देश ।।

आर्य जनों से

(रचयिता—श्री प्रकाशचन्द्र कविरत्न अजमेर)
(जीवनभर आर्य समाज की सेवा में निरत-भारतमान्य कवि-सम्पादक)

आर्य जनों ! है यही समय करना हैं जो कर जाओ।
तजो शिथिलता बांध कमर कर्तव्य क्षेत्र में आओ ॥

हीन भावना तजो प्रथम, तुम बनो न हतोत्साही।
तुम हो बलिदानी वीरों के चरण-चिन्ह के राही ॥
कांपी तुम से ब्रिटिश हकूमत, निष्ठुर निजामशाही।
आखिर तुम हो दयानन्द ऋषिवर के वीर सिपाही ॥

तुम समर्थ सब भांति शक्ति निज सदुपयोग में लाओ।
आर्य जनो ! है यही समय करना है जो कर जाओ ॥

मिट जायें मदमान मूढ़ मतवालों मक्कारों के।
रहे न नामनिशान चोर, जारों के गद्दारों के ॥
टूटें दुर्ग पात की, घातक ढ़ोंगी अवतारों के।
धर्म-राष्ट्र-भाषा द्रोही दुर्जन गौ-हत्यारों के ॥

होवें पस्त हौसले सारे ऐसी क्रांति मचाओ।
आर्य जनो ! है यही समय करना है जो कर जाओ ॥

प्रचारार्थ वेदों के देश विदेश विचरना होगा।
इसके हित जीना होगा, इसके हित मरना होगा ॥
द्वेष, कलह. कटुता विसार सब भांति संवरना होगा।
आर्य समाज समुन्नत सबको मिलकर करना होगा ॥

आर्य समाज गुणावलि गाथा बड़े प्रेम से गाओ।
आर्य जनो ! है यही समय जो करना है कर जाओ ॥

आर्य समाज बिना शुचि वैदिक सत्पथ कौन बताता।
कौन अविद्या, अंध, अधर्म-चंगुल से तुम्हें छुड़ाता ॥
राष्ट्रीयता सच्ची इसके बिना कौन सिखलाता।
आर्य समाज 'प्रकाश' तुम्हारी जीवन दात्री माता ॥

निज दुर्बलता से माता का गौरव नहीं गिराओ।
आर्यजनों ! है यही समय करना है जो कर जाओ ॥

चरण बढ़ाओ निर्भय हो, ले ओ३म् पताका कर में।
आर्य बनाओ सब जग को कर वेद कथा घर-घर में ॥
बोलो पूज्य धर्म वैदिक की जय-जय ऊंचे स्वर में।
पावन आर्य समाज करें स्थापित हर ग्राम नगर में ॥

तन, मन, धन से मिलकर आर्यसमाज शताब्दी मनाओ।
आर्य जनों ! है यही समय करना है जो कर जाओ ॥

यज्ञ

(लेखिका—श्रीमती प्रतिभा जायसवाल, भागलपुर)

महाभारत शांति पर्व में लिखा है—यज्ञ त्रेता युग में आरम्भ हुआ। सत्ययुग में यज्ञ नहीं होते थे। आज के विकासवादियों की कल्पना भी यही है कि, आग के आविष्कार से पूर्व यज्ञ नहीं होते थे।

ऋषि दयानन्द ने अतिथियज्ञ, बलिवैश्वदेव यज्ञ, पितृयज्ञ और ब्रह्मयज्ञ को नित्य कर्मों में गिना हैं। इन्हें महायज्ञ भी कहा गया है। संभवतः ये यज्ञ आग के आविष्कार से पूर्व होते होंगे। इन में चूंकि आग में आहुति डालना मुख्य नहीं है। इसके बिना भी हो सकते हैं। चूंकि प्राचीन आचार्यों का मत है कि "अर्थक्रमो बलीयान्"—प्रयोजन की यज्ञ में मुख्यता होती है।

देवयज्ञ को ब्राह्मणों ने यज्ञ भावना का अभिनय भी माना है। अतः इसका ब्राह्मण ग्रंथों के लिखे जाने के समय विकास हुआ होगा। विष्णु जो यज्ञ का प्रधान स्वरूप माना जाता है। देवताओं की महत्ता यदि मंत्रों की दृष्टि से मानी जाये—तो इसकी महत्ता कम है! इसके सम्बन्ध में मंत्र बहुत कम है। वैदिक काल में इसकी महत्ता नहीं थी।

प्रतीत होता है—कि यज्ञ का आरम्भ उस समय हुआ जब हमारे देश में देव जन्मे थे। चूंकि देव उनको कहते थे। "परोक्षप्रिया हि देवाः प्रत्यक्ष-द्विषः।" सामान्य आदमी देखी घटना पर सोचता नहीं है—वह जैसा देखता है—उसे ही देख कर सन्तुष्ट हो जाता है। परन्तु कुछ उसके पीछे छिपे सत्य को खोजते हैं। ऐसे लोगों को 'देव, कहते हैं

यज्ञ वास्तव में समाज के संगठन की भावना थी। उस संगठित समाजके जीवनयापन की पद्धति को यज्ञ कहते थे यह पद्धति देवों के जन्म के बाद वर्णाश्रम व्यवस्था के साथ आरम्भ हुई। वास्तव मेंवर्णाश्रम व्यवस्था के साथ देवों के जन्म के बाद संगठित समाज के जीवन मार्ग (चरित्र) को यज्ञ कहते थे।

उस समय केवल कृषि और पशुपालन दो पेशे लोग करते थे। देवों के जन्म के साथ शिल्पों और विज्ञानों का आविष्कार हुआ।

उस समय भिन्न-२ कुलों के राज्य थे। जो आपस में झगड़ते रहते थे। देवों का जन्म किसी एक राज्य में नहीं हुआ। वे भिन्न २ राज्यों में भिन्न २ समय में पैदा हुए। जैसे आज वैज्ञानिक आविष्कारक पैदा हो रहे हैं। वे भिन्न २ शिल्पों एवं विज्ञानों के आविष्कारक थे। इन शिल्पों और विज्ञानों की आवश्यकता हरेक राज्य में थी। इस लिये हरेक राज्य से देवों के घरों में आकर छात्र पढ़ने लगे। इससे गुरुकुलों का जन्म हुआ।

गुरुकुलों में राष्ट्र का जन्म हुआ। चूंकि इन में सभी राज्यों के लड़के पढ़ते थे। वे भाई की तरह गुरुकुल परिवार में रहते थे। गुरुकुल छात्रों के परिवार थे जो गुरुओं के नियन्त्रण में अपना जीवन बनाते थे—और शिल्पादि सीखते थे।

इसमें राज्यों के भेद और विरोध का अन्त हो गया था। उनके स्थान पर एक राष्ट्र बनाने की भावना का विकास हो रहा था।

ये शिक्षित व्यक्ति द्विज कहलाने लगे थे। इन्हे राष्ट्र का जन्म होने से पूर्व देव ही कहते थे। छात्रों के सीख कर राज्यों में लौटने पर गुरुकुल खुल गए। जिससे वहां प्रत्येक गांव से आकर लड़के पढ़ते थे। सीख कर लौटे इन लोगों ने गांवों में गुरुकुल खोले।

अब शिक्षा अनिवार्य हो गई। तब शिक्षित को द्विज कहने लगे। चूंकि (आचार्य—उपनयमाणो ब्रह्मचारिणं कृणुते गर्भमन्तः। तं रात्रीस्तिसृः उदरे विभर्ति तं जातं द्रष्टु संयन्ति देवाः।) ब्रह्मचारी को गर्भ (गुरुकुल) में रखने का भाव वेदमंत्र में कहा है! उससे उस की उत्पत्तिका भी वर्णन है। परन्तु अभी इस शब्द का प्रचलन नहीं हुआ था। इस शब्द का प्रचलन दीक्षान्त और समावर्तन शिक्षा समाप्ति पर सामूहिक समारोह में संस्कार प्रथा चलने से हुआ। इसमें देव इकट्ठा होते थे। (आदित्याः रुद्राः वसवः जुषन्ताम् एनं ब्रह्म क्रियमाणं नवीयः।) वेद ने तीन प्रकार के देवों को इस अवसर पर बुलाने का विधान किया है।

परन्तु यह सामाजिक समारोह छोटे-२ राज्यों के रहने तक नहीं चल सके थे। चूंकि उन में विरोध था।

सामाजिक दशा—: शिल्प और विज्ञानों के बिना किसी व्यक्ति की जीवन की समस्याएं हल नहीं हो सकती थीं। इस समय सिक्का था नहीं। वस्तु देकर वस्तु लोग प्राप्त करते थे। प्रत्येक आदमी केवल एक शिल्प या विज्ञान ही सीख पाता था। उसे सभी की अपनी आवश्यकता पूर्ति के लिए जरूरत थी। इसलिये समाज के गठन की एक प्रथा का जन्म हुआ।

एक आदमी एक ही काम जानता था। वह शेष भिन्न २ शिल्पों एवं विज्ञान से पेशा करने वाले दूसरे सभी परिवारों की जरूरत अपने कर्म से पूरी करता था। वे उसकी करते थे। इस प्रकार एक दूसरे की सेवा में लगे हुये लोगों के दल बन गये।

इस प्रकार गठित समाज के सदस्य कोई न कोई काम सीखे हुए थे। इन (अप्तुरः) काम करमें वालो के दो दल हो गये। जो बच्चे अभी नहीं पढ़े थे।-वे अनार्य (अनाड़ी और नासमझ) कहाते थे। शेष आर्य (कुशलकर्मी) कहाते थे।

राष्ट्र का जन्म—: देवो ने जो गुरुकुलों में शिक्षक बन गये थे। राज्यों के झगड़ों का अन्त करने के लिए मिल कर एक राज्य के प्रधान को (इन्द्र) बनाने का प्रस्ताव रक्खा। इस प्रकार देवराज इन्द्र का जन्म हुआ।

इन्द्र के जन्म के साथ देवों का प्रस्ताव सभी राज्यों के लोगों ने स्वीकार किया। चूंकि देव उनके गुरू थे। इनके कारण पहले से सुखी और समृद्ध समाज का जन्म हुआ था। (ऋद्धं हि राज्यं पदमैन्द्रमाहुः) इस समाज को स्वर्ग कहने लगे।

इस समाज के जन्म के साथ राज्यों की छोटी छोटी सीमाएं समाप्त हो गईं। इस बड़े क्षेत्र का (देश या राष्ट्र) नाम रखने की समस्या पैदा

हुई। तब इसका नाम '.आर्यावर्त" रक्खा गया। चूंकि इस देश में सब आर्य (कुशलकर्मी हो चुके थे।

यज्ञ का जन्म—: आर्यों को सम्बोधित करते हुए देवो में सर्वश्रेष्ठ विद्वान बृहस्पति ने (इन्द्रं बर्धन्त्वप्तुरः कृण्वन्तों विश्वमार्यम्। अपघ्नन्तो ऽराव्णः।" कुशलकर्मी लोगों आप सब इन्द्र को बढ़ावें। छुद्र सीमा के अहंकार एवं व्यक्तिगत स्वार्थपूर्ण वृत्ति को छोड़ दें। तब आर्यों ने अपने में ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यों के रूप में कुशलकर्मियों के विभाग किये। स्वार्थी पुरुषों का नाम असुर पड़ा। शिक्षित होने पर प्रत्येक व्यक्ति दीक्षान्त के समारोह में द्विज कहाता था। (समावर्तन) के बाद आर्य कहाता था। असुर अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिये छल, कपट, ठगी धूर्तता आदि अपराध करता था। अतः दोष करने की प्रवृत्ति रखने से उसे दस्यु कहते थे। अपराध वस्तु या प्राणी के प्रति रोग से उत्पन्न चाह के कारण करता था। इस लिए इच्छा पूर्ति होने पर खुश और न होने पर दुःखी होता था! इस लिए शूद्र कहाता था। जो स्वार्थी अपने स्वार्थ को पूरा करने के लिये किसी पर क्रूर व्यवहार के साथ अनाचार करता था। उसे राक्षस कहते थे इस प्रकार द्विज, देव, आर्य, अनार्य, शूद्र, असुर और राक्षस आदि सब शब्द वेद के अनुसार प्रचलित हुए।

इस वर्णाश्रमी संगठन को यज्ञ कहने लगे। चूंकि इसमें हरेक दूसरों की सेवा के लिये कर्म करता था।

उत्सव समाचार

मार्च में आर्य वेद मण्डल मेवात के तत्वावधान में सोहन जिला गुड़गांव में आर्य समाज स्थापना शताब्दी सम्मेलन मनाया गया। आर्य नेता और विद्वानों ने भाग लिया। इस अवसर पर-चरित्र निर्माण सम्मेलन गौरक्षा, राष्ट्र रक्षा, महिला सम्मेलन हुये तथा शाकाहारी प्रदर्शनी लगाईगई।

卐 आर्य समाज नरेला का ४४वां वार्षिक उत्सव २२, २३ मार्च को समाज मन्दिर में मनाया गया। आर्य जगत् के मान्यवर संन्यासी, साधु महात्मा तथा भजनोपदेशकों ने भाग लिया।

———

आर्य समाज

(लेखक :—आचार्य मुन्शी राम शर्मा, कानपुर)

आर्यसमाज संस्था के निर्माण में महर्षि दयानन्द के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का सार संनिहित है। महर्षि का हृदय और मस्तिष्क दोनों आर्यभावना से आपूर अभिषिक्त थे। वे चाहते थे, जन-जन आर्य बने, यह देश सच्चे अर्थों में आर्यवर्त आर्यों का प्रदेश बने। यहां के निवासी आर्यत्व की गरिमा से मंडित हों, प्रत्येक व्यक्ति के जीवन से आर्यत्व का सौरभ विकसित होकर दिग्दिगन्तरों को सुरभित करे। यह देश ही नहीं, सम्पूर्ण विश्व बने। आर्य समाज एक संगठित संस्था के रूप में आर्य भावना का प्रचार करे। वेद की पवित्र वाणी, कृण्वन्तो विश्वमार्यम् प्रत्येक प्राणी की जिव्हा पर बैठ कर गूंजे। जिससे श्रमिक से लेकर ज्ञानी तक, राजा से लेकर प्रजा तक सब कर्तव्य-परायण आर्य जीवन का आदर्श बनें। यह भूमण्डल आर्य समाज, आर्यों का समाज, श्रेष्ठ पुरुषों का समाज बनें प्रत्येक ग्राम, प्रत्येक जनपद, प्रत्येक राज्य सुख एवं शान्ति अनुभव करे। वातावरण स्वस्थ, स्वस्ति प्रद और कल्याणकारी भावों से ओत-प्रोत हो जावे।

Charity begins at home अंग्रेजी की कहावत सर्वांशतः सत्य है। यदि मैं आर्य नहीं हूं तो दूसरे को आर्य कैसे बना सकता हूं? जो समाज स्वयं आर्यों का समाज नहीं है, वह दूसरे समाजों पर आर्यत्व का प्रभाव डाल नहीं सकता। इसीलिये महर्षि ने सर्वप्रथम हम सब को आर्य भाव की दीक्षा दी। वे स्वयं आर्य थे, इसलिये अपने सम्पर्क में आने वाले अनेक विद्वानों, राजाओं और प्रिय जनों को आर्य बना गये। आर्य समाज के प्रथम बने हुए सदस्य कर्मठ आर्य थे। वे भी न जाने कितनों को आर्य बना गये आर्य बनना और आर्य बनाना एक पुनीत कार्य है। आर्य परिवार में आर्य ही उत्पन्न होने चाहिए। वंश की मर्यादा स्थिर होती है और तभी रक्त की शुद्धता बनाने वाली पीढ़ियों में शुभ रक्त एवं शुभ आचरण की प्रतिष्ठा रहती है जो शिवत्व का संचार करती है और आर्यत्व को आगे बढ़ाती है।

आर्य किसे कहते हैं, उसमें कौन गुण होते हैं, उसका वृत्त कैसा होना चाहिए, उस का सामाजिक, राष्ट्रीय एवं सार्वभौम रूप क्या हो, आर्य परस्पर कैसा व्यवहार करें, जो अनार्य हैं उनके साथ कैसा बर्ताव हो, स्वाधीनता का क्या अर्थ है, विदेशी राज्य क्यों दुखदायी होता है, मत-मतान्तरों का वैमनस्य कैसे दूर किया जाए। नैतिकता क्या है, धर्म के लक्षण या उस की पहिचान क्या है, प्रमाणिक ग्रन्थ या आप्त वाक्य क्या है, विश्व भर के वाङ्मय में वेदों का स्थान सर्वोपरि क्यों है, सृष्टि क्या है, कैसे बनती है, कैसे स्थिर रहती है, और कैसे प्रलय होती है, बालकों की शिक्षा का रूप क्या हो, मानव जीवन में वर्णों और आश्रमों की मर्यादा क्यों

स्थापित हुई, राजनीति का स्वरूप क्या होना चाहिए आदि अनेक-अनेक विषयों का ज्ञान देने के लिए ऋषि ने अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश की रचना की। महर्षि की दृष्टि कितनी व्यापक और पारदर्शी थी, यह सत्यार्थ प्रकाश को पढने से स्पष्ट हो जाता है। ऐसे महर्षि ने आर्यसमाज की स्थापना खूब सोच समझ कर की थी। इस स्थापना को पूरे सौ वर्ष हो रहे है। आर्य मात्र का कर्तव्य है, वह सोचे कि इन सौ वर्षो से आर्य समाज ने अपने उद्देश्य में कहां तक सफलता प्राप्त की है, कौन सी न्यूनता रह गयी है जिसे पूरा करना है और आगे भविष्य में उसे किस प्रकार आगे बढ़ना है जिस से आर्य भाव का संवर्धन हो और जो अनार्थ हैं वे आर्य बन सकें।

महर्षि की वेदों में अटूट श्रद्धा थी। 'सब तजि हरि भज' की भान्ति वे सभी लौकिक ग्रंथों को छोड़ कर एक मात्र वेद के अध्ययन पर बल देते थे। वेदोऽखिलो धर्ममूलम्-मनु का यह वाक्य उनके रोम-रोम में, मस्तिष्क की शिरा-शिरा और हृदय की नाडी-नाड़ी में परिव्याप्त था। मध्यकालीन वेद भाष्य उन्हें वेद गौरव के अयोग्य जान पड़े। अतः वे स्वयं वेद-भाष्य लिखने में जुटे। काल की दुरतिक्रमता उन से चारों वेदों का भाष्य न करा सकी। पर जितना भी वे लिख गये, उतना मार्ग-दर्शन के लिए पर्याप्त था। ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका, आर्याभिविनय, संस्कार विधि तथा कतिपय लघु ग्रथों के अतिरिक्त व्याकरण विषयक ग्रन्थ भी उनके आर्य ज्ञान के द्योतक हैं, और जिज्ञासुओं के लिए यथेष्ट सामग्री प्रदान करने वाले है।

ज्ञान आंखें खोलता है, मार्ग सुझाता है, ज्ञान के अभाव में मानव संशय में पड़ कर या तो कुछ भी करने में असमर्थ हो जाता है, हाथ पर हाथ धरे बैठा रहता है या ऊट पटांग काम करके अपना तथा अन्यों का अहित कर बैठता है। सत्य ज्ञान के अभाव में ही हम शक्ति रहते हुए भी पराधीन हुये नाना प्रकार की कुरीतियों में पड़े और सामाजिक संगठन को दूषित करने लगे। महर्षि ने वेद का, आर्ष ज्ञान का और सत्य इतिहास का उद्घाटन करके हमारी आंखें खोल दी। हमें सत्य मार्ग का दर्शन हुआ और कोई माने या न माने, यह ध्रुव सत्य है कि आधुनिक जीवित जागृत भारत का जन्मदाता महर्षि दयानन्द है, उसका स्थापित किया हुआ आर्य समाज और उसकी कार्य-प्रणाली है।

ज्ञान दान के लिए आर्य समाज ने गुरुकुल, कालेज, स्कूल, कन्या पाठशाला खोले, अनाथालय खोल कर उन बच्चों को आश्रय दिया जिन्हें साधनों के अभाव में अन्य विदेशी मत स्वीकार करने पड़ते थे और इस देश में उत्पन्न होकर भी जो विदेशीय रंग में रंग कर देश के शत्रु बन जाते थे। शुद्धि का आन्दोलन चलाकर आर्य समाज ने न जाने कितने बिछुड़े भाईयों को फिर गले लगाया और आर्य बनाया।

महर्षि चाहते थे, मानव सच्चे अर्थों में मानव बने। आर्य का अर्थ ही है, सच्चा मानव। महर्षि लिखते हैं—मनुष्य उसी को कहना चाहिए जो मानवशील होकर स्वात्मवत् अन्यों के सुख-दुःख और हानि लाभ को समझे। अन्यायकारी (यदि) बलवान है तो उससे भी न डरे और धर्मात्मा (यदि) निर्बल (हो तो उस) से भी डरता रहे। इतना ही नही, किन्तु अपने सर्वसामर्थ्य से धर्मात्माओं को चाहे वे महा अनाथ, निर्बल और

रूपादि गुणों से रहित क्यों न हो। उनकी रक्षा उन्नति, प्रियाचरण (करता रहे) और अधर्मी चाहे चक्रवर्ती, सनाथ, महा बलवान और रूप गुण वाला भी क्यों न हों, तथापि उसका नाश, अवनति और अप्रिय चरण सदा किया करे। यह है महर्षि की मानवता का मापदण्ड, आर्यत्व की कसौटी। जो आर्य है, वह इस मानवता का मान करेगा, जो अनार्य हैं, दस्यु हैं. हिंसक है, वह मानवता को पददलित करेगा। आर्य सत्य का प्रेमी, धर्म मर्यादा का पालक और सद्गुणों का उन्नायक है। वह सत्य के संरक्षण तथा असत्य के निराकरण में सदा उद्यत रहेगा। अनार्य या दस्यु असत्य के पोषण द्वारा स्वार्थ साधक, लोभी लम्पट, शोषक और मानवताके ह्रासका कारण बनेगा।

महर्षि अपने युग के क्रान्तिकारी नेता थे। आर्य समाज ने इस क्रान्ति यज्ञ को आगे बढ़ाया प्रज्वलन को आत्माहुतियों द्वारा प्रदीप्त रखा। परिणामतः हमारी धार्मिक एवं सामाजिक दशा में सुधार हुआ और राजनैतिक पराधीनता से छुटकारा मिला। अब आर्य समाज अपनी जन्म शताब्दी मना रहा है। हमारी श्रद्धा और भावुकता इस अनुष्ठान को सफलता देगी, इस में सन्देह नहीं। सिक्ख गुरुओं के बलिदान ने पंजाब में हिन्दुत्व को जीवन दिया था आर्य समाज के संस्थापक और उसके अनुयायिओं ने भी अपने बलिदानों से वैदिक धर्म की जड़ों को सींचा है। महात्मा बुद्ध की शिक्षा ने भारत को विशाल भारत का रूप दिया था, आर्य समाज ने भी भारत को विशाल रूप में बाहर पहुंचा दिया है। बौद्ध संघ के साथ लंका, स्याम, ब्रह्मचीन, जापान आदि में पाली गयी थी, आर्य समाज के साथ फीजी मौरीशस, ट्रीनिडाड, अफ्रीका, अमरीका, यूरोप आदि में हिन्दी गई है। हमें अब सुसंगठित होकर वैदिक शिक्षा को देश-देशान्तरों में पहुंचाना है। आज हम स्वाधीन होकर भी वैदिक शिक्षा को बाहर क्या अपने देश में ही नहीं फैला सके हैं। इसके लिये बौद्ध भिक्षुओं की तरह हमें निस्पृह विद्वानों की एक टोली तैयार करनी है, कुछ सन्यासी भी पैदा करने हैं, जिनका जीवन वैदिक ढांचे में ढला हो और जो मानव कल्याण का व्रत लेकर इस सेवा-पथ में प्राण पण से अग्रसर हों। बिना त्याग और तपस्या के कभी कोई भी काम पूरा नहीं हुआ है।

आर्य समाज के श्रद्धालु सदस्यों! अपने जीवन को आर्य बनाओ तभी उसमें वह आकर्षण उत्पन्न होगा जो चुम्बक में सूई के लिए होता है। यदि हम आर्य बन गए तो परिवार, ग्राम, देश और विश्व भी आर्य बन सकेगा।

Charty begins at home की अंग्रेजी कहावत को चरितार्थ करने में जुट जाओ और कहो तथा कहलाओ :—

"स्तुता मया वरदा
वेद माता प्रचोदयन्तां
पावमानी द्विजानाम्
आयु प्राणं प्रजां पशुम्
कीर्ति द्रविणं ब्रह्मवर्चसम्
मह्यं दत्वा व्रजत ब्रह्मलोकम्।"

आर्य समाज के नियम
अर्थात्
सर्वांगीण जीवन विकास के स्वर्णिम सूत्र

(प्रा. भद्रसेन साधु आश्रम, होशियारपुर)

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने विधिवत् आर्य समाज की स्थापना ५ अप्रैल १८७५ को भारत की महानगरी बम्बई में की थी। आर्य समाज के नियमों (उद्देश्यों, कर्तव्यों) को अन्तिम रूप आर्य समाज लाहौर की स्थापना के अवसर पर दिया गया था। महर्षि ने अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में आर्य समाज के सम्बन्ध में लिखा है, कि "यदि उन्नति करना चाहते हो, तो आर्य समाज के साथ मिल कर कार्य करो, अन्यथा कुछ भी हाथ न लगेगा।" महर्षि ने ये विचार ब्राह्म समाज की समालोचना के प्रसंग में कहे हैं. जो कि अपने आप में प्रगतिशील और आधुनिक समझा जाता है। ब्राह्म समाज की समालोचना पढ़ने से यह परिणाम निकलता है कि ब्राह्म समाज में अपने देश, महापुरुषों, संस्कृति, सभ्यता और भारतीय साहित्य के प्रति अनुराग बहुत कम है तथा विशेष रूप से वेदों के प्रति। अतः कई स्थलों पर इसके सम्बन्ध में महर्षि ने बहुत ही मार्मिक संकेत किए हैं। दूसरी मुख्य बात यह है कि जीवन के सर्वांगीण पक्ष की दृष्टि से इसके विचार एकांगी हैं।

ब्राह्म समाज की समालोचना के प्रसंग में आए "यदि उन्नति करना चाहते हो, तो......" इस वाक्य से स्पष्ट है कि व्यक्ति या समाज की राजनीतिक, शैक्षणिक, आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक आदि पहलुओं की सर्वविध उन्नति को सम्मुख रख कर बड़ी गम्भीरता और उत्तरदायित्व के साथ में ये शब्द कहे गये हैं।

आर्य समाज में ऐसी कौन सी विशेषता है कि जिसका बड़े आत्मविश्वास के साथ यहां संकेत है। इस दृष्टि से जब हम आर्य समाज का विवेचन करते हैं तो हमारा ध्यान आर्य समाज के नियमों पर जाता है। क्योंकि इन्हीं के कारण ही आर्य समाजकी सत्ता है। जो इस को अन्योंसे पृथक करते हैं और अन्य अनेकों समूहों के होने पर भी इन्हीं उद्देश्यों की पूर्ति के लिए बड़े विश्वास के साथ आर्य समाज की स्थापना की गई। अतएव आर्य समाज की सदस्यता को स्वीकार करते समय प्रवेश पत्र में इनको स्वीकार करना अत्यावश्यक होता है। आर्य समाज के आर्य समाजत्व का सर्वाधिक आधार इसके नियम ही हैं। इन्हीं के कारण ही आर्य समाज का इतिहास गौरवपूर्ण और प्रेरणाप्रद रहा है।

किसी संस्था का परिचय उसके नियमों, सिद्धान्तों से ही होता है, कि वह संस्था कैसी है, कैसे लोग, किस उद्देश्य के लिए, उसमें सम्मिलित होते हैं ? इसका कार्य क्षेत्र क्या है और कितना व्यापक तथा क्या कुछ करना चाहती है ? क्योंकि नियमों और उस संस्था में अविनाभाव सम्बन्ध होता हैं। तभी तो नियम रूपी सूत्र समाज के सदस्य रूपी फूलों या मणियों को एकरूपता देता है। साधारण से दीखने वाले नियम भी समाज के मदस्यों को सूत्र में लाकर साइकल के बारीक से बारीक तारों की तरह विशेष शक्तियुक्त कर देते हैं। आर्य समाज के ये नियम प्रेरणा के स्रोत, शक्ति के पुंज और सर्वांगीण जीवन विकास के अमर पथ हैं।

आप यदि चाहें तो इस स्थल पर सारे नियम उद्धृत किए जा सकते हैं।

आर्य समाज के दस नियमो पर जब हम दृष्टि डालते हैं तो पहले तीन नियम संस्था के दार्शनिक तत्वों सिद्धान्तों तत्सम्बन्धी मान्यताओं को व्यक्त करते हैं। चार एवं पांच नियम व्यक्तिगत जीवन की दृष्टि से वैयक्तिक धर्म (पथ) अर्थात् धर्म के आचार (व्यवहार) पक्ष का निर्देश करते हैं और छः से दश तक के नियमों में उद्देश्य एवं सामाजिक कर्तव्यों का संकेत है। इस प्रकार इनसे मानव जीवन के हर पहलू और धर्म के सारे पक्षों (कर्मकाण्ड, विश्वास, दर्शन और आचार पक्ष) का परिचय प्राप्त होता है। प्रत्येक नियम का एक एक शब्द इतना प्रभाव पूर्ण तथा गम्भीर तत्वों से भरा हुआ है, जो अपनी विस्तृत व्याख्या चाहता है। नियम के एक एक शब्द पर जब ध्यान जाता है तो उनके अपूर्व तत्वज्ञान और प्रेरणाप्रद सन्देश को देख कर मन मोर की तरह नाच उठता है और बरबस मन में एक विचार उठता है कि महर्षि की यह अपूर्व देन है। इन में महर्षि के साहित्य का निचोड़ आ गया है। यदि केवल दस नियम ही महर्षि ने संसार को दिए होते तो यही महर्षि की ऐसी अनमोल देन होती। इस देन से संसार कभी भी महर्षि के के ऋण से उऋण नही हो सकना।

आर्य समाज के उद्देश्य एवं संस्थागत संगठन की दृष्टि से जहां इन नियमों का अत्यधिक महत्व है, वहां सर्वांगीण जीवन विकास की दृष्टि से आर्य समाज के नियम स्वर्णिम सूत्र है। इन में—आस्तिकभावना, ज्ञानलिप्सा, की भावना, परोपकार, ज्ञान महिमा, सामाजिक पन, और सामंजस्य जैसे जीवन विकास के स्वर्णिम सूत्रों का भी पूर्ण निर्देश है। इस प्रकार इन नियमों की व्याख्या प्रकाशनार्थ तैयार हैं। आर्य समाज शताब्दी महोत्सव पर क्या कोई प्रतिनिधि सभा, आर्य समाज इस को प्रकाशित कराने के लिए हाथ आगे बढ़ाएगी।

आर्य समाज के नियमों की व्याख्या ही वस्तुत आर्य समाज का एक सच्चा स्वरूप है। जो कि इस प्रथम शताब्दी महोत्सव का एक महत्वपूर्ण सन्देश हो सकता है।

आओ ! आर्य समाज के नियमों के एक एक शब्द पर विचार कर इनको जीवन संजोएं, यही महर्षि के ऋण से उऋण होने का सच्चा ढंग हो सकता है।

———————

वैदिक-सिद्धान्तों की नित्योपयोगिता

(लेखिका—डा. कुमारी सुशीला आर्या एम० ए० पी० एच० डी० जनता कालेज, चरखी दादरी)

'वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है' महर्षि दयानन्द जी महाराज ने यह निष्कर्ष केवल अन्ध श्रद्धा के वशीभूत होकर नहीं अपितु तथ्य ज्ञान के आधार पर निकाला था। कतिपय वेदानभिज्ञ महानुभाव सम्भवतः यह धारणा रखते हैं कि वेद केवल विशेषयुग में विशेष वर्ग के मानव-समुदाय के लिये भले ही उपयोगी रहा हो, किन्तु वर्तमान जीवन संघर्ष के युग में उसकी आत्म-ज्ञान-विषयक तथा आदर्शवादी उपदेश-सर्राण की कोई मान्यता नहीं। निःसन्देह ऐसी धारणाएं केवल भ्रममूलक हैं। वस्तुतः वेद नित्योपयोगी हैं। उनमें प्रतिपादित सिद्धांत आज भी उतने ही सत्य हैं जितने सृष्टि के आदि में थे। वेदोक्त ज्ञान त्रिकालाबाधित होने से उसके विषय में वर्तमान भूत भविष्यत् का प्रश्न सर्वथा निरर्थक है। प्रस्तुत लेख में हम कुछ वेद मन्त्रों के आधार पर अर्वाचीन काल में उन मन्त्रों में प्रयुक्त सिद्धान्तों की उपयोगिता का पर्यवेक्षण कर यह सिद्ध करने का प्रयत्न करेंगे कि वेद सार्वदेशिक सार्वकालिक तथा सार्वजनीन ज्ञान का आधार है।

वेद मानव की सर्वतोमुखी-शारीरिक मानसिक बौद्धिक एवं आत्मिक उन्नति का पक्षधर है। 'शस्त्ररक्षिते राष्ट्रे शास्त्रचिन्ता प्रवर्तते' इस कथनानुसार वेदादि ग्रन्थों का स्वाध्याय चिन्तन मनन तभी सम्भव है जब देश में सुरक्षा प्रदत्त निश्चिन्तता हो। सर्वविदित है कि केवल शस्त्र कभी देश की रक्षा नहीं करते निश्चय ही, बल सम्पन्न शरीर धारी मानव ही शस्त्रधारण कर देश रक्षण करने में समर्थ हैं। शरीर केवल व्याधि-मन्दिर नहीं है (यह तो बनाने से भले ही बन जाए) यह तो :—

अयं लोकः प्रियतमो देवानामपराजितः।
यस्मै त्वमिह मृत्यवे दिष्टः पुरुषः जज्ञिषे।
स च त्वानु ह्वयामसि मा पुरा जरसो मृथाः।
अथर्व०।५।३०।१७।

अपराजित तथा देवों—महात्माओं का प्रियतम है। यद्यपि शरीर का अवश्यंभावी अन्त मृत्यु है परन्तु प्रेरणा यही दी गई है कि अनुकूल आचरण ऐसा मानव करे कि वृद्धावस्था से पूर्व मृत्यु का ग्रास न हो। जीवन की श्रेयस्कर उपलब्धियो के प्रति चेतावनी देने वाली यह वाणी क्या वर्तमान युग बोध की दिशा प्रदान नहीं करती ? अवश्य करती है तथा भविष्य में भी करती रहेगी।

वर्तमान समय में देश में कृत्रिम अभाव तथा मिथ्या अफवाहों का राज्य है। ये समस्याएं सदा से सम्भावित हैं। वेद ने मानव जाति के उच्चतम तथा निम्नतम दोनों स्तरों की कल्पना कर उभय स्थितियों के लिए समुचित मार्ग दर्शन किया है। वस्तुतः अफवाहें फैलाने वाले मानव

समुदाय को देशद्रोही ही कहा जाना चाहिए क्योकि वे गुप्त रूप से देश की जनता के मनोबल का ह्रास करते हैं। ऐसे धूर्त्तों के लिए कठोर दण्ड का विधान वेद में किया गया है—

इदमिन्द्र श्रृणुहि सोमप यत्वा हृदा शोचता जोहवीमि।
वृश्चामि तं कुलिशेनेव वृक्षं योऽस्माकं मन इदं हिनस्ति ॥
अथर्व।६।१२।२३।

हे राजन्! जो हमारे मन को मारता है उस को उसी प्रकार नष्ट कर जैसे कुल्हाड़े से वृक्ष को काटा जाता है। इस सन्दर्भ में पाठक सम्भवतः कुछ कठोर शब्दावली का प्रयोग अनुभव करें किन्तु गाम्भीर्यपूर्वक विचारने से प्रतीत होता है कि धूर्त्तो से बढ़ कर देश समाज का शत्रु कोई नही जो भीतर ही भीतर विभीषिकाओं का प्रसार कर जनता को हतोत्साह करते रहते हैं। राष्ट्र रक्षा के उद्देश्य से ऐसे लोगों को कठोर दण्ड देना ही समीचीन है क्योंकि दण्ड की कठोरता अपराध प्रवृत्ति को रोकने वाली है—यह निर्विवाद है। ऐसी विचारधारा की उपयोगिता आधुनिक काल में भी उसी प्रकार है।

यजुर्वेद के ८०वे अध्याय का सर्वप्रथम मन्त्र है! जिसमे एक वाक्याश है—मा गृधः कस्यस्विद्धनम् अर्थात् किसी के धन का लालच मत करो। वर्तमान परिवेश में यदि हम विचार करें तो संसार के प्रायः देशों—विशेषतः भारत की सभी समस्याएं परधन ग्रहण की प्रवृत्ति से ही उत्पन्न हुई है। परिग्रह की इस समस्या का समाधान इस लघु वेदवाक्य में कितना स्पष्ट है। इसके लिये कोई रियायत नही। स्पष्टतः निषेधात्मक निर्देश दिया गया हैं—पराए धन का लालच न करना। इसी में चोरबाजारी, जमाखोरी, रिश्वत सभी दोष परिगणित किए जा सकते हैं। यदि वेद केवल आदर्शवादी ज्ञान से संयुक्त होता तो यह कल्पना भी निरर्थक थी कि कभी मानव वर्ग परधन की गर्द्धा करेगा तथा न करने पर रोकने का विधान भी व्यर्थ हो जाता। अतएव स्वतः सिद्ध है कि वेद यथार्थवाद से ओतप्रोत है अतः इसमें वर्णित उपदेशों की नित्योपयोगिता है अथवा यों कहिए मानव जाति के अधोमुखी बातों में इस की उपादेयता और भी बढ़ी चढ़ी है।

आज विश्व भर में अन्न संकट का बोलबाला है। समझा जाता है कि अधिक अन्न उपजाने का आन्दोलन इसी युग की देन है किन्तु वेद ऐसी सम्भावनाओं से अछूता नही है! उसने सृष्टि के आदि में ही इस विषय में उद्घोषित कर दिया था—

द्याम् इन्द्र हरिधायसं पृथिवी हरिवर्पसम्।
अधारयद्धरितो भूरि भोजन ययोरन्तर्हरिश्चरत्। ऋ१०।३।४४।३।

अर्थ—अनन्त ऐश्वर्यशाली भगवान् ने द्यौ को सुवर्ण धाराओं वाली तथा पृथ्वी को हरे और सुनहरे रूपवाली बनाया है उसने इन दोनों के बीच बहुत भोजन धर रखा है—जिन द्यावापृथिवी के मध्य सूर्य विचरता है। सुवर्ण रेखाओं से सम्पन्न आकाश तथा सुनहरी साड़ी पहने वसुधा के बीच भगवान् ने बहुत भोजन रख छोड़ा है। चुनौती है आज के अहंकारी तथाकथित विज्ञानवेत्ता का जो अपने को सृष्टिकर्त्ता से बढ़ कर शक्तिशाली समझने का दावा करता है। भोजन का भण्डार तो भगवान् का ही भरा हुआ है। मांगने वाला लेने वाला केवल मानव है।

संसार में लोकतन्त्र की परिपाटी आधुनिक सभ्यता की देन मानी जाती है। डार्विन के विकासवादी सिद्धांत के अनुयायी समझते हैं कि पूर्वकाल में मनुष्य पशुवत् जीवन यापन करता था। उसने शनैः शनैः विकास कर यहां तक प्रगति की कि स्वयं निर्वाचित राजा के अधीन उसकी गतिविधि जारी है। उधर सृष्टि की प्राचीनतम पुस्तक वेद राजा के चुनाव की सदा से घोषणा करता आ रहा है—

त्वां विशो वृणतां राज्याय त्वामिमा प्रदिशः पंच देवीः। वर्ष्मन् राष्ट्रस्य ककुदि श्रयस्व ततो न उग्रो विभजावसूनि ॥ अथर्व।३।४।२।

हे राज्याभिलाषिन्! प्रजाएं राज्य कार्य के लिए तुझे चुने तथा पांचों दिशाएं तुझे स्वीकार करें। तू राज्य के श्रेष्ठ स्थान पर बैठ तथा तेजस्वी रूप धारण कर हमारे लिए धनों का विभाग कर।

इस सन्दर्भ में यह भी ध्यान देने योग्य है कि राजा न केवल चुना हुआ है अपितु सम्पूर्ण धनादि का स्वामित्व उसी का है। वही प्रजाओं को बांट कर धन देता है। इसे कहते हैं राष्ट्रीय सम्पत्ति का विधान, जिसका समर्थन वेद खुले शब्दों में कर रहा है।

इन कतिपय उदाहरणों से स्पष्ट है कि वेद में उल्लिखित सिद्धांत कितने प्रगतिशील, मानवतावादी तथा सर्वतोमुखी हैं। उनमें ऐसी कोई वस्तु छूटने नहीं पाई जो वर्तमान में नई बनी हो। सभी व्यवस्थाएं उस में यथा प्रसंग वर्णित हैं। हां, आवश्यकता है इन छिपे रत्नों को खोज लाने की। इन देदीप्यमान सिद्धान्त प्रदीपों को अन्धकार ग्रस्त विश्व के गृह आंगन में प्रदीप्त करने की। यह कार्य तो वैदिक सिद्धान्तों की अनुयायी आर्य समाज जैसी संस्थाएं ही कर सकती हैं। वह भी तब जब हम निष्ठा एवं आस्था का संबल लेकर 'संगच्छध्वं' के मूलमन्त्र के अनुसार आचरण करें, यही आर्य समाज जन्म शताब्दी पर हमारा चरम लक्ष्य होना चाहिए अन्यथा अनध्याय के आवरण से ढके इन मूल्यवान वेदमन्त्रों की स्थिति को कौन स्वीकार करेगा ?

——

शताब्दी समारोह

१. तहसील झज्जर में धूमधाम से मनाया जा रहा है। यज्ञ, उपदेश, जलूस, भजन एवं युवक सम्मेलन धूमधाम से मनाये जायेंगे।

२. विनय नगर दिल्ली में भी ६ से १२ अप्रैल को धूमधाम से मनाया जावेगा। इसमें दक्षिण दिल्ली की सभी समाजें इकट्ठी होंगी। कार्यक्रम सार्वदेशिक की आज्ञानुसार सभी होंगे। २ बजे से जलूस आर्य समाज मंदिर ब्लाक सरोजिनी नगर से निकलेगा और भारत सेवक समाज पार्क में सभा होगी।

——

मानव प्रगति के रुके द्वार को ऋषि दयानन्द ने खोला ?

(लेखक :—डा. नरेन्द्र देव आर्य-G. A. M. S. भागपुर)

ऋषियों का विश्वास था-कि, ज्ञान नित्य होता है। वह नया या पुराना नहीं होता है। उसे पहचानने का काम समाज के लिए नया होता है। चूंकि उस ज्ञान से समाज उस समय से पूर्व अपरिचित होता है। इसलिए उस ज्ञान को बताने वाले को, ज्ञान को पहचानने वाला न मान कर, उस ज्ञान का निर्माता मान लेता है। उसे गुरु का पद प्राप्त होता है। और वह आदि गुरु माना जाता है।

प्रत्येक देश का भौगोलिक परिवेश भिन्न होता है। ज्ञान को पहचानने वाले एक ही देश में पैदा नहीं होते हैं न एक ही काल में पैदा होते हैं। इसलिये सभी स्थानों पर ज्ञान का स्तर भिन्न-२ होता है। मुद्रण, यातायात और संचार साधनों के अभाव में यह-प्रत्येक देश के कालों (समयों या युगों) का भेद सूचित करता रहा है।

आदि गुरु भी किसी देश या काल में उत्पन्न होता है। अतः वह नित्य और शुद्ध ज्ञान के साथ देश और काल के प्रभाव से बने संस्कारों को भो मिला देता है। इसलिये ज्ञान का भेद प्रतीत होने लगता है।

इसलिये नित्य और शुद्ध ज्ञान को सुरक्षित रखने की रीति ऋषियों ने खोजी थी। जिसे वैदिक परम्परा कहते हैं। उसके अनुसार नित्य और शुद्ध ज्ञान को वेद कहते थे। पहचानने वाले ऋषि का नाम उस ज्ञान या मन्त्र के साथ स्मरण किया जाता था। उन्हें आदि गुरु कहलाने का अवसर नहीं मिलता था।

गुरु मानने पर स्थिति बदल जाती थी। ज्ञान भेद के साथ भिन्न-२ देशों और कालों के साथ नया अहंकार जुड़ जाता था। गुरु के मत को मानने वाले चेलों के अलग-२ दल बन जाते थे। जिन्हें हम सम्प्रदाय कहते हैं। जैसे आज बौद्ध, जैन सिक्ख, ईसाई और मुसलमान हैं।

भारत में इस का आरम्भ जैनों से हुआ। उन्होंने वेद के स्थान पर गुरुओं को महत्व दिया, इससे पृथक् सम्प्रदाय पैदा हुआ। बुद्ध के जन्म के बाद यह हवा फैलने लग गई।

बुद्ध गुरु थे। उनके मत या विचार को वेद का स्थान मिला है। उसको मानने वाले चेले बौद्ध कहाने लगे। इस प्रकार सत्य या ज्ञान के भेद को मानने वाले पृथक्-२ लोगों के दल बनने लग गए।

इतिहास साक्षी है-कि सम्प्रदायों के संघर्ष से मनुष्यों की प्रगति को कितना धक्का लगा हैं। वह आज रुक गई है। चूंकि साप्रदायिक ज्ञान गुरु पर निर्भर होता है। वह देश और काल के अनुसार ज्ञान को व्यवहार का रूप दे देता है। वह व्यवहार गुरु के मरने के बाद देशों और कालों के अनुसार बदल नहीं सकता है। उस में कमी, वेशी या परिवर्तन नहीं हो सकता है।

ऋषि परम्परा में वेद स्थायी वस्तु थी। परन्तु उसके अनुसार बनने वाली स्मृतियां बदलती रहती थीं। स्मृति वेद के अनुसार व्यवहार बताती है। अतः व्यवहार व्यक्तियों, स्थानों और कालों के अनुसार भिन्न-२ होगा ही। जैसे सत्याचरण करो। तोलने वाले और नापने वाले के अनुसार नाप और तोल सम्बन्धित होकर बदल जाता है। वैसे जल और स्थल में आचरण भिन्न हो जाता है। वकील, डाक्टर, बढ़ई, ड्राईवर के अनुसार भिन्न-२ हो जाता है। मुर्दा शरीर को नष्ट कर देना चाहिए। इस का व्यवहार देश और काल के अनुसार जलाने, गाड़ने और खिलाने की क्रियाओं के अनुसार भिन्न-भिन्न हो गया।

ऋषि दयानन्द ने साम्प्रदायिकता मिटा कर पुनः वेदों की ओर लौटने का मार्ग चुना। इसके लिये आर्य समाज की स्थापना की थी। इस के द्वारा रुको मानवता की प्रगति का मार्ग के द्वार खोला है। इसी लक्ष्य से आर्य समाज को कार्य-क्रम बनाना चाहिये।

शताब्दि समारोह

आर्य समाज पठानकोट में घर २ सत्संग किया जा रहा हैऔर सत्यार्थ प्रकाश बांटा जा रहा है। जनता में इससे बहुत जोश पैदा हो रहा है। यह कार्य २ मार्च से ही हो रहा हैं। ६ अप्रैल से शताब्दि समारोह होगा। जिसे स्वामी सर्वानन्द जी आरम्भ करेंगे।

—प्रो० स्वतन्त्र कुमार

★ आर्य समाज अजमेर की भी स्थापना ऋषि दयानन्द जी ने १८८१ में की थी आर्य समाज स्थापना शताब्दि की धूमधाम से मनाने की तैयारी कर रहा है। विविध कार्यक्रमों को सफल करने की तैयारी में आर्य सदस्य लग गये हैं। इसमें सभी संस्थाओं का अद्भुत उत्साह संगठित रूप से कार्य कर रहा है। १० हजार रुपये इस समारोह में खर्च होंगे।

—डा० सूर्यदेव

महर्षि का सपन साकार हो !

(लेखक—कवि कस्तूरचन्द "घनसार' प्रधान आर्य समाज पीपाड़ शहर (राज०)

आ गया अपना अमृतमय अवसर इनको गमाना मिली हुई रत्नमणि, को खोना [है। यदि ऐसा हो गया तो पश्चाताप होगा । अन्धकार में पड़े हुए देश को, प्रकाश में लाने के लिये, उस ब्रह्मचारी, योगी ने गम्भीर विचार के साथ, वेद-मन्त्रों के द्वारा, एक आर्य वृक्ष लगाया। उस वक्त ऋषि के हृदय में कैसी आशा थी. और उच्च विचार किया होगा कि " मैं क्या करने जा रहा हूं, ईश्वर मेरी भव्य कल्पनाओं की पूर्ति करेगा।"

मानो उस वक्त कल्पनाओं की कोई सीमा नहीं रही होगी, विश्व का भाग्योदय करने की एक वैदिक-नीव रखी थी. गिरे हुए देश को ऊपर लाने की योजना बनाई थी। महान दिव्य दृष्टि द्वारा तीनों कालों को देखा होगा। हृदय में कितनी देश के प्रति तड़फ रही होगी।

वह था सार्वभौमिक कल्याण दिवस जिसे संबत १६३२ प्रतिपदा जिसको सौ वर्ष पूरे होने जा रहे हैं, उस दिन बंबई में महर्षि दयानन्द ने आर्य समाज स्थापित किया और यह वेद मन्त्र बोला होगा। "इन्द्रं वर्धन्त्वऽप्तुरः कृण्वन्तो विश्वमार्यम् अपघ्नन्तोऽराव्णः" ऐसी कल्पतरु कामना लेकर उस आर्य वृक्ष का बीज बोया।

फिर से उस वेद-महा सिन्धु से पवित्र ऋचाएं रूपी, विशद वारी को ले कर लेखराम, स्वामी श्रद्धानन्द, महात्मा नारायण स्वामी, गुरुदत्त, महात्मा हंसराज, स्वामी दर्शनानन्द, बड़े बड़े महापुरुषों ने उस वृक्ष, को सींचा। तब से धीरे-धीरे बढ़ता रहा जिसमें फल-फूल लगे और उस वृक्ष की छाया गहन होती चली।

जिस द्वारा भेद-भ्रांति अभद्र भावनाएं पाखण्ड पोल, छुआछूत, धूर्तताएं सारी बीमारियों का खातमा हुआ। अविद्या अन्धकार में भटकतों को सन्मार्ग मिला और "सत्यार्थ प्रकाश" की ओर बढ़ने लगा। वेद प्रभाकर की किरणें सारी विश्व पर पड़ती चली। सभी अपनी-अपनी दिशाओं की ओर बढ़ने लगे। वेदों की तरफ टक टकी लगा देखने लगे, अपनी भूलों पर पश्चाताप करने लगे। जन-जन के अन्दर अभद्र भावना थी, भद्र भावना बनी, । पाखण्डियों का पतन हुआ। आर्य भावों का अविभाव हुआ मानव भाव हुआ, महिलाओं का मान बढ़ता रहा, सबके कार्य करने का का रास्ता प्रशस्त हुआ और कहने लगा— "मित्रस्य यायां पथा' हम मित्र के मार्ग पर चलें और वैदिक धर्म के नारे गूंजने लगे। अपने गौरव की ओर कदम बढ़ने लगा।

सर्वोत्तम कार्यक्रम सम्पादन किये गये, जिस से देश में जागृत-ज्योति का प्रकाश हुआ

निर्भीक भावनाएं पैदा हो गई पोपों का रीति रिवाज, बन्द हुआ। ये सारे कार्य, तब से हुये, जब से महर्षि ने वैदिक धर्म की स्थापना की।

उस वेद, वृक्ष की छाया में बैठ कर वेदों की ऋचाएं बोलने लगे, गुरुमन्त्र गायन्त्री की महिलाओं के मधुर-कण्ठ से शुद्धोचारण होने लगा, यज्ञोपवीत धारण किया गया और गुरुकुलों में विद्यार्थी वेद मन्त्र रटने लगे, घर-घर में यज्ञ होने लगा, रोग नाशक यज्ञ की सुगन्धित सामग्री से देव प्रसन्न होने लगे वैदिक धर्म का जय घोष होने लगा।

अब ऐसा देख कर आर्य पुरुषों को कदम आगे बढ़ाना होगा, समक्ष आई शताब्दी महान पर्व, को मनाने में तन, मन-धन, से जुटना होगा। कर्णधार वेद-वेत्ताओं को रात-दिन एक कर जन जागृत, करने में लगाना होगा।

शताब्दी के सात दिन पहले घर-घर के अन्दर यज्ञ द्वारा, एवम् वैदिक धर्म के जयघोषों से गगन, को गुंजाना होगा। वैदिक प्रचारका देश के आकाश में बादल उमड़ाना होगा। ब्रह्माण्ड यज्ञ की सुगन्धी द्वारा महक उठे ऐसा यज्ञ, करना होगा। राष्ट्रीय-गीतों से राष्ट्र को चलाने वालों को आकर्षित करना होगा. भेद-भाव, छूताछूत को मूल से काटना होगा। घर-घर में दीपमाला, सजाकर, आर्य शताब्दी महान पवित्र पर्व का त्यौहार मनाना होगा। प्रातःकाल आर्य-नर-नारी, सभी के घरों में नमस्ते करने को जाना होगा और दौड़-दौड़ कर गुरुजनों का एवं आर्योपदेशकों का चरण छू कर नमस्ते बोलना होगा।

सब दिन महर्षि का यश गान करते हुए वेद मन्दिरों में ध्वजारोहण कर ओ३म ध्वज गीतों से नगर गुंजाना होगा। इसी प्रकार प्रत्येक आर्य पुरुषों का कार्य अनिवार्य रूप से करना होगा। तभी महर्षि दयानन्द का सपन साकार कर सकेंगे।

इस भावना को लेकर हम आज ही उक्त कार्य को करने में तन-मन-धन से जुट जाने का प्रयत्न कर कार्य करने मे उतरेंगे तब हम अपना सौभाग्य समझेंगे।

——

गीत

ओं मेधां मे वरुणो ददातु
यजु :-
ऐसी सुमति हो भगवान
पावन मेधा दो मतिमान्।
नीर क्षीर विवेक करे जो
सत्य झूठ पहिचान।
मार्ग कुमार्ग बताने वाली
धर्माऽधर्म जिताने वाली
जिसके बल पर सदा करें हम
निज जीवन कल्याण।

जिम मेधा के लिये पूर्व जन
देव हमारे तथा पितृगण।
श्रद्धा में भर कर करते थे
प्रभुवर तेरा ध्यान हम।
तुम्ही वरुण हो पाप निवारक
तुम्ही इन्द्र हो शत्रु प्रवारक।
हे अग्ने तेरे प्रकाश से
मिटे तिमिर अज्ञान।
ऐसी सुमति दो भगवान।

(ले० :—विनीत सुव्रतानंद सरस्वती, यमुनानगर)

अपना विचार करें !

(कवि कस्तूर चन्द "घनसार" प्रधान—आर्य समाज पीपाड़ शहर (राज०)

(१)

पक्ष-पात के पथ पर चलते, वह है आर्य कभी नहीं !
अश्रद्धा से जो करता है नर, है वह कार्य कभी नहीं !!
खाने और दिखाने को है, रखते हाथी दन्त बड़े !
ज्ञान विहीना मुंड मुडा कर, रङ्गते कपड़े सन्त बड़े !!

(२)

देश भाव बिन फिरे मान हित, खद्दर धारी हो नेता !
आर्य-भाव बिन कर्म वेद बिन, फिरे भटकते हो वेता !!
श्रद्धा बिना यज्ञ जो करते, कभी न जिसका फल होता !
बूंद-बूंद जो देता वारिद, कभी न गहरा जल होता !!

(३)

मन में कुटिल कल्पना करते, अन्तिम भाव प्रकट आते !
उच्च मानता रखने वाले, द्वेष भावना दरशाते !!
कायरता जिसके दिल में हो, होता देश सुधार नहीं !
नहीं जगाते सोते है जो, जिसकी सबल पुकार नहीं !!

(४)

त्याग किये बिन कभी न होता, देश सुधार उद्धार नहीं !
नैया सागर तीर पड़ी है, बिन डाड चलाये पार नहीं !!
कहने से कुछ हो नहीं सकता, करके काम दिखावे जो !
शूरा वही कहाता है नर, रण में हाथ बतावे जो !!

(५)

आर्य नाम लगाने वाला, पहले अपना ध्यान करें !
कहां ? तक हूं मैं आर्य नीतिमय, निज दशा का ज्ञान करें !!
आर्य संचा में जीवन अपना, भरता श्रद्धा साथ चलें !
"घनसार" सुखी हों आर्य नरवर, आर्य कर्म के साथ चलें !!

—०—

भूले-बिखरे और उत्पीड़ित कुछ आर्य हुतात्माओं का पुण्य स्मरण

(ले० पं० दीनानाथ सिद्धांतालकार, आर्योपदेशक एवं पत्रकार)

आप सभी प्रांतों में आर्य समाज का कार्य कर चुके हैं। बिहार आपकी सेवा का विशेष ऋणी है।

—सम्पादक

आर्य समाज ने अपने जीवन की इस एक शती में जितने बलिदान किये हैं, उतने विश्व की बहुत कम सामाजिक और धार्मिक संस्थाओ ने दिये हैं। इनमें आर्य समाज के प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द द्वारा स्वयं अपने जीवन में प्रदर्शित मार्ग का अनुकरण करते हुए कुछ बलिदान ऐसे दिव्य है कि वह न केवल भारत किन्तु विश्व के इतिहास में अतिशय वरेण्य है। इस लेख में हम उन सब अनूठे शहीदों के प्रति अपनी विनम्र श्रद्धांजलि प्रकट करते हुए उन आज की पीढ़ी के लिये भूले बिसरे श्रेष्ठ महानुभावों का उल्लेख करते हैं। जिन्होंने इस दिव्य गगन चुम्बी आर्य समाज रूपी भवन को ऊंचा करने की दिशा में नींव के पत्थर का काम किया है। उच्च शिखर पर लगी ईंट से क्या इस नींव में अज्ञात रूप से पड़ी ईंट का महत्व किसी प्रकार कम कहा जा सकता है। निश्चय ही कभी नहीं।

अछूतोद्धार के अपराध में जाति बहिष्कार व माता का बलिदान

आर्य समाज के प्रारम्भिक दिनों की घटना है। पंजाब में जब अछूतोद्धार का कार्य प्रारम्भ हुआ, तब सवर्ण हिन्दुओं की ओर से उसका विरोध कई प्रकार से हुआ। रोपड़ के पं० सोमनाथ अपने अचल में इस सुधार के प्रमुख कार्यकर्त्ता थे। उनका और उनके परिवार का बहिष्कार कर दिया गया। शहर के सब कुओं से उनका पानी बन्द कर दिया। उन्होंने सर्वथा अविचलित रहते हुए जोहड़ों और नहर से पानी लेकर पीना प्रारम्भ कर दिया। इस गदले पानी के प्रयोग से उनकी वृद्धा माता उदर रोग से अत्यन्त पीड़ित हो गयी। डाक्टरों का इलाज किया गया। पर उन्हों साथ में यह भी कहाकि जब तक कुएं का निर्मल जल नहीं पिलाया जायेगा रोगिणी को आराम नहीं आएगा। पर कुएं का पानी तो बिरादरी ने सर्वथा बन्द कर रखा था। वह तो तभी मिल सकता था जब पं. सोमनाथ पिछले अछूतोद्धार के अपराध के लिए क्षमा और भविष्य में यह काम न करने की की प्रतीज्ञा करें। माता की निरन्तर बिगड़ती हुई हालत देख पं० सोमनाथ चिन्तित और उदास रहने लगे। माता पुत्र की इस दशा को

भांप गई। उसने कारण पूछा। पुत्र ने सब बात सच सच कह दी।

रोगशय्या से उठने का भरसक प्रयास करने पर न उठ बैठ सकते हुए भी उस वीर माता ने बड़े आवेश के साथ कहा—"पुत्र ऐसा कभी नहीं हो सकता। मुझे तो एक दिन मरना ही है। अभी भी तैयार हूं। पर तुम धर्म पथ का कभी त्याग मेरे लिये न करना। इस नश्वर जीवन से धर्म अधिक प्यारा है।" इसका परिणाम हुआ कि वह वीर माता इस धर्म पथ पर दृढ़ रहती शीघ्र ही मृत्यु को प्राप्त हो गई। इस देवी के बलिदान ने चमत्कार कर दिया। बिरादरी के पंचों ने अपनी भूल स्वीकार की और पं० सोमनाथ और उनके परिवार के लिये स्वयं ही कुओं का पानी खोल दिया।

स्टेशन मास्टर पं० तुलसी राम की हत्या

सन् १९०३ की घटना फरीदकोट रेलवे स्टेशन पर पं० तुलसी राम दृढ़ आर्य समाजी स्टेशन मास्टर थे। जब भी खाली समय मिलता आर्य समाज का खूब प्रचार करते। शहर के जैनियों से इनका विशेष रूप से विवाद चलता रहता। जैनी इन की युक्तियों से बहुत परेशान रहते थे। पं० तुलसीराम ने बाहर से आर्य उपदेशक बुला वैदिक सिद्धांतों का प्रचार और जैनियों का खूब खण्डन कराया। जैनी इससे बहुत चिढ़ गये। एक दिन पंडित जी कहीं अकेले जा रहे थे। गोपी राम नामक जैनी ने मौका देख इनकी आंखों में पिसी हुई लाल मिर्चें झोंक दी। इस प्रकार देखने में असमर्थ हो जाने पर इस नृशंस ने इनके पेट में छुरी घोंप दी। पता चला लगने पर अस्पताल ले जाया गया इलाज किया गया पर बच न सके। इस प्रकार धर्म सेवा करते हुए पंडित जी ने अपनी जीवन की आहुति दे दी।

म० रामचन्द्र जी की लाठियों की मार से वीर गति

काश्मीर—जम्मू रियासत में म० रामचन्द्र महाजन अछूतोद्धार के उत्साही कार्यकर्ता थे। जम्मू अखनूर तहसील में राज्य की ओर से खजांची थे। खाली समय में अछूतोद्धार का काम लगन से करते थे। अखनूर तहसील में बुटहरा नामक ग्राम है। यहां तथाकथित अछूत मेघ जाति ने आपने वैदिक धर्म का बड़ी लगन से प्रचार किया। इस क्षेत्र के जाति अभिमानी राजपूत इनसे चिढ़ गये, रामचन्द्र जी ने यहां दलित जाति के बालकों के लिए पाठशाला खोलनी चाही। राजपूतों ने इसका विरोध किया। स्थिति यहां तक पहुंच गयी कि १४ जनवरी, १९२३ को राजपूतों ने इक्ट्ठे हो निहत्थे शान्तिमय महाशय जी पर लाठियों की वर्षा की। फलस्वरूप इनके सारे अंग लहूलुहान और टूट गये। मूर्छित हो जमीन पर गिर पड़े। तत्काल अस्पताल पहुंचाया गया। इलाज किया गया पर जख्म इतने गहरे थे कि बच न सके। २० जनवरी, १९३३ को म० रामचन्द्र जी वीर गति को प्राप्त हो गये। दृढ़ आर्य के इस बलिदान से राजपूतों के कठोर हृदय वदल गये जो विरोधी थे, उन्होंने ही पाठशाला के लिए भूमि और धन दिया। म० रामचन्द्र की इस शहादत की स्मृति में अब प्रतिवर्ष आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की ओर से यहां शहीदी मेला लगता है।

दो आर्य समाजियों का बिरादरी से बहिष्कार

कनखल (हरिद्वार) में दो आर्य समाजी रहते थे, एक मा० मूलचन्द जो स्थानीय स्कूल में अध्यापक थे और दूसरे म० उमराव सिंह वहां पनसारी की दुकान करते थे। दोनों कट्टर और दृढ़ आर्य थे। वहां के पौराणिक इनके

कट्टर विरोध ही नहीं करते थे पर बिरादरी बहिष्कार के रूप में इन दोनों को कई प्रकार की यातनाएं भी देते थे। अध्यापक मूलचन्द जी को स्कूल से निकलवा देने अथवा तवदील कराने के भरसक प्रयत्न किए गए। पर मास्टर जी का काम सर्वथा सन्तोषजनक था, इसलिए पौराणिकों की दाल न गल सकी। पर इन की कुचेष्टाओं से मास्टर जी के १०) रुपए मासिक वेतन पर १० रुपए वार्षिक आय कर जरूर लग गया!

मा० उमराव सिंह को भी कड़ी यातनायें सहनी पड़ी बिरादरी से बहिष्कार, कुएं से पानी लेने पर रोक, सामाजिक असहयोग, दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति में पग-पग पर बाधा इत्यादि अनेक विपत्तियां इन्हें सहनी पड़ी पर यह दोनों आर्य वीर अपने धर्म मार्ग पर दृढ़ रहे। अन्ततः इन दोनों को पवित्र और शुद्ध जीवन का प्रभाव कनखल की समझदार हिन्दू जनता पर पड़ा और लम्बे संघर्ष के बाद इन दोनों के प्रति सद् व्यवहार प्रारम्भ हुआ।

वैदिक रीति से अन्त्येष्टि कार्य का बहिष्कार

गुजरांवाला के लाला गोबिन्द सहाय कपूरथला रहते थे। वहां उनकी माता का देहान्त हो गया और उन्होंने दृढ़ आर्य होने के नाते वैदिक रीति से अन्त्येष्ठि संस्कार करने का निश्चय किया। नगर की बिरादरी की ओर ने कड़ा विरोध हुआ पर गोविन्द सहाय अपने निश्चय पर अटल रहे। जालन्धर से महात्मा मुंशीराम तथा अन्य कुछ सभासद पहुंचे। हिन्दुओं ने अरथी बनाने और दाहकर्म का अन्य सामान देने से इन्कार कर दिया। अन्ततः मुसलमानों की दुकानों से सारा सामान खरीदा गया और यथा विधि संस्कार किया गया। लाला गोविन्दसहाय की इस दढ़ता का नगर निवासियों पर प्रभाव पड़ा और उनमें कई आर्य समाज के सभासद बन गए।

सरकारी नौकरियों में आर्यसमाजियों का उत्पीड़न

आर्यसमाजियों को जहां इस प्रकार अपने ही सम्बन्धियों बिरादरी के लोगों और नगर निवासियों की ओर से घोर अत्याचार सहने पड़ते थे वहां आर्य समाज विदेशी गोरे शासकों की आंखों में भी कांटे की तरह चुभता था। जो आर्यसमाजी सरकारी नौकर थे, उन पर कड़ी नजर रखी जाती थी, उनकी फाइलों पर यह लिखा जाता कि यह काम तो अच्छा करता है पर आर्यसमाजी है। इस पर नजर रखी जाए। इनकी तरक्की रोक दी जाती, बार-बार तबदील कर उन्हे तंग किया जाता। यह भी कि सरकारी नौकरी और आर्यसमाज दोनों में से एक का चुनाव करो, दोनों काम इकट्टे नहीं चल सकते। इन परिस्थितियों में भी उस युग के आर्य पुरुषों ने प्रशंसनीय ड्ढ़ता और धर्म तत्परता दिखाई। कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं :—

श्री लक्ष्मण रावकी दृढ़ता

इन्दौर के श्री लक्ष्मणराव पुलिस विभाग के कार्यालय में अच्छे ओहदे पर नौकर थे और आर्य समाज के प्रधान भी थे। उन्होंने आर्य समाज के नगर कीर्तन के लिए लाइसैंस का प्रार्थना पत्र दिया। अंग्रेज अफसर के पास मामला पेश हुआ। उन्हें बुला कर धमकी दी गयी कि सरकारी नौकरी करते हुए आर्य समाज का काम नहीं कर सकते। दोनों में से किसी एक को चुन लो। श्री लक्ष्मण राव ने दृढ़ता से कहा 'मैं कुछ रुपयों के लिए अपना धर्म नहीं छोड़ सकता।' गोरा अफसर यह उत्तर सुन कर हैरान हो गया। उसने अब अपना रुख बदला और हमदर्दी के साथ फुसलाना चाहा। पर राव

महोदय दृढ़ रहे। सरकारी नौकरी को लात मार आर्य समाज की सेवा में अडिग रहे।

जाट रैजिमेंट का जनेऊ उतारने से इन्कार

एक रेजीमेंट के सिपाही आर्य समाजी थे। फौजी अफसर ने उन्हें यज्ञोपवीत उतारने को आज्ञा दी। यह रेजिमेंट जाट सिपाहियों की थी उन्होने इस आज्ञा को मानने से इन्कार कर दिया। जाट महासभा द्वारा इस आज्ञा को रद्द कर देने का आवेदन पत्र भेजा गया। इसे भी फौजी अपसरों ने बगावत समझा। रेजिमेंट के अधिकांश सिपाहियों ने यज्ञोपवीत उतारना, पाप समझा और आदेश के विरोध में नौकरी छोड़ दी।

पं० भगवानदीन द्वारा सरकारी नौकरी का त्याग

उत्तर प्रदेश के प्रमुख आर्य नेता पं० भगवान दीन जी सरकारी नौकर थे और दृढ़ आर्य समाजी थे। उन पर दबाव डाला गया कि वे आर्य समाज छोड़ दे। पर वे कर्तव्य पथ पर अडिग रहे। उन्हें अन्यन्त्र आवश्यक कार्य के हेतु कुछ दिन की छुट्टी लेनी थी। पर वह जानबूझ कर नहीं दी गयी। पंडित जी ने तंग आकर सरकारी नौकरी से त्याग पत्र दे दिया। पंडित जी ने अपने जीवन काल में समाज की प्रशंसनीय सेवा की और कई वर्ष तक उत्तर प्रदेश आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान रहे।

पटियाले में सिख शासकों द्वारा दी आर्य पुरुषों को जेल

आर्य समाज के इतिहास में पटियाला रिसासत के आर्य समाजियों पर ब्रिटिश सरकार के इशारे पर चलाया गया, राजद्रोह का मुकद्दमा बड़ा प्रसिद्ध है। इसमें तो रियासत को मुंह की खानी पड़ी थी।

पर सिख रियासत होने के हेतु आर्य समाजियों पर वहां जो अत्याचार किये गये उस की ठीक ठीक जानकारी आज के आर्य समाजियों को कम है। इसी प्रसंग में दो आर्य सज्जनों पर सिख अधिकारियों की ओर से किये गये नृशंस व्यवहार और उत्पीडन का हम यहां वर्णन करते हैं।

रियासत के कुछ सिख आर्यसमाज और महर्षि दयानन्द पर ट्रैक्ट और अश्लील पुस्तकें लिख कीचड़ उछालते रहते थे। भिदौड़ आर्य समाज के प्रधान म० रौनक राय ने सिखों की इन पुस्तकों के उत्तर में खालसा ग्रन्थ की हकीकत एक पुस्तक लिखी। कई मास तक बिकती रही और अच्छा प्रचार हुआ। एक अध्याय नियोग पर था। जिसमें सिद्ध किया गया था कि सिख गुरू इस आपद धर्म के विरोधी न थे! इस पर एक सिख ने आन्दोलन किया और म० रौनक राय को सिख धर्म के अपमान के बहाने २३ जून कोगिरफ्तार कर हवालात में डाल दिया गया। भिदौड़ से चार कोस दूर एक ग्राम के आर्यसमाजी म० बिशम्भर दास को भी पकड़ कर हवालात में डाल दिया गया। अभियुक्तों को यह भी नहीं बताया गया कि उनका अपराध क्या है। दोनों की दुकान और मकानों की तलाशी ली गई। जमानत की अर्जी नामन्जूर की गयी। मुसलमान हाकिम के सामने पेश किए गये। १० मास तक मुकद्दमा चला अभियुक्तों की ओर से लाहौर और राबलपिण्डी से कई आर्य वकील आते, उन्हें भयानक कष्ट के अतिरिक्त बाहर से रियायत में आने का २०) रुपया टैक्स देना पड़ता। कई पेशियों के बाद अभियुक्तों को एक एक वर्ष जेल और दौ सौ रुपया जुर्माना और जुर्माना न देने पर चार मास की अतिरिक्त जेल का दण्ड दिया गया। अपील की गयी पर कोई लाभ न हुआ।

इस मुकद्दमे से जहां दोनों आर्य महानुभावों की दृढ़ता का सिक्का जमा, वहां साथ ही उनके पीछे समस्त आर्य जगत था—यह सिद्ध हो गया। इसके अतिरित सिख रियासत की धांधली की पोल खुल गई।

हमने इस लेख में कुछ थोड़े ही उन आर्य वीरों और बलिदानों का वर्णन किया है जो आज के आर्य पुरुषों के लिए प्राय: भूले बिखरे है। शताब्दी के इस ऐतिहासिक पर्व पर हमें इन चमत्कारी पूर्वजों का अनुकरण करने का प्रयत्न करना चाहिए तभी यह समारोह सफल हो सकेगा।

शताब्दी

(कवि कस्तूर चन्द्र "घनसार" कवि कुटीर पीपाड़ शहर) (गज०)

सुखद शताब्दी आ रही करना उचित विचार ।
चलें बम्बई प्रेम आर्य धार व्यवहार ।१।
जिस दिन ऋषि वर देश में, निज कर कमलों द्वार ।
किया स्थापन कार्य श्रेष्ठ, हृदय आर्यवृत धार ।२।
जिसके द्वारा देश में, हुआ प्रचार अनूप ।
कालिमा मिटती चली, विशद भया प्रिय रूप ।३।
जब से वैदिक ज्ञान का, हुआ सु-परम प्रकाश ।
वास किया विद्या सुखद, हुई अविद्या नाश ।४।
आने वाले भविष्य में, कोविद सोचे और ।
गुंजादे घर-घर सभी, वैदिक नाद सजोर ।५।
शत वर्षों के बीच में, बदला भारत देश ।
जागृत की ज्योति जगी, पाखण्ड मिटा कलेश ।६।
त्याग करे सो आर्य नर, पर हित भाव विशेष ।
सोहि देव है देश को, जिसका उज्वल वेष ।७।
लेखा है शत वर्ष का, करें बम्बई चाल ।
फिर आगे की सोचिये, निज कर्त्तव्य पाल ।८।
सम्पत्ति दें उपकार हित, अपना वर्त्त सम्भाल ।
आर्य देव "घनसार" निज, वही देश का लाल ।९।

राष्ट्रीय पुनर्जागरण व स्वतन्त्रता का अग्रदूत आर्य समाज

(श्री ओमप्रकाश जी त्यागी, संसद सदस्य मन्त्री—सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधिसभा, दिल्ली)

आज संसार के विचारकों व इतिहासकारों के सन्मुख एक महान आश्चर्यजनक प्रश्न यह बना हुआ है कि लगातार शताब्दियों तक ऐसे विदेशी आक्रान्ताओं व शासकों ने भारतीय राष्ट्र अथवा आर्य जाति को समूल नष्ट कर इसकी लाश पर अपने अनुकूल नए राष्ट्रों को जन्म देने के लिये लोभ-लालच, छल-कपट, वल, बर्बरता आदि सभी अमानवीय व धृणित उपायों का अवलम्बन किया। जिससे दासता में रह चुकने के पश्चात् भी यह राष्ट्र अपनी चेतना, स्वाभिमान तथा जीवन की रक्षा कैसे कर सका ? इस प्रश्न का सारांश में उत्तर यही है कि यों तो भारत में विदेशी आक्रान्ताओं के आगमन से ही समय समय पर ऐसे अनेकों देश भक्त राजा, नेता व विद्वान हुए हैं जिन्होंने भारत की स्वतन्त्रता व स्वाभिमान को बनाये रखने का प्रशंसनीय प्रयास किया, परन्तु वर्तमान भारत में दिखाई पड़ने वाली स्वतन्त्रता, राष्ट्रीय चेतना, व स्वाभिमान पूर्ण जीवन महर्षि दयानन्द सरस्वती और उनके द्वारा स्थापित आर्य समाज की ही देन है। यदि महर्षि दयानन्द और आर्य समाज का अवतरण न होता तो भारत का राष्ट्रीय स्वरूप क्या होता, इसकी कल्पना करना कठिन है।

सन् १८५७ की महान क्रान्ति के पश्चात् जब भारत में स्वतन्त्रता व स्वराज्य का नाम तक लेना अपनी मृत्यु को स्वयं निमन्त्रण देना समझा जाता था। जबकि विदेशी अंग्रेजी प्रशासक लार्ड मैकाले की योजनानुसार अपनी शिक्षा संस्थाओं द्वारा यहां की भाषा, धर्म, संस्कृति, साहित्य व इतिहास को समाप्त कर यहां ईसाई राष्ट्र को जन्म देने का भरसक प्रयास कर रहे थे। जबकि विदेशी विद्वान आर्य जाति के मूल धर्म-ग्रन्थ वेदों को असभ्य गडरियों के गाने तथा रामायण-महाभारत को काल्पनिक गाथाएं सिद्ध कर रहे थे। जबकि पादरी व मुल्ला दिन दहाड़े हिन्दू धर्म, इसके देवी-देवताओं व महापुरुषों की मजाक उड़ा कर आर्य जाति के स्वाभिमान सम्मान को नष्ट कर रहे थे और नित्य हजारों नर-नारियों को अपने धर्म में विलीन कर रहे थे। ऐसी विकट परिस्थिति में महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने इसके उद्धार करने की प्रतिज्ञा ली और बम्बई के अन्दर सन् १८७५ में साधन स्वरूप आर्य समाज की स्थापना की।

राष्ट्रीय चेतना को जागृत करने की दृष्टि से महर्षि दयानन्द सरस्वती ने देश में सर्वप्रथम सर्व-क्रान्ति का नारा दिया और धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक सभी क्षेत्रों में एक ऐसी नवीन क्रान्ति को जन्म दिया कि समूचे भारत में देखते देखते खलबली मच गई। बहुत

से अज्ञानी व्यक्तियों ने उनकी आन्तरिक वेदना व लक्ष्य को न समझ कर उनका विरोध भी किया, उन्हें पत्थर मारे और उन्हें जहर दिया। परन्तु वह निर्भीक महान क्रान्तिकारी सन्यासी सभी विघ्न-बाधाओं को पार करता हुआ, अपने लक्ष्य की दिशा में आगे बढ़ता ही गया।

देशवासियों को उनकी पराधीनता के कारणों का आभास कराने के लिये उन्होंने कहाकि स्वयं भुव राजा से लेकर पाण्डव पर्यन्त आर्यों का चक्रवर्ती राज्य रहा तत्पश्चात् आपस के विरोध से लड़कर नष्ट हो गए। क्योंकि इस परमात्मा की सृष्टि में अभिमानी, अन्यायकारी, अविद्वान लोगों का राज्य बहुत दिन नहीं चलता......जैसे मुसलमानों की बादशाही के सामने शिवाजी, गोविन्दसिंह ने खड़े होकर मुसलमानों के राज्य को छिन्न-भिन्न कर दिया।

भारत को जंगली व असभ्य लोगों का देश और इनके महान् ग्रन्थ वेद को असभ्य गडरियों के गाने सिद्ध करने वाले विदेशी विद्वानों को उत्तर देते हुए महर्षि ने इन शब्दों के द्वारा देशवासियों के अन्दर स्वाभिमान की भावना भरी कि—"यह निश्चय है कि जितनी विद्या और मत भूगोल में फैले है वे सब आर्यावर्त्त देश से ही प्रचारित हुए हैं।" एक "जैकालयट साहब" फ्रांस देश निवासी अपनी (दी बाइबिल इन इण्डिया) में लिखते हैं कि सब विद्या और भलाइयों का भण्डार आर्यावर्त्त देश है और सब विद्या और मत इसी देश से फैले हैं और परमात्मा से प्रार्थना करते हैं कि हे परमेश्वर ! जैसी उन्नति आर्यावर्त्त की पूर्वकाल में थी, वैसी हमारे देश की कीजिए।" दारा-शिकोह ने भी यही निश्चय किया था कि जैसी पूरी विद्या संस्कृत में है, वैसी किसी भाषा में नहीं।

सन् १८५७ की क्रान्ति के पश्चात् आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द ही वह महापुरुष थे, जिन्होंने सर्वप्रथम स्वराज्य, स्वदेशी, स्वभाषा (राष्ट्रभाषा हिन्दी) की प्रेरणा देशवासियों को दी। उन्होंने बड़ी दृढ़ता के साथ कहाकि—'माता-पिता के तुल्य विदेशी राज्य के अच्छा होते हुए भी वह स्वराज्य से अच्छा कदापि नहीं हो सकता।" इस तथ्य को थ्योसिफिकल सोसायटी की प्रसिद्ध नेत्री श्रीमती ऐनीबीसैण्ट ने स्वीकार करते हुए कहाकि "महर्षि दयानन्द ने ही सर्वप्रथम नारा लगाया था कि—भारत भारतीयों का हो।"

जन्म-गत जाति-पांत, छूतछात, संकीर्ण साम्प्रदायिकताओं, मत-मतान्तरों आदि अनेक सामाजिक कुरीतियों से जर्जरित व विघटित राष्ट्र को एक सूत्र में लाने के लिये महर्षि दयानन्द और आर्यसमाज ने बड़ा ही प्रशंसनीय कार्य किया है। सर्वप्रथम उन्होंने सभी धार्मिक वर्गों व मत-मतान्तरों को एक मत होने के लिये दिल्ली दरबार के समय एक सर्वधर्म सम्मेलन बुलाकर प्रयास किया। उसमें असफल हो जाने पर उन्होंने सभी समुदायों में धर्म के नाम पर फैले पाखण्ड व असत्य एवं संकीर्ण साम्प्रदायिक विचारों का बड़ी कड़ाई से खण्डन किया।

जन्म से कोई छोटा-बड़ा, छूत-अछूत नहीं होता, अपितु अपने गुण कर्म व स्वभाव से व्यक्ति छोटा-बड़ा बनता है—इस सिद्धांत को दयानन्द ने वेद शास्त्रों के प्रमाणों से प्रतिपादित ही नहीं किया अपितु उनके आर्यसमाज ने उनके इस विचार को क्रियात्मक रूप देते हुए सर्वत्र अपने उत्सवों व सम्मेलनों पर प्रीति-भोजों का आयोजन कर और गुण, कर्म, स्वभाव के आधार पर अन्तर्जातीय विवाहों को प्रोत्साहन देकर राष्ट्रीय एकता की दिशा में

देशवासियों को अग्रसर किया।

महर्षि दयानन्द और आर्य समाज द्वारा की गई उक्त सामाजिक क्रान्ति को देश-विदेश के विद्वानों ने किस रूप में स्वीकार किया उसके एक-दो उदाहरण इस प्रकार हैं :—

तेहरान (ईरान) के रहीमजादाफावी कहते हैं :—

"स्वामी दयानन्द सरस्वती ने हिन्दू धर्म के उद्धार और अपने देश को नैतिक और सामाजिक क्षेत्रों में ऊंचा उठाने के लिये जो मूल्यवान योग दिया है, उसका थोड़ी पंक्तियों में पूर्ण विवरण दिया जाना सम्भव नहीं है। उन्होंने जन्मना जातपात का खण्डन करके जो उपलब्धि प्राप्त की है—वह, मुझे विश्वास है, कि भारत की उन्नति और एकता के लिए राजमार्ग सिद्ध होगी। उन्होंने (स्वामीजी ने) भारतीय पुर्नजागरण के आधार पर आर्य समाज नामक जिस संस्था की नींव खड़ी की थी वह अब भी और सदैव भारत को आत्म-चेतना और राष्ट्र कल्याण की स्वाभाविक भावना के जागरण के उदाहरण के रूप में देखी जाती रहेगी।

माडर्न रिव्यू के यशस्वी सम्पादक श्री रामानन्दजी चटर्जी ने अपने पत्र में लिखा है कि—"स्वामी दयानन्द भारत को राजनीतिक, सामाजिक और धार्मिक रूप से एक सूत्र में बांधना चाहते थे। भारत को एक राष्ट्र का रूप देने के लिये उन्होंने भारत को विदेशी शासन से मुक्त कराना चाहा। सामाजिक दृष्टि से देशवासियों को एक करने के लिये उन्होंने जातपात और वर्ग भेद को मिटाना चाहा।

भारत की भाषा, धर्म, संस्कृति, साहित्य, इतिहास, देश-भक्ति आदि को समाप्त करने की दृष्टि से बनाई लार्ड मैकाले की शिक्षा-योजना को विफल कर देश के छात्र-छात्राओं में अपनी भाषा, धर्म, संस्कृति आदि के प्रति श्रद्धा व स्वाभिमान भरने के लिए महर्षि की योजनानुसार आर्य समाज ने उत्तर भारत के लगभग सभी प्रान्तों में गुरुकुलों, स्कूलों, कालेजों की स्थापना की। प्रमाण-स्वरूप जब राष्ट्रपिता महात्मा गान्धी जी दक्षिण अफ्रीका में वहां की गोरी सरकार की रंग-भेद नीति के विरुद्ध सत्याग्रह कर रहे थे तो गुरुकुल कांगड़ी के विद्यार्थियों ने अपने नित्य का घी-दूध त्याग कर और मजदूरी करके धन जमा किया और गांधीजी को सहायतार्थ भेजा। यही कारण था कि भारत आने पर गांधीजी सर्वप्रथम गुरुकुल कांगड़ी मे उन देश भक्त बच्चों को आशीर्वाद देने गए।

जब स्वर्गीय गांधीजी के नेतृत्व में कांग्रेस का स्वतन्त्रता आन्दोलन चला तो आर्यसमाज ने अनुभव किया कि उनके द्वारा राजनीतिक क्षेत्र में महर्षि दयानन्द के स्वप्नों को साकार किया जा सकता है तो स्वामी श्रद्धानन्द, श्री स्व० लाला लाजपतराय, श्री भाई परमानन्दजी आदि सभी प्रमुख आर्य नेता और आर्य नर-नारी व्यक्तिगत रूप से स्वतन्त्रता संग्राम में कूद पड़े। उस समय सर्वत्र आर्यसमाज बाहर से धार्मिक संगठन बना रहा है, परन्तु आंतरिक रूप से कांग्रेस के साथ हो गया और आजादी की लड़ाई में नींव का पत्थर बन कर खड़ा हो गया तथा गांधीजी के आदेश पर उत्तर भारत में जेल जाने वाले सत्याग्रहियों में आर्यसमाजी बन्धुओं की सर्वत्र प्रधानता थी।

आर्यसमाज ने गान्धीजी द्वारा चलित अहिंसात्मक आन्दोलन में व्यक्तिगत रूप से भाग ही नहीं लिया अपितु अपने धार्मिक मंच से इसके

उपदेशकों व भजनीपदेशकों ने स्वतन्त्रता आन्दोलन का दृढ़ता से समर्थन किया । आर्य समाज द्वारा की गई इस राष्ट्रीय चेतना को स्वर्गीय विपिन चन्द्र पालजी ने अपने ग्रन्थ 'वर्तमान भारत में स्वतन्त्रता आन्दोलन का प्रारम्भ' के अन्दर इन शब्दों में प्रकट किया है कि—"यह दयानन्द ही था जिसने उस आंदोलन की आधारशिला रक्खी जो बाद में धार्मिक राष्ट्रीयता के नाम से जाना गया । उनके आन्दीलन ने उन हिन्दुओं में एक नवीन राष्ट्रीय चेतना उत्पन्न की, जो शताब्दियों से आत्म-हीनता के गर्त में पड़े थे ।......और साथ ही देश की जनता को वेद के आधार पर स्वतन्त्रता, समानता, भ्रातृत्व की भावना प्रदान की ।"

भारत की बहुत कम जनता इस महान ऐति-हासिक तथ्य को जानती है कि भारत के स्वतन्त्र करने के लिये हिंसात्मक मार्ग के पक्षपाती क्रान्तिकारी आन्दोलन के जन्मदाता स्व० श्यामजी कृष्ण वर्मा जिन्हें महर्षि दयानन्द जी ने ही अपने व्यय से इंगलैण्ड विशेष शिक्षा प्राप्त करने और वहां पर भारत के धर्म संस्कृति व स्वतन्त्रता का प्रचार करने की दृष्टि से भेजा था । उन्होंने इंगलैण्ड जाते ही सन् १९०५ में इण्डियन होम रूल सोसायटी की स्थापना की जिसका लक्ष्य भारत के लिये स्वराज्य प्राप्ति था । उन्होंने भारतीय समस्याओं पर विचार प्रकट करने के लिये वहां "इण्डियन-हाऊस" की भीं स्थापना की और अपने विचारों को प्रकट करने के लिये "इण्डियन सोसलिस्ट" नामक पत्र भी निकाला ।

सन् १९१६ में आर्य समाज के प्रसिद्ध नेता श्री लाला लाजपतरायजी ने अमरीका जाकर भारत की स्वतन्त्रता के लिये वहां वातावरण उन्पन्न करने की दृष्टि से "इण्डियन होम रूल लीग' नामक संस्था की स्थापना की । उन्हीं के प्रचार का परिणाम था कि अमरीका की जनता व सरकार सदैव भारत की स्वतन्त्रता का समर्थन करती रही ।

भारत में आर्यसमाज ही राष्ट्रीय चेतना का मूल स्रोत हैं—इस तथ्य को अंग्रेज सरकार भली प्रकार समझती थी, परन्तु शुद्ध आर्मिक संगठन होने के नाते वह इस पर हाथ डालने से सदैव झिझकती रहो । उसने अपने गुप्त आदेश के द्वारा आर्य समाजियों को नौकरी से अलग करना प्रारम्भ कर दिया और उन्हे नौकरी देना बन्द कर दिया । श्री रामजे मैकडानल्ड ने जो बाद में इंगलैण्ड में प्रधानमन्त्री बने अपनी भारत यात्रा से लौटने पर सन् १९१५ में यह वक्तव्य दिया......भारत के समस्त एंगलो इण्डियन अधिकारी आर्य समाज को एक राज-नैतिक संस्था समझते हैं......और पुलिस लोग आर्य समाज को एक बागी संस्था मानते हैं ।

श्री सर वैलन टाइन शिरौल ने खुले रूप में आर्य समाज को पोलिटिकल आन्दोलन बत-लाया । उसने कहाकि सबसे अधिक खतरनाक प्रचार की बेचैनी भारत में केवल हिन्दुओं तक ही सीमित है और इसे भारतीय आन्दोलन कहने के स्थान पर—"हिन्दू असन्तोष कहना चाहिए ।......आर्य समाज और दयानन्द के सम्बन्ध में उसने कहाकि दयानन्द के उपदेश हिन्दुओं में सुधार के लिये न होकर केवल भारत में विदेशी प्रभाव का विरोध करने के लिये है जो दयानन्द की दृष्टि में राष्ट्रीयता विरोधी है ।

अन्त में विदेशी अंग्रेज सरकार ने साहस करके आर्यसमाज को राजनीतिक व बागी सिद्ध करने के लिए पटियाला रियासत में इस पर केस चलवाया और लगभग ८५ आर्य

समाजियों के विरुद्ध पुलिस द्वारा वारण्ट निकाले गये और आर्यसमाज के सत्यार्थ प्रकाश आदि सभी ग्रन्थों पर वहां की रियासत द्वारा प्रतिबंध लगाया गया परन्तु अंग्रेज सरकार के लाख प्रयत्न करने पर भी वहां की सरकार अपने पक्ष को सिद्ध न कर सकी और पटियाला सरकार द्वारा केस वापिस ले लिया गया।

आर्य समाज ने ही भारत में राष्ट्रीय चेतना व स्वाभिमान को जन्म दिया। इसकी सिद्धि के लिये अन्त में दो महान विदेशी विद्वानों का मत उद्धृत करना उचित होगा। श्री डी० बैल्ले के विचारों में—"वर्तमान स्वतन्त्र भारत की वास्तविक आधारशिला दयानन्द ने ही रक्खी थी। दुर्भाग्यवश अन्य आधारशिलाओं की भांति इस आधारशिला को भी हम अब देख नहीं सकते हैं—फिर भी हम इस पर दृष्टिपात कर सकते हैं और इस पर बने भवन की प्रशंसा कर सकते हैं तथा इस तथ्य को हमें कभी नहीं भूलना चाहिए कि योग्य से योग्य भवन निर्माण बिना नींव के नहीं बन सकता है चाहे वह आधारशिला अदृश्य ही क्यों न हो।

फ्रांस के प्रसिद्ध विश्व विख्यात श्री रोमां-रोला लिखते हैं कि—राष्ट्रीय पुनर्जागरण में जो इस समय देश में चल रहा है दयानन्द ने प्रबल शक्ति के रूप में कार्य किया। उनके आर्य समाज ने इच्छा व अनिच्छापूर्वक बंगाल के १९०५ के विप्लब का मार्ग बताया। दयानन्द सदैव सार्वजनिक रूप से यह घोषणा करते थे कि उनका समाज अराजनीतिक है और ब्रिटिश गवर्नमेंट का निर्णय इससे भिन्न था। दयानन्द राष्ट्रीय संगठन और पुर्नानिर्माण का सर्वाधिक मसीहा था।

विनम्र निवेदन

यह सम्पूर्ण शताब्दि वर्ष है। इस लिये आर्य मर्यादा अनेक विशेषांक निकालेगा। अगली २७ अप्रैल का विशेषांक होगा। उसमें राम के जीवन पर भी प्रकाश डाला जायेगा। लेखक अधिक लम्बा लेख न लिखें। दो कालम या चार कालम में लेख आ जावे। इसका ध्यान रक्खें।

सम्पादक

आर्य समाज के एक शताब्दी के वेद कार्य का सिंहावलोकन

(ले० श्री पं० वीरसेन जी वेद श्रमी, वेदसदन, इन्दौर—१)

शताब्दी में हुए वेद कार्य का स्वरूप :--

आर्य समाज को स्थापित हुए एक शताब्दी पूर्ण हुई। उसका कार्य जन-जीवन के विविध क्षेत्र में व्याप्त हो गया। आर्य समाज का तीसरा नियम है—"वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यो का परम धर्म है।" तदनुसार इस शताब्दी में आर्य विद्वानों ने बहुत अधिक कार्य निम्नानुसार किया है।

(१) वेद की पुस्तकों का दर्शन दुर्लभ था। आर्य समाज ने वेदों की संहिताओं का प्रकाशन अनेक स्थानों से किया। आज भारत के कोने कोने में और देश विदेश में वेद की संहितायें विद्यमान है।

(२) वेद मन्त्र यदि कहीं सुनने को किसी विद्वान से मिलता तो उसके अर्थ को बताने वाला नहीं था। सायण महीधरादि के भाष्य संस्कृत में ही थे। सर्व साधारण के लिए दुर्बोध थे। आर्य समाज द्वारा चारों वेदों के भाष्यों का संस्कृत एवं हिन्दी में प्रकाशन इस शताब्दी में बहुत हुआ। लगभग एक लाख से भी अधिक चारों वेदों के भाष्य जनता के पास पहुंच गए। साम और यजुर्वेद के भाष्य तो पृथक रूप से जनता में और भी अधिक पहुच गये। अंग्रेजी में भी वेद भाष्य प्रकाशित हुए तथा देशीय भाषाओं में भी।

(३) वेद पढ़ने का अधिकार मानव मात्र को है चाहे किसी भी देश व जाति का हो—इस आधार पर भारत में तथा भारत से बाहर जहां भी आयर्ज समाज है उनमें तथा उनके आधीन जो स्कूल, कालेज, गुरुकुल, आश्रम है, उनमें वेद मन्त्रों का अभ्यास, सन्ध्याहवनादि कर्म-काण्ड वेदों का पठन-पाठन प्रचलित हुआ। आर्य समाज की किसी भी संस्था के छोटे से छोटे बालक बालिका को गायत्री अवश्य याद है।

(४) वेद के आधार पर, सोलह संस्कारों का प्रचलन देश में तथा विदेश में हुआ। यज्ञों का अधिकार सब को प्राप्त हुआ—यज्ञोपवीत का भी अधिकार सब को प्राप्त हुआ।

(५) वेदों के सम्बन्ध में जो अनेक भ्रान्तियां फैली हुई थी—उनका निराकरण भी आर्य समाज के व्याख्यानों एवं विविध साहित्य से हुआ।

इस शताब्दी के वेद के इस महान् कार्य के पीछे महर्षि दयानन्द को अपूर्व तपस्या की प्रेरणा स्रोत कार्य कर रहा है महर्षि दयानन्द सरस्वती

ने देखा कि वेद के प्रचार के लिए पुस्तकों की आवश्यकता है। भारत में उपलब्ध नहीं है तो उन्होंने जर्मनी से वेद मंगवाये। उव्वट, महीधर एवं सायंण के भाष्यों से वेदों का सर्व विद्यामय स्वरूप प्रकट नही होता है। उन्हें पढ़कर लोग वर्तमान समय के लिये अनुपयोगी अनुभव करेंगे अतः वेदों के युक्ति विज्ञान, विद्यायुक्त, आध्यात्मिक, आधिभौतिक अर्थो के लिये महर्षि ने स्वयं वेद भाष्य संस्कृत एवं आर्य भाषा (हिन्दी) में किया।

शताब्दी के प्रथम चरण में (सन् १८७५ से सन् १९०० ई० तक)

आर्य समाज स्थापना शताब्दी के प्रथम चरण में महर्षि के प्रचार प्रभाव से श्री सत्यवृत सामश्रमी, मुनिवर गुरुदत्त विद्यार्थी एम० ए०, पं० भीमसेन जी शास्त्री, तुलसी राम जी स्वामी आदि अनेक विद्वानों ने विविध प्रकार से वेदों का कार्य आरम्भ किया। पं० सत्यवृत सामश्रमी ने अनेक वैदिक ग्रन्थों का सम्पादन किया। स्त्री शूद्रादि सभी को वेदाधिकार, स्त्रियों को यज्ञोपवीत अधिकार आदि की मान्यता के साथ उनका यह कार्य महर्षि के ही प्रचार से प्रभावित था। श्री मुनिवर गुरुदत्त विद्यार्थी ने चारों वेदों की संहिताओं का प्रकाशन तथा वेदों के कतिपय सूक्तों की वैज्ञानिक व्याख्यायें प्रकाशित की तथा विदेशियों के वेदों के आक्षेपों का निराकरण भी किया। श्री पं० तुलसी राम जी ने इसी चरण में सामवेद का महर्षि दयानन्द शैली से संस्कृत हिन्दी में भाष्य किया।

शताब्दी के दूसरे चरण में (सन् १९०१ से सन् १९२५ ई० तक)

शताब्दी के दूसरे चरण में बहुत कार्य वेद का बढ़ गया। श्री महामहोपाध्याय आर्य मुनि जी, श्री स्वामी नित्यानन्द जी, श्री पं० शिवशंकर जी काव्यतीर्थ, श्री राजाराम जी शास्त्री, श्री पं० चमूपति जी, पं० भगवद्दत्त जी रिसर्च स्कालर श्री पं० रामावतार जी शर्मा वेद चतुष्टय तीर्थ, श्री अभयदेव जी, श्री स्वामी अच्युतानन्द जी, श्री आचार्य द्विजेन्द्र नाथ जी शास्त्री सिद्धान्त शिरोमणि, श्री प्रियरत्न जी आर्ष, श्री पं० क्षेमकरण जी, श्री पं० दामोदर जी सातवलेकर श्री पं० नरदेव जी शास्त्री, श्री स्वामी दर्शनानन्द जी आदि अनेक विद्वानों ने वेद भाष्य, कतिपय सूक्तों के भाष्य, मन्त्र संग्रह भाष्य, वेदों पर आक्षेपों के निराकरण आदि पर बहुत सा साहित्य निर्माण किया।

शताब्दी के तीसरे चरण में (सन् १९२६ से १९५० ई० तक)

शताब्दी के तीसरे चरण में पूर्वोक्त विद्वानों के अतिरिक्त श्री स्वामी वेदानन्द जी, श्री स्वामी भूमानन्द, श्री पं० ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु, श्री पं० बुद्धदेव जी विद्यालंकार, श्री पं० रघुनन्दन जी शर्मा, श्री पं० आयोध्या प्रसाद जी, श्री चतुवेद भाष्यकार, श्री पं० जयदेव जी विद्यालंकार, श्री पं० विश्वनाथ जी, वेदालंकार विद्यामार्तण्ड, श्री स्वामी ब्रह्म मुनि जी प्रिय रत्न जी आर्ष) पं० धर्मदेव जी विद्यामार्तण्ड, श्री हरिशरण जी विद्यालंकार श्री हरिश्चन्द्र जी, श्री डा० मंगलदेव जी, श्री पं० विश्वबन्धु जी शास्त्री एम० ए०, श्री आचार्य बृहस्पति जी वेद शिरोमणि, श्री हरिदत्त जी शास्त्री, श्री पं० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय, श्री डा० सत्यप्रकाश जी डी० एस० सी० विद्यालंकार, श्री आचार्य प्रियवृत जी आदि ने वेद सम्बन्धी बहुत उत्तम ग्रन्थ लिखें।

श्री पं० बिहारी लाल जी शास्त्री, पं०

युधिष्ठिर जी मीमांसक, श्री पं० रामदत्त जी शुक्ल, श्री आचार्य विश्वश्रवा जी व्यास एम० ए०, डा० वासुदेव शास्त्री अग्रवाल, श्री पं० बुद्धदेव जी मीरपुरी, श्री पं० मदन मोहन जी विद्यासागर, श्री पं० वीरसेन जी वेदश्रमी, डा० अविनाश चन्द्र जी बोस एम० ए०, पी० एच० डी० आदि भी इसी चरण के अन्तर्गत अपने वैदिक कार्यों से सुविख्यात हुये।

शताब्दी के चतुर्थ चरण में (सन् १९५१ से) सन् १९७५ ई० तक)

शताब्दी के चतुर्थ चरण में उपरोक्त विद्वानों के अतिरिक्त श्री पं० रामनाथ जी विद्यालंकार श्री भगवद्दत्त जी वेदालंकार—श्री उषर्बुध जी, श्री श्रुतिशीलजी एम० ए० तर्क शिरोमणि, श्री पं० सुदर्शन देव जी आचार्य एम० ए० श्री स्वामी विद्यानन्द जी विदेह, श्री डा० सुधीर कुमार जी गुप्त, श्री आचार्य वीरेन्द्र जी शास्त्री एम० ए०, डा० भवानी लाल जी भारतीय, श्री पं० ब्रह्मानन्द जी त्रिपाठी, श्री रणवीर जी, श्री पं० भद्रसेन जी, श्री जगदीश जी विद्यार्थी एम० ए०, श्री रामचन्द्र जी पुरोहित, श्री पन्ना लाल जी परिहार, श्री काशीनाथ जी शास्त्री, श्री आचार्य कृष्ण जी, श्री सत्यभूषण जी योगी, श्री मनोहर जी विद्यालंकार, श्री जगन्नाथ जी वेदालंकार आदि अनेक विद्वानों ने वेदों पर भाष्य, वेद के सूक्तों की व्याख्या तथा अनेक प्रकार के वैदिक साहित्य के निर्माण से वेदों का गौरव बढ़ाया है। श्री जगदीश चन्द्र जी जयगोपाल विद्या भण्डार बम्बई ने चारों वेदों का अंग्रेजी में वैज्ञानिक भाष्य किया है जो अप्रकाशित है।

प्रकाशन संस्थाएं

वेद एवं वैदिक साहित्य के प्रकाशन में २० बड़ी संस्थाएं सलंग्न है तथा छोटी संस्थाओं की संख्या तो काफी है। आर्य समाज के वेद भाष्य कर्ताओ की एक बड़ी श्रेणी है। कुछ ने चारों वेदों पर किसी ने दो वेदो पर किसी ने एक वेद पर भाष्य किये है। साम वेद पर ८—१० विद्वानों के भाष्य है तथा अंग्रेजी कविता में भी अनुवाद है। लेख के बढ़ जाने के भय से हम उनका विस्तृत वर्णन में नहीं कर रहे हैं। पर इतना अवश्य कह सकते है कि यदि किसी को वेद के बारे में यथार्थ रूप से जानना है तो यह आर्य समाज द्वारा प्रकाशित वेद एवं वैदिक साहित्य को अवश्य पढ़ें। उससे बहुत ज्ञान-विज्ञान प्राप्त होगा।

आर्य समाज की कुछ प्रसिद्ध प्रकाशन संस्थायें जो वेद, वेद भाष्य एवं वैदिक साहित्य के ही प्रकाशन में सलंग्न हैं। ये निम्न प्रकार है :—

१. महर्षि दयानन्द द्वारा स्थापित परोपकारिणी सभा अजमेर।

२. सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली

३. आर्य साहित्य मण्डल अजमेर।

४. सार्वदेशिक प्रकाशन लि० दिल्ली।

५. विश्वेश्वरानन्द वैदिक शोध संस्थान होशियापुर।

६. राम लाल कपूर ट्रस्ट, बहालगढ़ (सोनीपत)।

७. आर्य प्रादेशिक सभा पंजाब, जालन्धर।

८. पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा, जालन्धर।

९. गुरुकुल कांगड़ी (हरिद्वार)।

१०. उत्तरप्रदेश आर्य प्रतिनिधि सभा, लखनऊ

११. दयानन्द संस्थान, दिल्ली।

१२. गोविन्द राम हासानन्द दिल्ली।

१३. वेद संस्थान अजमेर।

१४. सत्य प्रकाशन-मथुरा।

१६. आर्य साहित्य प्रचार ट्रस्ट, दिल्ली-६।

१७. आर्य संघ प्रकाशन. सूरत।

१८. प्रताप सिह शूर जी वल्लभदास ट्रस्ट, बम्बई।

१९. रायबहादुर चौधरी नारायण सिह धर्मार्थ ट्रस्ट करनाल।

२०. गंगाप्रसाद, उपाध्याय प्रकाशन, कलाप्रेस, प्रयाग।

इसके अतिरिक्त और भी उनेक संस्थाएं अपने-अपने प्रान्त मे कार्य कर रही हैं।

वेद का कार्य करने वाले व्यक्ति एवं संस्थाओं में आर्य समाज का प्रभाव

महर्षि ने वेदो के पढ़ने का अधिकार सब को बिना मेद भाव के, चाहे वह स्त्री हो या पुरुष हो, किसी देश या जाति का हो प्रदान किया। आज इसके अनुसार जो भी वेदों को पढ़ने का अधिकार गायत्री जप करने का, ओम के जप करने का यज्ञ करने का अधिकार बिना मेद भाव के प्रदान करता है वह चाहे प्रत्यक्ष रूप में आर्य समाजी अपने को कहलाना स्वीकार न करे तो भी वह इस बारे में आर्य समाज का कार्य और भी फलीभूत दीख रहा है। इस लेख में कतिपय हम ऐसे ही व्यक्तियों या संस्थाओं का उल्लेख करना आवश्यक समझते है।

१. महर्षि अरविन्द

महर्षि दयानन्द की वेदार्थ शैली से प्रभावित सर्व प्रथम महर्षि अरविन्द है। जिन्होने स्पष्ट घोषित्त किया कि वेद भाष्य की सच्ची कुंजी महर्षि के पास हैं। अर्थात् महर्षि दयानन्द ही वास्तविक रूप से युक्ति एवं विद्या-विज्ञान सिद्ध अर्थ को प्रकट करने वाले हुए। महर्षि के वेद-भाष्य को पढ़ कर ही उनकी अपूर्व वेदार्थ की प्रतिभा जागृत हुई। परन्तु महर्षि ने स्पष्ट कहा कि योगाभ्यास भी वेदार्थ ज्ञान के लिए आवश्यक है अतः अरविन्द शब्द ब्रह्म वेद के साथ योग साधना में भी लग गये।

इसलिए हम कहते है कि महर्षि अरविन्द का वेद का कार्य महर्षि दयानन्द की कृपा का प्रसाद ही है तथा महर्षि अरविन्द से प्रभावित एवं प्रेरित होकर जिन विद्वानों ने वेद भाष्य का कार्य किया उसका मूल कारण आर्य समाज का वैदिक कार्य ही है आज महर्षि अरविन्द का वैदिक साहित्य विदेशों में बडी प्रतिष्ठा को प्राप्त है।

२. सातवलेकर जी

श्रीपाद दामोदर जी सातवलेकर ने वेद के लिए अपना सम्पूर्ण जीवन अर्पण कर दिया था। वेदो की अनेक संहिताओं के प्रकाशन में वे सर्वाग्रणी हैं। वैदिक साहित्य और वेदों का भाष्य अत्यन्त मनन, चिन्तन पूर्वक किया। यह सब प्रेरणा उनको समाज से पूर्ण रूप से मिली। गुरु कुल कांगड़ी में आप अध्यापक रहे। पंजाब आर्य प्रनिनिधि सभा के निवेदन पर उन्होंने वेदामृत रूप से मन्त्र संग्रह लिखा। वेद कार्य में बहुत अग्रसर हुए। उनके पंजाब में रहकर यह अनुभव किया कि पौराणिक जनता में भी वेद का प्रचार होना चाहिए। अतः उन्होंने अपने वेद प्रकाशन कार्य को इस प्रकारसे संचालित किया कि जिससें आर्य समाज के अतिरिक्त असाम्प्रदायिक और साम्प्रदायिक लोगों में वेदों का प्रचार एवं वेदों के स्वाध्याय की प्रवृत्ति जाग्रत हो। इस प्रकार के प्रचार के लिये उनको कहीं-कही विशुद्ध आर्य समाज के मन्तव्य से अलग होकर भी कार्य

करना पड़ा और वेद प्रचार में सफलता प्राप्त की। इन दोनों महानुभावों के कार्य आर्य समाज की शताब्दी के द्वितीय चरण में प्रारम्भ हुए।

३- आचार्य श्रीराम शर्मा मथुरा

आर्य समाज की शताब्दी के चतुर्थ चरण में भी इसी प्रकार से कुछ कार्य प्रारम्भ हुए और बहुत सफल हुए। जिसमें श्री आचार्य श्री राम शर्मा का कार्य है जो गायत्री तपोभूमि मथुरा में तथा उसकी विविध शाखा संस्थाओं में हो रहा है। संस्कृति संस्थान वेदनगर बरेली भी इसी का अंग है जिससे बहुत प्रकाशन हुआ है आचार्य श्री राम शर्मा का कार्य क्षेत्र पहले आर्य समाज ही था। परन्तु उन्होंने अनुभव किया इस ब्रज भूमि में आने वाली भक्त जनता ब्रज भूमि का सच्चा प्रसाद—वेद को प्राप्त ही नहीं कर पाती है जिसको कि महर्षि दयानन्द यहां से वितरित करना चाहते थे। आर्य समाज की प्रचार शैली से उसमें वेद का प्रचार करने में बहुत शक्ति एवं समय लग जायेगा, तो भी सफलता विशेष नहीं प्राप्त होगी। ऐसा अनुभव किया। उन्होंने जन रुचि के अनुसार एवं पौराणिक श्रद्धानुकूल प्रचार शैली अपना कर गायत्री, वेद, यज्ञ, सध्या आदि का बहुत प्रचार किया। वेद भाष्य एवं वैदिक साहित्य का प्रचार तथा प्रकाशन किया, यह सब परोक्ष रूप से आर्य समाज के प्रभाव का ही परिणाम है।

४-वेद दर्शनाचार्य श्री स्वामी गंगेश्वरानन्द जी महामण्डलेश्वर

आर्य समाज की शताब्दी के चतुर्थ चरण में एक और महान् संस्था श्री गंगेश्वर चतुर्वेदी संस्थान दिल्ली में वेद दर्शनाचार्य श्री गंगेश्वरानन्द जी महामण्डलेश्वर द्वारा वेदों को प्रकाशन एवं प्रचार में अग्रसर हुई है। चारों वेदों का एक विशाल मूल ग्रन्थ भगवान वेद के नाम से प्रकाशित किया है जो अत्यन्त शुद्ध एवं सुन्दर है। उपरोक्त प्रचार के अतिरिक्त भी ऐसा बहुत सा क्षेत्र था जहां वेदों का पहुंचना (आर्य समाज वेद को मानता है) इसलिये कठिन हो रहा था। इस महान् कमी को अनुभव कर सनातन धर्मावलम्बी पौराणिक जनता के सब सम्प्रदायों में वेद पूर्ण आदर से ग्राह्य हो जाये यह प्रयत्न श्री स्वामी गंगेश्वरानन्द जी महाराज ने किया और आज सनातन धर्म के सब बड़े-२ मन्दिरों में देव प्रतिमा के तुल्य साक्षात भगवान वेद वाङ्मय रूप से विद्यामान हो गए। वेद हमारे प्रश्नों के उत्तर देंगे। वे हमारी सब कामना पूर्ण करेंगे। इस रूप में भगवान की तथा कथित प्रतिमाओं के साथ भगवान की सनातन ज्ञान राशि वेद को प्रतिष्ठित कराने में श्री स्वामी गंगेश्वरानन्द जी को अपूर्व सफलता प्राप्त हुई है और आज उनके द्वारा देश विदेश के सनातन धर्म मन्दिरों, बौद्ध स्थानों, विश्वविद्यालयों, प्राचीन पुस्तकालयों-सब में वेद की स्थापना हो गई है। यद्यपि श्री स्वामी गंगेश्वरानन्द जी महाराज थे विविध साम्प्रदायों के लिए मन्त्रों द्वारा उनका प्रतिपादन किया है तथापि साम्प्रदायिक अर्थो के अतिरिक्त वे उन्हीं मन्त्रों के ज्ञान, विज्ञान तथा आध्यात्मिक अर्थो को भी वे करते हैं। श्री स्वामी गंगेश्वरानन्द जी महाराज को महर्षि दयानन्द द्वारा कृत वेद भाष्य एवं आर्य समाज के विद्वानों के वेदार्थ के प्रति उतना ही प्रेम और श्रद्धा है जितना कि सायणादिके वेदार्थ से है। महर्षि दयानन्द की यह घोषणा कि वेद मानव मात्र का है—उसके पढ़ने का सब

को अधिकार है इसका क्रियात्मक रूप से प्रचार ९५ वर्ष की अवस्था में श्री स्वामी गंगेश्वरानन्द जी महाराज पूर्ण उत्साह से कर रहे हैं। वास्तव में उनके कार्य से आर्य समाज शताब्दी का एक महत्वपूर्ण कार्य पूर्ण हो रहा है।

५. महामण्डलेश्वर श्री महेश्वरानन्द जी महाराज

श्री स्वामी महेश्वरानन्द जी महामण्डलेश्वर कनखल ने चारों वेदों के शतक संस्कृत एवं हिन्दी भाष्य के साथ अपूर्व विद्वता से लिखे है। उसमें गायत्री मन्त्र के जप का अधिकार, ओ३म् के जप का अधिकार, वेदाध्ययन का अधिकार सब को स्पष्ट स्वीकार किया है और वर्ण व्यवस्था गुण कर्मानुसार है—यह भी माना है! यह सब परोक्ष रूप से आर्य समाज के वेद कार्य का विविध सम्प्रदायों में प्रचार है और वेद की स्थापना एवं वेद की दिग्विजय ही है। अतः आर्य समाज एक शताब्दो में वेद को विश्व में प्रचलित करने तथा उसको प्रचारित करने में अत्यन्त सफल हुआ है।

६. श्री स्वामी भगवताचार्य जी

पंडित राज श्री स्वामी भगवताचार्य अहमदाबाद ने यजुर्वेद एवं सामवेद का संस्कृत हिन्दी में भाष्य महर्षि दयानन्द की शैली पर ही किया है! वे पहले आर्य समाज में रहे। पुनः समय की परिस्थितियों ने या प्रभु की प्रेरणा से रामानन्दी साम्प्रदाय में गये और वहां जाकर भी उसने अपने को असाम्प्रदायिक ही रखा। उनका वेद सम्बन्धी कार्य भी आर्य समाज से बहुत अंशों में अवरुद्ध ही है।

उदार बनो

एक राजकुमार बड़ा अत्याचारी था। राजा ने उस दुर्बुद्धि को सुधारने की बड़ी कोशिश की, लेकिन वह नहीं सुधरा। बुद्ध उसे सुमति देने के लिये स्वयं उसके पास गये। वे उसे नीम के एक पौधे के पास ले गये और बोले, "राजकुमार इस पौधे का एक पत्ता चखकर तो बताओ कि कैसा है?"

राजकुमार ने पत्ता तोड़ कर चखा। उसका मुंह कड़वाहट से भर उठा। उसे तुरन्त थूककर उसने नीम का पौधा ही जड़ से उखाड़ फेंका।

बुद्ध ने पूछा, "रामकुमार, यह तुम ने क्या किया?"

राजकुमार ने उत्तर दिया, "यह पौधा अभी से ऐसा कड़वा है, बढ़ने पर तो पूरा विष-वृक्ष ही बन जाएगा। ऐसे विषैले पेड़ को जड़ से उखाड़ फेंकना ही उचित है।"

अव बुद्ध ने गम्भीरवाणी में कहा, "राजकुमार! तुम्हारे कटु व्यवहार से पीड़ित जनता भी यदि तुम्हारे प्रति ऐसी ही नीति से काम लें तो तुम्हारी नीतिक्या होगी? यदि तुम फलना फूलना चाहते हो तो उदार, दयावान और लोकप्रिय बनो।"

उसी दिन से राजकुमार ने बुराई की राह छोड़ भलाई का मार्ग अपना लिया।

(– संकलन कर्त्ता विपिन कुमार शर्मा)

अरुणोदय

(रचयिता—'कुसुमाकर' फिरोजाबाद वर्तमान गुरुकुल वृन्दावन)

देश हत प्रभ था।
विभा का नहीं लेश जब—
ब्रिटिश-विशाल साम्राज्य भासमान था।
प्रबल-प्रचण्ड-मार्तण्ड आसमान में।
सारा आर्यावर्त पराधीनता पिशाचिनी के—
पंजों में पड़ा हुआ कराह आह भरता।
जातियों के जाल में विभिन्नता के पारावात—
बद्ध होके दासता के दाने चुगने लगे।
घृणित घटाएं घिर आईं यहां चारों ओर।
हो गई थी जागृत अभद्र भावनाएं घोर।
भारतीय सभ्यता का स्रोत हुआ मन्द था।
तूती बोलती थी यहां—पाधा ओ पुरोहितों की—
देव-मन्दिरों में देव-दासियां विराजती।
ईसा और मूसा की जमात जुड़ने लगी।
'मैकाले' के काले कारनामे कुत्सित क्रूर—
आर्य गुण गरिमा मिटाने कटिबद्ध थे—
रूप-रङ्ग-रक्त में भले ही भारतीय होंगे—
आन्तरिक भाव से बनेंगे सारे पश्चिमी।
अभिरुचि-सम्पति-चरित्र और चिन्तन में—
भारोपीय होंगे, यह घोषणा हुई थी यहां।
नारियां अनादृत दलित शूद्र तुल्य थीं—
वासना विलासी कहते थे-पग-जूतियां।
दीन इस्लाम भी बताता इन्हें खेतियां।
विद्या की बिभूति से विहीन हुई देवियां।
'शङ्कर' सरीखे महा दिग्गजों की घोषणा—
'द्वार नर्क लोक की' हमारी पूज्य नारियां—
मानव-समाज में न कोई अधिकार था।
नीच-ऊंच भावों से विभाजित स्वदेश था।

ईश्वरीय वाणी से विमुख हुये नारी-नर
वेद पढ़ने का अधिकार द्विज मात्र को।
देश में अविद्या आसुरी का बोल-बाला था।
आर्य संस्कृति का कलङ्कित सु-भाल था।
राष्ट्र पशुओं का दयनीय दृश्य देखा गया।
गाव-वंश-ध्वंस था, नृशंसता से चारों ओर।
नर-मेध, पशु-मेध, अश्व-मेध हो रहे।
मेध शब्द की भी थी विचित्र अर्थ योजना।
पाहिमाम्-पाहिमाम् की पुकार भी हो रही।
विषम परिस्थिति भी हुई आर्यावर्त की।
तब अन्तरिक्ष में—
प्रभूत—प्रतिभा का पूत—
उतर रहा हो नभ मण्डल से कोई दूत—
गात में समुद्र आत्-बल का भरे अकूत।
'शंकर' सा योगी—
भीम जैसा शक्तिशाली वह—
ब्रह्मचर्य बल में महान् हनुमान भीष्म।
राम-मर्यादा, कृष्ण जैसा नीतिवान था।
शौर्य्य था शिवा का, देशभक्ति थी प्रताप की बुद्ध सी विरक्ति—
अनुरक्ति त्याग-तप की।
ऋषि-मुनियों का आत्म ज्ञान आत्मसात् था।
बाल रवि रूप में—
अरुण किरणों को लिये—
पीन तन सज्जित—
क्षमा का करुणा का वर्म।
सत्य की सिरोही निर्भीकता से—
उदित हुये थे—लेके साथ।
इस पुण्य धरा-धाम पर,
आए वे गुणों से 'मूल शंकर' बने हुए।
किया उद्घोष यह—
कार्यम् वा साधयेय—
'शरीरं वा पातयेयम्'
हमको सिखाया जब—
'—कृण्वन्तो विश्वमार्यम्'

आर्य समाज शताब्दी वर्ष–

आर्य समाज और स्वतन्त्रता संग्राम

(ले० –डा० श्यामसिंह शशि एम० ए० पी० एच० डी० (समाज विज्ञान)

समाज व्यक्ति समूह का पर्याय है और आर्य सूचक है– श्रेष्ठता का। आर्य समाज इसी श्रेष्ठता की आधार शिला पर खड़ा है। पूरी एक शताब्दी गुजर गई किन्तु आर्य समाज अपने पथ पर अडिग रहा। समय के क्रूर झझावातो के समक्ष उसने घुटने नही टेके। उसने वैदेशिक सत्ता का डट कर मुकाबला किया। भारत के स्वतन्त्रता संग्राम में विजय प्राप्त की, तो दूसरी ओर सामाजिक बुराइयो को मिटाने के लिये उसने कई आन्दोलन भी छेड़े।

वेद विश्व के प्राचीन ग्रंथ माने जाते हैं। इन्हें केवल आर्य समाज अथवा हिन्दू धर्म से जोड़ना उपयुक्त नहीं। वेद का अर्थ है 'ज्ञान' और ज्ञान को किसी धर्म विशेष की चारदीवारी में बन्द करके नहीं रखा जा सकता। ज्ञान सम्पूर्ण मानव जाति के लिये होता है। अतः वेद भी समस्त विश्व की थाती है। आर्य समाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द ने विश्व की इस थाती को जन-जन तक पहुंचाने के लिये ही आर्य समाज की स्थापना की थी। वेदों के इस प्रचण्ड पण्डित का लक्ष्य था 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' अर्थात् सारा संसार आर्य (श्रेष्ठ) बने। वे ज्ञान को किसी वर्ग विशेष की धरोहर नहीं मानते थे। वस्तुतः जो यह कहते हैं कि आज के वैज्ञानिक युग में वेदों का महत्व नही, वे या तो वेदों की विषय सामग्री से अपरिचित हैं अथवा पश्चिम की भौतिक चकाचौंध मे भ्रमित हो गये है।

आर्य समाज के विगत सौ वर्षों के इतिहास पर यदि विहंगम दृष्टिपात करें तो हमारे सामने आर्य समाज की विविध कार्य प्रवृत्तियों के चित्र उभरने लगते हैं। शिक्षा, समाज सुधार अन्तर्जातीय विवाह विधवा विवाह, अनाथों की रक्षा अस्पृश्यता निवारण और इन सबसे आगे अंग्रेजी शासन के विरुद्ध लम्बा संघर्ष। वस्तुतः आर्य समाज को विभिन्न मोर्चों पर लड़ाई लड़नी पडी है।

राष्ट्रीय जागरण में आर्य समाज के योगदान की चर्चा करते हुये प्रसिद्ध विदेशी विद्वान् रोम्यां रोला ने कहा था—राष्ट्रीय पुनर्जागरण में महर्षि दयानन्द ने सबसे अधिक प्रबल शक्ति के रूप में कार्य किया। उनकी संस्था आर्य समाज ने बंगाल के १९०५ के विप्लव में महत्वपूर्ण योगदान किया था। दयानन्द सदैव सार्वजनिक रूप से यह घोषणा करते थे कि उनका समाज अराजनीतिक है किन्तु ब्रिटिश सरकार का निर्णय इससे भिन्न था। स्वामी दयानन्द राष्ट्रीय संगठन और पुनर्निर्माण के सर्वाधिक उत्साही मसीहा थे।

स्वामी जी ने राष्ट्रीयता को मानव एवं सद्धर्म के परिप्रेक्ष्य में रखा। उनका विश्वास था कि वेद यानी ज्ञान का पथ सच्चा मार्ग है। इस पथ पर बढ़ कर वसुधा एक परिवार में परिणित हो सकती है। संसार में शान्ति और सुख की वृद्धि हो सकती है।

श्रेष्ठ राज्य

गांधी जी ने रामराज्य की कल्पना की थी। स्वामी जी भी रामराज्य की भांति आर्य अर्थात् श्रेष्ठ राज्य की स्थापना चाहते थे। उन्होंने अपने सुप्रसिद्ध ग्रन्थ 'सत्यार्थ प्रकाश' में राजा के कर्त्तव्यों का सविस्तार उल्लेख किया। अंग्रेज शासक न केवल भ्रष्ट था बल्कि दूसरों की भूमि पर शासन कर रहा था अतः आर्य समाज ने उसका डट कर विरोध किया। स्वामी जी मानते थे कि अच्छे से अच्छे विदेशी राज्य से बुरे से बुरा स्वदेशी राज्य अच्छा होता है। इसी भावना ने आगे चल कर राष्ट्रीय आन्दोलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी।

सन् १९१९ तक आर्य समाज ने कांग्रेस की गतिविधियों में बहुत अधिक भाग नहीं लिया। आर्य समाज के महान नेता लाला लाजपतराय, स्वामी श्रद्धानन्द तथा भाई परमानन्द ने आर्य समाज को कांग्रेस के राष्ट्रीयता आन्दोलन में भाग लेने के लिए प्रेरित किया। यद्यपि इन नेताओं की कई मामलों में गांधी जी से कुछ मत-भिन्नता भी रही, लेकिन समूचे राष्ट्र हित की दृष्टि से आर्य समाज ने परिस्थितियों से भी कुछ सीमा तक समझौता किया। इतिहास इस बात का साक्षी है, कि आर्य समाज के अमर पुत्र भाई परमानन्द को आजीवन कारावास भोगना पड़ा था और उनके भाई बालमुकुन्द को फांसी की सजा दी गई थी।

बलिवेदी पर

मातृभूमि की बलिवेदी पर आर्य समाज के कितने वीरपुत्र शहीद हुए—एक लम्बी तालिका है। कांग्रेस और आर्य समाज राष्ट्रीयता आन्दोलन का पर्याय सा बन गये थे। रामप्रसाद विस्मिल जैसा क्रांतिकारी देश भक्त आर्य समाज की ही देन थी। 'सरफरोशी की तमन्ना अब हमारे में है' उनके जीवन का मूल मन्त्र बन गया था। उन्होंने हंसते-हंसते फांसी का फन्दा चूम लिया।

स्वामी श्रद्धानन्द ने आर्य समाज के स्वतन्त्रता संग्राम में सम्मिलित होने के लिये आवाहन किया तो देश के कोने-कोने से आर्य युवक-युवतियां उनके साथ हो लिये। उनकी अमर संस्था 'गुरुकुल कांगड़ी' सत्याग्रह आन्दोलन में किसी से पीछे नहीं थी। उल्लेखनीय है कि गांधी जी ने अपने आश्रम के लड़कों को कुछ समय के लिए गुरुकुल कांगड़ी में भेजा। इन लड़कों में गांधी जी के सुपुत्र देवदास गांधी भी थे, जो महीनों गुरुकुल में रहे थे। बाद में इन्होंने अफ्रीका में सत्याग्रह आन्दोलन चलाया था। वास्तव में गांधी जी स्वामी श्रद्धानन्द को बहुत मानते थे और उनकी कार्य-प्रमाणी से भी प्रभावित थे।

गांधी जी ने अफ्रीका से आने पर जब भारत में सत्याग्रह आन्दोलन छेड़ा तो स्वामी श्रद्धानन्द ने तुरन्त प्रतिज्ञा पत्र पर हस्ताक्षर कर दिये और अपने साथियों को आन्दोलन में सम्मिलित होने के लिए कहा। फलतः उत्तर-प्रदेश, पंजाब, दिल्ली तथा सभी प्रदेशों के आर्य समाजियों ने भी प्रतिज्ञा पत्र भर कर भेज दिए।

स्वामी श्रद्धानन्द ने ४ अप्रैल १९१९ को

हिन्दुओं तथा मुसलमानों को जामा मस्जिद पर लाकर एक कर दिया था। उन्होंने जामा मस्जिद पर अपना भाषण देने से पूर्व वेद मन्त्र पढ़ा तो उपस्थित जन-समुदाय ने एक स्वर में नारा लगाया—'हिन्दू-मुसलमानों की जय।' इस तथ्य का उल्लेख पंडित जवाहर लाल नेहरू ने भी अपनी 'आत्मकथा' में किया है।

लाला लाजपतराय ने भी हिन्दू मुस्लिम एकता पर काफी लिखा है। उनका कहना था कि हिन्दू, मुस्लिम, ईसाई, सिख तथा जैन—सब को पहले अपने आपको भारतीय कहना चाहिए फिर कुछ और। उन्होंने बताया कि हिन्दू-मुस्लिम झगड़े का मूल कारण है—अंग्रेजों की नीति—'फूट डालो और राज करो'। लाजपत राय आधुनिक भारत के अग्रगण्यम राजनैतिक नेताओं में से थे। संभवतः वे ही पहले लेखक थे जिन्होंने समाजवाद, पूंजीवाद तथा श्रम संगठन की समस्यायों पर प्रकाश डाला। उनकी कृतियां 'यंग इंडिया', 'इंग्लैंड डेब्ट टु इंडिया' तथा 'अनहैप्पी इंडिया' युग-युगों तक राजनीति शास्त्र के विद्यार्थियों का पथ प्रदर्शन करती रहेगी।

आर्यसमाज ने अनेक समाज सुधार सम्बन्धी कार्य किये। स्त्रियों की शिक्षा तो जैसे उस समय एक अपराध था। यदि आर्य समाज उस समय स्त्री-शिक्षा दिलाने का प्रचार न करता तो आज अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष में हमें सारे विश्व के सामने लज्जित होना पड़ता। वास्तव में स्वामी दयानन्द ने कन्याओं की शिक्षा को भी उतना ही अनिवार्य बताया जितना लड़कों की शिक्षा को। अनेक कन्या गुरुकुल इसीलिए खोले गए आर्य ललनाएं भी स्वतन्त्रता संग्राम से पीछे नहीं रहीं। उन्होंने स्वदेशी आन्दोलन में विदेशी वस्त्रों की होली जलाई और जेल यात्राएं भी कीं।

नये प्रश्न

आर्यसमाज की उपलब्धि पर विवेचन करते समय हमारे सामने कुछ प्रश्न उभर आते हैं। आर्य समाज की ओर नई पीढ़ी का रुझान क्यों नहीं है? आर्यसमाज का बोझ अधिकतर बूढ़े कन्धे ढो रहे है? क्या वे इसे स्वयं ढोने में आनन्द अनुभव करते हैं और यों नये लोगों को आगे लाना में अपनी प्रतिष्ठा के विपरीत समझते हैं? आर्य समाज ने अपना कार्य क्षेत्र दक्षिण भारत तथा सुदूर सीमा प्रांतों को क्यों नहीं बनाया? उल्लेखनीय है कि नागालैंड तथा मिजोरम आदि सीमा प्रदेशो में ईसाई मतावलम्बीय संस्थाओं को छोड़कर अन्य संस्थाओं का कार्य न के बराबर है। आर्य समाज की संस्थायें गुरुकुल तथा महाविद्यालय सरकारी से बन गए, किन्तु आर्य साहित्य को बदली परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य में मनोवैज्ञानिक पद्धतियों पर क्यों नहीं लिखाया गया? यह अच्छी बात हैं कि आर्य समाज ने खण्डनात्मक प्रचार पद्धति का परित्याग कर दिया। हां जाति व्यवस्था को पूरी तरह बदलने में सफलता नहीं मिली। गुण कर्मानुसार वर्ण व्यवस्था की भांति कतिपय अन्य बातें भी कथनी के विषय रह गये, करनीं के नहीं।

लेकिन आर्य समाज की यह सफलता क्या कम है कि वह एक राष्ट्रीय संस्था के रूप में आज भी जन जागरण में रत है। अनवरतरूप से बढ़ रही है आगे और आगे... ।

दिव्य ज्योति

(प्रणेता—श्री अम्बादान आर्य कवि कुटीर कुरड़ाया राज०)

बाम्बे वैदिक नाद गुंजाने,
आर्य सपूतों ! चलना होगा !

(१)

ऋषि के वर कर कमलों द्वारा, आर्य समाज स्थापना प्यारा !
उस दिन दिव्य ज्योति जगाने, घर से शीघ्र निकलना होगा !!
बाम्बे वैदिक नाद गुंजाने, आर्य सपूतों ! चलना होगा !!

(२)

सुन शताब्दी हर्ष हुआ है, अब पूरा सौ वर्ष हुआ है !
कर अतीत का चिन्तन हमको, सभी प्रकार सम्भालना होगा !!
बाम्बे वैदिक नाद गुंजाने, आर्य सपूतों ! चलना होगा !!

(३)

धन्य भाग शुभ अवसर आया, सुखद शान्तिप्रद सत्य सुहाया !
आ नहीं सकता फिर जीवन में, बैठे हाथ न मलना होगा !!
बाम्बे वैदिक नाद गुंजाने—आर्य सपूतो ! चलना होगा !!

(४)

पड़ा ऋषि का कार्य अधूरा, अब सब को पूरा !
विद्युत गति से अखिल-विश्व का, नक्शा तुम्हें बदलना होगा !!
बाम्बे वैदिक नाद गुंजाने, आर्य सपूतों ! चलना होगा !!

(५)

निपट शीघ्र घर के खट-पट से, करो तैयारी अब झट पट से !
'अम्ब'—अवश्य चल मित्रों संग, भूल न अवसर टलना होगा !!
बाम्बे वैदिक नाद गुंजाने, आर्य सपूतों ! चलना होगा !!

नारी जागरण में आर्य समाज की भूमिका

—लेखक कमला सिंघवी

सन् १९७५ अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष के रूप में सर्वत्र मनाया जा रहा है। नारी स्वतन्त्रता और नारी जागरण के चर्चे आज आम बात है। लगता है नारी स्वातन्त्र्य के इस आन्दोलन की प्रतिध्वनियां सुदीर्घ काल तक हमारे बीच रहेंगी कांग्रेस संसदीय दल की कार्यकारिणी ने भी अनुरोध किया है कि महिलाओं के साथ सभी प्रकार के भेदभावों को समाप्त किया जाए और उन्हे प्रत्येक क्षेत्र में पुरुषों के समान अधिकार मिल सके, इसके लिए कानूनी कार्यवाही की जाए। आवश्यकतानुसार सम्बन्धित कानूनों में संशोधन भी किए जाएं।

आर्य समाज ने इस दिशा में बहुत पहले ही अद्भुत कदम उठा कर, नारी मन में चेतना, जागृति और साहस की लहर उत्पन्न करने का प्रयत्न किया था। इस वर्ष जब कि आर्य समाज अपना शताब्दी समारोह मना रहा है नारी अधिकारों और नारी सुधारों के प्रति उसके योगदान और दृष्टिकोण दोनों का स्मरण होना ऐसे अवसर पर स्वाभाविक है। नारियों को जब परदे और घर की देहरी से आगे बढ़ने तक पर समाज ने प्रतिबन्ध लगा रखे थे उस समय आर्य समाज ने उनके विरुद्ध आन्दोलन छेड़ा था। कन्याओं के विद्यालय प्रारम्भ में जब आर्यसमाज ने खोले तो हिन्दुओं ने ही उसका यह कह कर विरोध किया लड़कियों को पढ़ा-लिखा कर मेम थोड़े ही बनाना है।

आर्य समाज ने समाज सुधार की श्रृंखला में भी नारियों की समस्या को प्राथमिकता दी और समाज में व्याप्त पारिवारिक कुरीतियों को समूल उखाड़ फेंकने के लिये कमर कस ली। हिन्दू महिलाओं की दयनीय दशा को देख कर रोना आता था। ईसाइयों ने तो कभी सिद्धान्त रूप ही नारियों में जीवात्मा नहीं मानी थी, पर हिन्दू समाज तो उसे प्रत्यक्ष व्यवहार में परिणत कर रहा था। महर्षि दयानन्द और उनके आर्य समाज ने हिन्दू समाज को एक नया क्रान्तिकारी दृष्टिकोण दिया जो आगे चल कर परिवर्तन के मोर्चे को सुदृढ़ करने में सहायक सिद्ध हुआ। स्वामी जी इस युग के उन महापुरुषों में थे जिन्होने एक मन्दिर के चबूतरे पर खेलती हुई ६ वर्ष की बालिका को देख कर अपना मस्तक झुका दिया। देखने वाले ने जब यह प्रश्न किया कि वैसे आप मूर्ति पूजा का खण्डन करते हैं किन्तु मूर्ति का यह प्रभाव है कि आपका मस्तक अपने आप झुक गया। उन्होंने उत्तर दिया-मैंने अपना माथा मूर्ति को नहीं झुकाया अपितु इस छोटी सी बालिका को झुकाया है। मैं इस का अभिवादन करके मातृ शक्ति का अभिवादन कर रहा हूं।

शिक्षा के क्षेत्र में पहल :—

नारियों की शिक्षा के क्षेत्र में भी आर्य समाज

ने युगान्तरकारी कार्यक्रमप्रस्तुत किये'स्त्री शूद्रोनाधी यातामिति श्रुति' वाली मनघड़न्त श्रुति को आर्य समाज के प्रवर्तक स्वामी दयानन्द जी ने कभी प्रमाणिक नहीं माना। बल्कि यजुर्वेद के आधार पर उन्होंने यह प्रतिपादित किया—"वेदों का प्रकाश ईश्वर ने सबके लिए किया है। अतः यह अनिवार्य हो जाता है कि लड़कों और लड़कियों को विद्वान और विदुषी बनाने के लिये तन-मन-धन से प्रयत्न किया जाए जिस से स्त्रियां भी वेदाभ्यास करके गार्गी, मैत्रेयी आदि की भान्ति विदुषी बन सकें और तेजस्वी व्यक्तित्व विकसित कर सकें।" स्त्रियों वे पढ़ने का निषेध आर्य समाज ने सदैव "मूर्खता, और स्वार्थपरता का परिचायक माना है। स्वामी जी के अनुसार विद्वान पति और अनपढ़ एवं असंस्कृत पत्नी गृहस्थी की गाड़ी को सुचारूरूप से कदापि नहीं खींच सकते। शिक्षित नारी ही अपने अधिकारों के प्रति मूल रूप से जागरूक रह सकती है। इसीलिए उन्होंने पुरुषों के समान स्त्रियों को भी व्याकरण, धर्मशास्त्र, आयुर्वेद, गणित, शिल्प आदि सभी शिक्षाओं के लिए योग्या ठहराया।

१९वीं सदी के मध्य भाग में परदे की प्रथा तेजी से बढ़ रही थी। वेद और बाईबल तक में स्त्रियों में पर्दे की प्रथा का उल्लेख नहीं मिलता। मुगल शासन काल की देन के रूप में इस कुप्रथा ने स्त्रियों की स्वतन्त्रता का हरण किया। आर्य समाज ने स्त्री शिक्षा के साथ-साथ इस ओर भी ध्यान दिया और सार्वजनिक कार्यक्रमों एवं समारोहों में स्त्रियों की उपस्थिति पर बल दिया। धीरे-धीरे आर्यो के प्रयत्नों से पर्दे की प्रथा एक ढोंग समझी जाने लगी और आर्य स्त्रियां इसे अपना अपमान समझने लगीं।

सती प्रथा के विरुद्ध भी आर्य समाज ने अपनी बुलन्द आवाज उठाई और विधवाओं के मन और मस्तिष्कों पर नई चेतना के बीज अंकुरित किये उन्हें नव-जीवन और नव दिशा मिल सके, इसके लिये पुर्नविवाह की व्यवस्था करने का प्रयास किया और उसे अपना सम्पूर्ण क्रियात्मक समर्थन दिया।

बाल-विवाह के सम्बन्ध में सहस्रों कठिनाइयों एवं बाधाओं के बावजूद आर्य समाज ने प्रगतिशील कदम उठाकर इस कुरीति के विरुद्ध अभियान छेड़ा था। धीरे-धीरे विवाह योग्य आयु का स्तर ऊंचा होता गया और बहुत छोटी आयु के विवाह लगभग बन्द होने लगे। सैंट्रल असेम्बली में राजस्थान के प्रसिद्ध आर्य समाजी नेता दीवान बहादुर हरविलास जी शारदा ने तो इसके लिये कानून भी बनवाया था। आर्य समाज का कहना था बाल्यावस्था में विवाह से जितनी हानि पुरुष की होती है उससे अधिक स्त्री की होती है। जैसे कच्चे खेत को काट लेने से अन्न नष्ट हो जाता है, कच्चे फल और ईख में मिठास नहीं होती, ठीक उसी तरह छोटी आयु में जो अपनी सन्तानों का विवाह कर देते हैं उनका वंश बिगड़ जाता है। बाल-विवाह की तरह वृद्ध विवाह को भी बुरा माने जाने लगा और लोग वृद्ध के लिये कुमारी कन्या से विवाह को त्याज्य मानने लगे।

आर्य समाज ने बहु-विवाह का भी जमकर विरोध किया और एक विवाह के आदर्श सिद्धांत का प्रतिपादन किया। यही नही आर्य समाज ने स्त्रियों में जागृति के लियें यह सन्देश भी दिया कि विवाह के लिये केवल माता-पिता की अनुमति ही पर्याप्त नहीं बल्कि वर-कन्या की अनुमति को प्राथमिक मान्यता दी जानी चाहिये।

परिवार में नारी की प्रतिष्ठा के विषयमें स्वामी जी पूर्णतया मनु से सहमत थे कि 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्तेतत्र देवता:' उन्होंने जननी का स्थान सर्वोपरि मानकर नारी गौरव को सदा के लिये अक्षुण्ण बना दिया।

दहेज कीं अग्नि से दग्ध समाज को आर्य समाज ने शीतल छीटे दिये और दहेज के परिणामों की ओर समाज का ध्यान आकर्षित किया। बिना दहेज के गरीब घरों की जिन कन्याओं के हाथ पीले नहीं हो पाते थे उन्हें आर्य समाज का आन्दोलन वरदान बनकर आया।

इस प्रकार आर्य समाज ने परम्परा को संशोधित रूप दिया और इस गलत धारणा को निर्मूल कर दिया कि भारतीय धर्म और संस्कृति में नारी के स्वतन्त्र विकास और गौरव के लिये कोई स्थान नहीं है। स्वामी जी ने महिलाओं की मर्यादा और शालीनता की सुरक्षा रखते हुये उसकी मुक्ति और विकास का मार्ग प्रशस्त किया। यह स्मरणीय है कि दयानन्द जी ने जिस युग में नारी जागरण का शंखनाद किया था उस समय हमारा समाज विकृत और पतनोन्मुख था। भारत राजनैतिक दासता के कारागार में बन्दी था हम स्वयं अपने भाग्य विधाता नहीं थे। किन्तु अज्ञान के अंधेरे को चीर कर स्वामी जी का उज्ज्वल सन्देश अरुणोदय बनकर भारतीय आकाश पर छा गया। स्वामी जी की कल्पना एक विवेकशील और गतिशील समाज की कल्पना थी, एक ऐसे समाज की कल्पना थी जो अपने अतीत के गौरव को आत्मसात कर सके और उसी के अनुरूप एक नये भविष्य का निर्माण कर सके। आज जब कि हम स्वतन्त्र और स्वाधीन हैं, नये समाज की संरचना में संलग्न हैं और नारी स्वतन्त्रता के आधारभूत सिद्धान्त को स्वीकार कर चुके है, एक बार फिर वर्तमान परिप्रेक्ष्य में स्वामी दयानन्द जी के सन्देश की संजीवनी शक्ति को सामाजिक जीवन में ग्रहण करने की अपेक्षा है, नारी जागरण के मर्म की विवेक के साथ व्याख्या की जरूरत है।

वार्षिकोत्सव

गुरुकुल कांगड़ी विश्व विद्यालय का ७५वां वार्षिकोत्सव १९ से २१ अप्रैल तक बड़ी धूम-धाम के साथ मनाया जा रहा है, जिसमें देश के बहुत से नेता, संन्यासी महात्मा तथा विद्वान् सम्मिलित होंगे। गुरुकुल अपने खर्च के लिये प्रधानतया जनता के दान पर ही निर्भर करता है। गुरुकुल के लिये धन एकत्र करने के प्रयोजन से डा० मेजर मेहता एक अप्रैल को दिल्ली, बड़ौदा, बम्बई आदि के दौरे पर जा रहे हैं। वे गुरुकुल के लिये धन एकत्र करने के साथ-साथ धर्म का प्रचार भी करेंगे। जनता से प्रार्थना है कि वह इस शुभ कार्य से डा० हरप्रसाद जी मेहता को पूर्ण सहयोग प्रदान करने की कृपा करें।

—सत्यकेतु कुलपति

आर्य समाज से

(रचयिता—प्रो० उत्तमचन्द जी शरर एम० ए०)

मेरे समाज प्यारे समाज———
ऋषिबर के मानस की धड़कन, युग-युग तक तेरा अचल राज,
मेरे समाज प्यारे———
गङ्गा सम शुचि पावन शरीर, तुम तीर्थ राज के विमल तीर,
सिन्धु सम तब गर्जन गम्भीर, तुम परम सन्त, तुम परम वीर,
शत्रु के काल अबला की लाज —मेरे समाज प्यारे———
तुम रामचन्द्र के विमल गान, तुम चक्र सुदर्शन के समान,
गोविन्द सिंह की तुम कृपाण—तुम दयानन्द के वेद ज्ञान,
जगती में तुझ सा कौन आज —मेरे समाज प्यारे———
शिरं में ले श्रुति सुधा गङ्गा—मस्तक में शीतल चन्द्र विभा.
अरि सर्पों को भी गले लगा, विष पी-पी कण्ठ हुआ नीला,
शंकर सा तुमने किया साज —मेरे समाज प्यारे———
ओ विश्व बना, जग उद्बोधक अंग जग में वेद ज्ञान वितरक,
सत्यानृत के सच्चे शोधक —है तेरी महिमा का द्योतक,
भारत ने जो पाया स्वराज —मेरे समाज प्यारे——

ओं महा शक्ति' ओ महातपी,
ओ आर्य वीरों की हृदय निधि—
ओ प्रखर सूर्य सम तेजस्वी,
टूटेगी कब यह चिर समाधि ?
अंगड़ाई लेकर जाग आज,
मेरे समाज प्यारे समाज———

आर्य समाज के संस्थापक—
स्वामी दयानन्द सरस्वती

—अक्षय कुमार जैन

भारत की यह खूबी रही है कि जब जब और जिस-जिस प्रकार के व्यक्तियों की राष्ट्र को जरूरत पड़ी, तब-तब वैसे ही राष्ट्र नेताओं का आविर्भाव हो गया। महात्मा बुद्ध, महावीर, शंकराचार्य, विवेकानन्द की परम्परा में ही स्वामी दयानन्द भी आते है, जिन्होंने देश को रूढ़ियों में बढ़ते जाने से बचाया। उन्हीं के शब्दों में मेरा देश जो संसार भर का शिक्षक रहा, संसार भर में धनीमानी रहा, संसार भर में सत्य और सदाचार में अनुकरणीय रहा, किसी प्रकार पुनः अपना वही पहला उच्च स्थान प्राप्त करें यही मेरे हृदय की अभिलाषा है। इसी अभिलाषा को पूरा करने में उन्होंने जीवन भर लगा दिया। वह जीवनपर्यंन्त अखण्ड ब्रह्मचारी रहे किन्तु गृहस्थों के दुखों का मान करके उन्होने उन्हे भी उपदेश दिये।

यह संयोग की बात है कि महात्मा गांधी की तरह स्वामी दयानन्द भी गुजरात के रत्न थे। भारत के पश्चिमी भाग में सौराष्ट्र नामक प्रदेश है। उसे काठियावाड़ कहा जाता है। स्वराज्य से पहले गुजरात प्रदेश में मोखी नाम का एक देशी राज्य था जिसके टंकारा नगर के जीवापुर मुहल्ले में महर्षि दयानन्द का जन्म हुआ।

स्वामी जी के बचपन का नाम मूलशंकर था। उनके पूर्वज त्रिवाड़ी (त्रिपाठी) ब्राह्मण थे। पं० दर्शन जी के घर विक्रम सम्वत १८८१ (सन् १८२४) में महर्षि का जन्म हुआ। दयानन्द अपने पिता की ज्येष्ठ सन्तान थे। नाम उनका मूलशंकर रखा गया, किन्तु दुलार में उन्हें दयाराम भी कहा जाता था।

इस प्रकार मुलशंकर का जन्म एक प्रतिष्ठित ब्राह्मण कुल में हुआ। यही कारण है कि गृह त्यागी होने पर अनेक बार ऐश्वर्य-भोग के प्रलोभन मिलने पर भी दयानन्द अपने व्रत से न डिगे! ओखी मठ के महन्त को एक बार उन्होंने स्पष्ट उत्तर दिया था—"यदि मैं धन सम्पत्ति का इच्छुक होता तो पितृ-गृह छोड़ कर कभी न आता क्योंकि मेरे पिता की सम्पत्ति इस मठ की सारी दौलत से किसी प्रकार भी कम नही है।"

उनके पिता कर्शन जी धर्म के प्रति दृढ़ आस्थावन थे। वह शिव के परम भक्त, तेजस्वी और कठोर स्वभाव के पुरुष थे। कर्शनजी की धर्म परायणता का एक और प्रमाण डेमी नदी के किनारे उनका बनवाया हुआ कुबेरनाथ महादेव मन्दिर मौजूद है।

मूलशंकर का विद्यारम्भ पांच वर्ष की आयु में हुआ । माता-पिता और अन्य वयोवृद्ध अभिभावक कुल की प्रथा के अनुसार उन्हें शिक्षा देने लगे और उस काल में उन्होंने बहुत से श्लोक और मन्त्र कंठस्थ कर लिए । उपनयन संस्कार के बाद आठ वर्ष की आयु में ही सन्ध्योपासना आदि कार्यों का नियम पूर्वक पालन करना उन्होंने शुरू कर दिया । पिताजी की धर्मनिष्ठता के कारण दस वर्ष की आयु में ही मूल जी को पार्थिव पूजा का आदेश दिया गया ।

स्वामी जी की तीक्ष्ण बुद्धि का पता इस बात से चलता है कि चौदहवे वर्ष में पदार्पण करने से पहले ही व्याकरण और शब्द रूपावली का अभ्यास करके उन्होंने समस्त यजर्वेद तथा अन्य वेदों के भी थोड़े अंश कंठाग्र कर लिए थे ।

चौदह वर्ष की आयु में ही कुल की प्रथा के अनुसार उनके वाग्दान की तैयारियां होने लगी । पिता अधिक शिक्षा के पक्षपाती न थे । वह चाहते थे कि पुत्र उनकी भांति जमीदारी करे और सद्गृहस्थ बने, किन्तु पुत्र काशी जाकर उच्च-शिक्षा प्राप्त करना चाहता था । वाग्दान तो स्थगित करने को पिता राजी हो गये पर काशी भेजने की बात उन्होंने अस्वीकार कर दी ।

महर्षि के प्रारम्भिक जीवन में ऐसी घटना घटी जिसके कारण वह विरक्त हुए और उन के मस्तिष्क में प्रकाश का उदय हुआ । इस घटना से उनमें मूर्तिपूजा के प्रति अविश्वास जागा । यह घटना उस समय घटी जब मूलशंकर कुल तेरह वर्ष के थे । शिवरात्रि को धर्मनिष्ठ पिता ने उन्हें वृत रखने का आदेश दिया । मूल जी ने विधिपूर्वक उपवास रखा और अन्य साथियो सहित नगर से बाहर बने शिवालय में पूजा के लिये पहुंचे । शिवरात्रि में चार पहर में चार बार पूजा का विधान है । इस बीच पुजारी को सोना नहीं चाहिये । बालक मूल जी का यह पहला ही अवसर था, इसलिये वह बहुत सावधान रहा कि उसे नींद न आये ।

दूसरे पहर की पूजा समाप्त होने पर मूल जी ने देखा कि मन्दिर के वृतधारी पुजारी और उपासक मन्दिर के बाहर जाकर सो रहे हैं । यहां तक कि धर्मनिष्ठ पिता भी इस वृत का पालन न कर सके और जब उस शिवरात्रि के उपासकों में अकेला मूल जी ही जाग रहा था तो उसने देखा कि एक बिल में से एक चूहा बाहर निकला और महादेव की पिंडी पर चढ़ाई हुई अक्षत आदि सामग्री को खाने लगा । स्वतन्त्रतापूर्वक वह महादेव की मूर्ति के ऊपर भी घूम लेता था ।

इस घटना को देखकर मूल जी के मन में सन्देह उत्पन्न हुआ । स्वयं स्वामी जी के शब्दों में—'देखते-देखते मेरे मन में आया कि यह क्या है? जिस महादेव की शान्त पवित्र मूर्ति की कथा, जिस महादेव में प्रचण्ड पशुपतास्त्र की कथा और जिस महादेव के विशाल वृषारोहण की कथा गत दिवस वृत के वृत्तान्त में सुनी थी, क्या वह महादेव वास्तव में यही हैं?"

अपने सन्देहों को वह देर तक न झेल सके । पिता की कठोरता, धर्म-परायणता और शिव-भक्ति से वह परिचित थे । धर्म के कठोर वाह्‌य विधानों के प्रति अपनी अनास्था को अपनी शारीरिक दुर्बलता का परिणाम मानना इस आयु में स्वाभाविक था । सम्भवतः इसी कारण उन्होंने स्पष्ट विरोध न किया । पर बालक का मन शान्त न रह सका । वह सोच रहा था कि सच्चे शिव के अभाव में ही इन शिव भक्तों का मन वास्तविक पूजा पाठ से पराङ्‌मुख है । वृत के महात्म्य

को जानते हुए भी उनमें निद्रा आदि के शैथिल्य का भी कदाचित यही कारण है। बालक मूलशंकर ने मन में तय किया कि यथार्थ महादेव का दर्शन किए बिना में मूर्ति की पूजा नहीं करूंगा। इस निश्चय के बाद उसे नींद भी आने लगी और भूख भी सताने लगी। पिता ने अविश्वासी पुत्र को अधिक देर रोकना उचित न समझ कर भेजने की आज्ञा दे दी। रात का समय, तीन कोस का फासला, इसलिये एक सिपाही के साथ मूल को घर भेज दिया पर व्रत भंग न हो यह कहना वह न भूले।

पढ़ने के लिये काशी न भेजकर गांव से थोड़ी दूर पर ही अध्ययन की व्यवस्था की गई थी, किन्तु इसी बीच मूल जी के विवाह की तैयारियां हुई और पिता को पुत्र का इनकार मिलने पर उन्हें गांव में ही बुला लिया गया। उधर विवाह की तैयारियां हो रही थी तो एक दिन शाम को बिना किसी के कहे-सुने मूलशंकर ने २२ वर्ष की आयु में सदा के लिये घर का त्याग कर दिया।

घर से चलकर चार कोस दूर एक गांव में उन्होंने रात बिताई। पास पड़ोस में विख्यात लाला भक्त के पास वह पहुंचे, किन्तु वहां पर भी उनके ज्ञान की प्यास न बुझी। भगवां वस्त्र पहने मूलजो तीन महीने तक वैरागियों के साथ इधर-उधर घूमते रहे. फिर सिद्धपुर के मेले में वह पहुंचे। वहां पर उनके एक गाव वासी ने उन्हें पहचान लिया और पिता को सूचना दे दी। पिता ने वहां पहुंच उन्हें पकड़ लिया।

पिता चाहते थे कि पुत्र गृहस्थ बने, पर पुत्र योगाभ्यास करके मृत्यु-यन्त्रणा से मुक्ति पाना चाहता था। तीन दिन पिता की कैद में रहकर, चौथी रात को तीन बजे वह पहरेदारों के सो जाने पर निकल पड़े और फिर घर न लौटे। चौदह वर्ष तक वह अमृत की खोज में दत्तचित्त रहे। आठ साल तक नर्मदा के तट पर योगाभ्यास करते रहे। इसी बीच उन्होंने संन्यासी का विधिवत रूपधारण किया और नियमानुसार उनका नाम मूलशंकर से दयानन्द रखा गया।

नर्मदा तट से वह उत्तराखण्ड की यात्रा पर गये। हरिद्वार में उन्हें तांत्रिक पण्डितों, जंगम सम्प्रदाय आदि अनेकों साधु सम्प्रदायों का परिचय हुआ। ज्ञान के लिये गुरू की खोज में दयानन्द मथुरा पहुचे जहां उन्होंने दंडी स्वामी विरजानन्द को प्राप्त कर लिया।

दयानन्द की असली शिक्षा यहां पर हुई। ग्रंथ अध्ययन के अलावा गुरूशिष्य में वार्तालाप भी हुआ करता था। इस वार्तालाप में आर्यावत में पुनरुत्थान की चर्चा होती थी। दंडीजी की पाठशाला में दयानन्द ने लगभग तीन वर्ष तक अध्ययन किया। स्वामी विरजानन्द की शिक्षा-दीक्षा ने ही स्वामी दयानन्द को आदर्श सुधारक बना दिया। कहते हैं जब दयानन्द चलने को हुए तो उन्होंने गुरु दक्षिणा के रूप में आधा सेर लौंग गुरु की भेंट की, पर गुरु ने आर्शीवाद देने हुए कहा—"मैं तुम्हारे जीवन की दक्षिणा चाहता हूं। प्रतिज्ञा करो कि जब तक जीवित रहोगे आर्ष ग्रन्थों का प्रचार, अनार्ष ग्रन्थों का खण्डन तथा वैदिक धर्म की स्थापना के हेतु अपने प्राण तक न्योछावर कर दोगे। ऋषि दयानन्द ने तथास्तु 'कह गुरु की आज्ञा शिरोधार्य की।

उसके बाद ऋषि दयानन्द ने देशभर का दौरा किया। वह राजे—रजवाड़ों में गये और जहां अनेक राजा-महाराजा उनके भक्त हो गये वहां कुछ नरेश अप्रसन्न भी हुए, पर उनकी चिन्ता उन्होंने नही की। उनके विरोधियों ने उन की

हत्या कराने के यत्न किये, किन्तु अन्त में उन्हें मुंह की खानी पड़ी। कर्णवास की घटना सर्वविदित है जहां हत्या करने के लिए आने वाला स्वामीजी के चरणों में गिर गया। बड़े-बड़े धुरंधर पण्डितों से उनका शास्त्रार्थ हुआ। उनकी दृढ़ता का सिक्का उनके विरोधियों ने भी माना।

स्वामी जी की सेवा के लिए कल्लू कहार नामक एक नौकर रहता था। वह स्वामी जी के सामान की चोरी करके भाग गया षड्यन्त्र का आरम्भ वहीं हो गया। ३० सितम्बर १८८३ को यथा नियम स्वामी जी दूध पीकर सोये, किन्तु कुछ देर बाद ही उन्हें उदरशूल हो गया और उनकी निद्रा भंग हो गई जी मचलाने लगा और तीन बार वमन हुआ। सुबह हुई डाक्टर बुलाया गया, उसने दवा दी किन्तु लाभ न हुआ तथा दिन में कई दस्त हुए।

१६ अक्तूबर तक डाक्टरी चिकित्सा चलती रही, किन्तु रोग बढ़ता ही गया। उसी दिन महर्षि को आबू भेजने का निर्णय हुआ। उन्हें डोली में ले जाया गया, किन्तु मार्ग लम्बा था। आबू पर्वत की चढ़ाई। किसी प्रकार वहां पहुंचे, किन्तु दशा बिगड़ती देख उन्हें अजमेर लाने का निर्णय किया गया।

२६ अक्तूबर को प्रातः स्वामी जी अजमेर पहुंचे। चिकित्सा की गई, किन्तु दशा चिन्ताजनक हो गई। ३० अक्तूबर को ११ बजे से ही श्वास की गति बढ़ गई। उनकी इच्छानुसार औषधि बन्द कर दी गई और उसी दिन सायंकाल ऋषि का देहावसान हो गया।

महर्षि दयानन्द पहले व्यक्ति थे जिन्होंने राष्ट्र के लिए एक भाषा की बात कही। गुजराती भाषा-भाषी होते हुए भी उन्होंने हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने का उपदेश दिया। उनकी महत्ता इसलिये भी है कि उन्होंने राष्ट्रीय दृष्टिकोण अपनाया। उस समय जो रूढ़िवादिता फैल रही थी स्वामी जी ने वैज्ञानिक और विवेकशील दृष्टिकोण अपनाने का मार्गदर्शन किया। वह गुजरात के होकर वहां बंध कर न रहे और समग्र भारत के हो गये। साम्प्रदायिक न थे, जो कुछ सोचा वह राष्ट्र को उन्नत करने के लिए था और उसी में उन्होंने अपना जीवन अर्पण कर दिया।

आज उन द्वारा स्थापित आर्य समाज को पूरे १०० वर्ष हो गये हैं। इस अवसर पर आर्य समाज के माध्यम से समाज सुधार व हिन्दी के प्रचार व प्रसार के महान यज्ञ में आहुति देना प्रत्येक भारतीय का परम कर्तव्य है।

शताब्दी समारोह

★ आर्य समाज दीनानगर (गुरदासपुर) में शताब्दी समारोह मना रहे हैं। प्रतिदिन नगर में प्रभातफेरी निकाली जायेगी। १२ अप्रैल को विशाल जलूस निकलेगा।

★ आर्य समाज, राजपुरा प्रताप बाग दिल्ली ९ में प्रतिदिन पारिवारिक सत्संग किये जा रहे हैं। जिनमें यज्ञ का आयोजन होता है।

६ से १२ अप्रैल तक आर्य समाज मन्दिर में यजुर्वेद पारायण यज्ञ होगा ! १२ को यज्ञ की पूर्णाहुति के बाद प्रीतिभोज होगा। इसके बाद बसों से शोभायात्रा निकलेगी।

गायत्री मन्त्र, और संगठन सूक्त लोहे प्लेट पर मुफ्त भेंट किये जाएंगे।

सार्वभौम संगठन-आर्य समाज

(लेखक :आचार्य भगवानदेव शर्मा उपमन्त्री-सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा महर्षि भवन नई दिल्ली)

१६ वीं शताब्दी में जब मानवता कराह रही थी। सारा संसार अज्ञान, दम्भ, द्वेष, शोषण की आग में जलता हुआ नजर आ रहा था। मानवता पथभ्रष्ट होकर यत्र-तत्र प्रकाश का आश्रय पाने के लिए भटक रही थी। ऐसी विषम परिस्थितियों में एक महान् ज्योतिधर दिव्य दिवाकर दयानन्द का प्रादुर्भाव हुआ जिन्होने सारे संसार का उपकार करने के उद्देश्य से वेद के आधार पर एक सार्वभौम संगठन की सन् १८७५ में सर्वप्रथम बम्बई में नीव डाली जिसका नाम था-आर्य समाज। क्या है ? इस का उत्तर अमेरिका के महान् परोक्षदर्शी विद्वान ऐन्ड्रूज शब्दो में :—

मुझे एक आग दिखायी पड़ती है जो सर्वत्र फैली हुई है-अर्थात् असीम प्रेम की आग जो कि द्वेष को जलाने वाली है और प्रत्येक बस्तु को जलाकर शुद्ध कर रही है। अमेरिका के शीतल मैदानों, अफ्रीका के विस्तृत देशों, ऐशिया के प्राचीन पर्वतों और यूरोप के विशाल राज्यों पर मुझे इन सबको जलाने वाली और इकट्ठा करने वाली आग की ज्वालाएं दिखायी देती हैं। इस की चर्चा निम्नस्थ देशो से उठी है। अपने सुख और उन्नति के लिए इसे मनुष्य ने स्वयं प्रज्वलित किया है।

हिन्दू और मुसलमान इस प्रचण्ड अग्नि को बुझाने के लिए चारों ओर वेग से दौड़े परन्तु यह आग वैसे वेग से बढ़ती गई जिस का इस के प्रकाशक स्वामी दयानन्द को ध्यान भी नही था। और ईसाइयों ने भी जिनके मत की आग और दीपक जो पहले पूर्व में ही प्रकाशित हुए, ऐशिया के इस नये- प्रकाश के बुझाने में हिन्दुओं और मुसलमानों का साथ दिया, पतन्तु यह ईश्वरीय आग और भी भड़क उठी और सर्वत्र फैल गई।

सम्पूर्ण दोषों का संघ नित्य की शुद्ध करने वाली भट्ठी में जल कर भस्म हो जाएगी, यहां तक कि रोग के स्थान में आरोग्य, झूठे विश्वासों की जगह तर्क, पाप के स्थान में पुण्य, अविद्या की जगह विद्या एवं विज्ञान, द्वेष को जगह मित्रता वैर की जगह समता, नर्क के स्थान मे स्वर्ग, दुःख की जगह सुख, भूत, प्रेतो के स्थान में परमेश्वर और प्रकृति का राज्य हो जाएगा। मैं इस अग्नि को मागलिक समझता हू। जब यह अग्नि सुन्दर पृथ्वी को नवजीवन प्रदान करेगी तो सार्वजनिक सुख, अभ्युदय और आनन्द का युग आरम्भ हो जाएगा। यह आग एक भट्ठी मे थी जिसे आर्य समाज कहते है। यह आग भारत के परम योगी दयानन्द के हृदय में प्रज्वलित हुई थी।

इसमें कोई सन्देह नही कि महर्षि दयानन्द महान् सूक्ष्मदर्शी दिव्यद्रष्टा युगपुरुष थे उन्होंने

मानव जाति की धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक चेतना को जागृत करने के लिए अपने परिवार को भी तिलाञ्जलि देकर परिवर्तन और लेखनी से असत्य अज्ञानता से लोहा लिया। प्रजातन्त्र शासन पद्धति के आधार पर आध्यात्मिकता से परिपूर्ण धर्म, संस्कृति की आधार-शिला पर राष्ट्रीयता के सुन्दर, सुदृढ़, अजेय दुर्ग के निर्माण की अभूतपूर्व योजना बनाई। सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए-जैसे सार्वभौम दस नियमों को बनाकर मानवता का महल खड़ा करने के लिए जिस समाज की स्थापना महर्षि दयानन्द ने की मौलाना जहूरबख्श ने उनका मूल्याकन करते हुए कहा :—

ऋषि दयानन्द विश्वामित्र अर्थात् विश्व के मित्र थे। उनका प्रेम सार्वभौम था। उनके हृदय में सबके लिये समान प्रेम था। ऋषि दयानन्द ने कब और कहा अन्य धर्मों पर घृणात्मक दृष्टि की है—मुझे तो इसका पता नही लगता। उन्होने यह तो कही नही कहा कि अमुक धर्म घृणा के योग्य है। अतः उस धर्म के अनुयायी उसे मानना छोड़ दें। उन्होंने उसके सत्यार्थ प्रकाश में अन्य धर्म सम्बन्धी जिन ग्रन्थों की आलोचना की है वह उस के विचार स्वातन्त्र्यके सुन्दर उदाहरण है। विचार स्वातन्त्र्य से घबराना पूरी कायरता है। यदि ऋषि ने सत्यार्थ प्रकाश में स्वतन्त्र आलोचना की है तो पुण्य कार्य ही किया है। अन्य विचार वालों को उस पर स्थिर चित्त से विचार करना चाहिए। यदि ऋषि द्वारा बतलाये गये दोष ठीक जचें तो प्रसन्नता पूर्वक अपने धर्म का संस्कार करें इससे तो उन्नति ही होगी। ऋषि की प्रवृत्ति में भविष्य प्रेम की विमल धारा प्रवाहित हो रही थी। वसुधैव कुटुम्बकम् आर्य समाज ने व्यक्ति वाद पर आधारित परम्परागत मान्यताओं को न मानकर वेद के आधार पर मानव की बुद्धि की कसौटी पर कसकर कोई निर्णय अथवा कार्य करने की प्रेरणा दी। यही कारण है कि पंजाब केसरी लाला लाजपतराय ने कहा—

संसार में मैंने केवल उन्हें ही गुरु माना है। स्वामी दयानन्द मेरे गुरु है। आर्य समाज मेरी माता है। इन दोनों की गोद में मैं खेला हूं। मेरे हृदय और मस्तक दोनों को उन्होंने घड़ा है। इन दोनों ने मुझे स्वतन्त्रता पूर्वक विचार करना सिखाया है। आर्य समाज ने मुझे प्राचीन आर्य सभ्यता का मान करना सिखाया है। आर्य समाज ने मुझे कुर्बानी का मार्ग दिखलाया। आर्यसमाज ने मेरे अन्दर सत्य धर्म स्वतन्त्रता की रूह फूंकी आर्य समाज ने मुझे संगठन का पाठ पढ़ाया। आर्य समाज ने शिक्षा दी कि समाज, धर्म और देश की सेवा करनी चाहिये और उनकी सेवा में जो मनुष्य बलिदान होता है और दुःख उठाता है, उसे स्वर्ग का राज्य मिलता है।

आर्यसमाज का संगठन लोकतन्त्र पर आधारित श्रेष्ठतम संगठन है। यही कारण है कि आजाद हिन्द फौज के सेनापति सुभाष चन्द्र बोस को एक बार कहना पड़ा—संगठन कार्य, दृढ़ता, उत्साह और समन्वयात्मकता की दृष्टि से आर्यसमाज की समता कोई समाज नही कर सकता।"

आर्यसमाज ने देश विदेश में अनेक परोपकार के कार्य किये। उनके उपकारों को ध्यान में रखते हुए सर ऐडवर्ड डग्लास मैकमैलन ने कहा :—

"आर्य समाज राजनैतिक सभा या सोसाइटी नहीं परन्तु यह एक धार्मिक समाज है। आर्य समाज बाल-विवाह का विरोध करती है,

विधवा-विवाह की सहायक और स्त्री-शिक्षण की प्रचारक है। यह अनाथालय, पाठशालाएं चिकित्सालय और अनेक लाभदायक संस्थायें स्थापित करती है। आर्य समाज का संगठन बहुत ही उत्तम है। उस पर यह दोष लगाया जाता है कि वह सामाजिक रूप से अपने सदस्यों की चेष्टाओं को राजकीय क्षेत्र में पूरी सहायता दे रही है, परन्तु आर्य समाज राजनैतिक सभा या सोसायटी नहीं है।

स्वतन्त्रता से पूर्व संगठित रूप से जनता से सीधा सम्पर्क करने का श्रेय आर्य समाज को देते हुए महात्मा गांधी ने कहा था कि :—

"ब्रिटिश राज्य स्थापित होने के पश्चात् जनता के साथ सीधा सम्पर्क रखने का मार्ग महर्षि दयानन्द ने खोज निकाला। इसका यश महर्षि दयानन्द और उनकी आर्य समाज को प्राप्त है। महर्षि दयानन्द तथा उनकी आर्य समाज ने प्रजा में नवचेतना पैदा की है। हिन्दू समाज की त्रुटियों को दूर करने का प्रयत्न किया है। राष्ट्रीय शिक्षण, स्त्री-शिक्षण तथा दलितोद्धार आदि न भुलाई जा सकेंगी— ऐसी राष्ट्र कीं महान सेवा की है। मुझे आर्य समाज बहुत प्रिय है।"

संकीर्ण भाव रखने वाले साम्प्रदायिक लोगों ने आर्यसमाज तथा महर्षि दयानन्द को साम्प्रदायिक कहा। परन्तु महर्षि दयानन्द के समकालीन अलीगढ़ यूनिवर्सिटी के संस्थापक प्रसिद्ध मुस्लिम नेता सर सैयद अहमद खां ने महर्षि दयानन्द की मृत्यु के पश्चात् ६ नवम्बर १८८३ को अलीगढ़ इन्स्टीट्यूट मैग्जीन में लिखा :—

"निहायत अफसोस की बात है कि स्वामी दयानन्द साहब ने जो संस्कृत के बड़े विद्वान और वेदों के बहुत मुहविवक्क (समर्थक) थे, ३० अक्तूबर ७ बजे शामको अजमेरमें इन्तकाल किया। इलावा इल्मों फाजल (उत्तम विद्या के अतिरिक्त) निहायत नेक और दरवेश सिफा (साधु स्वभाव) के आदमी थे। इनके मोहकिद (अनुयायी) इनको देवता मानते थे और वेशक वे इसी लायक थे। वे सिर्फ ज्योति स्वरूप निराकार के सिवाय दूसरे की पूजा को जायजा नहीं रखते थे। हम से स्वामी दयानन्द मरहूम (स्वर्गीय) से बहुत मुलाकात थी। हम हमेशा उनका अदब किया करते थे कि हरेक मजहब वाले को इनका अदब लाजमी (आवश्यक) था। बहरहाल ऐसे शख्श थे जिनका मसाल (उपमा) इस वक्त हिन्दुस्तान में नहीं और हरेक शख्श को उनकी वफात (मृत्यु) का गम (शोक) करना लाजमी है कि ऐसे बेनजीर शख्श (अनुपम मनुष्य) इनके दरमियान से (बीच से) जाता रहा।

यूरोप के प्रसिद्ध वेदों के विद्वान प्रोफैसर ऐफ मैक्समूलर ने आर्य समाज की सेवाओं का आदर करते हुए कहा :—

"आर्य समाज के आन्दोलन के प्रति मेरी पूर्ण सहानुभूति है। स्वामी दयानन्द ने विश्वहित के लिये कार्य किया है। आर्य ससाज के अनुयायियों को शांत नही बैठना चाहिये किन्तु स्वामीजी के उपदेशों को सफल बनाने के लिये प्रतिदिन अग्रसर रहना चाहिए। यदि आर्य समाज की सेवा का सौभाग्य मुझे प्राप्त होगा तो मैं अपने आपको भाग्यशाली समझूंगा।"

आर्य समाज के परोपकारों-गुणों की गरिमा को एक लेख में न्याय देना सम्भव नहीं है। अनेकों विद्वानों ने आर्य समाज के विविध पहलुओं पर ग्रन्थ लिखे हैं। १२ अप्रैल १९७५ को आर्य समाज को स्थापित हुये १०० साल पूरे होने जा रहे हैं। विश्व भर में आर्य समाज

की स्थापना शताब्दी मनायी जा रही है। इस अवसर पर हम नि:संकोच कह सकते हैं कि जो कार्य आर्य समाज ने एक शताब्दी में किया है— वैसा कार्य अन्य किसी भी संगठन ने अनेक शताब्दियों में भो नहीं किया। अतीत सराहनीय था, भविष्य सुन्दर हो इसके लिये आर्य समाज के हर व्यक्ति को शताब्दी के अवसर पर मानव मात्र के शारीरिक, मानसिक एवं अध्यात्मिक उन्नति के लिये दृढ़ संकल्प लेकर कार्य-क्षेत्र-में कूद पड़ना चाहिए।

★ भारत के राजनीति पुनरुत्थान के समस्त आन्दोलनों में आर्य समाज जैसा शक्तिशाली और महत्वपूर्ण आन्दोलन और कोई नहीं है। —क्रान्तिकारी आन्दोलन के जन्म दाता
—श्यामजी कृष्ण वर्मा

卐 महर्षि दयानन्द की सबसे बड़ी देन यह थी कि उन्होंने देश को असहायावस्था की दलदल में फंसने से बचाया। उन्होंने वस्तुत: भारत की स्वतन्त्रता की नींव रखी।
भारत निर्माता—लोह पुरुष सरदार पटेल

★ आर्य समाज के सिद्धान्त अत्यन्त उदार और बिशाल है। संगठित कार्य, दृढ़ता, उत्साह और सन्मवयात्मकता को दृष्टि से आर्य समाज की समता और कोई समाज नहीं कर सकता। स्वामी दयानन्द सरस्वती को मैं संसार के राजनीतिक नेताओं और पथ-प्रदर्शकों में सबसे ऊंचा स्थान देता हूं : —नेता जी सुभाषचन्द्र बोस

★ आर्य समाज एक वास्तविकता है, जिससे साधारण का आश्चर्यजनक उत्थान हुआ है।
प्रसिद्ध इतिहासकार—यदुनाथ सरकार

✱ जहां जहां आर्य समाज है, वहाँ-वहां जीवन ज्योति है। —जवाहरलाल नेहरू

★ आर्य समाज ने हिन्दू समाज को भले आदमी के रहने योग्य बनाया।
—चक्रवर्ती राज गोपालाचार्य

★ आर्य समाज के विरोधी भी स्वीकार करेंगे कि आर्य समाज ने भारत माता की बड़ी सेवा की है।

卐 मेरा प्रणाम हो उन महान् गुरु दयानन्द को, जिन्होंने अपनी दिव्य दृष्टि से भारतवर्ष के आत्मिक इतिहास में सत्य और एकता को देखा। —विश्व कवि रवीन्द्रनाथ टैगोर

★ महर्षि दयानन्द के ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश और आर्य समाज के सिद्धान्तों के अध्ययन से मेरा मन सन्तोष और शान्ति का अनुभव कर रहा है।
—रूस के प्रसिद्ध सन्त महात्मा टाल्स्टाय

✱ गुरुदेव रचित सत्यार्थ प्रकाश मेरे जीवन में प्रकाश देने वाले सूर्य के समान है।
—ला० लाजपत राय

—वीरेन्द्र भारती

अन्ध विश्वास के अन्त करने का उपाय

ले०—आचार्य विद्या नन्द वेदालंकार भूतपूर्व प्रिंसिपल गुरुकुल कालेज, बैरगनिया

(१) लोगों की आम धारणा है कि अन्ध विश्वास का आधार सम्प्रदाय है। सम्प्रदाय इसके पोषक तो है ही, इसमें सन्देह नही है। चूंकि भाग्य को सामान्य मनुष्य कर्मफल मानता है। इसलिए उससे बचने का उपाय सोचता है। तब उस दुःख से छूटने का उपाय प्रत्येक सम्प्रदाय बताता है। वास्तव में उपाय ही सम्प्रदायों की लोकप्रियता के मुख्य आधार होते हैं। उनमें ही देवता, ग्रह, भूत कबर, एवं गुरु आदि पूजे जाते है और मंत्रतंत्र जादू टोना आदि का सहारा लिया जाता है।

यहां तक कि एक ईश्वर का विश्वास देने वाले इस्लाम और ईसाइयत भी स्वर्ग और' नरक के विश्वास पर निर्भर है। स्वर्ग और नरक भी भाग्य हैं जो ईश्वर देता है। इस प्रकार यह ईश्वर विश्वास भी नास्तिकता का ही प्रछन्नरूप है। जिसे भाग्य बनाने का लोभ या भय के प्रभाव से मनुष्य स्वीकार करता है।

यूरोप में विज्ञान के आरम्भ के दिनों में साधारणतया सभी मनुष्य भाग्यवादी थे। इस लिये सुख और ऐश्वर्य जब विज्ञान से मिलने लगा तो, उसने ईश्वर के स्थान पर विज्ञान को को स्वीकार कर लिया था। परन्तु १९१४ ई. में कुछ राष्ट्र हार गये तो, उनका विश्वास फिर विज्ञान के जगह ईश्वर पर हो गया।

इस प्रकार सुख ऐश्वर्य स्वर्ग की इच्छा से या नरक के भय भे ईश्वर, देवता या विज्ञान पर विश्वास भाग्य, कर्मफल, दुःख या कष्ट से बचने के साधन के रूप में उपाय खोजना है—न कि ईश्वर विश्वास है।

जब सभी के भाग्य को सुखी बनाने की योजना रूस ने दी और सर्वसाधारण की स्थिति पलट दी तो धर्म या ईश्वर आदि का स्थान इस योजना ने प्राप्त कर ली। परन्तु जब जर्मनी से हारते हारते निराशा छा गई तो राष्ट्रवाद और ईश्वर आशा के केन्द्र बन गये!

मनुष्य को खोज तो भाग्य बनाने वाले उपाय की है न कि ईश्वर की। इसलिये मनुष्य उस साधन के रूप में जिस पर विश्वास करता है। उसका कुछ भी नाम हो वह साधन है न कि ईश्वर।

यही कारण है कि, युद्ध में विजय के साधन तो अस्त्र शस्त्र है। पर अन्धविश्वास में पड़ रूसी रेडियो ईश्वर का नाम लेने लगा। इसी प्रकार सम्प्रदाय भी अन्ध विश्वास का पोषण ईश्वर, देवी-देवता एवं ग्रहादि से करते है।

(२) आज विज्ञान ने बहुत उन्नति कर ली है। आज हमारी पृथ्वी के चारों ओर उपग्रह

घूम रहे है। जो २४ घंटों में ही कई बार घूम जाते है। ये मनुष्यों के बनाये हैं। इनके जरिये मनुष्य पृथ्वी के हर क्षेत्र का दर्शन कुछ घण्टों में एक कमरे में बैठ कर लेता है। इनमें ऐसे कैमरे लगे हैं जो पृथ्वी पर चलने वाले कीडों को भो देख लेते है। ऐसी उन्नत स्थिति में मनुष्य पहुच गया है।

तब भी लाखों वर्ष पूर्व कच्ची कुटिया में रहने वाले और आज के २५० मंजिली इमारत में रहने वाले में एक बात बिल्कुल समान है। उसमें थोड़ा भी फर्क नहीं आया है। जैसे वह अपरिचित था वैसे ही यह भी अपरिचित है कल उसके भाग्य में क्या होगा? आज ही नही सदियों से सभी दे ों में मनुष्य कल के भविष्य के अनिश्चित होने से चिन्तित है।

आज हमारे देश में दैनिक समाचारपत्र निकलते हैं। उनमें प्राय: प्रत्येक समाचारपत्र प्रतिदिन भविष्यफल छापता है। चूंकि प्रत्येक समाचारपत्र के सम्पादक और प्रकाशक यह भली प्रकार जानता है कि मेरे पत्र को पढ़ने वाला हरेक आदमी अपने अगले भविष्य की चिन्ता में है। चाहे वह शिक्षित हो या अशिक्षित हो।

(३) भाग्य को सुधारने की खोज में चिन्तित आदमी के अन्ध विश्वास को जैसे सम्प्रदाय पोषण देने लग गये। चूंकि मनुष्य की खोज तो सम्प्रदाय के जन्म के पूर्व से है। इस अन्धविश्वास के पौधे की जड़ तो भाग्य है न कि सम्प्रदाय वैसे यह 'खोज' अशिक्षा के कारण भी नहीं है। इसलिये शिक्षा और ज्ञान से दूर नहीं हो सकती है। परन्तु कुछ लोगों की मान्यता है। अतः लिख रहा हूं! (१) एक तीर्थयात्रियों की टोली कैलाश और गंगोत्री का दर्शन करने जा रही थी। हरिद्वार में उस टोली की बड़ी चर्चा थी। चूंकि उसमें सभी सुशिक्षित थे। उस में एक एम. एस. सी उत्तीर्ण व्यक्ति भी थे। मैं उस टोली से मिला।

शिवालक पर्वत की मुख्य श्रेणी तो हरिद्वार से ही आरम्भ होती है। उनको मैंने उन पहाड़ों के दर्शन कराये। यह भी बताया शिवालक का अर्थ शिवा की जटा होता है। वह पहाड़ ऊंचा है और जंगलों से आच्छादित है। आज गंगा के किनारे तीर्थ और मन्दिर बढ़ते जाते हैं। चूंकि सड़के और रेलें बन गई हैं। परन्तु पहले गंगा का पता नहीं चलता था। चूंकि पहाड़ों के कारण मीलों गहराई में नीचे छोटी सी पतली सी धार गंगा की बहती है। वह जंगलों के कारण लुप्त हो गई थी। इस प्रकार शिव की जटा में आज भी गंगा छिपी हुई है!

गंगोत्री हिम नदी है ग्लेशियर है। प्रत्येक हिमनदी पर हिमपात होता रहता है। हिमपात के समय रूई के छोटे छोटे टुकड़ों के समान हिम गिरती रहती है। यही आकाश से गंगा के उतरने का दृश्य है।

जब वे कैलाश से लौटे थे तो उन्होंने कहा था कि शिवलिंग की कल्पना कैलाश से बनी हैं और गंगोत्री तो चांद की तरह पहाड़ पर फैली है। परन्तु मेरे आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा जब एक लोटा जल शिवमूर्ति पर चढ़ाते देखा। यद्यपि मुझे देख कर वे लजा गये थे।

प्रिंसिपिया नामक अमर ग्रन्थ का लेखक न्यूटन है। इसमें खोखले या पोले परमाणु का वर्णन हैं। जिसके बीच में एक मुख्य कण होता है जिसके चारों ओर शेष कण चक्कर काटते हैं। उनमें अनुपात में दूरी लगभग वैसी ही होती है। जैसी और जितनी सौरमण्डल में ग्रह

और उपग्रहों की होती है। एक परमाणु लगभग सौरमण्ड का संक्षिप्त रूप है। जिसमें ग्रह और उपग्रह की तरह कण घूमते हैं।

बीच के कण का भार होता है। इसे हाइड्रोजन के परमाणु से तोलते है जो सब से हल्का होता है। तदनुसार आक्सीजन का १३ गुणा नितन २२२ गुणा, हीलियन ४ गुणा होता है। पुनः नितन और हीलियम मिलकर २२६ गुणा रेडियम का परमाणु बनाते हैं। इस भार के अनुसार परमाणु में आकर्षण शक्ति होती है और उसके चारों ओर घूमने वाले कणों की संख्या होती है। इससे पिण्ड के अनुसार आकर्षण शक्ति का अनुमान किया गया।

परमाणुओं से बने लोकों का पिण्ड छोटा और बड़ा होता है। उनके छोटे और बड़े पिण्ड में पिण्ड के अनुसार आकर्षण शक्ति होती है। वैसे चांद से पृथ्वी पर २० गुणा आकर्षण शक्ति है। एक मन भारी वस्तु का भार चांद पर दो सेर होता है। अन्तरिक्ष में (रिक्तस्थान में) आकर्षण शक्ति नहीं होती है। वहां अन्तरिक्ष में लोकों में आने वाले टहराव (स्टेशन) बनेंगे। चूंकि आकर्षण शक्ति के अभाव में वे गिरेंगे नही।

आकर्षण शक्ति की इस भिन्नता के अनुसार लोकों में अक्ष और कक्ष में गति, आपसी दूरी गति की दिशा आदि होते हैं। जिससे दिनरात और वर्ष के समान गतियां होती हैं। जो ऋतुएं बनाती हैं। इसी से सौरमण्डलों के समान सौरमण्ड़ल बनते हैं। प्रत्येक तारा एक सूर्य है। उन में हमारे सूर्य से बड़े सूर्य भी है। जैसे रोहिणी ३६८ गुणा ज्येष्ठा लगभग ७०० गुणा एवं मंगलारि ३००० गुणा बड़ा होता हैं।

उसी आकर्षण शक्ति पर भिन्न २ तेरह आकाश गंगाएं बनी हुई खोजी गई हैं। ये आपस में सौरमण्डलों के समान सौरमण्डलों को थामे हुए घूम रही हैं।

विश्व का इतना सूक्ष्म और विस्तृत ज्ञान रखने वाला न्यूटन था उसे समस्त लोकों की दशा के मूल कारण का ज्ञान था। परन्तु आपको विश्वास ही नही होगा पर सच्चाई है कि उसने नरक लोक पर भी पुस्तक लिखी थी। इसे उसने कहां देखा था। उस की दूरबीनो ने देखा था अथवा अन्ध विश्वास की जिस गोद में पला था, उसने देखा था।

यही मूल कारण है कि जिससे एम० एस० सी० उतीर्ण को भी कभी २ हम ग्रहण लगने पर दान करते देखते हैं। इस प्रकार स्पष्ट है कि अन्ध विश्वास की जड़ शिक्षा के अभाव में नहीं पनपी थी। यह कल के अनिश्चित भविष्य की चिन्ता में पनपी थी और पनप रही है। उसे भाग्य या कर्मफल मानना ही अन्ध विश्वास का मूलरूप है।.उसे दूर करने के लिये ईश्वर, विज्ञान और साम्यवाद को भी उसी प्रकार उपाय समझा गया जैसे साम्प्रदायिक वातावरण में देवी-देवता, ग्रह आदि को उपाय समझा जाता रहा है।

आज शिक्षित भी भाग्य वादी बनता जा रहा है, जैसे पहले अशिक्षित बनते रहते थे। चूंकि आज सबको कल की चिन्ता सता रही है। चाहे वह लखपति हो, चाहे हजारों वेतन पाने वाला हो, चाहे प्रोफेसर या रिक्शा चालक हो। चूंकि इस चिन्ता का शिक्षा, पद, उच्चकुल या धन सभी से एक जैसा सम्बन्ध है।

(४) उत्तर :—इसका पूर्ण और निश्चित उत्तर वर्ण व्यवस्था है। जो गत लेखों में मैं लिखता रहा हूं। इसलिये पाखण्ड और अन्ध-

विश्वास प्रचार से दूर नही होगे—अपितु कल की चिन्ता से मुक्त करने वाली वर्ण व्यवस्था स्थापित करने से दूर होगे ।

संक्षेप मे लेख लम्बा नहीं करने के विचार से संकेत कर रहा हूं।

(१) क्या, यह भाग्य या कर्मफल है ? क्या, इसका कारण प्रकृति या ईश्वर है ? जो कल भारत में राजा और नबाव थे, वे आज नही हैं। कभी श्रीमती गायत्री देवी जयपुर की महाराणी थी। आज बाप दादों से संचित सोना रखने के कारण ही दोषी मान ली गई हैं। क्या, उन लोगों का राज्य ईश्वर ने छीना था ? बिहार और बंगाल में दरभंगा महाराज के जैसे जमीदार थे और आज नही हैं। क्या, उनकी जमीदारी ईश्वर ने छीन ली थी ?

(क) पहले एक राजा का राज्य दूसरा राजा छीन लेता था। जैसे डाकू आपका धन छीन लेता है। जब प्रजा का राज्य हुआ—प्रजातन्त्र चल पड़ा अब दूसरे छीनने वाले राजा का स्थान राष्ट्र या समाज ने ले लिया है। यह बल का प्रश्न है। उसकी कल की चिन्ता मिटा कर नही किया गया है। अतः हिंसा है।

(ख) इसी प्रकार पहले महाजन या दूसरा जमीदार जमीदारों की जमीन खरीद लेता था। अब इस कार्य को राष्ट्र और समाज ने कर दियां है।

(ग) उसी प्रकार मुझे कम या अधिक जो कुछ मिल रहा है। वह भी सामाजिक व्यवस्था का फल है।

४. महगी, चोर बाजारी, घूस खोरी आदि आपसी या सामाजिक व्यवहार में स्वीकृत बातें होती हैं। सरकार द्वारा स्वीकृत होने पर उनका नाम बदल जाता है। तब उसे कानून या नियम कहने लगते हैं।

५. जब हम समाज की व्यवस्था बदलते हैं। लोगों का भाग्य बदल जाता है। राजा और जमींदारों के रूप में कर्मफल देने की क्षमता यदि भगवान् की थी-तो वह भी आज समाप्त हो गई है।

आज मजदूर हड़ताल करते हैं। पूंजीपति को हक होता है कि, वह उनके स्थान पर दूसरे को रख सकता है तो, हड़ताल चल नही सकती थी। परन्तु आज कानून बना कर उनको सुरक्षा दे दी गई है। अब मजदूर को वह भाग्य या कर्मफल कोई नहीं दे सकता-जो पहले दे सकता था।

इसी सुरक्षा में उनकी हड़ताल सफल होती है

(५) पूंजीपति की सुरक्षा :—आज बेलगाम लोलुपता (लालच) में फंसे पूंजीपति अपनी सुरक्षा नही चाहते है। वे बाजार भाव में ही अपनी पूंजी बढने की आशा से अपनी स्वच्छंदता पूर्ण भलाई को पनपने का अवसर समझते हैं। परन्तु जब वह अपनी दुकान या कारखाना खोलता है तो उसे बड़ी-२ आशाएं होती हैं। परन्तु वह आशा वस्तु की मांग पर निर्भर है। जब तक वस्तु बिकती है-उसे लाभ होता रहता है। परन्तु दूसरे दुकान नही खोलें या कारखाना नही चलाएं-इसके लिए कोई व्यवस्था, नियम या कानून नही है। जब दूसरे भी मैदान में आ जाते हैं। तब युद्ध शुरू हो जाता है। अब ट्रेड मार्क, पोस्टर और विज्ञापन बढते जाते हैं। परन्तु वस्तु की मांग घटती जाती है। यहां तक कि उत्पादन व्यये में भी लोग नहीं लेते। चूंकि अपनी रक्षा के लिए पूंजीपति ऐसी दशा में गला-काटू संघर्ष छेड़ देते हैं। अन्त मे कुछ का दिवाला निकल जाता है।

दिवाला निकलने से करोड़ों की पूंजी, भूमि, भवन, यन्त्र, श्रम और श्रमिक बेकार हो जाते हैं। इस प्रकार बाजार भाव हिरण्यमय मात्र है-जो दिवाले को छिपाये हुये हैं। यह मृगतृष्णा आज अनिश्चित और असुरक्षित भाग्य वाले पूंजीपति को भुलाए हैं।

बाजारु अटकल बाजी निराधार होती है। अन्धेरे में टटोलते-२ चलना है और कभी ठोकर खाकर गिर पड़ता है। आज तो पूंजीपति की लोलुपता से जनता तंग हो गई है। इसलिए आज प्रश्न पैदा हो गया है कि बाजार भाव का कन्ट्रोल किया जाये या उसका अन्त कर दिया जाये।

(६) अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में प्रत्येक राष्ट्र शोषण से बचने के लिए चेष्टा करता है-कि वस्तु देकर वस्तु ली जाए। वहा बाजार भाव का अन्त-हरेक राष्ट्र चाहता है। चूंकि इसी में राष्ट्र का कल्याण है।

यदि अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में हम बाजार भाव का अन्त करना चाहते है। चूंकि उसका लक्ष्य शोषण से राष्ट्र या समाज की रक्षा है-तो देश में प्रत्येक व्यक्ति को शोषण से बचाने के लिए बाजार भाव का अन्त क्यों न किया जाए पूंजी-पति को भी मजदूर की तरह दिवाला निकलने से क्यों न बचाया जाए। यह करोड़ों को पूंजी, भवन, भूमि, यन्त्र और श्रमिक एवं पूंजीपति को बेकार और नष्ट होने से क्यों न बचाया जाये। क्यों, न ऐसी व्यवस्था की जाए-कि, मनुष्य का भाग्य सदा वही रहे-जो आज है।

क्यों, न हरेक को योग्यतानुसार काम देने और आवश्यकतानुसार वस्तु देने की व्यवस्था की जाये। इस व्यवस्था में हरेक का भाग्य सदा वही रहेगा-जो आज है। इसी लक्ष्य को पूर्ण करने वाली व्यवस्था का नाम वर्ण व्यवस्था है। तब अन्ध विश्वास के अन्त करने का मार्ग स्वयं आ जायेगा। वर्ण व्यवस्था पर मांग होने से मैं लिखूंगा। अन्ध विश्वास का अन्त न तो शिक्षा से होगा-न विज्ञान से होगा। अपितु मनुष्य को कल की चिन्ता से मुक्त करने से होगा।

'सामवेद'

(लेखिका—श्रीमती किरणकुमारी जायसवाल भागलपुर)

ऋग्वेद के ही मन्त्र सामवेद में है। इसलिए स्वाभाविक प्रश्न पैदा होता है। पुनः उन्हीं मन्त्रों को एक अलग वेद के रूप में क्यों, रचा गया है एक ब्राह्मण में कथा आती है उसमें दर्शाया है—बिना संगीत के मन्त्र साम नहीं कहाते वे ऋचाएं ही कही जाती हैं। इस प्रकार सामवेद की रचना करके प्रभु ने यह स्पष्ट कर दिया—सामान्य शब्दों की अपेक्षा संगीतमय शब्द अधिक भाव जगाने में सक्षम होते हैं। यहां तक कि संगीत का प्रभाव मनुष्य पर ही नहीं अन्य प्राणियों पर भी पड़ता है। इस विषय को स्पष्ट करने वाली एक कथा तानसेन और बैजूबावरा की है जो बहुत प्रसिद्ध है।

तानसेन बादशाह अकबर का प्रिय गवैया था। वह आगरा में रहता था। आगरा में किसी दूसरे गवैये का आना-तानसेन अपने लिए चुनौती मानता था। इसलिये आगरा में वही गवैया आ सकता था। जो तानसेन को संगीत शास्त्र के शास्त्रार्थ में और गाने में हरा दे। अन्यथा उसे फांसी की सजा मिलती थी।

बैजू के पिता साधु थे। एक बार आगरा चले गये। वहां गलियों में घूमकर प्रभु का कीर्तन करने लगे। बादशाह की आज्ञानुसार तानसेन ने उन्हें पकड़ने की आज्ञा दी। बादशाह के दरबार में बुलाकर संगीत पर तानसेन ने प्रश्न पूछे। उस साधु को शास्त्र ज्ञान से कोई मतलब

नहीं था। अत: उत्तर कैसे देता। इसलिये बादशाह ने उसे फांसी दे दी।

बैजू को पिता की मृत्यु से दु:ख हुआ। चूंकि वह बच्चा था। उसका एक मात्र आसरण पिता थे। उसने पिता का बदला लेने के लिये संगीत सीखा। शास्त्र ज्ञान भी प्राप्त किया। तब एक दिन जाकर उसने को ललकारा। शास्त्रार्थ में तानसेन के सार प्रश्नों का उत्तर उसने दे दिया तब गाया। उसके गाने पर दरबार में-में पशु भी आ गये। बैजू ने उनके गले में माला डाल दी और भगा दिया। तानसेन को को उन्हे बुलाने को कहा। तानसेन सफल नहीं हुआ। उसने पुन: पशुओं को बुलाने को ललकारा। बैजू ने फिर गाया और फिर पशु आ गये।

इसलिये संगीतज्ञ शब्दों में गाने से इतना परिवर्तन कर सकता है। कवि सम्मेलनों में गाने वालों की सामान्य कविता भी सुकवियों की कविता को फीका कर देती है।

रोग और चिन्ता में दु:खी मनुष्य भी संगीत सुन कर उन दु:खों के प्रभाव को भूल जाता है। हृदय के भावों को जगाने की शक्ति तो गाने में सभी जानने हैं।

कविता संगीत नहीं होती है। संगीत कविता के शब्दों को भाव जगाने में समर्थ बना देती है। इसी से ऋचाएं साम नहीं है। संगीत उन के भावों को जगाने में समर्थ होने से उसे साम बना देता है। इसलिए सामवेद का अर्थ भाष्यों से नहीं अपितु संगीत से बोध्य है। अन्यथा ऋचा के भाष्य और सामवेद के मन्त्रो के भाष्य में अन्तर क्या होगा?

ऋग्वेद के मंत्रों की व्याख्या करते समय सस्वर पाठ का विधान हैं। चूंकि पदों के स्वर अर्थ बोधक होते हैं। जब सामान्य पाठ में शब्द का अर्थ स्वर से व्यक्त होता है। तब मंत्र का भाव संगीत से अधिक जाना ही नहीं जाता अपितु अपने भाव में लीन कर लक्ष्य तक पहुंचा देता है। इस प्रकार संगीतमय ऋचाओं को बना कर उपासना करने की रीति साम कही जाती हैं। सामवेद का लक्ष्य यही है। मीमांसाकार जैमिनी ऋषि ने लिखा है, "मीतिसु सामाख्या" वे गान को साम कहते हैं ऋचाओं को नहीं। उपनिषदों में छान्दोग्योयनिषद ने प्रश्न और उत्तर में इस बात को समझाया है साम की गति कम रे? तो उत्तर दिया है—स्वर। यहां स्वर गान के स्वरों का बोध कराते हैं। जैमिनीयोम निबब्राह्मण इसे अधिक स्पष्ट करता है। "जितना स्वर है=उतना ही साम हैं=क्योंकि बिना स्वर के साम ऋक ही होता है।" उदात्रादि अर्थ बोधक स्वर तो ऋग्वेद में भी है। गान के स्वर ही उससे अधिक होते हैं।

गान के स्वर हटाने पर ऋग्वेद के मन्त्र ही बच जाते हैं। एक आष्ट्रिया के मनो विज्ञानिक ने लिखा था कि चिकित्सक शरीर की चिकित्सा करता है। परन्तु आदत बनाने वाला तो मन है। उसकी चिकित्सा करने पर ही आदतें सुधर सकती हैं। अन्यथा आदत बने रहने पर रोग बार-२ पैदा हो जाएंगे। रोग के लिए इसीलिये भारत के मनोवैज्ञानिक में संगीत उपाय बताया था। उसका कहना था। गाने पर मन प्रसन्न हो जाता है। सारे विकार विचारों को उद्भ्रान्त करने वाले काम, क्रोध, लोभ या मोह से पैदा होते हैं। यह प्रसन्नता इनसे छूटने से होती है। जो गा नहीं सकते वे गाना सुन कर यह लाभ प्राप्त कर सकते हैं। बहुत दिनों तक गाने से आदत बदल जाती है। आदत बदलने पर रोग सदा के लिये निर्मूल हो जाते हैं। जो लाभ चिकित्सकों की चिकित्सा से नही हो सकता-चूंकि वे आदत नहीं दूर कर सकते हैं।

एक मन्त्र में साम (गान) की महिमा पर ऋग्वेद में लिखा है (अभि स्वरन्नि रहवो मनीषिन्ने, राजानमस्य भुवनस्य विंसते॥) कुछ भगवान् को स्वर (गान) से प्राप्त करते हैं।

लौकिक जीवन वाले तानसेन से विकार रहित साधु स्वभाव बैजू के गान की विशेषता ने उसे विजय दिलाई थी। चूंकि गान हृदय की शक्ति है। इसलिये शुद्ध चित्र का गान अधिक प्रभावशाली होता है। इसे एक गायनाचार्य ने समझाया था।-कि शुद्ध चित्रता हमारी गायन के समय रहती है। हरिभक्त तो गाता ही रहता है, अत: उसकी शुद्ध चित्रता उसके अंग-२ में समा जाती है। उसकी आदत अंगों के साथ शुद्ध चित्रता को प्राप्त कर उसे पूर्ण शुद्ध कर देती हैं।

बिना ऋचा के गाने तो आज कल होते ही हैं। वे सभी भाषाओं में होते हैं। वहां ऋचा का स्थान कविता ले लेती है। [illegible] ठीक होना चाहिए। अन्यथा चित्त शुद्धता का लाभ नहीं।

गुरुकुल कांगड़ी
च्यवन
प्राश
उत्तम, स्वादिष्ट, रसायन
शरीर को बलिष्ट एवं कान्तिमान बनाता है
शारीरिक क्षीणता, तथा
फेफड़ों के लिये प्रसिद्ध
आयुर्वेदिक रसायन

साप्ताहिक आर्य मर्यादा

आर्य समाज अंक

27 अप्रैल 1975

स्वामी दयानन्द जी महाराज

विषय-सूची

सम्पादकीय–

पहला चरण समाप्त हुआ

आर्य समाज की स्थापना शताब्दी का पहला चरण सफलता पूर्वक समाप्त हो गया है। यदि मैं कहूं कि इसमें हमें आशातीत सफलता प्राप्त हुई तो यह अतियुक्ति न होगी। जहां २ भी कोई आर्य समाज स्थापित है वहां २ आर्य भाईयों और बहनों ने ६ अप्रैल से १२ अप्रैल तक अपनी धर्म पारायणता और अपने संगठन का जो प्रदर्शन किया है वो हर प्रकार से सराहनीय है इसका साधारण जनता पर बहुत ही अच्छा प्रभाव रहा है। भिन्न २ स्थानों से जो सूचनाएं प्राप्त हुई है उनके आधार पर कहा जा सकता है कि १२ अप्रैल के दिन सब जगह जो जलूस निकाले गये जो अत्यन्त प्रभावशाली थे। उनके दो महत्वपूर्ण पक्ष विशेषकर उल्लेखनीय है। एक यह कि १२ अप्रैल के समारोह में सब आर्य समाजियों ने अपनी एकता का प्रदर्शन किया। अपने सब मतभेद भुलाकर और इकट्ठे होकर सबने शताब्दी समारोह को सफल बनाने का पूरा प्रयत्न किया। दूसरा पक्ष जिसकी ओर मैं विशेष ध्यान दिलाना चाहता हूं वो यह कि जो आर्य समाजी न थे अर्थात सनातन धर्मी जैनी और कई स्थानों पर भी सिख भाई भी हमारे समारोह में सम्मिलित होने के लिये आये और उन्होंने उसमें उसी उत्साह से भाग लिया जिस उत्साह का प्रदर्शन आर्य सामाजियों ने किया। इससे हम अनुमान लगा सकते हैं कि आर्य समाज ने सर्व साधारण के मन मस्तिष्क पर कितना प्रभाव कर रखा है। हम कई बार कहा करते हैं कि आर्य समाज की शक्ति अब क्षीण हो रही है कई लोग आर्य समाज के मंच से आकर यही कहते हैं कि आर्य समाज में अब कोई जीवन नहीं रहा। आर्य समाजी तो केवल ईंटों और पत्थरों के लिए ही लड़ते हैं। यही महानुभाव यदि १२ अप्रैल के समारोह को देखते तो उन्हें पता चल जाता कि आज भी आर्य समाज में कितनी शक्ति है। बदनाम करने को तो प्रत्येक संस्था को बदनाम किया जा सकता परन्तु जिस संस्था का उज्जवल पक्ष भी जनता के सामने रखा जा सके यदि हम उसकी भी अवहेलना करते रहे तो इसका अर्थ बिल्कुल स्पष्ट है और वो यह कि हम जानबूझ कर आर्य समाज को बदनाम करना चाहते हैं परन्तु ऐसे महानुभाव न पहले सफल हुए हैं और न भविष्य में होंगे।

आर्य समाज की जन्म शताब्दी वर्ष भर मनाई जाएगी बल्कि एक प्रकार २ वर्ष तक मनाई जाती रहेगी। अब अगला बड़ा समारोह दिसम्बर १९७५ में बम्बई में होगा जहां आर्य समाज की स्थापना हुई थी परन्तु उस समय तक हमें किसी न किसी रूप अपने इस प्रचार को जारी रखना है। एक काम तो सार्वदेशिक सभा ने हमारे जुम्मे लगाया हुआ है वो यह कि शताब्दी निधि के लिए हमने कम से कम ५ लाख रुपया एकत्र करना है। आर्य प्रतिनिधि सभा ने

१०० रु०, १० रु०, ५ रु० और १ रु० के नोट मंगवा लिए हैं जिन आर्य समाजों ने अभी तक यह रुपया इकट्ठा करना प्रारम्भ नहीं किया उन्हें चाहिये कि सभा कार्यालय से नोट मंगवा कर रुपया इकट्ठा करना प्रारम्भ करदें। नोटों के द्वारा रुपया इकट्ठा करने का एक लाभ यह होगा कि हम घर २ लोगों को यह सन्देश पहुंचा सकेंगे कि इस वर्ष आर्य समाज की जन्म शताब्दी मनाई जा रही है। एक छोटे से छोटे दुकानदार से लेकर बड़े से बड़े पूंजिपति तक पहुचाना हमारा कर्त्तव्य है इसीलिये ऐसे नोट तैयार करवाये गये हैं कि हम एक निर्धन की झोंपड़ी में भी पहुच सकें और एक पूंजीपति के महल में भी।

दूसरा काम जो हमने करना है वो यह कि आर्य समाज के साहित्य का अधिक से अधिक प्रचार। सबसे अधिक प्रचार तो सत्यार्थ प्रकाश का होना चाहिए। आर्य प्रतिनिधि सभा ने सत्यार्थ प्रकाश मंगवा कर अपने पास रख लिये हैं। साढ़े तीन में एक प्रति मिल सकती है जो समाजें मंगवाना चाहें वो मंगवा सकती है। उसके अतिरिक्त अब सभा पंजाबी भाषा में भी कुछ साहित्य प्रकाशित कराने का फैसला किया है। छोटे २ ट्रैक्ट हिन्दी और पंजाबी में लिखवाये जा रहे हैं। ज्यों ही वो प्रकाशित हो ज ते हैं आर्य जगत को सूचित कर दिया जावेगा आशा है कि अधिक भे अधिक लोगों तक आर्य समाज के इस साहित्य को पहुंचाने का प्रयत्न किया जावेगा।

वेद प्रचा के काम को सुचारू रूप से चलाने के लिए सभा ने माण्डलिक प्रचार योजना प्रारम्भ करने का फैसला किया है। अगले महीने से प्रत्येक जिला किसी न किसी उपदेशक और भजनीक के जुम्मे लगा दिया जाएगा। उनका काम होगा कि वो उस जिला में इसका वेद प्रचा. भी करें। नई आर्य समाजें भी बनाएं जो पुरानी सक्रिय नहीं है उन्हें सक्रिय करने का प्रयत्न करें। परन्तु यह योजना उसी अवस्था में सफल हो सकती है यदि जनता का पूरा सहयोग हमारे उपदेशकों और भजनीकों को मिलता रहे। कोई व्यक्ति अकेला प्रचार नहीं कर सकता उसके लिये उसे कई प्रकार के साधन जुटाने पड़ते हैं यह उसी अवस्था में सम्भव हो सकता है यदि जनता का पूरा सहयोग उपदेशकों और भजनीकों का मिलता रहे।

मैंने सभा के भावी कार्यक्रम की एक सीमित सी रूपरेखा आर्य जनता के सामने रखी है। इस शताब्दी वर्ष में हमें आराम से नहीं बैठना चाहिए बल्कि आर्य समाज का प्रचार जितना अधिक से अधिक कर सकते हैं करना चाहिए। हमारा पहला चरण अत्यन्त सफल रहा है। इसके लिए मैं आर्य प्र० नि० सभा से सम्बन्धित सब आर्य समाजों को जहां हार्दिक बधाई देता हूं वहां उनका धन्यवाद भी करता हूं कि समय-२ पर सभा की ओर से उन्हें जो आदेश मिलते रहे हैं उन्होंने उनका पालन करने का पूरा प्रयत्न किया है। आशा है कि भविष्य में भी सब समाजों के अधिकारियों का विशेष कर और आर्य जनता का सहयोग सभा को इसी प्रकार मिलता रहेगा।

—वीरेन्द्र

आर्य समाज एक विशाल यज्ञ के रूप में

(लेखक :—श्री पूर्ण चन्द एडवोकेट पूर्व प्रधान सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा)

(अनुभवी आर्य नेता है। लेख में आर्य समाज के नियमों के आधार पर यज्ञ की सुन्दर व्याख्या है—सम्पादक)

महर्षि दयानन्द ने आर्य समाज की स्थापना एक विशाल सार्वजनिक यज्ञ के रूप में की। मनोविज्ञान की दृष्टि से यज्ञ के तीन अंग है । देव पूजा, संगति करण और दान । आर्य समाज के १० नियमों को दृष्टि में रखकर हम ये समझ सकते हैं कि पहले पांच नियम देव पूजा से सम्बन्धित है। ईश्वर को आदि मूल बताया गया है ! उसका स्वरूप बताया गया है । ईश्वर का ज्ञान वेदों मे है ये बताया गया है । वेदों का पढ़ना पढ़ाना परम धर्म बतलाया गया है और जैसा पढ़ना वैसा करना ये बताया गया है। ईश्वर पूजा या देव पूजा की ये सर्वांग पूर्ण विधि है । छटे से नवें नियम तक संगठन या संगतिकरण के सम्बन्ध में है। संसार का उपकार मुख्य उद्देश्य बताया गया है स्वार्थ भावना में त्याग पर बता दिया गया है सत्य के ग्रहण करने और असत्य के त्यागने पर विशेष बता दिया गया है और संगठन की सफलता के लिए ये बताया गया है कि संगठन विश्व व्यापी तब हो सकता है कि जब तक उसका आधार एक ईश्वर की सत्ता में विश्वास हो । उस एक से जुड़ कर सब अनेकताएं उस एकता की माला में जुड़ जाएं और संगठन की सुरक्षा दान की भावना से और स्वार्थ त्याग की भावना से हो सकती है । इस दृष्टि से दशवां नियम दान की भावना को चरितार्थ करने के लिए बनाया गया है और उस में सब से बड़ी विशेषता यह है कि समाज की मर्यादा और व्यक्ति की स्वतन्त्रता दोनों सुरक्षित रहें । महर्षि की दृष्टि में हर व्यक्ति की हर प्रकार की उन्नति संसार की उन्नति का मुख्याधर और माधन है। ये एक निराली और अनोखी भावना है जिसे संसार के जितने कृत्रिम विवाद जैसे समाजवाद आदि सबका समाधान हो जाता है। यदि आर्य समाज को हम एक विशाल यज्ञ के रूप में अपने सम्मुख रखे तो हम ये समझ सकते है कि जिस प्रकार यज्ञ का उद्देश्य प्रकाश और पवित्रता के विस्तार के लिये है उसी प्रकार अन्धकार और मालिनता के निराकरण के लिये है। आर्य समाज ज्ञान के विस्तार के लिये वेदों के प्रचार को परम धर्म बतलाता है और उसके साथ ही जो वेद विरुद्ध बाते प्रचलित हैं उन का निराकरण आवश्यक बतलाता है। महर्षि ने आरम्भ में ही ओंम के साथ पाखण्ड खण्डनी पताका भी लगाई थी। वेद के असली प्रचार के लिए प्रचलित पाखण्डों का निराकरण भी आवश्यक है और इसलिये अब ये आवश्यक है कि शताब्दी के शुभ अवसर पर ये निश्चय हो जाए कि ऊं की पताका के साथ पाखण्ड खण्डनी पताका भी लगाई जाये और चरित्र निर्माण और नैतिक उत्थान को सबसे अधिक आवश्यक कार्य समझा जाये। आर्य समाज को इस दृष्टि से अपने

अन्दर भी देखना चाहिए। जो थोड़ी बहुत त्रुटियां हैं उनको दूर करने पर ध्यान देना चाहिए और जिस प्रकार महर्षि दयानन्द हर प्रकार की साकार पूजा के विरोधी थे हमें भी ये बात ध्यान में रखनी चाहिये। महर्षि दयानन्द की चेतावनी थी कि कोई स्मारक नही बनाना चाहिये मूर्ति पूजा हो जायेगी वो। चित्रदर्शन के पक्ष में भी नही थे उन्होंने अपना चित्र भी आर्य समाज मन्दिर में लगना पसन्द नहीं किया। आज वो लहर चल रही है क्या महर्षि के आदेश के अनुकूल है? संगठन और राजनीति की सुरक्षा के लिए महर्षि वोट का अधिकार केवल सदाचारी को ही देना चाहते थे। अधिकता की हत्रा आर्य समाज के अन्दर और बाहर क्या इसके अनूकूल है। समाज संगठन के लिए महर्षि वर्ण और आश्रम मर्यादा के प्रचारक और समर्थक थे। सौ वर्ष हो चुके हैं अभी तक वर्ण निश्चय करने की विधि निश्चय नहीं हो सकी है। इस पर भी ध्यान होना चाहिये।

अमेरिका के एक प्रसिद्ध लेखक ने जिन का नाम (Andrew Jackson Davis) था अपनी पुस्तक Beyond the Valley के पृष्ठ ३८३ पर आर्य समाज के सम्बन्ध में लिखा था।

जिसका मार ये है कि आर्य समाज एक अग्नि के रूप में है जो विश्व व्यापी है जो सार्वजनिक प्रेम की प्रचारक और जो हर प्रकार के द्वेष आदि मिटाने के लिये जलाई गई है। इस जलती आग को देखकर ये आशा होती है कि सारे संसार में एक चक्रवर्ती धर्म और चक्रवर्ती राज्य का विस्तार हो जायेगा और प्राचीन आर्य समाज को प्रमुख स्थान मिलेगा।

"वैदिक संस्कृति में अतिथि यज्ञ की महत्ता"

(लेखक :—श्री हर्ष वर्द्धन मिश्र शास्त्री एम. ए., ३०० आर्य नगर फिरोजाबाद)

वेदों में जो अतिथि यज्ञ की महत्ता पर प्रकाश डाला गया है, उस अतिथि यज्ञ के स्वरूप से आज का मानव अनविज्ञ सा प्रतीत होता हो रहा है। क्योंकि वह अतिथि के स्वरूप को नहीं जानता यही कारण है कि आप के इस युग में अतिथियों का सत्कार नहीं किया जाता है।

इस विषय पर विचार करने से पूर्व आप का ध्यान आचार्य यास्क के निरुक्त पर आकृष्ट करना चाहता हूं, आचार्य यास्क अपने निरुक्त ग्रन्थ में अतिथि शब्द की व्युत्पत्ति करते हुए लिखते हैं—"अतिथिरम्यतितो गृहान्भवति, अभ्येति तिथिषु परकुलानितिवा" अर्थात अतिथि इधर उधर घरों में पहुचता रहता है या पौर्णमासी आदि तिथियों में वह पर गृह या परकुलों में जाता है। इस के अतिरिक्त अथर्व वेद के निम्न दो मन्त्र भी हमें अतिथि के लक्षण अतिथि सत्कार का स्पष्ट संकेत कर रहे हैं :—

तद्यस्यैवं विद्वान्व्रात्योऽतिथिर्गृहाना गच्छेत ॥१॥

स्वयमेनमभ्युदेत्य ब्रूयाद्व्रात्य क्वाऽवात्सीर्व्रात्योदकं व्रात्यतर्पयन्तुव्रात्य यथा ते प्रियं तथास्तु व्रात्य यथा तेवशस्तथास्तु व्रात्य यथा ते निकामस्तथा

स्वंवति ॥२॥ अ, का. १५ सू. ११

इन मन्त्रों में अतिथि के स्वरूप की ओर संकेत है कि जो पूर्ण विद्वान, परोपकारी, सिवेन्द्रिय, धार्मिक, सत्यवादी, छलकपट रहित नित्य भ्रमण करने वाले मनुष्य होते है उनको अतिथि कहते हैं और जो घर में पूर्वोक्त गुण युक्त विद्वान उत्तम गुण विरिष्ट सेवा करने के योग्य अतिथि आवे तथा जिसके आने जाने की कोई भी तिथि निश्चित न हो अचानक आवे और जावे जब इस प्रकार का अतिथि गृहस्थो के घर मे प्राप्त हो। तब उस को गृहस्थ अत्यन्त प्रेम से उठ कर नमस्कार करके उत्तम आसन पर बैठकर उससे पूछें आपको जल व किसी अन्य वस्तु की इच्छा हो नो कहिये इस प्रकार उसको प्रसन्न कर और स्वयं प्रसन्न चित्त होकर अतिथि से पूछे कि हे व्रात्य ! उत्तम पुरुष आपने आने से पूर्व कहां वास किया था। हे अतिथि ! यह जल लो तथा हम अपने सत्य प्रेम से आपको तृप्त करते है और सब हमारे मित्र लोग आपके उपदेश से विज्ञान युक्त होकर सदा प्रसन्न रहें। जिससे आप और हम लोग परस्पर सेवा और सत्सग पूर्वक विद्या वृद्धि से सदा आनन्दमय हों।

इस प्रकार इन मन्त्रों में अतिथि के स्वरूप एवं स्वागत सत्कार का विधान है। आप स्तम्ब धर्म सूक्त के द्विनोय प्रश्न के तृतीय पटल में भी अतिथि का लक्षण बताते हुए कहा है कि :—

"अग्निरिव ज्वलन्अतिथिरम्या गच्छति'

अर्थात अतिथि प्रज्वलित अग्नि के समान ही घर में आता है।

गृहस्थ और अतिथि :—

यदि सूक्ष्म दृष्टि से विचार किया जाये तो गृहस्थ और अतिथि का घनिष्ट सम्बन्ध माना जाता है क्योंकि गृहस्थाश्रम (विवाह संस्कार) में ही सर्वप्रथम मधुपर्कादि विधि से जो वर का स्वागत किया जाता है वह अतिथि सत्कार का ही संकेत करता है जिस प्रकार से वर का स्वागत वधू के द्वारा किया जाता है उसी प्रकार गृहस्थों को चाहिये कि वह भी अतिथि का सम्मान तथा सत्कार विधि पूर्वक करें इसकी पुष्टि के लिये मनु महाराज जी भी मनुस्मृति के श्लोक में लिखते है कि :—

सं प्राप्ताय त्वतिथये प्रदद्यादासनोदके ।
अन्ने चैव यथा शक्ति सत्कृत्य विधि पूर्वकम ॥
म. अ. ३ श्लो. ९९

अपने आप घर आये हुए अतिथि का विधि पूर्वक सत्कार करके आसन, चरण धोने के लिए जल और यथा शक्ति अन्त व्यंजन आदि दे। गृहस्थाश्रम ही एक ऐसा आश्रम है जिस आश्रम के आधार पर ही ब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ, सन्यास तथा अनेक व्यवहार सुचारू रूप से चलते हैं :—

यथा नदी नता सर्वेसागरे यान्ति सास्थंतम् ।
तथैवाश्रमिण सर्वे गृहस्थे यान्ति सांस्थं-
तम् ॥ मनु. अ. ६ श्लो. ९०

महाराज मनु ने अलिखित मान्यता में गृहस्थाश्रम को कितना महत्व प्रदान किया है। जिस प्रकार नदी नद तब तक भूमते ही रहते हैं जब तक कि वे किसी समुद्र का आश्रय नही लेते उसी प्रकार तीनो आश्रम तथा अतिथि भी गृहस्थ में ही आश्रय लेते है।

वर्तमान युग में प्रायः यह प्रश्न स्वाभाविक है कि आज का मनुष्य एवं अपनी उदर पूर्ति करने में तो असमर्थ है अत. वह अतिथि के लिये नाना व्यंजन कहा से जुटाए इस प्रश्न का समाधान करते हुए मनु जी लिखते हैं :—

तृणाणि भूमि रुदकं वाक् चतुर्थी सून्नृता ।
एतान्यापि सतां गेहे नोच्छिद्यन्ते कदाचन् ॥
म, अ. ३ श्लो. १०१

सोने का तृण, विश्राम को भूमि, चरण धोने

को जल और प्रिय वचन, अतिथि की सेवा के लिये यह भद्र पुरुषो के घर में कभी भी अप्राप्त नही होते। इस श्लोक का वास्तविक अभिप्राय यही है कि सज्जन पुरुष के यहां यदि नाना पदार्थ उपलब्ध न हो तो तृण, भूमि आदि का अभाव कभी नही हो सकता इनके द्वारा ही वह अतिथि की सेवा ठीक प्रकार से कर सकता है। आप स्तम्ब धर्म सूक्त के द्वितीय प्रश्न के तृतीय पटल मे "तस्य पूजायां शान्ति स्वर्गश्च" इस प्रकार अतिथि की पूजा सत्कार से शान्ति तथा स्वर्ग की प्राप्ति का संकेत किया गया है। इसके अतिरिक्त अतिथि की सज्ञा उसे दी गयी है जो :—

एक राग तु निवसन्न तिथि ब्राह्मिणः स्मृतः।
अनित्यं हि स्थिती यस्मात स्माद तिथि सच्यते
॥म अ० ३श्लो० १०२

अर्थात जो दूसरे के घर एक रात्रिमात्र नास करने वाले ब्राह्मण को अतिथि करते है, क्यों कि पराये घर एक तिथि के सिवाय दूसरी तिथि अर्थात दूसरे दिन न रहे इस कारण ही उसकी संज्ञा अतिथि है यहां पाठकों को यह शंका हो सकती है कि क्या ब्राह्मण मात्र ही अतिथि सत्कार के योग्य होता है और क्षत्रिय वैश्य शूद्र नही। इसका समाधान निम्न श्लोक से किया जाता है :—

न ब्राह्मणस्यं त्वतिथि गृंह राजन्य उच्चते।
वैश्य शूसौ सरवा चैत्र ज्ञातयो गुरुखेच
॥म० अ० ३ श्लो० ११०

अर्थात ब्राह्मण के घर में क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र अतिथि नही कहाते है, क्योंकि वह ब्राह्मण से अवर वर्ग के है, सखा और ज्ञाति आत्यमी होने के कारण अतिथि नहीं है। अभिप्रायः तो यह लिया जाता है कि सत्रिय के यहां क्षत्रिय और ब्राह्मण अतिथि हो सकते हैं। वैश्या वा शूद्र नही, तथा वैश्य के यहां द्विसाति मात्र अतिथि हो सकता है, शूद्र नही। यदि ब्राह्मण के घर दूसरे ग्राम से वैश्य और शूद्र अतिथि रुप में आवे तो उन पर भी दया भाव प्रकट कर सेवकों के भोजन के समय उनको भी भोजन करावे यहां यह स्मरण रखना चाहिए कि वैदिक धर्म के सिद्धांतानुसार ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य या शूद्र का वर्गीकरण गुण कर्म के स्वभाव के आधार पर तो है जन्म के आधार पर नही।

किस समय महाभारत का युद्ध हुआ उसके पश्चात् ही हमारे देश की स्थिति तीव्र रूप से अध पतन की ओर जाने लगी तथा दुराचार अनाचार बाल विवाह आदि अनेक कुरीतिया इस देश में फैलने लगी और यहा तक कि आर्य यज्ञादि शुभ कर्मो को भूल गये, ऐसे समय में भारत के रंग मंच पर १९वी शताब्दी में स्वामी दयानन्द जी का प्रादुर्भाव हुआ जब उन्होंने यह देखा तो इन सब कुरीतियों को दूर करने में जुट गए और मनुष्य को अपने भूले स्वरूप को बता कर वेद का उपदेश किया "मनुर्भवभै मनुष्य बनने के लिए पंच महायज्ञों का करना आवश्यक है मनुष्य जीवन में यज्ञ का महत्व बहुत ही आवश्यक बतलाया गया है. पंच महायज्ञों में अतिथि यज्ञ का भी महत्व स्वामी दयानन्द जी ने प्रदान किया है। जिस प्रकार ब्रह्मयज्ञ. देवयज्ञादि से मनुष्य जीवन की उन्नति होती है उसी प्रकार अतिथि यज्ञ के द्वारा मनुष्य मात्र की उन्नति स्वाभाविक है। अथर्ववेद और अतिथि—

अथर्ववेद में अतिथि सत्कार का महत्व विभिन्न प्रकार से पाया जाता है अतः अथर्ववेद

पर भी इस विषय के स्पष्टीकरण के लिए दृष्टि पात कर लेना आवश्यक हो जाता है। अथर्ववेद में अतिथि यज्ञ के करने से विभिन्न प्रकार यज्ञों की फलों की प्राप्ति और उसके न करने से अनेक प्रकार की हानियों का वर्णन किया गया है। इसी विषय का विवेचन अथर्ववेद के मन्त्रों के आधार पर ही किया जा रहा है निम्नाङ्कित मन्त्र में जिस मनुष्य का अन्त अतिथि के द्वारा ग्रहण किया जाता हो उस मनुष्य के सम्पूर्ण पापों की मुक्ति हो जाती है।

सर्वो वा एष जग्ध पाप्मा यस्मान्नमश्नन्ति।
म० का० ९ सू० ६ मं० २५

अर्थात् अतिथि जिस मनुष्य का अन्न ग्रहण कर लेता उस मनुष्य के पापों की निवृत्ति का संकेत उल्लिखित मन्त्र में किया गया है तथा इसके विपरीत अथर्ववेद के दूसरे मन्त्र मे जिस मनुष्य के अन्त का ग्रहण अतिथि के द्वारा नही किया जाता उसके पापों की निवृत्ति नही होती यही संकेत निम्न मन्त्र में किया गया है—

सर्वो वा एष जग्धपाप्मा यस्मान्ननाश्यन्ति।
म० का० ९ सू० ६ म० २६

सम्भवतः अथर्ववेद की इमी भावना को उर्दू शायर ने अपने निगाह शब्दों में व्यक्त किया है--
तेरे घर जो खाए खाना उसका तू मननून हो।
क्योकि वो खाता है अपना तरे दस्तर खान पर।

इसके अतिरिक्त अथर्ववेद मे तीन अग्नियों का प्रयोग अतिथि के निमित किया गया है निम्न मन्त्र में संकेत किया गया है कि—

यो अतिथीनस आहवनीयो योवेश्मनिस गर्हिपत्यो यस्मिन्पचन्ति स दक्षिणाग्निः॥

जिस अग्नि का प्रयोग अतिथि के निमित्त किया जाता है उस अग्नि की संज्ञा आहवनीय अग्नि से की गयी है और जिस अग्नि का प्रयोग गृह कार्य के निमित्त किया जाता है उस अग्नि का नाम गर्हिपत्य अग्नि है तथा जिस अग्नि का प्रयोग अतिथि के भोजनादि पकाने के निमित किया जाना है उस की उपमा दक्षिणाग्नि से दी गई है। इस प्रकार से अतिथि सेवा का फल स्वतः ही प्राप्त होता है और इसके विपरीत अतिथि सत्कार न करने से तथा अतिथि से पूर्व भोजनादि करने से अनेक प्रकार के अनर्थ तथा प्रजा, पशु, कीर्ति आदि का नष्ट होना बताया गया है इन भावनाओ का स्पष्टीकरण करने के लिए निम्नांकत मन्त्रों पर विचार कीजिए—

इष्ट चवा एष पूर्तंच गृहाणामश्नाति यः
पूर्वोऽतिथिरश्नाति। ३१

पयश्च वा एष रस चे गृहणिमश्नति यः
पूर्वोऽतिथिरश्नाति॥ ३२॥

उर्जा चवा एष स्फाति च गृहणामश्नाति यः
पूर्वोऽतिथिरश्नाति॥ ३३॥

प्रजा चवा एष पशूश्च गृहाणामश्नाति यः
पूर्वोऽतिथेरश्नाति॥ ३४॥

घीर्मि चवा एष यशश्च गृहाणामश्नाति यः
पूर्वोऽतिथेरश्नाति॥ ३५॥

श्रियं च वा एव सविद च गृहाणामश्नातियर
पूर्वोद्वतिये रश्नाति॥ ३६॥

एषवा अतिथिर्यच्ट्रो त्रियस्बरमात्पूर्णो नाश्नी-
यात्॥ ३७॥

अ. काण्ड ९ सू. ६

इन मन्त्रों का वास्तविक अभिप्राय यही है कि जो गृहस्थ अतिथि से पूर्व भोजनादि करता है, वह गृहस्थ प्रजा, पशु कीर्ति, यज्ञ, श्रिय आदि मम्पूर्ण सम्पत्ति को अतिथि से पूर्व भोजन कर स्वयं ही नष्ट कर लेता है जो घर आए हुए अतिथि का आदर तथा सत्कार विधि पूर्वक नहीं करता वह अपनी अनेक विध सम्पत्ति को नष्ट कर पाप का भोगने वाला होता है। अत प्रत्येक गृहस्थ को मन्त्रों के आधार पर ही संकेत किया गया है कि जो अतिथि होता है वह श्रोत्रिय कहता है उसकी सेवा से यश, आयु तथा स्वर्ग की प्राप्ति होती है इस वाक्य की पुष्टि मनु महाराज जी ने निम्न श्लोक से की है:—

नवै स्वयं वदश्नीयादतिथि यन्त्र भोनयेत पूजनम् ।
धन्यं यशस्यमायुष्यं स्वर्ग्यं वाणि सी हे पूजनम् ॥

म. अ. ३ श्लो. १०६

अतः अतिथि के लिए घी, दही, उत्तम द्रव्य, को बिना दिये भोजन न करें क्योंकि अतिथि सेवा से बहुत सीसम्पद, यश आयु और स्वर्ग प्राप्त होता है । अनेक गृहों में इस प्रकार की परिस्थितियां उपस्थित हो जाती हैं कि जिस घर में रोगी आदि भी होते हैं तो क्या अतिथि से पूर्व रोगी आदि की भी भोजन नहीं देना चाहिए ? यह प्रश्न भी स्वामाविक ही है । इसके सन्दर्भ में निम्न श्लोक पर भी दृष्टिपात कर लेना अनुचिन न होगा क्योंकि :—

सुकसिनीः कुमारीश्च सेगिणो र्मकिणीर तथा ।
अतिथि भ्योः डस एवता-भीसयेद विचारयन् ॥

म० अ० ३ श्लो० ११४

अर्थात जिस घर में नवीन विवाहिता स्त्री, पुत्रवधू, कन्या, बालक, रोगी और गर्भवती हो इन को कुछ विचार न करके अतिथि से पूर्व ही भोजन करा देना चाहिए । इसके उपरान्त अथर्ववेद के अन्तर्गत इस प्रकार के मन्त्र भी पाये जाते हैं जोकि संकेत करते हैं कि अग्निष्टोमादि यज्ञों के द्वारा जिन फलों की प्राप्ति होती है ठीक उसी प्रकार अतिथि सेवा के द्वारा भी वही फल प्राप्त होते हैं जोकि अग्निष्टोमादि यज्ञों के द्वारा प्राप्त होते हैं उदाहरण के आधार पर निम्न दो मन्त्र हैं :—

यावदग्निष्टोमेनेष्ट्वा सुसमृद्धनाव रुन्धे तावदेन नाव रुन्धे ।

अ० का० ९ सू० ६ मं० ४०

यावदति रात्रेणेष्ट्वा सुसमृद्धेनाव रुन्धे तावदेने नाव रुन्धे ।

अ० का० ९ सू० ६ मं० ४१

इन उल्लेखित मन्त्रों के अन्तर्गत यह भाव स्पष्ट किया गया है कि विधि पूर्वक जिस प्रकार अग्निष्टोम तथा अतिरात्र यज्ञों के करने से जिन फलों की प्राप्ति होती है । ठीक उसी प्रकार विधि पूर्वक अतिथि सेवा से भी फलों की प्राप्ति होती है जोकि अग्निष्टाम तथा अतिरात्र यज्ञों के द्वारा प्राप्त होते हैं । इसी प्रकार ऋग्वेद के निम्नलिखित मन्त्र में प्रत्येक गृहस्थ को अपनी सम्पत्ति को बांट कर ही भोगने का अधिकार बताया गया ।

मोघमंज विन्दते अप्रचेतः सत्ये ब्रवीकिवध इत्सतस्य ।
नार्यमणं पुष्यति को सखाये केवलायो भवति क्यलादी ॥

ऋ० १०।१७।५

अर्थात वह मूर्ख व्यर्थ ही धन धानय ऐश्वर्यादि के प्राप्त करता है और वह धन धान्य उस के लिए मृत्यु या हत्या ही है जो अपने धन धान्य से ज्ञानवान अतिथि को अथवा अपने पड़ोसी मित्र की पुष्ट नहीं करता है केवल अकेला खाना वाला व्यक्ति पाप खाने वाला माना जाता है इसी भावना का संकेत श्री मद्भगवद्गीता के अधिलिखित श्लोक में मिलता है —:

यज्ञ शिष्टाशिनः सन्तो मुच्यते सर्व किल्बिषैः ।
भुञ्जते ते त्वघं पापान् ये पचन्त्यात्मकारणात् ॥

इस प्रकार प्राचीन आर्य वाङ्मय में शतशः स्थलों पर अतिथि के स्वागत सम्मान सत्कार

(शेष पृष्ठ ४३ पर)

स्वामी दयानन्द और गोरक्षा

(ले०—डा० भवानीलाल जी भारतीय, एम० ए० पी० एच० डी०)

आर्य वैदिक साहित्य के जिज्ञासु विद्वान् हैं। आपने वेद सेवक विद्वान् पुस्तक का सम्पादन किया है। जिससे प्रकट है कि आपने हरेक विद्वान् के ग्रन्थों का गहरा अध्ययन किया है। आपके लेख विषय के स्पष्ट एवं पूर्ण अभिज्ञता के द्योतक होते हैं। इस लेख में गोरक्षार्थ ऋषि की सम्पूर्ण चेष्टाओं को प्रदर्शित किया है।

—सम्पादक

विभिन्न राष्ट्रीय और मानवीय समस्याओं के प्रति स्वामी दयानन्द की दृष्टि कैसी दूरदर्शी थी, यह उनके गोरक्षा, कला कौशल प्रसारण आदि के लिये किए गए उद्योगों से विदित होता है। उनकी यह स्पष्ट धारणा थी कि दूध देने वाली गौ आदि पशुओं का क्रूर बध देश की आर्थिक अवस्था को विनष्ट करने वाला था। भारत जैसे कृषि प्रधान देश में गाय, बैल आदि की उपयोगिता सर्वविदित हैं। यही कारण हैं कि आर्य संस्कृति में गो-वर्ग के पशओं की महत्ता स्वीकार की गई है। वेदों में उसे अघ्न्या न मारने योग्य कहा है। कालान्तर में जब विदेशी शासन में गोवध प्रारम्भ हुआ तो उससे देश के करोड़ों निवासियों को आन्तरिक वेदना अनुभव हुई। कई मुसलमान शासक अपनी हिन्दू प्रजा के प्रति सद्भावना प्रदर्शित करने हेतु गो-बध पर प्रतिबन्ध भी लगाते थे, परन्तु ब्रिटिश शासन में गोबध निर्बाध गति से होने लगा। गोरी सेनाओ में गोमांस भक्षण का प्रचलन था, अतः यत्र तत्र बूचड़खानो में सहस्रों की संख्या में निर्मम गो-संहार होने लगा।

स्वामी दयानन्द ने गोरक्षा के प्रश्न को विशुद्ध आर्थिक दष्टि से देखा था। उनका दृष्टिकोण पूर्णतया उपयोगिताबादी था। उनकी यह स्पष्ट धारणा थी कि गो-वध को रोके बिना देश को आर्थिक दृष्टि से समृद्ध नहीं बनाया जा सकता, गो-बध निवारण के लिये स्वामी जी ने अपने जीवन काल में जो प्रयत्न किये वे सर्व विदित हैं, उनके एतद् विषयक प्रयत्नों को निम्न प्रकार से विवेचित किया जा सकता है—(१) ब्रिटिश अधिकारियों से भेंट कर गो-बध रोकने हेतु प्रार्थना करना (२) 'गो करुणानिधि पुस्तक की रचना द्वारा गो-रक्षा के लाभों को सार्वजनिक रूप से प्रचारित करना तथा गो-कृष्यादि रक्षिणी सभाओं का संगठन (३) भारत की सर्वोच्च प्रशासिका इंग्लैंड की महारानी तथा ब्रिटिश पार्लियामैंट की सेवा में करोड़ों भारतीयों से हस्ताक्षर कराकर गो-बध पर प्रतिबन्ध लगाने हेतु आवेदन पत्र भेजना।

स्वामी जी के जीवन का अध्ययन करते समय हम देखते हैं कि जब भी उनकी अंग्रेज अधिकारियों से भेंट होती, वे गो-रक्षा की चर्चा अवश्य करते। जब १९६६ ई० में वे अजमेर गये तो राजपूताना के ए० जी० जी० कर्नल ब्रुक से उन्होंने गो-रक्षा की उपयोगिता तथा महत्व

पर विस्तार से चर्चा की। कर्नल को यह स्वीकार करना पड़ा कि गो-रक्षा की महत्ता निर्विवाद हैं परन्तु उसने स्वयं इस सम्बन्ध में कुछ करने में अपनी असमर्थता प्रदर्शित की। परन्तु उसने स्वामी जी को भारत के गवर्नर जनरल के नाम एक पत्र देते हुये यह कहा कि वे इस सम्बन्ध में उनसे भेंट करें। इसी प्रकार १८७३ मेंफर्रूखाबाद निवास के समय उन्होंने पश्चिमोत्तर प्रदेश के लैफ्टीनैंट गवर्नर श्री म्यूर से भेंट की तथा उनसे निवेदन किया कि राज सेवा से अवकाश लेकर जब वे इंग्लैंड जाएं तो वहां इण्डिया आफिस के अधिकारियों को गो-बध पर प्रतिबन्ध लगाने हेतु प्रेरित करें।

परन्तु स्वामी जी यह भी जानते थे कि केवल अधिकारियों के समक्ष प्रार्थना और निवेदन मात्र ही पर्याप्त नहीं है। शासकों को लोकोपयोगी कार्य करने हेतु बाध्य करने में जनमत की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। अतः स्वामी जी ने गो-रक्षा के महत्व को सर्वत्र प्रचारित करने का यत्न किया। इस उद्देश्य की सिद्धि के लिए उन्होने गो-करुणा निधि नामक एक लघु ग्रंथ की रचना की। इस पुस्तक के तीन खण्ड है। प्रथम समीक्षा प्रकरण में युक्ति एवं तर्क पूर्ण ढंग से गो-रक्षा के महत्व का विवेचन किया गया है। गणित करके सिद्ध किया है कि एक गाय की रक्षा से ही असख्य लोगों को लाभ पहुंचता है जबकि उसके मास से कुछ ही लोगों की क्षुधा मिटती है। हिसक रक्षक संवाद के अन्तर्गत मांस भक्षियों के विभिन्न तर्कों का खण्डन किया गया है। इस विवेचन के अन्त में लेखक अत्यन्त भावुक होकर परमात्मा से गो आदि मूक पशुओं की रक्षा के लिये प्रार्थना करते हुये लिखता है

हे महाराजाधिराज जगदीश्वर! जो इनको कोई न बचावे तो आप इनकी रक्षा करने और हमसे कराने में शीघ्र उद्यत हूजिये। स्वामी जी ने गो-रक्षा को विशुद्ध आर्थिक और उपयोगितावादी दृष्टि से ही देखा था, यह हम ऊपर लिख चुके हैं। यदि गो रक्षा को एक धार्मिक प्रश्न बना दिया जाये तो यह निश्चित है हिन्दुओं से इतर मुसलमान, ईसाई, आदि की इस महत्वपूर्ण समस्या के प्रति कोई सहानुभूति नही रहेगी। स्वामी जी तो यह मानते थे कि गो आदि पशुओं के नाश से राजा और प्रजा का भी नाश हो जाता है। इसी प्रकार स्वामी जी ने गौओं के ही तुल्य भैंस, बकरी आदि दुधारू पशुओं की उपयोगिता भी स्वीकार की है। वे तो यह भी मानते हैं कि इसी प्रकार सुअर, कुत्ता, मुर्गा, मुर्गी और मोर आदि पशु पक्षियों से भी अनेक उपकार होते हैं। परन्तु वे यह भी जानते थे कि सबका पालन उत्तरोत्तर समयानुकूल होवेगा, वर्तमान में परमोपकारक गौ की रक्षा में मुख्य तात्पर्य है। इस प्रकार गो रक्षण के सर्वोपरि महत्व को स्वीकार कर उसके लिए सामूहिक प्रयत्न पर जोर देना स्वामी जी की विशेषता रही। गो रक्षा के लिए सुसंगठित प्रयास आवश्यक है, यह भी वे जानते थे। फलतः उन्होंने गो-कृष्यादि रक्षिणी सभाएं स्थापित करने की प्रेरणा दी तथा उसके नियमों का संकलन इसी पुस्तक के तृतीय खण्ड में किया।

लोकमत की शक्ति को स्वामी जी भली-भांति समझते थे। यदि करोड़ों की संख्या में भारतवासी एक प्रार्थना पत्र पर हस्ताक्षर कर तत्कालीन शासकों को प्रेषित करे तों सम्भवतः उनकी फरियाद की सुनाई हो और प्रबल जनमत को देखते हुये गो-बध पर प्रतिबन्ध लगाया

जा सके। इस विचार को क्रियान्वित करने के लिये स्वामी जी ने एक आवेदन पत्र तैयार कर उस पर देशवासियों के हस्ताक्षर कराने का अभियान चलाया। हस्ताक्षर किस प्रकार कराये जाएं। इस सम्बन्ध में स्वामी जी के शिष्य रामानन्द ब्रह्मचारी ने श्री रूपसिंह जी के नाम अपने पत्र में लिखा—उसमें सही इस प्रकार करानी होगी कि जिस महाशय के मेल में जितने आर्य पुरुष हों उन सबकी ओर से वह एक पुरुष अपने हस्ताक्षर कर दें कि इतने सौ इतने हजार इतने लाख व इतने करोड़ पुरुषों की ओर से मैं अमुक नाम पुरुष अपने हस्ताक्षर करता हूं। इस प्रकार सही करके पश्चात् जितने पुरुषों की ओर से उसने सही की हो उन सबके हस्ताक्षर कराके अपने पास रखा लें। स्वयं स्वामी जी ने अपनी इस योजना को मन्त्री आर्य समाज दानापुर के नाम प्रेषित अपने पत्र में इस प्रकार व्यक्त किया —मैं आप परोपकार प्रिय धार्मिक जनों को सब जगत् के उपकारार्थ गाय, बैल और भैंस की हत्या के निवारणार्थ दो पत्र एक तो सही करने का और दूसरा जिसके अनुसार सही करनी है, दो पत्र भेजता हूं। इनको आप प्रीति और उत्साह पूर्वक स्वीकार कीजिये। जिससे आप महाशय लोगों का यश इस संसार में सदा विराजमान रहे। इस काम को सिद्ध करने का विचार इस प्रकार किया गया है कि दो करोड़ से अधिक राजे महाराजे और प्रधान आदि महाशय पुरुषों की सही कराके आर्यावर्तीय श्रीमान् गवर्नर जनरल साहब बहादुर से इस विषय की अर्जी करके ऊपरीलिखित गाय आदि पशुओं की हत्या को छुड़वा देना। इस पत्र के साथ स्वामी जी ने सही करने का पत्र तथा दूसरा जिसके अनुसार सही करनी है दोनों भेजे गये थे।

स्वामी जी के शिष्य रामानन्द ब्रह्मचारी ने पूर्वोक्त महाशय रूपसिंह को अपने पत्र में प्रेरणा दी कि आप पुनः दो एक मास की छुट्टी लेकर पंजाब हरियाणा, पटियाला और काश्मीर आदि अच्छे २ राजस्थानों में गो-बध के नुक्सान व्याख्यान द्वारा विदित कर बड़े बड़े प्रधान राज पुरुष तथा राजा महाराजाओं की सही करावें तो बस आप आर्यावर्त्त में सर्वोत्तम प्रतिष्ठा और महा पुण्य के भागी होवें। ब्रह्मचारी जी के ही एक अन्य पत्र से विदित होता है कि गो-रक्षा हेतु यह हस्ताक्षर आन्दोलन द्रुततर गति से प्रगति कर रहा था। कलकत्ता से प्रकाशित होने वाले भारत मित्र पत्र ने भी इस आन्दोलन का समर्थन किया था। बम्बई और गुजरात से सहस्रों लोगों के हस्ताक्षर कराये गये। शाहपुरा के राजाधिराज ने ४०००० मनुष्यों से हस्ताक्षर कराकर स्वामी जी की सेवा में प्रेषित किये। ब्रह्मचारी जी ने यह भी शिकायत की है कि इस महोपकारक काम में डाक वालों ने बहुत दुष्टता की है। रजिस्टर्ड पत्र भी गायब होने लगे क्योंकि मेरठ के लाला रामशरण दास के पास ३०० रजिस्टर्ड पत्र भेजे गये थे किन्तु वे उन्हें नहीं मिले। उदयपुर से फर्रूखाबाद के लाला कालीचरण रामचरण के नाम भेजे गये अपने पत्र में स्वामी जी ने गो रक्षा तथा राज कार्य में आर्य भाषा के प्रवृत्त होने के विषय दो मुख्य कार्यों का उल्लेख किया है तथा निर्देश दिया है कि गो रक्षार्थ सही और आर्य भाषा के राजकार्य में प्रवृत्त होने के अर्थ शीघ्र प्रयत्न कीजिये।

इसी प्रकार के पत्र पं. गोपाल राव तथा बम्बई के श्री सेवक लालकृष्ण दास को लिखे गये हैं। भारत मित्र के सम्पादक को पत्र लिखकर स्वामी जी ने पूछा है कि—जो एक पत्र बहुत दिन हुये मैंने लिखा था, जिसमें गो रक्षार्थ अर्जी देने का मसौदा वहां के वकील बैरिस्टरों से पूछा कि आप लिखें, उसका क्या हुआ, अब उसमें अधिक बिलम्ब करना मैं उचित नहीं समझता। इस प्रकार हम देखते हैं कि गो रक्षा हेतु स्वामीजी प्रबल जनमत तैयार कर रहे थे। उनके द्वारा प्रस्तुत किये जाने वाले इस प्रार्थना पत्र पर महाराणा उदयपुर, महाराणा जोधपुर तथा महाराव बूंदी आदि स्वदेशी राजाओं ने भी हस्ताक्षर किये थे। यह खेद की बात हैं कि असमय में ही स्वामी जी के दिवंगत हो जाने के कारण उन्हें अपने इस संकल्प की पूर्ति में सफलता नहीं मिली और गो रक्षा का उपयोगी प्रश्न सदा के लिये पिछड़ गया।

सिंहावलोकन तथा भावी कार्यक्रम

(ले०—श्री रामगोपाल शालवाले प्रधान सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली)

ओ३म् इन्द्रं वर्धन्त्वऽप्तुर:
कृण्वन्तो विश्वमार्यम्, अपघ्नन्तोऽराब्ण:।

आज से एक सौ वर्ष पूर्व चैत्र शुक्ला प्रतिपदा सं० १९३२ तदनुसार ६ अप्रैल, १८७५ बम्बई के गिरगांव मुहल्ला की मणिकराव की वाटिका में मानव मात्र के कल्याण के लिये धर्म रक्षार्थ आर्य समाज के नाम से महर्षि दयानन्द ने क्राति-कारियों की प्रथम टोली का निर्माण किया।

महर्षि दयानन्द वैदिक धर्म के पुरातन एवं शाश्वत सत्यों के आधार पर सम्पूर्ण विश्व के जन-समुदाय को एक ईश्वर का उपासक बनाकर आपसी सद्भाव द्वारा परमात्मा के अमृत पुत्रों को धर्म की वेद मूलक माला मे पिरोना चाहते थे।

धर्म के नाम पर फैले पाखण्ड को चाहे वह अपना हो अथवा पराया समान रूप से मूलोच्छेद करके सत्य सनातन वैदिक धर्म की स्थापना करके मनुष्य शरीरधारी चाहे वह छोटा कुलोत्पन्न हो या बड़े कुलों का सबको समान रूप से उन्नति करके लौकिक सुख और पारलौकिक परमानन्द की प्राप्ति का अधिकार दिया था। इसीलिये वर्ण व्यवस्था के सिद्धान्त की जन्मना मानकर गण कर्म स्वभाव के अनुसार स्वीकार करके जाति-पांति की रूढ़िवादिता पर सर्व-प्रथम आर्य समाज के प्रवर्त्तक ने ही कुठाराघात किया। ईश्वर जीव प्रकृति तीन सनातन सत्ताओं को नित्य बताकर नवीन वेदान्त के झूठे अद्वैतवाद का निराकरण करके अज्ञान का पर्दा हटाकर सत्य सिद्धान्त का प्रतिपापन किया।

सृष्टि उत्पत्ति के विज्ञानमूलक सिद्धान्त को व्याख्या करके हजारों वर्षो के पश्चात् महर्षि दयानन्द ने घोषणा पूर्वक कहा कि आज से १ अरब ९७ करोड़ २९ लाख ४९ हजार ७५ वर्ष पूर्व जतत् के रचयिता ने पंचभूतात्मक प्राणियों को उत्पन्न करने के अनन्तर मानवी सांचों को आधार बनाकर युवा स्त्री पुरुषों का निर्माण करके प्रथम मानवी पीढ़ी को अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा इन चार ऋषियों को पवित्र हृदय स्थली में चारों वेदों का सनातन ज्ञान प्रसारित कर मार्ग दर्शन किया और जीवन यापन के सभी सिद्धान्तों की वैदिक व्याख्या करके योगी दयानन्द ने पाश्चात्य विकास वाद के भौतिक सिद्धान्त पर गहरी चोट करके वेद के प्राचीनतम रहस्यों का स्पष्ट प्रतिपादन किया।

अपने देश में अपना राज यह घोषणा सन् १८७५ में सर्व प्रथम सत्यार्थ प्रकाश द्वारा आर्य समाज के प्रवर्त्तक ने ही की थी। अविद्या, अज्ञान, और अभाव को दूर करना प्रत्येक आर्य का प्रमुख कर्त्तब्य हैं। आर्य समाज के सेवकों ने

अनेक प्रकार की आंधियों का प्रतिरोध करके *उपरोक्त महान् कार्य* को पूरा करते हुए अपने प्राणों तक को न्योछावर करके अविद्या को दूर करने का सद् प्रयत्न किया।

यज्ञों के नाम पर हिंसा की जाती थी। आज से सौ वर्ष पूर्व महर्षि दयानन्द ने घोषणा पूर्ण कहा कि वैदिक यज्ञ हिंसा से रहित होते थे। अश्वमेघ यज्ञ में घोड़े नहीं मारे जाते थे। राष्ट्र का निर्माण करना ही अश्वमेघ यज्ञ है।

स्वामी दयानन्द सरस्वती के प्रसाद से आर्य समाज के विद्वानों और कार्यकर्त्ताओं ने घर में यज्ञ करके देश के वायु मण्डल को सुगन्ध युक्त बनाने का प्रयत्न किया।

अछूतोद्धार तथा शुद्धि का आन्दोलन चलाकर आर्य समाज ने आर्य जाति के कटते हुये पैरों को बचा लिया। इस महान् कार्य की पूर्ति के लिये हमें अनेक बलिदान देने पड़े, भावी सन्तति और आर्य जाति के भविष्य को सुरक्षित कर दिया।

भावी कार्यक्रम

महर्षि दयानन्द के विचारों के प्रकाश में एवं आज की बदलती परिस्थितियों के सन्दर्भ में भबिष्य में इन कार्यो को क्रियान्वित करने की ओर हमें अग्रसर होने की आवश्यकता है।

देश विदेश मे विराजमान, पूजनीय संन्यासी वानप्रस्थी, गुरुकुलों, कालिजों तथा संस्थानों के प्राचार्य एवं उपाध्यक्ष, प्रबन्धकों, आर्य समाज के माननीय अधिकारियों युवक संगठनों के जागरूक प्रहरी तथा महिला समाज की देवियो से मेरा विनम्र निवेदन है कि अपना पूरा समय आर्य समाज के माध्यम से जन सम्पर्क बनाने धार्मिक तथा राजनैतिक क्षेत्र से भ्रष्टाचार मिटाने एवं यज्ञों के माध्यम से वेद के पावन सिद्धान्तों का प्रचार करने में लगावें। देश में दहेज प्रथा का उन्मूलन तथा अन्तर्जातीय व अन्तर प्रान्तीय विवाहों को प्रोत्साहन दे।

देशद्रोही तत्वों से देश के शासन को अवगत करा साथ ही गो पालन की प्रेरणा तथा गो-हत्या विरोधी आन्दोलन को सक्रिय बनाकर भारत के मस्तक से गो-हत्या के कलंक को मिटा कर महर्षि दयानन्द के दिव्य स्वप्न को साकार बनावें।

आर्य समाज स्थापना शताब्दी के पुनीत अवसर पर हम सब को आत्म निरीक्षण करना चाहिए और आपसी मतभेदों को भुलाकर संगठित रूप से आर्य समाज को सुदृढ़ बनावें। युग प्रवर्त्तक योगी वेद भाष्यकार महर्षि दयानन्द सरस्वती की वेद मूलक मान्यताओं को पूर्ण कर दिखाने की अपूर्व क्षसता जुटानी होगी। तभी हमें आर्य कहलाने का अधिकार प्राप्त होगा।

देव गुरु वो प्यारा

(ले०—वीरेन्द्र-कुलदीप 'साथी')

आर्य समाज बना के ऋषि ने, दूर किया अंधियारा,
क्या गाएं हम ऋषि की महिमा, देव गुरु वो प्यारा,
सबका प्यारा ऋषि प्यारा—हो—।

मथुरा नगरी में वेदों का मूल ने ज्ञान था पाया,
गुरु विरजानन्द के चरणों में अपना शीश निवाया,
अपना सीस निवाया योगी बन दिखलाया,
वेदों के प्रचार की खातिर, घूमा भारत सारा,
सब का प्यारा——ऋषि प्यारा——।

भारत में था पाखण्डियों ने, भारी जाल बिछाया,
दूर किया भ्रम जाल ऋषि ने, सबको समान बनाया,
सब को समान बनाया वैदिक ध्वज लहराया,
पाखण्डियों के पोल खोल दे, दिया ओम् का नारा,
सब का प्यारा——ऋषि प्यारा——।

ईंट पत्थर खाये ऋषि ने, फिर भी न घबराया,
आप जहर का पान किया पर अमृत हमें पिलाया,
अमृत हमें पिलाया, सच्चा राह दिखाया,
आया था उपकार ही करने, देव गुरु वो प्यारा,
सब का प्यारा——ऋषि प्यारा——।

केवल इक ही दीपक ने थे, लाखों दीप जलाये,
धर्म जाति और देश की खातिर, अपने प्राण गंवाए,
अपने प्राण गंवाये, हम बलिहारी जाएं,
दुनिया भर का सच्चा, साथी देव गुरु था प्यारा,
सब का प्यारा ऋषि प्यारा——।

आर्य समाज ने क्या किया ?

—लाला रामगोपाल शालवाले, प्रधान सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा

(१३ अप्रैल से आगे)

अंग्रेजी सरकार का कोप

(अंग्रेजी सरकार के एजेण्टोमें पटियाला नरेश ने रातो रात ७० आर्यो को राजद्रोह के अपराध में गिरफ्तार कर लिया। धौलपुर रियासत ने भी आर्योंको गिरफ्तार कर लिया।)

इलाहाबाद हाईकोर्ट में आर्याभिविनय के चक्रवर्ती साम्राज्य स्थापित करने के प्रार्थना मंत्रों पर आपत्ति उठाकर आर्य समाज को अदालतों में घसीटा गया। लाला लाजपतराय, सरदार अजीतसिंह देवता स्वरूप भाई परमानन्द आदि अनेकों आर्य कार्यकर्त्ताओं को देश निकाला तथा आजन्म कारावास की घोर यातनाएं दी गईं। ऐसी परिस्थिति में आर्य वीरों ने ओ३म् बन्दे मातरम् पार्टी नामक क्रान्तिकारी दलकी स्थापना कर दी।

क्रान्तिकारियों के परम गुरु श्री श्याम जी कृष्ण वर्मा थे, जो स्वामी दयानन्द के प्रथम कोटि के शिष्योंमें से एक थे। जिन्हे छात्रवृत्ति दिलाकर इंगलैंड भेजा गया, जिनके प्रयत्नों से ही विदेशों में अंग्रेजी शासन के विरुद्ध प्रबल आन्दोलन हो सका, जिनके हजारों शिष्यों ने भारत में क्रान्तिकारियों का अद्वितीय संगठन स्थापित कर रखा था, जिनके प्रधान शिष्य श्री दामोदर सावरकर बड़े गौरवपूर्ण शब्दों में अपने आपको स्वामी दयानन्द का पटशिष्य कहते हैं। इसी प्रकार काकोरी केस के अभियुक्त श्री राम प्रसाद बिस्मिल, श्री मदनलाल ढींगरा, श्री गेंदालाल दीक्षित, श्री रोशनसिंह आर्य सरदार भगतसिंह आदि अनेकों आर्य युवकों ने सशस्त्र क्रान्ति क विदेशी सत्ता से भारत को मुक्त कराने के लिए प्रसन्नता पूर्वक फांसी के तख्तों का स्वागत किया सरदार भगतसिंह ने अपने चचा सरदार अजीत सिंह की भान्ति विधिपूर्वक श्री पं० लोकनाथजी तर्क वाचस्पति से यज्ञोपवीत एवं गायत्री मन्त्र की दीक्षा ली थी।

इस प्रकार अंग्रेजी प्रभुता को नीचा दिखाने तथा भारत का मस्तक ऊंचा करने का सर्वप्रथम कार्यक्रम आर्य समाज द्वारा ही प्रारम्भ किया गया।

विदेशी शिक्षा का बहिष्कार

ईसाई पादरी शिक्षा के नाम पर भारतीय शिक्षित युवकों को धड़ाधड़ ईसाई बना रहे थे। सरकारी खजाने तथा विदेशों से करोड़ों रुपयों की सहायता शिक्षा के नाम पर ईसाई मिशन को मिल रही थी।

स्वामी दयानन्द जी महाराज ने अपना घर-बार त्याग कर गंगा तट पर गुरुकुल विश्व-विद्यालय के नाम से धार्मिक विद्या पीठ की सुस्थापना कर दी। आश्चर्य की बात है कि इतने बड़े विश्वविद्यालय का संचालन अंग्रेजी सरकार से बिना एक पैसेकी सहायता लिए सफलता पूर्वक किया गया। भारतीय युवकों में वैदिक धर्म के प्रति प्रगाढ़ आस्था उत्पन्न करने और स्वाभिमान एवं जागृति का वातावरण उपस्थित करने के लिये आर्य समाज के निर्धन कार्यकर्त्ताओं ने उस प्रकार के सैकड़ों स्वतन्त्र गुरुकुलों की देश के विभिन्न भागों में स्थापना

कर दी। यह गौरव केवल आर्य समाज को ही प्राप्त है कि इन गुरुकुलों के लिये एक पैसा भी विदेशी सरकार से नहीं लिया जाता था।

ब्रिटिश सरकार ने भी इस महत्वपूर्ण योजना को विफल करने के कई ढंग चलाए। अन्त में ब्रिटिश पार्लियामेंट के प्रधान सदस्य श्री रेमजे मैकडानल्ड की प्रधानता में एक जांच कमीशन गुरूकुल कांगड़ी के ब्रह्मचारियों को राजद्रोहात्मक शिक्षा देने की पड़ताल करने के लिए इंग्लैण्ड से भारत भेजा गया।

उधर स्वामी दयानन्द के निधन के पश्चात् लाला लाजपतराय और महात्मा हसराज ने ईसाई कालिजों का प्रतिकार करने के लिए डी० ए० वी० कालिजों एवं स्कूलों का सारे देश भर में जाल बिछा दिया।

इन डी० ए० बी० कालिजों ने हिन्दू नवयुवकों को शिक्षा की रीति-नीति से ईसाइयत के भ्रमजाल से निकालने का कैसा शानदार काम किया यह भारत के तत्कालीन इतिहास वेत्ता जानते हैं!

स्त्री शूद्रों नाऽधीयताम् जैसे वेद-विरुद्ध वाक्यों का उन्मूलन करने के लिये भारत भर में सर्वप्रथम जालन्धर में कन्या महा विद्यालय की स्थापना ला० देवराज जी द्वारा की गई, कन्या गुरुकुल देहरादून, कन्या गुरुकुल सासनी आदि अनेकों कन्या विद्यालयों का संचालन कर आर्य समाज ने स्त्री शिक्षा का कार्य हजारों वर्षों के पश्चात् किया।

तिमिर नाश अथवा ज्ञान का प्रकाश

मिर्जा कादियानी का स्वाभिमान तो धर्मवीर पं० लेखराम ने उनके घर कादियान में जाकर ही चूर-चूर कर दिया था। कादियानी षड्यन्त्रकारियों ने युक्ति का उत्तर छुरे से देकर धर्मवीर को धर्म के इतिहास में अमर बना दिया। स्वामी श्रद्धानन्द ने शुद्धि के सुदर्शन चक्र को चलाकर ख्वाजा हसन निजामी और मौलाना मोहम्मदअली के होश ठिकाने लगा दिये! पुराने धार्मिक असहिष्णुता की पुनरावृति कर दिल्ली में स्वामी श्रद्धानन्द की छाती पर तीन गोलियाँ दाग कर ओ३म् के तीन अक्षरों को लिख दिया गया। इसी प्रकार शास्त्र समर के प्रसिद्ध सेनानी श्री स्वामी दर्शनानन्द जी महाराज, पं० मुरारी लाल शर्मा, पं० धर्म भिक्षु, पं० रामचन्द्र देहलवी आदि अनेकों आर्य वीरों ने बिदेशी धर्मों की भ्रम मूलक विचार धारा का जिस विद्वता और वीरतापूर्ण ढंग से प्रतिकार किया, उस त्याग तपस्या और जोवन की बाजी लगा देने का शब्दों द्वारा वर्णन नहीं किया जा सकता। आर्य समाज के विद्वानों ने आर्य सिद्धान्तों का प्रचार तथा शास्त्रार्थों में विजय प्राप्त कर विरोधी दल पर अपनी विद्या की धाक बिठा दी। हैदराबाद में माननीय पं० रामचन्द्र जी देहलवी के प्रचार से जनता में वह जागृति और चेतना उत्पन्न हुई जिसे देखकर निजाम उसमान अली घबरा उठा और आर्य समाज पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया, पं० रामचन्द्र देहलवी गिरफ्तार कर बन्दी बना लिये गये। इस समाचार से समग्र भारत में असन्तोष की लहर दौड़ गई। निजामी शासन की कूटनीति का प्रतिकार करने के लिये सार्वदेशिक सभा के प्रधान महात्मा नारायण स्वामी जी के नेतृत्व में १८ हजार आर्य वीरों की प्रबल सत्याग्रही सेना ने घोर शारीरिक यातनाएं उठाकर निजामी जेलों को भर दिया। स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी ने जिस योग्यता से आर्य वीरों का सैन्य संचालन किया उसे भुलाया नहीं जा सकता। ३१ आर्य वीरों का बलिदान निजाम की सख्तियों के कारण जेलों में हो गया, इसी प्रकार लोहारु के नवाबने भी आर्य समाजके

कार्यकर्ताओं पर क्रूरतापूर्ण आक्रमण कराये। कराची में लीगी मन्त्रिमण्डल ने सत्यार्थ प्रकाश के चौदहवें समुल्लास पर प्रतिबन्ध लगा दिया जिसके विरुद्ध महात्मा नारायण स्वामी ने दूसरी बार आर्य वीरों को सत्याग्रह के लिये आवाहन किया। मुस्लिम लीगी मन्त्रिमण्डल ने अपनी भूल स्वीकार कर प्रतिबन्ध हटा लेने की घोषणा की। इस प्रकार की अनेक घटनाएं, जिनका विस्तार भय से यहां वर्णन नही किया जा सकता

सन् १८७९ में प्रथम गोशाला का शिलान्यास रिवाड़ी में श्री स्वामी दयानन्द जी द्वारा किया गया।

आर्य समाज स्थापना शताब्दी और हमारा कर्त्तव्य

(ले०—श्री शिवदयालु पूर्व मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा उ० प्र०, आर्य वानप्रस्थाश्रम ज्वालापुर)

आर्य समाज ने गत सौ वर्षो में जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में जो महान् कार्य किये हैं उनका चित्रण सर्व साधारण जनता के मानस पर कराना हमारा प्राथमिक कर्त्तव्य है।

भावी कार्यक्रम की रूप रेखा का भी इस शताब्दी के अवसर पर आर्य समाज के कर्णधारों के लिए निर्धारित करना नितान्त आवश्यक है।

मेरी दृष्टि में आर्य समाज को सामाजिक क्षेत्र में परिवर्तन अर्थात् शुद्धि कार्य पर अपनी शक्ति केन्द्रित करनी चाहिए। अनेक पहलुओं से यह कार्य अत्यन्त महत्वपूर्ण है। रूढ़िवादिता को परे धकेल कर युवा पीढ़ी को इस दिशा में अग्रसर होना चाहिए। हिन्दू विश्व परिषद् आदि सुधारवादी संगठनो का सहयोग प्राप्त कर आर्यसमाज को इस क्षेत्र में दृढ़ता के साथ अग्रसर होना चाहिये। बिछुड़े भाईयों को गले लगाना प्रायश्चित की दृष्टि से महान् नैतिक कर्त्तव्य है।

वैदिक साहित्य का सृजन और देश-विदेश की भाषाओं में उस का प्रकाशन सार्वदेशिक एवं प्रादेशिक आर्य समाज की संगठनों का एक प्रमुख कार्य होना चाहिये। वेदों के अंगों को यथा अध्याय सूक्त आदि पर भावात्मक व्याख्या ग्रंथों के निर्माण पर बल दिया जाना भी नितान्त आवश्यक है। पाश्चात्य एवं पौर्वात्य मस्तिष्कों द्वारा वेदों पर किये गये प्रहारों का योजना बद्ध निराकरण करना भी बहुत आवश्यक है। आदि वासियों तथा ईसाई मिशनरी वर्ग द्वारा प्रभावित एवं आतंकित भारत के क्षेत्रों में स्थायी प्रचार केन्द्रों की स्थापना करना भी हमारे बड़े संगठनों का मौलिक कार्य है। सार्वदेशिक स्तर पर विदेशों में वैदिक धर्म प्रचार की दिशा में कदम उठाना भी नितान्त आवश्यक है।

पर्याप्त संख्या मे आर्य परिव्राजकों का तैयार करना वैदिक मिशनरियों का तैयार करना, और भिन्न २ देशों में स्थायी प्रचार केन्द्र बनाना हमारा कर्त्तव्य है और महान् उत्तरदायित्व है।

आर्य समाज मन्दिरों को किन्ही वर्ग विशेषों व व्यक्ति विशेषों की सम्पत्ति भूल कर भी नही बनने देना चाहिये। आर्य समाज के द्वार सब ही वर्गो व हिन्दुओं आदि के लिये सदा खुले रहने देना चाहिये।

आर्य युवकों को सशंक दृष्टि से देखने और उनको आगे न बढ़ने देने की प्रवृत्ति का लोप करना भी नितान्त आवश्यक है।

आर्य समाजों को संस्थावाद से ऊपर उठाना चाहिये और जो संस्थाएं आर्य समाज के हाथ में है उनका वैदिक मिशन कार्य में दृढ़ता पूर्वक प्रयोग किया जाना चाहिये जैसा कि ईसाई मिशनरी करते आ रहे हैं। संस्थाएं आर्य समाज के लिये हैं न कि आर्य समाज इन संस्थाओं के लिये हैं।

आर्य समाज का नेतृत्व वैदिक मिशनरियों के हाथ होना चाहिये। राजनीति के खिलाड़ियों के हाथ में उसका नेतृत्व उस को निस्तेज निर्बल और ध्येय से परे धकेलने वाला है।

शताब्दी के अवसर पर अथवा शताब्दी की धूम धाम के बाद उपयुक्त समय पर वैदिक मिशनरियों संन्यासियों तथा मिशन की अग्नि जिनके अन्दर जल रही है और जो राजनीतिक पद-लिप्सा से विरक्त हैं उनको एक सप्ताह या १५ दिन के लिए एकत्रित होकर आर्य समाज को नया मोड़ देने का संकल्प करना चाहिये और कार्य की दिशा निर्धारित कर स्वयं अग्रसर होने का व्रत लेना चाहिये।

आशा हैं आर्य समाज का मस्तिष्क इस ओर ध्यान देगा।

——

आए दयानन्द महान्

(ले०—रामचन्द्र आ० प्र० नि० सभा उपमन्त्री पंजाब)

आये दयानन्द महान् देश में फिर से आ गई जान,
सुनो अन्धकार मिटाया ।
मूर्ति पूजा को करके हाथ पर हाथ धरके,
थे भारतवासी सो रहे ।
वीर कटवाये सारे मन्दिर लुटवाए सारे ।
खाली धन से हो रहे ।
है उसकी निरालों शान, नहीं है पत्थर का भगवान।
सुनो निराकार बताया ।
विधवा करती हाहाकार वेश्या बनती बेशम्भार,
यवन नीच ले जाते थे ।
कितने तेरे नौजवान. ईसाई और मुसलमान ।
रोजाना बन जाते थे ।
करके विधवा का कल्याण, उठाया फिर शुद्धि बाण,
सुनो परिवार बचाया ।
यतीम बच्चे रोते थे, रो-रो जिन्दगी खोते थे ।
कोई नहीं पाली था ।
शुद्र जो देख वेद, उसकी आंख देते बेध ।
नहीं रखवाली था ।
देकर वेदों के प्रमाण, करी झूठी पोपों की तान।
सुनो सबका अधिकार बताया ।
बोले ऋषि थे दबङ्ग, उठ मतवाले सिंह,
क्यों भांग पीकर सो रहा ।
इस विश्व इतिहास में, और सत्यार्थ प्रकाश में।
देख उजाला हो रहा ।
'रामचन्द्र गुलामी छोड़, अरे मुद्दत की बेड़ियां तोड़।
सुनो स्वराज्य दिलाया ।

मानवता के शाश्वत पथ-प्रदर्शक महर्षि दयानन्द

ले. पं. नरेन्द्र संयोजक

आर्य समाज स्थापना शताब्दी समारोह समिति 1875 से 1975 तक पूरी एक शताब्दी। इस अवधि में विश्व में अगणित क्रान्तिकारी, अकल्पनीय और अचित्य परिवर्तन हो गए। विश्व की बात छोड़ अपने देश की ही चर्चा करें। इस एक सदी में इतिहास ने कितनी नयी करवटें ले लीं। उस समय इस सात समुद्र पार से आए विदेशी शासन के नीचे निरन्तर पिस रहे थे, आज स्वतन्त्र हैं। उस समय स्वराज्य का नाम लेना भी राज-द्रोह था, आज स्वराज्य के वाता-वरण में अबाध श्वास लेते हुए "सुराज्य" की स्थापना केलिए प्रयत्न-शील हैं। उस समय अनेक प्रकार की पारिवारिक, सामाजिक, धार्मिक, वैचारिक, बौद्धिक परम्पराओं रूढ़ियों और सड़े-गले रिवाजों के गुलाम था, आज उनसे प्रायः मुक्त है। उस समय हिन्दू समाज का आधा वर्ग—नारी और एक दूसरा आधे के लग-भग निम्न व दलितवर्ग दोनों ही पशुवत सामान्य मानवीय सुविधाओं से भी युग-युगान्तर से सर्वथा वंचित था। दलितवर्ग उच्चाभिमानियों द्वारा न केवल घृणा और अवहेलना का ही शिकार था अपितु अस्पृश्य और दृष्टि मात्र से भी सवर्ण हिंदू को अपवित्र करने वाला था। आज यह पाशविक और गर्हित विष-मता समाप्त हो चुकी है। आज देश के सम्पूर्ण क्षेत्रों में प्रत्येक भार-तीय के लिए बिना जन्म जाति, लिंग भेद के अवसर प्राप्त करने और उन्नति करने के अधिकार की पूर्ण स्वतन्त्रता और समानता है। दीमक की तरह भीतर से खोखली विविध प्रकार की धार्मिक और सामाजिक व्याधियों की शिकार हिन्दू समाज को विदेशी शासकों के गहरे षड्यन्त्र के परिणाम स्वरूप विधर्मी इसे लगातार हड़प रहे थे। आटे के दीपक के समान हिन्दू अपने घर में और बाहर-दोनों ओर से प्रायः पतन और जातिक्षय का शिकार हो रहा था।

1875 मे आदित्य ब्रह्मचारी परिव्राजकाचार्य महर्षि दयानन्द ने बम्बई में अपने भक्तों, शिष्यों और अनेक उच्च शिक्षित देशभक्त विद्वज्जनों के इस इस प्रबल आग्रह पर कि आप इन वेदानुकूल विश्व कल्याण के सिद्धान्तो का प्रचार करने के लिए कोई दृढ़ स्थिर संस्था कायम करें। इस विचार का स्वागत किया। इस संस्था का नाम रखने का प्रश्न जब उस समय उठा तब समस्त उपस्थित सज्जन वृन्द ने ऋषिवर से ही नाम निर्धारण के करने की प्रार्थना की। महर्षि दयानन्द सभा से उठ भीतर के एकान्त कक्ष में जा विराजे ध्यानावस्थित हो गए। लग भग 15-20 मिनट के बाद बाहर आए और उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रहे सभासदों के सम्मुख इस संस्था का नाम "आर्यसमाज" रखने की घोषणा की। आर्य अर्थात श्रेष्ठ, उत्तम, धार्मिक, प्रबुद्ध व्यक्तियों का समाज, अर्थात् एक निश्चित विचार पारस्परिक गहन विचारविमर्श और चिन्तन के बाद बनाया गया उस में महर्षि ने अपने व्यक्तित्व को तनिक भी गौरवास्पद और विशिष्ट नहीं बनाया। उन्होंने कभी भी नहीं कहा कि मैं कोई नया मत सम्प्रदाय व पंथ चलाने आया हूं। 'अथवा जो कुछ मैं कहता हूं वह ही एकदम सत्य नया, अर्वाचीन और अद्‌भुत है।' उन्होने यही कहा भारत के प्राचीन महर्षि ब्रह्मा से लेकर जेमिनी ऋषि तक जिन वेदानुकूल सिद्धान्तो को विद्वान मानते आए हैं, मैं उन्हीं का प्रति-पादन करता हूं। कोई बात अपनी ओर से मै नही कहता।' कितनी विनम्रता और निरभिमानिता है।

विषपान अमृत दान

ऋषि दयानन्द युग निर्माता, क्रान्तिकारी और नवभारत के पुरोधा थे। उन्हे कार्य करने का थोड़ा ही समय मिला। एक दर्जन से अधिक बार उन्हें विष दिया गया और अपने ही देशवासियों और जाति व्यक्तियों द्वारा बारम्बार के इस विष पान का उस पूर्ण योगी के भौतिक शरीर पर प्रतिकूल प्रभाव पड़े बिना नही रहा और अन्तिम कालकूट विष ने तो उन्हे मोक्ष धाम का यात्री बना दिया। पर देव दयानन्द के चरित्र की ऐसी अनोखी उज्जवलता तो इतिहास में अपवाद रूप ही है कि उस महाभाग ने प्रत्येक बार अपने विषदाता को बिना किसी प्रकार के प्रतिशोध के क्षमा कर दिया। विश्व के इतिहास में ऐसा महामानव ढूंढने से भी शायद ही मिले।

टंकारा की ज्योति की चतुर्दिक ज्वालाएं

महाभारत के बाद महर्षि दयानन्द पहले महापुरुष थे जिन्होंने एकाकी केवल प्रभु विश्वास के आधार पर निर्माण की दिशाओं में अदम्य उत्साह से अनेक विविध अकथनीय और अकल्पनीय बाधाओं विरोधो आक्षेपों इत्यादि के बावजूद क्रांति की ज्वालाएं, चतुर्दिक, प्रज्वलित की। एक हाथ ईश्वरार्पण सहित वेद का अमृत कलश और दूसरे हाथ मे धामिक, सामाजिक बौद्धिक मिथ्या विश्वासों रूढ़ियों जर्जरित गलितअन्ध परम्पराओ और साथ हीं विदेशी, दासता, आत्महीनता, शतधा विछिन्न समाज और राष्ट्र के मूलगत दोषों के सर्वथा उच्छेदन का खडग लेकर महर्षि ने अपने शुभ्र, निष्कलंक, पूर्ण समाधि आनन्दयुक्त जीवन ओजस्वी वाणी और सदाचारा में रहते हुए भी प्रचुर, नवदिशा प्रेरक साहित्य द्वारा जो अदभुत चिरस्थायी पथ निर्माण किया है, वह योगीराज कृष्ण के बाद प्रथम बार ही हुआ है—'ऐसा नि:संकोच कहा जा सकता है। प्रमुख हिन्दी कवि श्री हरि शंकर के शब्दों में--

ओ टंकारा की ज्वलित ज्योति।
तू कभी नही बुझने वाली।
तुझ से जगमग यह जगती तल,
तुझ से भारत गौरवशाली॥
तु दमक रही दुनिया भर में,
तू चमक रही रन में वन में।
अभ्युदय और नि:श्रेयस बन,
तू रही हुई जगजीवन में॥

आर्यसमाज प्रत्येक क्षेत्र में क्रांतिकारी

आर्यसमाज-ऋषि दयानन्द प्रतिपादित वैदिक और सार्वभौम सिद्धांतों का एकमात्र उत्तराधिकारी है। 1875 में ऋषि के कर-कमलो द्वारा बोया गया यह बीज इस एक शती में महान वट वृक्ष के सदृश विशाल विस्तृत शाखाओं, उपशाखाओं, घने पत्र-पुष्पों से पल्लवित रूप धारण कर चुका है। इन सौ वर्षो के अल्पकाल में आर्य समाज ने देश-विदेशो में सफर सेना सदृश विविध क्षेत्रों मे जो ठोस स्पृहणीय और वरेण्य कार्य किया है, भारत के इतिहास में शायद ही किसी संस्था ने किया हो। ईश्वरीय ज्ञान वेद का पुस्तक जो कुछ ब्राह्मणों के घर में लाल कपडे में सर्वथा अस्पृश्य और असूर्यम्पश्य के रूप में बन्द था, आज घर में सुलभ हो रहा है। उसके पठन पाठन का अधिकार भारत ही नही विश्व के प्रत्येक नर नारी के लिए बिना जन्म जाति, लिंग, देश के भेदभाव के उन्मुक्त हो गया है। आर्य समाज के प्रचार से तथाकथित शूद्र और नारी को अन्य जातियों के सदृश वेद के पठन श्रवण का पूरा अधिकार आर्य समाज के आंदोलन से आज प्राप्त है।

भारत में स्वराज्य का मन्त्र सबसे पहले ऋषि दयानन्द ने जनता को दिया आर्यसमाज ने अपने आचार्य के आदेश के अनुसार भारत को विदेशी शासनसे मुक्त कराने केलिये किसी भी अन्य राजनीतिक व धार्मिक सामाजिक संस्था से अधिक ही सहयोग दिया है। स्वतन्त्रता की वेदी पर अपनी जवानी अपना, तन और सर्वस्व अर्पण करने में आर्य वीरों का सर्वोत्तम भाग है। स्वदेशी वस्तुओं का उपयोग महर्षि ने स्वयं सदा किया और आर्य समाज की इसका पालन करता रहा। पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक,राष्ट्रीय जीवन के प्रति आर्यसमाज ने वेदानुकूल ऋषि प्रदर्शित मार्ग का अवलम्बन करते हुए इनके विकास में उल्लेखनीय कार्य किये हैं। समाज सुधार के द्वारा वहां शिक्षा का माध्यम मातृभाषा को अपना कर सफल परीक्षण से पाश्चात्य प्रेमी शिक्षाविज्ञों को चकित कर दिया, साथ ही, प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धति की सार्थकता और उपयोगिता सिद्ध कर दी। इसी के फलस्वरूप, भारतीय शिक्षा-पद्धतिमें कई लाभकारी परिवर्तन हो सके है। आर्य समाज द्वारा संचालित डी. ए. वी. आन्दोलन ने हिन्दी और वैदिक के प्रचार में सहायता तथा हिन्दुओं में आत्म विश्वास और सहयोग भावना में प्रशंसनीय बढ़ोतरी की। यह निविरोध कहा जा सकता है कि आज जो हिन्दू जाति में से इनके सामाजिक कुरीतियों और अन्य परम्पराओं का लोप हो गया है उसका श्रेय एकमात्र आर्यसमाज को ही है। स्त्री शिक्षा, दलितोद्धार, अस्पृश्यता निवारण, बाल विवाह,

बहु विवाह, अनमेल विवाह का विरोध, नारी और शूद्र के प्रति हीनता और घृणा के भाव के प्रतिकूल समानता, सहृदयता और अपनेपन की भावना का प्रसार पुरुष और स्त्री में सम्पूर्ण समानता की भावना का प्रबल समर्थन, विधवा विवाह का प्रचार, जन्मना वर्ण व्यवस्था के बदले गुण कर्म, स्वभाव पर आधारित वर्ण व्यवस्था की क्रियात्मक पुष्टि, जात-पात तोड़ कर विवाह दहेज का विरोध और विवाह इत्यादि अवसरों पर मितव्यय और सादगी, इत्यादि विविध पारिवारिक और सामाजिक सुधारों का श्रेय एकमात्र आर्यसमाज को ही है।

आर्य वीरों के बलिदान

इतिहास इन तथ्य का साक्षी है कि इन सुधारों को अपने व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिन जीवन में सक्रिय रूप देने के लिए अनेक आर्य युवकों को परिवार, बिरादरी और जाति की ओरसे कठोर यातनाओं, उत्पीड़नों और अत्याचारों को सहना पड़ा। पर अपने आचार्य स्वामी दयानन्द के यह शिष्य अपने गुरु की तरह दृढ़ निश्चयी रहे, कइयों को प्राणों की बलि भी देनी पड़ी पर कष्टों से तनिक भी नही घबराये। अन्त में इन बलिदानों से समाज और देश पर जादू का असर पड़े बिना नही रहा।

नवचेता के निर्माण कर्त्ता ऋषि दयानन्द

हिन्दू जाति ने अपने धर्मप्रवेश के द्वार बन्द कर बाहर निकालने के द्वार उदारता से कई पीढ़ियों से खोल रखे थे। ईसाई मुसलमान इस का खूब लाभ उठा रहे थे। आर्य-समाज ने गंगा के इस उलटे प्रवाह को बदल निष्कासन के द्वार प्रबलता से अवरुद्ध कर दिए और प्रवेश द्वार उदारता से उन्मुक्त कर दिए। साथ ही, हिन्दुओं में सामाजिक एकता समानता, भाईचारे को बढ़ावा दिया। इस शुद्धि और संगठन के आन्दोलन ने हिन्दू जाति को असीम नवजीवन प्रदान किया है। ऐसे दिव्य गुणयुक्त महापुरुष के प्रति हमारा कोटिशः प्रणाम।

आर्यसमाज का वास्तविक रूप

(ले० ओ३म् प्रकाश त्यागी, संसद सदस्य एवं मन्त्री सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली)

१९वीं शताब्दी में ऐसे कई महापुरुषों, विचारकों व क्रान्तिकारियों को जन्म दिया जिन्होंने देश, काल, जाति आदि की संकीर्ण सीमाओं को लांघ कर समूची मानव जाति का हित चिन्तन किया, और उन्होंने ऐसे आन्दोलनों व क्रान्तियों को जन्म दिया जिन्होंने, अन्याय, अत्याचार, से पीड़ित एवं संकीर्ण साम्प्रदायिक संघर्षों में रत मानव जाति को सुख, शान्ति व विश्वबन्धुत्व का मार्ग प्रदर्शित किया। आर्य समाज उन्हीं महान क्रान्तिकारी आन्दोलनों में से एक हैं, और अपनी महानता तथा विशेषता में अद्वितीय है।

आर्य समाज क्या है। इसे इसके उद्देश्य से बड़ी सरलता से जाना जा सकता है। आर्य समाज के संस्थावक महर्षि दयानन्द जी ने इस का उद्देश्य निर्धारित करते हुए कहा है कि संसार का उपकार करना आर्य समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात सबकी शारीरिक, मानसिक सामाजिक उन्नति करना। इस उद्देश्य में हीं महर्षि ने सार रूप में आर्य समाज के वास्तविक स्वरूप व कार्यक्रम को प्रदर्शित कर दिया है। इसकी विस्तृत व्याख्या उन्होंने अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश के प्रथम दस समुल्लासों और संक्षिप्त रूप में आर्य समाज

के दस नियमों में प्रदर्शित कर दिया है।

अन्य क्रान्तिकारियों ने जहां अर्थ पर आधारित वर्ग संघर्षों को संसार की अशान्ति का मूल कारण बतलाया है अर्थात उन्होंने अन्याय व अभाव को मानवीय अशान्ति का मूल कारण माना वहां महर्षि दयानन्द जी ने अज्ञान, अन्याय व अभाव को मानव समाज की अशांति का मूल कारण माना। इन तीनों में भी उन्होंने अज्ञान को मूल कारण माना, क्योंकि यही अन्याय व अभाव को जन्म देता है। महर्षि की मान्यता थी कि वैज्ञानिक साधनों की सहायता से भौतिक अभाव की पूर्ति सम्भव है, परन्तु इनके द्वारा मानसिक गरीबी को दूर करना सर्वथा असम्भव है, और मानसिक निर्धनता ही मानव व मानव समाज की अधिकांश बीमारियों का मूल है। मानसिक दासता अज्ञान की देन होती है।

अज्ञान अथवा असत्य को संसार की समस्त विपत्तियों का मूल कारण मानते हुए महर्षि दयानन्द ने अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है कि यद्यपि आजकल बहुत से विद्वान प्रत्येक मतों में हैं ये पक्षपात छोड़ स्वतंत्र सिद्धांत अर्थात जो जो बातें सबके अनुकूल, सब में सत्य है, उनका ग्रहण और जो एक दूसरे के विरुद्ध है, उनका त्याग कर परस्पर प्रीति से बर्तें तो जगत का पूर्ण हित होवे क्योंकि विद्वानों के विरोध से अविद्वानों में विरोध बढ़कर अनेकविध दुःख की अभिवृद्धि और सुख की हानि होती है। इस हानि से जो कि स्वार्थी मनुष्यों को प्रिय है सब मनुष्यों को दुःख रूपी सागर में डुबो दिया है। इसलिये अज्ञान के विरुद्ध लड़ने के लिए उन्होंने मूल मन्त्र देते हुए कहा "सत्य के ग्रहण करने तथा असत्य के त्यागने में प्रत्येक को सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।" वास्तव में देखा जाय तो यही सिद्धांत आर्यसमाज की समस्त योजनाओं व स्वरूप की आत्मा है। यही एक नारा संसार में मानव समाज को मानवता, एकता व विश्वबन्धुत्व के सूत्र में बांध सकता है।

सत्यता को जानने अथवा सत्यता तक पहुचने के लिए आर्यसमाज की मान्यता है कि सब सत्य विद्याओं और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उन सब का आदि मूल परमेश्वर है। अर्थात परमेश्वर को सही रूप में जाने व माने बिना व्यक्ति सत्य तक नहीं पहुच सकता, और सत्य को जाने व अपनाये बिना संसार में सुख शान्ति तथा विश्वबन्धुत्व की स्थापना सर्वथा असम्भव है। जिन लोगों का यह विश्वास है कि संसार में वर्ग संघर्षों की स्वतः समाप्ति हो जायेगी उनको जानना चाहिए कि संसार में संघर्षों का कारण अर्थ ही नहीं अपितु जन्म, जाति, धर्म, राष्ट्र आदि भी हैं अतः सर्वव्यापक, सर्वान्तयामी, सर्वशक्तिमान, एवं सर्वनियन्ता ईश्वर में आस्था व विश्वास लाये बिना इन संघर्षों को समाप्ति कैसे सम्भव होगी?

वर्ग संघर्ष ही नही अपितु समाज से अन्याय. अत्याचार, भ्रष्टाचार, दुराचार आदि समूल दूर करने के लिए ईश्वर की मान्यता अनिवार्य है ऐसी आर्यसमाज की मान्यता है। कुछ लोगों का विश्वास है कि उक्त बुराइयों को कानूनों के डण्डे से दूर किया जा सकता है। संसार के समस्त पापी पाप करते समय केवल दो ही बातों का ध्यान रखते हैं अर्थात वे समाज की निगाहों से छिपकर और सरकारी कानून से बच कर पाप करते हैं। जब वे ऐसा करने में असमर्थ

रहते है सभी समाज व कानून की पकड़ में वह आते हैं अन्यथा नहीं। इसलिए कानून का सहारा लेने वाले समाज को उपरोक्त दोषों से कभी पूर्णमुक्त नही कर सकते। परन्तु यदि व मानव समाज की ईश्वर और उसके न्याय के प्रति सच्ची आस्था व विश्वास आ जाय तो फिर कोई भी पापी ईश्वर की दृष्टि व न्याय से न छिप ही सकता है और न पाप हो सकता है। इसलिए समस्त प्रकार के भ्रष्टाचारों से समाज को मुक्ति दिलाने के लिए ईश्वर की मान्यता अनिवार्यहै,ऐसी आर्य समाजकी मान्यता है। समाज में आर्थिक विषमता व अभाव को दूर करने के लिए आर्य समाज की मान्यता है कि "प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से सन्तुष्ट न रह कर सब की उन्नति से अपनी उन्नति अनुभव करनी चाहिए।" इस सिद्धांत को स्वीकार कर लेने पर दूसरों के परिश्रम की चोरी करने का प्रश्न अथवा दूसरों का शोषण करने का प्रश्न ही समाप्त हो जाता है। मनुष्यों के अन्दर यह भाव तभी जागृत हो सकता है जबकि भौतिकवाद एवं अध्यात्मवाद के समन्वय की भित्ति पर समाज को खड़ा किया जायेगा। न कोरा भौतिकवाद और न कोरा आध्यात्मवाद समाज को सुखी बना सकेगा अपितु दोनों का समन्वय ही समाज को सुख, शान्ति व प्रगति प्रदान कर सकता है ऐसा आर्य समाज का विश्वास है इसीलिए आर्य समाज ने अपने उद्देश्य में प्रत्येक की शारीरिक उन्नति के साथ मानसिक उन्नति को अनिवार्य माना है।

कोरे भौतिकवाद में विश्वास रखने वाले समाज को कभी सुखी बना सकेंगे यह कोरा स्वप्न भाव है ऐसा आर्य समाज मानता है। शारीरिक इन्द्रियों की इच्छाओं की पूर्ति का नाम सुख है। इन्द्रियों की इच्छायें असीमित है, और सामग्रियों व उनकी प्राप्ति के लिए मानव सामर्थ्य सीमित है। इसलिए असीमित मागों की सीमित भोग्यपदार्थो द्वारा पूर्ति होना सर्वथा असम्भव है। इसलिए मानवीय इच्छाओं को सीमित करने के लिए धार्मिक शिक्षण आवश्यक है।

स्वतन्त्रता और परतन्त्रता के विषय में आर्य समाज की मान्यता है कि मानव व मानव समाज की सुख, शान्ति व प्रगति के लिए दोनों ही आवश्यक है, परन्तु दोनों की अपनी सीमाये है। दोनों की सीमाएं निर्धारित करते हुए आर्य समाज कहता है कि "प्रत्येक को हितकारी कार्यो में स्वतन्त्र और सर्वहितकारी कार्यो में परतन्त्र रहना चाहिए।" जो लोग, सुख, शान्ति व प्रगति के नाम पर व्यक्ति की स्वतन्त्रता का अपहरण कर रहे हैं समाज की दृष्टि में वह मानव की लाश पर सुख शान्ति का झगड़ा खड़ा कर रहे है और समाज को एक जेल खाने में परिणित कर रहे है।

मानव समाज को पूर्ण स्वस्थ बनाने के लिये आर्य समाज का कहना है कि "समाज का मूलाधार है अत: यदि मानव को मानव बना दिया जाय तो मानव समाज स्वतः स्वस्थ बन जायेगा और इसकी उपेक्षा करके समाज को स्वस्थ बनाने की कल्पना करना मानों वृक्ष को हरा करने के लिये उसकी जड़ की उपेक्षा करके उस की पत्तियों पर पानी छिड़कने के समान है। इसलिये आर्य समाज की समस्त योजनाओं का मूलाधार है "कृण्वन्तों विश्वमार्यम्"। इसी की पूर्ति करना वास्तव में इसका मूल उद्देश्य है। इसी उद्देश्य की पूर्ति करने के लिये इसके उद्देश्य

में सबकी शारीरिक, मानसिक व सामाजिक उन्नति करना लिखा है।

कृण्वन्तों विश्वमार्यम् अर्थात संसार भर को भले व्यक्तियों का सुखी व सम्पन्न समाज बनाना आर्य समाज का मुख्य लक्ष्य है—इसकी पूर्ति के लिए आर्य समाज ने सृष्टि के आदि में प्राणिमात्र के कल्याणार्थ परमपिता परमात्मा द्वारा दिया गया सत्य सनातन ज्ञान, धर्म व संस्कृति का सर्वत्र प्रचार व प्रसार करना अपना परम कर्त्तव्य माना है। आर्य समाज क्या है इसे अमेरिका के परोक्ष दर्शी विद्वान श्री एण्डूज डेविड ने अपने उद्गार प्रकट करते हुए लिखा है :—

"मुझे एक आग दिखाई देती है जो सर्वत्र फैली हुई है अर्थात असीम प्रेम की आग जोकि द्वेष को जलाने वाली है और प्रत्येक वस्तु को जला कर शुद्ध कर रही है। अमेरिका के शीतल मैदानों, अफ्रीका के विस्तृत भूखण्डों, एशिया के प्राचीन पर्वतों और यूरोप के विज्ञान राज्यों पर मुझे इन सब को जलाने वाली और इकट्ठा करने वाली आग की ज्वालाये दिखाई देती हैं। इसका प्रादुर्भाव निम्न देशों से हुआ है। अपने सुख और उत्थान के लिये मानव ने स्वयं प्रज्वलित किया है——सम्पूर्ण दोषों का संघट्ट नित्य को शुद्ध करने वाली भट्ठी में जल कर भस्म हो जायेगा, जहां तक कि रोग के स्थान में अरोग्य, अन्ध विश्वास के स्थान में बुद्धि और तर्क, पाप के स्थान में पुण्य अविद्या के जगह विद्या, द्वेष की जगह सौहार्द वैर की जगह समता, दुःख की जगह सुख, अन्ध विश्वासों व पाखण्डों की जगह परमेश्वर और प्रकृति का राज्य व्याप्त हो जायेगा। मैं इस आग को मांगलिक समझता हूं। जब यह अग्नि सुन्दर पृथ्वी को नवजीवन प्रदान करेगी तो सर्वाधिक सुख, अभ्युदय और आनन्द का युग आरम्भ होगा।"

अतः आर्य समाज के बन्धुओं से अनुरोध है कि कि जिस साहस, पुरुषार्थ, बुद्धिमता से आपने भारत के राष्ट्रीय पुर्नजागरण में अपना महत्व-पूर्ण योगदान दिया है उसी उत्साह से व उमंग से आर्य समाज स्थापना शताब्दी के पुण्य पर्व पर प्रतिज्ञा है कि हम सब महर्षि दयानन्द की इस महान क्रान्ति को सफल बनाते हुए संसार में सुख, शान्ति एकता व विश्वबन्धुत्व की स्थापना कर संस्थापक के प्रति अपनी सच्ची श्रद्धांजलि अर्पित कर सकते हैं।

नामकरण संस्कार संम्पन्न

आर्य विद्या परिषद् ऊंचा गांव (मथुरा) के प्रधान श्री म० रामखिलाड़ी जी आर्य के नवजात शिशु का श्री पं० चन्द्रदेव जी शास्त्री उपाचार्य गुरुकुल गंगीरी (अलीगढ़) एवं श्री पं० ज्ञान प्रकाशजी आर्य 'पुरोहित' आर्ष विद्या परिषद् ऊंचा गांव (मथुरा) दोनों सज्जनों ने वैदिक रीतिसे प्रियव्रत आर्य नामकरण कर प्रभु से त्वमायुष्ठमान वर्चस्वी, तेजस्वी, श्रीमान् भयाः इस आशीर्वाद को फलीभूत करने की प्रार्थना की।

वेद की महिमा

(ले०—श्रीयुत् म० गंगाराम जी उपप्रधान आर्य समाज लक्ष्मणसर अमृतसर)

किसी सज्जन पुरुष ने गुरु गोविन्दसिंह जी से पूछा कि महाराज ! हमें यह बताने की कृपा करें कि श्री गुरु नानक देव जी के वंश वालों को वेदी क्यों कहा जाता है तो दशम गुरु जी ने उत्तर दिया—

जिन्ह वेद पठयो सो वेदी कहायो , (विचित्र नाटक अर्थात् जिन लोगों ने वेदों को पढ़ा था उनको वेदी कहा जाने लगा । वे अपने आप वेदी कहाये थे ।

प्रश्न—लोग स्मृतियां पढ़ते हैं और पुराण भी पढ़ते हैं । वे बड़े गर्व से अपने आपको स्मार्त और पौराणिक क्यों रहीं कहते ? महाराज ने कहा—सुनो मेरे प्यारो ! गुरु नानक देव जी इस का कारण यह बताते हैं कि वेद उस परम पिता परमात्मा की वाणी है ।

'ओंकार वेद बिरमये'

ग्रंथ साहब महला । पुष्ठ ९१०

अर्थात्—वेद उस एक ओंकार जिसकी निरं-कार भी कहते हैं, उसने रचे हैं ।

प्रश्न—महाराज ! ग्रन्थ तो अनेकों हैं । मगर वेदों के पढ़ने की इतनी बड़ी महिमा क्यों है ? श्री गुरु नानक देव जी ने बताया—

'असंख्य ग्रन्थ मुख वेद पाठ—ग्र० सा० महला जपजी पृष्ठ ३ ।

अर्थात्—श्री गुरु नानक देव जी फरमाते हैं सुनो मेरे प्यारो ! ग्रन्थ तो अनेकों है मगर वेद ईश्वरी वाणी है । सब ग्रन्थ मनुष्य कृत हैं, उनमें कोई भूल हो सकती है मगर वेद प्रभु सर्वज्ञ की रचना है. इसलिये गलती या भूल से रहित है ।

गुरु महाराज बचन अमृत से बताते है—

वेदों में नाम उत्तम सुने नाहीं फिरे ज्यों
वेतालिया ।

कहो नानक जिनका सत्य तजिया जन्म जुए
हरियाणा ।

ग्रंथ रागमुहल्ला पृष्ठ

अर्थात्—वेदों में उपदेश उत्तम है, मगर लोग सुनते बहीं हैं, ताल बेताल हुए और ही और कह रहे हैं ।

इन वेदों की सच्चाई को छोड़कर मनुष्य जन्म ऐसे गंवा रहे हैं, जैसे जुआरी लोग सब कुछ जुए में हार कर पछताते है ।

वेदों का ज्ञान इस प्रकार है ।

दीवा बले अन्धेरा जाये—वेद पाठ मति पापां खाये ।

ग्रन्थ राग सुई महला । पृष्ठ ७९१

अर्थात्—जैसे दीपक जलाने पर अन्धेरा दूर हो जाता है । ठीक इसी प्रकार जो पापों की ओर जाने बाली मति है बुद्धि उस को वेद पाठ नष्ट कर देता है । फिर मन ही मन नहीं चाहता कि पाप की ओर जाऊं ।

गुरु महाराज फरमाते हैं—

वेद व्याख्यान करते साधुजन भागहीन समुझत नहीं खल ।

ग्रन्थ महला पृष्ठ ७१७

अर्थात्—वेद का व्याख्यान साधु महात्मा जन करते हैं। मगर भाग्यहीन सुनने नहीं जाते उन लोगों को महाराज ने खल कहा जो बड़ा बुरा शब्द है ।

गुरु महाराज ने सब मनुष्यों को आज्ञा दी है ।

वेद पाठ संसार की कार पढ़ि-पढ़ि पण्डित करहि विचार ।

बिन बूझे सत होई खुबार गुरु मुख उतरसि पार ।।

ग्रंथ सुई बार मुख पृष्ठ ७९ ।

अर्थात्—वेदों का पाठ करना संसार के मनुष्यों का परम कर्त्तव्य है। जो पण्डित लोग पढ़-पढ़ कर इस पर विचार करते हैं और अपने तथा दूसरों के जीवन को तदनुकूल आचरण करते हैं। बिना इसकी खोज के तथा तदनुकूल आचरण के लोगों का कल्याण नहीं। वेदों की आज्ञा के विरुद्ध हमें खुवार होना पड़ेगा।

गुरमुखि परचे वेद विचारी ।
गुरमुखि परचे तरिये तारो ।।

ग्रंथ नामकली म० । पृ०९८ ।

अर्थात्—गुरु के मुख से वेद विचार सुनकर आप तो तरते ही हैं औरों को भी तार कर प्रसन्न होते हैं ।

इसी प्रकार मनु जी ने भी वेद की गहिमा गाई हैं।

बुद्धि वृद्धि कराण्याशु अन्यानि च हितानि च ।
नित्यं शास्त्राण्यवेक्षते निगमाश्चैववैदिकान् ।

मनु० ४—१९

अर्थात्—बुद्धि की वृद्धि करने वाले और धन तथा हित की बात बताने वाले शास्त्रों को नित्य पढ़े पढ़ावे—वे कौन से नियम—वेद मन्त्र है अगर वेदों का पढ़ना-पढ़ाना छूट जाये तों क्या हानि होती है—

अनभ्यासेन वेदानामाचारस्य च वर्जनात् ।
आलस्यात् अन्नदोषाच्च मृत्युर्विप्रान्जिघांसति

मनु० ५-४

अर्थात्—वेदों के पढ़ने-पढ़ाने के अभ्यास के छूट जाने से आचार भ्रष्ट हो जाता है फिर आलस्य आ घेरता है। वहां पर अन्न दोष आ जाता हैं। क्या खाना ठीक है या बुरा, कैसी कमाई ठीक या भ्रष्ट है जब ऐसी अवस्था बन जाती है तो फिर बड़े बड़े विद्वानों की भी मौत हो जाता है। केवल भाव वेदों के अभ्यास छूटने से ही सत्पुरुषों का सर्वनाश हो जाता है—इन प्रमाणों से प्रसन्न होसर एक जिज्ञासु पुरुष ने कहा कि इस लेख के पढ़ने से यह पता मिला कि वेद ग्रन्थ ही ऐसे पुस्तक या ज्ञान है जिसके अनुकूल आचरण करने से ही श्रेष्ठ मनुष्यों का समाज बन सकता है।

यहां पर कृपा करके एक वेद मन्त्र भी बताने का प्रयत्न करें जिसके अनुसार परिवार चल कर सुखी बन सकता है ताकि हमारे दिल और दिमाग में श्रद्धा भर जाये—इस प्रकार का पवित्र वेद मन्त्र भी सुन लें यहां एक मन्त्र प्रस्तुत करता हूं—

अनुव्रत पितुः पुत्रो मात्रा भवतु संमनाः ।
जाया पत्ये मधुमती वाचं वदतु शान्तिवाम् ।

अथर्व०

अर्थात्—पुत्र, पिता का अनुव्रती हो पिता की भावना पूरा करने वाला हो और माता के मन के साथ मिलकर उसकी भी आत्मा को प्रसन्न करने वाला हो। स्त्री भी पति से मीठी वाणी से बोलने वाली और घर का वातावरण इस प्रकार का बन जाये कि जब बच्चा या बड़ा भी कोई बात करे तो मीठी वाणी से ही करे अर्थात् सारा घर परिवार शान्ति वाला बन जाये। जब कभी घर के पुरुष घर पर आये तों बाहर के सब दुःख क्लेश भूल जाये।

बताएं कि क्या इस प्रकार की शिक्षा वाला परिवार स्वर्ग है या नहीं। मानना पड़ेगा इस प्रकार की शिक्षा देश का नक्शा बदल सकती है।

आर्य जगत के समाचार

आर्य समाज गन्नौर शहर (हरियाणा) का १८वां वार्षिक उत्सब

आर्य तमाज गन्नौर शहर (हरियाणा) का १८वां वार्षिक उत्सव श्री पं० जयदेव जी जतोईवाला प्रधान की अध्यक्षता में धूमधाम से मनाया जाएगा। इस अवसर पर सुप्रसिद्ध उपदेशकों तथा भजनोपदेभकों के अतिरिक्त माननीय दानवीर सेठ चुनी लाल धर्मपाल महाशयां दी हट्टी प्रा० लि० दिल्ली भी पधार रहे हैं। इस अवसर पर पाठशाला के छात्रों की ओर से भी कार्यक्रम प्रस्तुत किया जाएगा।

धर्मचन्द स्नेही

आर्य समाज नवांकोट, अमृतसर

आर्य समाज स्थापना शताब्दी के उपलक्ष्य में २८ अप्रैल सं० ४ मई ७५ तक उत्सब मनाया जायेगा जिस में प्रति दिन प्रातः प्रभात फेरी उसके बाद भिन्न २ मुहल्लों में हवन यज्ञ भजन तथा कथा हुआ करेगी। रात्रि को आर्य समाज मन्दिर में कथा हुआ करेगी आर्य समाज के १०० वर्ष के कार्य पर प्रकाश डाला जायेगा। ४ मई को प्रातः आर्य समाज मन्दिर में बड़ा यज्ञ होगा फिर भजन कथा होगी दोपहर को शोभा यात्रा भी निकाली जावेगी, रात्रि का विशेष कार्यक्रम होगा। इस सारे कार्यक्रम में आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की ओर से श्री पं० निरंजन देवजी इतिहास केसरी, श्री पं० विद्या भूषण जी की भजन मण्डली तथा श्री पं० मथुरा दास जी मैजिल लालटेन वाले पधारेंगे।

जगदीशचन्द्र मन्त्री आर्य समाज नवांकोट अमृतसर

महर्षि दयानन्द निर्वाण स्मारक न्यास, अजमेर का चुनाव

महर्षि दयानन्द निर्वाण स्मारक न्यास अजमेर की प्रथम बैठक महर्षि दयानन्द निर्वाण भवन में ३०-३-७५ को डा० भवानी लाल जी भारतीय की अध्यक्षता में हुई जिसमें तीन वर्ष के लिये निम्नलिखित पदाधिकारियों का सर्वसम्मति से चुनाव हुआ :—

प्रधान—श्री प्रकाशवीर जी शास्त्री (संसद सदस्य) उपप्रधान--डा० भवानी लाल जी भारतीय मन्त्री—श्री दीपचन्द्र जी एम० ए०, उपमन्त्री श्री दयालदास जी आर्य, कोषाध्यक्ष—श्री लीलाराम तोलानी।

उपरोक्त अधिकारियों के अतिरिक्त निम्न सज्जन अन्तरंग सभा के सदस्य चुने गये।

प्रो० शेरसिंह जी दिल्ली, स्वामी विद्यानन्द जी विदेह, नई दिल्ली, कैप्टन देवरत्न जी आर्य बम्बई, श्री मोहनलाल जी आर्य प्रेमी, श्रीरामजी मटाई, पं० भूदेव जी शास्त्री अजमेर।

न्यास ने एक प्रस्ताव पारित किवा जिसमें आर्य समाज नया बाजार अजमेर को धन्यवाद दिया गया जिसने निर्वाण भूमि खरीदने का महान् कार्य किया और समस्त सम्पत्ति न्यास को सौंप दी हैं।

एक अन्य प्रस्ताव द्वारा सरकार से प्रार्थना की गई कि इस भिनाय कोठी के शेष भाग न्यास को शीघ्र दिलवाया जाए।

मन्त्री—दीपचन्द

आर्य समाज अमर हो

(ले० बिहारी लाल शास्त्री बरेली)

आर्य समाज से कुछ पहले और कुछ पश्चात् भी कई धार्मिक संस्थायें स्थापित हुईं और पूज्य स्वामी दयानन्द जी से पहले और बाद में भी कई महान् धर्मोपदेशक हुए पर आर्य समाज और श्री स्वामी जी ने जो विचारधारा बहाई जो जीवित कार्य किया वह और कौन कर सका है विचारिये।

लोग कई बड़े बड़े धर्मोपदेशकों के नाम लिखते रहते हैं परन्तु इन्होंने अपना नाम प्रसिद्ध किया, वाह वाह लूटी पर अपने देश और अपनी जाति के लिये क्या किया। यह अन्वेषण किया जाये तो निराशा ही हाथ लगती है।

जब अंग्रेज सरकार ने इलाहाबाद से हटा कर लखनऊ को उत्तर प्रदेश की राजधानी बनाया था तो उर्दू के एक प्रसिद्ध कवि ने लिखा था :—

बढ़ा रहे हैं, बहुत लखनऊ की शान मगर
वह गोमती को तो गंगा बना नहीं सकती।

ऋषि दयानन्द और आर्य समाज की समता कोई नहीं कर सकता। क्यों ?

हिन्दू जाति आत्महीनता अनुभव कर रही थी हिन्दू धर्म कच्चा है यह सब हिन्दू कह रहे थे। सब ही धर्म समान हैं यह घोषणा करने का साहस किया था श्री राजाराम मोहनराय ने और यही वाक्य दुहराते रहे महात्मा गांधी जी। बहलोल लोदी के जमाने में एक ब्राह्मण दिल्ली में यही प्रचार करता था इस पर बादशाह ने उसे जीवित जलवा दिया था क्योंकि वह कुफ्र को इस्लाम की बराबरी करा रहा था। पर स्वामी दयानन्द ने इन मदमस्त मतवालों का दर्प चूर चूर कर डाला यह कह कर कि वैदिक धर्म इन मतों के समान नहीं किन्तु इन सबसे उच्चस्तर है। श्रेष्ठ है, प्राचीन है। संसार भर के मतों ने उत्तम बाते इसी वैदिक धर्म आर्य धर्म (हिन्दू धर्म) से सीखी हैं। इस दावे को ऋषि ने सत्यार्थ प्रकाश में सिद्ध करके दिखा दिया। सत्यार्थ प्रकाश पढ़ते ही हिन्दू का स्वाभिमान जाग उठा। उसकी झुकी हुई कमर सीधी हो गयी। नीची गरदन ऊपर उठी और उसने ताल ठोस कर कहा :—

नकारा वेद का बजता है आये जिसका जी चाहे
सदाकत वेदे अकदस आज माये जिसका जी चाहे।

शास्त्रार्थ प्रारम्भ हुए। मत वालों में घबराहट

मची और बुद्धि से काम न लेकर छुरी पर उतर आये। कई आर्य वीरों का बलिदान हुआ। कुंअर सुखलालको और मुझे भी मुसलमान मरा समझ कर छोड़ गये थे। पर क्या आर्यों का धैर्य विचलित हुआ। रंच मात्र भी नहीं। किसी भी आर्य ने किसी अल्पमत वाले को एक डंडा भी नहीं मारा।

सत्य के अन्वेषी कई मुसलमान प्रकट रूप से शुद्ध हुए। सहस्त्रों के विचारों में सुधार हुआ। पौराणिकों में से सैकड़ों ने ऋषि के तर्कों का आदर किया। ईसाई मैदान छोड़ कर भागे। लाखों व्यक्ति ईसाई और आगाखानी होने से बच गये और कई लाख व्यक्ति अब तक शुद्ध हो चुके हैं।

जाति बिरादरियों की उपेक्षा करके सनातनियों में पौराणिकों में सैकड़ों विवाह हो चुके हैं। ४१५ ब्राह्मणों को हम जानते हैं जिनके घरों में ईसाई बहुएं हैं और वे सब बिरादरी में भी घुले मिले हैं।

उत्तर प्रदेश, पंजाब और बिहार में आर्य समाज के प्रचार से रूढ़िवादिता बहुत कम हो गयी। शराब, मांस, वेश्या संगम भी लाखों में बन्द हो गया। सैकड़ों हरिजन कहे जाने वाले लड़के लड़कियोंने संस्कृत पढ़दी और अनेक छोटी बिरादरियों के लोग अब पौरोहित्य कर रहे हैं। कालेजों में संस्कृत के अध्यापक बने हैं। इस समय तो हरिजनों को सरकारी साहाय्य प्राप्त है परन्तु आर्य समाज ने हरिजनों के उत्थान का अभूतपूर्व काम पराधीनता के समय से ही प्रारम्भ कर दिया था। सन ८ से उत्तर प्रदेश में मैंने हरिजन बालकों को पढ़ाना प्रारम्भ किया था। सैकड़ों लड़कियां आज संस्कृत की विदुषी हैं। बाल विवाह, वृद्ध विवाह एवं बेजोड़ विवाह आर्य समाज ने बन्द कराये। नारी जाति की उन्नति में भी आर्य समाज बहुत आगे रहा है। आर्य समाज के प्रचारकों का प्रभाव है कि कट्टर पौराणिक भी अब लड़कियों का विवाह युवावस्था में कर रहे हैं। छूतछात दूर करने में, कहीं कहीं शुद्धि करने में भी आर्य समाज का साथ दे रहे हैं।

सामाजिक क्रान्ति के अतिरिक्त राजनैतिक क्रान्ति में भी अप्रत्यक्ष रूप से ही आर्य समाज की विचारधारा ने कमाल का काम किया है। कांग्रेस के गरमदल में सर्वप्रथम श्री लाला लाजपत राय और सरदार अजीत सिंह जी को मांडले (बरमा) भेजा गया। ये दोनों आर्य समाजी थे। शहीदे-आजम स्वामी श्रद्धानन्द ने गोरों के संगीनों के सामने छाती खोल दी थी। भाई परमानन्द काले पानी गये और उनके चचेरे भाई फांसी चढे। पं० रामप्रसाद विस्मिल ठाकुर रोशन सिंह ने स्वतन्त्रता हित प्राण निछावर किये। पं. तोताराम ने हैडमास्टरी छोड़ कर क्रान्ति में भाग लिया और सारी आयु कष्ट भोगा। औसतन बलिदानों में आर्यो का नम्बर सबसे ऊंचा है।

साम्प्रदायिकता की आग को बुझाने में भी पूज्य पं० लेखराम जी आर्य मुसाफिर, महामान्य महाशय राजपाल जी, परम श्रद्धास्पद श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी ने प्राण बलिदान किये और लगभग ५० व ६० आर्य वीरों ने साम्प्रदायिकतामें आगकी अपने शरीर दे डाले। साम्प्रदायिकताका सबसे अधिक बुरा जोश मुसल-

मानों में है। मुसलमानों को अपने मजहब पर बड़ा घमण्ड था। इस्लाम के खंडन में ईसाइयों ने (पादरी अमादुद्दीन ने) तरीखे मुहम्मदी और उम्महाते मोमनी न दो पुस्तकें हंदी सों के प्रमाण देकर लिखी जो कठोर होने से जब्त हो गयीं और हिन्दुओं में भी श्री स्वर्गीय मुंशी इन्द्रमणि ने अनेक पुस्तकें लिखीं जिनमें इस्लाम पर आक्षेप थे परन्तु कुरान की युक्तियुक्त आलोचना सबसे पहले ऋषि दयानन्द ने ही लिखी थी।

कुरान की छानबीन पूज्य स्वामी दर्शनानन्दने लिखी और अन्य भी कई विद्वानों ने पुस्तकें लिखीं इस कार्य से मुसलमानों का इस्लामी घमण्ड चूर-चूर हो गया। सत्यके अन्वेषी अनेक मुसलमानों ने वैदिक धर्म धारण क्रिया। जिन में बड़े-बड़े विद्वान भी थे, उनमेंसे कुछ आज भी जीवित हैं।

श्री पं. शान्ति स्वरूप जी पहले मुहम्मद अली कुरैशी थे। बदले तो आयु भर आर्य रहे। महात्मा गान्धी के मुहम्मद अली बदल कर फिर लीग में जा कूदे परन्तु आर्य समाज ने जिन्हें बदल कर शान्ति स्वरूप बनाया वे आयु भर कट्टर कांग्रेसी रहे। कांग्रेस टिकट पर एम. एल. ए. भी रहे।

आर्य समाजी वीर पं. राम प्रसाद बिस्मिल ने मुल्की शहीद अशाक उल्ला खां को देश भक्ति के रंग में ऐसा रंगा कि फांसी के तख्ते पर झूल गये किन्तु पग पीछे न हटाया। एक भी लीडर ने किसी मुसलमान पर ऐसा प्रभाव नहीं डाला। आर्य समाजियों ने राजनीति में भी बेजोड़ और अनोखे काम किए हैं। मुसलमानों के राष्ट्रीयकरण के नारे जनसंघियों ने भी लगाए मगर पूरा राष्ट्रीयकरण केवल आर्यसमाज ने किया है और अब भी यह कार्य चलता रहता है। शुद्धि संस्कार राष्ट्रीयकरण ही तो है।

आध्यात्मिकता में भी लाखों रुपयों के पूरी हलुए उड़ाने वाले साधु ब्राह्मण वह काम न जर सके जो आर्यसमाज ने कर दिखाया। अब अध्यात्म में भक्तिभाव में, कर्म कांडमें देखिए। लाखों व्यक्ति संध्या करते हैं। सहस्रों हवन करते हैं। करोड़ों का गायत्री मन्त्र याद करा दिया। कनेडा में अपने भाषण में भारत की प्रधानमन्त्री ने "अभयं मित्रादभयमस्त्रिात्" यह यह वह मन्त्र बोला नारी वेद मन्त्र बोले यह वेदमन्त्र वहां तक कैसे पहुंचा और पौराणिक भी चुप रह गए। अन्ध विश्वासों और भ्रान्तियों को दूर केवल आर्य समाज ही करता है। राष्ट्रीय भावना के प्रचार के साथ विश्वबन्धुत्व की भावना की स्थापना यह आर्य समाज की ही विशेषता है।

अल्प साधनों के होते हुए भी आर्यसमाज के गुरुकुल और कालिजों ने सरकारी और ईसाई संस्थाओं को निर्बल बना दिया था। हिन्दी के प्रचार में तो आर्य समाजियों ने चुप चाप प्रशंसनीय काम किया है। कांग्रेसियों में प्रान्तीय भाषा विवाद है किन्तु आर्य समाज किसी भी प्रान्त को हो वह हिन्दी का भक्त मिलेगा। सन् ५७ के गदर के बाद मलका विक्टोरिया ने एक विज्ञापन निकाला कि एयर इण्डिया कम्पनी हटा दी है अब हम राज्य करेंगे। सब के साथ न्याय होगा। माता पिता के समान हम प्रजा की रक्षा करेंगे।

इस विज्ञापन का देश भर में स्वागत हुआ मलका विक्टोरिया को हिन्दू लोग त्रिजटा (जो

लंका में सीता जी की सेवा में रहती थी) का अवतार कहने लगे। उसकी प्रशंसा में कविताएं लिखी गयीं। परन्तु एक मात्र ऋषि दयानन्द थे जो उन्होंने इस विज्ञापन का उत्तर दिया :— "कोई कितना ही करे, परन्तु जो स्वदेशी राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है। अथवा मतमतान्तर के आग्रह रहित अपने पराए का पक्षपात शून्य, प्रजा पर माता पिता के समान कृपा न्याय और क्षमा के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण सुखदायक नहीं है।" "सत्यार्थ प्रकाश ८वां सम्मुल्लास" ऋषि दयानन्द भारत की स्वतन्त्रता के प्रथम आघोषकर्त्ता थे।

आर्यों के सार्वभौम चक्रवर्ती राज्य का संदेश भारत को ऋषि ने ही दिया। इस प्रकार राजनैतिक सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक चेतना भारत को देने में आर्य समाज का बहुत बड़ा प्रयत्न है। भारत के सब ही ईमानदार नेता आर्य समाज के इस कार्यक्रम की सराहना कर चुके हैं केवल ईर्ष्यालु, ढोंगी, झगड़ालू और ठग व्यक्ति एवं ढोंगी गुरु हीं आर्य साज का विरोध करते हैं।

अब आर्य समाज नयी सदी में प्रवेश कर रहा है अब उसे भारत से बाहर भी बहुत काम है। राजनैतिक और मजहबी पाखण्ड के दुर्गों का नष्ट करके प्रजा को मानसिक और शारीरिक स्वतन्त्रता प्राप्त करानी है। अब संसार के कल्याणार्थ जो कि छठे नियम में हमारा उद्देश्य बताया गया है हमें तय करना है। घोर पुरुषार्थ करना है।

आर्यों !

बजादो ज़माने में वेदों का डंका
करो फूंक कर खांक पापों की लंका
उठाओ ध्वज ओम की आज कर में
उड़ाओ धुआं यज्ञ का विश्वभर में।

वेद प्रचार समिति दिल्ली द्वारा भव्य जलूस व प्रचार

आर्य समाज स्थापना शताब्दी दिवस (१२ अप्रैल १९७५) का सन्देश जनता तक पहुंचाने हेतु वेद प्रचार समिति (सदर क्षेत्र) द्वारा रविवार दिनांक ३० मार्च ७५ को एक भव्य शोभा यात्रा मध्यान्ह २ बजे आर्य समाज बस्ती हरफूल सिंह से प्रारम्भ होकर सदर थाना रोड, बारा टूटी चौक, तेलविन्डा, आकाद, मार्किट, बाड़ा हिन्दु राव, मौडल बस्ती, मन्दिर रोड होती हुई आर्य समाज किशन गंज (मिल एरिया) पर समाप्त हुई, जिसमें १५०० से अधिक आर्य जनों ने भाग लिया और जनता को आर्य समाज की शक्ति का अच्छा प्रदर्शन कराया।

इसके अतिरिक्त दिनांक ३१ मार्च १९७५ को रात्रि ७ बजे बारा टूटी चौक पर एक विराट सभा का आयोजन किया गया, जिसकी अध्यक्षता सार्वदेशिक सभा प्रधान श्री ला० राम गोपाल जी शालवाले ने की। श्री स्वामी इन्द्रवेश जी, श्री प्रकाश वीर जी शास्त्री, श्री ओमप्रकाश जी त्यागी महामन्त्री सार्वदेशिक सभा आदि अनेक विद्वान नेताओं ने आर्यसमाज द्वारा किए गए गत १०० वर्षों के कार्य की सराहना की तथा आर्य समाज की भावी योजना पर प्रकाश डाला।

"महापुरुषों की दृष्टि में स्वामी दयानन्द"

(संकलित द्वारा श्री पं० रामचन्द्र जी आर्य सुभाष मार्ग, रोहतक (हरियाणा)

जिस प्रकार रात्रि के अन्धकार को दूर करने के लिए प्रातःकाल सूर्य उदय होता है, उसी प्रकार विश्व में सब प्रकार के फैले अविद्या अन्धकार को ऋषि दयानन्द ने दूर किया संसार के अनेक महापुरुषों ने ऋषि के इन गुणों की मुक्त कण्ठ से सराहना की, चाहे उन्होंने ऋषि की सब बातों को नहीं माना। परन्तु उन्होंने अपने-२ विचार के अनुसार ऋषि के प्रति अपने आदर भाव प्रकट किये थे, ये महानुभाव भिन्न-भिन्न सम्प्रदायों से सम्बन्ध रखते थे, उनमें से कुछ देशी तथा विदेशी सज्जनों के विचार आगे दिये जाते हैं :—

(१) "ऋषि दयानन्द जाज्वाल्य मान नक्षत्र थे जो भारतीय आकाश पर अपनी अलौकिक आभा से चमके और गहरी निन्द्रा में सोए हुए भारत को जागृत किया। 'स्वराज्य' के वे सर्व-प्रथम सन्देश वाहक तथा मानवता के उपासक थे।

लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक

(२) 'स्वामी दयानन्द के सिद्धांतों के विषय में कोई मनुष्य कैसी ही सम्मति स्थिर करले, परन्तु यह सबको मान लेना पड़ेगा कि स्वामी दयानन्द अपने देश के लिए गौरव रूप थे। दयानन्द को खोकर भारत को महान हानि उठानी पड़ी है। वे एक महान् और श्रेष्ठ पुरुष थे।'

कांग्रेस के संस्थापक श्री ए. ओ. ह्यूम

(३) "महर्षि दयानन्त तपो मूर्ति थे। उन्होंने भारत में दिव्य ज्योति प्रकाशित की थी। उन्होंने हिन्दु समाज को पुनर्जन्म देने के सब प्रयत्न किये थे। वे भारत को स्वतन्त्र तथा दिव्य देखना चाहते थे। आर्षकाल को पुनः लाने के लिए वे प्रयत्नशील रहे। उन्होंने मृतप्राय हिन्दु जाति में पुनः प्राण संचार किया था। वे हिन्दु संस्कृति की अप्रतिम तथा भारत माता के अक्षय पात्र थे।

'मदन मोहन मालवीय'

(४) स्वामी दयानन्द निःसन्देह एक ऋषि थे। उन्होंने अपने विरोधियों द्वारा फेंके गये ईंट-पत्थरों को शान्ति पूर्वक सहन कर लिया। उन्होंने अपने में महान् भूत और भविष्य को मिला दिया। वह मर कर भी अमर हैं। ऋषि का प्रादुर्भाव मानव को कारागार से मुक्त करने और जाति बन्धन तोड़ने के लिए हुआ था। ऋषि का आदेश है—'आर्यावर्त्त, उठ जाग, समय आ गया है, नये युग में प्रवेश कर आगे बढ़,।"

पाल रिचर्ड

(५) मेरा सादर प्रणाम हो उस महान् गुरु दयानन्द को, जिसकी दृष्टि ने भारत के आध्यात्मिक इतिहास में सत्य और एकता को देखा और जिनके मन ने भारतीय जीवन के सब अंगों को प्रदीप्त कर दिया। जिस गुरु का उद्देश्य भारतवर्ष को अविद्या आलस्य और प्राचीन ऐतिहासिक तत्व के अज्ञान से मुक्त कर सत्य और पवित्रता की जागृति में लाना था।

उसे मेरा बारम्बार प्रणाम है। मैं आधुनिक भारत के मार्गदर्शक उस दयानन्द को आदरपूर्वक श्रद्धांजलि देता हूं। जिसने देश की पतितावस्था में भी हिन्दुओं को, प्रभु की भक्ति और मानव समाज की सेवा के सीधे व सच्चे मार्ग का दिग्दर्शन किया। —'रवीन्द्रनाथ ठाकुर'

(६) वर्तमान स्वराज्यान्दोलन के कारण स्वामी दयानन्द की गिनती भारत के निर्माताओं में स्वीकार की जानी चाहिए। स्वामी दयानन्द एक महान तथा पुण्यशाली व्यक्ति थे। वे भारतवर्ष के कीर्ति स्तम्भ थे, यह सबको स्वीकार करना पड़ेगा। उनको खोकर भारत की भीषण चोचनीय हानि हुई है। —'ग्रास ब्रोब्ड'

(७) महर्षि दयानन्द स्वाधीनता संग्राम के सर्वप्रथम योद्धा और हिन्दु जाति के रक्षक थे। उनके द्वारा स्थापित आर्य समाज ने राष्ट्र की महान सेवा की है और कर रही है। स्वतन्त्रता संग्राम में आर्य समाजियों का बड़ा हाथ रहा। महर्षि जी का लिखा अमर ग्रन्थ 'सत्यार्थप्रकाश' हिन्दु जाति की रगों में उष्ठा रक्त का संचार करने वाला है। 'सत्यार्थ प्रकाश' की विद्यमानता में कोई विधर्मी अपने मजहब की शेखी नहीं मार सकता। —'स्वातन्त्र्यवीर सावर'

(८) स्वामी दयानन्द ही पहले व्यक्ति थे जिन्होंने "हिन्दुस्तान हिन्दुस्तानियों के लिए" का नारा लगाया था। आर्य समाज के लिए मेरे हृदय में शुभ इच्छाएं हैं और उस महान् पुरुष के लिए, जिसका आप आर्य आदर करते हैं, मेरे हृदय में सच्ची पूजा की भावना है।
—ऐनी बीसेण्ट

(९) स्वामी दयानन्द एक ऐसे प्रकाश स्तम्भ हैं जिन्होंने असंख्य मनुष्यों को सत्य का मार्ग बतलाया है। उनके देश तथा देश की जनता पर किये गये उपकार सदैव अमर रहेंगे। 'महर्षि वर्तमान अन्धकार के युग के लिए 'वैदिक सूर्य' थे मैं अपने को उनका अनुयायी कहलाने में गर्व अनुभव करता हूं। मैं उनके प्रशंसकों में हूं।

—देवता स्वरूप भाई परमानन्द एम० ए०

(१०) "ऋषि दयानन्द ने भारत के शक्ति शून्य शरीर में अपनी दुर्धर्ष शक्ति अविचलता तथा—सिंह पराक्रम फूंक दिया है। ऋषि दयानन्द उच्चतम व्यक्तित्व के पुरुष थे। यह पुरुष सिंह उनमें से एक था जिन्हे युरोप प्रायः उस समय भूला देता है। जबकि वह भारत के सम्बन्ध में अपनी धारणा बनाता है। किन्तु एक दिन युरोप को अपनी भूल मानकर उसे याद करने के लिए बाधित होना पड़ेगा। क्योंकि उसके अन्दर कर्मयोगी, विचारक और नेता के उपयुक्त प्रतिभा का दुर्लभ सम्मिश्रण था। दयानन्द ने अस्पृश्यता व अछूतपन के अन्याय को सहन न किया। और उससे अधिक उनके अपहृत अधिकारों का उत्साही समर्थक दूसरा कोई नही हुआ। भारत में स्त्रियों की शोचनीय दशा को सुधारने में भी दयानन्द ने बड़ी उदारता व साहस से काम लिया। वास्तव में राष्ट्रीय भावना और जन जागृति के विचार को क्रियात्मक रूप देने में सबसे अधिक प्रबल शक्ति उसी की थी। वह पुनर्निर्माण और राष्ट्रीय संगठन के अत्यन्त उत्साही पैगम्बरो में से थे। —'फ्रेंच लेखक रोम्यां रोला"

(११) महर्षि दयानन्द सरस्वती उन महा-

पुरुषो में से थे जिन्होंने आधुनिक भारत का निर्माण किया और जो इसके आचार सम्बन्धी पुनरुत्थान तथा धार्मिक पुनरुद्धार के उत्तरदाता हैं। हिन्दु समाज का उद्धार करने में 'आर्य समाज' का बहुत बड़ा हाथ है। यह कहना अतिशयोक्तिपूर्ण न होगा कि पंजाब का प्रत्येक नेता आर्य समाजी है। स्वामी दयानन्द को मैं एक धार्मिक और सामाजिक सुधारक तथा कर्मयोगी मानता हूं। संगठन कार्यों में सामर्थ्य और प्रसार की दृष्टि से आर्य समाज अनुपम संस्था है। ......"संगठन कार्य दृढ़ता, उत्साह और समन्वयात्मकता की दृष्टि से आर्य समाज की समता कोई समाज नहीं कर सकता"।

—नेताजी सुभाषचन्द्र बोस

(१२) आर्य समाज समस्त संसार को वेदानुयायी बनाने का स्वप्न देखता है। स्वामी दयानन्द ने इसे जीवन और सिद्धांत दिया। उनका विश्वास था कि आर्य जाति चुनी हुई जाति है। भारत चुना हुआ देश है। और वेद चुनी हुई धार्मिक पुस्तक है।

—रेमजे मेकडानल्ड

(१३) स्वामी दयानन्द मेरे गुरु हैं मैंने संसार में केवल उन्हीं को गुरु माना हैं। वे मेरे धर्म के पिता हैं और आर्य समाज मेरी धर्म की माता है। इन दोनों की गोदी में मैं पला। मुझे इस बात का गर्व है कि मेरे गुरु ने मुझे स्वतन्त्रतापूर्वक विचार करना बोलना और कर्त्तव्य पालन करना सिखाया तथा मेरी माता ने मुझे एक संस्था में बद्ध होकर नियमानुवर्तिता का पाठ दिया। —पंजाब केसरी ला० लाजपत राय

(१४) "स्वामी दयानन्द सरस्वती ने हिन्दू धर्म के सुधार का बड़ा कार्य किया और जहां तक समांज सुधार का सम्बन्ध है, वह बड़े उदार हृदय थे। ने अपने विचारों को वेदों पर आधारित और उन्हें ऋषियों के ज्ञान पर अवलम्बित मानते थे। उन्होंने वेदों पर बड़े बड़े भाष्य किये जिससे मालूम होता हैं कि वे पूर्ण विज्ञ थे। उनका स्वाध्याय बड़ा व्यापक था।

—मैक्समूलर

(१५) महर्षि दयानन्द के उपदेशों ने करोड़ों लोगों को नवजीवन, नवचेतना और नया दृष्टिकोण प्रदान किया है। उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए हमें वृत लेना चाहिए कि उनके बताये मार्ग पर चलकर हम देश को सुख शान्ति और वैभवपूर्ण बनायेगे।

—डा. राजेन्द्र प्रसाद, भारत के प्रथम राष्ट्रपति

(१६) स्वामी दयानन्द एक महान सुधारकर और प्रखर क्रांतिकारी महापुरुष तो थे ही साथ ही उनके हृदय में सामाजिक अन्यायों को उखाड़ फेंकने की प्रचण्ड अग्नि भी विद्यमान थी उनकी शिक्षाओं का हम सब के लिए बहुत भारी महत्व है। उन्होंने हमें यह महान् सन्देश दिया था कि हम सत्य की कसौटी पर कस कर ही किसी बात को स्वीकार करें। —सर्वपल्ली डा. राधाकृष्णन्

(१७) मैं स्वामी दयानन्द को साम्प्रदायिक नहीं मानता। मेरे विचार में वे महान् थे उनका धर्म विस्तृत था। मैं उन्हें राजनीतिक पुरुष भी मानता हूं।

—राजर्षि पुरुषत्तम दास टण्डन

(१८) बहुत से लोग महर्षि दयानन्द को सामाजिक और धार्मिक सुधारक कहते हैं परन्तु मेरी दृष्टि में तो वे सच्चे राजनैतिक थे। ४० वर्ष से कांग्रेस का जो कार्यक्रम रहा है, वह सब कार्यक्रम आज से ६० वर्ष पूर्व ऋषि दयानन्द ने देश के सामने रखा था। सारे देश में एक भाषा खादी, स्वदेश

प्रचार, पचायतों की स्थापना, दलितोद्धार राष्ट्रीय और सामाजिक एकता, उत्कट देशाभिमान और स्वराज्य की घोषणा यह सब महर्षि दयानन्द ने देश को दिया है। वर्तमान् कांग्रेस का प्रत्येक अंश भगवान दयानन्द ने बनाया है। सचमुच हम भाग्यहीन थे। यदि ६० वर्ष पहले इस कार्यक्रम को समझकर आचरण किया होता तो भारत वर्ष कब का स्वतन्त्र हो गया होता। मैं ऋषि दयानन्द को अपना राजनैतिक गुरु मानता हूं। मेरी दृष्टि में तो वे महान् विप्लव वादी नेता और राष्ट्र विधायक थे।

—विठल भाई पटेल

(१९) स्वामी दयानन्द जी के राष्ट्र प्रेम के लिए उनके द्वारा उठाये गये कष्टों, उनकी हिम्मत, ब्रह्मचर्य जीवन और अन्य कई गुणों के कारण मुझे उनके प्रति आदर है। अपने समाज में उस समय जो-जो कुरीतियां, बहम, अज्ञानता और बुराइयां थीं स्वामी जी ने उनको दूर करने के लिए बल लगाया। यदि स्वामी जी न होते तो हिन्दु समाज की क्या हालत होती, इसकी कल्पना भी कठिन है। आज देश में जो भी कार्य चल रहे हैं, उनका मार्ग स्वामी जी वर्षों पूर्व बना गये थे। शताब्दियों में ऐसे बिरले महापुरुष मिलते हैं। समाज में जब बुराईयां घर कर जाती हैं, तब ईश्वर ऐसी विभूतियों को भेजता है। ऐसे महापुरुष कभी मरते नहीं हैं। अमर होते हैं। उनका जीवन हमारे लिए आदर्श बन जाता है।

सरदार बल्लभ भाई पटेल

(२०) महर्षि दयानन्द महान् राष्ट्र नायक और क्रान्तिकारी पुरुष थे। उन्होंने व्यावहारिक रूप से जीवन के प्रत्येक पहलू में अपनी छाप छोड़ी है। स्वामी जी को श्रद्धापूर्वक स्मरण किया जाना चाहिए उन्होंने जो काम पकड़ा उसे पूरी तरह से निभाया। उन्होंने देश में धार्मिक, सांस्कृतिक और राजनैतिक क्षेत्र में जो जो काम किया वह अभूतपूर्व है। उन्होंने हिन्दु धर्म का कल्याण किया। वह बड़े दृढ़ व्यक्ति थे उन जैसा क्रान्तिकारी नेता होना बिरले ही लोगों का काम होता है। उन्होंने ऐसे समय में देश का नेतृत्व किया, जब बुराईयों की ओर संकेत करना भी कठिन काम था। उन्होंने हिन्दी के राष्ट्रभाषा होने का घोषनाद किया और छून-छात तथा जात-पात के विरुद्ध आन्दोलन छेड़ा। स्वराज्य और स्वदेशी को उन्होंने ऐसी लहर चलाई, जिससे इण्डियन नेशनल कांग्रेस के निर्माण की पृष्ठभूमि तैयार हो गई। —"लालबहादुर शास्त्री"

(२१) "गांधी जी राष्ट्र 'पिता' थे तो महर्षि दयानन्द सरस्वती राष्ट्र के 'पितामह' थे। महर्षि जी हमारी राष्ट्रीय प्रवृति और स्वाधीनता आन्दोलन के आद्य प्रवंतक थे। गांधी जी उन्हीं के पद चिन्हों पर चले! यदि महर्षि दयानन्द हमें मार्ग न दिखाते तो अंग्रेजी शासन में उस समय सारा पंजाब मुसलमान बन जाता और सारा बंगाल ईसाई हो जाता। महर्षि जी ने सारे विश्व को आर्य बनाने की प्ररेणा दी। महर्षि दयानन्द दिव्य दयानन्द थे। उन्होंने ईसाई मत और इस्लाम के हमलों से देश की रक्षा की। आर्य समाज देश की एकता के लिए कार्य कर रहा है।

—"अनन्त शयनम् अय्यंगार"

(२२) दयानन्द उत्कट देश भक्त थे, अतः मैं राष्ट्रवीर समझ कर उनकी वन्दना करता हूं।

—साधु टी. एल. वास्वानी

(२३) महर्षि दयानन्द भारत माता के उन प्रसिद्ध उच्च महात्माताओं में से थे, जिनका नाम संसार के इतिहास में सदैव चमकते हुए

सितारों की तरह प्रकाशित रहेगा। वह भारत माता के उन सपूतों में से है, जिनके व्यक्तित्व पर जितना भी अभिमान किया जाए थोड़ा है। नैपोलियन और सिकन्दर जैसे अनेक सम्राट एवं विजेता संसार में हो चुके हैं, परन्तु स्वामी उन सबसे बढ़कर थे।

—"खदीजा बेगम एम. ए."

(२४) मैं देखता हूं कि कोई भी हिन्दू जब आर्य समाज में आता है तो उसमें बहुत विशेषता आ जाती है। उसके अन्दर उत्साह, देशभक्ति, कर्मशीलता और एक प्रकार की अद्भुत स्प्रिट काम करने लगता है। देश के कामों को ही लीजिए। जब तक और लोग स्वराज्य का स्वप्न देख रहे थे। स्वामी दयानन्द और आर्य समाज अपनी पुस्तके द्वारा उसका प्रचार करने में लगे थे। मै प्रसन्नता के साथ कहता हूं कि असहयोग क युग से पहले लगभग ९० प्रतिशत आर्य समाजी स्वराज्य के कार्यों में हिस्सा लेने वाले लीडर थे जबकि सोसाइटियों के मुश्किल २-३ प्रतिशत आदमी ही स्वराज्य का काम करते थे।

--"मौलाना हसरत मोहनी"

(२५) ईसाइयत और पश्चिमी सभ्यता के मुख्य हमले से हिन्दुस्तानियों को सावधान करने का सेहरा यदि किसी व्यक्ति के सिर बांधने का सौभाग्य प्राप्त हो तो स्वामी दयानन्द जी की ओर इशारा किया जा सकता हैं। १९ सदी में में स्वामी दयानन्द जी ने भारत के लिए जो अमूल्य काम किया है उससे हिन्दू जाति के साथ-साथ मुसलमानों तथा अन्य धर्मावलम्बियों को भी बहुत लाभ पहुंचा है।

—"वीर मुहम्मद यूनिस"

(२६) हमें ऋषियों की सन्तान होने का सौभाग्य प्राप्त है और इसके लिए हम गर्व करते हैं तो कहना होगा कि ऋषि दयानन्द से बढ़ कर हमारा उपकार किसी भी दूसरे महापुरुष ने नहीं किया। जिन्होंने स्वयं कुछ भी न लेकर हमें अपार ज्ञान राशि वेदों से परिचित करा दिया।

—महाकवि सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

इस प्रकार महर्षि को देशी तथा विदेशी महापुरुषों ने अपनी-२ दृष्टि से आका है। इन सबकी ऋषि जी के प्रति श्रद्धा भरी विशेष भावना को देखकर यह पता चलता है कि महर्षि इस युग के सबसे बड़े महापुरुष थे। ऋषि जी ने जीवन के किसी भी अंग को अछूता नहीं रखा। छोटी साधना से लेकर मुक्ति तक तथा ग्राम शासक से लेकर चक्रवर्ती राज्य तक सभी पर पूर्ण प्रकाश डाला है। हम आर्यों को ऐसे महान ऋषि के शिष्य होने का गर्व है। आज मांग इस बात की है कि आर्यों को चाहिए कि अपने आचरण को ऋषि कथन के अनुकूल बनाकर और संगठित होकर पूर्ण शक्ति के साथ कार्य करना चाहिये, तभी शताब्दी की सफलता हो सकती है।

वैदिक मिशन लन्दन द्वारा प्रचार कार्य

वैदिक मिशन (आर्य समाज) लन्दन द्वारा ३० मार्च को मिडलेक्स में एक विशेष प्रचार कार्य किया गया श्री एल. आर. वैद तथा उसकी धर्मपत्नी यजमान बने और उन्होंने ही ऋषि लंगर का प्रबन्ध किया। हवन यज्ञ के पश्चात 'ओ३म्' की पताका फहराई गई और अमिता सेठी, शशी सेठी तथा जसबीर साहिब ने सामूहिक गान किया। श्री वी. पी. विपनाबन्धु सिद्धांत-रत्न ने वेद सुधा पर प्रवचन दिया। "स्वामी दयानन्द और उसका मिशन" नामक विषय पर श्री मेला राम मलिक ने भाषण दिया। श्री के. सी. चोपड़ा और सन्तोष वैद ने गीत गाए।

नृसिंहावतार और वेद

(ले०—डा० श्री शिव पूजनसिंह जी कुशवाह एम० ए० साहित्यालंकार विशारद)

अवतार वाद पर यह विवेचन है। सुन्दर अन्वेषण एवं तर्क ,का सहारे लिखा गया है ।

—सम्पादक

ईश्वर अवतार नहीं लेता है यह वैदिक धर्म का सिद्धान्त है। वेदों में कहीं भी श्रीमद् भागवत महापुराण प्रतिपादित २४ अवतारों की चर्चा तक नहीं है। पौराणिक वेद मन्त्रों से ईश्वरावतार सिद्ध करने का प्रयास करते हैं जो उनकी भयंकर भूल है।

'प्रतद्विष्णुः स्तवते वीणर्ये मृगोन भीमः कुचरो गिरिष्ठाः।
यस्योरुषु त्रिषु विक्रमणेस्वधिक्षियन्ति भुवनानि विश्वा।

ऋग्वेद मण्डल १ सूक्त १५४ मंत्र २ तथा यजु. ५-२०।

विद्यावारिधि पं० ज्वाला प्रसाद मिश्र मुरादाबाद—इसका भाष्य अवतारपरेक करते हैं :—

"मृगोन मृग इव ताद्विस्णुः वीर्य्येण पराक्रेमेण पुस्तवदे स्तुतिं प्राप्नोति भीम भयानक रूपधरः नृसिंहः अतएव मृगइवेत्युक्तिः संगच्छते कुपृथ्वीं वाराहादिरूपेण चरतीति कुचरः गिरौकैलासे भिपत्निनेत्ररूपेन तिष्ठतीति गिरिष्ठाः गस्यविष्णोः त्रिविक्रमावतारे त्रिषुपादेषु विक्रमणेषु सत्सु विश्वा सर्वापि चतुदर्श भुवनाशि अधिक्षियंति चलतीव्यर्थः।

भाषार्थ :- (मृगोन) मृग के समान (तत्) सो (विस्णुः) विष्णु भगवान् (वीर्य्येण) अपने पराक्रम से (प्रस्तवते) स्तुति को प्राप्त होते हैं (भीमः) नृसिह रूप से भीम् (कुचरः) वाराहदि-रूप से पृथ्वी में विचरने से कुचर (गिरिष्ठाः) कैलासादिगिरि में स्थित रहने ने गिरिष्ठ हैं (यस्य) जिस विष्णु के (उरुषु) बड़े (त्रिषु) तीन (विक्रमेषु) पाद विक्षेप में (विश्वाभुवनानि) सम्पूर्णभुवन (अधिक्षियन्ति) कंपित होते व वसते हैं।" १

पं. कालूराम शास्त्री ने भी "अवतारमीमांस" में नृसिंहावतार इस मन्त्र से माना है।

समीक्षा – पौराणिकों की कल्पना निराधान, प्रमाण शून्य है । महर्षि दयानन्द सरस्वती का भास्यः (प्र) तत्) सः (विष्णुः।

सर्वाव्यापीश्वर : (स्तवते) स्तौति (वीर्येण) स्वपराक्रमेण (मृगः) (न) इव (भीमः) भयंकर (कुचरः) यः कुत्सित चरति सः (गिरिष्ठाः) मोगिरौ तिष्ठति (यस्य) (उरुषु) विस्तीर्णेषु) (त्रिषु) नामस्थानजन्मसु (विक्रमणेषु) विविधेषु

१.—"दयानन्द तिमिर भास्कर" पृष्ठ २१० (सम्वत् १९६२ वि. श्री वेङ्कटेश्वर (स्टीम) मन्त्रालय, बम्बई द्वारा मुद्रित व प्रकाशित, तृतीय संस्करण)।

सृष्टिक्रमेषु (अधिक्षियन्ति) आधाररूपेण निवसन्ति (भुवनानि) भवन्ति भूतानियेषु तानि लोक जातानि (विश्वा सर्वाणि।

भावार्थ :—अत्रोपमालङ्कारः। नहि कश्चिदपि पदार्थ ईश्वरसृष्टि नियमक्रमभुल्लङ्धितुं शक्नोतियो धार्मिकाणां मित्र इवाह्लादप्रदो दुष्टानां सिंह भयप्रदो न्यायादिगुणधर्त्ता परमात्माऽस्ति सर्वएव सघानधिष्ठाता न्यायाधीशोऽस्तीति वेदितव्यम्।

पदार्थ :—हे मनुष्यों! (यस्य) जिस जगदीश्वर के निर्माण किए (त्रिषु) जन्मनाम और स्थान इन तीन (विक्रमणेषु) विविध प्रकार के सृष्टिक्रमों में (विस्वा) समस्त (भुवनानि) लोक लोकान्तर (अधिक्षियन्ति) आधार रूप से निवास करते हैं (तत्) वह विष्णुः। सर्वव्यापी परमात्मा अपने (वीर्येण) पराक्रम से (कुचरः) कुटिलगामी अर्थात् ऊंचे नीचे नाना प्रकार विषय स्थलों में चलने और (गिरिष्ठाः)। पर्वत कन्दराओं में स्थिर होने वाले (मृगः) हरिन के (न) समान (भीमः) भयंकर समस्त लोक लोकान्तरों को (पुस्तवते) प्रशंसित करता है।

भावार्थः—कोई भी पदार्थ ईश्वर और सृष्टि के नियम का उल्लङ्घन नहीं कर सकता है जो धार्मिक जनों को मित्र के समान आनन्द देने दुष्टों को सिंह के समान भय देने और न्यायादि गुणों का धारण करने वाला परमात्मा है वही सब का अधिष्ठा और न्यायाधीश है यह जानना चाहिए। २

पं. तुलसी राम स्वामी ३., पं. जयदेव शर्मा विद्यालंकार, मीमांसा तीर्थ ४ भी महर्षि दयानंद जी के भाष्य के समान ही अर्थ करते हैं।

यही मंतत्र निरुक्त में भी आया है।

"मृग इव भीमः कुचरो गिरिष्ठः! मृगो मार्ष्टेर्गतिकर्मणः। भीमो बिभ्यत्यस्मात्। भीष्मोऽप्येतस्मादेव। कुचर इति चरतिकर्म कुत्सितम्। अथचेद् देवताभिधानम्। कामं न चरतीति। गिरिष्ठा गिरिस्थामी।

गिरि; पर्वतः। समदीर्णोभवति। पर्ववान् पर्वतः। पर्वः पुनः पृणातेः प्रीणातेर्वा। अर्धमासपर्वं। देवानस्मिन्प्रीणन्तीति। तत् प्रकृतीत रत्सन्धि सामान्यात्। मेधस्थायी। मेघोऽपि गिरिरेतस्मादेव।"

—(निरुक्त १/२०)

पं. सत्यभूषणयोगी, एम. ए., शास्त्री, वेदालंकार "सब कहीं घूमते हुये पर्वतों पर विचरण करते हुये भयंकर पशु के समान। 'मृगः' (पशु) जाना अर्थ वाली 'मृज्' (धातु) से व्युत्पन्न है। 'भीम' (भयंकर), जिससे सब डरते हैं। 'भीष्म' (भयानक) भी इसी धातु से बना है। 'कुचरः' का अर्थ है 'जो कुटिल गति से चलता है।' यदि यह किसी देवता का विशेषण हो तो (इसका अर्थ है) 'वह कहां नहीं जाता?' पर्वतों में विचरण करता हुआ अर्थात् पर्वतों में निवास करता हुआ। 'गिरिः' का अर्थ है पर्वत यह ऊपर उठा हुआ है। 'पर्वत' (पहाड़) (यह इसलिए कहलाता) है क्योंकि इस में सन्धियां (पर्व) है। परन्तु पर्व पृ (भरना) या 'प्री' (तृप्त करना) धातु से व्युत्पन्न है। इसमें एक पक्ष के समय में वे देवताओं को तृप्त करते हैं। यह (पर्वत) (यह इसलिए कहलाता है) क्योंकि इस की अन्य (समय) की प्रकृति को सन्धियों (पर्वों) से समानता है। मेघ पर बैठा हुआ मेघ इसी

२. 'ऋग्वेद भाष्यम् (तृतीयभागात्मकम्) तृतीयावृत्ति (अजमेर) पृष्ठ २६३

३. "भास्कर प्रकाश" (चतुर्थ संस्करण) पृष्ठ १६४

४. "ऋग्वेद संहिता भाषा भाष्य" (द्वितीय खण्ड), प्रथमा वृत्ति, पृष्ठ २०३

कारण से (अर्थात् उठा हुआ होने के कारण से) पर्वत कहलाता है।...५

श्री वैष्ण व सम्प्रदाय के आचार्य परमहंस परिव्राजकाचार्य, पण्डितराज स्वामी श्री भद्रगवदाचार्य जी महाराज :-"गिरिष्ठा गिरिषु स्थितः कुचर; क्वामं न चरित्र ? अर्थात् सर्वव्यापकः। अथ खेहेवताभिधानं क्वायं न चरतीति निरुत्तम (१-२०)। भीमो भयंकरः विम्मति यस्मात्सर्व इति ! गिरिष्ठाः सर्वेषां गिरि वाचि तिष्ठतीति। मृगो न मृग इव मृग्यमाण इव। सर्वेर्ऋषिभिस्मुनिभिर्देवैर्मृग्यत एव परमात्मा। तत्सः। विष्पुर्ध्यापकः। अथ यद्विषितो भवति तद्विप्युर्भवति। विष्णुर्विशतेर्षा व्यश्नोतेर्वेति मिरुक्तम् (१२-१८। परमात्मा प्रस्तवते सर्वैः प्रकर्षेण स्तूयने। यस्म परमात्तनः त्रिषूरुपु।

"महत्सु विक्रमणेषु लोकेषु। विश्वा विश्वानि सर्वाणि। भुवनानि प्राणिनोप्राणिश्च। अधिक्षियन्ति निवसन्ति। क्षि निदासे। सन्ति नामबहपो लोका उपरिष्ठा मध्यस्था। अधस्थाश्च। कृमु पादविक्षेपे। यत्रयत्र जनाः भचलन्ति तत्र सर्वत्र कृव इति वा विकृम इति वा व्यवहिते। एवं च विकृमा लोकाः। न हि पादा।"

भावार्थ :—सर्व व्यापक, भयावह, सब की वाणी का विषय, ऋषि, मुनि, आदि सभी जिस की प्राप्ति की इच्छा करते हैं, उस सर्व व्यापक परमात्मा की सभी स्तुति करते हैं। जिस परमात्मा के तीन लोकों में चर, अचर सभी निवास करते हैं।"६

पुनः :—"......कहने का सारांश यह है कि यह नितान्त सत्य है कि वैदिक काल में ईश्वर की कोई स्पष्ट कल्पना या अवतार कल्पना नहीं थी।......वेदों के रचना काल में अवतारवाद का कोई चिन्ह नहीं है।"७

श्रीसामणाचार्य का भाष्य :—"यस्मेति लक्ष्यमाणत्वात् सइति अवगम्यते। स महानुभावः" वीर्येण स्वकीयेन वीरकर्मणा पूर्वोक्तरूपेण स्तवते स्तूमते स्तेवैः "कर्ममणि व्यत्ममेन शप" वीर्मेण स्तूयमानत्वे दृष्टान्तः मृगो न सिंहादिरिव। यथा स्वविरोधिनो मृगपिता सिंहः भीमः भीतिजनकः कुचरः कुत्सितहिंसादिकर्ता दुर्गम प्रदेशगन्ता वा गिरिष्ठाः पर्वताद्युन्नत प्रदेशस्थायी सर्वैस्तूयते। अस्मिन्नर्मे निरुत्त-'मृगो न भीमः कुचरो गिरिष्ठा मृग इव भीमः कुचरो गिरिष्ठा मृग मार्ष्टेर्गतिकर्मणो भीमो विम्यत्यस्माद्रोमीऽप्येतस्मादेव। कुचर इति चरितकर्म कुत्सितमथ चेद्देवताभिधानंक्वायं न चरतीति वा......(नि. १.२०)। बद्वदयमपि मृगोऽन्वेष्टा शत्रूणां भीमो भयानकः सर्वेषां भीत्यपादनिभूतः। परमेश्वराभ्दीति। 'भीषास्माद्वातः पवते' (तै. आ. ८-८-१) इत्यादि श्रुतिषु प्रसिद्धा। किंच कुचरः शत्रुवधादिकुत्सित कर्मकर्ता कुषु सर्वासु भूमिषु लोकत्रमे संचारी वा तथा गिरिष्ठाः गिरिवत् उच्छ्रितलोक स्थायी ! यद्वा गिरिमन्त्रादि रूपामां वाचि सर्वदा वर्तमानः ईदृशोऽयं स्वमहिम्ना स्तूयते। किंच यस्य विष्णोः

५. "निघण्टु तथा निरुत्तम" ९८-९९ (सन् १९६७ ई. में मोती लाल, बनारसी दास बंगलो रोड, जवाहर नगर, दिल्ली-७ द्वारा प्रकाशित, प्रथम संस्करण)

६. "शुक्ल-यजुर्वेद-संहिता संस्कार भाष्य, (प्रथम पञ्चाध्यात्मिका) पृष्ठ २२५ (सम्वत् २०१६ वि. में श्री मनोहर विद्यालंकार कन्हैया लाल देवीसहाय, चावड़ी बाजार, दिल्ली द्वारा प्रकाशित)

७. वही पाद ठिप्पणी, पृष्ठ २२८-२२९

उरुषु विस्तीर्णेषु त्रिसंख्याकेषु विक्रमणेषु याद-प्रक्षेपेषु विश्वा।
सर्वाणि भुवनानि भूतजातानि अधिक्षियन्ति आश्रित्य निवसन्ति स विष्णुस्तूभते।"

अनुवाद—"वह विष्णु, जो वनचर जीव (सिह) के समान भयंकर, दुर्गम प्रदेशों में विचरण करने वाला है, अपने वीरतापूर्ण कार्यों के द्वारा प्रकृष्ट रूप से स्तुति किया जाता है। जिसके तीन विस्तृत पादप्रक्षेपो में समस्त प्राणि-जाति (मा समस्त लोक) निवास करते हैं।"

टिप्पणी—मृगो न भीमः—ऋह-१०।१८०।२, १६।४।१४ व १।९७ ८ में भी आया है। 'मृग' का अर्थ, सिंह दोनों ही है। दोनों ही अर्थों को महर्षि दयानन्द जी ने लिखा है। मास्क 'वन्य-पशु' अर्थ करते हैं। सिंह को 'मृगराज' कहा जाता है। जब 'मृग' में 'भोम' विशेषण लग जाता है तो भयंकर 'वन्य पशु' हो जाता है। जिसमें 'सिह' अर्थ प्रबल है। राथ ने 'सेंटपीटस-वर्ग कोष' में 'पक्षी' अर्थ भी किया है।

त्रिषु विक्रमणेषु :—कुछ व्याख्याकारों के अनुसार सूर्यपरक अर्थ भी हो सकता है। विष्णु के तीन पादप्रक्षेपों से प्रत्येक दिन के तीन भागों—प्रातः मध्यान्ह और सायं से है। तात्पर्य जिन में सूर्य अपने तीन पाद प्रक्षेपों के द्वारा निखिल लोकों का मायन करता हैं, साथ ही विष्णू सूर्य का ही अन्य रूप है। इन का सम्बन्ध सूर्य से है। ८

श्री हिलेब्रांड्ट (Vedische Mytholgy) और श्री हापकन्सि ९ ने विष्णु का तादात्म्म सूर्य के साथ स्थापित करने का प्रयत्न किया है।

अतः इस मन्त्र से महर्षि दयानन्द जी, सायण स्वामी भगवदाचार्य जी, तथा पाश्चात्य विद्वान नृसिंहावतार नही मानते हैं, पं. ज्वाला प्रसाद मिश्र व पं. कालू राम शास्त्री की केवल कपोल कल्पना मात्र है।

८. श्री आर. एन. दाण्डेकर कृत "Vishnu is the Veda", प्रो. पी. वी. कापे Telicixation Lal P. P. ९५ III।

९. "Govrnal of camerisau Ovieutal society" XVI

अम्बाला छावनी में आर्य समाज शताब्दी समारोह

आर्य समाज कच्चा बाजार तथा उससे सम्बंधित शिक्षा संस्थाएं लक्ष्मी देवी आर्य गर्ल्ज हाई स्कूल तथा दयानन्द आर्य पुत्री पाठशाला ने सम्मिलित रूप से आर्य समाज शताब्दी पूर्ण समारोह से मनाया प्रातः ८ बजे से साढ़े १० बजे तक पवित्र यज्ञ भजन तथा आर्य समाज की उपलब्धियों पर व्याख्यान होते रहे बाद दोपहर साढ़े ३ बजे से ५ तक परिवारिक सत्संग किये गये, ७ अप्रैल १९७५ को यह सत्संग श्री दिवान चन्द जी जैन के निवास स्थान पर किया गया।

भिन्न २ विचारों के लोगों में परिवारिक सत्संग किये गये आर्य समाज मन्दिर खूब सजाया गया और इसके निकट के बाजार में आर्य समाज के माटो तथा ओ३म् के झण्डे लगाये गये, स्वामी दयानन्द के वहुत से चित्र भी दिवारों और खम्बों पर लगाये गये आर्य समाज का बहुत उपयोगी सरल साहित्य बांटा गया।

मोरन्डा में शताब्दी उत्सव

"यजुर्वेद" पारायण यज्ञ पं० आशुराम जी चण्डीगढ़ वालों ने परोहित बन कर ३ अप्रैल से १२ अप्रैल को पूर्णाहूति सम्पन्न करवाया वेद मन्त्रों की व्याख्या, भजन, ऋषिवर स्वामी दयानन्द गुनगान और आर्य समाज के बारे में विस्तार से बताया गया । शहर के स्त्री पुरुषों को यज्ञोपवीत धारण करवायें और इसका महत्व दर्शाया बहुत से नर नारियों मौन वृत धारण किये । पाठशाला की छात्राओं तथा स्टाफ ने यज्ञोपवीत धारण किये, यज्ञ में पूर्ण सहयोग दिया । शहर ने लोगों पर अच्छा प्रभाव पड़ा और आर्य समाज के सदस्य बनने की ओर कदम बढ़ाया । शहरियों में उत्साह भरा वातावरण देखने को आया रात्री को दीपमाला और बिजली रोशनी की गई । सभी वर्गो ने बढ़ चढ़कर यज्ञ. उत्सव और हर प्रकार से कार्य में भाग लिया ।

आर्य समाज शताब्दि वर्ष

के उपलक्ष्य में सोलन जिला पत्रकार संघ की ओर से शुभकामनाएं स्वीकार करें ।

यह संघ आर्य समाज की समाज सुधारक संस्था के १०० वर्ष पूरे होने पर बधाई देता है एवं भविष्य में भी इस प्रकार मानव जाति के कल्याण हेतु आर्य समाज के कार्यों के सुचारू रूप से चलने के लिये अपनी शुभ कामनाएं भेजता हूं ।

—सुशील शर्मा महासचिव सोलन जिला पत्रकार संघ (शिमला)

त्रिपड़ी (पटियाला) में आर्य समाज

तिथि २५ मार्च को आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के उत्साही महोपदेशक श्री पं० रामनाथ जी सिद्धान्त विशारद पधारे । आपने लगातार ३० मार्च तक भिन्न भिन्न विषयों पर प्रभावशाली भाषण दिये । आपने नियमपूर्वक आर्य समाज के लिये प्रेरणा दी सदस्यता फार्म और सम्बन्ध फार्म दिये । सदस्यों की भर्ती जोर शोर से आरम्भ है ।

आर्य समाज के प्रधान श्री वैद्य आतमदेव जी है और मन्त्री श्री सत्यपाल जी पुरी उपमन्त्री और विद्या सागार जी हैं ।

—मन्त्री आर्य समाज त्रिपड़ी

(१० पृष्ठ का शेष)

आदि की प्रतिक्रियाओं का वर्णनप्राप्त है इसी आधार पर आर्य जाति में सृष्टि के प्रारम्भ से ही अन्य यज्ञों के साथ साथ अतिथि यज्ञ का प्रचलन किसी न किसी रूप में रहा है । वर्तमान युग में महर्षि दयानन्द सरस्वती ने इस लुप्त प्राय: अतिथि यज्ञ की प्रक्रिय को पञ्च महा यज्ञों में सम्मिलित कर उदान्त स्वरूप प्रदान दिया है ।

वस्तुत: विद्वान सम्माननीय अतिथि के स्वागत सत्कार से राष्ट्र में ज्ञान विज्ञान, संयम सदाचार, परोपकार, श्रद्धा सोहार्द सौमनस्य आदि शुभ गुणों का आधार होता है । जो कि राष्ट्र के लिये परम आवश्यक विधि है अत: आर्य गृहस्थों में अन्य यज्ञों के साथ साथ अतिथि यज्ञ का भी प्रचार एवं प्रसार करना अपना परम कर्तव्य समझना चाहिये आशा है इस आर्य समाज स्थापता शताब्दी के स्वार्णिम अवसर पर हम अपनी आर्य परम्पराओं का आदर करते हुये अतिथि यज्ञ करने के लिए सदैव कृत संकल्प रहेंगे ।

महर्षि स्वामी दयानन्द के वृत्त-चित्र का राष्ट्रपति द्वारा विमोचन

हमारा कर्त्तव्य है कि हम महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती के आदर्शों पर चल कर अपना जीवन सफल बनावें। आर्य समाज स्थापना शताब्दी के अवसर पर यही हमारा कर्त्तव्य है। उनके सिद्धान्त और आदर्श आज भी उतने ही उपयोगी है, जितने १०० वर्ष पूर्व थे।

इन शब्दों में महर्षि दयानन्द और आर्यसमाज का महामहिम राष्ट्रपति श्रीयुत फखरूद्दीन अली अहमद ने अभिनन्दन किया। वह विज्ञान भवन नई दिल्ली में १० अप्रैल १९७५ को सायंकाल ५ बजे भारत सरकार द्वारा निर्मित महर्षि दयानन्द सरस्वती के वृत्त चित्र का विमोचन कर रहे थे।

राष्ट्रपति महोदय ने महर्षि के प्रादुर्भाव का स्वागत करते हुए कहा उनका अवतरण उस समय हुआ जबकि देश को ऐसे ही महानुभाव की जरूरत थी। उन्होंने देश को जगाया। सौ वर्षों में आर्य समाज का योगदान देश के लिए महत्वपूर्ण रहा है। उन्हीं बातों का स्मरण करना भी एक खास महत्व रखता है।

मानव जीवन के उत्कर्ष के लिए वर्ग की महत्ता पर बल देते हुए उन्होंने कहाकि ज्ञान विज्ञान के इस युग में भी ऐसे महापुरुषों के रास्ते पर चलने की जरूरत है जिन्होंने मानव की सेवा करने का उपदेश दिया। सच्चा धर्म वही है जो मानव मात्र के कल्याण के लिए हो और समाज में मेल मिलाप करावे। धर्म के लिए आपस में लड़ना नहीं चाहिए।

अपने सूचना और प्रसारण मन्त्रालय द्वारा तैयार किया गया वृत्त चित्र श्रीयुत इन्द्रकुमार जी गुजराल मन्त्री महोदय ने राष्ट्रपति को समर्पित किया और अपने संक्षिप्त भाषण में कहाकि महर्षि दयानन्द ने देश और मानव समाज को नई दिशा दी। उन्होंने देश के लिए जो क्रान्ति की उस पर हमें गर्व करना चाहिए। उन्होंने आर्य समाज की उपलब्धियों की भी प्रशंसात्मक चर्चा की।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के मन्त्री तथा संसद सदस्य श्री ओ३म प्रकाश जी त्यागी और सार्वदेशिक आर्य समाज स्थापना शताब्दी के समिति के प्रधान श्रीयुत प्रतापसिंह शूरजी वल्लभदास ने मान्य राष्ट्रपति महोदय और विशिष्ट अतिथियों का स्वागत करते हुए आर्य समाज स्थापना शताब्दी समारोह के कार्यक्रम पर प्रकाश डाला। सार्वदेशिक सभा के प्रधान श्रीयुत लाला रामगोपाल जी शालवाले ने राष्ट्रपति के आगमन पर विशेष आर्य नेताओं के साथ उनका स्वागत किया।

इस वृत्त चित्र को देखने के लिए विज्ञान भवन दर्शकों से खचाखच भरा हुआ था। दिल्ली की तो समस्त आर्य समाजों की जनता इस आयोजन में शरीक थी। आयोजन में भाग लेने वाले प्रसिद्ध नेताओं एवं विशिष्ट कार्यकर्त्ताओं में श्री महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज, श्रीयुत धर्मवीर जी (भू० पू० राज्यपाल) श्री आर० एन० खोसला (भू० पू० राज्यपाल उड़ीसा) श्री जी० एल० दत्ता, श्री देशराज जी चौधरी, श्री सोमनाथ जी मरवाह एडवोकेट, श्री पं० प्रकाशवीर जी शास्त्री संसद सदस्य, श्री शिवकुमार जी शास्त्री तथा प्रोफेसर शेरसिंह जी के नाम उल्लेखनीय हैं।

आर्य जगत में शताब्दी समारोह के लिए भारी उत्साह नगर-नगर में डगर डगर में ऋषि दयानन्द की जयके नारों की गूंज

जालन्धर (वि प्र०) सभा के मुख्य कार्यालय में प्राप्त सूचनानुसार सारे देश मे शताब्दी समारोह बड़ी धूम धाम से मनाये जा रहे है । सभा के अधीनस्थ समाजो से भारी उ साह तथा उल्लास है ।

आर्य समाज नंगल टाउनशिप :—यहां एक अप्रैल से ''यजुर्वेद पारायण यज्ञ'' पं० वीर सेन वेदश्रमी के आचार्यत्व में सम्पन्न हुआ । १२ अप्रैल को पूर्णाहूति डाली गई और दोपहर को शोभा-यात्रा निकाली गई । सभा की ओर से श्री पं० हरिदत्त शास्त्री तथा पं० सत्यपाल ने भाग लिया ।

आर्य समाज कच्चा बाजार अम्बाला :—स्थानीय समाज में ६ अप्रैल को प्रात: विशाल प्रभात फेरी के पश्चात डा० राजारामसिह ने ध्वजारोहण किया श्री विद्यासागर ने यज्ञमान पद को सुशोभित किया । १२ अप्रैल को डा० राजा रामसिह को उनकी ४० वर्षीय सेवाओं को प्रमुख रख कर के सादर अभिनन्दन किया गया ।

आर्य समाज सदर बाजार झासी :—इस समाज ने भी शताब्दी समारोह ६ से १२ अप्रैल तक धूमधाम से मनाया । दोपहर तीन बजे शोभा यात्रा निकाली गई । श्री सुरेन्द्र नाथ वर्मा, श्रीशिवशंकर श्री वास्तव, कुमारी उर्मिला तथा श्रीमती कृष्णाकान्ता ने आर्य समाज को उपलब्धियों पर भाषण दिये ।

आर्य समाज ओहरी चौक बटाला :—इस समाज में भी शताब्दी समारोह सप्ताह बड़ी श्रद्धा पूर्वक मनाया गया । १२ को सार्वजनिक सभा मे ''आर्य समाज की विश्व को देन '' पर श्री धर्मपाल बजाज श्री वीरेन्द्र भारती व्यवस्थापक आर्य मर्यादा तथा श्री टी० एन० कौल सारगर्भित भाषण हुए । ११ अप्रैल को विशाल जलूस निकाला गया ।

आर्य समाज श्रद्धानन्द बाजार अमृतसर :—इस समाज में सभा कार्यालयाध्यक्ष प० ओ३म् प्रकाश जी आर्य ६ से १२ अप्रैल तक वेद कथा करते रहे तथा रात्रि को भाषण देते रहे । १२ को विशाल शोभा यात्रा निकाली गई जिसका नेतृत्व श्री अमृतलाल जी वधवा ने किया ।

आर्य समाज विनय नगर नईदिल्लीमें आर्य समाज स्थापना शताब्दी समारोह

६ अप्रैल से १२ अप्रैल तक सम्पन्न हुआ । ६ अप्रैल रविवार को विशाल नगर कीर्तन निकाला गया। जिसमें दक्षिण दिल्ली क्षेत्र की समाजें सम्मलित हुई इस से आर्य समाज का बहुत बड़ा प्रचार हुआ । ६ अप्रैल की रात्रि को एक बड़ी सभा का आयोजन किया गया जिसमें ला० रामगोपाल शाल वाले प्रधान सार्वदेशिक, सभा श्री रामचन्द्र विकल संसद सदस्य व अन्य नेताओं ने आर्य समाज के १०० वर्ष के कार्य पर प्र काश डाला ६ अप्रैल से १२ अप्रैल तक यजुर्वेद पारायण यज्ञ आर्य समाज मन्दिर में रखा गया।

—रोशन लाल मन्त्री

आर्य समाज छछरौली जिला अम्बाला में—: आर्य समाज शताब्दी महोत्सव बड़े उत्साह से मनाया गया। महाशय इश्वरी प्रसाद, पंडित गोपाल दास ने आर्य समाज और ऋषि दयानन्द जी के जीवन पर प्रकाश डाला।

आर्य समाज टौणी देवी में : –१२ अप्रैल को बड़ी धूमधाम से शताब्दी कार्यक्रम मनाया गया। यज्ञमान श्री राम शरण जी थे। सभा के प्रधान ठाकुर भीषमराम जी बनाये गये थे। उद्घाटन भाषण श्री भुमिदेव जी किया था। श्री रोशन लाल चौहान ने भी आर्य समाज के प्रति अपना उदार प्रकट किया।

शताब्दी महोत्सव

ब्यावर में राजस्थान प्रान्तीय आर्य समाज स्थापना शताब्दी समारोह का भव्य आयोजन दिनांक ८ जून से १५ जून तक मानव कल्याणार्थ युर्जवेद पारायण यज्ञ होगा।

—बृज लाल आर्य संयोजक

आर्य समाज स्थापना शताब्दी समारोह

आर्य समाज नई कालोनी गुड़गांव में शताब्दी समारोह के उपलक्ष्य में यजुर्वेद पारायण यज्ञ ६ अप्रैल से १२ अप्रैल १९७५ तक अति उत्साह के साथ सम्पन्न हुआ। जिसके ब्रह्मा पं. राजेन्द्र विद्या वाचस्पति थे। यज्ञ के बाद प्रतिदिन पण्डित जी का वेद प्रवचन भी होता था। यज्ञ में हर-रोज नये यजमान भाग लेते थे।

डा. कुमारी सुशीला आर्या की रेडियो वार्ता

डा० सुशीला आर्या आकाशवाणी दिल्ली (ए) पर दिनाक ९-६-७५ को सायं ६-२० पर प्रारम्भ होने वाले हरियाणा कार्यक्रम में १५ मिन्ट की एक वार्ता प्रसारित करेगी। विषय है "हरियाणा की सांस्कृतिक झलक—रहन सहन तथा खान पान में।"

आर्य समाज शताब्दी समारोह सम्पन्न

आर्य समाज करोल बाग नई दिल्ली ने आर्य समाज स्थापना शताब्दी समारोह ६ अप्रैल से १२ अप्रैल तक बड़ी धूमधाम से मनाया। शताब्दी समारोह के साथ ही साथ आर्य समाज का ४६वां वार्षिकोत्सव भी सम्पन्न हुआ।

६ अप्रैल से १२ अप्रैल तक यजुर्वेदीय यज्ञ चलता रहा। यज्ञ के ब्रह्मा आचार्य विद्या भास्कर जी शास्त्री तथा गुरुकुल एटा के उपाचार्य पं० रामदत्त जी शास्त्री एवं अन्य ब्रह्मचारी इस यज्ञ के कार्य का सम्पादन तथा वेद मन्त्रों का पाठ सस्वर बड़ी सुन्दरता से करते रहे। १२ अप्रैल को ठीक ६ बजे यज्ञ की पूर्णाहूति हुई। अपार भीड़ थी, हजारों नर नारियों ने श्रद्धापूर्वक यज्ञ की पूर्णाहूति में भाग लेकर जहां आत्म लाभ उठाया वहां यज्ञ की शोभा को भी बढ़ाया। यज्ञ के उपरान्त भजन तथा श्री स्वामी ब्रह्मानन्द जी पं० जैमिनी शास्त्री एम० ए० के उपदेश तथा लगातार ५ दिन तक श्री पं० हरिशरण जी वेदालंकार के वदोपदेशों से जनता ने पर्याप्त लाभ उठाया।

६ से ११ अप्रैल तक रात्रि को ८ से ६ तक श्री सोहन लाल जी के भजन तथा क्रमशः श्री प्रो० रतन सिंह जी, श्री पं० ओ३म् प्रकाश जी त्यागी श्री प्रो० राम सिंह जी, श्री पं० विद्या भास्कर जी शास्त्री, श्री ला० राम गोपाल जी शाल वाले, श्री महात्मा आनन्द स्वामी जी, श्री पं० क्षितीश कुमार जी वेदालकार के व्याख्यान होते रहे। इन सब वक्ताओं ने आर्य समाज की गतिविधियों पर प्रकाश डाला तथा प्रेरणात्मक सन्देश दिये।

११ अप्रैल मध्याह्न स्त्री आर्य समाज के तत्वाधान में आर्य महिला सम्मेलन हुआ जिसमें वक्ता के रूप में श्रीमती सविता बहन जी श्रीमती शान्तिदेवी जी एम० ए० श्रीमती सुमित्रा देवी जी, श्रीमती ईश्वर देवी, श्रीमती रूपरेखा जी आठ देवियों ने भाग लिया।

शताब्दी समारोह के अवसर पर विशेषता इस बात की रही कि अजमलखां रोड, आर्य समाज रोड, हरध्यान सिंह रोड पर तथा अन्य अखबथा अन्य बाजारों में ौर आर्य समाज मन्दिर में भव्य दीप माला की गई थी। इसी प्रकार आर्य समाज करोलबाग ने शताब्दी समारोह बड़े विशाल रूप से मनाया।

(दयाल चन्द गुप्त) मन्त्री
आर्य समाज करोल बाग

यजुर्वेद पारायण महायज्ञ

आर्य समाज मन्दिर भटिण्डा में ६-४-७५ से १२-४-७५ तक आर्य समाज स्थापना शताब्दी के सन्दर्भ में सम्पूर्ण यजुर्वेद का यज्ञ पं. विभुदत्त जी शास्त्री, पं. कांशी राम जी वैद्य, श्री केशव देव जी स्नातकादि विद्वानों के सहयोग से सम्पन्न हुआ। यज्ञ से पूर्व श्री रामरत्न जी भारद्वाज डी. सी. भटिण्डा ने ओम ध्वजारोहण किया। आर्य स्कूल की कन्याओं ने ध्वजा का गीत गाया श्री भाई जसवन्त सिंह जी ने सब का स्वागत किया। श्री बलदेवराज भाटिया संयोजक थे। डा. जगन्नाथ सेक्रेटरी, प्रिंसिपल डी. ए..वी. कालेज भटिंडा का सारगर्भित स्वागत भाषण हुआ। सभी आर्य भाईयों ने तथा अन्य नागरिकों ने अपना अपना सहयोग दिया। श्री कृष्णकुमार जी तथा श्री चमन लाल मेहता ने अपने हार्दिक पुरुषार्थ से इस आयोजन को सफल किया।

श्री अमृत लाल जी बजाज, श्री पुरुषोत्तम दास जी एडवोकेट, श्री वेदप्रकाश जी. श्री धर्म वीर जी, श्री रामेश्वर दास जी, श्री धर्मदेव जी तथा श्री कृष्ण कुमार जी, सपत्नीक प्रतिदिन यथाक्रम यजमान बनते रहे।

भटिण्डा की यज्ञ प्रिय जनता ने खुले दिल से दान देकर यज्ञ के प्रति अपनी निष्ठा व्यक्त की आर्य स्कूल की मुख्याध्यापिका, अध्यापिकाएं तथा छात्राएं प्रति दिन जीव, सुधार, भगवद्-भक्ति और यज्ञमहिमा के मनोहर भजन बोलती रही जनता बहुत प्रभावित हुई। आर्य समाज भटिण्डा तथा रेलवे आर्य समाज के सदस्यों ने यथायोग्य हर प्रकार का सहयोग दिया।

१२-४-७५ को सर्वधर्म सम्मेलन में शादी, शराब, सोना, भ्रष्टाचार आदि से उत्पन्न होने वाली बुराइयों को जड़ से उखाड़ फेंकने का आन्दोलन चलाने का निश्चय किया।

निवेदक
रोशन लाल

तपा मण्डी में आर्य समाज शताब्दी समारोह

आर्य समाज तपा जिला संगरूर की ओर से १२ अप्रैल १९७५ को आर्य समाज शताब्दी समारोह बड़ी धूमधाम से मनाया गया आर्य हाई स्कूल तपा के अध्यापकों और विद्यार्थियों ने उस कार्यक्रम को बहुत ही सुन्दर बनाया। स्कूल भवन को झण्डियों और ओ३म् के झण्डो से सजाया गया। रात को स्कूल भवन पर दीपमाला की गई। रात को स्कूल में सभी अध्यापकों ने प्रीति भोजन किया। डा० यादविन्द्र राय शर्मा की अध्यक्षता में स्कूल में एक सार्वजनिक सभा हुई। जिसमें स्कूल के विद्यार्थियों ने स्वामी दयानन्द और आर्य समाज के बारे में गीत गाए।

श्री हरबन्स लाल गोयल, प्रधान आर्य समाज तपा ने आर्य समाज सौ सालों के जीवन में आर्य समाज के कार्य पर रोशनी डाली और आर्य समाज की सफलताओं और कार्य क्षेत्र पर विस्तार पूर्वक प्रकाश डाला। सरकारी हाई स्कूल के मुख्याध्यापक श्री हंसराज सिंगला सरकारी कन्या पाठशाला स्कूल के मुख्याध्यापिका श्रीमती जोगेन्द्र कौर, श्री सीताराम गोयल, श्री हरबन्स लाल शर्मा, पंडित राम कुमार और अमर नाथ शास्त्री के सुन्दर व्याख्यान हुए। स्वामी अमर गिरी के सुन्दर भजन और पाखण्डों के खण्डन के विषय में भाषण हुआ। श्री चरंजी लाल मारकण्डा, मन्त्री आर्य समाज तपा ने वैदिक समाजवाद पर एक कविता सुनाई। रात को मैजिक लैंटरन द्वारा आर्य के महान् पुरुषों के चित्र दिखाए गए। आर्य समाज तपा की ओर से आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब द्वारा सार्वजनिक सभा को शताब्दी समारोह के लिए एक सौ रुपया भेजा गया।

आर्य समाजों के चुनाव

आर्य समाज गांव झंझाड़ी जि. करनाल

प्रधान—ब्रह्मचारी रामकुमार आर्य, मन्त्री—पं. देवीदत्त आर्य, कोषाध्यक्ष—श्री हुक्मसिंह एम. ए. उपप्रधान—श्री प्रभुराम, उपमन्त्री—श्री राजाराम, प्रचार मन्त्री—श्री जयसिंह सरपंच।

★ मोरिण्डा 卐

प्रधान—श्री सुरेन्द्र नाथ सूद, एम. सी. उपप्रधान—श्री ओम् प्रकाश महेन्द्र, मन्त्री—श्री दीनानाथ आर्य, उपमन्त्री—श्री जयकृष्ण शर्मा, कोषाध्यक्ष—श्री सुरेन्द्र गुप्त, पुस्तकाध्यक्ष—श्री जतिन्द्र भूषण, आडीटर—श्री सुरेन्द्र खन्ना, प्रतिनिधि—म० बुधराम जी, अर्तरिंग सदस्य—रघुनाथ सहाय तथा डा० सत्य स्वरूप कौशल।

आर्य-वीर दल

संरक्षण—सर्वश्री राम रिछपाल जी, नगर-नायक सतीश चन्द्र अमर, शिक्षक—महेश चन्द जी, अशोक कुमार, राजेन्द्र पाल बत्रा, मन्त्री—नकुल देव जी चौधरी, प्रचार मन्त्री—मदनलाल जी तनेजा, कोषाध्यक्ष—महावीर प्रशाद गुप्ता।

स्त्री समाज

प्रधाना—श्रीमती प्रेमवती अमर, उपप्रधाना—कमला देवी, मन्त्राणी—कुसम देवी अमर, द्रोपदी देवी अमर, उप-मन्त्राणी-शकुन्तलादेवी।

पदाधिकारियों के चुनाव

संरक्षण—श्रीमती गिदौड़ी देवी अमर व श्री मनोहर लाल जी खन्ना, प्रधान - सर्वश्री हरीश चन्द जी अमर, उपप्रधान—पन्ना लाल शर्मा, मन्त्री—महावीर प्रशाद, उपमन्त्री—मदन लाल तनेजा, प्रचार-मन्त्री—नकुल देव चौधरी, कोषाध्यक्ष—महेश चन्द जी।

अन्तरङ्ग सभा के सदस्य

श्री राम रिछपाल जी, श्री राम स्वरूप जी, मा० सुलख राज जी, श्री सतीश चन्द जी अमर, श्री सुरेश चन्द जी अमर, ब्रह्मानन्द जी, श्री ओमप्रकाश जी मलिक, श्री राजेन्द्र पाल बत्रा, दीप चन्द जी तनेजा, श्री राजपाल जी शर्मा, श्री नारायण दास।

शताब्दी समारोह

आर्य समाज साबुन बाजार लुधियाना।

卐 इस समाज ने भी शताब्दी समारोह श्रद्धा पूर्वक मनाया गया। पं. वेदव्रत शास्त्री ने सारगर्भित भाषण दिया तथा श्री वीरेन्द्र-कुलदीप साथी ने मधुर गीत गाये जिनसे जनता मन्त्र मुग्ध हो गई।

आर्य समाज नारायणगढ़ अम्बाला

यहां का शताब्दी उत्सव बड़ी धूम-धाम से मनाया गया। सभा की ओर से श्री पं० सत्यव्रत श्री रामनाथ यात्री, श्री मथुरादास, श्री विद्या भूषण ने भाग लिया। रात्रि को संगीत सम्मेलन श्री यात्री की प्रधानता में हुआ। सभा को ५००) वेद प्रचार दिया गया।

जिनका जन्म दिवस 26 अप्रैल—

मुनिवर गुरुदत्त के प्रति

(ले.—श्रीयुत् किशन लाल 'कुसुमाकर' आर्य नगर फिरोजाबाद)

हे मुने ! गौरव तुम्हारा विश्व में शाश्वत् रहेगा ।
दिव्य प्रतिभा का धरा पर स्रोतनित निर्मल बहेगा ।
आर्य संस्कृति सभ्यता भी धन्य पाकर हो गई थी ।
जाग आस्तिकता गई थी, सुप्त नास्तिकता हुई थी ।

श्रुति उपनिषद् सिन्धु मथ कर रत्न जो अद्भुत निकाले ।
हो गये विस्मित विशद् विज्ञान वेत्ता बुद्धि वाले ।
कर्म का कर में कलश था, दृष्टि ऋषियों को मिली थी ।
था अलौकिक तर्क तोयधि, माधवी लतिका खिली थी ।

अल्प-वय में स्वर्ग सुख की उच्चता तुम पा गये थे ।
लोक में अप वर्ग का आनन्द अनुपम छा गये थे ।
आत्म विद्या के धनी थे, मूर्तिमान महान् नेता ।
आसुरी-विद्या विनाशक, सम्पदा दैवी विजेता ।

श्री दयानन्दर्षि का तप-तेज त्याग अमन्द पाया ।
मृत्यु का सन्देश ऋषिवर का, अमर वरदान लाया ?
भक्त प्रभु अन्तिम क्षणों में शान्त मन से मुस्कराया ?
लोक में परलोक का शुचि ज्ञान कैसा जगमगाया ?

नित्य गुरु की भान्ति जिस 'गुरुदत्त' ने अमृत पिलाया ।
दे सुभग सन्देश-पावन आर्य जगती को जलाया ।
'नाम' क्या रटते रहोगे, 'काम' भी उनके करो तुम ?
आर्यो ! निज स्वार्थ तज, परमार्थ का घट भी भरो तुम ?

जाति-बन्धन और 'पद-लिप्सा' तुम्हारे प्राण हरते ।
संघटन में मन्द विघटन की विषैली वायु भरते ।
ये कृत्रिम जीवन तुम्हारा नष्ट मानवता करेगा ।
नित्य शुचि आर्यत्व में, दनुजत्व की मदिरा भरेगा ।

मुनिवर गुरुदत्त जी विद्यार्थी

(ले०—श्री पं० ओ३म् प्रकाश जी आर्य कार्यालयध्यक्ष)
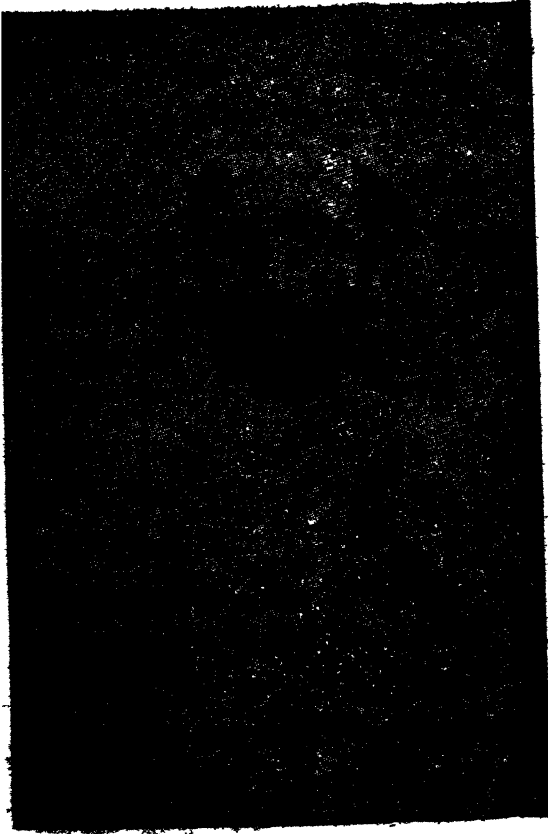
महर्षि दयानन्द जी के समान वेद तथा आर्य ग्रन्थों पर पूर्ण आस्था रखने वाले उनके पश्चात् के विद्वानों में मुनिवर गुरुदत्त का स्थान सबसे ऊंचा है। वैदिक धर्म के यथार्थ स्वरूप को समझ कर उसकी जैसी विस्तृत और विद्वतापूर्ण मीमांसा पंडित गुरुदत्त जी के लेखों और ग्रन्थों में मिलती है। वैसी अन्यत्र उपलब्ध नहीं होती [illegible] के विचारों से प्रभावित होकर आर्य समाज में प्रविष्ट होने वाले विद्वान पौराणिक संस्कारों को भी साथ लाये थे। इसलिये वैदिक धर्म की सत्यता को मान लेने पर भी आर्य ग्रन्थों के अनुवाद करने अथवा स्वतन्त्र रूप से ग्रन्थ रचना करने या व्याख्यान आदि देने में कहीं-कहीं उनके अन्दर छिपे हुये पौराणिक संस्कारों की विद्यमानता का स्पष्ट प्रमाण मिलता है। मुनिवर गुरुदत्त जी की यह विशेष विशेषता है कि उनके लेखों या ग्रन्थों में ऋषि दयानन्द विषय प्रतिपादन शैली ही झलकती है। महर्षि के प्रचार ने ईसाइयों, यवनों, पौराणिकों तथा दूसरे मतवादियों के विचारों के फैलाव को एकदम रोक दिया था परन्तु सुदूर देश में बैठे विदेशी विद्वानों के द्वारा वैदिक धर्म, भारतीय संस्कृति और भारतीय मान्यताओं के प्रति विद्वेष से परिपूर्ण अनर्गल और थोथे विचार जिस ढंग से फैलाये जा रहे थे, उसका प्रतिवाद आवश्यक था। इस महत्वपूर्ण कार्य को ऋषि दयानन्द के पश्चात विदेशियों की ही भाषा में तर्क, प्रमाण तथा विज्ञान मूलक उत्तर देकर जिस अनूठे ढंग से मुनिवर गुरुदत्त ने किया, यह अपने आप में अद्वितीय है।

पंडित गुरुदत्तजी का जन्म २६ अप्रैल १८६४ ई. को मुलतान नगर के सरदाना कुलोत्पन्न लाला राम कृष्ण जी के घर हुआ। लाला राम-

कृष्ण पंजाब के शिक्षा विभाग में एक प्रतिष्ठित अध्यापक तथा फारसी भाषा के एक नामी पंडित थे। अपनी पिछली आयु में उन्होंने संस्कृत का अध्ययन भी अच्छा कर लिया था। आपका धर्मपात्न अपढ़ होने पर भी बड़ा चतुर और निपुण था। वह स्वभाव से ही धार्मिक और उदार हृदया थी। पण्डित गुरुदत्त अपने माता—पिता के अन्तिम पुत्र थे। इनका जन्म का नाम पहले मूला और फिर वैरागी रखा गया। गुरु से आशीर्वाद प्राप्त होने के कारण माता-पिता ने बाद में इनका नाम गुरुदत्त रखा। गुरुदत्त अभी पूरे ५ वर्ष के न होने पाए थे कि उन्हें वर्णमाला सिखलाई गई लाला रामकृष्ण बालक गुरुदत्त की सहज प्रवृत्ति को समझते हुए पर्याप्त समय दे कर इन्हें स्वयं पढ़ाते थे। आठ वर्ष की आयु में वे भंग के स्कूल में जहां उनके पिता अध्यापक थे, भर्ती हुए। इस छोटी सी आयु में उन्होंने फारसी के महत्वपूर्ण ग्रन्थ मौलाना-ए-रूमी, शमस-तवरेज और दीवाने हाफिज पढ़ लिए थे। नवम्बर १८८० ई० में गुरुदत्त ने ऐन्ट्रेंस पास किया और जनवरी १८८१ में लाहौर के गवर्नमैंट कालिज में जो उस समय पंजाब प्रान्त में एक मात्र कालिज था, प्रविष्ट हो गए। यह कालिज उस समय विद्या का केन्द्र था। शिक्षक वर्ग सभी विद्वान, अनुभवी और बुद्धिमान थे। डाक्टर लाइटनर इस कालिज के प्रिंसिपल थे। प्रतिभाशाली होने के कारण गुरुदत्त ने कालिज के मान्य अध्यापकों का अपने सद्भाव की उच्चता, विचार की गम्भीरता, आचार की श्रेष्ठता तथा सभी विद्याओं जानकारी की विशालता के कारण आशीर्वाद सहज ही में प्राप्त कर लिया। प्रिंसिपल तथा प्रोफैसर उनसे बड़े प्रसन्न रहते थे। स्वर्गीय लाला लाजपतराय पंडित जी के सहपाठी थे। लाला जी कहा करते थे कि उन्होंने गुरुदत्त को घर पर कभी कालिज की या श्रेणी की पुस्तक पढ़ते हुए नहीं देखा था फिर भी वे परीक्षा में प्रथम रहते थे। इसका मुख्य कारण यह था कि वे प्रोफैसरों के व्याख्यानों को ध्यान पूर्वक सुनते थे और उनकी सारी प्रमुख बातों को लिख कर समझ लेते थे।

मुनिवर गुरुदत्त १८८० ई. से यद्यपि आर्यसमाज के सम्पर्क में आ चुके थे परन्तु वैदिक धर्म की मूल मान्यताओं के प्रति आपके विचार अभी परिपक्व न हुए थे। सत्यान्वेषी होने के कारण आप प्रत्येक सिद्धान्त मान्यता और विचार के ठीक स्वरूप को समझ कर ही ग्रहण करना उचित समझते थे। निष्कपटता इतनी कि जिस भी सिद्धान्त के सम्बन्ध में थोड़ा सा भी सन्देह उत्पन्न हो जाता था। उसे तुरन्त प्रकट कर देते थे। धर्म और तत्व ज्ञान के प्रश्नों पर विचार करने के लिए आपने एक समिति का गठन १८८२ ई में किया। सर्वसम्मति से आपको इसका मन्त्री बनाया गया। इस समिति में हिन्दू मुसलमान, ब्रह्मसमाजी और आर्य समाजी सभी सम्मिलित थे। यह समिति अपने सदस्यों में खोज का भाव पैदा करने का काम करती थी और इस समिति में सब प्रकार के विषयों पर विचार होता था। समिति के आर्य (हिन्दू) सदस्य यह थे—

लाला शिवनाथ, लाला लाजपतराय, लाला हंसराज, लाला सदानन्द, लाला चेतना नन्द, लाला रुचिराम, दीवान, नरेन्द्रनाथ, पंडित

हरिकृष्ण तथा पंडित रामेश्वरानाथ। १८८३ के जनवरी मास में धर्म के स्वरूप पर मुनिवर गुरुदत्त ने एक सार गर्भित व्याख्यान दिया। इस व्याख्यान से उनके विचारों के अज्ञेयवाद तथा नास्तिकता की ओर झुकाव का पता चलता है। पाश्चात्य विद्वानों के ग्रन्थों का उनके मन और मस्तिष्क पर विशेष प्रभाव था। जहां तर्क पाश्चात्यों की ओर खींचता था, वहां हृदय की अनुभूति और पवित्रता आस्तिकता की ओर प्रेरित करती थी। मानसिक स्थिति के ऐसा होने पर भी मार्च १८८३ ई० में विज्ञान महोपाध्याय डा० रोमन की संरक्षता में आपने एक विज्ञान श्रेणी स्थापित की। इन्हीं दिनों आर्य प्रैस के स्वामी लाला सालिगराम द्वारा प्रकाशित रीजनरेटर आफ आर्यावर्त्त नामक पत्र के लिए आप लेख भी लिखा करते थे। १८८३ ई० के अक्तूबर मास में एक ऐसी घटना घटी जिसने गृरुदत्त के जीवन को सर्वथा बदल दिया। स्वामी दयानन्द के रुग्ण होने का समाचार अजमेर से ६ अक्तूबर को लाहौर पहुंचा। लाहौर आर्य समाज की ओर से लाला जीवनदास और पंडित गुरुदत्त को तुरन्त अजमेर भेजा गया। पंडित जी वहां जाना उन के अपने तथा आर्यसमाज दोनों के लिए बड़ा लाभदायक सिद्ध हुआ विष के कुप्रभाव से जिस महामानव के सारे शरीर पर आबले फूटे हुए थे और असह्य पीड़ा को शान्त करने का जो आलौकिक दृश्य योग निष्णात दयानन्द उपस्थित कर रहे थे उसे देख कर गुरुदत्त अवाक रह गए। विष की तीक्ष्णता महर्षि की सहनशीलता के आगे कुंठित थी। परमात्मा के पवित्र नाम का गायन करते और वेदमन्त्रों से प्रभु की किया। यह दृश्य गुरुदत्त के नास्तिकता के विचारों को उखाड़ फेंकने में तथा सच्ची आस्तिकता के भाव भरने में अद्भुत कार्य कर गयी। ऋषि जीवन की इस अद्भुत झांकी को देखने के बाद पं० गुरुदत्त ईश्वर, उसके सच्चे विधान वेद तथा अपने क्रियात्मिक जीवन से इन दोनों की व्याख्या करने वाले देव दयानन्द पर आजीवन अनुरक्त रहे। ऋषि दयानन्द के देहावसान के बाद उनके नाम और काम की रक्षा के लिए स्मारक बनाने का प्रश्न पंजाब के मनीषियों के सामने उपस्थित हुआ महर्षि की स्मृति में दयानन्द कालिज बनाने का प्रस्ताव विधिपूर्वक ८ नवम्बर १८८३ ई० को जनता के सामने रखा गया। पंडित गुरुदत्त की अपील पर उसी समय सात हजार रुपया इकट्ठा हो गया। पंडित जी का सारा समय अपने जीवन का कायाकल्प करने वाले देव दयानन्द के स्मारक पर अर्पण होने लगा। १८८५ में बी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण होकर यत्र-तत्र-सर्वत्र कालिज के लिए चन्दा इकट्ठा करने में लग गए। सन् १८८६ ई० में उन्होंने एम० ए० पास किया। और उनका कालिज जीवन समाप्त हो गया। इसी वर्ष उनके पिता बीमार हो गए। आपने सच्चे पितृ भक्त पुत्र की तरह अपने पिता जी की जी-जान से सेवा की। उस समय आप लाहौर के गवर्नमैंट कालिज में साईंस के के स्थानापन्न सहायक प्रोफैसर थे। परन्तु अगले वर्ष मिस्टर ओमन के छुट्टी चले जाने पर वे उनके स्थान में साईंस के प्रोफैसर बना दिए गए। पढ़ाते चाहे आप गवर्नमैंट कालिज में थे परन्त आपका हृदय डी० ए० वी० कालिज की उन्नति में ही लगा रहता था।

जैसाकि ऊपर लिखा जा चुका है कि विदेशी, भारतीय धर्म और संस्कृति पर निरन्तर [illegible]

गुरुकुल कांगड़ी
च्यवन प्राश
च्यवन
प्राश
उत्तम, स्वादिष्ट, रसायन
शरीर को बलिष्ट एवं कान्तिमान बनाता है
शारीरिक क्षीणता, तथा
फेफड़ों के लिये प्रसिद्ध
आयुर्वेदिक रसायन
गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी
हरिद्वार
ओ३म्
गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी
हरिद्वार

साप्ताहिक आर्य मर्यादा

श्री कृष्ण जन्माष्टमी अंक

(मूल्य ५० पैसे)

सम्पादकीय

श्री कृष्ण का भारत के सांस्कृतिक जीवन पर प्रभाव

महर्षि दयानन्द ने अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में किसी और महापुरुष की इतनी प्रशंसा नहीं की थी जितनी कि श्री कृष्ण की । उन्हें नीतिज्ञ और उच्चकोटि के विद्वान बताया । इसमें सन्देह नहीं कि जिन दो महापुरुषों ने हमारे देश के सांस्कृतिक जीवन पर सबसे अधिक प्रभाव डाला है, श्री कृष्ण उनमें से एक हैं। दूसरे श्री रामचन्द्र थे राम और कृष्ण इन दोनों के गिर्द हमारा हजारों वर्षो का इतिहास घूमता है । वैसे तो हमारे देश में और भी कई बड़े २ महापुरुष हुए हैं परन्तु जो श्रद्धा सम्मान और महत्व इन दो को प्राप्त हुआ है किसी दूसरे को नहीं। उसका एक कारण यह है कि यह दोनों ही अपने २ रूप में भारत की संस्कृति का एक ऐसा उज्जवल चित्र संसार के सामने रखते हैं जोकि उन लोगों को भी अपनी तरफ खींचता हैं जो न भारतीय हैं न जिन्हें भारतीय संस्कृति और न हमारे धर्म से किसी प्रकार का लगाव है । श्री रामचन्द्र को आदर्श पुरुष कहा गया है । वो इसलिये कि उनके जीवन में कोई भी ऐसी घटना नहीं हुई जो किसी मनुष्य को दूसरों की दृष्टि में गिराने का एक साधन बन सके श्री राम एक पुत्र के रूप में भ्राता के रूप में पति के रूप में और शासक के रूप में अपने कर्त्तव्य को पूरा करते रहे हैं। यही कारण था कि उन्हें मर्यादा पुरुषोत्तम की उपाधि से सम्मानित किया गया । राम और कृष्ण दोनों के जीवन में हम बहुत अन्तर देखते हैं । राम अधिकतर एक धार्मिक महापुरुष के रूप में हमारे सामने आते हैं श्री कृष्ण एक राजनीतिज्ञ के रूप में। परन्तु उनकी राजनीति भी ऐसी थी जो बहुत कुछ हमारी धार्मिक मान्यताओं पर आधारित थी। गीता में उन्होंने जो कुछ कहा भिन्न २ लोग उसके भिन्न २ अर्थ करते हैं । प्रायः यह भी देखा गया है कि कई लोग अपने किसी विशेष उद्देश्य की पूर्ति के लिए अपनी भावना के अनुसार गीता के अर्थ निकाल लेते हैं कौन नहीं जानता कि गीता उपदेश श्रीकृष्ण ने कुरुक्षेत्र की रणभूमि में दिया था जब कौरवों और पाण्डवों की सेनाए एक दूसरे के सामने खड़ी थी । अपने बन्धु बान्धुवों को सामने देखकर अर्जुन का साहस टूट गया था वो उन पर अपने बाण चलाने को तैयार न हुए ऐसे समय में श्री कृष्ण ने अर्जुन को युद्ध के लिए प्रेरणा दी और उनके उपदेश से प्रभावित होकर ही अर्जुन ने महाभारत की लड़ाई लड़ी और उस

में वो विजयी भी हुए। इसलिए यह बिल्कुल स्पष्ट है कि गीता में अहिसा के लिए कोई प्रेरणा नही मिलतो फिर भी महात्मा गांधी ने गीता में अहिंसा की भावना खोज निकाली और उसी के आधार पर वो यह कहने लगे कि गीता भी अहिसा का ही उपदेश देती है।

इससे हम अनुमान लगा सकते हैं कि हमारे देश में कोई व्यक्ति जब धर्म या संस्कृति को एक साधन बनाकर अपनी किसी विचारधारा का प्रचार करना चाहता है तो उसे भी श्री कृष्ण का ही सहारा लेना पडता है वो इसलिए कि हमारे सांस्कृतिक जीवन पर सबसे अधिक प्रभाव उन्ही का है। गीता की जितनी पूजा होती है किसी दूसरे धर्म ग्रन्थ की नहीं होती यद्यपि जो कुछ गीता में लिखा है वो भी एक प्रकार से उपनिपदों का ही निचोड़ है ओर जो कुछ उपनिषदों में लिखा है वे वेदों का निचौड़ है फिर भी न तो लोगों का इतना ध्यान वेदों की तरफ जाता है और न ही उपनिषदों की तरफ जितना कि गीता को तरफ। विदेशों में भी गीता का ही सबसे अधिक प्रचार है और भारत के महापुरुषों में जिस व्यक्ति ने सबसे अधिक पश्चिमी देशों को आर्कषित किया है वो श्री कृष्ण है। हरे रामा हरे कृष्णा नाम का आन्दोलन पश्चिम देशों में जितना फैला है कोई दूसरा नही फैला। उसके द्वारा भारतीय संस्कृति का प्रचार भी हुआ है। आपको अपने देश में श्री कृष्ण का नाम लेने वाले बहुत कम व्यक्ति ऐसे मिलेगे जिनके सिर पर चोटी हो और जो धोती पहन कर इधर उधर घूमते हों लेकिन पश्चिमी देशो में ऐसे आपको हजारों लोग मिल जाएंगे जो अपने आपको श्री कृष्ण के अनुयायी कहते हैं उन्ही की पूजा करते है। संस्कृत पढ़ते हैं अपने बच्चों को गुरुकुलों में भेजते है। कोट पतलून के स्थान पर धोती पहनते हैं और जगह जगह श्री कृष्णके गुणगान करते फिरते हैं।

हमारे देश में भी श्रीकृष्ण के भक्तों की कमी नहीं है यद्यपि यहां उनके भक्त केवल बातें करते हैं उनकी विचारधारा को समझने का यत्न नही करते जो कुछ गीता में श्रीकृष्ण ने अर्जुन को कहा विशेषकर मनुष्य के अपने कर्त्तव्य के विषय में। कर्मयोग, ज्ञान योग और धर्मयोग। यदि हम इन तीनोंको श्रीकृष्ण के दृष्टिकोण के अनुसार समझने का यत्न करें तो न केवल हमारा व्यक्तिगत जोवन परन्तु जाति और देश का जीवन भी बहुत कुछ बदल सकता है परन्तु हमारी कठिनाई हमेशा यह रही है कि हम जिन्हें अपना इष्ट देव समझते हैं उन्हें कभी पूरी तरह समझने का यत्न नही करते। हम छाया के पीछे भागते हैं जो कुछ वास्तविकता है उसे पकड़ने का प्रयत्न नही करते इसलिये हमारा काम और हमारा लक्ष्य बहुत कुछ अधूरा रह जाता है। श्रीकृष्ण ने हमें बहुत कुछ सिखाया है। धर्मयोग का सिद्धांत एक ऐसा मंत्र हैं जिसे यदि हम एक बार अच्छी प्रकार ग्रहण करले तो फिर हमें किसी और उपदेश की आवश्यकता नहीं रहती। आज जबकि सारे संसार में एक उथल पुथल मची हुई है ऐसे समय में हमारा देश भी अपने लिये एक रास्ता ढूढ रहा है कई बार यह प्रश्न उठता है कि हमने किधर जाना है, हमारा लक्ष्य क्या है और उस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए हमें क्या कुछ करना चाहिए। इन सब प्रश्नों का उत्तर हमें गीता के द्वारा मिल जाता है यही कारण है श्री कृष्ण ने हमारे देश के सांस्कृतिक जीवन पर इतना प्रभाव डाला है।

—वीरेन्द्र

पंजाब प्रतिनिधि सभा से सम्बन्धित आर्य समाजों के अधिकारियों को सेवा में

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधिधि सभा के प्रधान श्री रामगोपाल जी शालवाले के आदेशानुसार आर्य प्रतिनिधि सभा के अधिकारियों, अन्तरग सदस्यों व दूसरी सभाओं व समितियों के सदस्यों चुनाव रविवार १४ सितम्बर प्रातः ११ बजे आर्य गर्ल्ज कालेज अम्बाला छावनी में होंगे। कई लोग इसके विषय में कई किस्म की भ्रान्तियां फैलाने का यत्न कर रहे है। एक विज्ञप्ति स्वामी इन्द्रवेश के नाम से भी प्रकाशित हुई है जिसके अनुसार १३ सितम्बर को सभा के अधिकारियों का चुनाव नरवाना में रखा गया है। जैसाकि मैंने ऊपर लिखा है कि सार्वदेशिक सभा के प्रधान का आदेश है कि चुनाव १४ सितम्बर को अम्बाला में होगा। इसलिए १३ सितम्बर का चुनाव अवैध होगा और उसका कोई भी वैधानिक महत्त्व नहीं हो सकता। कुछ व्यक्ति जो कि पंजाब सभा के विभाजन का विरोध करते रहे हैं और अब भी कर रहे हैं, वही आर्य समाज में विघटन का एक नया बीज बोना चाहते हैं। सार्वदेशिक सभा के आदेश के बाद तीनों सभाओं ने विधिवत् काम करना प्रारम्भ कर दिया है इसलिये पुरानी सभा का चुनाव निश्चित हो गया है। मैं आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के सब प्रतिनिधि महानुभावों से प्रार्थना करना चाहता हूं कि वह नरवाना जाने का कष्ट न करें क्योंकि वहां जो भी चुनाव होगा; उसका कोई भी वैज्ञानिक महत्व नहीं होगा।

इसी के साथ मैं सब समाजों के अधिकारियों से एक निवेदन करना चाहता हूं, वह यह कि जिन समाजों ने अभी तक वेद प्रचार निधि में अपना धन नहीं भेजा या जिनके जिम्मे दशांस रहता हैं उन्हें तुरन्त ही सभा के कार्यालय में यह राशि भेज देनी चाहिये। जिन आर्य समाजों के पूरे चन्दे न आये होगे उनके प्रतिनिधि सभा के निर्वाचन में कोई भाग न ले सकेंगे। इस समय हमें अनुशासन का एक ऐसा प्रदर्शन करना है जिसके द्वारा हम आर्य समाज की शक्ति का भी प्रदर्शन कर सकें। पंजाब में विशेषकर आर्य समाज के संगठन के नये सिरे से प्रारम्भ करने की आवश्यकता है। इसलिये जो लोग आर्य समाज की शक्ति का विघटन करना चाहते हैं उनसे बचने की जरूरत है, हमें अपनी शिरोमणि संस्था सार्वदेशिक सभा के आदेश का पालन करना चाहिए। उसी अवस्था में आर्य समाज की शक्ति बन सकती है।

—वीरेन्द्र

सत्तर वर्ष के बाद

(श्री पं. त्रिलोक चन्द्र शास्त्री आर्योपदेशक पञ्जाब)

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के मान्यवर महामन्त्री श्रद्धेय श्री वीरेन्द्र जी एम. ए. का सभा के साप्ताहिक मुखपत्र 'आर्य मर्यादा' के गतांक में एक लेख पढ़ा—जिसमें साहित्य की प्रमुखता को प्रकट करते हुये आर्य समाज के साहित्य प्रकाशन की भी सुन्दर एवं प्रभावी शब्दों में चर्चा की। इसके सम्बन्ध में इस बात का भी बड़ा हर्षदायक समाचार दिया कि आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाबी भाषा में सत्यार्थ प्रकाश प्रकाशित करायेगी। आज से सत्तर वर्ष पहिले इस भाषा में सत्यार्थ प्रकाश छापा गया था। उसके बाद फिर नहीं छप सका। अब इसकी आवश्यकता है कि इसे फिर प्रकाशित किया जाए। माननीय श्री वीर जी ने यह भी लिखा है कि इस पर पन्द्रह हजार रुपए व्यय होगा। यह आर्य समाज के लिए कोई बड़ी राशि नहीं है और विशेषकर देव दयानन्द सरस्वती की इस अमरकृति सत्यार्थ प्रकाश के लिये तो है नहीं अपने इस आवश्यक लेख में श्रद्धेय श्री वीर जी ने सारे आर्य समाज का इस ओर ध्यान दिलाया है।

यह अत्यन्त प्रेरणादायक और प्रसन्नता से भरपूर कर देने वाला अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश के इस भाषा में सभा द्वारा प्रकाशित वाला सभा महामन्त्री जी का बड़ा ही शुभ समाचार हैं। इस महान् कार्य के लिए उनको एवं सारी सभा को दिल से बधाई देना चाहते हैं। यह वर्ष आर्य समाज स्थापना शताब्दी का चल रहा है। बड़े-२ विशाल सम्मेलन देश विदेश में हुए और अभी और भी होने जा रहे हैं। उन में आर्य समाज के विराट् रूप का जन-२ ने दर्शन किया। शक्ति, संगठन और श्रद्धा का परिचय भी लिया। चहुंमुखी कार्यों तक समाज सुधारों का चारू चित्र भी देखा। वैदिक धर्म के सार्वभौमिक सिद्धान्तों की व्यापकता व सत्यता भी भली भान्ति जानो युग पुरुष देव दयानन्द सरस्वती की दिव्य दृष्टि का भी विचारों की सफलता में दर्शन किया। यह सब कुछ हुआ। आर्य समाज ने इस अवसर पर वेद भाष्य एवं वैदिक साहित्य भी विशाल स्तर पर प्रकाशित करके जन २ तक पहुंचाने का पुनीत प्रयास किया। सत्यार्थ प्रकाश भी छपा, सार्वदेशिक सभा ने बड़ा कार्यभार उठाया। प्रान्तीय सभाएं भी कर्तव्य में लगी है। गौरव की बात है।

एक बात है कि सत्यार्थ प्रकाश के प्रकाशन पर पूरा ध्यान देना होगा। मेरी यह धारणा और भावना है कि यदि किसी परिवार में सत्यार्थ प्रकाश पहुचा देवें तो यह समझ लीजिये कि वहां आर्य समाज का स्वयं प्रवेश हो गया। उस घर में वेद निष्ठा और वैदिक धर्म की आस्था अपने आप आ जाती है। अन्ध-विश्वास, मिथ्या जाल, गुरुडम, पाखण्ड, सम्प्रदायवाद, संकति भावना

तथा भ्रम-भ्रान्तियों का अन्धेरा अपने आप भाग जाता है। प्रत्येक भाषा में इस अमर ग्रंथ को बड़ी संख्या में प्रकाशित करना होगा। मैंने सार्वदेशिक सभा द्वारा शताब्दी प्रचार के लिये दक्षिण केसरी तपोमूर्ति श्री पं० नरेन्द्र जी की अध्यक्षता में तथा आर्य समाज के कर्मठ, तपस्वी अनुभवी प्रबन्धक मान्य मलिकराम जी के प्रबन्ध में देहली से कन्या कुमारी, रामेश्वरम् तक जो यात्रा गाड़ी चली, उसमें मैंने स्वयं प्रत्येक स्टेशन व नगर में लोगों को तथा सरकारी अधिकारियों को सत्यार्थ प्रकाश मांगते देखा कि हमें स्वामी दयानन्द जी का अमर ग्रंथ सत्यार्थ प्रकाश दीजिये। बहुत बड़ी इसके लिये भावना हैं। प्रत्येक आर्य समाज संस्था का कर्त्तव्य है कि वह सत्यार्थ प्रकाश के प्रकाशन के लिए सभा महामन्त्री श्री वीरेन्द्र जी की शुभ सूचना पर पन्द्रह हजार तो क्या और भी अधिक राशि सभा को इस पवित्र कार्य के लिये भिजवावें। इसमें किसी प्रकार का सभाओं व संस्थाओं का भेदभाव नहीं होना चाहिये। केवल एक ही भावना दिल में हो कि अमरकृति सत्यार्थ प्रकाश का प्रसार यज्ञ है, इसमें प्रत्येक अपनी आहुति जरूर डालें। यह अमर ग्रन्थ जिस भी भाषा में और जिस सभा की ओर से या प्रबन्ध में प्रकाशित करने की योजना हो—उसमें दिल खोलकर आहुति डाली जाये। मैंने गीता प्रेस गोरखपुर को काफी समय लगाकर देखा है। विविध पुस्तकों का प्रकाशन विवरण भी वहां के प्रबन्धकों से बैठकर पूरे विस्तार से सुना है। आंखों से वहां के भिन्न-२ कमरों में घूम फिर कर व्यवस्था और पुस्तकों का विवरण प्राप्त किया है। सात सौ व्यक्ति वहां कार्य करते हैं। लाखों की संख्या में पुस्तकें निकलती हैं दानी दिल-खोल कर दान भी देते हैं। मैंने तो एक बार 'सार्वदेशिक' पत्र में इसी पर लिख कर आर्यों से एक विशेष निवेदन भी किया था कि एक 'सत्यार्थ प्रकाश प्रकाशन' हो चाहे कोई खोले—सार्वदेशिक या परोपकारणी सभा खोले तो ठीक है—जिसमें केवल 'सत्यार्थ प्रकाश' ही प्रकाशित किया जाए। बड़ा सस्ता, सुन्दर और बड़ी संख्या में। इसके लिये सज्जन दान देवें। लाखों की संख्या से छप कर जन-२ तक पहुचाया जाए उस प्रकाशन का कार्य केवल 'सत्यार्थ प्रकाश' का प्रकाशन हो। बहुत ही सस्ता हो। जितना सस्ता व सुन्दर होगा उतना इसका प्रचार होगा। मेरी आंखें गीता प्रेस की भान्ति विशाल स्तर पर सत्यार्थ प्रकाश प्रेस या प्रकाशन इसी रूप में देखना चाहती हैं। समाजों के विशाल भवन व संगमरमर की यज्ञशालाएं बनाते हैं बेशक बनावे किन्तु सत्यार्थ प्रकाश प्रकाशन भी बड़ा आवश्यक है। मान्यवर सभा मन्त्री श्रीयुत वीर जी से भी यह विशेष निवेदन है कि अवकाश पाकर इस पर भी ध्यान देने की कृपा करे।

इस लेख में तो मैं आर्यों से कहूंगा कि पंजाबी भाषा में सभा द्वारा जो सत्यार्थ प्रकाश प्रकाशित किया जाना है। जिस पर १५ हजार का व्यय होने का अनुमान है। इस महान् यज्ञ में इतनी दिल भर की आहुति डालें कि यह राशि थोड़ी प्रतीत हो। अधिक राशि आएगी तो अधिक प्रतियां प्रकाशित होकर अधिक हाथों में पहुंचेंगी सभा की झोलियां भर दीजिये। स्वामी दयानन्द जी के महान् गुरु विरजानन्द जी ने मनुष्य ग्रन्थों के स्थान पर आर्ष ग्रन्थों की श्रद्धा पैदा की।

(शेष पृष्ठ ८ पर)

विशेषांकों की एक नई परम्परा

अपने पूज्य सहृदय विद्वानों के सहयोग से आर्य मर्यादा साप्ताहिक 'श्री कृष्ण जन्माष्टमी विशेषांक' के पश्चात् निम्नलिखित विशेषांक अपने ग्राहकों और पाठकों की भेंट करना चाहता है। श्री कृष्ण जन्माष्टमी विशेषांक के समान अपितु इससे भी उत्तम पाठ्य सामग्री आपको प्राप्त हो ऐसा हमारा प्रयास रहेगा। आप आर्य मर्यादा की ग्राहक संख्या बढ़ाकर तथा इस के लिये आर्थिक सहयोग प्रदान करके आप अपना कर्त्तव्य पालन की भावना उद्बुद्ध होने से सफलता अवश्य प्राप्त होगी यह असन्दिग्ध है। हमारा आगामी विशेषांक विजय दशमी विशेषांक होगा, तत्पश्चात् ऋषि निर्वाण, और बलिदान अंक प्रकाशित किए जाएंगे। —व्यवस्थापक

भूल सुधार

श्री पं० ओ३म् प्रकाश जी आर्य कार्यालयाध्यक्ष का लेख पृष्ठ नं० २४ से शुरू होकर पृष्ठ नं० ३० पर समाप्त होता है अतः पाठक महानुभावों से निवेदन है कि पृष्ठ ३० का अन्तिम कालम को पहला और पहले वाले को अन्तिम समझें।

—व्यवस्थापक

वार्षिक चुनाव

आर्य समाज फाजिल्का जि० फिरोजपुर

प्रधान—श्री सरदारीलाल झांव, उपप्रधान—श्री नियामतराय मुसरी, उपप्रधान श्री जमना दास छाबड़ा, श्री हंसराज खुंगर, मन्त्री—श्री मूलचन्द वर्मा, उपमन्त्री—श्री शामलाल आर्य, प्रचार मन्त्री—श्री लीलाराम आर्य, कोषाध्यक्ष—श्री मोहनलाल अरोड़ा, पुस्तकाध्यक्ष—श्री सुमेरचन्द आर्य, लेखा निरीक्षक—श्री गिरधारी लाल नागपाल।

—मूलचन्द वर्मा आर्य समाज फाजिल्का

(७ पृष्ठ का शेष)

यही शिक्षा स्वामी दयानन्द जी ने अपने जीवन में आर्य समाज और सभी को दी कि आर्य पथ पर चलो। खेद है कि आर्य समाज में कुछ समय से स्वयं इस भावना का मान घटता जाता है। अब फिर आर्ष ग्रंथों के स्थान पर मनुष्य और थोड़े समय तक चलने वाली पुस्तकों का बोल-वाला है। समाज के किसी भी उत्सव पर आने वाले पुस्तक विक्रेता से पूछकर ही देख लीजिये कि स्थिति क्या है। वहां भी ऋषि ग्रंथ सत्यार्थ प्रकाश तो नहीं बिकता या केवल एक दो प्रतियां बिकती हैं किन्तु सैंकड़ों को दूसरो पुस्तकें.... इस वातावरण को भी बदलना पड़ेगा। ७० वर्षों के बाद सत्यार्थ प्रकाश सभा पंजाबी भाषा में छापने लगी हैं—दिल खोल कर आहुति डाल कर पुण्य के भागी बनें।

आप्त पुरुष श्री कृष्ण

(ले०—स्नातक श्री सत्यव्रत जी बम्बई)

पुण्य श्लोक महर्षि दयानन्द जी ही पहले भारतीय संशोधन थे जिन्होंने विगत शताब्दी में श्री कृष्ण के वास्तविक स्वरूप की ओर संसार का ध्यान आकर्षित किया। यों तो हम पांच सहस्र वर्षों से भगवान् श्री कृष्ण की जयन्ती मनाते आ रहे हैं किन्तु वह कृष्ण श्रीमद्भागवत् का नामक कृष्ण था। असली नहीं। ऋषि ने हमें संकेत दिया कि श्री कृष्ण का असली स्वरूप भागवत् में नहीं, महाभारत में मिलेगा और आपने हमें उस महा पुरुष के मूल स्वरूप का कुछ दर्शन भी कराया जिससे विज्ञ समाज मानवत् और महाभारत के कृष्ण में आकाश-पाताल के अन्तर का अनुभव करके आश्चर्य चकित रह गया और श्री कृष्ण के वास्तविक जीवन का पता लगाने में स्पष्ट हुआ।

संसार की सभी जातियां अपने महान् पुरुषों की जयन्तियां मनाया करती हैं। वे नर-वीर जाति और धर्म के संस्कर्त्ता और परित्राण करने वाले होते हैं। वे जाति, संस्कृति और देश के आदर्श और उनके भावों, उमङ्गों और कामनाओं के मूर्तिमान स्वरूप होते हैं। उनके जीवन में जाति का सारा इतिहास सूक्ष्म रूप से निहित होता है, तथा उनका जीवन जाति को ध्रुव तारे की तरह पथ-प्रदर्शित करता रहता है। इन्हीं भावों को आङ्गलकवि लौंग फैलो ने निम्न पंक्तियों में सुचारु रूप से अंकित किया है।

Lives of greatman all remind us we come make our lives sublime.

— महा पुरुषों के जीवन हमें अपने जीवनों के उन्नत बनाने के लिये स्मरण दिलाते है— जयन्तियां मनाने का यही तात्पर्य है।

ज्ञान और कर्म का जैसा श्रेष्ठ सामञ्जस्य हम श्री कृष्ण के पावन चरित्र में पाते हैं, वैसा अन्य दृष्टि पथ में नहीं आता। गुरुवर सांदीपनी के यहां ब्रह्मचारी बनकर वेदादि शास्त्रों के अवलोकन से ज्ञान पाया। उस ज्ञान को सारे जीवन में चरितार्थ किया।

— मनस्येकं कर्मण्येकं महात्मनाम्।

यह कवि वचन श्री कृष्ण के जीवन को पाकर सफल हो रहा है।

ब्रह्मवैवर्त पुराण भागवत् और महाभारत में श्री कृष्ण का चरित्र पाया जाता है। यह भागवत् के ही जीवन वाला कृष्ण है जो संसार के महा पुरुषों की गिनती में योग्यतया नहीं आता, लेकिन भागवत् के कृष्ण की आड़ में हमारा महाभारत का श्री कृष्ण तिरोहित हो गया है जो हमारे लिये अत्यन्त दु;खदायक है। महाभारत का श्री कृष्ण एक साथ ही वेद विज्ञान पारंगत परम ज्ञानी और उद्भट्ट कर्मयोगी था। योगेश्वर और अद्वितीय राजनीतिज्ञ. अहिंसा का प्रचारक पर महाभारत युद्ध में सत्य पक्ष पर रहने वाले पाण्डवों का एक विजेता सहायक. क्षमावान् पर सुदर्शन चक्रधारी, अवलाओं का उद्धारक और

पापियों का संहारक, एक पत्नी वृती और परम संयमी ऐश्वर्यवान् किन्तु परम विनम्र सेवक, समदर्शी, तत्वदर्शी-दूरदर्शी और प्रभु का परम उपासक, आत्म विश्वासी महापुरुष था। इन्हें पाकर भारत मां के भाग्य जगे। द्वापर और कलि के संधिकाल में हुये इस अद्भुत कर्त्ता विश्व विभूति श्री कृष्ण को हमारी अकर्मण्यता से संसार उसके यथार्थ रूप में आज भी नहीं जानता। सामान्य मनुष्यों की तो कथा ही क्या जब H. G. wells जैसा सुप्रसिद्ध विद्वान् और बहुश्रुत आंगल इतिहासकार भी अपने out lines of the History of the world संसार के इतिहास की रूपरेखा नामक अनूठे ग्रन्थ में संसार के महा पुरुषों की सूची बनाता है तब उसमें कहीं श्री कृष्ण का नामोल्लेख भी नहीं करता। स्व० वेल्स के मतानुसार बुद्ध अशोक, अरस्तू, बेकन, अकबर, ईसा और लिंकन ये सात संसार के महापुरुष हैं।

गौतम बुद्ध और ईसा संसार में अहिंसा के प्रचारक हुये। अशोक की महत्ता युद्ध से विरत होकर शान्तिप्रिय बनने में है। अरस्तू ने यूरोप को तत्व का आदर करने की शिक्षा दी, बेकन प्रगाढ़ विचारशील(परनिराशावादी) रहा। अकबर को शायद उसके 'दीने इलाही' की स्थापना करने के ख्याल मात्र से महापुरुष माना हो अब्राहीम लिंकन प्रगाढ़ देश भक्त और अपने देश का स्वातन्त्र्य प्रदाता था। हमें इन महापुरुषों के बारे में यहां कुछ नहीं कहना, लेकिन इन तमाम महा पुरुषों के विशिष्ट विशिष्टं गुण समूहों की एक स्थान में मूर्ति तो हमारा श्री कृष्ण है। इन सातों महापुरुषों में सभी उच्च गुणों की एकत्र समूह, श्री कृष्ण की विशिष्ट गुण राशि का कतुंर्ठ भाग भी न होगा। जरा महाभारत का स्वाध्याय कीजिये और यह बात प्रमाणित होगी—

महाराज युधिष्ठिर का राजसूय यज्ञ होने वाला है और धर्मराज युधिष्ठिर पितामह श्री भीष्म से पूछते हैं कि राजसूय यज्ञ में जहां सैंकड़ों राजे महाराजे आए हैं उनमें से किस की अग्रपूजा करनी चाहिए? तब परम ज्ञानी और आदित्य ब्रह्मचारी वीर भीष्म ने उत्तर दिया कि—वेद वेदांग विज्ञाने, बले चाप्यधिकस्तथा नृणां लोकेहिकोऽन्योस्ति विशिष्ट: के शवादृतते॥

— वेद-वेदांगादि विज्ञान में और बल पराक्रम में सारे मानव समाज में श्री कृष्ण को छोड़कर और कौन विशिष्ट है? पाठक ध्यान रखें श्री भीष्म जी कहते हैं कि सारे संसार में केशव श्री कृष्ण से बढ़कर ज्ञान और बल में अधिक दूसरा कौन है? भीष्म पर्व में महा रथ सेनानी भीष्म पिता स्वयं श्री कृष्ण के बल वीर्य के विषय में निम्न प्रकार कहते हैं—

न तं पश्यामि लोकेषु मांहन्याद्यः समुद्यतम्।
ऋते कृष्णात् महाभागात् पाण्डवाद्वा धनञ्जयात्॥

युद्धोन्मुख मुझे मारने वाला सारे संसार में सिवाय महाभाग कृष्ण और अर्जुन के और कोई नही है।

इतना बलशाली होते हुए भी श्री कृष्ण शांतिप्रिय थे और व्यर्थ की हिंसा के कट्टर विरोधी थे। पाण्डवों के प्रतिनिधि बनकर जब दुर्योधन के दरबार में गये तब अपने मन के भावों को समग्र कौरव दल के समक्ष निम्न प्रकार व्यक्त किया।

करुणां पाण्डवानां प्रशम: स्यादिति भारत
अप्रणाशेन च वीराणामेतद्याचितुमागतः॥
राजन्नान्यत् प्रवक्तव्यं तवेतं; श्रेयमं वचः।
विदितं हिएषे ते सर्वं वेदितव्यमरिन्दम्॥

हे! भारत कौरवों तथा पाण्डवों में शान्ति हो, सन्धि हो- ताकि वीरों का विनाश न हो, इस बात की याचना करने में यहां आया हूं। हे राजन्! शत्रु दमन मुझे और कोई कल्याणकारी वचन आप को नहीं कहना आप सब जानने योग्य बात को जानते हैं। कितना स्पष्ट वचन है अपने आपको याचक तक कह डाला हैं विनम्रता की पराकाष्ठा है।

आओ, आज उस महा पुरुष श्री कृष्ण के यथार्थ रूप को समझने का प्रयत्न करें और श्री कृष्णजी के पावन और आदर्श चरित्र को संसार के सामने रखकर फिर से संसार को मनु महाराज का निमन्त्रण दें।

स्वं स्वं चरित्रजन् शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्वमानवा:
जिससे भारत मां का मुख उज्जवल हो और आर्य संस्कृति के प्रचार से संसार में शान्ति हो।

जन्माष्टमी के उपलक्ष में—

गीता का लोक भाष्य

(ले०—डा० भवानी लाल जी 'भारतीय')

(आकाशवाणी के जयपुर केन्द्र से जन्माष्टमी पर प्रसारित

गीता भारतीय वाङमय का अमर रत्न हैं। इसमें अर्जुन विषाद की पृष्ठ भूमि पर योगेश्वर श्री कृष्ण ने अपने सुविख्यात लोक मंगल विधायक विचारों को सुललित अभिव्यक्ति प्रदान की है। आज तक इस ग्रन्थ का संसार की विभिन्न भाषाओं में अनुवाद हो चुका है और करोडों व्यक्ति इसमें व्यक्त विचारों से अनुप्राणित होकर कर्त्तव्य मार्ग के पथिक बने हैं। अनेक स्वदेशी एवं विदेशी विद्वानों ने गीता प्रोक्त लोक संग्रहात्मक विचारों की प्रशंसा की है तथा इसे व्यक्ति और समाज के उद्धार की कुञ्जी बताया है। देश की स्वाधीनता के लिये आत्म बलिदान करने वाले शहीदों को भी मातृ भूमि के लिये अपना सर्वस्व न्यौछावर करने की प्रेरणा इसी ग्रंथ ने दी तथा वे इसी ग्रथ की नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावक:' आदि पंक्तियों का उच्चारण करते हुये फाँसी के तख्तों पर झूल गये।

गीता एक ऐसी कामधेनु हैं जिससे विभिन्न विचारकों—दार्शनिकों तथा मनीषियों ने अपने अभीप्सित विचारों तथा दर्शन तत्वों को प्राप्त करने की चेष्टा की है और आश्चर्य की बात हैं कि वे इसमें सफल भी हुये हैं शंकर ने गीता के आधार पर ज्ञानाश्रित अद्वैतवाद, रामानुज ने भक्तिवाद, तिलक ने कर्मवाद, गांधी ने अहिंसावाद आदि की पुष्टि इसी रूप में की है। वर्तमान युग में भी आचार्य विनोबा भावे, दार्शनिक प्रवर डा० राधाकृष्णन, श्रीमती ऐनी बेसेन्ट आदि विचारको ने गीता पर अपने प्राञ्जल भाष्य लिखकर इस ग्रन्थ की लोकप्रियता को नवीन आयाम प्रदान किया है।

वस्तुत: गीता का महत्व उसके दार्शनिक तत्वचिंतन, अध्यात्म चर्चा तथा धर्म विवेचन से भी बढ़कर उसके लोक मंगल विधायक तथा लोक सग्रह प्रधान विचारों के कारण है। यह एक विडम्बना ही है कि वृहत् लोक समुदाय को स्व स्व कर्त्तव्य कर्मों में जुट जाने की प्रेरणा करने वाले लोकोपकार तथा बहुजन हित एवं बहुजन सुख के लिये सर्वस्व त्याग करने की प्रेरणा करने वाले इस ग्रंथ को वैराग्य और संन्यास का विधायक शास्त्र मान लिया गया और यह एक विनोद प्रचलित हो गया कि हमें क्या गीता पढ़कर घर छोड़ बावाजी बनना है। मानो कृष्ण ने अर्जुन को शत्रु संहार के लिए प्रेरित न कर उसे मूंड मुंडवा कर संन्यासी बनने के लिये ही कहा था।

आवश्यकता इस बात की हैं कि गीता का लोक भाष्य आज कोटि-कोटि जन समाज के सम्मुख प्रस्तुत किया जाए तथा उसके लोक पक्ष

को उद्घाटित किया जाये गीता की शिक्षा का सार है कर्त्तव्य निष्ठा को सर्वोपरि मानकर लोक हित के लिये स्व को समर्पित करना तथा इस प्रकार व्यष्टि और समष्टि के हितों में समन्वय की स्थापना करना। गीता का दर्शन भी व्यवहारिक यथार्थवादी तथा वैज्ञानिक तथ्यों पर आधारित है। उसका स्पष्ट कथन है—'नासतो-विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः।

जो नही है उसका त्रिकाल में भी अस्तित्व सिद्ध नही किया जा सकता तथा जो है उसका कदापि अभाव नही हो सकता। यदि हम आत्मा को स्वीकार करे तो हमें यह भी मानना होगा कि उसका विनाश कभी भी, कदापि नही हो सकता। इसी के आधार पर गीताकार ने आत्मा के अमरत्व की घोषणा करते हुये कहा—

'वासांसि जीर्णानि यथा विहाय, नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि। तथा शरीराणि विहाय जीर्णन्यन्यानि संयाति नवानि देही' जैसे कोई व्यक्ति अपने फटे-पुराने वस्त्रों को उतार कर नवीन वस्त्र धारण कर लेता है, इसी प्रकार यह आत्मा पुराने शरीर का परित्याग कर नवीन शरीर को धारण करता हैं।

अन्याय और अत्याचार का दमन करने के लिए कभी कभी संघर्ष भी करने पड़ते हैं. युद्ध भी इसी प्रयोजन से लड़े जाते हैं ताकि संसार में शान्ति, सौहार्द तथा सामञ्जस्य का वातावरण बनाया जा सके। उस अवसर पर यदि रण क्षेत्र में उपस्थित सैनिक अपने कर्त्तव्य से विमुख हो जाये तो उसे पाप का भागी ही माना जाएगा। इसी अभिप्राय; को स्पष्ट करते हुये कृष्ण कहते हैं—

अथ चेत्त्वमिमं धर्म्यं संग्रामे न करिष्यसि।
ततः स्वधर्मं कीर्ति च हित्वा पापमवाप्स्यसि।'

स्वधर्म और कीर्ति को नष्ट करने वाली इस कदर्यता को दूर कर धर्म संग्राम का सैनिक यदि अपने कदम पीछे हटाता है तो—

अकीर्ति चापि भूतानि कथयिष्यन्ति तेऽव्ययाम्।
सम्भावितस्य चा कीर्तिर्मरणादतिरिच्यते ॥

लोग अपयश की बाते करते हैं और सम्मानित व्यक्ति को अपकीर्ति उसके लिए मृत्यु से भी बढ़कर यन्त्रणादायक होती है। अतः धर्म युद्ध में मरने वाले कीर्ति रूपी स्वर्ण अर्जित करते हैं और विजयी होकर पृथ्वी पर शासन करते हैं।

'हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वा वा भोक्ष्यसे महीम्।

गीताकार की दृष्टि में यज्ञ भी कोई अद्भुत अलौकिक कर्म नही है। वस्तुतः एक दूसरे का उपकार करना समाज के सभी वर्गों का परस्पर आदान-प्रदान की भावना से कर्त्तव्य सम्पादन ही यज्ञ है। तभी तो कृष्ण कहते है—

'देवान्भावयतानेन ते देवा भावयन्तु वः।
परस्परभावयन्तः श्रेयः परमावप्स्यथ ॥

समाज के श्रेष्ठ पुरुष देवताओं का पोषण हम करे, बदले मे वे हमारा पालन करगे। इस प्रकार एक दूसरे का हित साधन करते हुये हम परम श्रेय को प्राप्त कर सकते हैं।

समाज के श्रेष्ठ पुरुषों के अनुदान को समान रूप से विभाजित कर भोगना चाहिये। विद्वानों के इस दान को अकेले ही स्वार्थपूर्ण भाव से भोगने वाला चोर ही है।

इष्टान्भोगान्हि वो देवा दास्यन्ते यज्ञभाविताः,
तैर्दत्तानप्रदायैभ्यो यो भुङ्क्ते स्तेन एव सः।

और इसी प्रकार विविध यज्ञ यागे आदि वैदिक कर्मों को भी लोक जीवन तथा मानव शरीर का आधार ही बताया गया हैं क्योंकि अन्न से प्राणी उत्पन्न होते हैं, वर्षा से अन्न होता है तथा इस वर्षा का कारण यज्ञ ही है—

'अन्नादभ्दवन्ति भूतानि पर्जन्यादऽन्न सम्भवः।
यज्ञाद्भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्म समुद्भवः॥

इसी प्रसंग में गीताकार ने अपने उस प्रसिद्ध सिद्धान्त की विवेचना की है जो निष्काम कर्म अथवा फलासक्ति के त्याग पूर्वक कर्म का सिद्धान्त माना जाता है। स्व कर्म के आचरण के द्वारा ही संसार में सिद्धि प्राप्त की जा सकती है क्योंकि जनकादि पूर्वकालीन महापुरुषो ने भी लोक-संग्रह हेतु कर्त्तव्याचरण का ही मार्ग अपनाया था—

'कर्मणैव हि ससिद्धिमास्थिता जनकादयः।
लोक सग्रहमेवापि संपश्यन्कर्तुमर्हसि'॥

और इसी के आधार पर समाज के नेतृ वर्ग तथा श्रेष्ठ पुरुषों से यह अपेक्षा की गई है कि वे अपने उत्तम आचरण के द्वारा एक ऐसा आदर्श प्रस्तुत करें जिसका अनुकरण करना सामान्य लोगों के लिये भी हितकर हो क्योंकि—

'यदयदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः।
स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते॥

श्रेष्ठ मनुष्य जो कुछ करते हैं, सामान्य लोग भी वैसा ही करने लग जाते हैं, वह जैसा आदर्श उपस्थित करता है लोग भी उसी का अनुगमन करते हैं।

गीताकार की दृष्टि में द्रव्ययज्ञ. तप यज्ञ योग यज्ञ, स्वाध्याय यज्ञ तथा ज्ञान यज्ञ आदि विविध यज्ञों में ज्ञान यज्ञ ही श्रेष्ठ हैं क्योंकि 'न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते। जहां ज्ञान की महत्ता स्थापित की गई वहां कर्म को तो योग का ही पर्याय मान लिया गया—योगः कर्मसु कौशलम्, कुशलता पूर्वक कर्म सम्पादन ही योग है।

कृष्ण के अनुसार योग साधना के लिये शरीर मन, बुद्धि और आत्मा का समता युक्त आचरण अत्यन्त आवश्यक है। सभी प्रकार की अति-वादिता को छोड़कर मध्यम मार्ग अपनाना ही श्रेयष्कर है। आहार-विहार, चेष्टा, सोना और जागना सभी कुछ संयमित, नियमित तथा सहज भाव से सम्पन्न होने चाहिए ऐसा योग ही दुःख नाशक होता हैं—

युक्ताहार विहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु।
युक्तस्वप्राववोधस्य योगो भवति दुःखहा॥

जीवन के लोक पक्ष के प्रति इसी सन्तुलित दृष्टि के कारण गीताकार ने समाज व्यवस्था को भी गुण, कर्म और स्वभाव के अनुसार वर्गीकृत किया है। श्रम विभाजन के आधार पर ही ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य आदि कर्मों के कर्त्तव्य निर्धारित किये गये हैं। गीताकार की दृष्टि में स्त्रियों तथा तथाकथित अन्त्यज जातियों को भी आत्मोद्धार के पथ पर बिना किसी संकोच और बाधा के आगे बढ़ने का पूर्ण अधिकार है। उन की यह दृढ़ धारणा है कि अपने अपने कर्म में लगा हुआ प्रत्येक व्यक्ति सिद्धि को प्राप्त कर लेता है—

'स्वे स्वे कर्मण्यभिरतः संसिद्धि लभते नरः।

मनुष्य के मन, चरित्र, स्वभाव, आचरण और व्यवहार की मनोवैज्ञानिक विविधता को गीताकार स्वीकार करते हैं, तभी तो वे दैवी और आसुरी सम्पदाओं के अन्तर्गत कतिपय उन अच्छी और बुरी प्रवृत्तियों की गणना करते हैं, जिनका संग्रह और त्याग मनुष्य के लिये अभीष्ट है—

'अभयं सत्व संशुद्धिर्ज्ञान योग व्यवस्थितिः।
दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायास्तप आर्जवम्'

इस प्रकार हम देखते हैं कि निर्भीकता का भाव, मन की शुद्धि, ज्ञान और योग में निष्ठा दान, इन्द्रिय, दमन, यज्ञ स्वाध्याय आदि दैवी प्रवृत्तियां हैं तो दम्भ, दर्प. अभिमान, क्रोध,

कठोरता, अज्ञान आदि आसुरी प्रवृत्तियों के अन्तर्गत हैं।

वस्तुतः इस लोक की रचना और स्थिति ही सत्व रज तथा तम इन तीन गुणों पर आधारित है। इसी व्यावहारिक दृष्टिके आधार पर कृष्ण ने आहार, यज्ञ, तप, दान, त्याग, सुख आदि की भी त्रिविध कल्पना की हैं और लौकिक जीवन में सत्वगुण की वृद्धि को श्रेयष्कर माना है।

वस्तुतः सार्वत्रिक समता भाव, विश्व बन्धुत्व, प्राणिमात्र के प्रति सौहार्द भाव, त्याग, बलिदान परोपकार और लोकहित के लिये आत्महित का बलिदान ही गीता का लोक पक्ष हैं। तभी तो कहा गया हैं कि विद्या और विनय सम्पन्न व्यक्ति की दृष्टि में ब्रह्मवेत्ता ब्राह्मण और अधम आचरण करने वाले चाण्डाल में कोई तात्विक भेद नही है। वह हाथी, कुत्ते और गाय में भी एक सी ही आत्म-ज्योति को प्रज्वलित देखता हैं—

विद्या विनय सम्पन्ने ब्राह्मणे गबि हस्तिनी।
शुनि चैव श्वपाके च पण्डिता समदर्शिनः॥

——

ब्रह्म क्षत्र शक्तियों का समन्वित रूप

(ले०—आचार्य श्री मुन्शीराम जी शर्मा कानपुर)

भगवान् कृष्ण

योगीराज कृष्ण जिस यदुवंश में उत्पन्न हुए वह वंश ब्रह्म क्षत्र शक्तियों का समन्वित रूप था। महाराज ययाति के रक्ताणुओं में क्षत्रियत्व था, तो उनकी पत्नी महारानी देवयानी आचार्य शुक्र की पुत्री थी। यजुर्वेद में ब्रह्म क्षत्र शक्तियों के समन्यय को पवित्रता का साधक कहा गया है. राष्ट्र में ब्रह्म शक्ति ज्ञान प्रकाश के पुंज सुधी ब्रह्मवर्चस्वी ब्राह्मण है तो क्षात्र शक्ति रक्षा प्रधान शासक वर्ग में दृष्टिगत होती हैं। जब दोनों मिलकर चलते हैं, तो राष्ट्र की श्री तेजस्विनी, निरापद तथा लोक रक्षण में समर्थ सिद्ध होती हैं। यदि दोनों से विरोध, वैषम्य और असामञ्जस्य रहा तो राष्ट्र नष्ट हो जाता है। उसका साधक वर्ग व्यापार एवं श्रम का समूह विकृतियों में पड़ता है। धन की लूट-खसोट होती है। श्रम, आलस्य और प्रमाद का आखेट बनता है। चतुर्दिक अनुशासनहीनता, अराजकता, अनैतिकता आदि फैलकर राष्ट्र को ऐसा पंगु और अन्धा कर देती है कि वह राष्ट्र या तो पराधीन होकर पददलित हो जाता है या पाशव स्तर पर उतर कर असभ्य, वृषल और जंगली बन जाता है।

जो बात राष्ट्र की हैं, वही व्यक्ति की है। व्यक्ति का मस्तिष्क ब्रह्म है तो बाहु क्षत्र हैं।

यदि मस्तिष्क शुद्ध है, प्रकाशित है और बाहु कर्म करने में दृढ़ हैं, तो शरीर संचालन उपयुक्त दिशा में होता रहेगा। यदि ये विकृत है, तो शरीर भी विकृत हो जाएगा। भगवान् कृष्ण में ब्रह्म क्षत्र शक्तियों का समन्वय उच्चकोटि का था। मुनिवर व्यास ने लिखा हैं—

वेद वेदाङ्ग विज्ञानं बलं चांप्याधिकं तथा।
नृणां हि लोके कोऽन्योऽस्ति विशिष्टः केशवादृते ।।

केशव में एक ओर वेद विज्ञान था, तो दूसरी ओर बल की भी अधिकता थी। इन्हीं दोनों तत्वों ने उन्हें भगवान् का विरुद प्रदान किया था। भगवान् में जो भग है उसके छः गुण हैं—ऐश्वर्य, जप, बल, श्री, वैराग्य और यश। इनमें ज्ञान और बल प्रधान हैं। अन्य गुण इन्हीं दो पर आश्रित हैं। ज्ञान में ऐश्वर्य और वैराग्य निहित है। बल में श्री और यश आ जाते हैं। ब्रह्म और क्षत्र इन्हीं दोनों के अपर नाम हैं। अतः भगवत्ता के छः गुण ज्ञान और बल अथवा ब्रह्म क्षत्र संयोग का ही परिणाम है। इन्हीं से ही समन्वित होने के कारण हम केशव या कृष्ण को भगवान् कहकर पुकारते हैं।

गीता के अनुसार जहां-जहा विभूति है, श्री है और उषा है, वही तेज है, वहीं भगवत्ता है वही आत्म पूर्णता है। मानव की बिभूति श्रेष्ठ ज्ञान है। ऊर्जा का अर्थ शक्ति हैं। श्री शोभा हैं। ये भी ब्रह्म क्षत्र शक्तियों के प्रसार की द्योतक है। व्यक्ति और समाज, देश ओर राष्ट्र अथवा समग्र मानवता इन्हीं दो शक्तियों के स्वास्थ्य पर टिकी है। व्यापार और श्रम स्वतः अनुशासन बद्ध रहेंगे, यदि ये दो शक्तियां अनुशासन को भंग नहीं करती। भगवान् कृष्ण का जीवन ब्रह्म क्षत्र के समन्वित एवं अनुशासित रूप का ज्वलन्त उदाहरण है,

व्यास—प्रोक्त गीता संजय और धृतराष्ट्र के सम्वाद से प्रारम्भ होती है और उसी में उसका अन्त होना है पर उसका मध्य भाग सम्पूर्णता कृष्ण और अर्जुन का सम्वाद है। इस पर भी पृथक्-पृथक् दृष्टि डाली जाए तो कृष्ण मैं ब्रह्म शक्ति बोल रही है ओर अर्जुन में क्षात्र शक्ति। कृष्ण मस्तिष्क है तो अर्जुन बाहु। ज्ञान और कर्म, सांख्य और योग दोनों मिलकर गीता में क्रीड़ा कर रहे हैं। ज्ञान और कर्म के समन्वय का फल भक्ति है। भक्ति, ज्ञान और कर्म के समन्वय की ऊर्ध्वशिखा हैं। गीता भक्ति को इसी हेतु ज्ञान और कर्म के समर्पण रूप में प्रकट करती है। तुम्हारे पास जो कुछ ज्ञान विज्ञान है जो कुछ कर्म सम्पदा है, सबका समर्पण परम प्रभु के आगे कर दो। ओ३म् का जाप ज्ञान और कर्म दोनों के प्रारम्भ में इसीलिए होना चाहिए तभी तो अन्त सुखद होगा। प्रारम्भ ही तो अन्त में प्रकट होगा तिस्मात् ओ३म् इति उदाहृत्य ओ३म् का नाम लेकर यज्ञ न दान और तप करने चाहिए। यदि ऐसा जीवन भर क्रम चला तो जीवन के अन्तमें मृत्यु बेला में उपस्थित होने पर—

ओ३म् इत्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन्—ओ३म् ओ३म् करते हुये प्राण निकलेगे और आपको परम गति प्राप्त होगी। भगवान् कृष्ण का जीवन हमें यही सिखाता है। यही शिक्षा कल्याण-कारी है। हमारा ब्राह्मत्व और हमारा क्षत्रियत्व, हमारी ब्राह्म शक्ति ओर हमारी क्षात्र शक्ति दोनों मिलकर चलें तो वैश्य तथा शूद्र व्यापारी तथा श्रमिक दोनों ठीक रास्ते पर चले चलेंगे। यदि कहीं धन ने इन दोनों या एक को भी खरीद लिया तो सारा समाज चौपट हो जाएगा।

———

योगेश्वर तुमको नमस्कार

(ले०—श्रीयुत् शर्र एम० ए०)

(१)

शत शत कोटि मस्तक नत हो,
करते हैं वन्दन बार-बार ।
योगेश्वर——————

ओ महा पुरुष, देवत्व मूर्ति,
ओ नीति कुशल, ओ सत्य मूर्ति,
ओ चक्र सुदर्शन के चालक,
तुम से ही सम्भव यज्ञ पूर्ति,
वीणा वादक गोपाल बाल,
निज आततायी के नृत्य द्वार,
योगेश्वर————

(२)

ओ सत्य हेतु अड़ने वाले, अन्याय से लड़ने वाले,
सुख-दुःख का क्षणिक विचार भुला, पावन पथ पर बढ़ने वाले,
तेरी ही प्रेरणा का फल थे, अर्जुन के तीखे शर प्रहार।
योगेश्वर——————

(३)

तुम तुङ्ग हिमालय शृङ्ग तुल्य,
निज गौरव गरिमा में महान्,
तुम हिम कण सम पावन पवित्र,
तुम निर्मल भागीरथी समान,
तुम महा क्रान्ति के अग्रदूत,
तुम विश्व शान्ति के सूत्र धार,
योगेश्वर तुम को नमस्कार ।

————

योगेश्वर श्री कृष्ण

(ले०—श्री प्रा० भद्रसेन साधु आश्रम- होशियारपुर)

आज से लगभग पांच सहस्र दो सौ वर्ष पूर्व भारत की भूमि पर इन्द्रप्रस्थ में भारत के सम्राट्, पाण्डु पुत्र एवं सत्य मूर्ति युधिष्ठिर ने राजसूय यज्ञ रचाया था। जिसमें भारत के विविध प्रदेशों के राजा पधारे थे। शिशुपाल के कथनानुसार, दण्ड या लोभ के भय से नहीं अपितु धर्म के अनुसार सब ने युधिष्ठिर का एक छत्र साम्राज्य स्वीकार किया है। राजसूय यज्ञ में यज्ञ विधि के अनुसार जब अर्घ्यदान (सबसे महान् व्यक्ति को उच्चतम पद एवं सत्कार प्रदान करने) का अवसर आया। महाराजा युधिष्ठिर ने सबसे वयोवृद्ध अनुभवी, महाविद्वान्, आदित्य ब्रह्मचारी, कौरव कुल ललाम श्री भीष्म पितामह जी से पूछा कि आप सब से योग्य हैं। अतः आप ही बताइये, किसको अर्घ्यदान दिया जाए। तब श्री भीष्म पितामह जी ने योगेश्वर श्री कृष्ण का नाम प्रस्तुत किया। शिशुपाल ने इस प्रस्ताव का विरोध किया और अनेक दोष दिखाए। उन दोषों का समाधान करते हुये श्री भीष्म ने कहा—

वेद-वेदाङ्ग विज्ञानं बल चाप्यधिकं तथा
नृणां लोके हि कोऽन्योऽस्ति विशेष:
केशवादृते ॥

अर्थात्—आज के इस समुदाय में वेद-वेदाङ्ग के ज्ञान तथा शारीरिक शक्ति एवं सामरिक अस्त्र-शस्त्र की कुशलता में श्री कृष्ण सबसे उत्कृष्ट हैं। कोई भी दूसरा कृष्ण के तुल्य नहीं है। महाभारत के महान् व्यक्ति ने जिसके सम्बन्ध में स्वर्ण अक्षरों में लिखने योग्य गौरवशाली उद्‌गार प्रकट किये थे। उसी महा पुरुष, भारतीय सस्कृति के उन्नायक, गीता के उपदेष्टा श्री कृष्ण के पावन जन्म दिवस को मनाने का पुनः हमें सौभाग्य प्राप्त हो रहा है।

आज भारतीय इतिहास साहित्य, धर्म, संस्कृति और सभ्यता का जो भव्य भवन हम सब भारतीयो को गौरवान्वित कर रहा है। उस भव्य भवन के निर्माण में जिन महापुरुषों ने अनुपम योगदान दिया है या भारतीयता के भव्य भवन पर जिन महामानवों ने अग्रणी अमिट छाप छोड़ी हैं, उनमें जन्माष्टमी के चरितनायक का दूसरा स्थान है। भारतीय इतिहास और साहित्य में योगेश्वर का जितना महान् स्थान है, दुःख है कि उतना ही अधिक उनका जीवन चरित कल्पित दोषपूण प्रचारित हो रहा है और इतने पर भी कहा जाता है, 'समर्थ को नहीं दोष गुसाई'' धृष्टता की भी हद हो गई।

योगेश्वर के जीवन चरित को जानने का हमारे पास प्रमाणभूत आधार महाभारत है। जिसके विविध सस्करण उपलब्ध होते हैं। इनमे केवल कुछ श्लोकों का ही अन्तर नहीं, अपितु अध्यायों तक का अन्तर हैं। दूसरा साधन पुराण है, परन्तु उनकी रचना बहुत बाद मे हुई है। उनका आधार महाभारत होते हुये भी उनमें कवि कल्पना

को सीमातीत स्थान दिया गया है। उनमें योगेश्वर श्री कृष्ण को विष्णु का अवतार मान मान कर भगवान् के रूप में (हां भगवान् शब्द पुराने साहित्य में ऐश्वर्य वाला आदि अर्थ में होता हुआ भी आज संसार के सृष्टा, पालक के अर्थ में पारिभाषिक, रूढ़, हो गया है अतः व्यर्थ खींचतान शोभा नहीं देती। शब्द व्यवहार की व्यवस्था के लिये कुछ तो पारिभाषिकता स्वीकार करनी होगी। देखिये २७ जुलाई के अंक में छपा पत्रोत्तर) प्रस्तुत करते हुये भक्तों की श्रद्धा और अपनी मनमानी कल्पना के अनुसार विविध चमत्कारों से मण्डित करने का प्रयास किया गया है।

आज विज्ञान के युग में हमें अच्छी प्रकार से समझ लेना चाहिए कि पहले तो पुस्तक प्रकाशन की असुविधा से तथा अपने धार्मिक ग्रन्थ अपने तक ही सीमित रखने की भावना से महापुरुषों का जीवन वृत्त उनके भक्तों तक ही सीमित था भक्तों में श्रद्धावश सब मान्य होता है। परन्तु आज महापुरुषो के जीवन चरित सबके हाथों में पहुंचते हैं। विवेकी जन प्रत्येक को विवेक की कसौटी पर परखते हैं। ऐसी स्थिति में असम्भव और परस्पर विरोधी घटनाओं से हम अपने महापुरुषों का महत्व बढ़ाने के स्थान पर घटाने का ही कार्य कर बैठते हैं। अतः बुद्धिसम्मत, तर्कानुमोदित यथार्थ को सर्वथा सर्वदा मान्यता देनी चाहिये।

योगेश्वर श्री कृष्ण के सर्व प्रसिद्ध जीवन का परिशीलन करने से अवगत होता है कि श्री कृष्ण अनिष्ट एवं अनिष्टकर्त्ताओं के विनाशक अपेक्षितों के त्राता क्रूर कंस का वध कर संघ के अभिलाषित राजा उग्रसेन को राज्य गद्दी पर अभिषिक्त करके 'राजा परम दैवतम्' के परम्परागत विचारों में भी संशोधन का उदाहरण प्रस्तुत करते हुये एक क्रान्तिकारी के रूप में हमारे सामने उपस्थित होते हैं। सबसे अधिक उनके जीवन का परिचय हमें—पाण्डवों के संरक्षक, सचिव, नेता, मित्र एवं गुरु ही नहीं, अपितु सर्वस्व बने, रूप में मिलता है। क्योंकि पाण्डवों की प्रत्येक प्रगति में श्री कृष्ण ही पथ-प्रदर्शक बने। खाण्डव दाह, इन्द्रप्रस्थ निर्माण, राजसूय यज्ञ का सम्पादन, युद्ध और अश्वमेध आदि पाण्डवों की प्रगति आपकी नीतिमत्ता से ही सम्पादित हुई। यह योगेश्वर श्री कृष्ण की ही नीति कुशलता थी कि भीम के साथ जरासन्ध का द्वंद्व युद्ध करा कर बिना रक्तपात के एक अत्याचारी के साम्राज्य से भारत को मुक्ति दिलाई और ८६ प्रादेशिक राजाओं को उसके कारागार से मुक्त कर उसी के पुत्र सहदेव को राज्य पद पर अलंकृत कर अपनी अत्याचार विनाशक और निःस्वार्थ वृत्ति का परिचय दिया।

पाण्डवों के बनवास और अज्ञातवास की समाप्ति के पश्चात् दुर्योधन के स्वभाव को ध्यान में रखकर महाभारत के विनाशकारी युद्ध की अटलता का अनुभव करते हुये भी पाण्डव दूत बनकर दुराग्रही दुर्योधन को समझाने का भरसक प्रयत्न किया। जिससे व्यर्थ युद्ध में भारत अधः पतन, लाखों प्राणों की आहुति अनेकों का वैधव्य और अनाथपन तथा अपरिमित ऐश्वर्य का संहार न हो। दुर्योधन के अपने दुराग्रह पर अटल रहने पर श्री कृष्ण ने अपने ओजस्वी वक्तव्य से सबको पाण्डवों की धार्मिक पक्षवृत्ति एवं पौरुष का परिचय देकर अपनी प्रतिभा से अनेकों के मन को उनकी ओर मोहित कर लिया सम्पूर्ण महाभारत का युद्ध श्री कृष्ण के नेतृत्व में लड़ा गया। कई बार आड़े समय में श्री कृष्ण की सूझ-बूझ ने ही पाण्डवों को संकट से बचाया। यदि कहा जाए कि महाभारत के युद्ध में पाण्डवो

की विजय, वस्तुतः श्री कृष्ण की नीति की विजय थी तो इसमें कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। यदि श्री कृष्ण उनके पक्ष में न होते तो यह विजय लाभ होना असम्भव था। तत्कालीन भारत के इतिहास और पाण्डवों की जीवन प्रवृत्ति को देखकर शिशुपाल वध में श्री कृष्ण जी के लिए आया ऊढगुरुभार' सम्बोधन स्मरण हो जाता है माघ का यह विशेषण सर्वथा सार्थक है।

योगेश्वर श्री कृष्ण जहां योग दर्शन प्रतिपादित योग में प्रवीण और सिद्ध योगीराज थे, वहां महाभारत में अनेक स्थलों पर योग का अर्थ नीति कर्म उपाय आदि भी है। अतः योगः कर्मसु कौशलम् के अनुसार आप नीति राज्य व्यवस्था एवं कर्म सिद्धि में प्रवीण होने से सच्चे अर्थों में योगेश्वर थे। आपका सारा जीवन कर्मयोग की साकार व्याख्या से परिपूर्ण है। श्री कृष्ण कहीं बाल गोपाल के साथ खेलते-नाचते और बांसुरी बजाते हुये गौओं को चराने में व्यस्त हैं, तो कहीं सुदामा के साथ शिक्षा ग्रहण करने तथा मैत्री भाव निभाते हुये मिलते हैं।

एक तरफ जहां राजसूय में 'सब के पग धुला रहे हैं तो दूसरी तरफ गीता के महान् उपदेश को दे रहे हैं! कहीं अस्त्र-शस्त्र की कुशलता का परिचय दे रहे हैं तो कहीं अर्जुन के सारथी बने हुये मिलते हैं। अतः जीवन और सामाजिक व्यवहार के लिए उपादेय हर कर्म को बिना झिझक करते हुये सच्चे कर्मयोगी और हरफन मौला सिद्ध होते हैं। उनके जीवन की महत्ता को ही सामने रखकर महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश के एकादश समुल्लास में लिखा है देखो— श्री कृष्ण जी का इतिहास महाभारत में अत्युत्तम है। उनका गुण, कर्म, स्वभाव और चरित्र आप्त पुरुषों के सदृश है। जिसमें कोई अधर्म का आचरण श्री कृष्ण जी ने जन्म से मरण पर्यन्त बुरा काम कोई किया हो ऐसा नही लिखा।

——

गुरुकुल हत्याकांड के अभियुक्तों को आजीवन कारावास

होशंगाबाद के विद्वान सेशनजज ने, गुरुकुल होशंगाबाद के ब्रह्मचारी पुनीतकुमार पाल की हत्या के अपराध में पकड़े गये ६ अभियुक्तों में से ५ अभियुक्तों को सश्रम आजीवन कारावास की सजा सुना दी है।

घटना ३ जनवरी ७५ की रात्रि को अभियुक्तों ने लोहे की छड़ों और लाठियों से लैस होकर गुरुकुल भूमि की सीमा पर बाजार से लौट रहे ब्रह्मचारी पुनीतकुमारपाल एवं आचार्य भूमानन्द जी पर प्राणघातक प्रहार किया था- आचार्य जी के हाथ की हड्डी पर काफी चोट लगी एवं पुनीतकुमार की मृत्यु हो गयी।

इस मामले में सभा की ओर से होशंगाबाद के एडवोकेट श्री नमदाशंकर काबरा ने पैरवी की थी। श्री काबराजी स्थापित आर्य समाज के प्रधान हैं।

—रमेश चन्द्र
मन्त्री
आर्य प्रतिनिधि सभा, मध्यप्रदेश व विदर्भ

योगीराज श्री कृष्ण की उपासना विधि

(ले०—श्री पं० बिहारीलाल जी शास्त्री बरेली)

प्राय: महा पुरुषों के तीन रूप हुआ करते हैं। लोक रञ्जक रूप यथा श्री कृष्ण जी की वृन्दावन की लीलाएं इस रूप का ,शस्त्र होता है—वंशी। दूसरा रूप होता है लोक शिक्षक रूप, यथा महाभारत युद्ध में गीतोपदेश तथा उधव को धर्मोपदेश। इस रूप में शंख धारण किया जाता है यथा युद्ध में 'पाञ्चजन्यम हृषीकेशं भगवान् कृष्ण का पांचजन्य शंख। तीसरा रूप होता हैं महापुरुषों का लोक रक्षक। यथा दुष्ट संहारक युद्धों में। इसका शस्त्र होता है चक्र। सुदर्शन चक्र से ही शिशुपालादि असुरों का संहार किया।

भगवान् कृष्ण ने तीनों रूपों में जनता को दर्शन दिये और कल्याण किया।

उनके जीवन की घटनाएं, कविताओं में है अत: उनके भाव को समझना कठिन हो जाता है जैसे वृन्दावन के चरित्र में राजनैतिक भूमिकाएं थीं उन्हें श्रृंगार रस में डुबोकर भक्तों ने आक्षेप योग्य बना डाला है। आनन्द मठ के राष्ट्रीय गान के निर्माता श्री वंकिम चन्द्र जी चट्टोपाध्याय ने लिखा है कि मैं महाभारत के श्री कृष्ण को तो मान सकता हूं पर गीत गोबिन्द के श्री कृष्ण को नहीं।

गीत गोबिन्द में जयदेव ने श्री कृष्ण के लोक रञ्जक रूप को श्रृंगार में डुबोकर विकृत कर दिया है। भगवान् के नाम पर अपने मन के श्रृंगारी भावों की भड़ास निकाली है। श्री कृष्ण भगवान् के विषय में ऋषि दयानन्द का विचार कितना उच्च भावों से भरा है।

देखो श्री कृष्ण जी का इतिहास महाभारत में अत्युत्तम है। उनका गुण, कर्म, स्वभाव और चरित्र आप्त पुरुषों के सदृश है। जिसमें कोई अधर्म का आचरण श्री कृष्ण जी ने जन्म से मरण पर्यन्त बुरा काम कुछ भी किया हो, ऐसा नहीं लिखा। सत्यार्थ प्रकाश ११वां समु०। वास्तव में श्री कृष्ण भगवान् वैदिक आर्य थे। यह उनकी उपासना विधि से विदित हो जाता है। यदि कोई मनुष्य नमाज पढ़ता हो तो मुसलमान माना जाएगा। मूर्तिपूजक हैं तो जैन, बुद्ध पौराणिक या कैथोलिक, ईसाई, ठहरेगा। इसी प्रकार सन्ध्या, अग्निहोत्र. गायत्री जप करने वाले को वैदिक धर्मी आर्य कहा जायेगा।

अब देखिये श्रीमद्भागवत् में श्री कृष्ण भगवान् की दिनचर्या—दशम स्कन्ध अध्याय ७० में

ब्राह्मे मुहूर्ते उत्थाय वार्युपस्पृश्यमाधव;।
दध्यौ प्रसन्नकरण: आत्मानं तमस: परम।

एकं स्वयं ज्योतिरनन्तमव्ययं
स्व संस्थ्या नित्य निरस्त कल्मषम्
ब्रह्मारव्यमस्योद्भवनाश हेतुभि:
स्व शक्तिभिर्लक्षितभाव निर्वृतिम्।५।
अथाप्लुतोऽम्मस्यमले यथा विधि
क्रिया कलापं परिधाय बाससी
चकार सन्ध्योपगमादि सत्तमो
हुतानलो ब्रह्म जजाप वाग्यत;।।६।।

अर्थ—श्री कृष्ण जी ब्रह्म मुहूर्त (उषा काल में) उठे और शौच आदि से निवृत हो प्रसन्न अन्तः करण से तमस से परे आत्मा अर्थात् परमात्मा का ध्यान किया ।४।

परमात्मा के विशेषण

जो एक है, स्वयं ज्योति स्वरूप है अनन्त है, अव्यय परिवर्तन रहित है, अपनी स्थिति से भक्तों के पापों को नष्ट करता है, उसका नाम ब्रह्म है, इस संसार की रचना और विनाश के हेतुओं से अपने अस्तित्व का प्रमाण दे रहा है और भक्तों को सुखी करता हैं ।५।

और निर्मल जल में स्नान करके यथा विधि क्रिया के साथ दो वस्त्र धारण करके सन्ध्या की विधि की और श्रेष्ठ श्री कृष्ण ने हवन किया और मौन होकर गायत्री का जाप किया ।६।

श्लोक में आये ब्रह्म शब्द का अर्थ श्रीमद्भागवत् की संस्कृत टीका में श्रीधर स्वामी ने गायत्री जजाप इत्यर्थः—गायत्री किया है। गीता प्रेस की हिन्दी टीका में भी ऐसे ही अर्थ हैं। श्री मद्-भागवत् मेंकहीं भी श्री कृष्ण द्वारा मूर्तिपूजा करना नहीं मिलता है और बाल्मीकि रामायण में कहीं श्री राम द्वारा मूर्ति पूजा का नाम नहीं।

अब ईश्वर के नाम के विषय में देखिये—

गीता के ८वें अध्याय का श्लोक है—

ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन् मामऽनुस्मरन्
यः प्रयाति त्यजनदेहं सयाति परमांगतिम्।

अर्थ—ओम इस एक अक्षर ब्रह्म (शब्द) बार २ जपता हुआ और मेरा अनुस्मरण करता हुआ जो शरीर को छोड़ कर परलोक को जाता है। वह मोक्ष को पाता है।

हरियाणा के आर्य भाई-बहिनों से

नम्र निवेदन

आर्य प्रतिनिधि सभा हरियाणा के नव निर्माण में सहयोग दीजिए

आर्यसमाज को स्थापित हुए १०० वर्ष व्यतीत हो गए। अभी तक हरियाणा के आर्यसमाज तथा शिक्षण संस्थायें आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के अधीन थीं। सौभाग्य समझिये कि आर्यसमाज की स्थापना के पूरे १०० वर्ष पश्चात् अर्थात् आर्यसमाज स्थापना शताब्दी के पावन अवसर पर आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रस्ताव तथा आर्यसमाज की शिरोमणि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के आदेशानुसार राजकीय सीमाओं के आधार पर "आर्य प्रतिनिधि सभा हरियाणा" की घोषणा की गई है। आपकी यह प्रिय धार्मिक सभा अभी नवजात शिशु की अवस्था में है। इसके पास अभी तक अपना निजी कार्यालय नहीं है और न ही कोई स्थायी कोष है।

हम चाहते हैं कि हरियाणा के प्रत्येक ग्राम से ऋषि दयानन्द के सन्देश को पहुंचाने के लिये आर्यसमाज की स्थापना की जावे। वैदिक साहित्य छपवा कर पढ़ी लिखी जनता तक पहुंचाया जावे। परन्तु इसके लिए धन की तुरन्त आवश्यकता है।

अतः हम हरियाणा के प्रत्येक भाई, बहिन से नम्र निवेदन करते हैं कि आर्यसमाज शताब्दी के अवसर पर अपनी धार्मिक सभा के संगठन को सुदृढ़ करने तथा आर्यसमाज के ठोस प्रचार के लिए अधिक से अधिक धन (आर्य परिवार के प्रत्येक सदस्य से कम से कम एक रुपया संग्रह करके) सभा के कार्यालय दयानन्द मठ रोहतक में अवश्य भेजकर सहयोग देने की कृपा करें और यश व पुण्य के भागी बनें।

स्वामी रामेश्वरानन्द सरस्वती — प्रधान
महाशय भरतसिंह — मन्त्री
दलीप सिंह आर्य — कोषाध्यक्ष

आर्य प्रतिनिधि सभा हरियाणा, दयानन्दमठ, रोहतक। दूरभाष : २५८९

(ले०—वीरेन्द्र-कुलदीप 'साथी')

तर्ज—मेरा जीवन कोरा कागज———कोरा कागज

कर ले बन्दे जिन्दगी में ध्यान ईश्वर का ।
पानी का तू, बुलबुला महमान कुछ दिन का ॥

१. चार दिन की चांदनी है, फिर अन्धेरी रात,
छोड़ कर जाना है सब कुछ, दोनों खाली हाथ,
कर्मों का फल, अन्त में सबको ही मिल जाता,
कर ले बन्दे———————।

२. कर भलाई जग में बन्दे, मधुर वाणी बोल,
कर्म खोटे करके प्राणी, जिन्दगी न रोल,
कर सदा, गुणगान बन्दे चार वेदों का,
कर ले बन्दे जिन्दगी में———————

३. हाथ से जो वक्त निकला, फिर न आयेगा,
चुग गई जब खेत चिड़ियां, तू पछताएगा,
मौका है, अब भी संभल जा 'साथी' भी कहता,

कर ले बन्दे, जिन्दगी में ध्यान ईश्वर का ।
पानी का तू, बुलबुला महमान कुछ दिन का ॥

————

सब जगह आपका मान हो जाएगा

(ले०—श्री प्रकाशचन्द्र जी कविरत्न, अजमेर)

वेद स्वाध्याय, सत्संग करते रहो,
एक दिन प्राप्त सद् ज्ञान हो जाएगा।
शान्ति होगी परम, भ्रान्ति मिट जाएगी,
पाप, तापों का अवसान हो जाएगी,
दूर हो जाएगी स्वार्थ की भावना।
छल, कलह, द्वेष, अधिकार लिप्सा स्वतः,
लक्ष्य की ओर सबके बढ़ेंगे चरण ॥
जब स्व कर्त्तव्य का ध्यान हो जाएगा।
फूल ज्यों ही खिला बाग सुरभित हुआ,
भृङ्ग, विहंगों की आने लगी टोलियां।
सद्गुणों की सुगन्धी लुटाते चलो,
सब जगह आप का मान हो जाएगा ॥
शुद्ध करके भरो शुद्ध राष्ट्रीयता
घोर घातक अराष्ट्रीय समुदाय में।
की उपेक्षा अधिक तो बृहद् अङ्क निज,
राष्ट्र का यवन क्रिस्तान हो जाएगा।
आ पड़ी है कड़ी आपदा की घड़ी,
आर्यो, जिम्मेवारी है तुम पर बड़ी।
आप यदि हैं सक्रिय, जागृत, संगठित,
राष्ट्र का पूर्ण उत्थान हो जाएगा।
स्थिर रहेगा सुयश सर्व संसार में,
याद जनता करेगी उसे सर्वदा।
जो 'प्रकाशार्य' निज राष्ट्र गौरव तथा,
धर्म रक्षार्थ बलिदान हो जाएगा।

———

कर्मयोगी श्री कृष्ण

—ले० श्री पं० ओमप्रकाश जी आर्य, सभा कार्यालयाध्यक्ष—

विश्व गुरु भारत

भारत एक महान देश है। इस देश ने संसार को जितने उत्तम और श्रेष्ठ सदाचारी विद्वान् महापुरुष दिए हैं, उतने किसी और देश ने नहीं दिए। व्यवहार शास्त्र, दर्शन शास्त्र, भौतिकी विद्या एवम् अध्यात्म-विद्या इन सबका आदिम स्रोत यही भारत रहा है। कर्नल टाड के ये शब्द इसके अतीत की स्वर्ण बेला का स्मरण दिलाते हैं—"हम उन ऋषियों को अन्यत्र कहां पा सकते हैं, जिनके ग्रन्थ प्लेटो, थल्स और पैथागोरस के गुरु हैं, हम उन ज्योतिषियों को कहां प्राप्त कर सकते हैं, जिनका ग्रहमण्डल सम्बन्धी ज्ञान आज भी योरूप में आश्चर्य उत्पन्न करता हैं, हम उन कारीगरों और मूर्तिकारों से और कहां मिल सकते हैं, जिनके कृत्य हमारी प्रशंसा के पात्र हैं, हम उन गायकों (सामवेदी) को कहां देख सकते हैं, जो मानवीय दुःख को आनन्द की ओर दौड़ा सकते है और बदल सकते हैं, आंसुओं को मन्द मुस्कान में।"

कर्नल अल्काट के कथनानुसार "सुकरात, प्लेटो, पैथागोरस. अरस्तु, होमर, जीनो, हीसियड (सभी), कपिल, कणाद्, मनु, व्यास, वालमीकि, जैमिनि, मरीचि, नारद आदि महर्षियों की पाठशालाओं से निकल कर दार्शनिक बने हैं।'

वेदज्ञ मैक्समूलर की सम्मति में—'आप कोई भी विषय भाषा, धर्म, देवमाला, दर्शन, कानून, रीतिरिवाज, प्राचीनविज्ञान का विशेष अध्ययन करना चाहें, तो आपको इच्छा या अनिच्छा से यहां आना ही पड़ेगा, क्यों ? क्योंकि बहुमूल्य ज्ञानोत्पादक मानव इतिहास विषयक सामग्री केवल भारत कोष में ही संचित है।"

वैचारिक क्रान्ति को उत्पन्न करने वाले आधुनिक युग के महान सुधारक महर्षि दयानन्द सरस्वती अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश के एकादश समुल्लासमें लिखते हैं—" यह आर्यावर्त्त देश ऐसा है, जिसके सदृश भूगोल में दूसरा कोई देश नहीं है। इसीलिये इस भूमि का नाम सुवर्ण भूमि है, क्योंकि यही सुवर्णादि रत्नो को उत्पन्न करती है।........जितने भूगोल में देश हैं, वे सब इसी देश की प्रशंसा करते और आशा रखते हैं कि पारसमणि पत्थर सुना जाता है, वह बात तो झूठी है परन्तु आर्यावर्त्त देश ही सच्चा पारसमणि है कि जिसको लोहेरूप दरिद्र-विदेशी छूते के साथ ही सुवर्ण अर्थात् धनाढ्य हो जाते हैं।' इसी समुल्लास में आगे चल कर लिखते हैं—' और जितनी विद्या भूगोल में फैली है, वह सब आर्यावर्त्त देश से मिश्रवालों, उनसे यूनानी, उनसे रूम और उनसे यूरोपदेश में, उनसे अमेरिका आदि देशों में फैली है।

भारत यही तत्ववेत्ता ऋषियों, कर्मवीरों और शूरवीरों की जननी है, इसके निवासियों को मौत विभीषिका कभी भयभीत नहीं कर सकी, विपत्तियां विचलित करने में व्यर्थ साबित हुई और वृद्धावस्था कभी जीर्ण न कर पाई। ऐसे पवित्र और महान् देश के एक महान् सपूत की गौरव गाथा आगे की पंक्तियों में आपको पढ़ने को मिलेगी, इस गौरव गाथा को ध्यानपूर्वक पढ़ने और उस पर मनन करने से आपको जहां अपने उज्जवल अतीत के दर्शन होंगे, वहां जीवन धन को सुरक्षित करने तथा देवत्व की प्राप्ति के साधनों का परिचय भी अवश्य मिलेगा।

वंश, जन्म तथा परिचय

प्राचीन काल में इसी भू-भाग पर ययाति नाम के एक पराक्रमी राजा राज्य करते थे। इनका विवाह शुक्राचार्य की लड़की देवयानी से हुआ। जिससे उनके दो 'पुत्र—यदु और तुर्वसु' हुए। यदु का वंश यादववंश कहलाया। इसी में भाद्रपद कृष्णअष्टमी की रात्रि को रोहिणी नक्षत्र में श्री कृष्ण जी ने जन्म लिया। या व-वंश के आगे चल कर दो उपवंश हो गए। एक वृष्णि और दूसरे भोज। भोजों के फिर दो भेद हुई—एक कुकुर और दूसरे अन्धक। श्री कृष्ण वृष्णि कुल में पैदा होने के कारण वार्ष्णेय भी कहलाए। इनके दादा का नाम शुरसेन तथा पिता जी का नाम वसुदेव था। श्री कृष्ण की माता का नाम देवकी था। वह कुकुरवंश की थी। यादवकुल का राज्य उस समय इसी कुकुरवंश के हाथ में था। देवकी के पिता का नाम था देवक जिनका भाई उग्रसेन राज्याधिकारी था। इसी उग्रसेन को अपने पुत्र कंस ने जरासंघ की शह पर सिंहासन से उतार बन्दी-गृह में डाल दिया था और स्वयं राज्य संभाल लिया था। यादवों की राजधानी मथुरा थी।

शिक्षा-दीक्षा

महाभारत में पितामह भीष्म ने श्री कृष्ण जी को वेदवेदांग का ज्ञाता तथा स्नातक कहा है। इससे सिद्ध है कि महाराज की शिक्षा-दीक्षा का किसी योग्य गुरु के सानिध्य में प्रबन्ध किया गया था। इनके शिक्षागुरु कौन थे, इस विषय में महाभारत मौन है। पुराणकारों ने सान्दीपनि को इनका गुरु बताया है परन्तु उनके पास ये केवल ६४ दिन ही रहे और विष्णुपुराण के अनुसार उनसे केवल धनुर्वेद सीखा। छान्दोग्योपनिषद् में एक कृष्ण देवकी पुत्र का वर्णन है, जिसमैं गुरु घोर अंगिरस ऋषि थे। परन्तु सारे महाभारत में घोर अंगिरस ऋषि का कहीं उल्लेख नहीं। भागवत में श्रीकृष्ण और बलराम दोनों का यज्ञोपवीत संस्कार वसुदेव जी के पुरोहित गर्गाचार्य द्वारा कराए जाने का उल्लेख अवश्य है। उपासना तथा योग साधन की रीति आपने महर्षि उपमन्यु से सीखी थी।

गृह-कलह का विनाश

गुरुगृह से स्नातक बन कर जब आप पितृ-गृह में वापस आए तो आपने यादव कुल को जो फूट की भयंकर बीमारी का शिकार होकर विघटित हो चुका था, इस भयंकर रोग से मुक्त कर संघटन के सूत्र में पिरोने के साधनों पर विचार करना शुरू किया। यादवों के जिन दो मुख्य उपवंशों वृष्णियों और अन्धकों का ऊपर वर्णन हो चुका है, उनमें से वृष्णिकुल के मुखिया अकसर तथा अन्धकों के आहुक को एक दूसरे के निकट लाने का उपाय आपने खोज निकाला। आहुक की कन्या सुतनु का विवाह

अकरूर से करा दिया जाए, यह प्रस्ताव आपने यादवों के सम्मुख प्रस्तुत करते हुए कहा——बन्धुओं, हमारे ही कुल के एक आत्मीय बन्धुक कंस ने जरासंघ की दोनों कन्याओं अस्ति और प्राप्ति से विवाह करके एक शक्तिशाली राजा से अपना घनिष्ट सम्बन्ध जोड़ लिया है। जरासंघ की शक्ति को आप सब जानते हैं। कंस उसी के बल बूते पर मनमाने अत्याचार कर रहा है। अपने पिता को भी राज्यच्युत कर उसने बन्दी गृह में डाला हुआ है। ऐसी अवस्था में यदि हम आपस में लड़ते झगड़ते रहे, तो सदा के लिए अत्याचारी के पंजे के नीचे पड़े रह जायेंगे, इसलिये घर की फूट को दूर करना अत्यावश्यक है और मेरी सम्मति में इस फूट को दूर करने का सर्वोत्तम उपाय यही है कि श्री अकरूर का बिवाह अन्धकों के मुखिया श्री आहुक की पुत्री सुतनु से कर दिया जाए। श्री कृष्ण जी का यह प्रस्ताव सभी ने पसन्द किया और इस प्रकार जो दोनों कुल परस्पर शत्रु बने हुए एक दूसरे के खून के प्यासे हो रहे थे, पुनः एक बार गले मिल गये।

आततायी का वध तथा राष्ट्रहित

अन्यायी और अत्याचारी कोई भी क्यों न हो, उसे सहन करना महापाप है। समाज-जाति और राष्ट्रहित के लिये बन्धु बान्धवों से पृथक् भी होना पड़े अथवा उनका विरोध भी सहन करना पड़े तो कोई बुराई नहीं। सच्चा देश-भक्त और समाज सुधारक राष्ट्र और समाजहित की कभी उपेक्षा नहीं करता। यादवों पर अत्याचार जरासंघ से शक्ति पाकर कंस कर रहा था जोकि स्वयं यादव था। श्री कृष्ण जी के सामने यह प्रश्न उपस्थित हुआ कि कंस को सीधे मार्ग पर कैसे लाया जाये। कंस सम्बन्ध में उनका मामा था परन्तु यहां प्रश्न राष्ट्र की रक्षा का था। इसलिये कंस को सीधा मार्ग दिखाने या यमपुरी पहुंचाने का काम श्री कृष्णजी ने अपने ऊपर ही लेना ठीक समझा। अन्ततोगत्वा उसे यमलोक पहुंचा कर ही दम लिया और यह आदर्श स्थापित किया कि बन्धुबांधव एवम् अपना सर्वस्व राष्ट्र के लिए है न कि राष्ट्र इन के लिये।

महाभारत में अन्यत्र हम पढ़ते हैं

पाण्डवों का दूत बन कर आप हस्तिनापुर गये और वहां युद्ध को रोकने का भरसक प्रयास किया परन्तु दुराग्रही दुर्योधन तथा उसके साथियों ने आपकी कोई बात न मानी। इसपर आपने महाराज धृतराष्ट्र को अपने कुल का उदाहरण देते हुए कहा :—हमारे यहां कंस. दुर्योधन की तरह ही कुलागार था। हमने सारे कुल की रक्षा के लिये उस एक अत्याचारी को मार डाला। यही उपाय दुर्योधन का करना उचित है। इसे दुःशासन, कर्ण और शकुनि सहित पाण्डवों के हवाले कर देना चाहिए। क्या इस एक के लिये सारे क्षत्रियवंश का नाश कर दिया जायेगा ?

इसी प्रकार पितामह भीष्म को भी आपने स्पष्ट कहाकि इस सारे विनाश का मूल कारण आप हैं। न आप जुआ खेलने देते न ये बुरे दिन पृथ्वी पर आते और यदि दुर्योधन आपकी नहीं मानता था तो आपको उससे अलग हो जाना चाहिए था। भीष्म पितामह के यह उत्तर देने पर कि राजा परमदेवता है उसे छोड़ा नहीं जा सकता। आपने तत्काल कहा 'हमने यदुकुल के हितार्थ कंस का त्याग कर दिया था, कि नहीं। सत्य तो यह है कि यदि भीष्म और द्रोण आदि

हिम्मत से काम लेते और पापी राजा का साथ न देते अपितु सत्य का झण्डा ऊपर उठा लेते... तो भारत का विनाश न होता।

इन तमाम बातों का उल्लेख केवल यह दिखाने के लिये किया गया है कि महाराज कृष्ण राष्ट्र का हित सर्वोपरि मानते थे और उसके लिए बड़े से बड़ा संकट मोल लेने तथा त्याग वा बलिदान का मार्ग अपनाने के लिए सर्वदा तत्पर रहते थे।

शिष्टाचार वा शालीनता

वेदवेदांग तत्वज्ञ शस्त्र-शास्त्र दोनों का महारथि, नीति का पुतला-शूरवीर-दानी और धृतिमान तथा क्षमा शील कृष्ण शालीनता की भी सजीव और साकार प्रतिमा था। महाभारत में आता है कि जहां कहीं और जब कभी आप विद्या-वयोवृद्धों से मिलते-उनके चरणों पर सिर झुका कर नमस्ते किया करते तथा उनका आशीर्वाद लेते थे। पाण्डवों में युधिष्ठिर आपसे बड़े थे। अतः उन्हें आप उन के पांव छू कर चरण वन्दना किया करते थे :—

ततोऽभिवाद्यगोबिन्दः पादोजग्राहधर्मवित्।
उत्थाप्यधर्मराजस्तुमूर्ध्न्युपाघ्राय केशवम्॥
महा—सभापर्व अ. २१२३

इसी प्रकार युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के अवसर पर दुःशासन ने भोजन का प्रबन्ध सम्भाला, अश्वत्थामा ने ब्राह्मणों के स्वागत का कार्य अपने ऊपर लिया, भीष्म और द्रोण कृताकृत की देखभाल करने लगे संजय राजाओं का स्वागत तथा कृपाचार्य सोने. हीरे, पन्ने आदि के निरीक्षण पर स्वेच्छा से नियुक्त हुये। विदुर ने व्ययकर तथा दुर्योधन ने उपहार स्वीकार करना उचित समझा, उस समय इस नीति के पुतले, शील की प्रतिभा, सदाचार के अवतार वेदवेदांग के ज्ञाता, शूरवीर शिरोमणि आदर्श साम्राज्य निर्माता ने राजसूय यज्ञ में आए ब्राह्मणों के पांव धोने का काम अपने जिम्मे लिया। यह विनय और शालीनता की पराकाष्ठा है। महाभारत सभापर्व में लिखा है :—

चरणक्षालने कृष्णो ब्राह्मणानां स्वयं ह्यभूत्॥

सच्ची आस्तिकता :—

सृष्टिकर्त्ता की सत्ता पर विश्वास तथा उस के शुद्ध और सत्य स्वरूप का ज्ञान कराने वाली उसी परमप्रभु की कल्याणी वेदवाणी पर आस्था एवं निष्ठा रखते हुये उस आदि विधान के अनुसार अपने आचार व्यवहार को सुधारना ही सच्ची आस्तिकता है। अपने इस प्रकार के सुधरे हुए जीवन को अन्यों के कल्याणार्थ समर्पित करना आस्तिक्य भाव को प्रचारित करना है। श्री कृष्ण जी के जीवन में हमें उपर्युक्त दोनों ही गुण उपलब्ध होते हैं। मनुमहाराज ने ब्रह्म मुहूर्त में उठ कर जगन्नियन्ता का चिन्तन मनन ध्यान करने का आदेश दिया है। श्री कृष्ण इस आदेश का श्रद्धापूर्वक पालन करते थे ;—

ततः शयनमाविश्य प्रसुप्तो मधुसूदनः।
यायमात्रार्धशेषायां यामिन्यां प्रत्यबुध्यतः॥

ध्यान लगाने की यह विधि आपने महर्षि उपमन्यु से सीखी थी इसका विस्तृत विवेचन महाभारत के अनुशासन पर्व में किया गया है।

अर्जुन के व्याज से मानवमात्र के कल्याणार्थ अपने गीता ज्ञान में श्री कृष्ण जी परमपिता परमात्मा के ध्यान की रीति का वर्णन करते हुए स्पष्ट कहते है :—

शुचौदेशे प्रतिष्ठाप्य स्थिरमासनमात्मनः ।
नात्युच्छ्रिन्त नातिनीचं चैलाजिन कुशोत्तरम् ॥
तत्रैकाग्रं मनः कृत्वा यतचित्तेन्द्रियक्रियः ।
उपविश्यासने यु ज्याद् योगमात्मविशुद्धये ॥
समं कायशिरोग्रीवं धारेयन्नचलं स्थिरः ॥
संप्रेक्ष्य नासिकाग्रं स्वं दिशश्चानवलोकयन् ॥

अर्थ :—न बहुत ऊंचे, न बहुत नीचे, कपड़े मृगचर्म और कुशाओं से ढके हुये अपने आसन को पवित्रस्थान में स्थिर करके चित्त और इन्द्रियों की क्रियाओं को रोकता हुआ आसन पर बैठ कर निश्चिल हुआ धड़-शिर और गर्दन को निश्चल सीधा रखता हुआ और अपनी नासिका के अग्रभाग को देख कर दिशाओं को न देखता हुआ आत्मा की शुद्धि के लिए योग का अनुष्ठान करे। श्री कृष्ण जी योग रीति से स्वयं सनातन ब्रह्म का चिन्तन नियमित रूप से किया करते थे इसके लिये दो तीन उचरण महाभारत से दिये जाते हैं। इनसे सिद्ध हो जाएगा कि श्री कृष्ण सन्ध्या और हवन के पूरे निष्ठावान थे। दूत कर्म पर जाते हुये रास्ते में सांझ हो गई। ये सन्ध्या के लिए रुक गए। हस्तिनापुर में प्रातः काल सभा में जाने से पूर्व सन्ध्या तथा अग्निहोत्र किया।

अवतीर्य रथात् तूर्णं कृत्वा शौचं यथा विधि
रथमोचनमादिश्य सन्ध्यामुपविवेशह ॥
—उद्योग पर्व ८३।२१।

कृतोदकानुजप्यः स हुताग्निः समलङ्कृतः ॥
ततश्यचादित्यमुद्यन्तं उपातिष्ठत माधवः ॥
—उद्योग पर्व ८३।६॥

अभिमन्यु के वध के दिन सायंकाल अपने शिविर में जाने से पूर्व भी श्रीकृष्ण और अर्जुन दोनों ने सन्ध्या की।

ततः सन्ध्यामुपास्यैव वीरौ वीरावसादने।
कथयन्तौ रणेवृत्तं प्रयातौ रथमास्थितौ ॥

युद्ध भूमि में भी जो महापुरुष सन्ध्यावन्दन का व्रती बना रहा उसकी आस्तिकता में किसे सन्देह हो सकता है? परन्तु प्रश्न यह है कि श्रीकृष्ण सन्ध्या में जिस ब्रह्म का चिन्तन करते थे उसके स्वरूप का निरूपण भी उन्होंने किया है या नहीं? गीता जिसका सम्बन्ध श्रीकृष्ण जी से विदित है उसमें हम पढ़ते हैं :—

कविमपुराणमनुशासितारमणोरणीयां
समनुस्मरेद्यः।
सर्वस्य धातारमचिन्त्यरूपं, आदित्य वर्णं
तमसः परस्तात् ॥
प्रयाणकाले मनसा चलेन, भक्त्या युक्तो
योग बलेनचैव।
भ्रुवोर्मध्येप्राणमावेश्यसम्यक्, स तं परं पुरुष-
मुपैतिदिव्यम् ॥

(कविम्, वेदों की रचना करने वाले (पुराणम्) अनादि (अनुशासितारम्) वेदों का उपदेश करने वाले (अणोः अणीयांसम्) सूक्ष्म से (अतिसूक्ष्म) सर्वस्यधातारम्) सबका धारण करने वाले तमसः परस्तात्) अन्धकार से परे (आदित्यवर्णम्) प्रकाशस्वरूप भगवान् को (यः) जो भक्त्या च एक योग बेलन युक्तः) भक्ति और ध्यान योग के बल से सम्पन्न (प्राणम् भ्रुवोः मध्ये सम्यक् आवेश्य) प्राणों को भृकुटि के बीच में भली प्रकार प्रवेश करा के (प्रयाण काले) प्रयाण काल में (अचलेन मनसा) निश्चल मन से (अनुस्मरेत्) भगवान् का स्मरण करता है (सः) वह (तम्दिव्यम् परमम् पुरुषम्) उस प्रकाश रूप परमपुरुष को (उपेति) प्राप्त करता है।

सर्वतः पाणिपादं तत् सर्वतोक्षि शिरोमुखम् ।
सर्वतः श्रुतिमल्लो के सर्वमावृत्यतिष्ठति ॥

वह सब ओर हाथ पैरों वाला सब ओर आंख सिर और मुखवाला, और कानों वाला और संसार में सबको व्याप्त करके ठहरे हुआ है ।

सर्वेन्द्रिय गुणाभासं सर्वेन्द्रियविवर्जितम् ।
असक्तं सर्वभृच्चैव निर्गुणं गुण भोक्तृ च ॥

वह सब इन्द्रियों के गुणों की झलक से युक्त परन्तु सर्व इन्द्रियों से रहित है । असङ्ग और सब का धारण करने वाला निर्गुण और गुणों का पालन करने अर्थात् उनको कार्य के अनुकूल करने वाला है ।

बहिरन्तश्च भूतानामचरं चरमेव च ।
सूक्ष्मत्वात्तदमिज्ञेयं दूरस्थं चान्तिके च तत् ॥

वह भूतों के अन्दर और बाहर भी है गति से रहित और सब को गति देने वाला है । यह सूक्ष्म होने से ज्ञान से गम्य नहीं वह सर्वव्यापक होने से दूर और समीप भी है ।

अविभक्तं च भूतेषु विभक्तमिव च स्थितम् ।
भूत भर्तृ च तज्ज्ञेयं ग्रसिष्णु प्र भविष्णु च ॥

वह भूतों में संयुक्त है परन्तु सूक्ष्म होने से संयुक्त न होने की तरह वर्तमान है और उसे भूत का पालन करने वाला उत्पन्न करने वाला प्रयल करने वाला समझना चाहिए ।

ज्योतिषसपि तज्जयोतिः तमसः परमच्यते ।
ज्ञानं ज्ञेयं ज्ञानगम्यं हृदि सर्वस्य धिष्टितम् ॥

वह प्रकाशों का भी प्रकाश, तमोगुण से परे, ज्ञान का विषय, ज्ञान से प्राप्त होने वाला सबके हृदय में विद्यमान कहा जाता है ।

गीता के इतने उद्धरणों को ही पर्याप्त समझते हुये हम पाठकों से निवेदन करेंगे कि वेद और आर्ष ग्रन्थों में वर्णित ईश्वर के स्वरूप के साथ इनकी तुलना करें और जो भाई अविद्या में यह पढ़कर जन्म-मरण के चक्र में आने वालों को ईश्वरमान कर पूज रहे हैं । उन्हें ईश्वर के इस सत्य स्वरूप का बोध कराये ।

— संयम की पराकाष्ठा —

महाभारत का श्री कृष्ण पूर्ण संयमी और सदाचारी था । पुराणकारों ने इस अपूर्व सयमी पर जितने लांच्छन लगाए हैं, उन्हें पढ़कर लज्जा को भी लज्जा आती है । इतने बड़े महा पुरुष को जिसके सम्बन्ध में बाल-ब्रह्मचारी भीष्म को भरी सभा में यह कहना पड़ा कि—

वेद वेदांग विज्ञानं बलं चाप्यधिघं तथा ।
नृणां लोके हि को न्यो स्ति विशेषः केशवाहते:
दानं दाक्ष्यं श्रुतं शौर्यं ह्रीः पुष्टिश्च नियताच्युते

वेद वेदांग का ज्ञान और बलपृथिवी के तल पर इनके समान किसी और में नहीं । इनका दान, इनका कौशल, इनकी शिक्षा और ज्ञान, इनकी शक्ति, इनकी शालीनता, इनकी नम्रता. धैर्य और सन्तोष अतुलनीय है ।

गोपालः लामिनीजारः 'चोरजार शिखात्रणिः कहना और लिखना कितना घृणास्पद है । कृष्ण चरित्र के प्रसिद्ध लेखक देशभक्त बंकिम चन्द्र को भी पुराणों की इन मिथ्या बातों को पढ़कर लिखना पड़ा—कृष्ण को हम लोग क्या समझते हैं, यही कि वे बचपन में चोर थे, दूध, दहीं, मक्खन, चुराकर खाया करते थे ।

युवावस्था में व्यभिचारी थे, और उन्होंने बहुतेरी गोपियों के पातिवृत्थ धर्म को नष्ट किया प्रौढ़ावस्था में वञ्चक और शठ थे-उन्होंने धोखा देकर द्रोणादि के प्राण लिये । क्या इसी का नाम भगवच्चरित्र है ?"

बंकिम चन्द्र के इन शब्दां पर हमें कुछ भी लिखने की आवश्यकता नहीं पुराणकारों की लीला ने हमारे महापुरुष को कलंकित करने में कोई घोर कसर नहीं छोड़ी और विधर्मों तपा-विदशियों को सर्वसामान्य धर्मपरायण श्रद्धालु

के मौलिक अंश से तो यही प्रमाणित होता है कि रुक्मिणी के सिवा श्रीकृष्ण के और कोई स्त्री न थी। रुक्मिणी की ही सन्तान राजगद्दी पर बैठी और किसी के वंश का पता नहीं। इन कारणों से कृष्ण के एक से अधिक स्त्री होने में पूरा सन्देह है।"

श्रीकृष्ण जी के आचारनिष्ठ जीवन पर मुग्ध होकर आर्य समाज के प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती जी अपने महान् ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में लिखते हैं ? देखो! श्रीकृष्ण जी का इतिहास महाभारत में अत्युत्तम है। उन का गुण, कर्म, स्वभाव और चरित्र आप्त पुरुषों के सदृश है। जिसमें कोई अधर्म का आचरण श्रीकृष्ण जी ने जन्म से मरणपर्यन्त बुरा काम कुछ भी किया हो ऐसा नहीं लिखा और इस भागवत वाले ने मन माने दोष लगाए हैं। दूध दही, मक्खन आदि की चोरी और कुब्जा दासी से समागम, परस्त्रियों से रास मण्डल क्रीड़ा आदि मिथ्य दोष श्रीकृष्ण जी ने लगाए हैं। इसको पढ़-पढ़ा सुन-सुना के अन्यमत वाले श्रीकृष्ण जी की बहुत सी निन्दा करते हैं। जो यह भागवत न होता तो श्रीकृष्ण जी के सदृश महात्माओं की झूठी निन्दा क्यों कर होती।"

अतः आइये! सच्चे ईश्वरोपालक कर्मयोगी, सदाचार के पुतले, विनय शालीन निर्लोभी, धर्म-रक्षक, महान् आत्मा, सद्गृहस्थी महापुरुष के पुण्य पावन जन्म दिवस पर महाभारत में वर्णित विशुद्ध जीवन चरितामृत रस का स्वयं पान करें।

उन भूले भटके भाईयों को जो एक ओर तो इस महामानव को अतिमानव अवतारी पुरुष नहीं पूर्ण ब्रह्म तक कह देते हैं और दूसरी ओर तरह तरह के मिथ्या लाञ्छन लगा "समरथ को नहीं दोष गुसाईं" का गीत गाते फिरते हैं उन्हें सत्पथ पर लाने का भी पूरा पूरा यत्न करें ताकि अपने पूज्य पुरुषों से सभी लाभ उठा सकें।

जनों को पथभ्रष्ट करने का पूरा सुयोग लाभ कराया। परन्तु श्रीकृष्ण जी का वास्तविक चित्र तो महाभारत के अनुशीलन से ही सामने आता है। विदर्भ के राजा भीष्म का भी लड़की रुक्मिणी के साथ श्रीकृष्ण जी का विवाह हुआ था। रुक्मिणी ही एक मात्र उनकी धर्मपत्नी थी श्रीकृष्ण पत्नीव्रत थे। दोनों पति पत्नी कितने संयमी और सदाचारी थे इसका परिचय स्वयं श्रीकृष्ण जी ने अपने पुत्र प्रद्युम्न का वर्णन करते हुए किया है।

ब्रह्मचर्यं महद्घोरं तीर्त्वाद्वादश वार्षिकम्
हिमवत् पार्श्वर्यच्येत्ययो सभा ‌‌।तपसार्जितः
समानवृत चारिण्यां रुक्मिण्यां ये ।ऽन्वजायत
सनत् कुमारस्रोजस्वो प्रद्युम्नो नाममे सुतः
सो. पर्व. १२-३०।३१

यहां रुक्मिणी को अपने समान वृतों का आचरण करने वाली कहा गया है इससे सिद्ध होता है कि उस युग में देवियां ब्रह्मचर्य पूर्वक विद्योपार्जन तो करती ही थीं सन्ध्यावन्दन अग्निहोत्र वेदाध्ययन का भी उन्हें पूर्ण अधिकार था।

शिशुपाल श्रीकृष्ण का घोर विरोधी था। अर्घ्यदान के समय उसने इनका घोर विरोध किया। इन पर अनेक आरोप भी लगाए परन्तु आचारी हीनता का दोष वह भी न लगा सका। खेद है कि गीत गोबिन्द, ब्रह्मवैवर्तपुराण भागवतपुराण तथा गोबिन्द सहस्त्नामम इस अलौकिक महापुरुष के निष्कलंक जीवन का अत्यन्त घिनौने रूप में वर्णन करते हुये इन्हें परदारगामी तथा अनेकों पत्नियों वाला कह दिया गया जो कि सर्वथा मिथ्या है। बंकिम बाबू अपने कृष्ण चरित्र में लिखते हैं:—"महाभारत

महाभारत के अनमोल वचन

संयम से परमात्मदर्श

यदा संहरते कामान् कूर्मोऽङ्गानीव सर्वशः ।
तदाऽऽत्मज्योति रात्माऽयमात्मन्येव प्रपश्यति ॥
महा-शान्ति पर्व मोक्ष ७४-५४

आत्मा जब काम भावों, भोगेच्छाओं को अन्तर्लीन करता है जैसे कच्छुआ अपने अंगों को अन्दर छिपाता है तब अपने अन्तरात्मा में ही परमात्म ज्योति को देखता है ।

★इन्द्रियदमन के लाभ★

इन्द्रियाणा प्रसङ्गेन दोष मृच्छत्यसंशयम् ।
संनियम्यतु तान्येव सिद्धिमाप्नोति मानव ॥
महा. शा. प. मोक्ष ३२३।८

मनुष्य इन्द्रियों के प्रसंग से निःसन्देह दोष को प्राप्त हो जाता है परन्तु उन्हीं इन्द्रियों को नियन्त्रित करके सिद्धि को प्राप्त करता है ।

★सदाचार से लाभ और दुराचार से हानि★

आचाराल्लभते ह्यायुराचाराल्लभते श्रियम् ।
आचारात् कीर्तिमाप्नोति पुरुष प्रेत्य चेह च ॥
दुराचारो हि पुरुषो नेहायुर्विन्दते महत् ।
अपि वा पाप शीलस्य आचारो हन्त्यरक्षण ॥
अर्धमज्ञा दुराचारास्ते भवन्ति गतायुषः ।
विशीला भिन्न मर्यादा नित्यं संकीर्ण मैथुनाः ।
अल्पायुषो भवन्तीह नरा नित्यगामिनः ॥
अनुशा-प. १०४।६-७-८-११

मनुष्य सदाचार से आयु को प्राप्त करता है और सदाचार से शोभा तथा शान्ति को प्राप्त होता है । सदाचारी जीवन काल में और मर कर भी कीर्ति को प्राप्त करता है ! सदाचार दोषी मनुष्य के भी दोष को नष्ट कर देता है । दुराचार मनुष्य आयु को पूरा नही भोग पाता है

★चारों वर्णों को वेद पढ़ाना चाहिये★

श्रावयेच्चतुरो वर्णान् कृत्वा ब्राह्मणमग्रतः ।
वेदस्याध्ययनं हीदं तच्च कार्यं मयत्न्मृतम् ॥
महा. शा. प-मोक्ष अ. ३२७।४८

वद वेत्ता ब्राह्मण को अग्रिम पंक्ति में बैठाकर चारों वर्णों को वेद पढ़ावे यह वेद का अध्ययन अध्यापन कार्य ऊंचा माना गया है ।

ब्राह्मणाः क्षत्रियाः वेश्याः शूद्राये चाश्रितास्तपे ।
दान धर्माग्निना शुद्धास्ते स्वर्ग यान्ति भारत ॥
अश्वमेध-९१।३७

जो ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र तप, दान धर्म और अग्निहोत्र से शुद्ध हो चुके हैं उन्हें ही धिशेष सुख-स्वर्ग प्राप्त होता है ।

★धर्मज्ञ सदाचारी ही पूजनीय है★

ज्यायांसमपि शीलेन विहीनं नेव पूजयेत् ।
अपि शूद्रं च धर्मज्ञं सदवृत्तमभि पूजयेत ॥
अनुशासन ४८।४८

आचार हीन चाहे उच्च वर्ण का ही क्यों न हो उसका सत्कार न करें किन्तु धर्मज्ञ-धार्मिक सदाचारी शूद्र की भी पूजा करें ।

——

क्या श्रीमद्भागवत महापुराण में 'राधा' की चर्चा है ?

लेखक :—(डा. शिव पूजन सिंह कुशवाह एम. ए., साहित्यालङ्कार, विद्यावाचस्पति, विशारद, कानपुर)

आज पौराणिक श्रीकृष्ण के साथ राधा का नाम अवश्य जोड़ते है। 'राधा' के बिना 'कृष्ण' का नाम आधा ही समझा जाता है। यदि श्रीकृष्ण जी योगीराज थे और 'राधा' उन की धर्मपत्नी नही थी तो ऐसा पौराणिक क्यों करते हैं? मेरे विचार से पौराणिकों की यह भयंकर भूल है। 'श्रीमद् भागवत महापुराण' वैष्णवों का एक प्रामाणिक पुराण माना जाता है जिस में श्रीकृष्ण जी के के चरित्र पर पर्याप्त प्रकाश डाला गया है। इस महापुराण के अध्ययन से स्पष्ट प्रकट होता है कि इसमें 'राधा' की कही भी चर्चा नहीं है। राधा तो श्री रामाण गोप की पत्नी थी।

कतिपय पौराणिक 'श्रीमद् भागवत महापुराण' में भी 'राधा' का नाम प्रदर्शित करने की कल्पना करते हैं। यथा :—

पं. दीनानाथ शास्त्री सारस्वत की कल्पना :- (आपने 'भागवत' में राधा का नाम खोजा है। आप लिखते हैं :—जिस गोपी को श्रीकृष्ण अन्य गोपियों को छोड़ कर ले गए थे, वही तो 'राधा' थी जिसका सङ्केत 'अनमा राधातो नून' (भगावत १०।३०।२८) 'राधित' शब्द से आया है।. ?

★साहित्याचार्य पं. बलदेव उपाध्याय एम. ए. की कल्पना★..."अनया राधितो नूनं......(भागवत १०।३४।२४) इस रमणी के द्वारा अवश्य ही भगवान् ईश्वर कृष्ण आराधित हुए हैं। धन्या गोपी की प्रशंसा में उच्चरित इस गद्य में राधा का नाम झीने चादर से ढके हुए किसी गूढ़ बहुमूल्य रत्न की तरह स्पष्ट झलकता है।

इस श्लोक की टीका में गौडीयवैष्णव गोस्वामियों ने स्पष्ट ही 'राधा' का गूढ़ संकेत खोज निकाला है।"...२

★श्री पं. कालू राम शास्त्री का कुतर्क★ "...जिस समय भगवान् ने लीलावतार श्रीकृष्ण का रूप धारण किया उस समय इनकी उपासना करने के लिये सोलह हजार एक सौ सात श्रुतियों की अधिष्ठाता देवाताओं ने स्त्री रूप धारण करके श्रीकृष्ण से पाणिग्रहण किया इ। प्रकार १६१०७ सोलह हजार एक सौ सात स्त्रियों तो हुईं और एक भगवती रुक्मिणी रूप धारण करके लक्ष्मी अवतरित हुई। इस कारण से भगवान् श्रीकृष्ण को १६१०८ स्त्रियों हुई।"३

समीक्षा—श्री कालू राम शास्त्री का १६१०७

श्रुतियों को स्त्री बतलाना भी कोरा गप्प ही है। इसी कुतर्क पर वे पुराणों की मिथ्या अश्लील गप्पों को सत्य सिद्ध करने के लिये 'पुराण वर्म' जैसी ऊटपटांग पुस्तक लिखी है।

पं. बलदेव उपाध्याय का भागवत १०।३४।२४ में 'अनया राधितो नूनं' प्रमाण लिखना अशुद्ध है। बिना मूल ग्रन्थ को देखे हुये उन्होंने किसी की पुस्तक से प्रतिलिपि कर ली है।

पं. दीना नाथ शास्त्री का प्रमाण वर्तमान भागवत स्कन्ध दश, अध्याय तीस श्लोक २८ में है।—५

'अराधितो' यहां क्रिया है और सारस्वत जी व उपाध्याय जी दोनों ही 'राधा' अर्थ करके अनर्थ करते हैं।

पौराणिक प. रामतेज पाण्डेय साहित्य शास्त्री ने इसका सही अर्थ इस प्रकार किया है :"-अवश्य ही इस ने भगवान् कृष्ण की आराधना की होगी।"

साहित्य भूषण, काव्य मनीषी, पं. गोबिन्द दास व्यास 'विनीत' अर्थ करते हैं :—

"परमेश्वर भगवान् का सच्चा आराधत तो इसने किया है।" अनेक विद्वान 'श्री भागवत महापुराण' में 'राधा' की चर्चा नही मानते हैं :-

श्री विन्टर नीट्ज लिखते हैं :—"पर राधा का नाम नहीं है। इससे (Naidya) यह सही निष्कर्ष निकालते हैं कि इस पुराण की रचना 'गीत गोबिन्द' के पहले हुई।"—५

पौराणिक सन्यासी स्वामी अखण्डानन्द सरस्वती लिखते हैं :—"भगवान् व्यास अथवा श्री शुकदेव जी महाराज अनन्त ज्ञान सम्पन्न हैं।—ऐसी स्थिति में उन्होंने किस अभिप्राय से श्री राधा जी और गोपियों का नामोल्लेख नहीं किया, इस प्रश्न का उत्तर या तो उनकी कृपा से ही प्राप्त हो सकता है अथवा केवल अपने या दूसरे के अनुमान पर सन्तोष कर लेने से।"-६

विद्यावारिधि प. ज्वाला प्रसाद मिश्र मुरादाबाद लिखते है :—"विष्णु भागवत में गोपी और कृष्ण का चरित्र विस्तृत होने पर भी 'राधा' का नाम नहीं है, होता तो राधा महात्म्य अवश्य होता।"—७

श्री पूर्णेन्द्र नारायण सिह एम. ए., बी. एल. में 'राधा' का अस्तिव नही मानते हैं। वे लिखते है :—"But I shall not toveh nfron her is a stndy of the Bhagavata Pwrana"८

अर्थात्—"भागवत पुराण के अध्ययन में मैं उसके (राधा) ऊपर स्पर्श नही करूगा।"

प. राम प्रताप त्रिपाठी, शास्त्री, लिखते हैं :- "श्रीमद् भागवत मे 'राधा' का नामोल्लेख भी नही है, जो परवर्ती कृष्ण काव्य की आधार भूमि है।"—७

साहित्याचार्य प. विश्वेश्वर नाथ रेउ अपने "पुराणो पर एक दृष्टि" शीर्षक लेख १० में लिखते हैं :—"यद्यपि श्रीमद् भागवत में कही भी 'राधा का उल्लेख नही हुआ है तथापि 'देवी-भागवत' में उस के चरित्र को स्थान दिया गया है।'

इस प्रकार श्रीकृष्ण के साथ राधा का नाम लेना कृष्ण जैसे योगीराज को कलंकित करना है।

---

१. "सनातनधर्म लोक" (दशम पुष्प)' प्रथम संस्करण पृष्ठ २७।

२. "भारतीय वाङ्मय में श्री राधा" प्रथम संस्करण, पृष्ठ १० से १५ तक।

३. "पुराण वर्म" पूर्वार्ध पृष्ठ २५७।

४. गीता प्रेस, गोरखपुर में सम्वत् २०२२ वि. में मुद्रित व प्रकाशित अष्टम संस्करण मूल गुटका साइज, पृष्ठ ५३७, श्रीमद् भागवत-महापुराण, बालबोधिनी भाषा टीका पं. गोबिन्द दास व्यास कृत, द्वितीय खण्ड, पृष्ठ २६६, (द्वितीय संस्करण, श्याम काशी प्रेस, मथुरा में मुद्रित), पं. रामतेज पाण्डेय शास्त्री कृत 'सामयिकी भाषा टीका सजिल्द, पृष्ठ १११ (सन् १७५२ ई. पण्डित पुस्तकालय राजा दरवाजा, वाराणसी द्वारा प्रकाशित) में १०।३०।२८ सही है। (लेखक)

५. प्राचीन भारतीय साहित्य "प्रथम भाग, द्वितीय खण्ड, पृष्ठ २२० की याद-टिप्पणी (सन् १७६९ ई. में मोती लाल बनारसी दास, दिल्ली द्वारा प्रकाशित, प्रथम संस्करण")

६, "श्रीमम्दागत-रहस्य" पृष्ठ २०९ (द्वितीय संस्करण, बम्बई)

७. "अष्टादश पुराण दर्पण" पृष्ठ १७३ (सम्वत् १७७३ वि. बम्बई संस्करण)

८. A study of the Bhagavata Puarna" P. P. H. १९

७. "प्राचीन भारत की झलक" (हमारे पुराण शीर्षक लेख) पृष्ठ ४३ (सम्वत् २०१५ वि. में लौशाम्बी प्रकाशन प्रयाग प्रकाशित, प्रथम संस्करण)

१०. "मासिक पत्रिका" "सरस्वती" "प्रयाग का "हीरक जयन्ती अङ्क" पृष्ठ ६३१ (सन् १७६१ ई. में इण्डियन प्रेस, प्रयाग द्वारा मुद्रित व प्रकाशित)

★★

आर्य निर्देशिका परिशिष्ट के बारे में

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, महर्षि दयानन्द भवन रामलीला मैदान, नई दिल्ली की ओर से आर्य निर्देशिका नामक पुस्तक छपकर तैयार है। इसमें सारे विश्व की आर्य समाजों, प्रतिनिधि समाजों, शिक्षिक संस्थाओं तथा उनसे सम्बद्ध संस्थाओं के अधिकारी, उनकी सम्पत्ति, स्थान आदि का पूरा-पूरा विवरण है।

निर्देशिका का केवल एक परिशिष्ट छपना शेष है। उस परिशिष्ट में ऐसे ट्रस्ट (न्यास) भी अपना विवरण भेजने के लिये आमन्त्रित हैं जो आर्य व वैदिक विचारधारा से प्रेरित हो कर स्वच्छन्द रूप से राष्ट्र और समाज सेवा के कार्य में लगे हैं वे भी अपना पूर्ण विवरण सार्वदेशिक सभा के कार्यालय को भेजकर अनुग्रहीत करें जिससे यह ग्रन्थ अपने में पूर्ण हो सके।

—ओ३म प्रकाश त्यागी
संसद सदस्य मन्त्री सार्वदेशिक सभा दिल्ली

शोक समाचार

स्वामी आत्मानन्द जी के प्रिय शिष्य ब्र० सेवाराम जी का स्वर्गवास

यमुनानगर, श्री स्वामी आत्मानन्द जी के प्रिय शिष्य ब्र० सेवाराम जी का ४-८-७५ को बीमारी के बाद स्वर्गवास हो गया है। आपने काफी समय तक स्वामी आत्मानन्द जी द्वारा स्थापित वैदिक साधन आश्रम यमुनानगर की नि:स्वार्थभाव से सेवा की है। उनके स्वर्गवास से आश्रम को बहुत हानि हुई हैं। जिसकी पूर्ति होना कठिन है।

—महाशय भरतसिंह सभा मन्त्री,
आर्य प्रतिनिधि सभा, हरियाणा दयानन्दमठ रोहतक

योगिराज कृष्ण के प्रति

जुल्मों की कारामें जन्में, मुक्ति लिए जन-जन की,
दैत्यों का संहार बन गयी, क्रीड़ाएं बचपन की,
गोकुल में किलके कि ढह गया, क्रूर कंस का शासन,
नहीं फूल फल सकी. कामना, किसी पूतना मन की।

भूतल पर आगमन तुम्हारा, लाया नूतन जीवन,
योग बांसुरी की मधु ध्वनि से, गूंजा जग का मधुवन,
ऐसा जादू डाला तुमने, ब्रज के जन जीवन पर,
अब तक तुम्हें पुकार रहा है, फिर आओ मनमोहन।

मुस्कानों से काव्य बिखेरा, गिरा बन गयी गीता,
अधरों की माधुरी भर गयी, अमृत से, घट रीता,
कर्म हो गया पावन तुम से, धर्म तुम्हीं से जीता,
क्रान्ति तुम्हारी सांसों के ही संग हुई परिणीता।

मृत्यु भीत मानव को तुमने यह सन्देश सुनाया,
आत्मा का अस्तित्व अमर है, नश्वर है यह काया।
हो उद्बुद्ध आत्म प्रेरित नर, जगे नहीं कापरता,
मोहनग्रस्त-अर्जुन मिष, तुमने यह रहस्य समझाया।

विस्मृत-सा, हो गया हमें वह सत्य स्वरूप तुम्हारा,
आज हमें विश्वासन होता, यह था रूप तुम्हारा,
योगिराज फिर आज तुम्हें अन्याय निमन्त्रण देते,
ओ अनन्य गोपाल, धेनुओं ने फिर तुम्हें पुकारा।

:—लाखन सिंह भदोरिया "सांमित्र"

एक मुक्तक

(कृष्ण के प्रति)

सप्त शिशु वध कर चुकी थी, क्रूरता अहमन्य,
देवकी वसुदेव-सा, दुखिया नहीं था अन्य,
कन्स काश में पड़ी दृढ़ बेढ़ियों के बीच,
मुक्ति को जिसने जना, उस देवकी को धन्य।

—लाखन सिंह भदौरिया, "सांमित्र"

श्री कृष्ण का नारी जाति के प्रति दृष्टिकोण

(लेखिका—डा० सुशीला आर्या एम० ए० पी० एच० डी० जनता कालेज चरखी दादरी हरियाणा)

भारतीय संस्कृति के आधार स्तम्भ श्री कृष्ण के जीवन की अनेक घटनाओं के विषय में इतिहास इतना धूमिल एवं सन्दिग्ध है कि जन-सामान्य के समक्ष उनके चरित्र का निर्णय करने में कठिनाई आ खड़ी होती है। यह अत्यन्त खेद तथा दुर्भाग्य का विषय है कि चारित्र्य के उच्चतम शिखर का स्पर्श करने वाले इस महापुरुष को हमने पतन के गढ़े में धकेला। हिन्दी के तथा कथित भक्ति एवं रीतिकालीन साहित्य में तद्विषयक अनेक कपोल-कल्पित विवरणों द्वारा उनके आचार-विचार पर जो कीचड़ उछाला गया है उससे उनके दुग्ध धवल यशस्वी स्वरूप का तो क्या बिगड़ना था—परन्तु चान्द पर थूका मुंह पर गिरता है—इस सत्योक्ति के अनुसार अभागी भारतीय जनता उनके जीवन के सत्प्रभावों को ग्रहण करने से अवश्य ही वञ्चित रह गई। महाभारत में प्रसिद्ध है कि श्री कृष्ण के कट्टर शत्रु शिशुपाल ने उन्हें सौ गालियां दीं किन्तु इन सब में भी आचारहीनता का दोषारोपण करने वाली एक न थी। खेद कि यह कुत्सित कलंक हमने उनके उपासक एवं भक्त होने का दावा करते हुये लगाया जोकि एक भारी भूल थी फिर भी हमने इसे गौरवपूर्ण कृत्य समझा। कैसी बिडम्वना है।

सौभाग्य कहिए कि महर्षि दयानन्द द्वारा चेताये जाने पर हमने इतिहास तथा साहित्य की इस भयंकर भूल का संशोधन किया। सत्यार्थ प्रकाश में महर्षि ने इस सन्दर्भ में लिखा है—'श्री कृष्ण का चरित्र महाभारत में अत्युत्तम है। स्वामी जी ने योगीराज कृष्ण को आप्त पुरुषों की कोटि में गिनकर हमारी आंखें खोल दीं तथा उनके पद-चिन्हों पर चलने की प्रेरणा दें भारतीयों के लिये प्रगति का नवीन पथ प्रशस्त किया।

पतन काल के साहित्य में श्री कृष्ण के चरित्र पर थोपे गए सभी दोषों के मूल में उनका नारी के प्रति दृष्टिकोण क्या था—यह न समझने की भूल है। कोई उनकी सोलह हजार रानियां गिना रहा है तो कोई नारी-नारी भोग्या जैसे वाम मार्गी सिद्धान्त का आश्रय कर उन्हें प्रत्येक गोपी से रमण करने वाला प्रकट कर रहा है। यदि केवल उस विकृत साहित्य का ही अध्ययन किया जाए तो निःसन्देह कोई भी अध्येता श्री कृष्ण के प्रति एक घिनौनी धारणा बनाने पर बाधित हो सकता है। उन्हें इस युग के युवकों से—जो राह चलती युवतियों से छेड़-छाड़ या फिकराकशी करते हैं, जो उनकी चुन्नी खींच सकते हैं—किसी प्रकार भी कम नहीं दिखाया गया। चीर हरण लीला, जल क्रीड़ा आदि संदर्भ इसी धारणा की पुष्टि करते हैं किन्तु तथ्य इसके सर्वथा विपरीत हैं।

कोई व्यक्ति जितना विलासी एवं इन्द्रियों का दास हो उसकी नारी जाति के प्रति भावना उतनी ही हीन होती हैं। इसके विपरीत ब्रह्मचर्य का साधक नारी को अधिकाधिक सम्मान दृष्टि से देखता है। ब्रह्मचर्य के प्रति योगीराज श्री कृष्ण की सुदृढ़ निष्ठा इसी से व्यक्त है कि वे गृहस्थ होते हुये भी बारह वर्ष तक ब्रह्मचर्य वृत का पालन करने में समर्थ हो सके, कहां चरित्र की यह दुर्धर्ष ऊंचाई और कहां चीर हरण लीला जैसा छिछोरापन ? निश्चय ही इतिहास के तात्विक अध्ययन के अभाव में ये सब घातक परिणाम हमें देखने को मिले।

यह कहना भी भ्रम के अतिरिक्त कुछ न होगा कि श्री कृष्ण अपनी प्रौढ़ावस्था में समझ गये होगे किन्तु किशोर एवं यौवन काल में उनके विषय में उल्लिखित गोपी संगम आदि प्रामाणिक हैं। वास्तव में किशोरावस्था में ऐसा जीवन व्यतीत करने वाला व्यक्ति आगे चलकर कभी भी एक पत्नीव्रती संयमी व ब्रह्मचारी नही रह सकता। उनका परवर्ती संयत जीवन ही उनके पूर्ववर्ती जीवन की प्रणाली का प्रत्यक्ष प्रमाण है। तथ्यत: दुर्बल चरित्र का कोई व्यक्ति आज तक उन्नति के शिखर पर आरूढ़ नहीं हो सका, यह एक इतिहास सम्मत तथ्य है जिसके विकल्प श्री कृष्ण जी महाराज भी नहीं हैं जो कि अपने जीवन काल में इतने सम्मानित एवं पूजार्ह स्वीकार किये गये।

वस्तुत: श्री कृष्ण नारी जाति के प्रति सम्मान जनक दृष्टिकोण रखते थे। वे एक अच्छे पुत्र थे, उन्होंने अपनी माता देवकी के अपमान का प्रतिशोध लिया। भाई के रूप में भी वे महान् थे। अपनी बहिन सुभद्रा के विवाह के प्रसंग में थोथे मानापमान के भाव को तिलांजलि देकर उन्होंने वीरवर अर्जुन को उसका पाणिग्रहण कराया। पति के रूप में वे पूर्ण निष्ठावान थे। देवी रुक्मिणी की भावनाओं का उन्होंने सच्चा सम्मान किया। पुन: नारी समागम का उच्चतम लक्ष्य सन्तानोत्पादन मान कर प्रद्युम्न जैसे वीर पुत्र को जन्म दिया। नारी का अपमान उन्हें कदापि सह्य नहीं था। देवी द्रौपदी को दु:शासन द्वारा भरी सभा में अपमानित किये जाने पर उसके सम्मान का रक्षण इस प्रसंग में संवरण न करना होगा। सर्व प्रकारेण श्री कृष्ण ने नारी जाति की मान मर्यादा को संरक्षण प्रदान करने के लिए प्रयत्न संघर्ष व युद्ध किये। किन्तु जिस प्रकार विपरीत भाव लेकर हमने उनके व अपने जीवन के रस में विष घोल लिया यह एक करुण कथा हैं। स्वयं नारी जाति ने कृष्ण चरित्र को पतन की ओर ले जाने में गर्हित भाग लिया हैं।

वर्तमान परिवेश में श्री कृष्ण जेसे उपकारी के सही स्वरूप को समझकर उन के पद्-चिन्हों पर चलने की प्रतिज्ञा करना ही उनका जन्म दिवस मनाने का सबसे उत्तम ढंग है

नीति के नेता श्री कृष्ण

(ले०—श्री डा० सूर्यदेव जी शर्मा साहित्यलंकार, एम० ए० डी० लिट् अजमेर)

(छप्पय छन्दः)

(१)

भारत के भर्तार, नीति के नेता नागर ।
अद्वितीय अवतार, अमित उपमा के आगर ।
श्रुति-संसृति के सार, सतत सुखमा के सागर ।
अविचल अगम उदार, लोक उद्यान-उजागर ।।
अरि दुष्ट दक्ष, दहन के लिये, पावक पुंज प्रमान थे ।
श्रुति धर्म, उधारन के लिये, श्री कृष्ण सुमहाय थे ।।

(२)

था अधर्म का राज्य, अनय, अन्याय बढ़ा था ।
भारत का साम्राज्य, नाश के निकट खड़ा था ।।
भारत वासी हंस, पाप के पंक पड़ा था ।।
दंश-वंश-अवतंस, कंस कुप्रशंस कड़ा था ।।
जब पापाधिकं बढ़ने लगे, कैसे विपत्ति वितान थे ।
तब भारत-भू उर में उगे, श्री कृष्ण सुमहान थे ।।

(३)

था दुर्योधन दुष्ट, न्याय का नाम मिटाया ।
किया पाप को पुष्ट, फूट का फाट बढ़ाया ।।
धर्मराज थे रुष्ट, बड़ी पापों की काया ।
कौरव दल का कुष्ट, उभर जब ऊपर आया ।।
तब युद्ध महाभारत रचा, दानव दल को दल दिया ।
जय धर्म घोष जग में जचा, सत्य न्याय पर बल दिया ।।

(४)

किया कृष्ण ! कल्याण, दुष्ट दल दकने वाले ।
अहो ! धीरता-खान, खलों को खलने वाले ।
योगी योग निधान, दिव्य पथ चलने वाले ।
राजनीति उद्यान, सफल फल फलने वाले ।
शुभ कर्म योग का देश को, पुण्य पाठ पावन दिया ।
देकर गीता सन्देश को ज्ञान, योग ज्ञापन किया ।।

★ अवतार एकदेशी जीव का ही होता है सर्व व्यापक भगवान् का नहीं ।

आर्य समाज नंगल टाऊनशिप

श्रावणी उपाकर्म

(वेद सप्ताह)

आपके अपने आर्य समाज मन्दिर, नंगल टाऊनशिप में श्रावणी उपाकर्म (वेद सप्ताह) इस वर्ष २१ अगस्त १९७५ को (बृहस्पतिवार) से ६१ अगस्त (रविवार) तक मनाया जाएगा। कार्यक्रम निम्नलिखित होगा।

★ सामवेद यज्ञ ★

नित्य प्रात; –

३—०० से ७—०० बजे तक, यज्ञ (ब्रह्मा महात्मा दयानन्द जी, देहरादून, निवासी

७—०० से ७—३० बजे तक वेदोपदेश ,,

नित्य रात्रि—

८—०० से ८-३० वजे तक, भजन श्री तुलसी देव जी नई दिल्ली)

८—३० से ९—३० बजे तक, वेदोपदेश (महात्मा दयानन्द जी)।

卐 विशेष कार्यक्रम 卐

२४ अगस्त, रविवार—बच्चों का यज्ञोपवीत संस्कार होगा)

प्रात:—७—३० से ९ बजे तक, यज्ञ।

९ से ९—३० बजे तक भजन तुलसीदेव जी नई दिल्ली

९—३० से १०—१५ वजे तक वेदोपदेश (महात्मा दयानन्द जी)

३० अगस्त, शनिवार—कृष्ण जन्माष्टमो

प्रात:—७—३० बजे से ९ बजे तक यज्ञ,

९ से ९—३० बजे तक भजन श्री तुलसोदेव जी नई दिल्ली)

९—३० से १०—१५ बचे तक वेदोपदेश स्वामी वेदानन्द जी।

१०—१५ से ११ बजे तक वेदोपदेश (महात्मा आनन्द स्वामी जी)

३१ अगस्त, रविवार—पूर्ण आहुति

प्रात:—७—३० से ९ बजे तक यज्ञ,

९ से १० बजे तक, यज्ञ की पूर्णाहुति तथा आशीर्वाद महात्मा दयानन्द जी द्वारा)

१० से १०—३० बजे तक भजन श्री तुलसी देव जी नई दिल्ली)

१०—३० से ११ बजे तक वेदोपदेश।

नोट—रात्रि को २४, ३० तथा ३१ अगस्त को भी ८ बजे से ९ बजे तक अन्य दिनों की भान्ति ऊपर लिखित कार्यक्रम होगा।

सभी धर्म प्रेमी बन्धुओं से प्रार्थना है कि इस शुभ अवसर पर मित्रों सम्बन्धियों सहित यथा पधार जर उत्सव की शौभा को बढ़ाएं तथा धर्म लाभ प्राप्त करें।

वेदपाल आर्य प्रधान, इन्द्रकुमार शर्मा मन्त्री

दिल्ली की आर्यसमाजों से निवेदन

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के विभाजन के फलस्वरूप आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली ने अपना कार्य विधिवत प्रारम्भ कर दिया है। सभा का कार्यालय आर्य समाज मन्दिर-१५-हनुमान रोड, नई दिल्ली में है। सभा द्वारा सुयोग्य उपदेशक महानुभावों की सेवाएं प्राप्त कर ली गई है। अत: आर्य समाजों से प्रार्थना है कि अपने क्षेत्र में प्रचारार्थ सभा को उक्त पते पर लिखें अथवा दूरभाष ३१०१५० पर सम्पर्क स्थापित करें।

सभा से सम्बन्धित आर्य समाजों से प्रार्थना है कि वह १९७३-७४ एवं १९७४-७५ का दशांश एवं वेद प्रचार की धन राशि सभा कार्यालय में शीघ्र भेजने की कृपा करें।

—सरदारी लाल वर्मा
सभा मन्त्री

सार्वदेशिक सभा के प्रधान द्वारा रोहतक में पंजाब सभा का कार्यालय बन्द करने का आदेश

श्री रामचन्द्र जी,

नमस्ते !

मुझे पता चला है कि आपने आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के नाम से सुभाष मार्ग, रोहतक पर कोई साइनबोर्डन लगा कर कार्यालय खोल दिया है और पंजाब सभा के नाम से हरियाणा की समाजों से पुरानी रसीद बुकों पर धन इकट्ठा कर रहे हैं। कृपया लौटती डाक से सभा कार्यालय को सूचित करें कि इस सूचना में कोई सच्चाई है या नहीं ।

यदि वास्तव में आपने ऐसा काम किया है तो इस पत्र के मिलते ही तुरन्त उसे बन्द कर दें, एवं अब तक जो धन इकट्ठा कर चुके हैं वह सार्वदेशिक कार्यालय में भेज दें। इस बारे में यह सूचित करना अत्यन्त आवश्यक है कि आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के विभाजन के पश्चात् आप हरियाणा, पंजाब की समाजों के किसी पद पर नियुक्त नहीं किये गये हैं। इसलिये आप का यह कार्य अनैतिक एवं अवांछनीय है और सभा को इस विषय में उचित कार्यवाही करनी पड़ेगी ।

आपके लिये अभीष्ट होगा होगा कि आपने अब तक जो धन इस प्रकार समाजों से प्राप्त किया है उसे सार्वदेशिक सभा के कार्यालय में जमा कराते हुये भविष्य में ऐसा करना तुरन्त बन्द कर दें ।

भवदीय

रामगोपाल जी शालवाले प्रधान,

सार्वदेशिक सभा

कवित्त

(ले०—कविराज श्री छाज्जूराम शर्मा पुरोहित आर्य समाज अड्डा होशियारपुर जालन्धर)

यदि कृष्ण भारत में न आते ।

कृष्ण जो न आते पापी कंस को पछाड़ कर,
वसुदेव देवकी को जेल से छुड़ाता कौन ।

सच्ची मित्रता निभाय रंक से राजा बनाय,
दीन सुदामा की हीनता को मिटाता कौन ।।

दुःशासन, दुर्योधन, शिशुपाल आततायों—
की करनी का फल उनको चखाता कौन ।।

'छाजूराम' पार्थ के बहाने महाभारत में,
गीता के सुखद सन्देश को सुनाता कौन ।।

———

श्री कृष्ण-चरितामृत

(ले. श्री पिण्डी दास ज्ञानी अमृतसर)

आज वि. सम्वत् २०३२ से ५२०० वर्ष पूर्व द्वापर तथा कलियुग की सन्धि-बेला में, मथुरा-नरेश, आततायी कंस के कारागार में, आजीवन बन्दी दम्पत्ति वसुदेव-देवकी की काल-कोठरी में भाद्रपद कृष्णाष्टमी की अर्द्ध-रात्रि के समय, एक विचित्र शिशुका प्रादुर्भाव हुआ, जिस के जन्म लेते ही माता-पिता की दृढ़ साङ्कलें मानो अनायास ही छिन्न-भिन्न हो गईं, प्रहरियों पर घोर निन्दा व्याप्त हो गई और वसुदेव के हृदय में, घनघोर-घटाच्छादित नभोमण्डल के नीचे, तमोमयी शर्वरीके समय, बाढ़-ग्रस्त कालिन्दी (यमुना) की उत्ताल तरङ्गों को चीरते हुये अपने नव-जात विचित्र शिशु को, नदी के परले-पार, गोकुल ग्राम-निवासी अपने परम-स्नेही गोप-बन्धु नन्द के गृह में सद्योत्पन्न उस की कन्या के साथ परिवर्तित कर लाने का अदम्य उत्साह जाग उठा। यही अद्भुत, अनूठा, अनोखा विचित्र-शिशु कालान्तर में द्वारकाधीश योगिराज, यौगेश्वर-सोलह-कला सम्पूर्ण, आनंद-कन्द भगवान् श्रीकृष्ण के नाम से भारत के आकाश-मण्डल पर देदीप्यमान् नवोदित नक्षत्र की भान्ति चमका, दशों दिशाओं को अपने अद्वितीय आलोक से आलोकित किया और देश के इतिहास एवं राष्ट्रीय ख्याति को समुज्जवल करने वाला अद्वितीय नर-रत्न सिद्ध हुआ।

आपके जाज्वल्यमान जीवन अथवा चारू-चरित्र की अनेकानेक घटनाएं प्रतिदिन कथा वाचक विद्वानों के मुखारविन्द से श्रवण करने का सौभाग्य प्राप्त करसे सुतरां हम अपने नीः रस-ऐ मानव-जीवनों में अलौकिक आल्हाद एवं रमणीय-रस की छबीली-छटा के असीम आनन्द की अनूठी अनुभूति करके अपने सौभाग्य की श्लाघा करते अघाते नहीं हैं। इस अद्वितीय प्रेम-रस से आप्लावित हमारे मन-मन्दिरों में यह तथ्य दृढ़ता-पूर्वक अङ्कित हो जाता है कि नन्द-नन्दन श्रीकृष्ण का सर्वांग सम्पूर्ण लीला-मय जीवन मिश्री की एक डली है, गुड़ की एक भेली है जिसका रसास्वादन किसी भी समय किसी भी परिस्थिति में, किसी भी दशा और किसी भी दिशा में किया जाए, वह मधुसा मीठा मधुर प्रतीत होगा।

समस्त संसार के महापुरुषों की जीवनियों का गम्भीर अध्ययन करने पर यह तथ्य सुस्पष्ट दृष्टिगोचर हो जाता है कि किसी महानुभाव में कोई एक गुण विद्यमान हैं, किसी में कोई दूसरा कोई विविध-विद्याओं में पारङ्गत है, किसी ने योगानुष्ठान एवं तपच्चर्या द्वारा अष्ट-सिद्धिओं और नव-निधियों की उपलब्धि के फलस्वरूप भगवत्प्राप्ति कर ली है, किसी के वीर्य्य, शौर्य और धैर्य का उशङ्गा चहुंदिश बज रहा हैं, कोई 'वसुधैव कुटुम्बकम के मन्त्र के निरन्तर क्रियात्मक जपानुष्ठान द्वारा विश्वबन्धुत्वका मूर्तिमान प्रतीक बन पाया है, किसी ने यज्ञ-याग के पूर्ण प्रताप भे ख्याति उपलब्ध कर ली

ली है, किसी ने दीन-हीन प्रभाव-ग्रस्त मानव समुदायों की निस्स्वार्थ सेवा-शुश्रूषा करके उच्चतम पद प्राप्त कर लिया है—परन्तु भगवान् श्रीकृष्ण चन्द्र की विशेषता यह है कि आप सर्वगुण निधान समस्त गुणागारु समुच्चय गुण सम्पन्न और सफल प्रतिष्ठा संयुक्त थे। यही कारण है कि जगती, तलकी प्राचीनतम आर्य जाति ने, जोकि सर्गारम्भ से ही वीर पूजा में अग्रगण्य स्वीकार की जाती चली आ रही है। जितनी श्रद्धा भक्ति और जितना प्रेम-प्यार आज तक समस्त वोर-शिरोमणियों, युद्ध-विशारद महानुभावों, विश्व विजेता महारथियों, शास्त्र-रचयिता ऋषि मुनियों. विज्ञान वेता विद्वानों, एवं अध्वर प्रवीण याजकों को अर्पित किया है, उतना और कदाचित् उससे भी कहीं अधिक हृदय तथा मस्तिष्क की विलमतम भावनाएं एकांकी भगवान् श्रीकृष्ण चन्द्र के चारूचरणारविन्द पर न्यौछावर करके अपने आपको धन्य धन्य माना है।

यों तो भगवान् का जीवन चरित्र कूर्म्म, पद्म, ब्रह्म. ब्रह्मवैवर्त, भागवत, वामन, वायु, विष्णु और स्कन्द आदि पुराणों में सविस्तर अङ्कित है। परन्तु उन पुराण-लेखकों ने अपनी श्रृङ्गार-रस-प्रधान मनोवृत्ति, भद्दी-भाषा-भाव-भरित अश्लील-शैली के अनुरूप ऐसे भद्दे—भौंडे-भयङ्कर ढंग से महाराज जी की परम पुनीत जीवन-लीलाओं को अति रञ्जित एवं अत्यन्त वीभत्स रूप में प्रस्तुत किया है कि पढ़ने-सुनने वालों की शर्म को भी मारे लाज के अपना मुंह छिपाने पर विवश होना पड़ता है। उनकी स्वाभाविक हया को भी पानी-पानी होना पड़ता है। विद्वेषी, विदेशी, विधर्मी अपने हार्दिक वैर-विरोध-की कुत्सित भावनाओं की अभिव्यक्ति के लिये अश्लीलता—स्वरूप उक्त नंगी पौराणिक कथाओं को मूढ़-मूर्ख,—अपढ़ जन-साधारण में प्रस्तुत करके विश्व भर की श्रेष्ठतम, सभ्यतम, प्राचीनतम आर्य्य जाति और उच्चतम आर्य धर्म का मुंह चिढ़ाने का दुस्साहस करते देखे जाते हैं।

अहर्निश श्रीकृष्ण भक्ति का दम भरने और वास्तव में दम्भ करने वाले भोले-भक्तों ने भगवान् की स्तुतिका बहाना बनाकर उन्हें "चौर जार शिखामणि" की बहुमूल्य 'उपाधि से विभूषि करते तनिक भी लज्जा का अनुभव नहीं किया। पूर्ण ब्रह्मचारी एक पत्नी-वृत देवकीनन्दन की १६१०९ पत्निओं, प्रेमिकाओं, गोपियों, आसक्त ललनाओं की एक दीर्घ सूची निर्मित करके इसे भगवान् वासुदेव के साथ दृढ़तापूर्वक चिपका दिया है, भागवत के पौराणिक आख्यानों में भगवान् श्रीकृष्ण की व्रजबालाओं, गोप वधुओं ग्वाल ललनाओं के साथ रास-लीला, मान-लीला, कानन-लीला, कृष्ण-लीला, वन-विहार-लीला, रनि-लीला, केलि-लीला, प्रेम-लीला, चीर-हरण-लीला, आंख-मिचौनी-लीला, कुब्जा-समागम-लीला आदि अनेकों पतन-प्रसङ्ग अङ्कित किये हुए हैं। जबकि वास्तविकता यह है कि अपनी एक-मात्र अर्द्धांगिनी भगवती रूक्मिणी के साथ पाणिग्रहण के अनन्तर भी भगवान् श्रीकृष्ण ने, हिमाचल-पर्वत—पार्श्व में निवास करके बारह वर्ष का अखण्ड ब्रह्मचर्य-वृत पूर्ण किया था। आपकी पूज्य साम्राज्ञी रुक्मिणी भी इस घोर-वृत पालन में बारह ही वर्ष की सुदीर्घ कालन्धि के लिये निरन्तर आपके साथ ही तप-मग्न रही थीं।

आचार्य-द्रोण-पुत्र अश्वत्थामाने द्वारकापुरी में जाकर भगवान् श्रीकृष्ण से स्पर्धा करते हुए,

आपके अमोघ शस्त्र सुदर्शन चक्र'—की याचना कर डाली। भगवान् ने उठा ले जाने की अनुमति प्रदान करदी। उसे उठा ले जाना तो एक तरफ रहा, सारा बल लगा कर भी वह उसे हिला भी न सका। इस पर भगवान् ने उसे कहा—

ब्रह्मचर्य्यं महद्घोरं तीर्त्वा द्वादश वार्षिकम्।
हिमवत्पार्श्वमास्थाय योमया तपमार्जिता ।।३०।।
समान व्रतचारिण्यां रूक्मिण्यांयोऽन्वजायत ।
सनत्कुमारस्तेजस्वी प्रद्युम्नोनाम मे सुतः ।।३१।।
तेनाप्येतन्महद् दिव्यं चक्रवप्रतिमं रणो ।
न प्राथिसमभून्मूढ यदिदं प्राथित त्वया ।।३२।।

(महाभारत सौप्तिक पर्व अध्याय १२)

अर्थात्—'मूढ़ मानव' मैंने बारह वर्ष तक घोर ब्रह्मचर्य—वृत का पालन करते हुए हिमालय की घाटी में रह कर बड़ी भारी तपस्या द्वारा, जिसे प्राप्त किया था, मेरे समान ही ब्रह्मचर्य्य-वृत का पालन करने वाली रुक्मिणी के गर्भ से जिसका जन्म हुआ था, जिसके रूप में तेजस्वी सनत्कुमार ही मानो मेरे यहां प्रादूर्भूत हुए हैं, वह प्रद्युम्न नामी मेरा पुत्र है। रणभूमि में जिसकी कोई तुलना नहीं है, मेरे इस दिव्य चक्र को, उस प्रद्युम्न ने भी कभी नहीं मांगा था, जिसकी मांग आज तुमने करदी है।'

परन्तु भ्रष्ट तान्त्रिक मनोवृत्ति के इन पौराणिक कथाकारों ने राधा नाम की गोप-ललना को, जोकि श्रीकृष्ण जी की पूज्या माता यशोदा के सहोदर भाई 'रायाण' नामी गोपकी पाणिग्रहीता पत्नी और अतः सम्बन्ध में उनकी मामी लगती थी, श्रीकृष्ण महाराज के साथ प्रेयसी, प्रेमिका अथवा पत्नी रूप में ऐसा चिपका रखा है कि जहां देश-विदेश में 'राधा कृष्ण' के लाखों मन्दिर खड़े हैं, वहां रुक्मिणी-कृष्ण का एक भी नहीं (प्रभास क्षेत्र का निर्जन स्थान स्थित मन्दिर अपवाद मात्र है) —लेखक

स्मरणीय है कि श्रीमद्भागत 'महापुरण' में कहीं पण 'रा' और 'धा' इन दोनों अक्षरों का उल्लेख तक नहीं। यह तो कवि जयदेव की 'कृपाका' दुष्फल है, जिसने अपने काव्य 'गीत—गोविन्द' में राधा—कृष्ण की कल्पित, मनगढ़न्त, भ्रामिक लीलाओं को गन्दे-से-गन्दे शब्दों का आवरण पहिनाने में ही अपने कवित्व-कौशल का महत्व समझा है। वह संस्कृत का पण्डित और उच्चकोटि का कवि था। 'गीत गोविन्द' के श्रृङ्गार-रस-पूरित, सुन्दर-सुललित-संस्कृत में आबद्ध छन्द आज भी कतिपय मन्दिरों में विविध वाद्य—वादन के सस्वर सुरीले आलापों के साथ तथा-कथित भोले-भ्रमित-भक्त जन गा-गा कर झूमते और झूम-झूमकर गाते हैं और मुग्ध श्रोतागण भी ताल पर सिर हिलाते नाचते-गाते और मानो आनन्द-विभोर-से होते प्रतीत होते हैं।

भेड़ वेषधारी भेड़िये जयदेव कवि ने और भागवतकार ने भगवान् श्रीकृष्ण को जिस घृणित वीभत्स और अश्लील रूप में जनता जनार्दन के समक्ष-प्रस्तुत करने की धृष्टता की उसकी जितनी भी निन्दा की जाये, थोड़ी है। परन्तु आर्य समाज के प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती ने सत्यार्थ प्रकाश के ग्यारहवें समुल्लास में लिखा—"देखो! श्रीकृष्ण जी का इतिहास महाभारत में अत्युत्तम है। उनका गुण-कर्म-स्वभाव और चरित्र आप्त पुरुषों के सदृश है, जिसमें कोई अधर्म का आचरण श्रीकृष्ण जी ने जन्म से मरण पर्य्यन्त बुरा काम कुछ भी किया हो ऐसा नहीं लिखा और इस भागवत वाले ने अनुचित मनमाने दोष लगाये है—दूध, दही, मक्खन आदि की चोरी लगाई, और कुब्जा दासी

से समागम, परस्त्रियों से रासमण्डल में क्रीड़ा आदि मिथ्या दोष लगाये हैं। यह भागवत न होता तो श्री कृष्ण जी के सदृश महात्माओं की झूठी निन्दा क्योंकर होती।"

पुनः महर्षि ने 'शिक्षापत्री ध्वान्त निवारण' नामी अपनी पुस्तक में लिखा--"राधात्वनयारन्य गोपस्य स्त्रयासीन्न कृष्णास्य" अर्थात्—'राधा' तो 'अनय' नाम के गोप की स्त्री थी न कि कृष्ण की। फिर उन्होंने इस विवादास्पद विषय का दो-टूक फैसला देते हुए लिखा—

"कृष्णस्य रुक्मिण्येव स्त्री"

अर्थात्—श्री कृष्णकी रुक्मिणी ही एक मात्र स्त्री थी।

इसके अतिरिक्त 'कृष्णचरित्र' नामी ग्रन्थ के यशस्वी लेखक रचनाम धन्य श्री बङ्कमचन्द्र चट्टोपाध्याय ने निम्न निष्कर्ष निकाल कर महर्षि दयानन्द का स्पष्ट समर्थन और पुराण-कारों के मत का खुले शब्दों में खण्डन किया है। आपने लिखा—"महाभारत के मौलिक अंश से तो यही प्रमाणित होता है कि रुक्मिणी के सिवा श्री कृष्ण के और कोई स्त्री नहीं थी। रुक्मिणी की ही सन्तान राजगद्दी पर बैठी। और किसी के वंश का पता नहीं। इन कारणों से कृष्ण के एक से अधिक स्त्री होने में पूरा सन्देह है।" (कृष्ण चरित्र पृष्ठ २४३)

हमने महर्षि दयानन्द के लेखों से प्रेरणा प्राप्त करके महर्षि व्यास कृत महाभारत का आलोकन किया है और इस परिणाम पर पहुंच पाये हैं कि भगवान् श्रीकृष्ण नैष्ठिक ब्रह्मचारी थे, एक पत्नी-व्रत सद्गृहस्थ थे, अष्टांगयोग-युक्त योगेश्वर थे, आप्त गुणों से सम्पन्न महामानव थे। वे ब्राह्म एवं क्षात्र-विभूतियों के अनूठे प्रतीक होते हुए धर्मनीति तथा राजनीति के धुरन्धर-ज्ञाता थे, परिणामतः महाभारत के महासमर के एकांकी विजेता अशस्त्रपाणि, न्यस्तास्त्र, अयुध्यमान (उद्योग पर्व अध्याय ७ श्लोक १४) भगवान् श्रीकृष्ण ही थे। आप ही पाण्डवों के लिये कड़ी-से-कड़ी कठिनाई, बड़ी-से-बड़ी बदकिस्मती, और महान्-से-महान् मुसीबत में उद्धारक निस्तारक थे।

उदाहरणतः—(१) पाञ्चाल देश में द्रौपदी स्वयम्बर के अवसर पर असफल नृपवर्ग के घोर क्षोभ और भयंकर युद्ध से पाण्डवों का संरक्षण, (आदि पर्व० अ० १९९), (२) पाण्डवों को आधा राज्य दिलाना और इन्द्रप्रस्थ नगरी का निर्माण (आदि० २०६), (३) जरासन्ध वध योजना में सफलता (सभा० २४), (४) युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में ब्राह्मण-पग-प्रक्षालन का कार्य सम्भालना (सभा० ३५), (५) शिशुपाल-वध (सभा४ ४५), (६) बनवास के दिनों पाण्डवों से भेंट, दूरस्थ देश में युद्ध-रत होने और समय पर उपस्थित न होने के कारण युधिष्ठिर को द्यूत-क्रिया से न रोक सकने पर खेद-प्रकाश, द्रौपदी को सान्त्वना प्रदान (बन० १३), (७) काम्यक बन में दुर्वासा के क्रोध से पाण्डवों का त्राण (वन० २६३), (८) विराट सभा में भाषण और द्रुपद पुरोहित को कौरव सभा में प्रेषण (उद्योग० ६), (९) कौरवों-पाण्डवों (दानों पक्षों को) सहायता का वचन (उद्योग० ७), (१०) पाण्डवों में हीनभावना उत्पन्न करने वाले सञ्जय की भर्त्सना (उद्योग० १९), (११) सन्धि-दूत बनकर कौरव सभा में ओजस्वी भाषण और सन्धि का प्रयत्न (उद्योग ०५) (१२) दुर्योधन को फटकार (उद्योग १२९) (१३) दुर्योधन द्वारा भगवान् को बन्दी

बनाने का षड्यन्त्र और महाराज की सिंह गर्जन (उद्योग० १३०), (१४) अपनी बूआ कुन्ती से पाण्डवों के लिये सन्देश लेकर हस्तिनापुर से वापसी (उद्योग० १३२-१३३), (१५) कर्ण को पाण्डव-पक्ष में मिल जाने की प्रेरणा (उद्योग १४०), (१६) अर्जुन का विषाद, युद्ध से प्राङ्मुखता, गीतोपदेश द्वारा उसे युद्ध के लिये सन्नद्ध करना (भीष्म० २५-४२), (१७) नीतिमत्ता द्वारा भीष्म-वध (भीष्म० १०७), (१८) प्राग्ज्योतिषपुराधीश भगदत्त का संहार (द्रोणा० २९), (१९) उचित उपायों का अवलम्बन करके द्रोण-वध (द्रोणा० १९०), (२०) जयद्रथ-वध (द्रोणा० १४६), (२१) अश्वत्थामा द्वारा प्रक्षिप्त नारायणास्त्रका विफलीकरण(द्रोण० १९९), (२२) कर्ण का रथ-चक्र भूमि में धंसा, उसने धर्म की दुहाई दी. उसकी भर्त्सना और वध (कर्ण० ९१), (२३) युधिष्ठिर द्वारा गाण्डीवकी निन्दा, अपनी पूर्व प्रतिज्ञानुसार अर्जुन भ्रातृ-वध पर और तदनन्तर आत्म-हत्या पर उद्यत, उसे प्रतिज्ञा-हानि, युधिष्ठिर-वध से बचाकर दोनों भाइयों को गले मिलाना (कर्ण० ७०), (२४) शल्य का वध (शल्य० ७), (२५) इन्द्र-प्रदत्त अमोघ-शक्ति का कर्ण द्वारा घटोत्कच पर प्रहार कराकर अर्जुन की प्राण-रक्षा (द्रोणा० १८०), (२६) दुर्योधन संहार (शल्य० १८), (२७) अश्वत्थामा की चपलता पर उसे झाड़ और अपने घोर ब्रह्मचर्य व्रत का वर्णन (सौप्तिक० १२), (२८) पुत्रों की मृत्युजन्य शोक से पीड़ित धृतराष्ट्र द्वारा भीम की लोह-मूर्त्ति का भञ्जन और भगवान् श्रीकृष्ण द्वारा भीम की प्राण रक्षा (स्त्री० १२), (२९) युधिष्ठिर को भीष्म के पास ले जाकर धर्म-नीति, युद्ध-नीति राजनीति आदि का उपदेश दिलाना (शान्ति० ४६-५०), (३०) अश्वमेध-यज्ञ की युधिष्ठिर को प्रेरणा (आश्व० ७१), (३२) दुर्योधन के मारे जाने पर दीन-चित तथा चिन्ता-मग्न पाण्डवों को भगवान श्री कृष्ण ने समझाया—

नैष शक्योऽति शीघ्रास्त्रस्ते च सर्वे महारथाः ।
ऋजु युद्धेन विक्रान्ता हन्तुं युष्मामिराहवे ॥
यदि नैनं विधं जातु कुर्या जिह्ममहं रणे ।
कुतो वा विजयो भुयः कुतो राज्यं कुतो धनम् ॥६४॥
तेहि सर्वे महात्मानश्चत्वारो ऽतिरथो भुवि ।
न शक्यो धर्मतो हन्तुं लोकपालैरपि स्वयम् ॥६५॥
तथैवायं गदापाणि र्धार्तराष्ट्रो गतक्लमः ।
न शक्यो धर्मतो हन्तुं कालेनापीहदण्डिना ॥६६॥
न च वो हृदि कर्त्तव्यं यदिदं यातितो रिपुः ।
मिथ्यावध्योस्तथोपायैर्बहवः शत्रवोऽधिकाः ॥६७॥
(महा० शल्य० अध्याय ६१)

अर्थात्—यह दुर्योधन अत्यत्त शीघ्रतापूर्वक अस्त्र चलाने वाला था। अतः इसे कोई जीत नहीं सकता और ये भीष्म द्रोणा आदि महारथी भी बड़े पराक्रमी थे। उन्हें बिना माया-कौशल (उस्तादी) के धर्मानुकूल सरलतापूर्वक युद्ध के द्वारा आप लोग नहीं मार सकते थे। यह राजा दुर्योधन अथवा वे भीष्मादि सभी महा धनुर्धारी महारथो कभी सरल धर्मयुद्ध के द्वारा नहीं मारे जा सकते थे। आप लोगों का हित चाहते हुए मैंने ही बार-बार माया (बुद्धि) का प्रयोग करके अनेक उपायों के द्वारा युद्ध स्थल में उन सबका वध किया। यदि कदाचित युद्ध में माया कौशल पूर्ण कार्य नहीं करता तो फिर आपको विजय

कैसे प्राप्त होती, राज्य कैसे हाथ में आता और धन कैसे मिल सकता था? भीष्म, कर्ण, द्रोणा और भूरिश्रवा—ये चारों महामना इस भूतल पर अतिरथी के रूप में विख्यात थे। साक्षात् लोकपाल भी धर्मयुद्ध करके उन सबको नहीं मार सकते थे। यह गदाधारी धृतराष्ट्र पुत्र दुर्योधन भो युद्ध से थकता नहीं था, उसे दण्ड-धारी काल भी धर्मानुकूल युद्ध द्वारा नहीं मार सकता था। इस प्रकार जो ये शत्रु मारा गया है, इसके लिये तुम्हें अपने मन में विचार नहीं करना चाहिये। बहुतेरे अधिक शक्तिशाली शत्रु ना-ना प्रकार के उपायों और कूट-नीति के प्रयोयों द्वारा मारने के योग्य होते हैं।

पाठक वृन्द ! आइये ! नीति-निपुण नन्द-नन्दन भगवान् श्री कृष्ण जी के चारू चरित अथवा जाज्वल्यमान् जीवन से शिक्षा ग्रहण करते हुये झूठी दया, अकर्मण्यता रूप अहिंसा एवं भयावह भीरुता के तिलाञ्जली देकर धर्म ध्वंसकों, देश-द्रोहियों, राष्ट्र विरोधियों संस्कृति नाशकों, परम्परा द्वेषियों और अपनी आन-बान शान के शत्रुओं का यथा योग्य शासन करने का दृढ़ व्रत धारण करें। महा मानवों, युग प्रवर्त्तक महात्माओं के पद्-चिन्हों पर चलकर धर्म जाति राष्ट्र के अभ्युत्थान में प्रयत्नशील रहना ही उन वीरों की पूजा प्रतिष्ठा की उच्चतम उत्कृष्टतम शैली है। व्रतपति परमेश हमारी सर्वत्र सहायता करे।

शास्त्रार्थ

नयी दिल्ली—आर्य समाज आर्यपुरा सब्जी मण्डी की ओर से १५ सितम्बर से २१ सितम्बर तक शास्त्रार्थ का आयोजन किया गया है। प्रसिद्ध आर्य विद्वान पं० शान्ति प्रकाश जी शास्त्रार्थ महारथी ने सभी मतों और धर्मों के मानने वालों को किसी भी धार्मिक सामाजिक विषय पर शास्त्रार्थ करने के लिये निमन्त्रण दिया हैं।

उन्होंने कहा है कि वेदों में क्या है? आर्य समाज और सनातन धर्म ईश्वर और जैन मत सिख धर्म कितना वेदानुकूल है? मूर्तिपूजा क्यों हानिकारक है? आज के वैज्ञानिकों के समय वेदों का स्वरूप? वेद और इस्लाम आदि भी विषय पर शास्त्रार्थ करने की इच्छा रखने वाले विद्वान् धर्म प्रेमी सज्जन सादर आमन्त्रित है।

आपने कहा कि इसी सन्दर्भ में सभी मताव-लम्बियों से निवेदन है कि वे सत्य के निर्णय के लिये कटिबद्ध हो जाएं और अपने-अपने नाम पते शास्त्रार्थ का विषय आदि विवरण मन्त्री आर्य समाज, आर्य पुरा सब्जी मण्डी दिल्ली-७ के नाम पर एक सितम्वर तक अवश्य भेज दें।

—ब्र० राजसिंह आर्य
मन्त्री

श्री कृष्ण चन्द्र क्या थे

(ले०—सुशीला आर्या एम० ए० पी० एच० डी० चरखी दादरी)

बतलाएं आप को हम, श्री कृष्ण चन्द्र क्या थे ।
अवतार तो नही थे, सच कितने देवता थे ॥
दुष्टो के साथ टक्कर, लेते उठा के चक्कर ।
परदीन और दुःखी के वे दर्द की दवा थे ॥

भारत की आन थे वे, गौओं के प्राण थे ।
निर्बल निराश्रितों का बन आये आसरा थे ॥
वे कर्म के धनी थे, धर्मात्मा गुणी थे ।
वे टूटते दिलों की शक्ति थे हौंसला थे ॥

वे खाण्ड की थे रोटी, तोड़ी जिधर से मीठी ।
सुन मुग्ध हो जिसे सब ऐसी मधुर कथा थे ॥
ले जन्म से मरण तक, कोई किया न पातक ।
कहते ऋषि दयानन्द 'वे आप्त थे महा थे' ॥

दुष्टों का काल थे वे, भारत का भारत थे वे ।
अज्ञान की निशा में, नव ज्योति की प्रभा थे ॥
वे स्वस्थ थे सुमति थे, नीति निपुण अति थे ।
होती विजय वहीं पर श्री कृष्ण जी जहां थे ॥

अति खेद इसका हम को, न समझा हम ने उनको ।
परिणाम सामने हैं, हम ठोकरें हैं खाते ॥
लो वृत यह आज धर ले, गुण उनके ग्रहण करलें ।
जन्माष्टमी सफल हो, प्रतिवर्ष जो मानते ॥

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का वेद प्रचार बिभाग सक्रिय

सभा के पूज्य उपदेशक प्रचारक महानुभावों द्वारा निम्नलिखित स्थानों पर वेद प्रचार सप्ताह सम्पन्न वातावरण उत्साह पूर्ण

★ श्री पं० निरञ्जनदेव जी तथा श्री हितकर मण्डली ✻

२ से ७ अगस्त आ. स. बस्ती गुजां जालन्धर। ८ से १४ अगस्त आ. स. जण्डियाला गुरु। १५ से २१ अगस्त आ. स. दीनानगर।

卐 श्री पं. हरिदत्त जी शास्त्री तथा श्री पं. विद्याभूषण मण्डली ★

८ से १४ अगस्त आ. स. राजपुरा। १५ से २१ अगस्त आ. स. संगरूर।

★ श्री पं. मथुरादास जी 卐

१ से १० अगस्त आ. स. फगवाड़ा। ११ से १७ अगस्त आ. स. फिल्लौर। १८ से २४ अगस्त आ. स. भरवाईं।

— श्री पं० सत्यव्रत जी तथा श्री पं. सत्यपाल जी —

४ से १० अगस्त आ. स. फरीदकोट। ११ से १४ अगस्त आ. स. कैनाल कालोनी फिरोजपुर। १५ से २१ अगस्त आ. स. राणी का तालाब फिरोजपुर।

— श्री स्वामी सुकर्मानन्द जी तथा श्री सत्यवीर जी स्नेही —

२८ जुलाई से ३ अगस्त आ. स. माडल टाऊन अमृतसर। ४ अगस्त से १० अगस्त आ. स. मजीठा। ११ अगस्त से १७ अगस्त आ. स. फतहगढ चूड़ियां। १८ से २४ अगस्त आ. स. सुलतानपुर लोधी।

— श्री पं. धर्मपाल जी तथा पं. महेन्द्रपाल जी —

५ से १० अगस्त आर्य हा० सै० स्कूल दीनानगर। ११ से १७ अगस्त आ. स. बटाला। १८ से २४ अगस्त आ. स. फील्डगंज लधियाना।

सर्वत्र आर्य समाज के बन्धु पूरा-पूरा सहयोग दे रहे हैं और वेद प्रचरार्थ श्रद्धापूर्वक धन भी भेंट कर रहे हैं। पूज्य विद्वानों तथा आर्य भाइयों का हार्दिक धन्यवाद किया।

—ओ३म् प्रकाश आर्य कार्यालयाध्यक्ष

राजनीतिज्ञ भगवान् कृष्ण

(ले०श्री पं. सत्यप्रिय जी शास्त्री एम. ए. हिसार)

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने श्री कृष्ण जी के सम्बन्ध में जहां जन्म से लेकर मरण पर्यन्त कोई पाप नहीं किया कहकर उनकी उच्चतम नैतिकता को प्रकट किया, वहां यदि श्रीकृष्ण के के समान कोई होता तो इनके धुर्रे उड़ाकर रख देता' इन शब्दों में भगवान् कृष्ण के शौर्य युद्ध कौशल एवं नीतिमत्ता का प्रतिपादन किया।

महाभारत से एक हजार वर्ष पूर्व भारत का पतन आरम्भ हो चुका था, महाभारत तो हमारे पतन की चरम सीमा थी। सभी वैदिक मर्यादाएं छिन्न-भिन्न हो गई थी, ब्राह्मणों को वेतन-भोगी अध्यापक माना जाता था जैसे आचार्य द्रोण, जन्म के आधार पर भेद-भाव के अंकुर उग आए थे जैसे कर्ण की वीर होने पर भी राजकुलोत्पन्न न होने से अर्जुन की प्रतिद्वन्द्विता से वञ्चित किया गया, एकलव्य के राजकुमार न होने मात्र से ही आचार्य द्रोण का शिक्षा देने से इन्कार कर देना। क्षत्रियादि उच्च घरानों में नैतिकता की सीमाएं टूट गई थीं। इस दृष्टि से कौरव एवं पाण्डवों में अन्तर नहीं था। बल्कि पाण्डव हल्के ही थे। ऐसे समय में केवल कृष्ण ही ऐसा पुरुष था, जिसने वैदिक मर्यादाओं का पालन किया। वैदिक आश्रम व्यवस्था की मूर्त रूप देने का प्रयास किया, श्रीकृष्ण जी ने राजनीनिक दृष्टि से उस समय राष्ट्र को जो कल्याण किया, देश उसे कभी भूला न सकेगा। यदि यह महापुरुष न होता तो भारत आज से पांच हजार वर्ष पूर्व ही विदेशों का दास बन गया होता। इस दूरदर्शी राजनीतिज्ञ ने अपने अनुपम कौशल से उस गुलामी को चार हजार वर्ष पीछे धकेल दिया, विदेशी लोग कौरवों के आश्रय से देश पर हावी होना चाहते थे लेकिन पाण्डव उसके विरोधी थे, इसी कारण श्रीकृष्ण ने पाण्डवों का पक्ष लेकर देश की सीमाओं को सुरक्षित किया, इसके अतिरिक्त देश उस समय अनेक खण्डों में विभक्त था, देश का कोई एक प्रबल केन्द्र न था, अतः श्रीकृष्ण ने अपनी सूझ-बूझ से देश को एक सशक्त तथा देश की परम्पराओं का रक्षक केन्द्रीय संगठन प्रदान किया जिस का प्रमुख युधिष्ठिर को बनाया, श्रीकृष्ण की नीति उन्हीं के शब्दों में सुनिये गीता में कहते हैं :—

'ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्'

अर्थात्—मेरे साथ जो जैसा व्यवहार करते हैं, मैं भी उनसे वैसा ही व्यवहार करता हूं, इसी को संस्कृत के कवियों ने यों कहा :—

शठे शाठ्यं समाचरेत।

मायाचारः मायया वर्तितव्यः साध्वाचारः साधुना प्रत्युपेय (किरात) वृजन्ति ते मूढधिया पराभवं भवन्ति मालाविषु येन मायाविन् (किरात)

अर्थात्—जैसे के साथ तैसा व्यवहार करो, अन्यथा पराजय का मुख देखना होगा। मुगलकाल में हमारी पराजय का मुख्य कारण उक्त राजनीति के मूलमन्त्र को भुलाना ही था, जब

कौरव दल के सभी प्रमुख महारथियों ने युद्ध-नियमों के विपरीत अभिमन्यु का वध किया तब श्री कृष्ण ने भी उनके साथ वैसा व्यवहार करके अद्भुत राजनीतिज्ञता का परिचय दिया। काल यवन के आक्रमण करने पर अन्य के माध्यम से उसे मरवा देना यह श्री कृष्ण की अद्भुत राजनैतिक सूझ-बूझ थी, क्योंकि राजनीतिक क्षेत्र में 'हारना ही अधर्म तथा जीतना' ही धर्म है, महर्षि दयानन्द सरस्वती ने भी सत्यार्थ प्रकाश में इसे लिखा है? जब श्री कृष्ण दुर्योधन की सभा में सन्धि का सन्देश लेकर गए और वहां अपनी तेजस्वी वक्तृता दी तब उपस्थितियों के मन श्री कृष्ण के पक्ष हो गये, परन्तु दुर्योधन जिद पर कायम था, अतः अपने दोष को छिपाने के लिये उसने श्री कृष्ण को पकड़ कर जेल बन्द करने की योजना बनाई, परन्तु श्री कृष्ण ने उस से पूर्व सभी प्रबन्ध कर लिया था। कृष्ण की सेना ने दुर्योधन के राज-दरबार को घेर लिया था, उसके प्रमुख स्थानों पर श्री कृष्ण के सेनानियों का आधिपत्य था, अतः दुर्योधन के मन्सूबे मन में ही रह गये, यह उनके अद्भुत राजनीतिज्ञ होने का प्रमाण है।

श्री कृष्ण के पश्चात् उनकी राजनीति को चाणक्य ने समझा था, अतः चन्द्रगुप्त के माध्यम से उसने भारत की सीमाओं की दीर्घ काल तक सुरक्षित कर दिया था, तत्पश्चात् मुगल काल में श्री कृष्ण की नीति को दक्षिण में छत्रपति शिवाजी ने और उत्तर में बन्दा वैरागी, हरिसिंह नलवा तथा राजा रणजीतसिंह ने समझकर चरितार्थ किया था, इस कारण इनको कभी पराजय का मुख नहीं देखना पड़ा था, और स्वतन्त्र भारत में यदि उस महापुरुष के मार्ग को किसी ने समझा तो अंश में समझा लोह पुरुष स० वल्लभ भाई पटेल ने, यही कारण था कि छः सौ रियासतों के विलीनी करण की समस्या चुटकी बजाते हल हो गई और संसार को पता भी न लगा, हां एक ने कूं चपट की तो तीन दिन में ही घुटने टेकने पर मजबूर कर दिया, जैसे कृष्ण ने युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ से पूर्व जरासन्ध को सीधा किया था।

स्वतन्त्र भारत के शासकों का कर्त्तव्य है श्री कृष्ण की राजनीति का गम्भीर अध्ययन करें तथा उनकी नीतियों पर चलते हुये देश को सुरक्षा एवं अभ्युदय के मार्ग पर चलावें। स्वतन्त्र भारत को श्री कृष्ण जन्माष्टमी का इससे उत्कृष्ट और क्या सन्देश हो सकेगा।

अग्ने नये सुपथा राये अस्मान्।

आर्यसमाज दीवानहाल में वेद प्रचार सप्ताह की तैयारियां

वेद प्रचार सप्ताह २१-८-७५ से ३०-८-७५ तक बड़े समारोह पूर्वक मनाया जा रहा है। इस अवसर पर प्रतिदिन २१ अगस्त से ३० अगस्त तक प्रातः ७ से ८-३० बजे तक यजुर्वेद पारायण यज्ञ होगा तथा प्रतिदिन सायंकाल ८ बजे से ९ बजे तक आर्य जगत् के प्रकाश विद्वान श्री पुरुषोत्तम एम. ए, २१ अगस्त से २४ अगस्त तक वेद कथा तथा २५ अगस्त से २९ अगस्त तक श्री अभिनिय भारती विद्यावाचस्पति जी भी वेद प्रवचन करेंगे।

३० अगस्त की पूर्णाहूति के पश्चात् श्री कृष्ण जन्माष्टमी का पर्व मनाया जाएगा।

मन्त्री—सूर्यदेव

श्री वीरेन्द्र जी सम्पादक तथा प्रकाशक द्वारा जयहिन्द प्रेस जालन्धर से मुद्रित, होकर आर्य मर्यादा कार्यालय गुरुदत्त भवन किशनपुरा चौक, आर्य प्रतिनिधि सभा जालन्धर, पंजाब से प्रकाशित हुआ।

साप्ताहिक आर्य मर्यादा
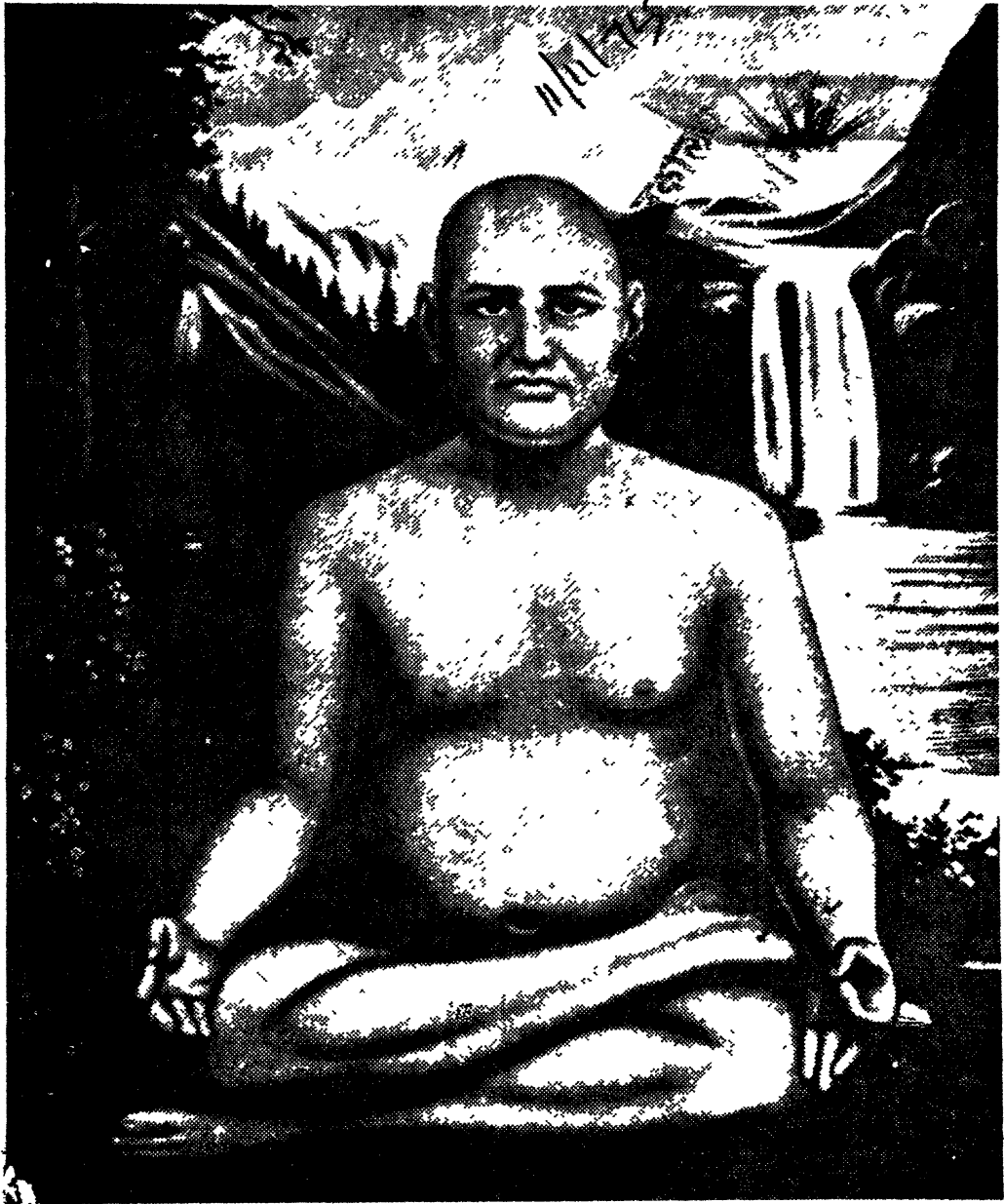
क्रांति के अग्रदूत महर्षि दयानन्द सरस्वती

सम्पादकीय

आओ ! फिर उस अग्नि को प्रज्जवलित करें

१८७५ में आर्य समाज की स्थापना हुई भारत की जनता ने उसका स्वागत किया, परंतु देश देशान्तर में भी उसकी प्रतिक्रिया कुछ इस ढंग की हुई कि जिसने मानव जाति में भी आशा की एक नई किरण उत्पन्न कर दी। इस लिए कुछ ही समय के पश्चात् अमेरिका के एक परोक्षदर्शी विद्वान श्री एन्ड्रयू जैक्सन डेविड ने अपने उद्धार इन शब्दों में प्रकट किए थे :-- "मुझे एक आग दिखाई देती है जो स्वंत्र फैली हुई है। असीम प्रेम की आग जो द्वेष को जलाने वाली हैं और प्रत्येक वस्तु को जला कर शुद्ध कर रही है। अमेरिका के शीतल मैदानों, अफ्रीका के विस्तृत भूखण्डों, एशिया के प्राचीन पर्वतों और योरुप के विशाल राज्यों पर मुझे इन सब को जलाने वाली और इकट्ठा करने वाली आग की ज्वलाएं दिखाई देती हैं इसका प्रादुर्भाव निम्नस्थ देश से हुआ है इसे अपने सुख और उत्थान के लिए मानव ने स्वयं प्रज्जवलित किया है। हिन्दु और मुसलमान इस प्रचण्ड आग को बुझाने के लिये चाहूं ओर वेग मे दौड़ी परन्तु यह आग ऐसे वेग से बढ़ती गई कि जिसका इसके उदीपक पुण्य की ज्योति से मुक्त उसके पुत्र स्वामी दयानन्द को भी भान न था। यह आग प्राचीन आर्य धर्म के पुनर्विचार के लिए आर्य समाज की भट्ठी से प्रज्जवलित की गई। ईसाईयों ने भी जिनके मत की आग और पवित्र दीप शिखा पहले पहल पूर्व से प्रकाशित हुई थी, ऐशिया की इस नई ज्योति (आर्य समाज) को बुझाने में हिन्दुओं और मुसलमानों का साथ दिया परन्तु यह दैव्य आग और भड़क उठी और स्वंत्र फैल गई। सम्पूर्ण दोषों का संकट नित्य ही शुद्ध करने वाली भट्ठी में जल कर भस्म हो जाएगा। रोग के स्थान पर अरोग्य, अन्ध विश्वास के स्थान पर बुद्धि और तर्क, पाप के स्थान पुण्य, अविद्या की जगह विद्या, द्वेष की जगह सौहार्द, वैर की जगह समता, दुःख की जगह सुख, अन्ध विश्वास और पाखण्डों की जगह परमेश्वर और प्रकृति का राज्य व्याप्त हो जाएगा। मैं इस आग को मांगलिक समझता हूं। जब यह अग्नि सुन्दर पृथ्वी को नवजीवन प्रदान करेगी तो सार्वजनिक सुख अभ्युदय और आनन्द का युग आरम्भ होगा।"

१०० वर्ष पहले आर्य समाज के विषय में जो कुछ कहा गया था पिछले एक शताब्दी का इतिहास उसकी बहुत कुछ सम्पुष्टि करता है। इसमें सन्देह नहीं कि महर्षि दयानन्द सरस्वती ने आर्यसमाज की स्थापना करके एक ऐसो अग्नि से प्रज्जवलित किया था। जिसमें सब प्रकार के पाखण्ड, अन्ध विश्वास, और संकीर्णता समाप्त हो जाए। इतिहास साक्षी है कि १०० वर्षों में

आर्य समाज ने बहुत कुछ किया है। आज हम देश में जो जागृति देख रहे हैं यह बहुत कुछ आर्य समाज के आन्दोलन का ही प्रभाव है। १०० वर्ष पहले इस देश की क्या हालत थी यदि हम उसे समझने का प्रयत्न करें तो उससे हमें कुछ अनुमान लग सकता है कि इन १०० वर्षों में आर्य समाज ने क्या कुछ किया है। परन्तु आज जब कि हम उसको एक शताब्दी समाप्त करके दूसरी में पदार्पण कर रहे हैं तो हमारे सामने अब प्रश्न यह नही उसने पिछले १०० वर्षों में क्या कुछ किया है अपितु यह कि भविष्य में क्या करना है। उसके विषय में किसी अंतिम परिणाम पर पहुंचने से पहले हमें यह भी जान लेना चाहिए कि जिस लक्ष्य को सामने रखकर महर्षि दयानन्द ने आर्य समाज रूपी अग्नि से प्रज्वलित किया था उसकी स्थापना करते हुए उन्होने अपने जो उद्‌गार प्रगट किए थे उसे "दयानन्द प्रकाश" ने निम्न शब्दों में प्रस्तुत किया है। आर्य समाज की स्थापना द्वारा वैदिक धर्म प्रचारक संगठन की नींव रखी गई थी सधर का कल्पतरु अरोपित एवं आर्य जाति के नूतन जीवन जागृति उत्पन्न करने का साधन उपस्थित किया गया था। आर्य मान मर्यादा तथा आर्य गौरव गरिमा की निमित्त एक सैनिक संघ संगठित किया एवं सर्व साधारण को सच्चा धर्म प्रदान करने के लिए सत्संग गंगा का स्त्रोत खुल गया और दीन दुखियों की सहायता केलिए सेवक समिति उपस्थित की गई।"

महर्षि दयानन्द स्वयं आर्य समाज के विषय में अपने उद्‌गार इन शब्दों में प्रगट किए थे।

"इसलिये जो उन्नति करना चाहो तो आर्य समाज के साथ मिल कर उस के उद्देश्यानुसार आचरण करना स्वीकार कीजिए। नहीं तो कुछ हाथ न लगेगा। जैसा आर्य समाज आर्यवर्त्त देश की उन्नति का कारण है वैसा दूसरा नहीं हो सकता"

यह स्पष्ट है कि महर्षि दयानन्द जो आर्य समाज से बहुत आशाएं लगाई थीं और इसमें सन्देह नहीं कि प्रारम्भ में वो आशाएं बहुत कम पूरी भी हुई थीं। इतना बड़ा संघटन कभी खड़ा न हो सकता यदि उसके पीछे महर्षि दयानन्द जैसी महान् आत्मा की प्रेरणा न होती और जैसा कि अमरीकी विद्वान् एन्ड्रयूजेक्सन डेविड ने लिखा है।

महर्षि ने एक अग्नि प्रज्जवलित की थी उसका प्रकाश चारों ओर फैला उसी का यह परिणाम है कि आज आर्य समाज को शाखाएं और उस की संस्थाए देश-देशान्तर में फैली हुई हैं।

परन्तु क्या अपने हृदयों पर हाथ रखकर यह कह सकते हैं कि जिस उद्देश्य को सामने रखकर महर्षि ने आर्य समाज की स्थापना की थी हम उसे पूरा कर रहे हैं? क्या हममें वो आर्यत्व हैं जिसके आधार पर आर्य समाज शक्तिशाली संस्था बन सकती है। निश्चय ही नहीं ऐसी अवस्था में यदि हम ऋषि दयानन्द के सच्चे शिष्य व अनुयायी, यदि हमारे हृदयोंमें उनकेलिये श्रद्धा और सम्मान है और हम अपने आपको आर्य कहते हैं तो क्या हमारा यह कर्त्तव्य नहीं हो जाता कि ऋषि निर्वाण दिवस पर उनके चरणों में अपनी श्रद्धांजलि भेंट करने से पहले हम सोचें कि हम कहीं अपने रास्ता से भटक तो नहीं गये। यदि भटक गये हैं तो क्या हमारे

आर्यत्व की यह मांग नहीं कि हम उसी मार्ग पर आ जाएं जो महर्षि दयानन्द ने हमें दिखाया था, दूसरे शब्दों में जो अग्नि उन्होंने प्रज्जवलित की थी और जो कुछ अब ठंडी पड रही है उसे फिर से तेज करने की आवश्यकता है। अतः आओ! आज के दिन हम सब मिलकर यह संकल्प करें कि आर्य समाज को एक महान् और शक्तिशाली संस्था बनाने का जो स्वप्न महर्षि ने कभी देखा था उसे साकार बनाने मे हम अपना तन मन, धन लगा देगे। यही सच्चे अर्थों मे उनके चरणो मे हमारी श्रद्धांजलि होगी।

—वीरेन्द्र

निर्वाण अंक के पश्चात् बलिदान अंक

आर्य मर्यादा का ऋषि निर्वाण अंक पाठकों के हाथ में है कुछ समय हुआ जब हमने यह घोषणा की थी कि हम प्रत्येक मास में एक अंक अपने पाठकों को अवश्य दिया करेंगे। वो हम देना भी चाहते थे परन्तु आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के कार्यालय की तालाबन्दी के कारण सारा रिकार्ड अन्दर बन्द हो गया है। इसलिये हमारी योजनाएं अब सम्भवतः पूरी न हो सकेंगी। फिर भी अपनी ओर से हम पूरा प्रयत्न करेंगे कि समय २ पर अपने पाठकों को विशेषाक के रूप में कोई न कोई उपहार देते रहें। अब हमारा अगला उपहार 'बलिदान अंक' के रूप में दिसम्बर के तीसरे सप्ताह में पाठकों के हाथ में पहुँचेगा। १९ दिसम्बर को श्री रामप्रसाद बिस्मिल का जन्म दिवस है और २३ दिसम्बर को श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज का बलिदान दिवस है। इस अंक को बलिदान अंक के रूप मेंप्रकाशित किया जावेगा। जिससे कि उन आर्य समाजियों की जीवन झांकी जनता के सामने आ सके जिन्होंने देश और धर्म के लिये अपने प्राण न्योछावर किये। आशा है सभी आर्य बन्धु आर्य समाजें इस अंक को अधिक से अधिक मंगवाकर जनता में आर्य समाज के बलिदानी वीरों की अमर कहानियों का प्रचार करने का प्रयत्न करेंगी।

— व्यवस्थापक

ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र, और सृष्टि-कर्त्ता हैं, उसी की उपासना करनी योग्य है।

"दयानन्द जीवन गाथा"

(प्रो. उत्तमचन्द जी शरर एम.ए.)

(१)

दयानन्द आनन्द दिया प्रभु ने, दयानन्द भये शुभ लक्षण धारी,
वेद सुधा बरसाए करि फुलवारी हिम की शुष्क कियारी।
ओ३म् ध्वजा कर में पकरी, अरु साथ में ले ली तर्क कटारी,
भारत के भ्रम भूत निवारण हेतु चले रण में ब्रह्मचारी।
काशी के पोप किरानी, कुरानी, पुराणी, उठे सुन गर्जना भारी,
शालिग्राम उठाये के लाये. मिलो पर हाय हार करारी।
मिथ्या कलंक के सागर से शिव शेष गणेश की नैय्या तारी,
ध्यान के मन के छोड़ दिये, जब डूबते देखा कृष्ण मुरारी।
अबला अछूत अनाथ की दीन दशा, विपदा महाराज ने टारी,
पोप पाखण्ड भगाय, नसाय, बनाय दियो जग ईश पुजारी।

(२)

देश दशा अवलोकन कर महाराज ने अमृत नीर बहाये,
जात अभिमान मसान पहुंचाये, समान अधिकार से मन हरषाये।
भाल विशाल पे भस्म रमाये फिरे ऋषि चहु दिश् वेद उठाये,
कम्पित गात सशंकित जात, कलंकित माथ अति घबराये।
अमृत दान दिया ऋषि ने, विष दुग्ध मिला कर पापी लाये,
हाय महा दुःख रीति है क्या विपरीत, करे हित कष्ट उठाये।
प्रेम की बाट के पथिक निराले राम ने प्रेम से बेर चबाये,
श्याम ने साग विदुर घर खाया, महर्षि ने बिष घूंट चढ़ाये।
प्यारे गुरु की प्रेम कथा कहुं क्या मुख से कुछ वरनी न जाये,
सन्तन की सुधि सन्त ही जाने, अल्प मति कवि क्या कुछ गाये।

(३)

भावी महा बलवान सदा निज मस्तक लेख न कोई टारे,
फूटे भारत भाग्य लिखे विधि में कहो किस विध कौन संवारे।
कष्ट दुःखदा पहुंची चहुं ओर ज्यों आग लगे जग सारे,
दर्शन हेतु चले मुनि नास्तिक गुरुदत्त तर्क के योधा मारे।
ध्यान समाधि में लीन ऋषि, अति व्याकुल देखे भक्त विचारे,
काल झुका कर जोरि पड़ा महाराज के चरण में सिर डारे।
कष्ट महा अति वेदना में गुरुदेव को देखा धीरज धारे,
भान हुआ मुनि नास्तिक को, करी ग्रन्थी, खले हिम नयन किवारे।
जीवन में जग जीत लियो, दुःख वारिधि से सब दुखिया तारे।
अन्त को सन्त, महन्त शान्त को त्याग अनन्त के लोक सिधारे।

आर्य वीरो ! संगठन विरोधी तत्वों को पछाड़ कर आगे बढ़ो

श्री लाला रामगोपाल जी शालवाले प्रधान सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली का : दीपावली पर्व पर सन्देश

दीपावली प्रकाश का दिव्य सन्देश लेकर प्रतिवर्ष बुझे हुए मन के दीपो को जलाने और अन्धकार मे भटक रही मनः स्थिति का मार्ग दर्शन कराने के लिए आती है। इसी दिन जब कोटि-कोटि के दीपक जल रहे थे—दयानन्द अपना भौतिक शरीर त्याग कर परम पिता की आनन्दमयी गोद में विलीन हो गए थे। महर्षि ने जीवन भर अज्ञान अन्धकार, रूढिवाद और पाखण्ड रूपी साम्प्रदायिक मनोवृत्तियों के साथ घोर युद्ध किया। ईश्वरीय ज्ञान वेद को आधार बनाकर उन्होंने अपना जीवन सत्य की खोज मे लगा दिया। जिस सत्य के दर्शन उन्होने किए उसके प्रचार और प्रसार के लिए आर्य समाज की स्थापना कर दी। उन्होने घोषणा की कि आर्य समाज कोई धर्म, सम्प्रदाय मत अथवा पन्थ नही—आर्य समाज एक आन्दोलन है अतः आर्य समाज के पवित्र संगठन मे आस्था रखने वाले आर्य

वीरों से मेरा निवेदन है कि संगठन विरोधी स्वार्थी तत्वो को पछाड कर देव दयानन्द के उस दिव्य स्वप्न को साकार करो जिसके लिये तेरह बार गरल पान करके दीपावली के दिन उन्होने निर्वाण प्रप्त किया था।

क्रान्ति के प्रतीक महर्षि दयानन्द जी महाराज

(लेखक :– आचार्य पृथ्वीसिह आजाद, प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब, जालन्धर)

महर्षि दयानन्द सरस्वती अपने समय के एक ऐसे युग पुरुष थे जिनके हृदय में न केवल भारतवर्ष के लिए अपितु सारे विश्व के लिए कल्याण की भावना ही धर किए हुए थी। इसी पवित्र भावना से प्रेरित होकर उन्होने कृण्वन्तों विश्वमार्यम् अर्थात् सारे ससार को आर्य अथवा श्रेष्ठ और पवित्र बनाने का सबसे प्रथम जयघोष लगाया था। आर्य समाज की स्थापना का उद्देश्य गुरुवर दयानन्द के सामने यही था कि व्यवस्थित और श्रेष्ठ व्यक्तियों का एक ऐसा समाज बने, जो उनकी सभी योजनाओ को सफल बनाने के लिए दृढसकल्प होकर काम करे और आर्य मान-मर्यादा तथा आर्य गौरव गरिमा की रक्षा के लिए सदा उद्धत रहे।

महर्षि दयानन्द जी महाराज को आर्यसमाज से भी एक मात्रीय आशा थी कि इस समाज द्वारा एक ऐसे समाज की स्थापना हो सकेगी, जो न केवल सामाजिक कुरीतियों को दूर करने और सत्य वैदिक धर्म का प्रचार करने वाला होगा अपितु स्वाधीनता का अस्त हुआ सूर्य पुन: चमकाने वाला होगा। स्वामी दयानन्द जी महाराज भारतवर्ष को सच्चे अर्थो में विश्व की पुण्य भूमि, विश्व की चेतना भूमि और विश्व की शक्ति भूमि बनाना चाहते थे। स्वामी जी महाराज वेद के धर्म को प्रमुखता देते थे। उन का धर्म व्यक्ति परक नही अपितु मानवहित परक था और उन्होने आर्य समाज को यह आदेश दिया था कि—'संसार का उपकार करना आर्य समाज का मुख्य उद्देश्य है—"। महर्षि दयानन्द जी को आर्य समाज के अतिरिक्त अन्य कोई सस्था देश में नजर नही आती थी। जो देश और समाज के कल्याण के लिए काम करने वाली हो। १८५७ की क्रान्ति को प्रथम युद्ध में विफल हो जाने के पश्चात् सभी क्रान्तिकारी खामोश होकर बैठ गए थे। परन्तु उस क्रान्ति आन्दोलन के जन्मदाता स्वामी दयानन्द जी, जिनका १८५७ के स्वतन्त्रता सग्राम से घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है, चुप होकर नही बैठ सकते थे। उन्होने अपने पवित्र उद्देश्य की पूर्ति आर्यसमाज द्वारा करनी चाही। वे चाहते थे कि भारत भारतीयों का ही हो। उन्होने अपने अमर ग्रन्थ "सत्यार्थ प्रकाश" मे जिस ढग से स्वाधीनता सग्राम को बल देने के लिए स्थान पर लिखा है—यह केवल उन्ही का काम था, जिसे कोई दूसरा नही कर सकता था। सत्य बात तो यह है कि स्वामी दयानन्द जी महाराज एक पूर्ण क्रान्तिकारी ऋषि थे। और उन्होने अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश की रचना देश मे धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक क्रान्ति उत्पन्न करने के लिए ही की थी। कांग्रेस का जन्म तो १८८५ मे हुआ था। जबकि आर्य समाज की स्थापना १८७५ में हो चुकी थी। और जब आर्य समाज की स्थापना के पश्चात् हम क्रान्ति के प्रतीक ऋषि दयानन्द का अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश और विशेषकर इस पुस्तक के आठवे और ग्याहरवे समुल्लासों को पढ़ते हैं, तो सोई हुई आत्माएं भी भारतीयता और भारत की स्वाधीनता के लिए तडप उठती है। ८वे समुल्लास मे सामाजिक जागरुकता, और क्रान्ति के आन्दोलन को जन्म देने वाले स्वामी दयानन्द जी महाराज लिखते हैं—"आर्यवर्त मे भी आर्यों का अखण्ड, स्वतन्त्र, स्वाधीन और निर्भय राज्य इस समय नही है। –'जो कुछ ही सो भी विदेशियों से पदाक्रान्त हो रहा है।

कुछ थोड़े राज्य स्वतन्त्र है। दुर्दिन जब आता है तब देशवासिययों को अनेक प्रकार दु.ख भोगने पडते हैं। कोई कितना ही करे. परन्तु जो स्वदेशी राज्य होता है। वह सर्वोपरि उत्तम होता है'—। इसी समुल्लास में स्वामी जी महाराज ने यह भी लिखा है —' माता-पिता के समान कृपा, न्याय और दया के साथ विदेशियों का राज्य पूर्ण सुखदायक नही है—" । ऋषि दयानन्द जी ने क्रान्ति का यह उद्घोष लगा कर ही बस नही की थी, अपितु आगे चलकर ११वें समुल्लास में आर्य राष्ट्र के अस्तित्व का उल्लेख जिस ढग से किया, उमने गुलाम भारतीयों को हिला कर रख दिया। स्वामी जी ने ११वें समुल्लास में—कि—"सृष्टि से लेकर महाभारत पर्यन्त चक्रवर्ती सार्वभौम राजा आर्य कुल में ही हुए थे, अब इनके सन्तानों के अभाग्य उदय होने से राजभ्रष्ट होकर विदेशियों से पदाक्रान्त हो गये है—'

सारे सत्यार्थ प्रकाश और ऋषि द्वारा किए वेदभाष्य को पढ जाने से आपको किसी न किसी रूप में यह चर्चा अवश्य मिलेगी, पराधीनता के जुए को उतार कर फैंक दिया जाए । राजधर्म के नाम से ११वां समुल्लास लिखकर ऋषि वर दयानन्द ने अपने ढंग से अग्रेजों के विरुद्ध अपने विचार जनता तक जिस हौसले और हिम्मत के साथ पहुचाये है, यह ऋषि का स्वतन्त्रता संग्राम मे एक सीधा और बहुत बड़ा योगदान है, जो उस समय के किसी अन्य महापुरुष द्वारा भारत की आजादी के लिए नही मिला।

स्वामी जी महाराज ने सत्यार्थ प्रकाश में छोटी से छोटी घटना का उल्लेख भी इस ढग से किया है, जिससे पढने वाले के मन में विदेशी सत्ता के विरुद्ध एक आग भड़क उठती थी। उन दिनों सरकारी दफ्तरों में जो भारतीय नौकरियां करते थे, वे देशी जूते पहनकर कार्यालय में प्रवेश नही कर सकते थे। देशी जूतों को पहनकर जाने पर इस प्रतिबन्ध को लेकर स्वामी जी महाराज ने लिखा– कि जब उन लोगों को हमारे देश बने हुये जूतों से भी इतनी घृणा है, तो हमारे देश के मनुष्यों से तो पता नही कितनी घृणा इन्हें होगी। इसी तरह अंग्रेजों ने भारत में दोनों हाथों से लूट मचा रही थी। उस भारतीय सम्पदा की लूट का वर्णन करते हुये स्वामी जी ने लिखा हैं—हमने सुना है पारस पत्थर नाम का कोई ऐसा पत्थर होता है, जिसके स्पर्श मात्र से लोहा भी सोना हो जाता हैं। परन्तु आज तक यह पत्थर किसी के भी देखने मे नही आया। हमारा तो अनुमान है कि यह भारत देश ही वह पारस पत्थर है जिसमे बाहर से जो दरिद्र विदेशी लोहा बन कर आए है, वे यहा से सोना ही बनकर गए—।

जो काम स्वामी जी महाराज ने देश के धार्मिक सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक क्षेत्र में किया है, वह किसी दूसरे से नही बन पडा और जो कछ उन्होंने अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है—वह कोई दूसरा नही लिख सका। यदि यह कहा जाए कि हमारे भारत का वर्तमान संविधान किसी न किसी रूप में सत्यार्थ प्रकाश से ही उद्धार लिया हुआ है तो यह कोई अतिशयोक्ति नही होगी।

यह स्वामी दयानन्द जी महाराज की चौमुखी योजनाओं का पुण्य प्रताप है कि आज हम स्वाधीन है, और सभ्य स्वतन्त्र देशों मे अपना एक विशेष स्थान रखते है यदि हम स्वामी दयानन्द जी महाराज द्वारा निर्धारित आर्य समाज के १० नियमो को अपने जीवन मे ढालने का प्रयत्न करे, तो जहा हम एक आदर्श समाज को स्थापना करने मे सफल हो सकेगे, वहा अपने देश की राज सत्ता को एक आदर्श प्रजातन्त्रात्मक राज सत्ता बना सकेंगे। हमे यह सदा याद रखना चाहिए कि राज सत्ता का लक्ष्य प्रतिष्ठा की प्राप्ति नही है, अपितु सबके लिये कल्याण की उपलब्धि है और यह सबके कल्याण की उपलब्धि स्वामी दयानन्द जी की धार्मिक, सामाजिक, और राष्ट्रीय भावनाओं को अपने जीवन मे साकार बनाकर प्राप्त कर सकेंगे। हमें यह स्मरण रखना चाहिये कि— राष्ट्राणि वैविशः अर्थात् जनता ही राष्ट्र को बनाती है। जनता को दयानन्द के स्वप्नों का राष्ट्र बनाने के लिये तैयार करने का काम केवल मात्र आर्य समाज का है। जिसे उसे पूरी निष्ठा के साथ और शक्ति से पूरा करना चाहिये ।

आओ ! कुछ दीप जला लें हम

(ले०—सुशीला आर्या एम. ए. पी. एच. डी. जनता कालेज चरखी दादरी)

ऋषिवर के जीवन दीपक से ले अक्षय पावनतम प्रकाश।
आओ कुछ दीप जला लें हम।
है स्नेह हृदय में यदि शेष वर्त्तिका त्याग की फिर भय क्या ?
बुझाते दीपक आलोकित होकर, तम हर लेंगे संशय क्या ?
मंडराता जो विक्षुब्ध वायु मण्डल में भीषण सर्वनाश ?
उसको निर्माण बना लें हम।
दानवता का दुर्दान्त देश उस जाए न मानवता महान्।
सुन पाशबद्ध मानवता की चीखें घट जाए न कहीं कान।
इसका करने को त्राण विकाल भवन में तज कर आज वास।
शूलों की सजा, सजा लें हम।
है भोगवाद का अजगर बाए खड़ा वदन विकराल आज।
रोती है धर्म प्राणता छिप सत्कृत्यों की लुट रही लाज।
गौरव पदमर्दित विगत का होता क्रमश: घोर ह्रास।
जो कुछ है बचा, बचा लें हम।
बर्बर पशुता का अहर्निश होता भू-पर ताण्डव नर्तन।
सत को घेरे है रज तम का दुहरा काला सा अगुन्ठव।
कर पाप महा सिन्धु मन्थन, करना है विष सेवन सहास।
यह बीड़ा आज उठा लें हम।
क्या हुआ निशा जो अमा सघन अति दीर्घ शीत की वेला है।
कृत्रिम प्रकाश की छलना में प्राणों ने संकट झेला है।
अब वेद भानु चमका कर भर दें, भू के कण-कण में प्रकाश।
निशि को ही उषा बना लें हम।
पीछे जो किया, किया हमने न किया तो पश्चाताप है क्या।
तज कर अतीत की बात करें, आगत का निश्चय आज नया।
अन्याय, असत्य भ्रष्ट हिंसा का फैला जो विकराल पाश।
फंसने से प्राण बचा लें हम।
जो नाव बीच जलधार लिये पतवार बढ़ें हम एक साथ।
स्वर एक हृदय हों एक समान गति से डांड चलाएं हाथ।
बदलेगा पतन-प्रवाह अवश्य मन में प्रभु का विश्वास आस।
सब मिलकर जोर लगा लें हम।
लघु दीप ये मिट्टी के न मिटा सकते जो भीषण अन्धकार।
असमर्थ हैं करने में भूतल के पाप-पुंज को यदि क्षार।
फिर क्यों बिलम्ब कैसा विचार, करना ही है तम का विनाश।
लो क्रान्ति ज्वाल सुलगा लें हम।

आर्यत्व

(ले०—कवि कस्तूरचन्द जी 'घनसार')

(१)

आर्यवर्त्त निज वतन हमारा, आर्य सभी हम लोग !
आर्य बनाने हम जाते हैं, आर्य भोगने भोग !!
आर्यों को अब आर्य बनाने, आर्य सजाने साज !
हैं आर्य वह आर्य न बनते. बनें अनार्य आज !!

(२)

हम तुम सारे एक बराबर, आर्यवतन में वास !
आर्य होते भी फिरते व्यर्थ, वैदिक बिना उदास !!
साम्प्रदायिक न पन्था-पन्थी, न कोई नया विधान !
सही सनातन ईश्वर आज्ञा, वैदिक विद्या ज्ञान !!

(३)

लोग हिचकते आर्य नाम से, पत्थर पूजक लोग !
पोपों के वश लीक न छोड़े, सो है अस्त अयोग !!
कहां ? ईश्वर कहां ? रहे खोजते, कितनी भूल महान् !
हरिद्वार काशी, बृज, मथुरा, बैठा ना भगवान् !!

(४)

जिस साधन से ईश्वर मिलता, उनका करे न ख्याल !
सो साधन है वैदिक मत में, अन्य छोड़ पथ जाल !!
गये बहुत दिन ठाकुर आगे, विधिवत् देते भोग !
कभी न वैदिक मन्त्र सुनाया मिला न दर्शन योग !!

(५)

ओ ऋषियों के अंश-वंश तुम, दिया छोड़ सद् ज्ञान !
न खोजा ईश्वर अभि अन्तर, योग कला विधि ध्यान !!
आये सही बताने रास्ता, वो ऋषि दया विचार !
सही-सही सब हुआ खुलासा, मुद्रित रहे 'घनसार'

"प्राध्यापक मैक्समूलर पर स्वामी दयानन्द का प्रभाव"

(श्री अनूप सिह मन्त्री आर्य समाज देहरादून)

यह कोई कल्पना भी न कर सकता था कि जिस प्राध्यापक मैक्समूलर ने भारत देश और वैदिक वांगमय की लेखनी और वाणी से निष्ठा करने के लिए कमर कस रखी थी, वह कभी इनकी प्रशंसा भी करने लग जाएगा। प्राध्यापक मैक्समूलर के व्यक्तित्व और कृतित्व का अध्ययन करने से पता चलता है कि प्रारम्भ में उन्होने भारत देश और वैदिक साहित्य का अवमूल्यन करने में कोई कसर नही छोड़ी है।

फ्रांस के प्रसिद्ध विद्वान 'लूईस जैकालियट'' ने भारत में बाइबल नामक ग्रन्थ में भारत की प्रशंसा करते हुए लिखा है—प्राचीन भारत भूमि मानवता की जन्म दात्री! नमस्कार! पूजनीय मातृ भूमि! जिसको शताब्दियों से होने वाले नृशंस आक्रमणों ने अभी तक विस्मृति की धूल के नीचे नहीं दबाया! तेरी जय हो! श्रद्धा प्रेम काव्य एवं विज्ञान की पितृभूमि! तेरा अभिनन्दन! हम अपने पाश्चात्य भविष्य में तेरे अतीत के पुनरागमन की जय जयकार मनावें।

प्रा मैक्समूलर ने जब भारत देश की प्रशंसात्मक इन पक्तियों को पढ़ा तो वह जलभुन उठा और इस पुस्तक के लेखक की आलोचना करते हुये उसने लिखा कि मालूम पड़ता है कि लेखक भारतीय ब्राह्मणोंके चक्कर में आ गया है।"

भारतीय संस्कृति के आदि स्त्रोत वेद के विषय में प्रा. मैक्समूलर ने लिखा था—"वैदिक सूक्तों की एक बड़ी संख्या बालकों जैसी अत्यन्त मूर्खतापूर्ण है साथ ही जटिल निम्न कोटि की और साधारण है।"

भारत में ईसाइयत के पैरों को मजबूत करने के लिए प्रा. मैक्समूलर साहब ने वेद का त्रुटिपूर्ण भाष्य किया। इस कुटिलता का पर्दाफाश उनके अपने ही उस पत्र से हो जाता है जो उन्होंने सन् १८६६ में अपनी पत्नी के नाम लिखा था। पत्र इस प्रकार है—"वेद के अनुवाद का मेरा यह संस्करण उत्तर काल में भारत के भाग्य पर पर्याप्त प्रभाव डालेगा। यह उनके धर्म का मूल है। मैं निश्चयपूर्वक अनुभव करता हूं कि गत तीन सहस्त्र वर्षो से वेदों से उद्भूत सब कुछ को उन्मूलन करने का एक मात्र उपाय है कि उनके धर्म का मूल कैसा है यह बताया जाए।"

१६ दिसम्बर सन् १८६८ को भारत के सचिव ड्यूक आफ़ आर्गाइल को प्रा. साहब अपने पत्र में लिखते हैं कि भारत के धर्म को नष्ट करने में मैंने पूरा प्रयत्न किया है और वह नष्ट भी हो रहा है अब तो उसका स्थान ईसा-

ईयत को ही लेना चाहिए। यदि यह न हो सका तो यह आपका (भारत के सचिव) ही दोष होगा। उनका पत्र इस प्रकार था।" भारत का प्राचीन धर्म नष्ट प्राय: है और यदि इसाई धर्म उसका स्थान नहीं लेता तो यह दोष किस का होगा ?"

उपर्युक्त प्रमाणों से विज्ञ पाठकगण प्राध्यापक मैक्समूलर साहब का भारत और वैदिक साहित्य सम्बन्धी दृष्टिकोण भली भान्ति समझ गये होंगे।

कहावत है कि जादू वो है जो सर चढ़ कर बोले। स्वामी दयानन्द का जादू तो वाकई प्रो. मैक्समूलर के सर चढ़कर ही बोला है। भारत की प्रशंसा को सुन कर जो मैक्समूलर जल भुन उठता था वह स्वयं ही भारतीय गरिमा की आरती उतारने लगा। केम्ब्रिज विश्वविद्यालय के बोर्ड आफ हिस्टारीकल स्टडीज ने भारतीय नागरिक प्रशासन (आई. सी, एस.) के छात्रों के समक्ष प्रो. मैक्समूलर के भाषणों का आयोजन किया था, वे भाषण एक पुस्तक में संकलित किए गये हैं उस पुस्तक का नाम है, इण्डिया व्हाट कैन इट टोच अस। इस पुस्तक में प्रा. मैक्समूलर ने भारत को महिमा विषयक जो शब्द लिखे हैं वे इस प्रकार हैं--"यदि मुझे सम्पूर्ण विश्व में ऐसे देश के सम्बन्ध में पूछा जाए जिसे प्रकृति ने सब साधनों से सम्पन्न बनाया हो जो सौन्दर्य शक्ति और सम्पत्ति से सम्लकृत हो तो मैं भारत देश की ओर संकेत करूंगा।" सम्पादक

भारतीय नागरिक प्रशासन के छात्रों को सम्बोधित करते हुए प्रो. साहब कहते हैं—"यदि तुम अपने विशेष अध्ययन का मानव मस्तिष्क के किसी भी क्षेत्र को विषय बनाओ चाहे वह भाषा का हो या धर्म का हो पुराण शस्त्र का हो या दर्शन शास्त्र का हो कानून का हो या रीत रिवाजों का हो प्राचीन कला का हो या प्राचीन विज्ञान का हो, तो तुम्हें हर क्षेत्र में भारत जाना पड़ेगा। चाहे तुम वहां जाना पसन्द करो या न करो। क्योंकि भारत और केवल भारत ने मानव इतिहास की बहुत क़ीमती और शिक्षाप्रद सामग्री को अपने कोष में सुरक्षित रखा है।"

वैदिक साहित्य की प्रशंसा करते हुए प्रो. मैक्समूलर साहब लिखते हैं—"यद्यपि ज्ञान की कोई ऐसी शाखा नहीं जिस पर वैदिक साहित्य ने नया प्रकाश नहीं डाला हो और जिस पर उस ने सर्वथा नवीन दृष्टिकोण न उपस्थित किया हो फिर भी धर्म और पौराणिकता के सम्बन्ध में उसने जो प्रकाश दिया है उसके महत्व उसकी नवीनता और उसकी समृद्धि की तो उपमा ही नहीं।"

"मानव जाति के जो भी सज्जन अपनी भाषा या यों कहें कि अपने विचारों के एतिहासिक विकास में रुचि रखते हैं जो लोग धार्मिक और पौराणिक आख्यानों की प्राथमिक विकास के ज्ञान के प्रति अनुराग रखते हैं जो लोग नक्षत्र विज्ञान की आधारशिला की खीज को अपने अध्ययन का विषय बनाना चाहते हैं जो संगीत पिंगल व्याकरण शब्द रचना विज्ञान इत्यादि विषयों का ज्ञान प्राप्त करना चाहते हैं जो लोग प्रथम दार्शनिक विचारों की पृष्ठ भूमि को स्पष्ट रूप से देखना चाहते हैं वह यह जानना चाहते हैं कि इस पृथ्वी पर पारिवारिक जीवन सर्व-प्रथम किस रूप से प्रारम्भ हुआ तथा किस

प्रकार शनैः-२ ग्रामीण जीवन या राजनैतिक जीवन विकसित हुए उन्हें चाहिए कि वे वैदिक साहित्य का अध्ययन करें।''

महर्षि दयानन्द सरस्वती के वेदभाष्य और उनकी पुस्तक "ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका" को पढने के उपरान्त ही प्रा. मैक्समूलर के दृष्टिकोण में इस प्रकार का परिवर्तन आया। प्रा साहिब लिखते है संयुक्त साहित्य ऋग्वेद से आरम्भ होता है और महर्षि दयानन्द द्वारा लिखित ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका पर समाप्त होता है। महर्षि दयानन्द जी ने आधुनिक विज्ञानिक रूप देकर वेदों को अधिक समुज्जवल बना दिया।'

वैदिक मन्त्रों को मूर्खतापूर्ण बताने वाले प्रो. साहब ने ऋषि दयानन्द का प्रभाव पड़ने के बाद यह लिखा वेद नित्य है परिणाम स्वरूप पूर्ण और त्रुटिहित है। यही नहीं अपितु वे लिखते हैं—"वेद प्राचीनतम पुस्तकें हैं और अपौरूषेय हैं।"

प्रा. मैक्समूलर साहब ने परोपकारी सभा के तत्कालीन मन्त्री श्री पं. मोहन लाल विष्णु लाल पण्डया से महर्षि दयानन्द की जीवन गाथा लिखने के सम्बन्ध में भी पत्र व्यवहार किया था वे स्वामी दयानन्द की विद्वता से बहुत प्रभावित थे। प्रा. मैक्समूलर ने स्वामी दयानन्द जी के विषय में लिखा था—"स्वामी दयानन्द सरस्वती ने हिन्दु धर्म के सुधार का बड़ा कार्य किया और जहां तक समाज सुधार का सम्बन्ध है वे बड़े उदार हृदय थे। वे अपने विचारों को वेदों पर आधारित और उन्हें ऋषियों के ज्ञान पर अवलम्बित मानते थे। उन्होंने वेदों पर बड़े बड़े भाष्य किए जिससे मालूम होता है कि वे पूर्ण विज्ञ थे। उन का स्वास्थ्य बड़ा व्यापक था।"

साप्ताहिक सत्संग

आर्य समाज लक्ष्मणसर का साप्ताहिक सत्संग रविवार १२-१०७५ को प्रातः श्री पं० रुद्रदत्त जी शर्मा के प्रस्तुत करने पर और श्री मास्टर नन्दकिशोर जी एम. ए. के अनुमोदन से निम्न प्रस्ताव सर्व-सम्मत से पारित हुआ।

आर्य समाज लक्ष्मणसर का यह साप्ताहिक सत्संग समाचार पत्रों के अनुसार ६-१०-७५ को आर्य प्रतिनिधि सभा के जालन्धर के कार्यालय पर बलात् कब्जा और प्रतिष्ठित कार्यकर्त्ताओं को मार-पीट आदि की दुर्घटना पर हार्दिक रोष प्रकट एवं दुःख प्रकट करती हैं।

"मनुज को मुक्ति दिलाने धरापर ऋषिराज आये"

(श्री अम्बादान आर्य कवि कुटीर कुरड़ायां वाया मेड़ता सिटी जिला नागौर राज०)

दासता आलस्य-स्वार्थ, अन्धी श्रद्धा द्वेष दुर्मति ।
ढोंग छल संकीर्ण रूढ़ियां, कर चुकी घर प्रबल सम्प्रति ।।
त्रस्त-ताड़ित शूद्र जीवन, था अपूर्व क्या क्या बताये ।
मनुज को मुक्ति दिलाने, धराकर ऋषिराज आये ।।

नरबलि गोमेध होते, यश के शुभ नाम ऊपर ।
तांतिक पण्डे पुजारी, थे निरंकुश भव्य भूपर ।।
लांघ चुकी चरम सीमा, छूत डाकिनी बैठ पाए ।
मनुज को मुक्ति दिलाने, धरापर ऋषिराज आये ।।

सुप्त थे सुविचार सारे, स्वावलम्बन शौर्य्य शक्ति ।
लुप्त सी थी वेद विधियां, भूल ईश्वर सत्य भक्ति ।।
कर नहीं सकते उच्चारण, शुद्र वा अबला ऋचाये ।।
मनुज को मुक्ति दिलाने, धरापर ऋषिराज आये ।।

फूट इर्ष्या की भयंकर, बाढ़ सी आई हुई थी ।
वर्ण, जाति, भिन्नता की, घोर निशि छाई हुई थी ।।
छाद्म चमगीदड़ नराधम, फड़फड़ाते पंख भाये ।
मनुज को मुक्ति दिलाने, धरापर ऋषिराज आये ।।

जड़े ताने तर्क मति पर, मान्य ऋषि ने तोड़ डाले ।
ज्ञान की वैदिक गदा से, भ्रान्त भण्डे फोड़ डाले ।।
वेद का सत्पथ सुझाया, मत मतान्तर दुर्ग ढाये ।
मनुज को मुक्ति दिलाने, धरापर ऋषिराज आये ।।

भ्रष्ठ मठाधीश दिग्गज. निकट निरुत्तर होय भागे ।
सत्य शास्त्रार्थ समर मे, खुलेमिथ्या ढोंग ठागे ।।
मन्त्रद्रष्ठा महर्षि ढिग, एक भी नहि ठहर पाये ।
मनुज को मुक्ति दिलाने, धरापर ऋषिराज आये ।।

बाल प्रणयन पद्धति का, प्रबल तम खंडन किया था।
'युवानं विदतेपतिम्' का, दिव्य सन्देशा दिया था ॥
पुर्णपाणिग्रहण के भी, नियम निष्कंटक बताये ।
मनुज को मुक्ति दिलाने, धरापर ऋषिराज आये ॥

एक ईश्वर प्राप्ति का, मार्ग श्रुति सम्मत सुझाया ।
ज्ञान, कर्म, उपासना को. अत्युतम साधन बताया ॥
भ्रान्त जड़ बहु देवपूजा, स्वार्थ के अड्डे हटाये ।
मनुज को मुक्ति दिलाने, धरापर ऋषिराज आये ॥

वेद पढ़ने का अपूर्व, दिया निज अधिकार सबको ।
क्या स्वपच क्या ? शूद्र नारी, है प्रभु का प्यार सबको ॥
स्वयं की परित्याग चिंता, प्राण घातक के बचाये ।
मनुज को मुक्ति दिलाने, धरापर ऋषिराज आये ॥

अन्त्यधिक उपकार तेरे, याद भारत को रहेगा ।
दिग-दिगन्त अबाधगति से, स्रोत कीर्त्ति का बहेगा ॥
व्यक्तित्व अद्भुत कृत्तित्व. था विलक्षण क्या २ जताये ।
मनुज को मुक्ति दिलाने, धरापर ऋषिराज आये ॥

अनन्त गुण गौरव तुम्हारा, व्यक्त कर सकता नहि मैं ।
अल्प गागर बीच किन्तु, सिंधुभर सकता नहि मैं ॥
बिंदुवत लिख 'अम्ब' आरज, हृदय के उद्गार गाये ।
मनुज को मुक्ति दिलाने, धरापर ऋषिराज आये ॥

★ संसार का उपकार करना आर्य समाज ★
★ का मुख्य उद्देश्य है ★

दयानन्द के सिद्धान्तों में वेदों का स्थान

(कु० कमलेश शर्मा जालन्धर)

"आर्यसमाज समस्त संसार को वेदानुयायी बनाने का स्वप्न देखता है। स्वामी दयानन्द ने इसे जीवन और सिद्धांत दिया। उनका विश्वास था कि आर्य जाति चुनी हुई जाति है, भारत चुना हुआ देश है, और वेद चुनी हुई धार्मिक पुस्तक है।" —सम्पादक

दयानन्द का जन्म हुआ श्रुति के हित धारण।
दयानन्द का मरण हुआ वेदों के कारण॥
दयानन्द की वेद भाष्य शैली जो माने।
विद्या का अवतार उसे माने फिर माने॥

जिस प्रकार 'धनुर्धारी' कहने पर मर्यादा पुरुषोत्तम राम का सम्पूर्ण जीवन हमारे नेत्रों के सामने नृत्य करने लगता है, 'कलगी वाला' शब्द के साथ गुरु गोबिन्दसिंह का जीवन मानस-पटल पर अंकित हो जाता है, ठीक इसी प्रकार 'वेदों वाला' कहते ही ऋषि दयानन्द का जीवन हमारे सम्मुख उपस्थित हो जाता है। महर्षि दयानन्द का काम वेद, महर्षि का सन्देश वेद, महर्षि का जीवन वेद और ऋषि की मृत्यु भी वेद के कारण हुई। वेद उनके हृदय, मस्तिष्क और जिह्वा पर थे। वेद की पावन ऋचाओं का उद्धार, उनकी पुनः प्रतिष्ठा और प्रचार तो ऋषि की वह देन है, जिससे मानव जाति कभी उऋण न हो सकेगी।

ऋषि का यह अटूट विश्वास था कि वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना, सुनना-सुनाना वे परम धर्म मानते थे। 'वेद' ज्ञान के प्रचार के अतिरिक्त और कोई मनुष्य जाति की उन्नति का कारण नहीं। उनके विचारनुसार जब से भारतवासियों ने वेद का स्वाध्याय छोड़ा है तभी से भारत का पतन आरम्भ हुआ है। वस्तुतः वेद की विचारधारा का साम्राज्य धरती पर स्थापित करना ऋषि का चरम लक्ष्य था।

जब महर्षि दयानन्द कार्यक्षेत्र में आए तो वेदों का सच्चा भाष्य लिखकर वेद के सम्बन्ध में फैली सभी भ्रान्तियों को दूरकर वेद का सच्चा स्वरूप लोगों के समक्ष रखा। उन्होंने वेदों के सम्बन्ध में कहा—"वेदों में केवल धर्म ही नहीं विज्ञान भी है।"

महर्षि मनु ने कहा है—वेदोऽखिलो धर्म-मूलम्। धर्म का मूल वेद है। ऋषिवर का आरम्भिक नाम मूलशंकर था अतः उन्होंने जालग्रन्थों को छोड़कर वेदों को ही पकड़ा। वेद में एक मन्त्र है।

यस्तित्याज सचिविदं सखायं
न तस्य वाच्यपि भागो अस्ति।
यदीं शृणोत्यलकं शृणोति नहि

प्रवेद सुकृतस्य पन्थाम् ।।

जो व्यक्ति वेदरूपी मित्र को छोड़ देता है उसकी वाणी में सार तत्त्व नहीं रहता। वह जो कुछ सुनता है व्यर्थ ही सुनता है। वह उत्तम कर्म पुण्य और धर्म के मार्ग को भी ठीक प्रकार से नहीं जान सकता।

महर्षि दयानन्द ने गुरु के आदर्श पर तन्त्रादि सभी जाल ग्रन्थों को यमुना के अर्पित कर दिया और सच्चे मित्र एवं उपकारक वेद को ही पकड़ा। उन्होंने वेद को स्वतः प्रमाण और अन्य ग्रन्थों को परतः प्रमाण माना।

मिमीहि श्लोकमास्ये पर्जन्य इव ततनः।
गाय गायत्र मुक्थ्यम् ।।

मैं वेद मन्त्रों से अपना मुख भर लूं और मेघ के समान सर्वत्र उन मन्त्रों की वृष्टि करूं, स्वयं गाऊं और दूसरों से गवाऊं। इस मन्त्र के अनुसार दयानन्द ने स्वयं वेदामृत का पान किया तथा कराया। वे अपने आख्यानों में वेद-मन्त्रों की झड़ी लगा देते थे। उनके वेद-ज्ञान की प्रशंसा में मैडम ब्लेवस्दका ने कहा—He was possessed of the Vedas.

स्वामी जी की मृत्यु के पश्चात् थियासोफिस्ट पत्र ने उनकी प्रशंसा करते हुए लिखा है—'उन्होंने जर्जर हिन्दुत्व की गतिहीन देह पर भारी वम्बप्रहार किया और अपने भाषणों से लोगों के हृदयों में ऋषियों और वेदों के लिए अपरिमित उत्साह की आग जला दी। सारे भारत में उनके समान हिन्दी और संस्कृत का वक्ता कोई और नही था।'

अपने वेदभाष्य से महर्षि दयानन्द क्या-क्या आशाएं रखते थे। उन्हीं के शब्दों में देखें—'परमात्मा की कृपा से मेरा शरीर बना रहा और कुशलता से वह दिन देखने को मिला कि वेदभाष्य सम्पूर्ण हो जाए, तो निस्सन्देह देश आर्यवर्त्त देश में सूर्य का सा प्रकाश हो जाएगा जिसके मेटने और झांपने को किसी का सामर्थ्य न होगा। क्योंकि सत्य का मूल ऐसा नहीं कि जिसको कोई सुगमता से उखाड़ सके और कभी भानु के समान ग्रसा भी जाए तो थोड़े ही काल में फिर उग्रह अर्थात् निर्मल हो जाए।"

महर्षि दयानन्द के वेदभाष्य पर अपनी सम्मति देते हुए श्री अरविन्द घोष ने लिखा है कि वेदों का अन्तिम तथा प्रामाणिक भाष्य चाहे कुछ भी हो दयानन्द का स्थान उपयुक्त शैली के प्रथम आविष्कारक रूप में सर्वोच्च है। उसने अपनी दिव्यदृष्टि से पुराने अज्ञान तथा भ्रम के मध्य में से सत्य का अन्वेषण किया। जिन वेदों के द्वार को समय ने बन्द कर रखा था उसकी चाबी को उसने पा लिया।

वेद भारतीय संस्कृति के मूलाधार हैं। वेद ईश्वरीय ज्ञान हैं जो मानवमात्र के कल्याण के लिए प्रभु ने सृष्टि के आरम्भ में दिया था। लोग वेदों को भूल चुके थे। महर्षि ने कहा—'वेदों की ओर लौटो।'

यदि गंगा का शुद्ध स्वरूप देखना हो तो हमें हिमालय की ओर जाना होगा। यही बात धर्म के सम्बन्ध में है। स्वामी जी ने सहस्रों ग्रन्थों को पढ़ने और विचार करने के पश्चात् डिण्डम घोषणा की कि यदि धर्म के वास्तविक स्वरूप को जानना चाहते हो तो वेदों की ओर चलो, वेद ही धर्म का आदि स्रोत हैं।

मनु महाराज के अनुसार—

धर्मजिज्ञासमानां प्रमाणं परमं श्रुतिः

(१८ पृष्ठ का शेष)

धर्म के जिज्ञासुओं के लिए वेद ही धर्म प्रमाण हैं। इस निर्देशानुसार महर्षि ने अपने प्रत्येक सिद्धांत की पुष्टि के लिए वेदमन्त्र उपस्थित किए। उदाहरणार्थ 'मूर्तिपूजा नहीं करनी चाहिए। इसकी पुष्टि के लिए मन्त्र है—

न तस्य प्रतिमाऽअस्ति यस्य नाम महद्यश:

अर्थात् जिसका नाम महान् यशवाला है उस की कोई मूर्ति नहीं है।

रेथ्जे मेकाडानल्ड के अनुसार—"आर्यसमाज समस्त संसार को वेदानुयायी बनाने का स्वप्न देखता है। स्वामी दयानन्द ने इसे जीवन और सिद्धान्त दिया। उनका विश्वास था कि आर्य जाति चुनी हुई जाति है, भारत चुना हुआ देश है, और वेद चुनी हुई धार्मिक पुस्तक है।

एक दिन साधु मायाराम ने कहा—"दयानन्द जी ! आप इस खण्डन-मण्डन के झमेले में क्यों पड़ गए ? हमारी तरह आनन्द से खा-पीकर सुख मे रहा करो। क्यों वैर बढ़ाते हो ?' स्वामी जी ने उत्तर दिया कि 'हम तो ब्रह्मानन्द में रहते हैं और जो आनन्द वेदप्रचार में आता है, वह तो तुलनातीत है।'

अत; स्पष्ट है कि ऋषि कैसे वेदज्ञ और वेद प्रेमी थे। निष्कर्ष रूप में हम प्रो० मैक्समूलर के इस कथन अनुसार दयानन्द के सिद्धांतों में वेदों का स्थान निर्धारित कर सकते हैं—'स्वामी दयानन्द एक महान् विद्वान् थे। उनके धर्म-नियमों की नींव ईश्वरकृत वेदों पर आधारित थी। उन्हें वेद कण्ठस्थ थे। उनके मन और मस्तिष्क में वेदों ने घर किया हुआ था। वर्तमान समय में संस्कृत का एक ही बड़ा विद्वान्; साहित्य का पुतला, वेदो के महत्त्व समझने वाला अत्यन्त प्रबल नैयायिक और विचारक यदि भारतवर्ष में हुआ है, तो महर्षि दयानन्द सरस्वती ही था।"

——

पाश्चात्यों की दृष्टि में

स्वामी दयानन्द

दयानन्द की उग्र और प्रौढ़ शिक्षायें उसके देशवासियों की विचार-धारा के अनुकूल थी और उन शिक्षाओं से भारतीय राष्ट्रीयता का सर्व प्रथम नव जागरण हुआ।

—रोमांगेलां

सबसे मुख्य बात यह है कि दयानन्द को अस्पृश्यों की विद्यामानता की घृणित अन्याय सर्वथा असह्य था। उनके अधिकारों का जितनी उग्रता से दयानन्द ने समर्थन किया उतनी उग्रता से अन्य किसी ने नहीं किया। अस्पृश्य जन पूरी समानता के आधार पर आर्य समाज में प्रविष्ट होते हैं।

वस्तुत: भारतीय राष्ट्रीय चेतनता के पुनर्जन्म और जागरण में जो इस समय (१६३०) उस देश में अपने पूर्ण यौवन में देख पड़ रही हैं, सबसे प्रबल प्रेरणा दयानन्द से प्राप्त हुई थी।

—रोमांरोलां

भारतीय नवजागरण और दयानन्द

(वीरेन्द्र भारती व्यवस्थापक आर्य मर्यादा, जालन्धर)

I have full sympathy with the Arya Samaj movement. I know Swami Dayanand worked with honest motives. The followers of Swami Dayanand shald not be contented with what Swami Dayanand has done but should carry on the work which he has left undone,

ऐसा खुद सर था कि हर इक सरकश से तू टकरा गया।
तुझ को सजदे करते करते आस्मां खम खा गया॥

इतिहास के पृष्ठों में क्या कोइ ऐसा व्यक्ति आपको खोजने पर मिलेगा जिसने मनुष्य को मनुष्य बनकर धरती पर रहना सिखाया हो। वर्ग, देश, जाति और काल की समस्त दीवारो को गिरा कर जिसने संसार के प्रत्येक मनुष्य को एक ईश्वर का पुत्र होने के नाते भाई बना कर मनुष्य और मनुष्य के मध्य खड़े समस्त भेद-भावों को समाप्त कर एक साथ सुख-दुःख बांट कर प्यार से जीवन बिताने की प्रेरणा की हो। सारा इतिहास ढूंढ लीजिए आर्य समाज के प्रवर्त्तक, प्राचीन कुरीतियों और कुरीतियों के भंजक, पाखण्ड एवं जात-पात के खंडक, यज्ञमय जीवन तथा वर्णाश्रम व्यवस्था के संस्थापक, संसार को कर्म क्षेत्र मानने वाले कर्मयोगी, नंगे कौपीन धारी महर्षि दयानन्द के अतिरिक्त और कोई महापुरुष आप को ऐसा न मिलेगा। वैसे तो गीता में स्पष्ट संकेत है। इस संकेतानुसार—

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानं धर्मस्य तदात्मनं सृजाम्यहम्॥

भाव यह कि जब-जब भी संसार में धर्म की हानि होती है, अत्याचार बढ़ जाता है तब-तब मैं धर्म की पुनः स्थापन के लिए किसी न किसी रूप में अवश्य आता हूं। नवजागरण के सम्बन्ध में यदि यह कहा जाये कि महर्षि ने ही समग्रतः भारत के देश-वासियों के प्राणों में नवजागरण का जोश फूंका तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। परिस्थितियां घोर प्रतिकूल होने पर भी जिस महर्षि ने लोगों को सच्चाई का ज्ञान करवाया वह नवजागरण से कम नहीं है। यही कारण है कि भारत के विद्वानों में डा. रविन्द्र नाथ टैगोर महान् दार्शनिक श्री अरविन्द घोष, श्री सुभाष चन्द्र बोस, सर सय्यद अहमद खां, तथा पश्चात्य विद्वानों में डा. एम. विण्टरनिट्ज, रोमेन रोलैंड एण्डरिड जैक्सन डेविस, प्रो. मैक्समूलर तथा ए. ओ. ह्यूम आदि विद्वानों ने समान रूप से महर्षि को अपनी प्रशंसा का पात्र बनाया है।

इन विद्वानों ने महर्षि के जीवन के सभी पहलुओं को आंक कर ही अपना मुंह खोला था।

आधुनिक युग को प्रकाश की पहली किरण देने वाले महापुरुष स्वामी दयानन्द थे। वे प्रत्येक पहलू से महान् क्रान्तिकारी थे। उनकी क्रान्ति सर्जक थी, प्रेरक थी, और प्रेम के अस्त्र से बुद्धि का विकास उनका इष्ट था। वे क्रान्ति चाहते थे पर न राज्य को, न नाम को अपितु केवल विचारों की। प्रत्येक मनुष्य के सोचने का ढंग बदलना ही उनका लक्ष्य था।

स्वामी जी का यह दृढ़ विश्वास था कि जब तक मनुष्य को मनुष्य से अलग करने वाली भेद भाव की प्रतीक ये मजहब की दीवारें रहेंगी जब तक मनष्य इस्लाम, ईसायत, यहूदी और बौद्ध आदि मतों में बंटा रहेगा तब तक संसार में झगड़े रहेंगे। इसलिये उनकी इच्छा थी कि इन सभी मजहबों की हस्ती को, जिन्होंने न जाने कितने इन्सानों का खून बहाया है, धरती से मिटा दिया जाए और मनुष्य बस केवल मनुष्य ही बनकर धरती पर रहे। उन्होंने छोटे-बड़े, ऊंच-नीच की बुनयादों को जड़ से मिटाया, जो दिमाग अन्ध श्रद्धा से मजहब के ठेकेदारों ने बन्द कर रखे थे उन्हें स्वामी जी ने अपने सुदृढ़ हाथों से खोलकर सभी को सच्चाई के रास्ते पर चलने का निमन्त्रण दिया।

उन्हें परमात्मा पर विश्वास था, यह विश्वास ही उनकी शक्ति और पूंजी थी। इसी के बल पर अकेले होते हुए भी उन्होंने सारी धरती के पाखण्डों और प्रबल प्रहार किया। अज्ञान, अन्ध विश्वास और मजहबी ढोंगों के विरुद्ध युद्ध घोषणा की और वे विजयी हुए। न केवल भारत ही अपितु सारे संसार में उन्होंने सोचने के ढग में मौलिक परिवर्तन पैदा कर दिया।

मूर्ति पूजा, अवतारवाद और छूत छात के वे कट्टर विरोधी थे। 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता' के अनुसार नारी जाति को ऊपर उठाने में स्वामी जी ने जो कुछ किया वह और कौन कर सकता था। किसी कवि के नारी के सम्बन्ध में ये शब्द स्वामी जी की कृपा के कारण ही मुखरित हो सके—

"निज स्वामियों के कार्य में समभाग जो लेतीं न वे,
अनुराग पूर्वक योग जो उसमें सदा देतीं न वे।
तो फिर कहातीं किस तरह 'अर्द्धांगिनी' सुकुमारियां,
तात्पर्य यह—अनुरूप ही थीं तरवरों के नारियां॥"

धर्म और नैतिकता का अटूट सम्बन्ध है। वही राष्ट्र नैतिक रूप से सुदृढ़ राष्ट्र बन सकता है, जिसमें धर्म का सम्यक् ढंग पालन होता है। आर्य समाज के धार्मिक सिद्धान्तों का ही यह प्रभाव है कि यद्यपि विधिवत् आर्यसमाजी होने वालों की संख्या लाखों से अधिक नहीं परन्तु आर्य समाज के प्रभाव में आकर जिन लोगों का मूर्ति-पूजा, अवतारवाद, ग्रह पूजा तथा तीर्थ-यात्राओं पर से विश्वास हिल गया है उन की गिनती ही सम्भव नहीं। इन्हीं कारणों से स्वामी जी पर मुग्ध होते हुए प्रो. मैक्समूलर ने ये शब्द कहे—

I have full sympathy with the Arya Samaj movement. I know Swami Dayanand worked with honest motives The followres of Swami Dayanand should not be contented with what Swami Dayanand has done, but should carry on the work which he left undone."

कुछ इस तरह के विचार पाश्चात्य विद्वान Andrew Jackson Davis ने स्वामी जी और आर्य समाज के सम्बन्ध में दिए—

"To restore primieive Aryan Religion to its first pure st3te was the fire in furnace called 'Arya Samaj' which started and burnt brightly in the basom of that 'Inspired son of God in india—Dayanand Sarswati'

इम धार्मिक-क्रान्ति ने हिन्दू समाज की सामाजिक स्थिति मे ही नही अपितु शिक्षा क्षेत्र में भी पर्याप्त रूपेण परिवर्तन किए हैं। आर्यसमाज ने उस समय अपने गुरुकुल तथा दयानन्द विद्यालय तथा महाविद्यालय खोले जब कि शि..ा क्षेत्र पर ईसाइयों का एक मात्र अधिकार था। राजनैतिक दृष्टि से भी दयानन्द जी और उन का आर्य समाज स्वतन्त्रता के प्रथम अग्रदूत लगते है। ये प्रथम महापुरुष थे जिन्होंने कांग्रेस और उसके कर्णधारों से वहुत पहले ही यह घोषणा कर दी थी कि –

"अपना बुरे से बुरा राज्य भी अच्छे से अच्छे विरोधी राज्य से बहुत अच्छा है।"

भारतीय नव-जागरण के अग्रदूत स्वामी जी की सराहना मे कोई भी छन्द पूरा नही उतरता फिर भी पाखण्ड-खण्डिनी पताका को गाडने वाले इस महान् इन्सान के सम्बन्ध में किसी उर्दू शायर के ये उद्‌गार स्वामी जी के जीवन को इस तरह आंकते हैं :—

फरिश्ते भी गर मुब्तलाए-आजमाइश हो तो चीख उठें।

यह तो इन्सां है कि दिए जा रहा है इम्तहां अपना।

संक्षेपतः समग्ररूपेण अवलोकन कर लेने पर निष्कर्ष रूपेण यही कहा जा सकता है कि नव-जागरण के अग्रदूत स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने आर्य समाज के द्वारा देश को जो अभूतपूर्व सेवा की है उसे युगों-युगों तक नहीं भुलाया जा सकता। स्वामी जी के स्वप्नों के इस देश को महिमा का गान प्रसिद्ध फ्रेंच लेखक Monsier Delbs ने कुछ इन शब्दों में किया है—

"The influence of the civilisation worked out thousands of years ago in India is around and about us every day of our lives. it provides every corner of the civilised world. Go to America and you find there, as in Europe the infiuence of the civilisation which originally came from the banks of the Ganges."

अन्त में एमर्सन के इस विचार से इस लेख को समाप्त करता हूं—

"स्वीकार करना पड़ेगा कि सांस्कृतिक व राष्ट्रीय नवजागरण में स्वामी दयानन्द का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है। उनको मान्यताओं और सिद्धान्तों ने एक बार तो हीन-भाव मे ग्रस्त इस जाति को अपूर्व उत्साह से भर दिया।"

——

सत्यार्थप्रकाश के ग्यारहवें समुल्लास का महत्व तथा विवेचन

(ले० –श्री धीरेन्द्र कुमार गुरुकुल भैसवाल कला सोनीपत)

"फिर भी जब सत्पुरुष उत्पन्न होकर सत्योपदेश करते हैं तभी अन्धपरम्परा नष्ट होकर प्रकाश की परम्परा चलती है।"

इस आधार पर कि सत्यार्थ प्रकाश उस समय की कृति हैं जबकि भारतीय जनता में सर्वत्र अज्ञानता, अन्धविश्वास एवं मूढ़ता का ही प्रचार व प्रसार था तथा पराधीनता का दुष्प्रभाव भारतीय जन-मानस को हीन मनोवृत्ति-स्वरूप गाल में समेट रहा था— यह कहना कि यह ग्रंथ प्रभावशाली प्रबन्ध होते हुए भी सामयिक कृति है अतः वर्तमान में जबकि भारतीय जनता पराधीनता की कड़ी शृंखलाओं को तोड़ कर तथा वैज्ञानिक अध्ययन से अन्धविश्वासों को गोली मारकर स्वच्छन्दता पूर्वक विचरण कर रही है-- इसका महत्व नगण्य है—यह कहना हमारी नितान्त भूल होगी। ऐसा सोचना भी हमारी नितान्त अज्ञानता व मूर्खता का परिचायक होगा क्योंकि अब भी इस ग्रंथ के प्रत्येक अंग की भारतीय को ही नही, विश्वजनमानस को आवश्यकता है। वर्तमान सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक एवं आर्थिक समस्याओं का हल उन ग्रंथ में अभी भी ढूंढने की आवश्यकता है।

ग्यारहवां समुल्लास

सत्यार्थप्रकाश का एकादश समुल्लास एक ऐसी ही रचना है जिसने भारतवर्ष के ही नही, अपितु विश्व के अज्ञानमूलक एवं पाखण्डमूलक अन्ध-मतों की जड़ों को खोखला कर दिया है तथा जो अपने प्रचार से आगामी तथाविध मतों के लिए भूमण्डल को ऊसर भूमि बना देगा। इस समुल्लास ने भारतीय संस्कृति के उस आदर्श को पुष्ट करने में ताकत दी है जिसके अनुसार भारतवर्ष में विभिन्नता में भी एकता है। स्वामी जी ने वैदिक मत को सर्वोपरि रखते हुए व्यावहारिक तर्कों से अपने मत को पुष्ट किया है।

स्वामी जी के ग्यारहवे समुल्लास से प्राच्य इतिहास का भी पता चलता है। यह बात, जो मैंने इस पंक्ति मे लिखी है, बेशक व्यावहारिक तौर पर मजाक का विषय बन जाए पर आज से कुछ वर्षों बाद इतिहास-लेखक इतिहास लिखते हुए उद्धरणों (Quotations) में सत्यार्थ प्रकाश की पंक्तियों का समावेश करेगा। अज्ञानता एव अन्धविश्वास को इन पंक्तियों में किस प्रकार समाप्त करना चाहा गया है देखिए—

"जो-जो पूर्ण विद्या वाले धार्मिकों का नाम ब्राह्मण और पूजनीय वेद और ऋषि मुनियों के

शास्त्रों में लिखा था उनको अपने मूर्ख, लम्पट, अधर्मियों पर घटा बैठे। भला ये आप्त विद्वानों के लक्षण इन मूर्खों में कब घट सकते हैं? परंतु जब क्षत्रियादि यजमान संस्कृत विद्या के अत्यन्त रहित हुए तब उनके सामने जो-जो गप्प मारी सो-सो सबने मान ली। जैसी अपनी इच्छा हुई (ब्राह्मण) वैसा ही करते चले गए।'

"जब सच्चा उपदेश न रहा तब आर्यावर्त में फैलकर परस्पर लड़ने झगड़ने लगे।"

उन्हें यह गम ही नहीं रहा था कि अन्ध-विश्वास फैल रहा है—भारतवर्ष अज्ञानता के चक्कर में पिस रहा है अपितु वे आशावाद को भी प्रकट करते हैं—

"फिर भी जब सत्पुरुष उत्पन्न होकर सत्योपदेश करते हैं तभी अन्धपरम्परा नष्ट होकर प्रकाश की परम्परा चलती है।"

सामाजिक क्षेत्र में जितना उपकार स्वामी दयानन्द जी ने एकादश समुल्लास लिखकर भारतीय जनता का किया वह सूचकांक गांधी जी के प्रयत्नों के सूचकांक को पार कर जाता है। विभिन्न मत जो वैदिक मत रूपी चन्द्र को राहु की तरह निगलने का प्रयत्न तो कर रहे थे साथ-साथ भारतीय जनता में हीनता का प्रसार भी कर रहे थे, इन सबको समाप्त करने वाला कार्य कोई उपमान ढूंढ़ सकता है क्या?

इन खण्डनात्मक प्रक्रियाओं को पढ़कर कोई यह दावा नहीं कर सकता कि स्वामी जी ने तथा कथित 'पाखण्डी' मतों को निष्पक्ष समीक्षा नहीं की। विदेशी विद्वान् भी सविस्मय हो जाते हैं कि तर्क-श्रेणी का यह क्रम नितान्त आक्षेप रहित है।

कुछ विद्वानो की यह शंका है कि सत्यार्थ प्रकाश के ग्यारहवें समुल्लास में—

"जब परमेश्वर सर्वत्र व्यापक है तो किसी एक वस्तु में परमेश्वर की भावना करना और अन्यत्र न करना ऐसी ही बात है जैसी चक्रवर्ती राजा को एक राज्य की सत्ता से छुड़ाकर एक छोटी सी झोंपड़ी का स्वामी-मानना। देखो! यह कितना अपमान है।'

मूर्तिपूजा प्रकरण में इस गन्दी पद्धति का किस कार खण्डन किया है। कुछ उद्धरणों का अवलोकन तो कीजिए—

"प्र०—साकार में मन स्थिर होता है और निराकार में स्थिर होना कठिन है, इसीलिए मूर्ति रहनी चाहिए।"

उत्तर—साकार में मन कभी स्थिर नहीं हो सकता, क्योंकि उसको मन झट ग्रहण करके उसी के एक एक अवयव में घूमता और दूसरे में दौड़ता है......जो साकार में स्थिर होता तो सब जगत् का मन स्थिर हो जाता क्योंकि जगत् में मनुष्य......साकार में फंसा रहता है।'

इसी प्रकार गया में श्राद्ध-तर्पण, नामस्मरण, तीर्थ महात्म्य का उन्होंने खण्डन किया है। ब्रह्म, जीव और प्रकृति का सही स्वरूप दर्शाने हुए उन्होंने माया की विद्यमानता के कथन को उपहासास्पद बताया है। ग्रहों का फल कितना झूठा है यह भी उन्होने स्पष्ट किया है।

'वैतरणी नदी तरने के लिए दान' सम्बन्धी सच्चाई को स्पष्ट करने के लिए एक लघु कथा दी है जो इस रहस्य का उद्घाटन करती है। इस प्रकार पाखण्ड को स्वामी जी ने प्रभावशाली ढंग से समाप्त कर देना चाहा है।

इस तरह स्वामी जी ने ढोंग पर आधारित कुछ अस्पष्टताजन्य मतों का खण्डन करके एक नई चेतना जागृत की—जिसके कारण भारतीय जनता में आत्मिक ज्ञान का प्रकाश हुआ।

भारत में एक ऐसा युग आया था जब भारतीय जनता एक खोखले अभिमान से भर गई थी जिसकी जननी थी 'कुरीतियां'। स्वामी जी ने कुरीतियों को दूर करके एकादश समुल्लास को सामाजिक समुद्बोधन का नायक बनाया है।

प्रकाश है व अन्धेरा !

ले० कवि कस्तूर चन्द "घनसार" कवि कुटीर पीपाड़ शहर (रजि.)

कहीं है प्रकाश, कहीं अन्धेरा ।
कहीं है रात्रि, कहीं है सवेरा ॥

(१)

लक्ष्मी की चमचमार, कहीं शून्य-सा सदन ।
कहीं मुख पर है लाली, कहीं मलीन-सा वदन ॥
कही रेशम के गलीचे, कहीं खाट खटेरा—
कहीं है प्रकाश, कहीं अन्धेरा ।
कहीं है रात्रि, कहीं है सवेरा ॥

(२)

लदे हैं श्रृङ्गार से कहीं, नूपुर की है झङ्कार ।
कहीं विदाम की चक्कियां, कहीं मेवों की डकार ॥
कहीं तन पे लीर-चीर, कहीं चने का चबेरा—
कहीं है प्रकाश, कहीं अन्धेरा ।
कहीं है रात्रि, कही है सवेरा ॥

(३)

रजत-सी दिवारें कहीं, मुक्तों की है माला ।
कहीं भर-भर सुधा-सा, पीते हैं प्याला ॥
कहीं पीड़ित हैं भूख से, कहीं आनन्द बसेरा--
कहीं है प्रकाश, कहीं अन्धेरा ।
कही है रात्रि, कहीं है सवेरा ॥

(४)

खेलत हैं बालक कहीं, चांदी के खिलौने ।
कहीं बंगलों में भूले, झूलते हैं सलौना ॥
कहीं लगे हैं थरों में, दरिद्र नारायण का डेरा--
कहीं है प्रकाश, कहीं अन्धेरा ।
कहीं है रात्रि, कहीं हैं सवेरा ॥

(५)

कहीं पानी की न बूंद, कहीं नगर जल मग्न ।
कहीं घासका न तिनका, कहीं हरियाली सघन ॥
कहीं वन विरहान कहीं, फूल फलेरा—
कहीं है प्रकाश, कही अन्धेरा ।
कहीं है रात्रि, कहीं है सवेरा ॥

(६)

कहा लिखें कविता, प्रकाश है न बराबर ।
लक्ष्मी भी करती है—ये द्वैष सरासर ॥
इधर "घनसार" पापों ने, आकर देश घेरा-,
कहीं है प्रकाश, कहीं अन्धेरा ।
कहीं है रात्रि, कहीं है सवेरा ॥

दयानन्द हमारे

रचयिता-कविराज छाजूराम शर्मा 'शान्त' आर्यमहोपदेशक
पुरोहित-आर्यसमाज अड्डा होशियारपुर, जालन्धर

वही चांद-सूरज वही हैं सितारे।
मगर तुम कहां हो दयानन्द हमारे ॥
तू आर्य जगत का था रत्न प्यारा।
था निर्भर तुम्हीं पर ये भारत हमारा ॥
दुखी सारे मानव बिना हैं तुम्हारे ॥ मगर तुम ॥

तू था निर्बलों के बलों का सहारा।
अछूतों को तूने ही आकर उभारा ॥
तुझे आज ये प्यारा भारत पुकारे ॥ मगर ॥

रही फैल वेदों की ज्योति जगत में।
मची खलबली दम्भियों के कुमत में ॥
चले धर्म नैया लगा कर किनारे ॥ मगर ॥

भटकते थे अज्ञान अन्धकार में हम।
विचरते बिना ज्ञान संसार में हम ॥
थे दुखियों के दुख में तुम ही सहारे ॥ मगर ॥

तेरी चर्चा हर मुल्क हर देश में है।
तू मानव नहीं देवता वेश में है ॥
तेरे जैसा कोई नजर न हमारे ॥ मगर ॥

दिया दान जीवन का घातक को तूने।
अरे "शान्त" काटा है पातक को तू ने ॥
दया कर गया तू दयानन्द प्यारे ॥ मगर ॥

युग-निर्माता स्वामी दयानन्द

श्री राजीव कुमार मल्होत्रा जालन्धर

जब भारत में मत-मतांतरों का अंधकार फैला हुआ था, जनता किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो रही थी, उसे रास्ता सूझ नहीं रहा था कि असली धर्म क्या है। स्वामी दयानन्द जी ने वेद भानु समुद्भासित करके उस तिमिर जाल को तिरोहित किया। —सम्पादक

वैसे तो इस विधि-निर्मित विश्व ने, चराचर भौतिक जगत् में असंख्य मानव उत्पन्न होते हैं। परन्तु विरले ही ऐसे मानव होते हैं जिनके छोड़े हुए पद-चिन्हों पर जगत् चलता हैं, जिनके तेजोमंडित विचारों से तेज का कण पाता है, जो अपने महान् कार्यों के आलोक से संसार को आलोकित कर देते हैं, जिनके उन्नत कार्यों को लोग उनके दिवंगत होने पर भी सदा स्मरण रखते हैं, जो अपने जीवन काल में जगत् का उपकार करते हैं, पार्थिव देह छोड़कर भी जो फूल की सुवास की तरह जन-मन में बसे रहते हैं और अपनी कृतियों की सुरभि से जगत् को सुरभित करते हैं। ऐसे दिव्य पुरुष कम ही होते हैं। युग पुरुष स्वामी दयानन्द जी ऐसे ही महापुरुषों में से एक थे।

इस भारत वसुंधरा ने अनेक दिव्य महापुरुषों को जन्म दिया जिनमें महात्मा बुद्ध, वर्धमान महावीर स्वामी, स्वामी शंकराचार्य, गुरु नानक देव, गुरु गोबिन्द सिंह, महात्मा गांधी आदि का नाम उल्लेखनीय है। इन महापुरुषों ने समय अनुसार परिस्थिति का अनुशीलन करते हुए भारतीय जनमानस कीं सोई हुई चेतना को जगाया। पर स्वामी दयानन्द जी ने जो कार्य किए वे अद्भुत और सराहनीय थे।

जब भारत में मत-मतांतरों का अंधकार फैला हुआ था, जनता किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो रही थी, उसे रास्ता सूझ नहीं रहा था कि असली धर्म क्या है। अच्छे धर्म की ज्योति पाखण्ड और मत-मतान्तरों की पोप-लीलाओं के तिमिर में अच्छादित हो रही थी, स्वामी दयानन्द जी ने वेद का भानु समुद्भासित करके उस तिमिर जाल को तिरोहित किया तथा सद्धर्म के योग की पीयूष धारा बहाई और वह है सद्धर्म या 'आर्य-धर्म'। यह आर्य-धर्म स्वामी दयानन्द जी का अपना धर्म नहीं था। स्वामी जी अन्य धर्म-प्रवर्तकों की तरह अपना कोई नया मत चलाना नहीं चाहते थे। वे तो पुराने धर्म का ही पुनरुद्धार करना चाहते थे जिसे जनता बहुत समय से भूल चुकी थी। स्वामी दयानन्द जी ने आर्य-धर्म द्वारा यह स्पष्ट किया कि वेद ही समस्त विद्याओं के भण्डार है। वेद प्रतिपादित धर्म

सत्य है। इसके अतिरिक्त जो कुछ है वह असत्य है। स्वामी जी का कहना था कि वेद अपौरुषेय हैं। पुराणों में अन्य स्मृति ग्रन्थों में वेद प्रतिपादित तत्व तो हैं पर उन ग्रन्थों में बहुत सी मिटावट आ गई है। उसमें पोप-लीला का प्रसार हो गया है। जैसे दुग्ध कलश में सुरा की कुछ बूंदे मिलकर दुग्ध को हेय बना देती हैं, वैसे ही पोप-लीला के कारण ये रचनाएं भी हेय हो गई हैं इस तरह स्वामी जी के विचारों में वेद का अध्ययन ही पर्याप्त है। यदि और कुछ अध्ययन करना हो तो वही करो जो वेद विहित है, जिसका ज्ञान शुद्ध और विचार-शून्य है। स्वामी जी ने ईश्वर के सम्बन्ध में अपनी धारणा दी कि ईश्वर एक है और वह निराकार है। ईश्वर की विविधता या ईश्वर की साकार रूपता को स्वामी जी स्वीकार नहीं करते। स्वामी जी का विचार था कि जो पाषाण प्रमिमाएं, जिनमें हम ईश्वरत्व की कल्पना करते हैं, अपनी रक्षा नही कर सकती तो दूसरे की रक्षा क्या करेगी। अतः इस तरह से भ्रमजाल से बचो। केवल अंतर्मुखी साधना से ही एक ईश्वर को अपनाओ। अन्दर और बाहर रूप में पवित्रता को धारण करने के लिए आवश्यक है कि दोनों समय सध्या करो, प्रतिदिन हवन करो, वेदों और उपनिषदों का पाठ करो। इस तरह स्वामी जी की धर्म के सम्बन्ध में मान्यताएं बड़ी स्पष्ट थी, जिनमें किसी प्रकार के पाखण्ड को स्थान न था।

स्वामी जी ने यही नहीं बल्कि तर्क से अन्य मतों का खण्डन भी किया। जिस समय स्वामी जी का अविर्भाव हुआ उस समय भारत पर ईसाई मत दनदना रहा था। स्वामी जी ने ईसाई मत के एक-एक तर्क का खण्डन किया क्योंकि ईसाई मत के लोग हिन्दुओं और मुसलमानों के धार्मिक विचारों का खण्डन कर रहे थे। स्वामी जी ने अनेक भाषण दिये, ईसाई मत के विचारों को तार-तार किया। यही नहीं बल्कि अन्य मत भी जो उग्र रूप में सिर उठा रहे थे। हिन्दुत्व का विनाश करने जा रहे थे, आर्य-धर्म को ध्वस्त करने जा रहे थे, स्वामी जी ने इन विरोधों को भी दूर किया और इस तरह से अपने गुरु विरजानन्द जी के आदेश के अनुसार भारत की ख्याति सर्वत्र फैलाई।

स्वामी जी के समय में समाज भी अंधकार के गढ़े में पड़ा हुआ था। निरन्तर सात-आठ सौ वर्षों तक यवनों की दासता भोगने के कारण अपनी पुरातन संस्कृति को विस्मृत कर चुका था। अत. भारतीय समाज रूढ़ि परम्पराओं में ग्रस्त हो गया था। भारत में नारी एकदम अशिक्षित और निरक्षर थी। वह केवल या तो घर के काम-काज करने की वस्तु समझी जाती थी या विलासिता की। स्वामी जी ने पहला आन्दोलन यह चलाया कि स्त्री को शिक्षा दी जाय। उस समय स्त्री शिक्षा की बात कहना समाज के लिए घोर अपराध था, पर स्वामी जी ने किसी विरोध की परवाह नहीं की और स्त्री शिक्षा का प्रचार किया, कन्या गुरुकुल इत्यादि खुलवाए। उस समय अछूतों को तुच्छ समझा जाता था। स्वामी जी ने जात पात का बन्धन समाप्त किया और अस्पृश्यता को दूर किया। उस समय युवा विधवाएं हेय और अमांगलिक

(शेष पृष्ठ ३१ पर)

आर्य समाज स्थापना शताब्दी समारोह

आर्य समाज स्थापना शताब्दी समारोह के अवसर पर विशाल प्रदर्शिनी का आयोजन किया गया है। जिसमें निम्नलिखित सामग्री प्रदर्शित की जाएगी प्रदर्शिनी ३ सप्ताह तक चलेगी।

ऋषि दयानन्द का जीवन-चित्रों और चार्टों के माध्यम से।

स्वामी जी की रचनाएं-सभी वृत्तियों की प्रकाशित एवं हस्तलिखित आवृत्ति।

सत्यार्थप्रकाश की अब तक की प्रकाशित सभी आवृत्तियां एवं विश्व की अन्य भाषाओं में प्रकाशित संस्करण ।

विभिन्न विषयों पर स्वामी जी का मत—स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश ।

विश्व के विभिन्न महापुरुषों का स्वामी जी व आर्य समाज सम्बन्धी मत।

भारत के किन-किन स्थानों पर स्वामी जी गए—भारत के मानचित्र में प्रदर्शनी

-आर्य समाज व आर्य साहित्यकारों, पत्रकारों प्रकाशकों द्वारा आरम्भ किये गये प्रकाशित पत्र पत्रिकाएं या अन्य कृतियां।

आर्य समाज को उपलब्धियां।

आर्य समाज को विभूतियां (महाधन) चित्र, परिचय व कार्य) संक्षिप्त चार्टों द्वारा प्रदर्शित।

वेदों का कक्ष –जिसमें वेद वेदांगों के प्रकाशित संस्करण, उनके विषयों आदि का चार्टों द्वारा संक्षिप्त दर्शन।

वेदों में विज्ञान –मन्त्रों का अर्थ जिसने वर्तमान अणु आदि विज्ञान की जानकारी मिलती है शाकाहार ।

योग कक्ष—योग का दैनिक एवं आध्यात्मिक जीवन में स्थान, योग का सही अर्थ।

गौ का वैज्ञानिक महत्व, गौकरुणानिधि का चार्टमय चित्रण।

भारत में स्त्री शिक्षा—आर्य समाज का योग चित्रमय प्रदर्शन।

अनेक सरकारी संस्थाओं द्वारा प्रदर्शन।

सभी आर्य संस्थाओ एवं बन्धुओं से सहयोग की प्रार्थना है।

विशेष जानकारी के लिये कृपया सम्पर्क करे :

—संयोजक प्रदर्शनी समिति चन्द्रपाल गुप्त

———

मारीशिस में हिन्दी प्रशिक्षकों का सेमिनार

नई दिल्ली :—मारीशिस के प्रधान मन्त्री सर शिवसागर रामगुलाम ने गत दिवस पोर्ट लुई में महात्मा गांधी संस्थान द्वारा आयोजित हिन्दी और उर्दू के प्रशिक्षकों के एक सम्मेलन का उद्घाटन किया। सर रामगुलाम ने इस संस्थान में गहरी रुचि रखने के लिये भारत की प्रधान-मन्त्री के प्रति आभार प्रकट किया तथा आशा प्रकट की कि यह केन्द्र हिन्दी, उर्दू तथा अन्य भारतीय भाषाओं के प्रसार का एक केन्द्र सिद्ध होगा।

देव दयानन्द

रचयिता :—(डा० मुन्शीराम जी शर्मा 'सोम' कानपुर)

देव ! तुम्हारा जन्म दिवस था, जिसमें द्यौका द्युम्न भरा था।
उसी द्युम्न से मन में मंगल संकल्पों का स्राव झरा था ।।
जीवन यज्ञ बना था जिससे विमल वेद—वट वृक्ष हरा था ।
तेरी पुण्य पृतन्या सम्मुख प्रबल प्रतापी पाप डरा था ।।

तुम्हें प्राप्त गायत्र साम थे, तुम्हें मिले स्वच्छन्द छन्द थे ।
जिनकी तीव्र ज्योति के आगे, दुष्कृतियों के नेत्र बन्द थे ।।
प्राण पुञ्ज ! तव भंखख से, पाखण्डों के प्राण मन्द थे ।
तव आगम से जन जीवन के मुक्त पुरातन तन्त्र फन्द थे ।।

तुमने समता का स्वर फूंका, दलित गलित उठ पड़े धरा से ।
विकसित प्रगति पन्थ पर चलकर, मिले अदीन अदिति अपरा से ।।
वर्षों का तमतोम भग्न था, तेरी वेद प्रभा प्रखरा से ।
हुआ प्रभात मिलन सुखप्रद था, द्विज दल का श्रुति स्वयंवरा से ।।

एक ओ३म् अक्षर अविनाशी, अखिलेश्वर का नाम मान्य है ।
एक हमारा धर्मशास्त्र है जो निगमागम में वदान्य है ।।
अपने बीस नखों से अर्जित, जो स्वधान्य है, वही धान्य है ।
अमृत पुत्र हम आर्यवंश के, यही वंश हम को वितान्य है ।।

मत मतान्तरों का गर्दन कर एक धर्म के थे तुम द्रष्टा ।
भूमण्डल मण्डन महिमामय तुम अखण्ड भारत के स्रष्टा ।।
पुण्य कोष लेकर तुम उतरे जिससे हुई पुष्टि परिपष्टा ।
कृश के अंग अंग में छाई सौष्भव की विभूति परितुष्ठा ।।

सब सहृदय हों, सम मानस हों, एक चित्र हों, अविद्वेष हों ।
स्नेह संवलित ज्वलित धर्मव्रत, दीप्त शान रत, विमत त्वेष हों ।।
वीर्यवृती इन्द्रियां हमारी, सत्य-ब्रह्म-वर्चस्व-वेष हों ।
प्रभु के संदर्शन में विचरें, तभी हमारे क्लेश शेष हों ।।

देव दिखाकर सुपथ सुकृत का तुम बलिदानी स्वर्ग सिधारे ।
देव तुम्हारी बलि इस कलि में, बड़े बड़े बलिदानी हारे ।।
इस बलि से जन बलीयान हो, बने स्वतन्त्र, शत्रु सब मारे ।
आज विजयिनी आर्य पताका, नभ में फहरे दे नव नारे ।।

क्षमा याचना

आर्य मर्यादा का ऋषि निर्वाण अंक पाठकों के सामने है। हम इसे एक बहुत उच्चकोटि का अंक बनाना चाहते थे जिसमें महर्षि दयानन्द के जीवन, उनमें सिद्धान्त व उनकी विचार-धारा के विषय में बड़े-बड़े विद्वानों के लेख हों और जो हमारे प्रचार का एक साधन बन सके। परन्तु ६ अक्तूबर को जो कुछ हुआ उसके कारण सभा के कार्यालय की तालाबन्दी कर दी गई है। आर्य मर्यादा के सब ब्लाक, लेख, व दूसरी सामग्री अन्दर ही रह गए हैं। इसलिए जिस प्रकार का अंक हम निकालना चाहते थे निकाल नहीं सके। फिर भी हम इस अंक के रूप में अपने महान् आचार्य के चरणों में श्रद्धाञ्जलि के कुछ पुष्प भेंट कर रहे हैं। इतना छोटा अंक प्राप्त करने पर पाठकों को जो निराशा हुई होगी। उसके लिए हम उनसे क्षमा चाहते हैं।

—सम्पादक

(२८ पृष्ठ का शेष)

समझी जाती थी। स्वामी जी ने विधवा-विवाह का प्रचार किया। तात्पर्य यह कि स्वामी जी ने अपने विचारों से समाज में एक क्रांति पैदा कर दी क्योंकि कहां सती-प्रथा और कहां विधवा-विवाह कहां अस्पृश्यता और कहां हरिजनों से मिलकर रहना, वहां नारी की निरक्षरता और कहां शिक्षा का प्रसार – पर स्वामी जी ने उस समय के समाज के विरोध की परवाह नहीं की। दृढ़ता से आगे बढ़ते ही गये। स्वामी जी के बाद महात्मा गांधी ने भी स्वामी जी के ही विचारों का समर्थन किया। आज भारत से समाज और नारी में जो नवचेतना तथा जागरूकता दिखाई देती है वह भारत को महर्षि की ही अमूल्य युग देन हैं। क्योंकि प्रबुद्ध नारी ही अपनी सन्तान को प्रबुद्ध और श्रेष्ठ बना सकती है। आज भारत सरकार भी वही कार्य कर रही है जो स्वामी जी ने कहा था। इसलिये कर्म सम्बन्धी, समाज सम्बन्धी, राजनीति सम्बन्धी जो अमूल्य निधि स्वामी जी ने हमें दी उन्हें भारतीय कैसे भुला सकते हैं। इसलिये स्वामी जी क्रान्तिकारी थे, युग पुरुष थे, युग द्रष्टा थे, युग सृष्टा थे।

'वेदों वाले स्वामी तेरी वाणी अनमोल'

रचयिता :—(श्री प्राध्यापक राजेन्द्र 'जिज्ञासु')

वेदों वाले स्वामी तेरी वाणी अनमोल

जड़ से जड़ता हिलाई ।
ईश्वर पूजा सिखलाई ।।

तोले ग्रन्थों के बोल, वेदों वाले स्वामी तेरी वाणी अनमोल

ईश्वर अजर अजन्मा ।
उसकी कोई न प्रतिमा ।।

खोले दम्भियों के पोल, वेदों वाले स्वामी तेरी वाणी अनमोल

'बिस्मिल' रोशन बलिदानी ।
स्वामी श्रद्धानन्द नामी ।।

दिल्ली उनकी जय बोल, वेदों वदों वाले स्वामी तेरी अनमोल

गोरे शासक घबराए ।
लण्डन वाले थर्राए ।।

डोले आसन अडोल, वेदों वाले स्वामी तेरी वाणी अनमोल

मारो छाती पै गोली ।
भर दूं मां की मैं झोली ।।

अड़ गये सीने को खोल, वेदों वाले स्वामी तेरी वाणी अनमोल

तेरे अद्भुत दीवाने ।
सारी जगती यह जाने ।।

पा गये जीवन का मोल, वेदों वाले स्वामी तेरी वाणी अनमोल

सुध बुध गुरुदत्त विसराई ।
तर गई उसकी तरुणाई ।।

घुट्टी दे दी क्या घोल, वेदों वाले स्वामी तेरी वाणी अनमोल

———————

शताब्दि निधि को परिपूर्ण करें

(पं. नरेन्द्र, संयोजक आर्य समाज स्थापना शताब्दी समिति)

हम आर्यजनों का सौभाग्य हैं कि आर्य समाज के कार्य को सौ वर्ष पूर्ण हो रहे हैं। प्रसन्नता है कि आर्य जगत दिसम्बर मास की २४ से २ . को अपना शताब्दी समारोह भव्य और आकर्षक रूप में बम्बई में निर्धारित कार्यक्रमनुसार मनाने जा रहा है। इस समारोह की सफलता के लिए आवश्यक ही नहीं अनिवार्य है कि प्रत्येक आर्य तथा विशेषकर आर्य धनिक अपनी आहुति इस यज्ञ की सफलता केलिये अर्पित करें। इस संबन्ध में शिरोमणी सभा के प्रधान, मन्त्री तथा अन्य आर्य नेताओं ने समय समय पर भारत वर्ष की सभी पत्र पत्रिकाओं में आर्यजनों का ध्यान आकृष्ट किया है। परन्तु खेद है कि इस दिशा में सन्तोषजनक उपलब्धी नहीं हो सकी है।

यह शताब्दी एक पावन पर्व का प्रतीक है। इस पर्व को भव्य रूप से मनाना प्रत्येक आर्य का परम कर्त्तव्य है। कृषि की पावन गंगा में स्नान करने का यह पुनीत अवसर हमारे जीवन में सौभाग्यवश प्राप्त हुआ है। इस अवसर का लाभ उठाते हुये हमें मनोयोग पूर्वक इस पर्व के मनाने और उसको सफलता की चरम कोटि तक पहुचाने में यत्नशील होना चाहिये।

योजनाएं बनती अवश्य हैं, किन्तु उन्हें क्रियान्वित करना, उन्हें सजीव बनाना यह सब आर्यजनों के पूर्ण सहयोग पर ही अवलम्बित है। इसकी सिद्धि के लिये सभी आर्य बन्धु तन-मन-धन से जुट जाएं तो निश्चिय ही योजनाएं सफलता के चरण चूम सकेंगी।

आशा है सभी आर्य भाई बहिन इस अवसर पर अपने कर्त्तव्य का पालन कर ऋषि के कार्य को गति देने निमित शताब्दी समारोह को सफल बनाने में सर्व भावेन संकल्प लेगे और धनराशि द्वारा आवश्यक सहयोग करें। शताब्दी के १) ५) १००) तथा १०००) रुपये के नोट सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, महर्षि दयानन्द भवन, रामलीला मैदान, नयी दिल्ली-१ से प्राप्त किये जा सकते हैं।

वेद प्रचार

श्री मथुरादास जी उपदेशक आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब, आर्य समाज मिलर गंज में श्री सत्यानन्द जी मुंजाल के बनाये प्रोग्राम के अनुसार मैजिक लालटेन द्वारा २२-६-७५ से बड़े प्रभावशाली व्याख्यान दे रहे हैं। आप लेबर कालोनी, जनता नगर- चेतनसर, आर्य समाज किदवई नगर में प्रचार कर चुके हैं। मुधार ग्राम में भी प्रचार कर आये हैं। आज कल शेरपुर ग्राम में प्रचार कर रहे हैं अभी गयासपुर ग्राम लुधियाना अशोक नगर न्यू माडल टाउन तथा आर्यसमाज माडल टाऊन में भी प्रचार हो रहा है। प्रात: रविवारीय सत्संगों में माडल टाऊन तथा मिलर गंज समाजों में भी उनके भाषण हो चुके हैं प्रभाव इतना हैं कि दिन-प्रतिदिन उनके प्रचार की मांग बढ़ रही है।

—दीनदयाल मन्त्री आर्य समाज मिलर गंज लुधियाना

तुम अवतरित हुए थे भू पर !

रचयिता—(श्री कुसुमाकर जी फिरोजाबाद)

पाप ताप अभिशाप मिटाने
तुम अवतरित हुए थे भू पर ।
जन जागरण के पांच जन्म का, तुम ने ही उद्घोष किया था ।
दैन्य दासता के दुर्गम-दुर्जेम दुर्ग पर रोष किया था ।
निराश्रितों के कङ्कालों में, प्राणों का संचार किया था ।
घोर घृणा के विषम वृक्ष का तुमने ही संहार किया था ।
सौम्य ! साम्य की सुधा पिलाने,
तुम अवतरित हुए थे भू पर ॥
विमल विवेक विरक्त विश्व था. अमा अभावों की छाई थी ।
अन्ध उलूक मन्द मत वालों ने तम की महिमा गाई थी ।
जड़ जंगम का भेद-भेद कर हम अनेकता में विलीन थे ।
भूल चुके मन्तव्य भव्य हम्, कि कर्त्तव्य विमूढ़ दीन थे ।
ज्योति पुञ्ज नव ज्योति जगाने
तुम अवतरित हुए थे भू पर ॥
मातृ भक्ति का, आत्म शक्ति का, तुमने घर घर दीप जलाया ।
भारतीय संस्कृति का सौरभ, मधु ऋतु सा पवन बरसाया ।
साहस शौर्य प्रबल पौरुष का, तुमने अवरिल स्रोत बहाया ।
यथा योग्य व्यवहार भानु का, स्वाभिमान का अलख जगाया ।
अमर पुत्र अवरत्व दिलाने,
तुम अवतरित हुए थे भू पर ॥
सबल आतताई से तरना, यह मानव का धर्म नहीं है ।
क्रूर कुटिल के कुलिश करों से, कम्पित होना कर्म नहीं है ।
हो धर्मज्ञ भले ही दुर्बल—पर तुम उसका सुयश पसारो ।
न्याय नीति के निर्णायक पर—निर्भय निश्छल तन मन वारों ।
सत्य मूर्ति हीनत्व हटाने,
तुम अवतरित हुए थे भू पर ।
संयम त्याग तपस्या व्रत का, तुमने ही वरदान दिया था ।
राष्ट्र धर्म के संरक्षण में, बलि पथ का आह्वान किया था ।
दम्भ दत्य के कपट कोट पर तुमने प्रबल प्रहार किया था ।
सत्यमेव जय मूलमन्त्र का, तुमने जय जय कार किया था ।
घन घमण्ड की घटा घटाने.
तुम अवतरित हुए थे भू पर ॥

दीपावली और महर्षि दयानन्द सरस्वती

(प्रा० श्री भद्रसेन वेद-दर्शनाचार्य, साधु आश्रम, होशियारपुर)

दीपावली प्रकाश का पर्व है। ऐसे ही महर्षि दयानन्द सरस्वती भी ज्ञान के आलोक थे। उन्होंने सत्य ज्ञान के प्रसार के लिए आजीवन सर्वविध प्रयास किया तथा इसी के लिए आर्य समाज की स्थापना की। जैसे प्रकाश विनाशक और भयकारक अन्धकार को दूर करता है चाहे वह कितना भी पुराना या नया, अथवा छोटा-बड़ा हो। ठीक वैसे ही महर्षि दयानन्द ने हर क्षेत्र के अन्ध विश्वास, अज्ञान, अनाचार, अत्याचार, कुरीति, कुरूढ़ि रूपी अविद्या का नाश कर सत्य विद्या का प्रकाश किया। अतः इस प्रकाश पर्व पर महर्षि के ये शब्द—"अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए।" नियम आठ। वस्तुतः इस पर्व से सामाञ्जस्य रखते हैं और दोनों का एक ही सन्देश और अभिप्रायः हैं। अतः इसी नियम पर यहां विचार करना सामाञ्जस्य की दृष्टि से अधिक उयुक्त होगा।

"अन्धकार की तरह ही अविद्या भी हर प्रकार के दुःख, क्लेश, कष्ट, सन्ताप, परेशानी और अशान्ति का कारण है। जैसे अन्धेरे में ठोकरें ही लगती हैं या भय बना रहता है, वैसे ही अविद्या के कारण मनुष्य उस क्षेत्र में सदा ठोकरें ही खाता है या भय, रोग और बेचैनी को प्राप्त करता है।

आज जिस अशान्ति, बेचैनी से हम परेशान हैं और चाहते हुए भी उसके जाल से निकल नहीं पाते। इसका एक मात्र कारण अविद्या ही है। हम अविद्याग्रस्त होने के कारण ही अशान्त, बेचैन और दुःखी हैं। अत एवं न्यायदर्शनकार ने कहा है—

दुःख जन्म प्रवृत्ति दोष मिथ्याज्ञानाना
मुत्तरोत्तरापाये तदनन्तरा पायादपवर्गः

१, १, २।

अर्थात् हमारे विविध प्रकार के दुःखों का कारण जन्म और जन्म शुभाशुभ प्रवृत्ति से होता है, प्रवृत्ति दोषों से और दोषों का तथा सबका मूल कारण वस्तुतः मिथ्या ज्ञान ही है। अविद्या का अर्थ है—उलटी विद्या और उल्टे ज्ञान से से व्यक्ति सदा असफल होने के कारण दुःखी और निराश ही होता है। क्योंकि हम प्रतिदिन अपने व्यवहार में अनुभव करते हैं कि जब भी कार्य सही ढंग से न करके उलटे ढंग से किया जाता है तो उसका विपरीत ही परिणाम होता है और हमें तब लाभ के स्थान पर नुकसान ही उठाना पड़ता है। कई बार तो ना समझी (अविद्या) के कारण जान से भी हाथ धोना पड़ता है।

योग दर्शन में बिस्तार के साथ अविद्या का

परिचय दिया गया गया है और अविद्या को ही हर प्रकार के अन्य क्लेशों, दोषों की जड़ कहा है (अविद्या क्षेत्रमुत्तरेषाम् यो. सू.) अविद्या की परिभाषा बताते हुए वहां कहा है—अनित्याशुचिदुःखानात्मसु नित्य शुचिः सुखात्मख्यातिरविद्या २, ५। अनित्य पदार्थों को नित्य, अपवित्र को पवित्र, दुःख को सुख और जड़ को चेतन समझना अर्थात् जैसी वस्तु है उसको वैसा न समझ कर उससे उलटा समझना अविद्या है।

हर प्रकार के उलटे ज्ञान (अविद्या) और उसके कारण होने वाले दुःखों, क्लेशों, दोषों से विद्या द्वारा ही छुटकारा पाया जा सकता है। इसीलिए सांख्य दर्शन में आधिभौतिक, अधिदैविक औट आध्यात्मिक दुःखों से बचने का उपाय सही ज्ञान हो बताया है। तत्वज्ञानान्निःश्रेयसम् वैशेषिक और न्याय दर्शन में भी तत्वज्ञान से ही परम कल्याण की प्राप्ति बताई है। विद्यया ऽमृतमश्नुते यजु. ४०, १४ में विद्या से हर प्रकार की मृत्यु के स्थान पर जीवन की प्राप्ति दर्शाई गई है। इसी लिए ही भारतीय साहित्य में विद्या की इतनी अधिक प्रशंसा मिलती है। भर्तृहरि नीतिशतक में बताते हैं कि विवेक भ्रष्टानां विनिपातः शतमुखः १०—अविद्या, अज्ञान, अन्ध विश्वास में फस जाने पर व्यक्ति हर तरह से नीचे ही नीचे गिरता जाता है। क्योंकि अविवेकः परमापदां पदम्—भाखी अविवेक आपत्तियों, कष्टों का मूल द्वार है।

यदि हम ठण्डे दिल से विचार करें और अपने चारों ओर के व्यवहार को देखें तो अनुभव होता है कि बिना सोचे समझे (अविद्याजन्य) ऐसे अनेक रीति-रिवाजों, प्रथाओं, विश्वासों को हम ने अपना रखा है। जो यथार्थ न होकर अयथार्थ हैं। और जिसके परिणामस्वरूप हम दुःखी हो रहे हैं।

न जाने कितने अनुपयोगी, हानिकारक धूम्रपान, अफीम, गांजा, चरस, नशीली गोलियां, मद्यपान (शराब), जुआ जैसे व्यसन समाज में चिपटे हुए हैं। इसी प्रकार कोई भूत-प्रेत से सताया हुआ है, तो कोई झाड़ फूंक से भूत, रोग, दुःख दर्द ठीक कर रहा है। और कहीं देवी, गुरु, बाबा आदि उतरते हैं। कोई शुभाशुभ दिन (जैसे कि शनि को नहाएगा-सदा सुख पाएगा, दे तेल को पत्नीकुन बला टली, मंगल को मनाएगा आदि), अमुक दिन-अमुक काम नहीं करना।

दिशाशूल, अनुकूल-प्रतिकूल नक्षत्र-मुहूर्त-राशि और उनके फल के चक्र में हैं, तो कहीं शुभाशुभ वस्तु दर्शन, शकुन-अपशकुन अर्थात् खाली घड़े बिल्ली के रास्ता काटने, छींकने और १३ संख्या का विचार चल रहा है। तो कोई बिना पुरुषार्थ ही भाग्यचक्र के कारण हस्तरेखाओं के वशवर्ती हो रहा है तो कोई मिलेगा मुकद्दर की रट लगा रहा है।

कही फलित ज्योतिष की लाल-पीली रेखाओं का जाल बनाया या देखा जा रहा हैं, तो कहीं उसके परिणामस्वरूप पत्रे से शादियों की तिथि निश्चित की जा रही हैं, जिसके परिणामस्वरूप साये के कारण एक ही दिन में एक ही नगर में सैंकड़ों बरातें हैं तो दूसरे दिन कोई भी दिखाई नहीं देती। कोई गण्डे, तवीज, तन्त्र, मन्त्र से बिना परिश्रम के ही सारी कामनाओं की पूर्ति माने बैठा है, तो कहीं 'जो चाहोगे सो पाओगे' के दैनिक पत्रों में बड़े-बड़े विज्ञापन छप रहे हैं। इस प्रकार होशियार लोगों ने एक से एक बढ़

कर धर्म के नाम पर ठगने के विचित्र-विचित्र कारनामे बना लिए हैं और जनता की श्रद्धा का खूब लाभ उठा रहे हैं।

ऐसे ही कोई धन, आभूषण को दुगने करने का दावा कर रहा है और कोई किसी बालक के खून से स्नान कराकर या नवभूत से पुत्र प्रदान कर रहा है, तो कहीं तालाब-बान्ध आदि को पक्का करने या इष्टदेवी को सन्तुष्ट करने के लिए मानव तक की बलि दिलवाने का चक्र चला रहा है। दीनानगर, अमृतसर और कुल्लु आदि में अपनी मनौतियों की सिद्धि के लिए अपने प्रियजनों तक की देवी के लिए बलि देने की घटित घटनायें आए दिन दैनिक पत्रों में आती रहती हैं। इस प्रकार के सारे धन्धे, भुलावे दूसरों को अन्धेरे, अविद्या के चक्र में डाल कर ही किए जाते हैं। यह सुनिश्चित बात है कि हर प्रकार की अविद्या (अन्धेरा) दुःख, क्लेश का कारण है और विद्या (प्रकाश) कार्य की सफलता का मूल है। अतः अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए।"

प्रकाशय ग्रन्थ आर्यसमाज के नियमों पर एक दृष्टि से ज्योतिषा बाधते तमः के अनुसार हर प्रकार के अन्धेरे को छोड़ कर प्रकाश के पथ (तमसो मा ज्योतिर्गमय) को अपनाना ही प्रकाश पर्व और महर्षि का अमर सन्देश है। आओ इस सन्देश को सच्चे अर्थों में जीवन में धारकर दीपमाला का पर्व मनायें।

——————

धार्मिक परीक्षाएं

सरकार से रजिस्टर्ड आर्य साहित्य मण्डल अजमेर द्वारा संचालित भारतवर्षीय आर्य विद्या परिषद की विद्याविनोद, विद्यारत्न, विद्याविशारद, विद्यावाचस्पति की परीक्षाएं आगामी जनवरी मास में समस्त भारत में होंगी। किसी भी परीक्षा में कोई भी बैठ सकता है। प्रत्येक परीक्षा में सुन्दर सुनहरी उपाधि पत्र प्रदान किया जाता हैं। इसमें धर्म के अतिरिक्त साहित्य, इतिहास भूगोल, राजनीति समाज विज्ञान आदि का कोर्स भी है। निम्न पते से पाठ विधि व आवेदनपत्र मुफ्त मगाकर केन्द्र स्थापित करें। परीक्षा शुल्क भी बहुत कम है।

डा. सूर्यदेव शर्म शास्त्री एम. ए. डी. लिट्
परीक्षा मन्त्री, आर्य विद्यापरिषद
चांद बावड़ी अजमेर।

निन्दा प्रस्ताव

आर्यसमाज टौणी देवी अपनी अन्तरङ्ग में इस प्रस्ताव द्वारा खेद प्रकट करती है और उस दुर्घटना और गुंडागर्दी की घोर निन्दा करती है जो ६ अक्तूबर १९७५ को आ० प्र० नि० सभा पंजाबके मुख्य कार्यालय गुरुदत्तभवन जालन्धरनगर में हुई और जिसमें सभा के निरापराध कर्मचारियों को बुरी तरह पीटा गया। यह दुर्व्यवहार आर्य समाज पर कलंक का टीका है। इसकी जानकारी करते ही सिर शर्म से झुक जाता है। हमारी समाज की सहानुभूति उन सब कर्मचारियों के साथ है जिनको पीटा गया है। सम्पूर्ण आर्य जगत में इस की घोर निन्दा की जा रही है। अतः प्रस्ताव पास किया जाता है।

मन्त्री—आर्य समाज टौणी देवी

——

दीप मालिके

(रचयिता—कविवर श्री कुसुमाकर जी आर्य नगर फिरोजाबाद)

अमा की घोर निशा में रमा,
तुम्हारे नयन लजीले क्यों ?
लोक में विदिति यही अपवाद. शीश पर है पापी का भार !
लगी मुख पर कालिख की रेख, न जिसका हो सकता परिहार !
घृणा की घटा उठी घनघोर; न कोई करता जी भर प्यार !
उलूकों के वाहन पर बिठा, किया कैसा जग ने सत्कार !
विष्णु के चरण चापती रही,
भाव मन के गर्वीले क्यों ?
निखिल जगती में है तम-तोम, व्योम से बरसे 'अमृत' अंगार !
'अभावों' का है प्रबल प्रकोप, 'अनय' का उठता भीषण ज्वार !
अविद्या की बहती वातास, भरा भूतों में भृष्टाचार !
आपदाओं के दीपक-दाम द्वेष को ज्योतित करते द्वार !
जल रहा नैतिक-नीड़ निरीह,
खिलौने खील सजीले क्यों ?
दीप माला में कैसे, शोक, द्यूत क्रीड़ा तस्कर व्यापार !
अधम धर्मों की लेकर आड़, सुरक्षा संस्कृति का संहार !
दम्भ दानवता की है जीत, मंजु मानवता की है हार !
तुम्हारे पुण्य पर्व पर राष्ट्र, पतन की पकड़े है पतवार !
ग्रंथियों के कसने के समय,
तुम्हारे बन्धन ढीले क्यों ?
विश्व में नास्तिकता का नृत्य, निरन्तर होने लगा निशङ्क !
किया 'शंकर' ने तीव्र बिरोध, बैठकर विमत्स बेद-पर्य्यंङ्क !
तुम्हीं ने कमले ! ले करवाल, किया क्यों क्रूर भृकुटि कोङ्क !
हुआ है किसका तुमसे त्राण, करें स्वागत क्यों राजा-रंक !
'वीर जन-गण से पूछो आज,
तुम्हारे लोचन गीले क्यों ?

राम में, मैं हूं मुझ में राम—तीर्थ ने दिया दिव्य सन्देश !
तत्व एकत्व सुझाया शुभ्, द्वैत का रहे न मन में लेश !
देख तुम सकी न दृग से दृश्य, दिया भक्तों को कलुषित क्लेश !
ले गई अनुपम विमत्त-विभूति, रहेगी शाश्वत स्मृति शेष !

तुम्हारा यह नृशंस व्यवहार,
वचन फिर भी तरजीलें क्यो ?

विश्व के वैभव को दुत्कार, किया जिसने था जीवन दान !
धर्म का सत्य दिखाया स्वरूप, सुनाया 'गुरु' -गौरव का गान !
पिला स्वातन्त्र्य सुधा का सार, किया हंस-हंस कर विषका पान !
हर्ष का कैसा पावन पर्व, हुये कितने दीपक निर्वान !

दयानन्द विहीन विलोक :—लोक में भाव हठीले क्यों

(स्वामी रामतीर्थ, महावीर. शंकराचार्य एवं दयानन्द ऋषि, चारों का निर्वाण दीपावली)
(पर ही हुआ था। इसी का कलक दीपावली पर है। ऐसा व्यक्त किया गया है।—सम्पादक

आती है हर वर्ष दिवाली

ले. :—श्री त्रिलोक चन्द्र राघव आर्य प्रचारक (टकारा)

आती है हर वर्ष दिवाली ।
महान् आत्मा देव दयानन्द कर गये पिजरा खाली ।
आती है हर वर्ष दिवाली ।

पौधा आर्य समाज का, जग में गये लगाये ।
बीता चुके सौ साल, रहा लहर लहर लहराए ॥
छाई चहुदिश हरियाली ।
आती है हर वर्ष दिवाली ॥

देख दुर्दशा देश की, ब्रह्मचय व्रत धार ।
मानव जाति पर किये, ऋषि राज उपकार ॥
मिटी अविद्या की रात काली ।
आती है हर वर्ष दिवाली ॥

दया दयानन्द कर गए, शत्रु लिया बचाये ।
विष के बदले करों से, धन भी गये पकराय ॥
जिसने पिलाई विष प्याली ॥
आती है हर 'वर्ष दिवाली ॥

——

महर्षि दयानन्द के उद्‌गार, विचार और व्यवहार

लेखक—(प्राध्यापक राजेन्द्र जिज्ञासु अबोहर)

आर्य समाज के लौह पुरुष वीतराग संन्यासी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज कहा करते थे कि आर्यसमाजी लोग अपने आचार्य ऋषि दयानन्द के सद्‌ग्रन्थों को यह समझ कर नहीं पढ़ते कि यह हमारे आचार्य के ग्रन्थ हैं। ऋषिकृत ग्रंथों को पुस्तक मात्र मानकर पढने में वह रस और सौंद्रय नही जो यह सद्‌भाव लेकर स्वाध्याय करने में है कि यह ग्रंथ एक वेदवेत्ता आचार्य, मन्त्र द्रष्टा ऋषि और युग निर्माता विभूति की कृति हैं। सच तो यह है कि आर्य समाज में लोगो ने ऋषि के जीवन चरित्र का पाठ भी श्रद्धा विभोर होकर सद्‌विवेक से किया है। यदि मुनिवर गुरुदत्त, वीर लेखराम, आचार्य मुक्ति राम, स्वामी वेदानन्द, आचार्य चमूपति के भक्ति भावों को लेकर ऋषि जीवन की सरिता में हम स्नान करते तो हमारा भी बेड़ा पार हो जाता और विश्व का भी बड़ा कल्याण होता।

ऋषि के हृदय का चित्र ऋषि के शब्दों में देखिये :—"यदि आपको मेरा इतिहास ठीक-ठीक विदित नहीं, तो इसके लिखने में साहस मत करो क्योंकि थोड़ा सा भी असत्य हो जाने से सम्पूर्ण निर्दोष कृत्य बिगड़ जाता है। ऐसा निश्चय रखो।"

ये शब्द ऋषि ने अपने भक्त पण्डित गोपाल राव हरि को लिखे थे। तनिक हृदय की गहराई तो देखें कि 'थोड़ा सा भी असत्य हो जाने से सम्पूर्ण निर्दोषकृत्य बिगड़ जाता है।' ऐसे सत्य-वृत धारी महामानव दयानन्द के नाम लेवा ऋषि निर्वाण पर्व पर अपने हृदय को टटोलें और देखें कि हमारे जीवन में सत्य का क्या स्थान है।

महर्षि ने राणा सज्जन सिंह को लिखा, ' प्रातः समय योगाभ्यास की रीति से ध्यान करना।" यह पत्र महर्षि के अन्तिम दिनों में लिखा गया। कैसी विचित्र विडम्बना है कि जो महर्षि एक राजपुरुष को भी योगाभ्यास का आदेश उपदेश देता है उस महर्षि के बारे हमने यह भ्रामक विचार फैलने दिया और स्वयं भी फैलाया कि ऋषि ने लोक-कल्याण के लिए योगाभ्यास छोड़ दिया।

महर्षि ने स्वयं एक प्रश्नकर्त्ता को उत्तर दिया कि इतना कार्य में बिना योग साधना, ईश्वरीय सहायता के बिना कर सकता था।

महर्षि ने राणा को लिखा :—' ऐसा न होवे कि निर्बल अनाथ लोग बलवान और राजपुरुष से पीड़ित होके रुदन करें और उनका अश्रुपात

भूमि पर गिरे कि जिससे सर्वनाश हो जावे।' संसार के सब राजपुरुषों, शासकों. प्रशासको के लिए महर्षि के ये उद्गार अनुकरणीय हैं। किसी भी सम्प्रदाय देश व प्रदेश से किसी का सम्बन्ध क्यों न हों, आदर्श राज्य व्यवस्था का आधार तो सब मनुष्यों के लिये ऋषि के यही वचन है।

महर्षि ने राणा को प्रेरणा दी कि यज्ञ होम के लिए, विधवा, अनाथ, वृद्ध आदि के पालन के लिये, मेवाड़ में वैदिक धर्म प्रचारार्थ, प्राचीन आर्य ग्रंथों के प्रकाशनार्थ और क्षत्रिय वर्ग के तैयार करने के लिए योगशाला आदि के लिए प्रकूर राशि व्यय करे ऋषि ने झंझोड़ते हुए लिखा, "इसमें ऐसा समझिये कि जानो एक गवर्नर जनरल साहेब और आ गये।

बंधुओं Old Age Pension का विचार विश्व में तब किसी के मन मस्तिष्क में न था। यह पत्र तब लिखा गया था। ऋषि ने राणा को लिखा कि मान लेना कि एक और गवर्नर जनरल मेवाड़ में आ गया है। भाव यह था कि तब गवर्नर जनरल के राजस्थान आने पर भारी भर कम व्यय करना पड़ा वह न चुभा, यदि उस पर व्यय हो सकता है तो प्रजा-हित के लिए यह राशि (जितनी ऋषि ने लिखी) भी निकाली जा सकती हैं।

(प्राणों की चिन्ता नही – ध्येय की है

आर्यों! ऋषि की अन्तः वेदना को समझने के लिए श्री महाराज के एक पत्र का यह अंश बारंबार पढ़ें और कर्त्तव्य पालन में जुटें। नामधारी साधु केवल मात्र गेरू धार कर आर्य समाज के सर्वनाश पर जुटे हैं। "शस्त्रार्थ की जगह न मेरी हो न आपकी। जूना अखाड़ा में आने से मुझे शारीरिक हानि पहुंचाने का भय है। शरीरपात की तो मुझे चिन्ता नहीं, परन्तु जो उपकार कार्य मैं कर रहा हू वह अधूरा रह जायेगा।':

प्रिय पाठकवृन्द! ऋषि की जानो और उसी की मानों। ऋषि कितने महान् व उदार हृदय साधु थे इसका पता इससे चलता है कि एक पत्र में महर्षि ने शस्त्रार्थ के लिए स्वामी विशुद्धानन्द जी को मध्यस्थ नियत कर दिया। यह वही विशुदानन्द थे जिनकी कृपा से काशी में महाराज (१८३९ ई० के काशी शास्त्रार्थ में) के जीवन पर बार हुआ था। ऋषि का अपमान करने वाले यह भी थे! रघुनाथ जी कोतवाल सतर्कता न न दिखाते तो ऋषि सम्भवतः न बच पाते।

लौह पुरुष और इतिहासज्ञ स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी एक और घटना बड़े प्रेम से सुनाया करते थे। काशी शास्त्रार्थ के बाद हरिद्वार के कुम्भ पर ऋषि विशुद्धानन्द जी को ऐसे प्रेम भाव से मिले मानों काशी में कुछ हुआ ही नही। यह है सन्यास। अब तनिक उन लोगों की भी करतूतें देखे। पंजाब में आर्य समाज के अब दो ढाई लेखक रह गये हैं। स्वामी वेदानन्द, स्वामी आत्मानन्द, स्वामी स्वतन्त्रतानन्द, आचार्य राम देव, पं भगवद्दत्त पं० ब्रह्मदत्त जी 'जिज्ञासु आदि के गम्भीर पाण्डित्य की बात तो अब— परन्तु उन दो ढाई लेखकों में एक श्री पं० ओम प्रकाश जी आर्य हैं।

आर्य समाज में घुसपैट करके लूटमार करने के के प्रयोजन से आने वालों ने दो बार ओमप्रकाश जी की पिटाई करवा दी है। पाठकों को ज्ञात होना चाहिए कि आर्य समाज के साहित्य व इतिहास की बहुत सी अलभ्य सामग्री केवल और केवल श्री ओम प्रकाश जी आर्य के पास है।

पहले इन पंक्तियों के लेखक को मारने पीटने के षड़यन्त्र बने. धमकियां मिली और अब जो ये चमत्कार आरम्भ हुए हैं इनका परिणाम क्या होगा ?

यह करतूते करने में वह व्यक्ति भी है जो साधु वेश में दूसरों के लेख चुराकर अपने नाम से छपवाता है। ऐसा बहुत से लोगों ने हमें बताया और प्रमाण भी दिये।

आओ। ऋषि निर्वाण पर्व पर ऋषि के हृदय चित्र को देखें, पवित्र जीवन को समझें और अपना बेड़ा पार करें और यह कहने का अधिकार पावें :—

तुम्हारी कृपा से अजी मेरे भगवन।
मेरी जिन्दगी ने अजब पलटा खाया।।

निन्दा प्रस्ताव

१९-१०-७५ को आर्य समाज पुतली घर अमृतसर के साधारण सदस्यों की एक विशेष बैठक श्री धर्मवीर जी तालवाड़ एम. ए. की अध्यक्षता में हुई। सभा ने ६-१०-७५ को कुछ शरारती लोगों द्वारा आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के दफ्तर गुरुदत्त भवन जालन्धर में की गई हुल्लड़बाजी, मारपीट तोड-फोड़ और मार-पीट की घटना की घोर निन्दा की और सरकार से मांग की कि वह शीघ्रातिशीघ्र इस धटना की जांच पड़ताल करें और अपराधियों को कड़े से कड़ा दण्ड दे।

—हरिदेव हाण्डा मन्त्री

२. आर्य समाज जगराओं जिला लुधियाना—आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के मुख्य कार्यालय गुरुदत्त भवन पर मुरारी लाल तथा उनके साथियों ने गुण्डों की साथ लेकर ६ अक्तूबर (१९७५) को आक्रमण किया और सभा के कर्मचारियों को बहुत मार-पीट जी। इसके अतिरिक्त सभा के महामन्त्री श्री वीरेन्द्र जी तथा उपमन्त्री श्री योगेन्द्रपाल सेठ का अपमान किया। आर्य समाज के सभी सदस्यों की यह सभा उनके इस कुकृत्य की घोर निन्दा करती हैं और पंजाब सरकार से सानुरोध प्रार्थना करती है कि दोषी व्यक्तियों को कडा दण्ड दिया जावे और सभा कार्यालय को सभा मन्त्री श्री वीरेन्द्र जी को लौटाया जावे।

मन्त्री—मुनीलाल आर्य समाज जगराओं

इनकी कौन सुनेगा ?

उड़ीसा (उत्कल) का मार्मिक वृत्तान्त

कला एवं दारिद्रय का संगम

ले. :—(श्री प्रज्ञा देवी आचार्य पाणिनी कन्या महाविद्यालय वाराणसी)

३० सितम्बर १९७५ को मैं कन्या गुरुकुल तनरड़ा जिला गंजाम (उड़ीसा) के उत्सव में पू. स्वामी ब्रह्मानन्द जी परिव्राजक के निमंत्रण पर पहुंची। उड़ीसा प्रान्त भर में यह एकमात्र आर्य कन्या गुरुकुल हैं, जिसमें बहुत सी आदिवासी कन्याएं भी विद्याध्ययन कर रही हैं। यहां की कन्याओं एवं कतिपय अध्यापिकागण के भोलेपन, संकल्प-निष्ठा एवं आर्य-संस्कृति के प्रति अतिशय प्रेम को देख कर तो मन अति हर्षित हुआ। यह सब पूज्य जी स्वामी के ही सत्प्रयासों से चल रहा है। आर्ष पाठविधि भी यहां उनका चलाने का निश्चय है, जिसके लिए प्रयास जारी है।

पू. स्वामी जी उड़ीसा प्रान्त के लिये अहर्निश कार्य में रत रह कर क्या कुछ कर रहे हैं यह सब अपनो आंखों से जा कर देखने का विषय है। कन्याओं के इस गुरुकुल के अतिरिक्त लड़कों का गुरुकुल, 'गुरुकुल वेदव्यास सुन्दरगढ़ (राउरकेला)' जिसमें अधिकांश आदिवासी ही छात्र हैं, संस्कृत पढ़ रहे हैं। इसके अतिरिक्त जिन पर्वतीय वन्य क्षेत्रों में ग्राम-ग्राम में ईसाई पादरियों के द्वारा उनकी अज्ञानता निरक्षरता का लाभ उठाकर उन्हें धर्मविहीन बनाने का कुचक्र चलाया जा रहा है, स्वामी जी उन के मुकाबले में सैंकड़ों स्कूल खोल कर शिक्षा का प्रसार कर रहे हैं, तथा उनके कुचक्रों को धराशायी कर दिया है। अकेले एक व्यक्ति ने इतने स्कूल अपने बल पर चला रखे हों यह सचमुच ही प्रर्याप्त आश्चर्य का विषय है।

वास्तविक तपोवन देखा

गुरुकुल के उत्सव के पश्चात् में कतिपय सज्जनों सहित पू. स्वामी जी के विशेष कार्य क्षेत्र तपोवन को जीप से देखने गई। लगभग ४००० फुट की ऊंचाई पर बनाया हुआ यह तपोवन आश्रम जहां अपने प्राकृतिक सुरम्य दृश्य से मन को मुग्ध करता है, वहां पर्वतीय निरीह ग्रामवासियों के रक्षार्थ अपने धर्म एवं संस्कृति को प्रसारित करने का यह केन्द्र भी है। यह देखकर कोई भी गद्‌गद् हुये बिना नहीं रह सकेगा। यहां के लोग हिन्दी यत्किंचित् भी नहीं समझते, अतः मुझे दुभाषिये के सहारे से ही अपने कुछ विचार उन्हें देने पड़े। कई शुद्ध हुये ईसाई पादरी भी यहां आश्रम में रह कर वैदिक धर्म की सेवा में रत हैं।

आश्रम से थोड़ा ऊपर और चल कर मैं पहाड़ पर उस स्थान को देखने गई जहां पहाड़ से

झरना निकल रहा है, और वहां फूस के छप्परों वाली मिट्टी के दीवारों की एक कुटिया बनी हुई है। लोगों ने मुझे बताया कि यह कुटिया पू. स्वामी जी ने अपने नश्वर देह को छोड़ने के लिये अर्थात् मृत्यु समय के लिये बनवाई है तो हृदय अत्यन्त द्रवित हो उठा। उस तपोनिष्ठ सच्चे मानवतावादी कर्मठ परिव्राट् के लिये अपने श्रद्धा-सुमन अर्पित करने हेतु कुछ अश्रुकण भी रुक न सके। इस झरने का पानी रोककर तलाब बनाने का यत्न आश्रम के द्वारा बहुत किया गया, ताकि समीप के ग्रामों को लाभ हो सके। किन्तु पानी को रोका न जा सका। न जाने वह कहां अन्दर ही अन्दर पहाड़ों में चला जाता है रुकता ही नही। प्रभु की लीला !!! यही से पर्वत की थोड़ी ऊंचाई पर एक बहुत बड़ी गुफा है। कहते है यह गुफा अन्दर से इतनी विशाल है कि डेढ़ सौ व्यक्ति वहां विश्राम पा सकते है। इस तपोवन में एक प्रार्थना स्थल बनवाने का पू. स्वामी जी का पूर्ण निश्चय है, जिसमें गांव के लोग इकट्ठे होकर सम्मिलित रूप से वैदिक प्रार्थना कर सकें। गिरजों की बढ़ती हुई संख्या को देखते हुये यह अत्यन्त आवश्यक भी है।

यह लेख अधूरा ही रहेगा यदि उन जमीदार महानुभाव की चर्चा यहां न की जाये जिन्होंने पू. स्वामी जी के कर्मनिष्ठ जीवन से प्रभावित होकर अपना सर्वस्व अर्पण करके आश्रम बनाने में स्वामी ब्रह्मनन्द जी महाराज का पूरा सहयोग दिया है एवं दे रहे हैं। उनका उस दिन हम लोगों के प्रति किया गया आतिथ्य कभी भुलाया ही नहीं जा सकता। आश्रम के लोगों का भोलापन, सादगी, स्वच्छता, सोद्देश्य कार्य-निष्ठा देखकर सहसा ऐसा मन में विचार उठा कि हजारों की संख्या में हरिद्वारादि में साधना एवं तपश्चर्या की इच्छा से आये हुये गृहस्थ अथवा वानप्रस्थ महानुभाव [illegible] को छोड़ कर क्या व्यर्थ समय यापन नहीं कर रहे ? सभी उपभोग सामग्रियां गृह से अतिरिक्त कहीं अन्यत्र इकट्ठी करके रहना मात्र तो साधना नहीं। जीवन जी कर ही खत्म कर देने के लिये नहीं है बल्कि पुरुषार्थ के लिये है। काश ! कि हम इन अभागे वन्य मानवों की देख कर सेवा के लिये तड़प उठते।

आश्रम में कुछ देर रुकने के पश्चात् हम लोग जीप से ही आश्रम के आसपास के गांवों में गये, जहां मानवता कराह रही थी। भूखे, नंगे बच्चे युवक, युवती स्त्रियां तक केवल एक फटा चीथड़ा तन में लिपटाये हुये भाग कर हमारी जीप के सम्मुख सैकड़ों की संख्या में एकत्रित हो गये। हमारे साथ कलकत्ते से आये हुये दानवीर श्री हसराज जी चड्ढा ने अपने साथ लाए हुये वस्त्र एवं तीन मन चावल इन्हें बांटे, पर मैं तो वहीं खड़ी हुई उनके प्रति दर्दैव के इस अभिशाप को देख कर कि जिन्हें वर्ष में दस मास केवल पेड़ के पत्तों को खाकर रहना पड़ता है, अन्न के दर्शन नही होते, आंसू बहाती रही। क्या इनकी भी कोई सुनेगा ? यही सोचती रही। इसी स्थान पर पू. स्वामी जी ने अपनी शक्ति पर ही एक हस्पताल खोला हुआ है, जहां हजारों इन निरीहों को औषधि दी जाती है। इन स्थानों पर ईसाई पादरी खुल कर खेलना चाहते हैं, कई गाव के गांव ईसाई बना लिये हैं। एक-उनके मुकाबले में स्वामी ब्रह्मानन्द जी डटे हुये हैं। यदि आर्य जनता के द्वारा उन्हें मुक्तहस्त

होकर सहयोग नहीं मिल सकेगा तो परिणाम स्पष्ट है। पर्याप्त धन-वस्त्र औषधादि के अतिरिक्त उड़िया भाषा में अनुवादित आर्य साहित्य भी छोटे-२ ट्रैक्टरों के रूप में उन्हे चाहिये, जिसे वे कुछ अर्धशिक्षितों में वितरित कर सकें। संप्रति बाढ़ की समस्या से उड़ीसा के लगभग दो सौ पचास ग्राम अस्तव्यस्त हैं। कितने ही ग्रामों का जिम्मा तीन मास तक एक समय खिचड़ी खिलाते रहने का श्री स्वामी जी ने ले रखा है। स्वामी जी के मन में एक व्यथा है, एक तड़प है, एक आग है जो उन्हे चैन से बैठने नहीं देती। पिछले वर्ष इतने अस्वस्थ थे कि मृत्यु का ग्रास बनते-२ बच गये, पर उन्हें मानों इस नश्वर देह की कोई चिन्ता ही नहीं।

उड़ीसा से लौट कर वाराणसी पहुची तो एक बहिन पूछ बैठी-"बहिन ! उड़ीसा गई थी, जगन्नाथपुरी के दर्शन किये, प्रसाद लिया होगा, और हां ! भुवनेश्वर की नृत्यकला संसार प्रसिद्ध है, उसके अवलोकन का भी कुछ अवसर मिला क्या ? कटक के प्रसिद्ध तारकशी के कुछ सामान भी खरीदे या नहीं ? कितनी कला उड़ीसा में है इसीलिये तो उसे उत+कला उत्कल कहते हैं ?" मैंने उनके प्रश्न की झड़ी का उत्तर देते हुये कहा—"बहिन ! मुझे इन जड़ देवताओं को पानी देने में कोई मजा नहीं आ सकता। चेतन मानव भूख से तड़प कर मानव को ही फाड़ कर खा जाना चाहते हैं, और ये पत्थर...।' मन्दिर के इन धर्म के ठेकेदारों को क्या पता है कि इन का धर्म ईसाइयत के कुचक्र से दिन-प्रतिदिन समाप्त किया जा रहा है। जिनके दारिद्रय को देख कर कलाकारों की कला भी थर्रा उठेगी, मैं तो उन्हें देखने गई थी बहिन ! मुझे और किसी से कोई अभिप्राय नहीं !!'

——

एक हजार रु. के पारितोषिक प्राप्त करें

आर्य युवक परिषद दिल्ली की ओर से ३० वर्ष की आयु के युवक-युवतियों के लिये स्वर्णावसर

१. आर्य समाज के १० नियम लिखकर २ की व्याख्या ५ पृष्ठों में लिखकर १६५४ कूचा दखिनी राय, दरिया गंज दिल्ली—६ के पते पर भेज देवे।

२. आर्य समाज का सत्संग, वार्षिकोत्सव नगर कीर्तन, संस्कार तथा पर्व पर एक २ पृष्ठ में सुझाव लिखकर भेजें कि ये पांचों कैसे उपयोगी सिद्ध होवे।

३. मानसिक तथा बौद्धिक परीक्षा के २ प्रश्न पत्र पर अपना पता लिखा २५ पैसे वाला लिफाफा भेजकर मंगवा कर हल करके लौटा देवे।

अन्तिम तिथि ३ नवम्बर १९७५ दीवाली का दिन हैं। —देवव्रत धर्मेन्दु आर्योपदेशक प्रधान

आर्य समाज शिमला का चुनाव

शिमला,—आर्य समाज लोयर बाजार शिमला की एक बैठक मे श्री सत्यप्रकाश प्रकाश महंदीरत्ता को सर्वसम्मति से अध्यक्ष चुन लिया गया। उन्होने अन्य पदाधिकारियो को भी मनोनीत कर दिया। जिसमे उपप्रधान श्री राजगोपाल आर्य, श्री हंसराज खुराना, श्री ओमप्रकाश महाजन, उपमन्त्री श्री हरबन्स आर्य, कोषाध्यक्ष श्री कुन्दन लाल आहूजा चुने गये।

दिवाली का सन्देश

(श्री डा. सूर्यदेव शर्मा साहित्यालंकार एम. ए. डी. लिट, अजमेर)

(१)

तमस पट का अवगुंठन गाढ़, बना के असित अमा का वेष ।
दिवाला दीन देश का काढ़, दिवाली देती क्या सन्देश ?
समय था जब यह भारत वर्ष, जगद्गुरु था सबमें सिरमौर ।
अनूपम था इस का उत्कर्ष, न समता का था कोई और ॥

(२)

चमकता चक्रवर्ति साम्राज्य, अवनितल पै अशेष अभिराम ।
विजय कर लंकपुरी महाराज, अयोध्या आये थे जब राम ॥
हुआ था सच्चा स्वागत मान, हर्ष का उमड़ा सिन्धु अपार ।
दिवाली मनी सहित सम्मान, जला के दिया दिया उपहार ॥

(३)

वर्ष का वणिज व्याज व्यापार, लगाते थे व्यापारी आज ।
दीनता दूर देश से टार सजाते थे सब सुख के साज ॥
कहां है अब वह धन सम्पत्ति, कहां व्यापार विजय विस्तार ।
नित्य नूतन रहती आपत्ति, दीनता की दुर्दैवी मार ॥

(४)

अभागा जागा था कुछ भाग, हुआ था ऋषिवर का अवतार ।
उठा उन्नति का था अनुराग, किन्तु होना था वज्र-प्रहार ॥
दिवाली की थी काली रात, छिपाया जिस ने भारत भानु ।
आर्यजन पर था वज्राघात, कलित कलिका पर क्रूर कृशानु ॥

(५)

"दया" का दिया बुझा ऋषिराजगये—"आनन्द" भवन के द्वार ।
दुखी था सारा आर्य समाज, न कोई कर सकता उपचार ॥
दिवाली को कर प्राणोत्सर्ग दिया ऋषिवर ने पावन पाठ ।
जलाओ ज्ञानदीप जन वर्ग, सजाओ सब मिल वैदिक ठाठ ॥

(६)

अखिल जन मण्डल होवे आर्य, वेद का पकड़े पन्थ महान् ।
धर्म अनुकूल सभी हों कार्य, मिटें मत ढोंग असत अज्ञान ॥
हमारे घर आकर प्रति वर्ष, दिवाली देती यह सन्देश ।
"सूर्य" सम हो वैदिक उत्कर्ष, जगद्गुरु बने हमारा देश ॥

इतिहास के झरोके से

(श्री ओमप्रकाश जी आर्य)

---

६ अक्तूबर की दुर्घटना का शिकार हो जाने के कारण मैं इस विशेषांक की तैयारी मे विशेष योगदान नहीं दे सका। विस्तर पर पड़े पड़े ही ध्यान आया कि कुछ नया प्रसाद पाठकों को भेंट करना आवश्यक है । महर्षि दयानन्द के सच्चे अनुयायियों ने किस लग्न और निष्ठा से धर्म प्रचार किया इसकी दो तीन घटनाएं आपकी भेंट हैं। सारे शरीर में दर्द होने के कारण अधिक देर उठना बैठना कठिन है अतः स्वास्थ्य लाभ होने पर ही पूरी तरह सेवा करना सम्भव हो सकेगा।

भगवान् हम सबको सुमति प्रदान करे।

—ओम् प्रकाश आर्य

अमर शहीद पं० लेखराम आर्य मुसाफिर ने अपने बलिदान से तीन चार मास पूर्व आर्य समाज लुधियाना के वार्षिकोत्सव पर इस्लामी मान्यताओं पर एक खुला व्याख्यान देने कीघोषणा की। लुधियाना में इस प्रकार के व्याख्यान का यह पहला ही अवसर था। उत्सव पर बाहर से आर्य समाज के प्रसिद्ध महानुभाव भी पधारे हुए थे। देवयोग से व्याख्यान प्रारम्भ होने से कुछ समय पूर्व पण्डित जी के पेट में सख्त दद उठ खड़ा हुआ जिसके कारण उन्हे सभा मण्डप छोड़ने पर विवश होना पडा । कई डाक्टर चिकित्सार्थ पहुंचे पण्डित जी जैसे धीर-वीर पुरुष को दर्द से अत्यधिक बेचैन देखकर सभी हैरान थे कि यह महान् व्यक्ति इस दर्द से इतना व्याकुल क्यों हो रहा है ? बाद में पता चला कि व्याकुलता और बेचैनी का कारण पेट का दर्द ही नहीं था परन्तु उन्हें यह ख्याल बेचैन किये हुए था कि जो मुसलमान बन्धु व्याख्यान सुनने आये हैं वह सब निराश होकर लौट जाएंगे।

(आर्य समाज लुधियाना के पचास वर्षीय इतिहास से)

(२) महर्षि दयानन्द की कृपा कटाक्ष से पतित से पावन बन अपने मधुर संगीत द्वारा वैदिक धर्म का प्रचार करने वाले महता अमीचन्द जी भी एक बार आर्य समाज लुधियाना के वार्षिकोत्सव में सम्मिलित हुए। उत्सव की कार्यवाही के अनन्तर भोजन आदि से निवृत्त होकर महता जी नगर में दुकान दुकान पर चक्कर लगाकर उत्सव के सम्बन्ध में लोगों को सम्मति और जो चर्चा होती थी उसे अपनी पाकेट बुक में नोट करके गायन द्वारा उत्सव में सुनाया करते थे।

(आ० स० लुधियाना के ५० वर्षीय इतिहास से)

(३) स्वार्थ एवम् अधिकार लिप्सा मनुष्य को अविवेकी बना उसे अनिष्ट के मार्ग पर चला देती हैं। मुंशी इन्द्रमणि मुरादाबादी की कभी

धाक थी। उन्हें इस्लामी मत के सिद्धान्तों का विशेषज्ञ एवम् आलोचक माना जाता था—वे थे भी वस्तुत: ऐसे ही। उन दिनों मतों का आपसी वाद विवाद खूब चलता था। मुन्शी जी की लेखनी भी अपना जौहर दिखा रही थी कि एकाएक किसी दबाव के कारण उन पर अभियोग चलवा दिया गया। अभियोग में आपको कैद तथा जुर्माना दोनों हुए। महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा संस्थापित आर्य समाज मुरादाबाद के आप सदस्य तो थे ही आर्य समाज का प्रचार भी खूब किया करते थे। महर्षि ने आपके साथ हुए अन्याय के विरुद्ध आवाज उठाई। लोगों को प्रेरणा की गई कि आर्थिक सहायता भेजें। महर्षि की अपील पर रुपया आना शुरू हो गया। महर्षि दयानन्द जी के प्रभाव से सजा माफ करदी गई परन्तु जुर्माना देना पड़ा। जो दे दिया गया। महर्षि की इच्छा थी कि जुर्माना की राशि चुका देने के पश्चात् जो शेष राशि बच गई है वह सहायता भेजने वालों को लौटा दी जाए। मुन्शी जी तथा इनके शिष्य ला० जगन्नाथदास वैश्य इसके लिये तैयार न हुये। रुपये को देखकर उनका मन स्थिर न रहा। उन्हें यह भी भ्रम था कि सारा रुपया स्वामी दयानन्द जी के प्रभाव से नहीं अपितु मुन्शी इन्द्रमणि जी के अपने प्रभाव से ही आया है। जब किसी प्रकार भी जनता का रुपया लौटाने को दोनों तैयार न हुए

तो २९ मई १८८३ ई० को आर्य समाज से निष्कासित कर दिए गए। दोनों गुरु चेला जो पहले महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के गुण गाया करते थे अब गालियां देने लगे। ला० जगन्नाथ दास ने आर्य समाज मुरादाबाद का सदस्य रहते हुये दो सुन्दर पुस्तकें 'आर्य प्रश्नोत्तरी' तथा मूर्ति निरूपण' लिखी थीं परन्तु अब मायापति को भूल मायादास बन गये तब सत्पथ दिखलाने वाले महापुरुष देव दयानन्द के उज्ज्वल और पावन चरित्र पर कीच उछालना शुरू कर दिया 'दयानन्द चरित्र' नामक एक पुस्तक लिखी जिस में अन्य अनेक बातों के अतिरिक्त एक प्रश्न यह भी उठाया कि—

लिखा है जो सोमनाथ का हाल,
वो भी दयानन्द जी का है जाल।
चुम्बक की वहां शिला लगी थी,
आकाश में मूर्ति खड़ी थी।
दिखलाओ तो यह कहां लिखा है।
बतलाओ प्रमाण इसमें क्या है?
(दयानन्द चरित्र से)

ला० जगन्नाथ दास का इस पुस्तक का उत्तर सन् १९०१ में पण्डित ललिता प्रशाद अग्निहोत्री जी ने 'सत्य प्रकाश' पुस्तक द्वारा दिया था, अग्निहोत्री जी ने इस प्रश्न का १९०१ ई० में जो खोजपूर्ण उत्तर दिया वह उनके गहरे अध्ययन तथा धर्मानुराग का परिचायक है। पाठकों की ज्ञानवृद्धि के लिए उनके शब्दों में ही उत्तर अंकित किया जाता है।

अव्वल देखो रोमानसिज आफ दी हिस्टरी आफ इण्डिया दर बयान वाक्यात महमूद गजनवी बाबपञ्जम जिसमें अव्वल महमूद का तनहा बशकल एक मामूली सवार के जाना। एक निहायत हसीन नौजवान औरत के नहाते वक्त उसके शीर ख्वार बच्चा को भेड़िये के मुंह से छीन कर उस औरत को वापस देना और उसको इस तरह से ममनून करके सोमनाथ के मन्दिर

के तमाम खुफिया भेदों को मालूम करना । दूसरी मरतबा यूरश करके फतहयाब होना और उस औरत को पुजारियों की बेजा नफसानियत के जुल्म से बचाकर उससे निकाह करना और मूर्ति की काफी तहकीकात करके उसको कशिश-ए मिकनातीसी से लटकता हुआ पाना और उसको तोड़ना वगैरा २ ।

इसी तरह देखो ईलियटकी हिस्टरी आफ इण्डिया जिल्द अव्वल सफा ६७ ता ६६ ।

'The king directed a person to go and feel all round, and above and below it with a spear, which he did but met with no obstacle. One of the attendents then stated his opinion that the canopy was made of load stone and the idol of ivon and that the engenious builder had skilfully contri ved that the magnet should not excr-cise a graeter force on any one side hence the idol was suspended in the middle.

तरजुमा—बादशाह ने एक शख्श को हुक्म दिया कि तुम जाओ और भाले से ऊपर वा नीचे वा चारों तरफ जांच कर देखो । उसने वैसा ही किया मगर उसको कोई रुकावट की शै मालूम नहीं हुई । तब मुसाहबों में से एक शख्स ने अपनी राए इस तरह जाहिर की कि (मूर्ति के ऊपर का) गुम्बद चुम्बक पत्थर का बना हुआ है और मूर्ति लोहे की, और अकलमन्द बनाने वाले ने होशियारी के साथ इस तरह बनाया है कि चुम्बक किसी एक तरफ सिरफ अपनी कशिश जा असर न डाल सके बल्कि चारो तरफ यकसां असर करे जिसकी बजह से मूर्ति बीचों बीच लटकी हुई हैं ।

(सत्यार्थ प्रकाश पृष्ठ ३६-३७)

आर्य बन्धुवों ! क्या अपने आचार्य की प्रत्येक बात को सत्य प्रमाणित करने की धुन आपको भी सवार है और क्या आज आप अन्य मतवादियों तक वैदिक सत्य का प्रकाश पहुंचा रहे है ? इन प्रश्नों का उत्तर अपने आज के कार्य-कलाप से प्राप्त कीजिये । दीपावली का अन्धेरे में उजाला करने वाला यह पर्व अन्धकार से जूझना सिखलाता है और अविद्या से बढ़कर आत्मा को प्रकाश से दूर ले जाने वाली कोई वस्तु नहीं अतः आओ सभी मिलकर विद्या का प्रचार करें ताकि मतों के भ्रमजाल से छुटकारा पाकर लोग वैदिक सुपथ पर चलने का सौभाग्य प्राप्त कर सकें :

———

राम के भक्तों से

(रचयिता—श्री प्रकाशचन्द्र कविरत्न, अजमेर)

(१)

राम ने तजा था राज पिता के वचन काज,
तुम पितृ-मात बात धूल में मिलाते हो।
राम ने निषाद आदि भीलों को लगाया गले,
तुम मान के पतित, आंखें दिखालाते हो।
राम ने किया था सती सीता हेतु घोर युद्ध,
तुम लाल ललना लुटेरों से लुटाते हो।
एक भी न काम गुण धाम राम सा प्रकाश,
किस बिरते पै भक्त राम के कहाते हो।

(२)

राम के कहाते हो जो भक्त तो बनो सशक्त,
राम के समान ही चरित का निर्माण हो।
दुष्ट दैत्य, दम्भियों के तल के दलव हेतु,
बज्रपाती घाती राम का अचूक बाण हो।
वेद शास्त्र यज्ञ, विप्र सन्त राष्ट्र की रक्षार्थ,
अर्पण सहर्ष धन, धाम, देह प्राण हो।
निश्चय 'प्रकाश विघ्न, विपद विनाश हो,
उल्लास ओज आश हो, स्वदेश का कल्याण हो।

अबोहर क्षेत्र में ग्राम-प्रचार-पखवाड़ा एवं आर्यसमाज की स्थापना

अबोहर, 27 अक्तूबर—आर्यसमाज अबोहर की ग्राम प्रचार-योजना के अन्तर्गत इस क्षेत्र के आधा दर्जन सीमावर्ती ग्रामों (ग्राम साबूआना, टालीवाला, खुईखेड़ा, बोदीवाला पित्था, वजीदपुर एवं झूमियांवाली) में वेद प्रचार का पखवाड़ा अभूतपूर्व उत्साह और उल्लास के साथ मनाया गया। अबोहर से पचासों आर्यसमाजी स्त्री-पुरुष स्कूटर-बस-जीपों द्वारा प्रचार में भाग लेते रहे।

इस पुनीत अवसर पर स्वामी ओमानन्द सरस्वती व डा. राम प्रकाश के अतिरिक्त स्वामी सुकर्मानन्द, स्वामी योगेश मुनि, प्रो. विश्वबन्धु व मा. तेगरामजी के प्रवचन तथा श्री जगतवीर स्नेही, श्री लीलाराम भजनमण्डली एवं हरियाणा की श्री ईश्वरसिंह जी की प्रसिद्ध भजनमण्डली के गीत हुए। आर्यसमाज अबोहर के आर्यसमाज शताब्दी वर्ष के उपलक्ष्य में इस क्षेत्र में कम से कम 10 नई आर्यसमाजें स्थापित करने के लक्ष्य को दुहराया गया।

——

अमर शहीदों की पुण्य स्मृति में

समर्पण

शिक्षा और साधना के बल पर आत्मगोपन का व्रत ले, प्रतिष्ठा सूकरी से सर्वथा दूर रह, जीवन की सब आशा—प्रतीक्षा अपूर्ण रख, संसार के आकर्षणों से ऊपर उठ, काषाय वस्त्रधारी न होते हुये भी सच्चे त्याग और कर्मयोग का पवित्र मार्ग अपना भारत माता के बन्धनों को काटने के लिये जिन्होंने अपना सर्वस्व न्योच्छावर कर दिया। फांसी के फन्दे को चूम चूम कर अपने गले में हंसते मुस्काते डाला और उस दिन को विजयादशमी का दिन घोषित किया। उन देश-धर्म पर बलिदान होने वाले वीरों के उज्ज्वल तथा प्रेरणादायक जीवन की गौरव गाथा से अलंकृत आर्य मर्यादा का यह बलिदान विशेषांक उनकी ही पुण्य स्मृति में श्रद्धा समन्वित हृदय से सादर समर्पित है।

—ओमप्रकाश आर्य

भारत के उपराष्ट्रपति का बलिदान विशेषांक के लिये

शुभ कामना सन्देश

उपराष्ट्रपति भवन
नई दिल्ली
दिनांक १३-१२-७५

मुझे यह पढ़कर अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुखपत्र "आर्य मर्यादा" २१ दिसम्बर को बलिदान विशेषांक प्रकाशित कर रहा है। आर्य समाज ने देश और धर्म के लिये बहुत बलिदानी पैदा किये हैं। मैं इस विशेषांक के लिये अपनी शुभ कामनाएं भेजता हूं।

आपका
हस्ताक्षर
(बी. डी. जत्ती)
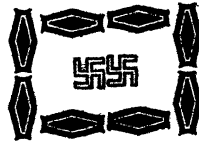
मुख्यमन्त्री हरियाणा का पत्र

मुख्यमन्त्री, हरियाणा,
चण्डीगढ़
११ दिसम्बर, १९७५

प्रिय बन्धुवर,

मुख्यमन्त्री का पद ग्रहण करने के अवसर पर आप द्वारा भेजा गया स्नेहयुक्त, सद्भावनापूर्ण बधाई संदेश प्राप्त हुआ। आपने जो भावनाएं तथा विचार मेरे प्रति व्यक्त किए हैं. मैं उनके लिए आप का हृदय से आभारी हूं। अति धन्यवाद।

मुख्यमन्त्री के पद की भारी जिम्मेदारी जो अब मुझे निभानी होगी, उसके लिए आप जैसे प्रियजनों, सहयोगियों एवं अभिन्न मित्रों के आशीर्वाद तथा सहयोग से मुझे सतत बल होता रहेगा और मैं राज्य की जनता के प्रति अपने कर्त्तव्य का निर्वहन करने तथा प्रधानमन्त्री जी की प्रगतिशील नीतियों को कार्यान्वित करने में समर्थ हो पाऊंगा, ऐसा मेरा विश्वास है। मैं आपकी आशाओं एवं आकांक्षाओं के अनुरूप ही कार्य करने के लिए प्रयत्नरत रहूंगा, ईश्वर इसके लिये मुझे शक्ति प्रदान करें।

मंगल कामनाओं सहित,

आपका,
(बनारसी दास गुप्त)

पंजाब विधानसभा के अध्यक्ष का सन्देश

यह अत्यन्त हर्ष का विषय है कि सुप्रसिद्ध साप्ताहिक "आर्य मर्यादा" दिसम्बर के तृतीय सप्ताह में महान् देश-भक्त तथा समाज सुधारक वीर संन्यासी स्वामी श्रद्धानन्द जी तथा अन्य बलिदानी वीरों की पुण्य स्मृति में एक विशेषांक प्रकाशित कर रहा है।

स्वामी श्रद्धानन्द जी एक सुविख्यात विद्वान, महान देश-भक्त, समाज सुधारक तथा एक आध्यात्मिक विभूति थे। वह अपने साहसी महान् एवं अद्वितीय कार्यों द्वारा जनता की असीम श्रद्धा के पात्र बने। स्वामी जी वह निर्भीक व्यक्ति थे जिन्होंने चान्दनी चौक, दिल्ली में रौलट ऐक्ट आन्दोलन के सम्बन्ध में निकाले गए जलूस का नेतृत्व करते हुए, जनसमूह पर गोली-कांड के ऐतिहासिक अवसर पर ब्रिटिश साम्राज्य की नृशंसता का सामना करते हुए फिरंगी सिपाहियों की संगीनों के सम्मुख अपना सीना छलनी होने के लिए तान दिया था। ब्रिटिश अधिकारी गोली मारने का साहस न कर सके और जलूस आगे बढ़ गया। जलियांवाला बाग के रक्तरञ्जित काण्ड से विह्वल हो स्वामी जी अनाथ तथा विधवाओं के दुःख बांटने के लिए अमृतसर गए। स्वामी जी ने १९२२ के "गुरु का बाग" सत्याग्रह में सक्रिय भाग-लिया। १९१८ के गढ़वाल दुर्भिक्ष के दौरान उन्होंने राहत कार्य में महत्वपूर्ण योगदान दिया। वह अमृतसर में हुए कांग्रेस अधिवेशन की स्वागत समिति के सभापति थे। वह राजनैतिक विचारों में कांग्रेस के अनुयायी थे। परन्तु धार्मिक विचार उनके आर्य समाजी थे। उनके "भारत शुद्धि सभा" आन्दोलन में सक्रिय भाग लेने के कारण के पीछे सम्भवतः उनकी दूरदर्शी आंखों ने भारत के विभाजन का वीभत्स दृश्य देख लिया हो। १९२६ में एक जनूनी व्यक्ति अब्दुल रशीद ने इनकी हत्या कर दी।

मैं धर्म तथा देश पर बलिदान होने वाले, पूज्य स्वामी श्रद्धानन्द जी के चरणों में श्रद्धांजलि अर्पित करता हूं और मेरी हार्दिक कामना है कि स्वामी जी तथा अन्य बलिदानी महानात्माओं की पुण्य, पावन तथा पुनीत स्मृति में प्रकाशित किया जा रहा यह विशेषांक उनके पवित्र विचारों को जन-जन में पहुंचाने में सफल हो। भारत मां को अपने इन सच्चे सपूतों के आत्मोत्सर्ग तथा जीवन आहुति देने पर सदा मान और गर्व है और रहेगा।

(केवल कृष्ण)
डाक्टर

सम्पादकीय

जीना चाहते हो तो मरना सीखो

आर्य समाज एक ऐसी संस्था है जिसका इतिहास उसके शहीदों ने अपने खून से लिखा है। किसी राजनैतिक उद्देश्य के लिए शहीद होते हुए तो हमने कई देखे हैं परन्तु केवल अपने धर्म के लिए अपने प्राण देने वाले इतिहास में बहुत कम मिलते हैं। सिखों का इतिहास अवश्य हमारे सामने ऐसे उदाहरण पेश करता है जहां उनके नेताओं ने धर्म की रक्षा के लिए अपने प्राणों का बलिदान दिया। परन्तु ये आज से २५०-३०० वर्ष पुरानी बात है। पिछले १०० वर्ष में इस देश में किसी धार्मिक संस्था ने इतने बलिदान नहीं दिये जितने कि आर्य समाज ने। इसके जन्मदाता महर्षि दयानन्द सरस्वती ने न केवल धर्म का वास्तविक रूप जानने में उसका नेतृत्व किया परन्तु साथ ही धर्म की रक्षा के लिए आत्म बलिदान करने में भी इसका नेतृत्व किया। उन्हें कई बार चेतावनी भी दी गई कि वो जो कुछ कर रहे हैं उसका परिणाम अच्छा नहीं हो सकता परन्तु वो जिस मार्ग पर चल रहे थे उसे छोड़ने को तैयार न हुए। उनके बाद पं. लेख राम, महाशय राजपाल, स्वामी श्रद्धानन्द और कई दूसरे बलिदानियों ने अपने बलिदान दिये परन्तु आर्य समाज को इस बात का सौभाग्य प्राप्त है कि जहां उसने धर्म के क्षेत्र में अपने सर्वस्व न्यौछावर करने वाले पैदा किये वहां राजनैतिक क्षेत्र में भी लाला लाजपतराय, राम प्रसाद बिस्मिल और भगतसिंह जैसे शहीद पैदा किये। हमारा दुर्भाग्य है कि हम इन सब को भूल चुके हैं नहीं तो इनमें से एक २ का बलिदान हमें एक नई प्रेरणा का मार्ग दिखाता है। राम प्रसाद बिस्मिल और भक्तसिंह जैसे नवयुवक यह जानकर और यह समझ कर अपने घरों से निकले थे फिर वो कभी वापिस न जाएंगे। उन्हें पता था कि वो जो कुछ कर रहे हैं उसका परिणाम अन्त में उन्हें फांसी के तख्ते पर जाकर लटकना पड़ेगा। फिर भी उनके पांव डगमगाए नहीं। एक क्षण के लिए भी उनमें कोई शिथिलता न आई और वो जिधर चल रहे थे उधर चलते रहे। जिस ढंग से और जिस निर्भयता से उन्होंने मृत्यु को आह्वान किया उसे यदि एक कवि के शब्दों में कहना हो हम कह सकते हैं—

'जब से सुना है मरने का नाम जिन्दगी है,
सिर पर कफन लपेटे कातिल को ढूंढते हैं।'

इसमें कोई संदेह नहीं कि हमारे ये बलिदानी युवक सिर पर कफन लपेट कर अपने कातिल को ढूंढा करते थे। उन्हें इस बात का विश्वास था कि कोई जाति और कोई देश संघर्ष और बलिदान के बिना अपना स्वाधीनता प्राप्त नहीं कर सकता। इसलिए वो अपने उस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए संघर्ष करते रहे और उसी प्रकार बलिदान देने को तैयार रहे जैसी कि उस समय की आवश्यकता थी।

परन्तु आर्य समाज को इस बात का सौभाग्य है कि इन नवयुवकों में देशभक्ति की यह प्रेरणा और मरने के लिए यह उत्साह पैदा किया तो आर्य समाज ने। राम प्रसाद विस्मिल ने तो अपनी आत्म कथा में लिखा है कि वो जो कुछ भी बने आर्य समाज के ही कारण और भक्तसिंह का सारा परिवार आर्य समाज के वातावरण में फलता और फूलता रहा। इसलिये भक्तसिंह भी उसी वातावरण में जवान हुये। उनके पहले उनके पिता सरदार किशनसिंह उनके चाचा स० अजीतसिंह और दूसरे चाचा स० स्वर्णसिंह यह सब देश के लिये बड़े से बड़ा त्याग कर चुके थे इसलिए भक्तसिंह निश्चित रूप में कह सकते थे।

"तेगों के साये में हम, पलकर जवां हुए हैं।"

और उनके दादा स० अर्जुन सिंह के रोम रोम में आर्य समाज बसा हुआ था। वो महर्षि दयानन्द के अनन्य भक्त थे। गांव-२ में जाकर उनकी विचारधारा का प्रचार किया करते थे और उसी विचारधारा ने भक्तसिंह को जन्म दिया। उसी के कारण लाजपतराय, श्रद्धानन्द, राजपाल और दूसरी कई महान् आत्माएं अपने धर्म की बलिवेदी पर अपना बलिदान देकर इस संसार से कूच कर गये।

आर्य समाज अपने जीवन के १०० वर्ष समाप्त कर रहा है। इन १०० वर्षों में उसने जो भी प्रगति की है उसका श्रेय इस देश के उन लाखों लोगों को मिलना चाहिये जिन्होंने घर २ इसका सन्देश पहुंचाया परन्तु उन सबसे बढ़कर तो श्रेय उन वीरो को प्राप्त है जिन्होंने इसके लिये अपना खून दिया। अमर हूतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द उनमें से एक थे। अपने सीने पर गोली खाकर चले गये। बार २ उन्हें रोका गया कि वो शुद्धि का आन्दोलन बन्द करदें वो इसके लिये तैयार न हुए। उन्हें धमकियां दी गईं कि उनका कतल कर दिया जाएगा फिर भी उनके पांव डगमगाये नहीं और वो अपनी राह पर चलते रहे और अन्त में एक हत्यारे की गोली ने उन्हें सदा के लिए हम से छीन लिया। अब जबकि हम उन्हें अपनी श्रद्धांजलि भेंट कर रहे हैं आर्य समाज की इस शताब्दी के अवसर पर हमें उन वीरों को याद करना है जिन्होंने अपने धर्म और देश की रक्षा के लिए अपना बलिदान दिया। इसीलिये आर्य मर्यादा के इस अंक का नाम 'बलिदान अंक' रखागया है। इसके द्वारा हम देश और धर्म के उन सब अनगिनत शहीदों को प्रणाम करते हैं जिन्होंने अपने बलिदान से हमें एक नया रास्ता दिखाया। परमात्मा करे कि हम में भी देश और धर्म की रक्षा के लिए बलिदान देने की वही शक्ति पैदा हो जो श्रद्धानन्द में थी, लाजपत राय और राज पाल में थी। जिसने राम प्रसाद बिस्मिल और भगत को शहीद बनाया। हमारे पास है ही क्या जो हम अपने इन शहीदों को अर्पण कर सकें। इसलिए अपने इस लेख को इन शब्दों के साथ समाप्त करता हूं—

शहीदों की चिताओं पर
लगेंगे हर वरस मेले।
वतन पर मिटने वालों का
यही बाकी निशां होगा।

—वीरेन्द्र

आर्य मर्यादा प्रगति के पथ पर

आर्य मर्यादा के पाठकों को यह सुनकर प्रसन्नता होगी कि उसका यह संस्करण ६००० हजार प्रकाशित हो रहा है। इससे इस पत्र की लोकप्रियता का कुछ अनुमान लगाया जा सकता है। कुछ समय हुआ जब हमने यह निश्चय किया था और इसकी घोषणा भी की थी कि हम दूसरे या तीसरे महीने आर्य मर्यादा का एक विशेषांक अपने पाठकों को दिया करेंगे। इसलिए हम जो कुछ करना चाहते थे कर नहीं सके। फिर भी अपनी ओर से जो कुछ हो सका हम करते रहे हैं। आर्य मर्यादा का यह अंक हमारे उस प्रयास का ही एक परिणाम है। यदि हमारे साधन सीमित न होते तो सम्भवतः हम इस से भी अच्छा अंक निकालते। मनुष्य कई बार बड़ी २ योजना बनाता है और बहुत कुछ करना चाहता है परन्तु कर नहीं पाता क्योंकि योजना तो वो बना सकता है। उसे कर सकेगा या नहीं इसका फैसला करना किसी और शक्ति के हाथ में है। परन्तु मैं आर्य जनता को इतना विश्वास अवश्य दिलाना चाहता हूं कि हम आर्य मर्यादा को एक उच्च कोटि की पत्रिका बनाना चाहते हैं जिसके द्वारा आर्य समाज के इतिहास और उसकी विचार धारा जनता के सामने समय २ पर आती रहे। परन्तु हम भी उसी अवस्था में सफल हो सकते हैं यदि आर्य जनता का समर्थन हमें प्राप्त होता रहे। इसलिये यह आवश्यक है कि प्रत्येक आर्य समाजी आर्य मर्यादा का ग्राहक बने। प्रत्येक आर्य समाज अधिक से अधिक संख्या में आर्य मर्यादा की प्रतियां मगावें और प्रत्येक आर्य शिक्षण संस्था में आर्य मर्यादा पहुंचे। आप हमें जितना प्रोत्साहन देंगे उसी के अनुसार हम आगे बढ़ेंगे। हम आगे अवश्य बढ़ना चाहते हैं और बढ़ते जाएंगे। यह तो हो सकता है कि हमारी आगे बढ़ने की रफ्तार कुछ ढीली पड़ जाये परन्तु कोई शक्ति हमें आगे बढ़ने से रोक नहीं सकती। यही कारण है कि हमारे मार्ग में जो रुकावटें खड़ी की जा रही हैं उनके बावजूद हम आगे बढ़ रहे हैं और यह 'बलिदान अंक' हमारे इन्ही प्रयत्नों का परिणाम है।

पाठकगण ! इसके बाद आर्य मर्यादा के अगले विशेषांक की प्रतीक्षा करें जो कि फरवरी १९७६ के अन्तमें ऋषि.बोधोत्सव तथा लेख राम तृतीया दोनों का संयुक्त विशेषांक होगा।

—वीरेन्द्र

देश व धर्म के शहीदों को शत शत प्रणाम
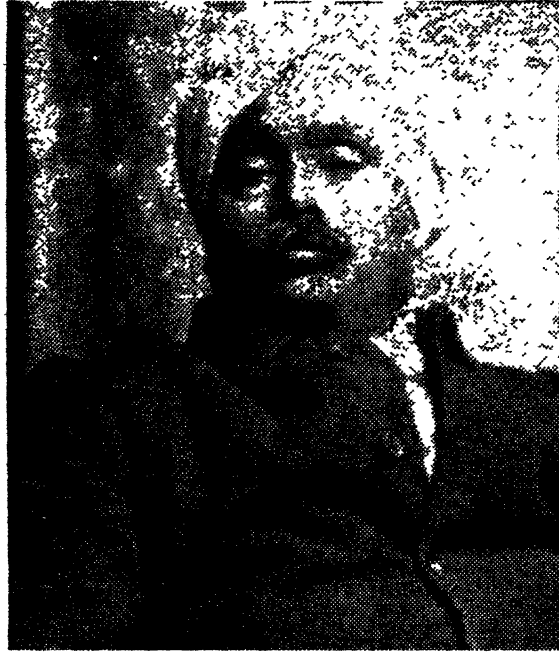
पंजाब केसरी लाला लाजपतराय
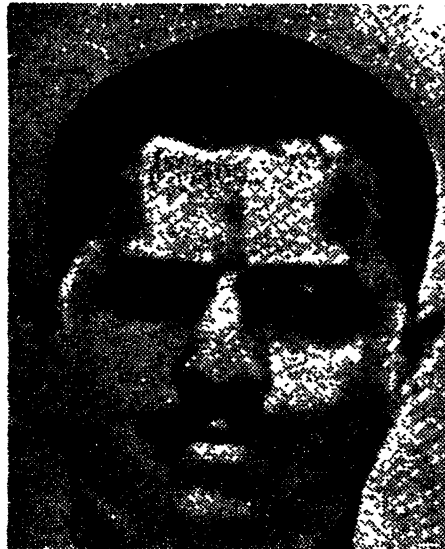
क्रान्तिकारियों के अग्रगण्य पं० रामप्रसाद बिस्मिल

फांसी का फन्दा झूमने वाले
सं० भक्त सिंह

अमर हुतात्मा
पं० लेखराम जी
आर्य पथिक
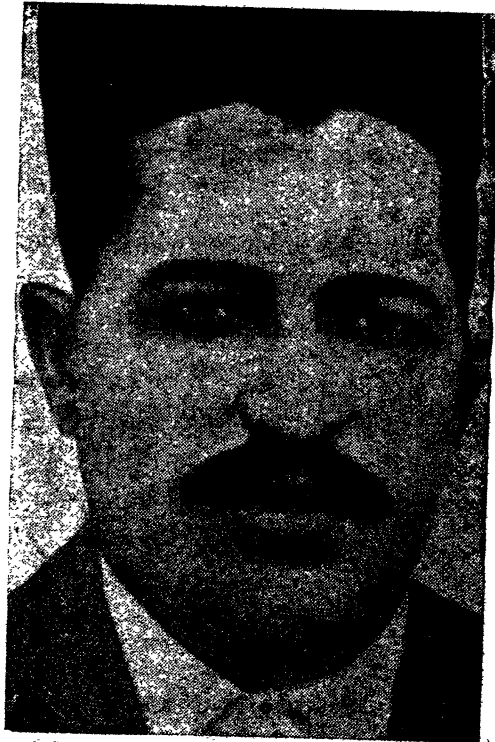
धुन के धनी
म० राजपाल
जी

वीर बिस्मिल

(कविवर "प्रणव" शास्त्री एम. ए. फिरोजाबाद)

धन्य क्रांति के अग्रदूत
हे धन्य वीर बलिदानी रे।
धन्य वीर बिस्मिल अभिमानी
तुम दधीचि से दानी रे ॥१॥

जन्म भूमि पर देखना वेदना गोरे—अत्याचारों की
ढली हृदय के सांचे में फौलाद विशिष्ट विचारों की।
सेना सी सज रही प्रतिक्षण स्वाभिमानी उद्‌गारों की
कर्मक्षेत्र में लहराई गंगा सी पूत जवानी रे ॥२॥

तुम निर्भय, निर्द्वन्द्व, सबल नवनाटक के अभिनेता थे
तुम संयम के भीष्म आर्य अभिमानी मानी चेता थे।
तुम शौर्य सूर्य के मण्डल अरि-दल-बल के जेता थे
रहा "यूनियन जैक" कांपता सुन-सुन तेरी वाणी रे ॥३॥

पी अश्फाक तुम्हारा निश्छल मिलन माधुरी मधुर प्याला
देशभक्ति, अनुरक्ति रंग में रंगा वीरवर मतवाला।
हिन्दू मुस्लिम प्रश्नावलि की यह सुन्दर उत्तरमाला
महा मुक्ति की युक्ति देश ने मानो सच पहचानी रे ॥४॥

तुम थे राम प्रसाद यही जीवन में तुमने था पाया
कहो हिमालय ने कब कब है किसको शीश झुकाया।
यही धर्म का मर्म आततायी को जाय मिटाया
मनु की दिव्य धरोहर प्रतिमा तुमने जानी मानी रे ॥५॥

हे नर सिंह, सफल की तुमने मां की अमृतधारा
दे कर वर बलिदान देश को दिया मुक्ति का नारा।
कितनी पावन हुई कि सचमच गोरखपुर की कारा
वीर श्रृंखलायें रहती हैं, कड़ियां नयी, पुरानी रे ॥६॥

—

अमर बलिदानी प. राम प्रसाद 'बिस्मिल'

(आचार्य मुंशी राम शर्मा सोम कानपुर)

विप्रवंश-अवतंस, मातृम, ममता, प्रतिमा।
परशुराम के अंश, द्रोण की कीर्ति-धवलिमा।
तुम उज्ज्वल आर्यत्व, सत्य के सखा दुलारे।
देख कान्त कर्त्तव्य, बने प्रक्थन भी प्यारे।

दयानन्द से दीक्षित, दिव्यादर्श-भरित तुम।
स्वाधीनता समीरित, कर्मण्यता कलित तुम।
देख तुम्हारा वीर वेश, देहली पर-सत्ता।
कम्पित कर अनिमेष, बनी विचलीत बलवन्ता।

छोड़ कितने दूत गुप्त, घर घेरा न्यारा।
वे षडयन्त्र अकूत, भयंकर काली कारा।
पर न तुम्हें वे त्रस्त कर सके बाधा-बन्धन।
सिहर हो उठे सुस्त स्वयं सत्ता के स्पन्दन।

तुम बलिदानी वी-शृंखला कड़ी निराली।
तुम 'मालिक की रजा, लहू में उसकी लाली।
तुम 'उसकी जुस्तजू' लबों पर दम जब तक थी।
पिया तुम्हीं ने मातृदुग्ध, रग-रग धक-धक थी।

घृत पावक संयोग सदृश थे द्रवित हृदय तुम।
जन्म भूमि जननी के अनुपम लाल अभय तुम।
तुम थे राम प्रसाद, राम सम दस्यु निहन्ता।
तुम जीवन, तुम प्राण, आर्य भू भाग्य नियन्ता।

प्रक्थन—पठान, अशफाकुल्ला खां।

फांसी से पूर्व बिस्मिल के मुख से निकले शे'र—

मालिक तेरी रजा रहे और तू ही तू रहे।
बाकी न मैं रहूं न मेरी आरजू रहे।
जब तक लबों पे दम रगों में लहू बहे।
तेरी ही याद यार तेरी जुस्तजू रहे।

देश पर बलिदान होनें वालें कर्त्तव्यपरायण ठा. रोशन सिंह

२० दिसम्बर १९२७ ई० प्रातः काल इलाहाबाद जेल में फांसी के तख्ते पर चढ़ते ही आपने उपस्थित भीड़ को सम्बोधन करते हुए कहा—'दुनिया वालो ! जाओ मुझे अपनी ओर आकृष्ट मत करो। मैं एक बड़े काम को पूरा करके जा रहा हूं और आवश्यकता होगी तो फिर आऊंगा। उपस्थित भीड़ में से किसी ने कहा यह सच्चा क्षत्रिय है। पैंतीस वर्षीय इस सच्चे देशभक्त ने फांसी का फन्दा अपने गले में डाला। 'वन्दे-मातरम्' का नाद किया और 'ओ३म्' का स्मरण करते हुये लटक गये।

महर्षि दयानन्द जी की क्रांतिकारी विचारधारा ने समूचे देश में परतन्त्रता के प्रति घोर विद्रोह तथा स्वतन्त्रता प्राप्ति की तीव्र भावना उत्पन्न की हुई थी। महर्षि प्रदत्त विचारधारा में सबसे बड़ी विशेषता धर्मपरायणता और नैतिक उच्चता की थी क्योंकि महर्षि का अपना जीवन इस दृष्टि से सर्वांग पूर्ण अतएव आदर्श था। यही कारण है कि उस समय के सारे क्रांतिकारी नवयुवक सच्चरित्र और धार्मिक प्रवृत्ति वाले थे। ठा. रोशनसिंह जी भी दृढ़ आर्यसमाजी देशभक्त थे। इनका जन्म नवादा जिला शाहजहांपुर के एक क्षत्रिय कुल में हुआ था अपने ग्राम में आप बांके लड़ाके सरदार के नाम से प्रसिद्ध थे। ग्रामीण लोगों में उस समय शिक्षा की ओर रुचि कम थी। इसलिए ठा. रोशन सिंह भी विशेष शिक्षा प्राप्त न कर सके परन्तु खेलकूद में रुचि के कारण लाठी, गतका, तलवार और बन्दूक चलाना खूब सीख गये। आप का निशाना अचूक था। अन्याय तंगी अत्याचार के विरुद्ध आप सदा ही अत्याचारी का सामना करने के लिए तत्पर रहते थे। असहयोग आंदोलन में आपने बढ़चढ़ कर भाग लिया। शाहजहांपुर और बरेली के ग्राम २ में घमकर आप स्वराज्य का सन्देश सुनाते रहे उस समय बरेली में गोली चलाई गई और आपको दो वर्ष का दण्ड मिला। जेल में ही आपको अपने पिता जी के देहांत का समाचार मिला। परन्तु केवल दो तीन बार ओ३म्-ओ३म्-ओ३म् तत् सत् कहने के अतिरिक्त आप सर्वथा निश्चिन्त रहे और पूरे धृतिशील होने का परिचय दिया। पं. राम प्रसाद जो बिस्मिल के प्रभाव से ही आप क्रांतिकारी आन्दोलन में सम्मिलित हुये थे परन्तु शीघ्र ही संगठन की विशेष योग्यता अपने अन्दर रखने के कारण आप आन्दोलन के प्रमुख समझे जाने लगे। सारे क्रांतिकारी आपकी निर्भयता, दृढ़ता और साहस

आदि उत्तम गुणों की प्रशंसा करते थे। लखनऊ जेल में जब देशभक्त क्रांतिकारी युवक बन्दियों के लिये विशेष सुविधाएं प्राप्त करने के लिए अनशन प्रारम्भ हुआ तब आपने जिस वीरता का परिचय दिया वह अनुकरणीय है। पन्द्रह दिन तक पानी के अतिरिक्त कुछ भी न पिया। काकोरी षड्यन्त्र में यद्यपि आपके विरुद्ध एक भी प्रमाण सरकार को मिला था परन्तु फिर भी अत्याचारी गोरी सरकार ने इस साहसी आर्य वीर को फांसी पर लटकाना ही उचित समझा। फांसी की तारीख १९ दिसम्बर की निश्चित थी परन्तु भीड़ के डर से फांसी २० दिसम्बर १९२७ की प्रात. इलाहाबाद जेल में दी गई। बलिदान से एक सप्ताह पूर्व ठा. रोशन सिंह ने अपने मित्र को निम्नलिखित पत्र लिखा था—

"इस सप्ताह के भीतर ही फांसी होगी। ईश्वर से प्रार्थना है कि वह आपको मुहब्बत का बदला दे। आप मेरे लिए हरगिज रंज न करें। मेरी मौत खुशी का बाइस होगी। दुनिया में पैदा हो कर मरना जरूर है। दुनिया में बदफेल करके मनुष्य अपने को बदनाम न करे और मरते वक्त ईश्वर की याद रहे—यही दो बातें होनी चाहिए और ईश्वर की कृपा से मेरे साथ ये दोनों बातें हैं। इसलिए मेरी मौत किसी प्रकार अफसोस के लायक नहीं है। दो साल से मैं बाल बच्चों से अलग हूं। इस बीच ईश्वर भजन का खूब मौका मिला। इससे मेरा मोह छूट गया और कोई वासना बाकी न रही। मेरा पुरा विश्वास है कि मैं दुनिया की कष्ट भरी यात्रा समाप्त करके अब आराम की जिन्दगी के लिए जा रहा हूं। हमारे शास्त्रों में लिखा है कि जो आदमी धर्म-युद्ध में प्राण देता है उसकी वही गति होती है जो जंगल में रहकर तपस्या करने वालों की।

'जिन्दगी जिन्दा दिली का नाम है रोशन वगरना कितने मरते और पैदा होते जाते हैं'

ईश्वर विश्वासी सदाचारी देश भक्त का कितना उज्जवल रूप है। काश कि हम भी ऐसे उत्तम भावों को ग्रहण कर देश-धर्म के प्रति अपना कर्तव्य पूरा कर सकें।

ओम-प्रकाश आर्य

मुन्शी राम—श्रद्धानन्द

(ले० श्री उत्तम चन्द शरर एम. ए.)

तुच्छ सीप में मूल्यवान मोती पलता है
शूलों में फूलों का जीवन रथ चलता है
जैसे रात्री के आंचल से प्रात फूटता
धूम्र पुञ्ज से जैसे ज्वाला बाण छूटता
तूफानी लहरों से पोत यथा बच पाये
और भंवर से उछल स्वयं तट को छू जाये
कमल कीच से निकले औ मुस्काये जैसे
दर्पण मल को छोड़, वदन दिखाये जैसे
ज्यों रसाल गुठली को फोड़ बढ़ कर लहराये
बुझा दीप जलते दीपक से ज्योति पाये
क्षुद्र नदी जल सुरसरिता से जब मिल जाये
नाम रूप तज गंगोदक पावन कहलाये
जैसे लोहा पारस मणि से छू जाने पर
बन जाता है स्वर्ण, चमक उठता है सत्वर
ऐसे मुन्शी राम ऋषि से जब मिल पाये
त्याग कलुष बलिदानी श्रद्धानन्द कहाये

स्वामी श्रद्धानन्द जी संन्यासी के विशेष गुणों का दिग्दर्शन

(डा. शिव पूजन सिंह कुशवाह एम. ए., साहित्यलंकार, साहित्य शिरोमणि, कानपुर)

स्वामी श्रद्धानन्द जी के पूज्य पिता जी का नाम 'श्री लाला नानकचन्द' था जो पुलिस इन्सपेक्टर थे और पंजाब के जालन्धर जिले के तलवन ग्राम के निवासी थे। हमारे चरित नायक का जन्म बरेली (उत्तर प्रदेश) की पुलिस लाईन में हुआ जिनका नाम 'मुन्शीराम' रखा गया। मुंशीराम 'मनीषी राम' शुद्ध शब्द का अपभ्रंश है। संवत् १९२३ ई. में इनका उपनयन संस्कार वाराणसी में हुआ। फरवरी सन १८८८ ई० में आप 'प्राड्विवाक' (वकील) की वकालत परीक्षा पास की। आप मद्यपान, मांस भक्षण भी करते थे, पर आर्य समाज में प्रवेश होते ही इनका परित्याग कर दिया। पं० गुरुदत्त जी विद्यार्थी का भाषण सुनकर आपने 'हुक्का' (सनातनी तोप) पीना त्याग दिया।

महर्षि दयानन्द जी सरस्वती के गुरुकुल के स्वप्न को 'गुरुकुल कांगड़ी' में साकार रूप देने का श्रेय आपको ही प्राप्त है। सहस्रों स्नातक गुरुकुल में स्नातक होकर किसी न किसी रूप में वैदिक धर्म की सेवा करते रहे। कई शास्त्रार्थ महारथी, वेद, वेदान्त, ब्राह्मण, उपनिषद, निरुक्त के भाष्यकार बने।

१ वैशाख संवत् १९७४ में संन्यासाश्रम मे प्रवेश हुए और उनका नाम 'श्रद्धानन्द' हुआ।

राजनीति में भी कार्य किए

शुद्धि के कारण बलिदान हुए।

विशिष्ट गुण

(१) सत्यनिष्ठा—झूठे मुकद्दमे लड़ने के लिए उद्यत नहीं होते थे जिससे ५०० रु. मासिक आय घटकर केवल १५० रु. रह गई थी। अन्त में वकालत को तिलाञ्जलि दे दी।

(२) ईश्वर विश्वास—गुरुकुल के स्नातकों को राज्य की नौकरियां नहीं मिलेगी वे अपना जीवन निर्वाह कैसे करेंगे? ऐसा किसी ने कहा तो उन्होंने कहा था—

"दांत न थे तब दूध दियो
अब दांत दिए तो क्या अन्न न देहैं।
काहे का सोच करे मन मूरख
सोच कहे कुछ हाथ न एहैं।
जान को देत अजान को देत
जहान को देत सों तोकू न देहैं।"

यह उनका अटूट प्रभू-विश्वास था।

(३) आदर्श आचार्य—आचार्य श्रद्धानन्द

ब्रह्मचारियों के सो जाने पर वे सोते थे और रात्रि में जाग कर ब्रह्मचारियों तथा गुरुकुल का निरीक्षण किया करते थे। ब्रह्मचारियों के प्रात, दोपहर व रात्रि के भोजन के समय वहां उपस्थित रहते थे और देखा करते थे कि भोजन क्या बना है। रात के समय ब्रह्मचारियों पर कपड़ा ओढ़ाना और नैतिक दृष्टि से उनकी रक्षा करना इस आचार्य पिता का विशेष कार्य था।

(४) वात्सल्य प्रेम—किसी ब्रह्मचारी के रुग्ण होने पर स्वयं सेवा करते थे।

(५) दृढ़ सिद्धांतवादी—अछूतों के मामले में वे कांग्रेस व हिन्दू महासभा से पृथक हो गए।

(६) स्वाभिमानी—लार्ड मेस्टन के गुरुकुल आने पर गुरुकुल को राज्य से सम्बद्ध करने व एक लक्ष रुपये प्रतिवर्ष सहायता को ठुकरा कर स्वाभिमान को प्रकट किया था।

आज बहुत से गुरुकुल के स्नातक अपने बच्चों को गुरुकुल में शिक्षा दिलाने में हिचकिचाते हैं और सरकारी परीक्षा दिलवाते हैं पर स्वामी जी ने अपने दोनों पुत्रों को गुरुकुल का स्नातक बनाया था।

——

महान श्रद्धानन्द

(कविवर "प्रणव" शास्त्री एम. ए. फीरोजाबाद (उ० प्र०))

जयतिजय श्रद्धानन्द सुजान।
यशस्वी यतिवर वीर महान॥

सुभग श्रद्धा से ओत-प्रोत स्नेह सरिता के सन्तत स्रोत।
निराशा निशि के चन्द्र उदोत-सबल शुचि संयम पुञ्ज प्रधान॥ १॥

अलौकिक कर्मों के कलकेतु-शुद्धि सागर के सुन्दर सेतु।
हितों के अविचल प्रेरक हेतु विवेकी विप्पों के उद्यान॥ २॥

प्रभा प्रतिभा के प्रिय प्राकार-सत्य शुभ शुचि सम्बल साकार।
सबलता दृढ़ता के आकार-निराले नेता नीति निधान॥ ३॥

बही जब सरिता शुद्धि अनूप-त्याग कर कल्पष कोटि कुरूप।
मिलाये बिछुड़े बन्धु स्वरुप-धन्य वे हो गये करके स्नान॥ ४॥

हुआ जब आन्दोलन असहयोग-तुम्हारा स्वर्णिम शुचि सहयोग।
अडिग हिमचल सा वह उद्योग-बना जनता का जीवन प्राण॥ ५॥

तुम्हारा गुरुकुल विश्व-विशाल-पुराने युग का नया कमाल।
सकल भूलालायित तत्काल प्रणाली प्रचलन को प्रियमान। ६॥

अमर है, गौरव गंगा गेय-अमर है धैर्य धवल ध्रुव ध्येय।
अमर है जीवन ज्योति अजेय-अमर है युग-युग तक बलिदान॥ ७॥

——

पं. गेन्दालाल दीक्षित

21 दिसम्बर 1920 को जिन्होंने भारत माता पर अपने प्राण न्यौछावर किए

(श्री पं० ओम प्रकाश कार्यालयाध्यक्ष)

देश पर बलिदान होने वाले आर्यवीरों के अग्रगण्य मैनपुरी षड्यन्त्र के नेता पं० गेन्दालाल दीक्षित का जीवन आपदाओं और संकटों से परिपूर्ण रहा। सुख का सांस लेना उन्हें जीवन भर नसीब न हुआ परन्तु जिस दृढ़ निश्चय और आस्था से आपने विपदाओं का सामना किया वह अत्यन्त अनुकरणीय है। आपका जन्म आगरा जिले के प्रसिद्ध ग्राम बटेश्वर के निकट २० नवम्बर सन् १८८८ ई० में हुआ। इनके पिता का नाम भोलानाथ दीक्षित था। एन्ट्रेंस पास करने के पश्चात् पं० गेन्दालाल आगे पढ़ना चाहते थे परन्तु आर्थिक कठिनाईयों के कारण आगे न पढ़ सके और आप ओरैया जिला इटावा के डी० ए० वी० स्कूल में शिक्षक नियुक्त हो गए। आचार्य दयानन्द की क्रान्तिकारी विचारधारा ने शिक्षित वर्ग पर काफी प्रभाव डाला हुआ था देश की स्वतन्त्रता के लिए नवयुवक आगे बढ़ रहे थे। पण्डित जी भी पीछे न रहे और शिवाजी समिति बना कर देश गौरव शिवा के ढंग से भारत मां के बन्धनों को काटने के प्रयास में लग गए। भले घरों के युवकों के अतिरिक्त आपने डाकुओं को भी साथ मिलाना उचित समझा और इनकी सहायता से डाका डालने का दृढ़ निश्चय किया।

सौभाग्य से एक योग्य तपस्वी व्यक्ति भी आपको मिल गए जिन्हें लोग ब्रह्मचारी कहते थे। दोनों ने मिल ८० व्यक्तियों का एक गिरोह तैयार किया और एक सुदूर स्थान पर रहने वाले धनी के घर डाका डालने चल पड़े। यहां यह स्मरण रहे कि पं० गेन्दालाल दीक्षित डाकू बनने के लिए केवल धन प्राप्त करने और प्राप्त हुये धन से हथियार खरीद कर भारत माता की बेड़ियों को काटने के लिए ही यह कार्य उस समय कर रहे थे। स्थान दूर था इसलिए मार्ग में पड़ाव डालना पड़ा। उसी गिरोह में एक भेदिया भी था। लोग भूखे प्यासे थे—भेदिया ही भोजन की व्यवस्था करने गया—पुलिस को उसने सारा-भेद बता दिया। थोड़ी दूरी पर पुलिस घेरे डाल कर अवसर की बाट जोहती रही। भेदिया ने विषाक्त भोजन इनके आगे खाने के लिये रख दिया। ब्रह्मचारी जी ने एक ही पूरी खाई उनकी जीभ एंठने लगी वह समझ

गए। उन्होंने बन्दूक उठाकर भेदिए पर धाम से गोली चला दी। गोली की आवाज सुनते ही पुलिस ने जो पहले ही चारों तरफ घेरा डाले बैठी थी दनादन गोलियां चलाना शुरू कर दिया। गिरोह के २५-३० व्यक्ति मारे गये। शेष सबको ग्वालियर के किले में बन्द कर दिया गया। वहां का जलवायु बड़ा हानिकारक था। पं० गेन्दालाल जी को वहां क्षय रोग हो गया। जब मैनपुरी षड्यन्त्र का अभियोग चला पण्डित गेन्दालाल जी को सरकार ने ग्वालियर राज्य से मंगाया। आप इतने क्षीण काय हो गए थे कि मैनपुरी स्टेशन से जेल जाते समय ११ बार बैठकर जेल पहुंचे। पुलिस ने जब हाल पूछा तो उन्होंने कहाकि इन बच्चों को क्या मालूम ये भला क्या मुखविर बनेंगे, मैं बनूंगा। मुझे सारे केन्द्रों का भेद मालूम है। पुलिस वाले बहुत प्रसन्न हुये, पण्डित जी को ले जाकर मुखबिरो में रख दिया। मुखबिर लोग और अभियुक्त गुण चकित रह गये।

पण्डित गेन्दालाल बड़े सुलझे हुये व्यक्ति थे। संगठन की आप में बला की शक्ति थी। दूसरे से भेद निकालना और उसे अपने विचारों में रंगना आप खूब जानते थे। जेल में भी आपकी प्रतिभा रंग लाई। एक दिन सेवेरे लोगों को पता लगा कि पं० गेन्दा लाल जी रात को गायब हो गये, और साथ ही एक मुखबिर रामनारायण को भी ले गये और कोटा जा पहुंचे। एक बार जो मुखबिर बन गया उसे साथ रखना खतरनाक था, हुआ भी ऐसा ही। रामनारायण ने एक दिन पण्डित जी को कोठरी में बन्द कर दिया और उनका सारा सामान लेकर चम्पत हो गया। गेन्दालाल जी तीन दिन तक बिना अन्न जल ग्रहण किये उसी कोठरी में पड़े रहे किसी प्रकार से बाहर निकले। पैदल चल कर आगरा आए और किसी प्रकार अपने घर पहुंचें। बहुत बीमार थे पिता ने यह समझ कर कि घर वालों पर आपत्ति न आये पुलिस को सूचना देनी चाही। पण्डित जी ने अपने पिता जी से विनयपूर्वक कहाकि मैं बहुत जल्दी आप का घर छोड़कर चला जाऊंगा और दो तीन दिन में घर छोड़ दिया। ऐसी असहाय अवस्था में जबकि कोई भी साथ देने को तैयार न था क्षयरोग भी उग्र रूप धारण करता जा रहा था पुलिस बुरी तरह पीछे पड़ी हुई थी एक सच्चा देश भक्त दिल्ली में आकर एक प्याऊ में पानी पिलाने की सेवा कर जीवनयापन करने लगा। रोग के उपचार के लिये धन की आवश्यकता थी इसके अभाव में सिवाए मृत्यु के और क्या प्राप्त हो सकता था। मृत्यु निश्चित और निकट जानकर आपने अपनी पत्नी और भाई को एक विश्वस्त मित्र के द्वारा अपने पास बुलाया। पत्नी ने आकर खूब सेवा की परन्तु रोग कम न हुआ बढ़ता ही गया। यह देखकर वह रोने लगी। पण्डित जी थोड़ी देर तक अपनी स्त्री की ओर देखते रहे, फिर बोले "तुम रोती हो, रोओ, किन्तु आखिर इस रोने से क्या हासिल ! दुःख तो मुझे भी है। किस बात का मैंने बीड़ा उठाया था और मैंने उसे कितना सिद्ध किया? मर तो मैं रहा ही हूं, किन्तु जिस कारण मैं मर रहा हूं, वह पूरा कहां हुआ ? सच बात तो यह है उसके पूरा होने की कोई आशा भी नहीं देख रहा हूं। मैं इस बात को देख कर मर रहा हूं कि मैंने जो कुछ किया था, वह छिन्न भिन्न हो गया

था। मुझे केवल इतना ही दुःख है कि मां के ऊपर अत्याचार करने वालों से बदला नहीं ले सका, जो मन की बात थी वह मन ही में रह गई। मेरा यह शरीर नष्ट हो जाएगा, किन्तु मैं मोक्ष नहीं चाहता, मैं तो चाहता हू कि बार-बार इसी भूमि में जन्म लूं और बार बार इसी के लिए मरूं। ऐसा तब तक करता रहूं, जब तक कि देश गुलामी की जंजीर से छूट न जाए।

रोग की दशा में वे बार बार ऐसे ही भावों का प्रकाश करते थे आस पास को यह भय था कि यदि पुलिस को पता चल गया कि पण्डित गेन्दा लाल जी यहां हैं तो सभी पर संकट आ जायेगा। अत: पण्डित जी की पत्नी को घर वापस भेज दिया और छोटा भाई इन्हें सरकारी हस्पताल में प्रविष्ट करा आया। दोबारा जब वह पण्डित जी को देखने गया तो वह शरीर त्याग चुके थे। केवल उन का मृत शरीर मात्र ही पड़ा हुआ था। वह दिन था २१ दिसम्बर सन् १९२० जब कि भारत वर्ष की एक महान् आत्मा विलीन हो गई और देश में किसी ने जाना भी नहीं।

भारत देश के सपूतो! महा बलिदानी पंडित गेन्दा लाल दीक्षित के प्रति का आपने कभी कृतज्ञता के भाव प्रकट किए हैं। इनके जीवन का पारायण किया है और देश के प्रति तुम्हारा कर्त्तव्य क्या है क्या इसे समझने का यत्न किया है? यदि नहीं—तो कब करोगे इस काम को। याद रखो देश द्वारा प्रदक्ष जीवन देश को अर्पण न हुआ तो यह सौदा घाटे का रहेगा।

——

आर्य शहीद पं. राम प्रसाद बिस्मिल जी का विद्यार्थियों को अमर सन्देश

प्रत्येक विद्यार्थी या नवयुवक को, जो कि ब्रह्मचर्यव्रत के पालन की इच्छा रखता है, उचित है कि अपनी दिनचर्या निश्चित करे। खान पानादि का विशेष ध्यान रखें। महात्माओं के जीवन चरित्र तथा चरित्र गठन सम्बन्धी पुस्तकों का अवलोकन करे। प्रेमालाप तथा उपन्यासों में समय नष्ट न करें। खाली समय अकेला न बैठें। जिस समय कोई बुरे विचार उत्पन्न हों, तुरन्त शीतल जलपान कर घूमने लगे या किसी अपने से बड़े के पास जा कर बातचीत करने लगे। अश्लील गजलों. शेरों तथा गानों को न पढ़ें और न सुनें। स्त्रियों के दर्शन से बचता रहे। माता तथा बहन से भी एकान्त में न मिलें।

प्रात: काल सूर्योदय होने से एक घण्टा पहले शोभा त्याग कर शौचादि से निवत्त हो व्यायाम करे या वायु सेवनार्थ बाहर मैदान में जावे। सब व्यायामों में दण्ड बैठक सर्वोत्तम है। यदि हो सके तो प्रोफैसर राममूर्ति की विधि से दण्ड बैठक करें। प्रोफैसर साहब की रीति विद्यार्थियों के लिए लाभदायक है। थोड़े समय में ही पर्याप्त परिश्रम हो जाता है। दण्ड बैठक के अलावा शीर्षासन और पद्मासन का भी अभ्यास करना चाहिए और अपने कमरे में वीरों और महात्माओं के चित्र रखने चाहिएं।

भोजन मे मांस, मछली, चरपरे खट्टे गरिष्ट बासी तथा उत्तेजक पदार्थों का त्याग करे। सूर्य उदय होने के पांच दस मिनट पूर्व स्नान से निवृत्त होकर यथा विश्वास परमात्मा का ध्यान करें। सदैव कुएं के ताजे जल से स्नान करें।

(शहीद के आत्म चरित्र से)

जन्म दात्री ! वर दो कि अन्तिम समय भी मेरा हृदय किसी प्रकार विचलित न हो

"बिस्मिल"

जन्म दात्री जननी ! इस जीवन में तो तुम्हारा ऋण-परिशोध करने के प्रयत्न करने का अवसर न मिला। इस जन्म में तो क्या यदि अनेक जन्मों में भी सारे जीवन यत्न करूं तो भी मैं तुमसे उऋण नहीं हो सकता। जिस प्रेम तथा दृढ़ता के साथ तुम ने इस तुच्छ जीवन का सुधार किया है वह अवर्णनीय है। मुझे जीवन की प्रत्येक घटना का स्मरण है कि तुम ने किस प्रकार अपनी देव वाणी का उपदेश करके मेरा सुधार किया है। तुम्हारी दया से ही मैं देश सेवा में संलग्न हो सका। धार्मिक जीवन में भी तुम्हारे ही प्रोत्साहन ने सहायता दी। जो कुछ शिक्षा मैंने ग्रहण की उस का श्रेय तुम्हीं को है, जिस मनोहर रूप में तुम मुझे उपदेश करती थीं, उसका स्मरण कर "तुम्हारी मंगलमयी मूर्ति का ध्यान आ जाता है और मस्तक नत हो जाता है। तुम्हें यदि मुझे ताड़ना भी देनी हुई, तो बड़े स्नेह से हर एक बात को समझा दिया। यदि मैंने धृष्टता पूर्ण उत्तर दिया तब तुम ने प्रेम भरे शब्दों में यही कहा कि तुम्हें जो अच्छा लगे, वह करो, किन्तु ऐसा करना ठीक नहीं, इस का परिणाम अच्छा होगा। जीवन दात्री ! तुम ने इस शरीर को जन्म देकर केवल पालन पोषण ही नहीं किया किन्तु आत्मिक, धार्मिक तथा सामाजिक उन्नति में तुम्हीं मेरी सदैव सहायक नहीं। जन्म जन्मान्तर परमात्मा ऐसी ही माता दें।

महान् से महान् संकट में भी तुम ने मुझे अधीर न होने दिया। सदैव अपनी प्रेम भरी वाणी को सुनाते हुए सान्त्वना देती रहीं, तुम्हारी दया की छाया में मैंने अपने जीवन भर में कोई कष्ट अनुभव न किया। इस संसार में मेरी किसी भी भोग विलास तथा एश्वर्य की इच्छा नहीं। केवल एक तृष्णा है, वह यह कि एक बार श्रद्धा पूर्वक तुम्हारे चरणों की सेवा करके अपने जीवन को सफल बना लेता। किन्तु यह इच्छा पूर्ण होती नहीं दिखाई देती ओर तुम्हें मेरी मृत्यु का दुःख सम्वाद सुनाया जाएगा। मां ! मुझे विश्वास है कि तुम यह समझ कर धैर्य धारण करोगी कि तुम्हारा पुत्र माताओं की माता-भारत माता की सेवा में अपने जीवन को बलिवेदी की भेंट कर गया और उसने तुम्हारी कुक्ष को कलकित न किया, अपनी प्रतिज्ञा पर दृढ़ रहा। जब स्वाधीन भारत का इतिहास लिखा जाएगा, तो उस के किसी पृष्ठ पर उज्जवल अक्षरों में तुम्हारा भी नाम लिखा जाएगा। गुरु गोविन्द सिंह जी की धर्म पत्नी ने जब अपने पुत्रों की मृत्यु का संवाद सुना था, तो बहुत हर्षित हुई थी और गुरु के नाम पर धर्म रक्षार्थ अपने पुत्रों के बलिदान पर मिठाई बांटी।

जन्म दात्री ! वर दो कि अन्तिम समय भी मेरा हृदय किसी प्रकार विचलित न हो और तुम्हारे चरण कमलों को प्रणाम कर मैं परमात्मा का स्मरण करता हुआ शरीर त्याग करूं।

(शहीद के आत्म चरित्र से)

स्वामी श्रद्धानन्द

रचयिता—कवि कस्तूरचन्द "घनसार" कवि कुटीर पीपाड़ शहर (राज०)

(१)

संन्यासी वही था शेर श्रद्धा के सबल पुञ्ज,
श्रद्धा को बताई स्वामी श्रद्धानन्द नाम था ।
श्रद्धा साथ, श्रेष्ठ श्रुतकीर्ति श्रेयस हेतु,
श्रद्धा से किया था कार्य श्रद्धा के सुधाम था ।।
देश सेवा, दीन सेवा, श्रद्धा से बढ़ाते चले,
दलितोद्धार शुद्धि यही मुख्य काम था ।
पंजाब, बिहार, मालावार में प्रचार किया,
हिन्दू सङ्गठन हेतु किया न आराम था ।।

(२)

अत्यधिक रुचि लेते नारी के सुधार हेतु,
कन्या गुरुकुल, खोले, विद्यादान दिया था ।
तड़फ असीम रही अहर्निस काम किये,
जगाये जनों को श्रद्धा साथ मान दिया था ।।
नील गिरि, नील धारा, विशाल जङ्गल बीच
झोपड़ियां बनाई ब्रह्मचारी ध्यान दिया था ।।
निजी अपना सर्वस्व समर्पित कर दिये,
गुरुकुल बना स्वामी वेद ज्ञान दिया था ।

(३)

देश भक्त स्वतन्त्र्य वीर सावर कर बृहत्
प्रेरणा स्वामी से ले के नाम चमकाया था ।
श्रद्धानन्द शुद्धि सङ्गठन हिन्दुओं का किया,
आये थे मैदान शङ्ख नाद को गुञ्जाया था ।।
ब्रिटिश सत्ताधीशों से न मांगना चाहते स्वामी,
कठोर कदम आगे चालके दिखाया था ।
दिल्ली सत्याग्रह में जो सैनिकों की सही मार,
सोने तान खड़े रहे, नही घबराया था ।।

(४)

भारतीय इतिहास रहेगा अमिट लेख,
जामा मस्जिद चढ़ के भुजा को उठाई थी ।
हिन्दू-मुस्लिम सत्य एकता का धर्म पर,
बोल के सुदृड़ एक छाप को लगाई थी ।।
देश भक्त धर्म के, अविच्छेद्य सम्बन्ध रहे,
ऐसी भावना के सहानुभूति दिखलाई थी ।
"घनसार" स्वामी श्रद्धानन्द ने जो काम किया,
प्रचार की धूम सारा देश में मचाए थी ।।

(५)

स्वामी जी शहीद हुए दिसम्बर तेबीस को,
दुष्ट ने हमारे पूज्य देवता को आग दी।
सद्धर्म की वेदी पर समर्पित किया वपु,
कैसा ? चक्र भाग्य का अजीब भावी भागदी ।।
अब्दुल रशीद, एक हत्यारा कनिष्ट खल,
अचानक जाके गोली छाती पर दागदी ।
अपूर्ण कार्य साथ वैदिक प्रचार मुक्त,
देश का उत्थान भाव ले के देह त्यागदी ।।

———

आर्य जगत् के सेनानी

(श्री डा. सूर्यदेव शर्मा साहित्यालंकार एम. ए. डी. लिट, अजमेर)

(१)

स्वामी श्रद्धानन्द हमारे आर्य जगत् के सेनानी,
जीवन रण में लड़े विकट संकट में हार नहीं मानी ।

(२)

होनहार विरबान पातसम जो किशोर वय से चमके,
न्यायालय में नित्य सत्य के प्राड्विषाक बन के दमके ।
दुष्ट दमन हित दुरित दलन हित, सदा सहोदर में यमके
साक्षात्-अवतार रहे जो जीवन भर शम के, दमके ।

धुनि के धनी परम् प्रण पालक, थे लाखों में लासानी,
स्वामी श्रद्धानन्द हमारे आर्य जगत् के सेनानी......

(३)

दयानन्द ऋषि के अनुगामी एक बार जो बने, बने,
पाप और दुष्चिरित स्वयं के, वा मित्रों के छने, छने ।
जिस पथ पर चल पड़े चले बस संकट कष्ट मिले घने,
सीना खोल खड़े सम्मुख रिपु की मशीनगन बने, बने ।

रही गरजती सदा सिंह-सम जिनकी अभय वीर वाणी ।
स्वामी श्रद्धानन्द हमारे आर्य जगत् के सेनानी......

(४)

ऋषि की गुरुकुल पुण्य प्रणाली के वह प्रथम प्रणेता थे,
पाश्चात्य शिक्षा प्रवाह में बहे न, रहे विजेता थे ।
आर्य जगत् की नौका के दृढ़ नाविक थे, अस नेता थे ।

हिन्दु जाति के हित अनहित के एक मात्र निर्णेता थे ।

शुद्धि-संगठन-प्राण फूंक कर जिसे उठाने की ठानी,
स्वामी श्रद्धानन्द हमारे आर्य जगत् के सेनानी......।

(५)

राष्ट्रीय शिक्षा संचालक हिन्दी हित के हामी थे,
ऋषि के सच्चे शिष्य वेद पथ के अनन्य अनुगामी थे ।
भारतीय स्वतन्त्रीय समर में अग्रगण्य श्री स्वामी थे,
दिया वीर बलिदान अन्त में सच्चे शहीद नामी थे ।

अमर कीर्ति है, जब तक नभ में 'सूर्य' व सागर में पानी,
स्वामी श्रद्धानन्द हमारे आर्य जगत् के सेनानी......।

देश गौरव अशफ़ाक उल्लाखां

(पं. ओम् प्रकाश आर्य)

१८५७ के स्वतन्त्रता संग्राम के पश्चात् देश की आजादी के लिए सर्वस्व न्यौच्छावर करने वाले श्री अशफाक पहले मुसलमान थे। उस समय इस पवित्र काम में हिन्दु ही भाग लिया करते थे परन्तु अशफाक उल्लाखां देश भक्ति के संस्कार लेकर उत्पन्न हुये थे इसलिए बाल्यकाल से ही आप की रुचि इस ओर थी। आपका जन्म १८९९ ई. में शाहजहांपुर के एक रईस खानदान में हुआ। पढ़ने लिखने में आप का मन न लगता था परन्तु तैरने, घोड़े पर सवारी करने और बन्दूक चलाने का आप को बहुत शौक था, हर समय देश भक्ति की पुस्तकें पढ़ते रहते थे। हिन्दु, मुसलमानों के संगठन के आप प्रबल समर्थक थे। मोमिन और काफिर का विचार आप के मन में कभी न आता था। अमर बलिदानी पं. राम प्रसाद बिस्मिल जी से आप का अत्यधिक स्नेह था और पण्डित जी ही आपको देश भक्ति के रंग में रंगने वाले थे। उन दिनों एक बार मुसलमानों ने मजहबी जोश में आकर आर्य समाज मन्दिर पर आक्रमण कर दिया। श्री अशफाक उल्ला को जब पता चला तुरन्त अपना पिस्तौल लेकर आर्य समाज मन्दिर के दरवाजे पर आ डटे और आक्रमणकारियों को भगा दिया अपनी आत्म कथा में पं. राम प्रसाद बिस्मिल ने श्री अशफाक को जो श्रद्धांजलि भेंट की है उस से अच्छी बात हम लिख नहीं सकते अतः आर्य मर्यादा के पाठकों को उसी का रसास्वादन कराते हैं श्रद्धाञ्जलि निम्नलिखित है :—

अशफाक

मुझे भली भान्ति याद है कि जब मैं बादशाही एलान के बाद शाहजहांपुर आया था, तो तुम से स्कूल में भेंट हुई थी। तुम्हारी मुझ से मिलने की बड़ी हार्दिक इच्छा थी। तुम ने मुझ से मैनपुरी षड़यन्त्र के सम्बन्ध में कुछ बातचीत करनी चाही थी। मैंने यह समझ कर कि एक स्कूल का मुसलमान विद्यार्थी मुझ से इस प्रकार की बातचीत क्यों करता है। तुम्हारी बातों का उत्तर उपेक्षा की दृष्टि से दे दिया था। तुम्हें उस समय बड़ा खेद हुआ था। तुम्हारे मुख से हार्दिक भावों का प्रकाश हो रहा था। तुम ने अपने इरादे को यों ही नहीं छोड़ दिया, अपने निश्चय पर डटे रहे। जिस प्रकार हो सका कांग्रेस में बातचीत की। अपने इष्ट मित्रों द्वारा इस बात का विश्वास दिलाने की कोशिश की कि तुम बनावटी आदमी नहीं, तुम्हारे दिल में मुल्क की खिदमत करने की ख्वाहिश थी। अन्त

तुम्हारी विजय हुई। तुम्हारी कोशिश ने मेरे दिल में जगह पैदा कर ली। तुम्हारे बड़े भाई मेरे उर्दू मिडल के सहपाठी तथा मित्र थे, यह जान कर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। थोड़े दिनों में ही तुम मेरे छोटे भाई के समान हो गये थे। किन्तु छोटे भाई बन कर तुम्हें सन्तोष न हुआ। तुम समानता का अधिकार चाहते थे। तुम मित्र की श्रेणी में अपनी गणना चाहते थे। वही हुआ, तुम सच्चे मित्र बन गये। सब को आश्चर्य था कि एक कट्टर आर्य समाजी और मुसलमान का मेल कैसा? मैं मुसलमानों की शुद्धि करता था। आर्य समाज मन्दिर में मेरा निवास था, किन्तु तुम इन बातों की किंचित मात्र चिन्ता न करते थे। मेरे कुछ साथी तुम्हें मुसलमान होने के कारण घृणा की दृष्टि से देखते थे, किन्तु तुम अपने निश्चय पर दृढ़ थे। मेरे पास आर्य समाज मन्दिर में आते जाते थे। हिन्दू मुस्लिम झगड़ा होने पर तुम्हारे मुहल्ले के सब कोई तुम्हें खुल-मखुल्ला गालियां देते थे, काफिर के नाम से पुकारते थे, पर तुम कभी भी उनके विचारों से सहमत न हुये। सदैव हिन्दू-मुस्लिम एवं के पक्षपाती रहे। तुम एक सच्चे मुसलमान तथा सच्चे देश भक्त थे। तुम्हें यदि जीवन में कोई विचार था तो यही कि खुदा मुसलमानों को अक्ल देता, कि वे हिन्दुओं के साथ मिल करके हिन्दुस्तान की भलाई करते। जब मैं हिन्दी में कोई लेख या पुस्तक लिखता तो तुम सदैव यही अनुरोध करते कि उर्दू में क्यों नहीं लिखते, जो मुसलमान भी पढ़ सकें? तुम ने स्वदेश भक्ति के भावों को भली भान्ति समझने के लिये ही हिन्दी का अच्छा अध्ययन किया। अपने घर जब माता जी तथा भ्राता जी से बातचीत करते, तो तुम्हारे मुंह से हिन्दी शब्द निकल जाते थे, जिससे सब को बड़ा आश्चर्य होता था।

तुम्हारी इस प्रकार की प्रवृत्ति को देख कर बहुतों को सन्देह होता था कि कहीं इस्लाम धर्म त्याग कर शुद्धि न करा लो। पर तुम्हारा हृदय तो किसी प्रकार अशुद्ध न था, फिर तुम शुद्धि किस वस्तु की कराते? तुम्हारी इस प्रकार की प्रगति ने मेरे हृदय पर पूर्ण विजय पा ली थी। बहुधा मित्र मण्डली में बात छिड़ती कि कहीं मुसलमान पर विश्वास करके धोखा न खाना। तुम्हारी जीत हुई। मुझ में तुम में कोई भेद न था। बहुधा मैंने तुम ने एक थाली में भोजन किए मेरे हृदय से वह विचार ही जाता रहा कि हिन्दू मुसलमान में कोई भेद है। तुम मुझ पर अटल विश्वास तथा अगाध प्रीति रखते थे। हां! तुम मेरा नाम लेकर प्रकार नहीं सकते थे। तुम सदैव राम कहा करते थे। एक समय जब तुम्हारे हृदय कैम्प (Palpitation of Heart) का दौरा हुआ, तुम अचेत थे, तुम्हारे मुंह से बारम्बार 'राम' 'हाय राम' शब्द निकल रहे थे, पास खड़े हुए भाई-बान्धवों को आश्चर्य था कि 'राम-राम' कहता है। कहते कि 'अल्लाह अल्लाह' कहो, पर तुम्हारी 'राम, राम' की रट थी। उस समय किसी मित्र का आगमन हुआ. जो राम के भेद को जानते थे। तुरन्त मैं बुलाया गया। मुझ से मिलने पर तुम्हें शान्ति हुई, तब सब लोग 'राम राम' के भेद को समझे।

अन्त में इस प्रेम प्रीति तथा मित्रता का परिणाम क्या हुआ? मेरे विचारों के रंग में तुम भी रंग गये, तुम भी कट्टर क्रान्तिकारी बन गये।

अब तो तुम्हारा दिन-रात प्रयत्न यही था कि किसी प्रकार हो मुसलमान नवयुवकों में भी क्रान्तिकारी भावों का प्रवेश हो। वे भी क्रान्तिकारी आन्दोलन में योग दें। जितने तुम्हारे बन्धु तथा मित्र थे सब पर तुमने अपने विचारों का प्रभाव डालने का प्रयत्न किया। बहुधा क्रान्तिकारी सदस्यों को भी बड़ा आश्चर्य होता कि मैंने कैसे एक मुसलमान को क्रान्तिकारी दल का प्रतिष्ठित सदस्य बना लिया। मेरे साथ तमने जो कार्य किये वे सराहनीय हैं। तुमने कभी भी मेरी आज्ञा की अवहेलना न की। एक आज्ञाकारी भक्त के समान मेरी आज्ञा पालन में तत्पर रहते थे। तुम्हारा हृदय बड़ा विशाल था। तुम्हारे भाव बड़े उच्च थे।

मुझे यदि शान्ति है तो यही कि तुमने संसार में मेरा मुख उज्जवल कर दिया। भारत के इतिहास में यह घटना भी उल्लेखनीय हो गई कि अशफाक उल्ला ने क्रान्तिकारी आन्दोलन में योग दिया। अपने भाई-बन्धु तथा सम्बन्धियों के समझाने पर कुछ भी ध्यान न दिया। गिरफ्तार हो जाने पर भी अपने विचारों में दृढ़ रहे। जैसे तुम शारीरिक बलशाली थे, वैसे ही मानसिक वीर तथा आत्मा के उच्च सिद्ध हुये। इन सबके परिणाम स्वरूप अदालत में तुम को मेरा सहकारी (लेफ्टीनेंट) ठहराया गया, और जज ने मुकद्दमे का फैसला लिखते समय तुम्हारे गले में जयमाला (फांसी की रस्सी) पहना दी। प्यारे भाई, तुम्हें यह समझ कर सन्तोष होगा कि जिस ने अपने माता पिता की धन सम्पत्ति को देश सेवा में अर्पण करके उन्हें भिखारी बना दिया। जिसने अपने सहोदर के भावी भाग्य को भी देश सेवा की भेंट कर दिया, जिसने अपना तन, मन, धन सर्वस्व मातृ सेवा में अर्पण करके अन्तिम बलिदान भी दे दिया, उसने अपने प्रिय सखा अशफाक को भी उसी मातृ भूमि की भेंट चढ़ा दिया।

पाठक वृन्द! यह शब्दश्रद्धांजलि या कोरी श्रद्धांजलि न होकर सच्ची रुधिराञ्जलि है। जो एक शहीद ने दूसरे शहीद की भेंट की है।

वीर अशफाक उल्ला को फैजाबाद की जेल में १९ दिसम्बर १९२७ को प्रातः काल फांसी दी गई थी। फांसी के तख्ते पर चढ़ और उसके फन्दे को चूमते हुये आपने कहा था—

फना है सबके लिये हम पर नहीं मौकूफ बका
तो है फकत इक जाते किनारिया के लिये।

इस सच्चे देश भक्त की कविता के कुछ नमूने हम साथ ही दे रहे हैं पाठक पढ़ें और प्रेरणा प्राप्त करें।

दक्षिण के आर्य शहीद

(ले. श्री पं० सत्य प्रिय शास्त्री एम. ए. प्रधानाचार्य दयानन्द ब्रह्म महा विद्यालय हिसार)

उन्नीसवीं शताब्दी के सर्व श्रेष्ठ विश्व सुधारक महर्षि दयानन्द सरस्वती ने विश्व के जन मन में एक अपूर्व क्रांति का उद्भव किया। ऋषि नवंविधि क्रांति के जनक एवं प्रसारक थे। उनके उद्दीप्त जीवन से अनेक जीवन प्रकाशमान हुए। उनकी विचारधारा की छाप ने ही अनेक उठते यौवनों को देश धर्म का परवाना बना दिया, ऋषि की इस वैचारिक क्रांति का सबसे अधिक गहरा प्रभाव दक्षिण हैदराबाद के निजाम के राज्यवासी आर्यों के स्वधर्म रक्षा व्रत के रूप में एक अपूर्व इतिहास का निर्माण करता दृष्टिगोचर होता है। इस भयावह काल में प्राण हथेलियों पर धर, सिर पर कफन बाँध अन्याय, अत्याचार शोषण तथा अमानवीयता से टक्कर लेते हुए अपने अस्तित्व की रक्षा करने का विचार ऋषि दयानन्द से वैचारिक दीक्षा लेने के के कारण ही सम्भव हो सका। जिन अबला समझे जाने वालो देवियों ने भी ऋषि दयानन्द तथा आर्यसमाज का संसर्ग किया। उन्होंने भी अत्यतायियों से जबरदस्त टक्कर लेते हुये लक्ष्मी, महामाया के गौरवशाली इतिहास की पुनरावृति को सम्पन्न किया, किस प्रकार ऋषि दयानन्द तथा आर्यसमाज से प्रेरणा प्राप्त कर देश-धर्म की रक्षार्थ वीरों ने बलिदानों की परम्परा को जन्म दिया। इसका संक्षिप्त चित्रण दिया जा रहा है।

महाराष्ट्र के धारा शिव जिले गुंगोटी ग्राम में वहां जन्मे श्री वेद प्रकाश। इस ज्योति से ज्योतित हुए वहां के प्रत्येक यवन को राजा मान कर चलता था! आर्यों की देवियां सुरक्षित न थीं। दाउद खां नामक यवन कुछ अधिक उच्छृंखल था। आर्य वीर वेद प्रकाश ने उसे आर्य देवियों से छेड़छाड़ न करने की चेतावनी दी। इसके साथ ही आर्यो में सबलता लाने हेतु अखाड़ा चलाने लगा, आर्य समाज के प्रचार में अधिकाधिक रुचि रखने लगा। आर्य यवनों से वस्तु क्रय विशेषकर पान न खरीदें। तदर्थ उस ने पान की दुकान खोल दी। यवन तो उसकी ताक में थे ही और एक दिन जब आर्यसमाज के मन्त्री पर उन्होंने छुरे, भाले बरछों से मार डाला। मुगलबाद शाहत में हकीकत राय के बलिदान के बाद यह धर्म के लिये अपूर्व बलिदान था।

दक्षिण में ही कल्याणी रियासत में अहर्निश संलग्न थे। आर्यो को सबल बनाने के लिए लाठी-भाला चलाना सिखाते तथा अखाड़े चला कर व्यायाम का प्रचार करते। इस कार्य से हटाने के लिये उन्हें कई बार भयानक चेतावनियां

दी जा चुकी थीं। एक दिन जब वे आर्य समाज कल्याणी के सत्संग से घर जा रहे थे तब कुछ खाकसारों ने लाठो, भाले, छुरों से मार दिया परन्तु इससे भी आर्य समाजी भयभीत न हुए क्योंकि—

'रग लाती है हिना
पत्थर पे घिस जाने के बाद'

इन्हीं बलिदानी युवकों में श्री महादेव जी जो दाकोल के आर्य समाज के सत्संगों में जाते थे और उन पर ऐसा रंग चढ़ा कि अपना सर्वस्व ही आर्य समाज को अर्पित कर दिया। सोते, जागते, उठते बैठते आर्य समाज के प्रचार की ही चिन्ता, विधर्मियों ने कई बार घातक आक्रमण किये परन्तु वे निर्भयता से ऋषि के मिशन की राह पर बढ़ते ही गए और एक दिन अपनी इसी धुन में जा रहे थे कि एक यवन ने पीछे से छुरे का गंभीर प्रहार किया। जिससे आप धर्म की वेदी पर शहीद हो गए।

इस प्रसंग में यदि शहीद शिरोमणी भाई श्याम लाल का उल्लेख न होगा तो यह अपूर्ण ही रहेगा। पौराणिक घरानों में पैदा होकर भी ऋषि के मिशन के ऐसे दीवाने बने कि आप चलते-फिरते आर्यसमाज थे। वहां का युवक समूह तो आप पर न्यौछावर होता था। कई बार आप पर घातक आक्रमण किये परन्तु बच गए। जब किसी प्रकार भी आप काबू न आए तो निजाम ने झूठे मुकद्दमे चला कर जेल में डाल दिया जहां आपको तीव्र विष दिया गया। जिसके कारण आपका बलिदान हुआ। श्मशान में जब आपका शव जल रहा था जिसे देख कर आपकी वृद्धा नानी बाल बिखेर कर धाड़ें मार कर रो रही थीं। इस दिल दहला देने वाले दृश्य को देख कर श्री नारायण स्वामी जी भी रो उठे और वहीं पर आपने 'अब आर्यसमाज के धैर्य का बांध टूट गया है' कह कर सत्याग्रह के निश्चय की घोषणा कर दी थी। इस प्रकार इनका बलिदान टिहरी के देव सुमत तथा अन्य कई बलिदानों से अधिक महत्वपूर्ण था। आपके भाई जीवित शहीद श्री भाई बंशीलाल जी थे जो वहां के हिन्दुओं के प्राण समझे जाते थे। इसी प्रकार श्री वैंकटराव जी तथा विष्णु भगवन्त जी को सत्याग्रह के समय जेलों में इतनी मार पड़ी कि धर्म रक्षार्थ बलिदान हो गए। यवन शासन की ओर से आर्यों को दबाने अनेक कुटिल एवं घृणित प्रयास किए जाते थे। १६४३ की होली के समय आर्यों के जलूस पर हुवानाबाद में यवनों ने सशस्त्र आक्रमण कर दिया। जिसमें श्री शिवचन्द, श्री लक्ष्मण राव जी, राव जी अगड़े तथा श्री नरसिंह राव जी गोलियों से शहीद हो गये। लावसी ग्राम में यवनों ने शिव मन्दिर को तोड़ने की घोषणा कर दी। आर्य वीर रामकृष्ण जी शस्त्र लेकर डट गए। घायल होने पर भी मुकाबला करते रहे। अन्त को वीरगति को प्राप्त हो गए। हिपला (जि. उदगीर) के श्री भीम राव तथा माणिक राव को भी इसलिए यवनों ने कत्ल कर दिया था चूंकि यवनों ने इनकी बहिनों को मुसलमानी बना लिया था और इन्हों ने उनको पुनः शुद्ध कर लिया था। इसी प्रकार अम्बोकगा (बिदर) के सत्य नारायण जो आर्य समाज के जोशीले कर्मठ कार्यकर्ता थे को चिढ़ कर यवनों ने मोहर्रम के अवसर पर कत्ल कर दिया था। कन्नड़ (औरंगाबाद) के वासी श्री अर्जुनसिंह जो आर्यसमाज के जोशीले कर्मठ कार्यकर्ता थे, दयानन्द मुक्ति दल के सेनापति थे। आर्य समाज की प्रत्येक गतिविधि में सक्रिय

भाग लेते थे। उनको आक्रमण करके यवनों ने बलिदान पथ का पथिक बना दिया। जि. बीड का धीरूर कस्बा आर्य समाज का सुदृढ़ दुर्ग था वहां के आर्यवीर जान पर खेलकर भी आर्य ललनाओं की रक्षा किया करते थे। वहां के वीर काशीनाथ ने अपने एक मित्र के सहयोग से यवनों के आक्रमण से आर्य देवियों की रक्षा की। इसमें काशीनाथ घायल हो गए जिसे उन दुष्ट धर्मान्धों ने चौराहे में ला कर उस पर सूखी घास डाल कर जिन्दा ही अग्नि में जला दिया था। मिलिट्री एक्शन के समय आर्यों ने इसी चौराहे में अनेक यवनों को इसी प्रकार जलाकर उसका शानदार बदला लिया था।

धाराशिव जिले में ईटे नामक गांव में श्री कृष्णाराव तथा उनकी पत्नी गोदावरी रहते थे। उन्होंने मकान पर ओ३म् का ध्वज लगा रखा था। जिला कलैक्टर मि. हैदरी दो पठान और एक मुस्लिम पुलिस कांस्टेबल के साथ आया और कृष्णराव को धमका कर ओम का झण्डा उतारने का आदेश दिया। उनके मना करने पर पिस्तौल की गोली से मार डाला। यह देखकर गोदावरी घर से बन्दूक लेकर आई और उन दो पठानों को वहीं ढेर कर दिया परन्तु मि. हैदरी ने उस देवी को गोली मार दी और उनके मकान को आग लगवा दी। जब तक दोनों जिन्दा रहे ओ३म् का ध्वज नीचे नहीं गिरने दिया। आखिर निजाम के अत्याचारों से तंग आकर नारायण बाबू, जगदीश तथा गंगाराम ने निजाम को बम से मारने का निश्चय किया। जिसके लिए छः मास तक जंगलों में गुप्त अभ्यास करते रहे। निश्चित समय पर वे तीनों पृथक-२ तीन मोड़ों पर खड़े हो गये। निजाम मोटर आते ही नारायण बाबू ने बम मारा परन्तु निशाना चूक गया, मोटर का पिछला हिस्सा टूट गया और सड़क पर गहरा गड्डा हो गया। नारायण को पकड़ लिया गया। उसे अमानवीय यातनाएं दी गई। परन्तु उसने भेद न खोला। इतने में मिलिट्री एक्शन हो गया और लौह पुरुष स. बल्लभ भाई पटेल ने नारायण को रिहा करा के दिल्ली बुलाया और उसकी पीठ थपथपाते हुए उसे शाबासी दी। परन्तु आज वही वीर गुमनामी की जिन्दगी बिता रहा था। इसके अतिरिक्त जीवित शहीदों में पं. नरेन्द्र जैसे व्यक्ति हैं जिन के पांव की क्रूर यवनों द्वारा तोड़ी गई हड्डी आज भी शहादत की साक्षी है। निजाम के राज्य के एक-२ पत्थर, कंकड तथा ईंटो पर वहां के आर्य वीरों के शौर्य, बलिदान, तप एवं त्याग की ओजस्वी गाथायें अंकित हैं। काश कि हम उस लुप्त गौरवशाली इतिहास को पृष्ठों में अंकित कर सकें। वे सभी आर्यवीर महर्षि दयानन्द तथा आर्यसमाज की विचारधारा से अनुप्राणित थे। भले ही परिस्थितियों ने उन्हें कहीं लाकर पटक दिया हो। यदि इस मिशन को आगे बढ़ाना है तो हमें उनका इतिहास कलमबद्ध करके आने वाली पीढ़ियों के सामने रखना होगा! कम से कम इतना सच्चा श्राद्ध तो हम उन आर्य शहीदों का कर ही सकते हैं।

———

श्रद्धा के साकार रूप स्वामी श्रद्धानन्द

(श्री उत्तम चन्द जी शरर एम० ए०)

आर्य समाज के एक महान हुतात्मा का आज बलिदान दिवस है। शहीदों को स्मृति भी समाज में नवचेतना का संचार करती है। मृतप्राय: जातियां अपने वीरों की स्मृति से जीवित जागृत हो जाती है। आर्यसमाज को यह गौरव प्राप्त है। कि उसने अपने जीवन के थोड़ से काल में सबसे अधिक बलिदानी देश तथा जाति को दिये। उन शहीदों श्री स्वा. श्रद्धानन्द जी विशेष महत्व रखते है। आरम्भिक जीवन उनका विलासिता में बीता। स्वामी दयानन्द जी के सानिध्य प्राप्त करने के पश्चात वह चोंके, जागे और जीवन लक्ष्य की ओर चल पड़े। कई यागी उन से पूर्व इस यात्रा में अग्रसर थे पर स्वामी श्रद्धानन्द अपनी द्रुत गति से सबसे आगे निकल गये और ईश्वर ने भी उन पर कृपा की कि उन्हें एक शहीद की मृत्यु दे कर सदा के लिए अमर कर दिया। गांधी जी ने उनकी मृत्यु पर कहा था, 'एक शानदार जीवन का शानदार अन्त, काश ! कि ऐसी मृत्यु मुझे प्राप्त होती ? और जैसे ईश्वर ने गांधी जी की प्रार्थना स्वीकार करके उन्हें भी उसी देहली में शहादत का सुअवसर प्रदान कर दिया।

मेरी दृष्टि में स्वामी श्रद्धानन्द जी की सबसे बड़ी विशेषता थी उनकी सत्य में सर्वात्मना श्रद्धा। वे जब ऋषि के अनुगामी बने तो पूर्ण श्रद्धा से और अडिग निष्ठा से। गलियों में खड़-ताल ले कर ऋषि के गौरवगान को गाना उनकी श्रद्धा का द्योतक है। पुत्रों का जातपात तोड़कर विवाह करना, और उस जमाने में करना, जब इस मार्ग पर चलना हिन्दुओं के विरोध को निमन्त्रण देना था, उनकी श्रद्धा का प्रमाण है। गुरुकुल के लिये सबके विरोध की चिन्ता न करते हुए कमर कस लेना, और घर तक में उस समय तक पांव न रखना उनकी धुन को प्रकट करता है। तपस्या में पूर्ण. महात्मा, कथनी और करनी में यहां तक सच्चे, कि अपने प्रिय पुत्रों को गुरुकुल में प्रथम प्रविष्ट कराया, स्वयं वानप्रस्थ लिया. गुरुकुल में शिक्षक बने, और अपने प्यारे पुत्रों से अनुमति लेकर अपनी एक मात्र बची कोठी भी गुरुकुल को दान करदी, कोई सीमा है श्रद्धा की ? मैं तो पग पग पर उनकी श्रद्धा का स्वरूप देखता हूं। आर्य भाई तक जिसे कठिन कह कर छोड़ देते थे, श्रद्धानन्द उसे अपने तप तथा श्रद्धा से करके हटते थे। आर्य जाति के प्रति ममता उन्हें अपने गुरुवर दयानन्द से धरोहर में मिली थी। महात्मा गान्धी जी के साथ स्वामी श्रद्धानन्द के गौरवमय सम्बन्ध थे। स्वयं गान्धी जी उन्हें चरणों पर हाथ रखकर मिलते थे, उनके सम्मान में दिल्ली को श्रद्धानन्द नगरी कहते थे, पर जब मुसलमान मित्रों के पक्षपात, तथा तुष्टिकरण की नीति को उन्होंने

देखा, तो अपनी ख्याति की चिन्ता न करते हुये, उन्होंने गान्धी जी से सम्बन्ध तोड़ अपना अलग मार्ग ले लिया। यह घटना उनके, तेजों दृप्त वीरत्व का जीवित जागृत चित्र है। देश भक्ति में भी वे इतने आगे गये कि दिल्ली में रोलर ऐक्ट के विरोध में गोरों की संगीनों के सामने कुरते के बटन खोल खड़े हो गये, हिन्दी भाषा का प्रेम, अमृतसर के कांग्रेस अधिवेशन में उनका हिन्दी में अपना वक्तव्य पढ़ने से प्रकट होता है कि जिस रूप में देखे वह अपनी श्रद्धा के बल पर कष्टकाकीर्ण मार्ग को भी प्रशस्त बनाकर बढ़ते दीखते हैं। इतना महान् था उस महान् बलिदानी का जीवन और फिर जब गान्धी जी से अलग हुये तो शुद्धि के पवित्र कार्य में जुट गये। मुसलमान भाई इससे रुष्ट हुए परन्तु उन्हें भूल गया वही श्रद्धानन्द थे जिन्हें उन्होंने कुछ काल पूर्व जामा मस्जिद का जिम्बर भाषण के लिये प्रस्तुत किया था, श्रद्धानन्द अब भी मुसलमानों के विरोधी नहीं थे, अपितु पक्ष में थे, और वेद की शरण में आने वाले ऐसे सभी विधर्मियों को हिन्दुओं से समान अधिकार लेकर देने में प्रयत्नशील रहे, जिन्हें इससे पूर्व हिन्दू संकीर्णता से नहीं देते थे। सारी आयु संघर्ष में बीती थी, जैसे वीर श्रद्धानन्द ने स्वयं संघर्षों को निमन्त्रित किया, और अन्त में संघर्षरत हो कर अपने शरीर की अन्तिम श्वास भी अपने देश तथा जाति के लिए अर्पित करदी।

ऐसे महान् क्रान्तिकारी वीर की स्मृति, आज हम मनाने चले हैं। आज हम कहां खड़े हैं, यह देखकर दम घुटता है। राजनीति में हो या धार्मिक क्षेत्र में, हमारा अस्तित्व नगण्य है। सामाजिक रूप में हमारा मुख उज्जवल नहीं है। जनता भी हमें नहीं पूछती, और सरकार भी हमसे उदासीन है। ऋषिबोधोत्सव का अवकाश हरियाणे में नहीं तो श्रद्धानन्द बलिदान दिवस का अवकाश भारत भर में नहीं। २५-१२-७५ को हम क्रिसमिस के अवकाश का उपयोग करके अपना मन बहला लेते हैं। गुरु तेगबहादुर गुरु गोविन्दसिंह के जन्म दिवस सरकार की मान्यता प्राप्त कर चुके आर्यों का कोई पर्व अपनी स्वीकृति प्राप्त नहीं कर सका। घर भी हम जिन्दा है हमारे शहीद हमें सतत प्रेरणा देते हैं, उनका जीवन हमारे लिये प्रेरणा स्रोत है, आओ आज हम अपने मन में स्वामी श्रद्धानन्द जी की आस्था जागृत करें संगठित होकर वेद मार्ग पर बढ़ने का प्रयास करें, और उस श्रद्धानन्द की स्मृति को ताजा करें जो देश भक्ति में गोखले, दृढ़ निश्चय में पटेल, सांस्कृतिक प्रेम में मालवीय, और आस्तिकता में महात्मा गान्धी का समन्वित रूप थे।

——

"जब खून का बदला खून से लिया"

(अनूपसिंह मन्त्री आर्य समाज, देहरादून)

२० अक्तूबर १९२८ को साइमन कमीशन के लाहौर पहुंचने पर पूर्व निर्धारित योजना के अनुसार कमीशन के विरोध में सभी राष्ट्रीय दलों ने प्रचण्ड प्रदर्शन किया। प्रदर्शन का नेतृत्व पंजाब केसरी लाला लाजपतराय कर रहे थे। इस प्रदर्शन को असफल बनाने के लिए पुलिस ने प्रदर्शनकारियों पर लाठी चार्ज किया। पुलिस अधीक्षक मि. साण्डर्स ने जलूस के नेता "लाला जी" पर लाठियों से प्रहार किया। लाला जी का वृद्ध शरीर इस प्रहार को सह नहीं सका। इस प्रहार के बाद वे एक महीना भी जीवित नही रहे। १७ नवम्बर सन् १९२८ को उन की मृत्यु हो गई। लाला जी की मृत्यु ने जनता में अंग्रेजों के प्रति बढ़ रही असंतोष एवं प्रतिशोध की भावना की अग्नि में घी का काम किया।

जनता के क्रोध और प्रतिशोध का अनुमान शोक सभा में स्व. चितरंजन दास की पत्नी श्रीमती बसन्ती देवी ने कहा था—"लाला जी की चिता ठण्डी होने से पूर्व देश का युवक खून का बदला लेगा।" भरी सभा श्री अविनाशचन्द्र बाली ने यह घोषणा की कि खून का बदला खून से लिया जाएगा।

अन्ततः १७ दिसम्बर १९२८ को लाला जी के हत्यारे मि. साण्डर्स को भगतसिंह और राजगुरु ने अपनी पिस्तौल से नरकधाम पहुंचा कर खून का बदला खून से लेकर दिखा ही दिया। प्रसिद्ध क्रान्तिकारी सुखदेवराज ने सांडर्स वध की घटना को अपने शब्दों में इस प्रकार वर्णन किया है—"समय १७ दिसम्बर १९२८ शाम के चार बजे। स्थान जिला पुलिस अधिकारी लाहौर का कार्यालय। पुलिस इन्स्पैक्टर एकाट का बंगला इसी कम्पाऊंड में था। पुलिस आफिस के सामने कालेज रोड पर दो क्रान्तिकारी टहल रहे हैं। ये हैं भगतसिंह और राजगुरु। सामने कालेज कम्पाउण्ड के गेट पर एक हृष्ट पुष्ट सांवले रंग वाला युवक कालेज में वालीबाल का खेल देख रहा है। चौथा क्रान्तिकारी कालेज स्ट्रीट की नुक्कड़ पर खड़ा जिला पुलिस अधिकारी के बंगले की ओर देख रहा है यह जयगोपाल था। सहसा साण्डर्स अपनी लाल मोटर साइकिल पर सवार पुलिस आफिस से निकला। कुछ ही कदम पर राजगुरु खड़ा था। राजगुरु की गोली और ठीक निशाने पर सांडर्स को लगी। लड़खड़ा कर मोटर साइकिल और उसका सवार सड़क पर गिर गये। दूसरा क्रांतिकारी भगतसिंह आगे बढ़ा और कुछ और गोली

चला कर उसने निश्चय कर लिया कि लाला लाजपतराय का हत्यारा जिन्दा नहीं रहा। अब दोनों क्रान्तिकारी कालेज कम्पाउण्ड की ओर बढ़े।

गोलियों की आवाज सुन कर बरामदे में खड़ा सिपाही बड़ी जोर से चिल्लाया—"खून-खून-खून" और फौरन उस की आवाज सुन कर ट्रैफिक इन्स्पैक्टर, दो सिपाही और हवलदार चन्दन सिंह के साथ क्रान्तिकारियों को पकड़ने के लिए दौड़ा। आते ही फर्न ने राजगुरु को दबोचने की सोची। संयोगवश राजगुरु का रिवाल्वर उस समय जाम हो गया, अतः उसने वह पहलवानी दाव फर्न को लगाई कि वह चारों खाने चित्त ,जमीन पर गिर पड़ा। फर्न को सम्भलने में जो समय लगा इस बीच राजगुरु को भागने का मौका मिल गया। फिर भी जब भगतसिंह ने देखा कि फर्न बाज नहीं आ रहा है उन्होंने पुनः गोली चलाई। गोली की आवाज सुनते ही फर्न जमीन पर लेट गया और फिर नहीं उठा। आजाद का आदेश पाते ही भगतसिंह और राजगुरु डी. ए. वी. कालेज के होस्टल की तरफ भागे। हवलदार चन्दन सिंह और सिपाही अब भी उन का पीछा कर रहे थे। आजाद ने यह देखा तो गरज उठे—

"खबरदार! जो आगे बढ़े तो मौत के घाट उतार दिए जाओगे।" दोनों सिपाही यह चेतावनी सुनकर भाग खड़े हुए, परन्तु चन्दनसिंह नहीं रुका। फलस्वरूप आजाद ने गोली चला दी और वह वहीं घायल होकर गिर पड़ा। एक घण्टे बाद मेयो अस्पताल में उसकी मृत्यु हो गई भारी संख्या में पुलिस ने डी. ए. वी. कालेज के होस्टल को घेरा डाल दिया परन्तु क्रान्तिकारी तो गन्तव्य स्थान तक पहुंच चुके थे। पुलिस ने एक-एक कोना छान डाला, परन्तु उस के हाथ कुछ नहीं आया।

यह है वह ऐतिहासिक घटना जो हमें पंजाब केसरी लाला लाजपतराय के खून का बदला खून से लेने की याद दिलाती है।

——

स्वाधीन भारत के निर्माता श्री माधव श्री हरि अणे

स्वामी श्रद्धानन्द जी भारत के उन महापुरुषों में हैं, जिनका देश के इतिहास में शाश्वत् स्थान है। भारत के सांस्कृतिक इतिहास की कहानी अधूरी ही रह जाएगी यदि उसमें शिक्षा, सामाजिक सुधार, धार्मिक पुनरुत्थान और वेद धर्म की सेवा के क्षेत्र में की गई स्वामी जी की सेवाओं का उचित अंकन न किया जावे। आर्य ऋषियों की दो विशेषताओं—आदर्शवादिता और त्याग की भावना—का स्वामी जी में सुन्दर समन्वय हुआ था। वे स्वाधीन भारत के निर्माताओं में अनन्यतम् हैं।

मेरे प्रेरणा स्रोत महर्षि अरण साहब कर्वे

स्वामी जी पहले व्यक्ति थे जिन्होंने भारत में माध्यमिक और उच्च शिक्षा के माध्यम के रूप में देश भाषा (स्वभाषा) को प्रयुक्त किया। अब तो इस सिद्धान्त का अनेक विश्व विद्यालयों ने अनुसरण कर लिया है। वे स्वामी जी ही थे जिनसे प्रेरणा पाकर मैंने अपने भारतीय महिला विद्या पीठ की समस्त परीक्षाओं में स्वभाषा को माध्यम बनाया।

——

स्वामी वेदों वाला

(रचयिता :—प्राध्यापक राजेन्द्र 'जिज्ञासु')

(तर्ज :—भारत का कर गया बेड़ा पार ओ मस्ताना जोगी)

जन हित में दे गया जीवन दान स्वामी वेदों वाला।
जग में कुछ लाया था अरमान स्वामी वेदों वाला ॥
जोगी ने अलख जगाई वेदों की महिमा गाई ॥
ईश्वर का नित्य अनादि ज्ञान——

ईश्वर है एक बताया, युक्ति से यह समझाया ।
कण कण में व्यापक है भगवान ॥
ईश्वर है अजर अजन्मा, उस की है कैसी प्रतिमा।
पत्थर को समझो न भगवान——

दुनिया के दम्भी कांपे, पापी, पाखण्डी हांपे ।
सीने में लाया वह सद्ज्ञान——————————
दलितों से प्रेम सिखाया, बिछड़ों को गले लगाया ।
नवयुग का कर गया नवनिर्माण——

कल्पित भय भूत भगाए, कायर भी शूर बनाए।
मुर्दों में डाली फिर से जान——————————
'रत्तो' की देख उमंगें, डाक्टर की देख तरंगे ।
डायर ओडवायर भी हैरान——

घुट्टी क्या घोट पिलाई, 'बिस्मिल' की होश भुलाई।
भारत पर हो गये वे बलिदान——————————
जन हित में दे गया जीवन दान स्वामी वेदों वाला॥

—।—

'कोई चाहे सिर भी उतार दे'

(लेखकः—प्राध्यापक राजेन्द्र जिज्ञासु, अबोहर)

भाग्यनगर (हैदराबाद राज्य) के क्रांतिकारी आर्यवीर स्वर्गीय श्री अशोक आर्य एक घटना सुनाया करते थे। श्री विनायक राव जी विद्यालंकार उत्सवों पर भजनिकों को महाशय चिरंजी लाल जी 'प्रेम' का भजनः—मुझे धर्म वेद से हे पिता सदा इस तरह का प्यार दे' सुनाने के लिए कहा करते थे। जब भजनिक भजन आरम्भ करते तो विनायकराव जी के नयन सजल हो जाया करते थे। एक बार आर्य बंधुओं ने रोने का कारण पूछ ही लिया।

तब विनायकराव जी ने बताया कि जब यह भजन सुनता हूं तो बालकाल के वे दिन याद आ जाते हैं जब गंगा पार कांगड़ी के निर्जन वन में गुरुकुल में पढ़ा करते थे। रात्रि को शेर, बाघ आदि हिंसक पशुओं से रक्षा के लिए रात्रि को कुल पिता स्वामी श्रद्धानन्द जी भी अपनी बारी दिया करते थे। लाठी लेकर महाराज श्रद्धानन्द यही भजन गा गा कर निशा के मौन को तोड़ा करते थे। तब रात के समय महान साधु के उर से निकले अरमान जंगल के आर पार हो जाया करते थे। यह गीत उनके अधरों व वाणी से नहीं निकलता था उनके सीने से निकलता था। यह उनके आत्मा की बेचैन चाह थीः—

'न मोड़ू मुख कभी इससे
मैं कोई चाहे सिर भी उतार दे'।

साधू को वही मृत्यु मिली जिसके लिए वह तड़पता तरसता था। अपने भावों को मूर्त रूप देने का उसे सौभाग्य प्राप्त हुआ।

स्वामी श्रद्धानन्द जी बर्मा गये। आर्य जाति के लौह पुरुष स्वामी स्वतन्त्रता जी महाराज भी वहीं थे। माण्डले की ईदगाह से जन समुद्र के सामने आर्य साधुओं ने स्वराज्य का खुला संदेश दिया। भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम में यह सौभाग्य व सम्मान केवल इन्हीं दो आर्य संयासियों को प्राप्त हुआ कि वे ईदगाह से स्वराज्य की तान सुना सके।

दिसम्बर मास आर्यसमाज के बलिदानियों का प्यारा महीना है। श्रावणी हमारा ज्ञान पर्व है। दिसम्बर हमारा बलिदान पर्व है। इस मास का देवता स्वरूप भाई परमानन्द जी से सम्बन्ध है। सुविख्यात देश भक्त श्री फिरोज चन्द जी ने लिखा हैः—

"The British rulers of this country found Bhai Parmanand formidable as a political corrupta of the Indian youth and it was just for this crime, and no other, whether the allegations of the prosecutors for the purpose of involving him in a conspiracy—that he was awarded a sentence of death."

अर्थात् अंग्रेज शासकों ने भाई जी पर आरोप भले ही कुछ भी लगाए परन्तु शासकों की दृष्टि में उनका एक ही अक्षम्य अपराध था कि वे भारतीय युवकों को 'भ्रष्ट' करते थे। इसी कारण उन्हे फांसी का दण्ड दिया गया।

भक्त सिंह करतारसिंह सराबा को पथ 'भ्रष्ट' किया ही 'बिस्मल' भी जो उन्हें फांसी दण्ड दिये जाने का समाचार सुनकर बिस्मल हुआ और 'भ्रष्ट' बन गया। भाई जी के अभियोग में कहा गया था कि यह तो हरदयाल से भी अधिक भयानक भारतीय है।

भाई जी एक तपस्वी आर्यनेता थे। नया बांस देहली के एक आर्य सज्जन श्री पन्नालाल जी आर्य ने स्टेशन से तांगे पर बैठने के लिए कहा। भाई जी ने कहा 'पास ही तो समाज मन्दिर है। दो दो, चार चार आने पर एकत्र करके आप काम चलाते हैं। क्यों इतनी दूरी के लिए तांगा लेते हो।'

श्री पन्नालाल जी आर्य एक बार प्रभात काल में मेरठ में भाई जी को गाड़ी चढ़ाने के लिए समाज मन्दिर गये तब भी यही कह कर तांगा लाने से रोक दिया। कड़ी शीत में सिर पर चादर लपेट कर ऋषियों का नाम लेवा चल पड़ा।

१६ दिसम्बर को ही दक्षिण के आर्यनेता भाई श्यामलाल जी का बलिदान हुआ। निजाम की जेल में विष देकर उस बलिदानी सेनानी को मारा गया परन्तु वह मरा कहां? वह तो मर कर अमर हो गया। सारा जीवन विपदाओं से जूझने वाले श्याम भाई ने आर्य समाज को बीसियों दिल जले जवान दिये। आर्यसमाज दक्षिण में उनके बलिदान से फूला फला और गौरवान्वित हुआ। उनकी प्रचार की धुन, सिद्धान्त प्रियता व स्वध्यायशीलता हमारे लिए स्पर्धा का विषय है। भाग्यनगर सत्याग्रह का विजय का शिलान्यास वेद प्रकाश, धर्मप्रकाश व भाई श्यामलाल जी के बलिदान पर ही तो रखा गया। उन्होंने बलिदान देकर आर्यों को जीना सिखाया। ऐसा मार्ग खोला कि आर्यो ने अचल हिमालय को कम्पा के रख दिया, हिलाकर रख दिया। निजाम का राज्य धराशाही हो गया।

उनके निवास स्थान पर एक भीड़ ने आक्रमण कर दिया। भाई जी ने आर्य वीरों को छत पर चढ़ा दिया और स्वयं पिस्तौल लेकर अपने द्वार पर खड़े हो गये। जिसी को भाई जी पर वार प्रहार करने का साहस ही न हो सका। धाराशिव आर्य समाज के उत्सव पर भाई जी को मारने के लिये निजामी बदमाश आए। भाई जी सामने मञ्च पर शान्ति से बैठे थे। दर्शकों को यह देखकर आश्चर्य हुआ कि भाई जी सामने बैठे हैं फिर भी ये लोग उन्हें मारने से अब डरते क्यों हैं।

भाई जी ने स्वयं शास्त्रार्थ किए और बड़े बड़े पोंगा पंथियों को उनके सामने चित्त होना पड़ा। ऐसे तेजस्वी धर्मवीर को इतिहास भुला न सकेगा। दक्षिण में देश जाति के लिए मरने वाले वह प्रथम स्वाधीनता सेनानी थे।

शहीद बिस्मिल का और रोशन सिंह का बलिदान भी दिसम्बर में ही हुआ। रोशनसिंह को फांसी दी गई। उनका एक सगा सम्बन्धी ज्वालापुर महाविद्यालय से अन्तिम संस्कार के लिए आया। नगर में आतंक था। कौन

(शेष पृष्ठ ४९ पर)

अमर शहीद श्रद्धानन्द !

(ले० श्री कुसुमाकर आर्य नगर फीरोजाबाद)

(१)

अमर शहीद ! नत मस्तक सभी हैं आर्य,
लज्जित दृगम्भु भरे चरण पखारते।
तेरे त्याग तप के समक्ष भूल जाते लक्ष्य,
पातक प्रमादी पामरों के प्राण हारते।
धैर्य में लगाते धर्मराज के हर्षले प्राण,
साहस में विक्रम—पराक्रम को वारते।
तेरे वर-व्रत में प्रताप-पार्थ की विभूति,
नीति में प्रतीति घनश्याम भी निहारते।

(२)

देव दयानन्द की विभूति-भूति लेके साथ,
जीवन के क्षेत्र में अमन्द बढ़ते गए।
प्रतिद्वन्दियों के द्वन्द्व-भूधरों को ढाते गए,
होकर स्वच्छन्द वीर-छन्द पढ़ते गए।
फोड़ डाले क्रूरे कुम्भ कुटिल कुचालियों के,
दम्भ को दवा के शूल-श्रृंग चढ़ते गए।
गौरव-गुमान का महत्व-तत्व गाते गए,
मंत्र अमरत्व के स्वतन्त्र गढ़ते गए।

(३)

मृत्यु से—

रोग ग्रस्त-त्रस्त सारा सुन्दर शरीर जब,
तोले मृत्यु-शोणित से खप्पर को भरदे।
बोले—'धीर-वीर, "नीर शीतल समीर पीके।"
मानस अधीर की समीर तेज कर दे।
टूटने न पावे सूत्र शुद्धि का विशुद्ध देवि।
लेलो प्राण चाहे, वैद-बुद्धि तू अमर दे।
आऊं आर्य देश में मिटाऊं कालिमा कलंक,
अंक में समाऊं, बार-बार ऐसा वरदे।

स्वामी श्रद्धानन्द जी एक महान पुरुष

(लेखक :—श्री मदनजित आर्य वैदिक धर्म विशारद, फिरोजपुर शहर)

महात्मा मुन्शी राम जी ने जब से बरेली में महर्षि दयानन्द जी से साक्षात्कार किया उसी समय से उनके भीतर से नास्तिकता दूर हो गई और उसके उपरान्त ऋषि के सिद्धान्तों को क्रियान्वित करने के लिए स्वजीवन अर्पण कर दिया। कुछ घटनाएं उनके इस दृढ़ संकल्प की ओर निर्देश करती हैं जो संक्षिप्त से इस प्रकार हैं :—

(१) आर्य भाषा ही हमारी संस्कृति की प्रतीक है एतदर्थ अपने अखबार सदधर्म प्रचारक जो उर्दू में छपता था हिन्दी लिपि में तुरन्त कर दिया।

(२) जात पात की कड़ी को तोड़ने के लिए स्वयं अपनी कन्या का विवाह सुखदेव अरोड़ा से कर दिया।

(३) महर्षि दयानन्द जी ने सत्यार्थ प्रकाश में गुरुकुल शिक्षा प्रणाली का वर्णन किया तो तुरन्त स्व. दोनों पुत्रों श्री हरिश्चन्द्र और श्री इन्द्र जी को लेकर गुरुकुल खोल दिया।

(४) शुद्धि का आन्दोलन चलने पर स्वयं मलकाना भाईयों की शुद्धि आगरा आदि में जा कर सनातन धर्म भाईयों के साथ मिल कर की और उनके साथ सहभोज में भी सम्मिलित हुए।

(५) मांस, शराब, हुक्का आदि व्यसनों में पहले वह ग्रसित थे परन्तु आर्य समाज में आने पर तत्काल ही इन व्यसनों को छोड़ दिया।

(६) मातृभूमि की सेवा करने का जब व्रत लिया तो १९१९ अमृतसर के निर्दयता पूर्ण कृत्य पर खून के आंसू बहाते हुए स्वयं कांग्रेस में सम्मिलित हो गए और कांग्रेस अधिवेशन अमृतसर के स्वागत समिति के मन्त्री बन कर अपनी देश भक्ति का परिचय दिया।

आर्य समाज के छोटे से छोटे व्यक्ति को भी प्रोत्साहन करते रहे। लेखक ने स्वयं इस का अनुभव किया। जब अहमदीयों ने अखबार नूर में हिन्दुओं और विशेषतया आर्यों पर बहुत आक्षेप किये तो अखबार प्रकाश में उसका उत्तर देना प्रारम्भ किया जो ६ मास तक यह क्रम चलता रहा। कसूर समाज के उत्सवपर १९२२ में श्री देवराज स्नातक द्वारा मुझे बुला कर आशीर्वाद भी दिया और कहा कि स्वाध्याय का क्रम जारी रखना और इसी भान्ति लिखते रहना। जिसके फल स्वरूप यह मेरा जीवन का नियम बन गया है कि वेद के स्वाध्याय हवन यज्ञ संध्या आदि किए बिना कोई कार्य प्रारम्भ ही नहीं करते।

(८) पूज्य स्वामी जी का मान मुसलमानों

अमर हुतात्मा स्वा. श्रद्धानन्द की संक्षिप्त जीवन झांकी

वंश	क्षत्रिय
पिता का नाम	श्री नानकचन्द
जन्म	फरवरी १८५६ ग्राम तलवन जि. जालन्धर
विद्यारम्भ (बनारस)	सन् १८६६
धर्म विरोधी भाव	१८७५
ऋषि दयानन्द का सत्संग (बांस बरेली)	१८७९
आर्य समाज में प्रवेश	१८८४
वकालत परीक्षा पास की	१८८७
बड़े पुत्र हरिश्चन्द्र का जन्म	१८८७
कांग्रेस से सर्व प्रथम सम्बन्ध	१८८८
द्वितीय पुत्र इन्द्र का जन्म	१८८९
सद्धर्म प्रचारक का प्रकाश	१३ अप्रैल १८८९
धर्म पत्नी का देहान्त	१८९१
प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा	१८९२
गुरुकुल खोलने का संकल्प	१८९८
गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना	२ मार्च १९०२
प्रधान सार्वदेशिक सभा	१९०९
भागलपुर हिन्दी साहित्य सम्मेलन के प्रधान	१९०९
संन्यास दीक्षा	१२ अप्रैल १९१७
दुर्भिक्ष पीड़ित सेवा (गढ़वाल)	१९१८
राजनीति में सक्रिय भाग	१९१८
अमृतसर कांग्रेस का स्वागताध्यक्ष बनना	१९१९
श्रद्धा का प्रकाशन	१९२०
असहयोग आन्दोलन में	१९२१-२२
हिन्दू संभादेन	१९२३
दक्षिण भारत में	१९२४
शुद्धि सभा की स्थापना	फरवरी १९२३
दयानन्द जन्म शताब्दी का नेतृत्व	मार्च १९२५
लिबरेटर का प्रकाशन	अप्रैल १९२६
बलिदान दिल्ली	२३ दिसम्बर १९२६

में भी बहुत था एकदफा जामा मस्जिद के मंबर पर भी खड़ा होकर वेद मन्त्र की गूंज की जहां पर आज तक किसी भी हिन्दु को जाने का अवसर नहीं मिला।

स्वामी जी अति प्रभावशाली व्यक्ति थे। लेखक को इसका परिचय उस समय मिला जब फिरोजपुर में एक बार गुरुकुल के लिये धन की सहायतार्थ पधारे और मुझे आदेश दिया कि फिरोजपुर के किसी धनी मानी सेठ के पास ले चलो। मेरे सहपाठी मनोहर लाल के पिता श्री लाला कांशी राम जी के पास मैं उनको ले गया, लाला जी धनी तो बहुत थे प्रञ्च दान में रुचि न रखते थे परन्तु जब स्वामी जी उनके राज भवन में गये तो लाला जी स्वयं आदरार्थ खड़े हो गये और कहा कि आज्ञा कीजिए स्वामी जी ने तुरन्त ही कहा कि १००० रुपया गुरुकुल के लिये दान दे दीजिए। लाला जी ने तुरन्त मुनीम को आदेश दिया किया कि स्वामी जी की आज्ञा का पालन पालन करो। यह था उनका प्रभाव।

मैंने उपरोक्त में कुछ घटनाएं लिखो हैं और पाठकों से आशा करता हूं कि पूज्य स्वामी जी के बलिदान-दिन पर प्रतिज्ञा करें कि उनके जीवनसे शिक्षा लेकर अपने जीवन को आर्य बनावें इसी प्रकार हमारी उन के प्रति सच्ची श्रद्धाञ्जलि होगी।

अमर शहीद राम प्रसाद बिस्मिल के प्रति—

(श्री कुसुमाकर, आर्यनगर, फरीदाबाद)

(१)

हे साहस के सूर्य ! क्रान्ति के अमर विजेता !
संघर्षों के सिन्धु ! शौर्य के अविचल नेता !
दुष्ट-दैत्य-दल-दमन, यहां जन्मे शत्रुंजय !
राष्ट्र-भक्ति का कलित केतु फहराया अक्षय !
स्वतन्त्रता की शक्ति बन, भीषण एम बढ़ गए !
अङ्गद के पग तुल्य तुम कण्टक मग में गढ़ गए !

(२)

युवकों के आदर्श, मार्ग दर्शक नरनाहर !
जगी जागरण ज्योति जगत में भीतर-बाहर !
हिली नींव साम्राज्य शत्रु भी लगे कांपने !
जलियां-वालिया के कुकर्म भी लगे भापने !
काकोरी-षड़यन्त्र का, तन्त्र नाब होने लगा ।
अनाचार की भूमि पर अरि गौरव खोने लगा ।

(३)

घोर यातना सहीं अनेको झंझट झेले ।
मातृभूमि के लिये निरन्तर पापड़ बेले ।
भीषण अत्याचारों के जब उमड़ पड़े घन ।
ब्रिटिश राज्य पर टूट पड़ें तब विकट बज्र बन ।
सबल संगठन के सुधी ! वसुन्धरा के भाल थे ।
वर्तमान के प्राण थे, तरुणाई की ज्वाला थे ।

(४)

पूर्ण किया तुमने मन में जो वर-व्रत ठाना।
देश-प्रेम ही एक धर्म, जीवन का जाना।
किया देश पर वीर ! मुदित सर्वस्व निछावर।
साक्षी नभ के बने, सूर्य, नक्षत्र, सुधाकर।
लज्जित तरुणाई हुई कायरता कम्पित भगी।
सुप्त चेतना जग गई, पौरुष प्रतिभा में पगी।

(५)

अपना ही हो राज्य, देश हो गौरवशाली !
जन्में शिबा प्रताप पार्थ प्रण लें बलशाली !
भारत का उद्यान बने फिर वैभव शाली !
छहरे ऊषा सदृश यहां पर अनुपम लाली !
मानव्रता, सद्भावना युवकों में भरते गए !
दानवता की कालिमा, निर्भय हो हरते गए !

(६)

अन्तिम थीं अभिलाष, सुखी सारे प्राणी !
पुनर्जन्म हो पढ़ें वेद वाणी कल्याणी !
आर्य राष्ट्र हो, फूट फवीली का घट फूटे !
हो स्वराज्य सुख, परतंत्रता से पीछा छूटे !
बिस्मिल' कर बिस्मिल गए, मुक्ति मार्ग में बढ़ गए !
वेद मंत्र जानते हुए, बलि वेदी पर चढ़ गए !

"मेरा अन्तिम संस्कार वैदिक रीति से किया जाए।"

देश भक्त श्री राजेन्द्र नाथ लाहिड़ी

—श्री ओमप्रकाश आर्य कार्यालयाध्यक्ष—

श्री राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी का जन्म १९०१ ईश्वी के जून मास में पवना जिला के भंगा ग्राम में हुआ था। आप के पिता श्रीयुत अतिमोहन लाहिड़ो बड़े देश भक्त और परोपकार प्रिय व्यक्ति थे। उन्होंने अपने ग्राम मोहन में एक हाई स्कूल खोला था। बंग भंग के अवसर पर स्वदेशी आन्दोलन में बढ़ चढ़ कर भाग लिया। ऐसे देश भक्त पिता के पुत्र देश भक्ति और बाल्योत्थान की भावना जन्मकाल से सहज ही प्राप्त रही। बाल्यकाल में ही राजेन्द्र को मातृ छाया से वंचित होना पड़ा बड़ी बहिन ने आप का लालन, पालन किया। १९०९ ई० में बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में आपको प्रवेश मिला और सारा अध्ययन यहीं हुआ। इतिहास और अर्थशास्त्र के अध्ययन में आप की विशेष रुचि थी। आप अर्थशास्त्र को वर्तमान युग का योग शास्त्र कहा करते थे और चाहते थे कि देश के नवयुवक अपने इतिहास और देश की आर्थिक अवस्था से खूब परिचित हों। स्वाध्याय में विशेष रुचि होने के कारण अपने घर पर वसंन्त कुमारी पुस्तकालय खोला हुआ था लेख लिखने में भी सिद्धहस्त थे इनके लेख 'बंग वाणी' और 'शंख' नामक समाचार पत्रों में प्रकाशित होते रहे। बनारस के क्रांतिकारियों के समाचार पत्र 'अग्रदूत' का सम्पादन भी आपही किया करते थे। लिखने पढ़ने में आप जितने योग्य थे खेलने कूदने में भी उतने ही होशियार थे। सदा प्रसन्न रहना और साथियों को प्रसन्न रखने का आप का स्वभाव था। हंसमुख और मस्त तथा निश्चित रहना ही आप को सदा पसन्द था ल में भी कभी आप को किसी ने शोकमग्न अवस्था में न देखा था। राजनीतिक क्रांति के साथ साथ आप सामाजिक और धार्मिक क्रांति के भी प्रबल समर्थक थे। आप का विश्बास था कि धार्मिक और सामाजिक क्रांति के बिना राजनैतिक क्रांति स्थायी प्रभाव उत्पन्न नहीं कर सकती।

राजेन्द्रनाथ पहले सान्याल बाबू के दल में थे परन्तु जब अनुशीलन दल हिन्दुस्तान (प्रजातान्त्रिक संघ में मिल गया उस समय आप बनारस के जिला संयोजक बनाए गए। प्रान्तीय समिति का भी आप को सदस्य बनाया गया। समिति राजेन्द्र बाबू के अतिरिक्त श्री पं राम प्रसाद बिस्मिल, श्री सुरेशचन्द्र भट्टाचार्य तथा श्री विष्णुशरण दुबे भी थे। वेकण्टेश्वर बम केस में आप बन्दी बनाये गए और आप को दस वर्ष का दण्ड मिला। काकोरी षड्यन्त्र केस में भी आप के वारन्ट निकाले गए थे परन्तु आप क्योंकि पहले ही बन्दीगृह में थे इसलिए मुकदमा

में पेश करने के लिए कलकत्ता से लखनऊ लाए गए। अभियोग का निर्णय सुनाते समय जज ने आप को दो काले पानी और एक फांसी की सजा दी। काले पानी और मृत्यु दण्ड को हंसते हंसते सुना और शान्त चित्त रहते हुए पहले लखनऊ से बाराबंकी और गोण्डा की जेलों में समय व्यतीत किया। आपको बचाने का पूरा पूरा प्रयत्न किया गया चीफकोर्ट तक अपील की गई परन्तु सब अस्वीकार हुई। फांसी का आदेश सुनते ही इस वीर देशभक्त ने कहा था :—

सर तन से जुदा कर दो यह है हाथ तुम्हारे।
पर रुह से जजवात जुदा कर नहीं सकते॥

फांसी का दिन ११ अक्तूबर १९२७ ई० निश्चित किया गया। ६ अक्तूबर को आपने अपने सम्बधियों को निम्नलिखित पत्र लिखा—

पूरे छः मास तक बारावंकी और गोण्डा जेल की काल कोठड़ियों में बन्द रहने के पश्चात कल मुझे सूचना मिली है कि एक सप्ताह के अन्दर फांसी हो जायगी। अब मैं यह अपना कर्त्तव्य समझता हूं कि अपने सारे मित्रों जिन्होंने हमारे लिए हर प्रकार के प्रयत्न किए का हार्दिक धन्यवाद करूं। आप लोग मेरा नमस्कार स्वीकार करें। हमारे लिये मृत्यु शरीर का परिवर्तन मात्र है, पुराने वस्त्र का परित्याग कर नया वस्त्र ग्रहण करना है। मृत्यु आ रही हैं मैं प्रसन्नतापूर्वक उसका स्वागत करूंगा। जेल के सीखचों के कारण अधिक नहीं लिख सकता। आपको नमस्कार देश हितैषियों को नमस्कार, सबको नमस्कार वन्देमातरम !

परन्तु इस पत्र के पश्चात फांसी वाली तिथि बदल दी गई क्योंकि प्रीवी कोन्सिल में अपील करने का फैसला हुआ था। जब प्रीवी कौन्सिल ने भी अपील न सुनी और मृत्यु दण्ड ही निश्चि रहा तब बलिदान से तीन दिन पूर्व अर्थात् १४ दिसम्बर १९२६ ई० को आपने एक पत्र लिखा जोकि निम्न प्रकार था :—

"कल मैने सुना कि प्रीवी कौन्सिल ने मेरी अपील अस्वीकार कर दी। आप ने हम लोगों की प्राण रक्षार्थ बहुत कुछ किया, किन्तु जान पडता है कि देश की वलिवेदी को हमारे रक्त की आवश्यकता है। मृत्यु क्या है? जीवन की दूसरी दिशा के अतिरिक्त और कुछ नहीं। इसलिये मनुष्य मृत्यु से भय और दुःख क्यों माने? वह तो नितान्त स्वाभाविक अवस्था है, उतनी ही स्वाभाविक जितनी प्रातःकालीन सूर्य का उदय सोना। यदि यह सच है कि इतिहास पल्टा खाया करता है तो मैं समझता हूं कि हमारी मृत्यु व्यर्थ न जायगी। सबको अन्तिम नमस्कार। —आपका—राजेन्द्र

इन दो पत्रों के अतिरिक्त एक पत्र आप ने अपनी बहिन के नाम भी लिखा था जो इस प्रकार था :—

मैंने जिस बड़े काम के लिए अपना शिर भेंट चढ़ाया है वह पूरा हो या न हो परन्तु हमारा कर्त्तव्य पूरा हो गया। भारत माता ने हमें जो आदेश दिया उसको मैंने यथाशक्ति माना। मेरे लिए यह बात कम सन्तोषप्रद नहीं कि जब तक माता पर अत्याचार होते रहेगे तब तक वो जो कुछ भी मेरे लिए इस जन्म में या जन्मान्तर मे आदेश देगी मैं प्राणपण से उस आदेश को मानूंगा।

(शेष पृष्ठ ४७ पर)

अमर शहीद गुरु तेगबहादुर दिवस

हरिद्वार (वि. प्र.) गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के आर्य समाज मन्दिर में प्रात: ८.३० बजे यज्ञोपरांत उप कुलपति आचार्य राम नाथ वेदालकार की अध्यक्षता में शहीदी दिवस मनाया गया। प्रो. जबर सिंह, श्री हरिवंश, डा. निगम शर्मा, डा. वासुदेव, प्रो. बुद्ध प्रकाश शुक्ल, पं. भगवतदत्त एवं प्रो रामाश्रय मिश्र ने आयोजन में भाग लिया तथा अपने विचार प्रकट करते हुए गुरु तेग बहादुर को न केवल सिक्खों के अपितु समस्त भारतीयों का गुरु बताया तथा उन्हें धर्म बलिदानी नहीं अपितु राष्ट्र बलिदानी की संज्ञा दी।

अध्यक्षीय भाषण में उपकुलपति जी ने गुरुओं एवं आर्य समाज के लक्ष्यों की एकता का प्रतिपादन किया। भारत के संकटों का उल्लेख करते हुए दुष्टों के अत्याचारो को प्रकाशित किया। गुरुओं की सजगता एवं बलिदान के स्वरूप ही हिन्दू जाति बची। सिक्ख हिन्दुओं से अलग नही हैं। इस प्रकार की एकता से राष्ट्र को और सबलता प्रदान की जा सकती है।

गुरुकुल कांगड़ी में आर्य समाज शताब्दी की भारी तैयारियां

हरिद्वार—(वि. प्र) आर्य समाज शताब्दी ससारोह २४ से २८ दिसम्बर तक दिल्ली में बड़े धूमधाम से मनाया जाने का आयोजन है। इसमें गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के छात्र, कर्मचारी एवं शिक्षक सम्मिलित होंगे। इनके आवागमन की सुविधा के लिये सात बसें कर ली गई हैं। २४ तारीख प्रात: देहली पहुचेंगे।
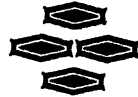
(३६ पृष्ठ का शेष)

अन्त्येष्ठी संस्कार करवाए। वह सज्जन आर्य समाज चौक में पहुचे। तब श्री विश्व प्रकाश सुपुत्र श्री पं० गंगा प्रसाद जी उपाध्याय ने जा कर वीर का वैदिक रीति से संस्कार करवाया।

'बिस्मिल' ने वैदिक धर्म प्रचार के लिए एक चाह प्रकट की। अपनी आत्म कथा में लिखा है कि परमेश्वर मुझे अगला जन्म भारत भू में ही देना ताकि तेरी वेद वाणी का प्रचार करके नर तन सफल बना सकूं। आईए! हम सब बिस्मिल के स्वरों में स्वर मिला कर ईश्वर से प्रार्थना करे—

बार बार नर तन को पाऊं,
पढ़ तुम्हारी वाणी को।
भेंट धरूं मैं धर्म वेद की,
बारम्बार जवानी को॥

———

"देव दयानन्द ही कमाल कर गया"

(लेखक :—श्री वीरेन्द्र-कुलदीप 'साथी' आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब, जालन्धर)

तर्ज :—महंगाई मार गई.........(रोटी कपड़ा और मकान)

शेयर :—

कोई कहे वो कौन था, जिसने हमें जगा दिया ।
लुट रहे थे हम सभी, किसने हमें बचा लिया ?
किसने अपनी तासीर से, पोपों पे काबू पा लिया ?
वैदिक धर्म पर हो फिदा, तन, मन व धन लुटा दिया ।।

सोये हुए देश को, जगाने वाला कौन ?
विधवा अनाथों को, बचाने वाला कौन ?
छुआछूत देश से, मिटाने वाला कौन ?
वेदों का डंका, बजाने वाला कौन ?
देव दयानन्द ही कमाल कर गया, कमाल कर गया ।।

(१)

सुनी हमने कथा उन वीरों की जवानी,
सुनी हमने कथा-२, उन वीरों, ही हां वीरों की जवानी से ।
जिन्हें गौरव था, हां हां—२, महर्षि की कहानी पे ।।
वीरता की लहर को, दिखाने वाला कौन ?
सच्ची राह लोगों को, बताने वाला कौन ?
जड़ से अत्याचार को, मिटाने वाला कौन ?
ईश्वर की भक्ति, सिखाने वाला कौन ?
देव दयानन्द ही कमाल कर गया, कमाल कर गया ।।

(२)

ओ.........ओ.........ओ.........ओ ....ओ
कैसा वक्त था, हाय-हाय कैसा वक्त था
हो कैसा वक्त था, सुनलो प्यारो तुमको आज सुनाएं-२
जख्मों से भरपूर देश में, लाखों कटती गायें, कैसा वक्त था ।

गऊओं के वध को, रुकाने वाला कौन ?
जालिमों के छक्के, छुड़ाने वाला कौन ?
दुखियों के दुःख को; मिटाने वाला कौन ?
वेदों की बन्सी, बजाने वाला कौन ?
देव दयानन्द ही कमाल कर गया, कमाल कर गया ॥

(३)

पहले देश में पाखण्डियों ने भारी जाल बिछाये थे ।
देव दयानन्द आकर उनको, अपने रंग दिखाये थे ॥
आया था जगाने, सारे देश को बचाने—२
देव गुरु था आया, जो सारे जग में छाया
आया था जगाने——————————।

हम को लुटेरों से, बचाने वाला कौन ?
ढोंगियो को देश से, भगाने वाला कौन ?
नारियों को शिक्षा, दिलाने वाला कौन ?
सच्चे शिव की पूजा, सिखाने वाला कौन ?
देव दयानन्द ही कमाल कर गया, कमाल कर गया ॥

(४)

देव गुरु देश में कमाल कर गयो, कमाल कर गया।
सोये हुये देश को निहाल कर गया। निहाल कर गया
दुश्मनों को वो ऋषि, बेहाल कर गया—२
अच्छे व बुरे की पड़ताल कर गया—२
हो, जाती बार बात बेमिसाल कर गया ———।

मुंह से निकले शब्द महान, इच्छा पूरी हो भगवान—३
'साथो' गायें मिलकर गान, क्या बहिनें क्या भाई जान।
अपना दिल भी लोगों पर, बे दयाल कर गया—३
देव दयानन्द ही कमाल कर गया, कमाल कर गया।
ओ मेरे स्वामी, तेरे जाएं हम बलिहार———

(४३ पृष्ठ का शेष)

इस पत्र का एक-एक शब्द राजेन्द्र बाबू की सच्ची देश भक्ति तथा बलिदान की उग्र भावना का परिचायक है। काश ! कि आज की युवा शक्ति इन बलिदानियों के उज्जवल जीवन से कुछ प्रेरणा ले और कर्त्तव्य पथ पर आरूढ़ हो।

१६ दिसम्बर की सारी रात राजेन्द्र बाबू गीता और उपनिषद् का पाठ करते रहे जब वार्डर आप को हथकड़ी लगाने लगे तब आप ने कहा "नामर्दो ! मेरा शरीर मत छूना—मैं मृत्यु से नहीं डरता" इतना कह कर फांसी के तख्ता पर चढ़ गये बन्देमातरम और भारत माता की जय के नारे लगाये और कहा मैं फिर जन्म धारण करूंगा। फांसी की रस्सी खींच दी गई और आप हंसते मुस्काते अपने देश पर बलिदान हो गये। यह स्मरण रहे कि फांसी के समय आपकी आयु केवल सत्ता इस वर्ष की थी।

आपकी इच्छानुसार अन्तिम संस्कार वैदिक रीती से किया गया ?

आर्य समाज स्थापना शताब्दि

25 दिसम्बर की शोभा यात्रा में 10 लाख व्यक्ति शामिल होंगे 20 देशों से आर्यजन दिल्ली पहुंचेंगे

दिल्ली, 12 दिसम्बर—सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान लाला राम गोपाल जी शलवाले ने एक विज्ञप्ति में बताया कि 24 से 28 दिसम्बर तक मनाये जाने वाले शताब्दी समारोह में 25 दिसम्बर, को एक विशाल शोभा यात्रा निकाली जाएगी, जिसमें देश विदेश के लगभग 10 लाख व्यक्तियों के भाग लेने की संभावना है।

शोभा यात्रा का मुख्य आकर्षण रहेगा—11 हाथियों पर ओ३म् ध्वज लिए आर्य जगत् के विशेष मान्य संन्यासी 100 घोड़े, जिन पर कन्या महाविद्यालय, बड़ौदा की छात्राएं और राजधानी जवान, 100 से ऊपर गेरुए रंग की टोपियां पहने और हाथ में ओ३म-ध्वज लिए आर्य वीर, दर्जनों बैंड, स्कूल और गुरुकुलों के छात्र तथा 20 देशों से पधारे हुए तथा भारत के विविध प्रांतों के प्रतिनिधियों की टोलियां, बीच में आर्यसमाज के प्रमुख नेता, संन्यासी तथा शताब्दी समारोह के अध्यक्ष विशेष रथों पर आरूढ़ रहेंगे।

25 दिसम्बर को विशेष तोरण द्वार बनाये जाएंगे और समूचा दिल्ली शहर सजाया जायेगा।

शताब्दी के पुनीत अवसर पर 26 दिसम्बर को नौ प्रसिद्ध वैदिक विद्वान श्री पं० धर्मदेवजी विद्यामार्त्तण्ड, श्री स्वामी ब्रह्ममुनि, आचार्य युधिष्ठर मीमांसक, आचार्य वैद्यनाथ जी शास्त्री, पं. हरिशरण जी सिद्धांतालंकार, पं.रामावतारशास्त्री श्री बीरसेन वेदश्रमी, डा. कुमारी कुसुमलता को इनकी वैदिक साहित्य के प्रति अनन्य सेवाओं को ध्यान में रखते हुए रायबहादुर चौधरी नारायण सिंह प्रताप सिंह चैरिटेबल ट्रस्ट करनाल की ओर से सम्मानित किया जायगा।

अमर बलिदानी और हम

पं. त्रिलोक चन्द्र शास्त्री आर्योपदेशक, पंजाब

आर्यसमाज का महान् इतिहास अमर बलिदानों से भरा हुआ है। एक २ अध्याय ही नहीं वरन् एक २ पृष्ठ जीवन बलिदान से अंकित है। गुरुवर विरजानन्द जी दण्डी ने भी अपना सारा जीवन आर्षग्रन्थों का प्रचार करने वाले किसी योग्यतम शिष्य की प्राप्ति की साधना में आहुत कर दिया। मथुरा में पाठशाला बना कर अपने सारे जीवन की प्यारी २ उमंगों को समेट २ कर एक ही निष्ठा को केन्द्र बिन्दु बना कर समर्पित कर दिया कि मुझे कोई ऐसा शिष्य मिल जाये जिसके द्वारा वेद प्रचार का महान् कार्य कराया जा सके। उस समय माया धन प्रचार, बलप्रचार, भोग प्रचार, रूप प्रचार, मत प्रचार, मिथ्याबाद प्रचार, पाखण्ड प्रचार गुरुडम प्रचार आदि सब का विकृत प्रचार था पर वेदप्रचार का नाम भी न था। उनको देवदयानन्द जैसा योग्यतम शिष्य मिल गया। दीक्षा देकर निश्चित हो गये। फिर देव दयानन्द सरस्वती प्रचार क्षेत्र में उतरे और यौवन और जीवन की आहुति दे दी। उन्होंने भी अपना बलिदान दे दिया।

अग्निाग्नि: समिध्यते—अग्नि से अग्नि प्रज्जवलित होती है। दीपक से दीपक जगमगाता है। बलिदान से कई जीवनों में बलिदान भावना पैदा हो गई। उन बलिदानवीरों में अमर शहीद स्वामी श्रद्धानन्द जी भी थे। श्री मुन्शी राम जी ने जब स्वामी जी के दर्शन कर अपने मन के प्रश्नों का समाधान सुना तो बस उसी समय उनके ही हो गये। आर्यसमाज के बन गये। फिर महात्मा मुन्शीराम बन कर सचमुच ही स्तम्भ बन गये। उनके मन में कितना बल और वाणी में कितनी गरज थी, जब बोलते थे सारे बातावरण में शेर सी ध्वनि गूंजती थी। राष्ट्र के कार्यो में जब थे उनका तेज, साहस, निर्भयता एक जादू का काम करती थी। चांदनी चौक में विशाल जलूस का नेतृत्व करते हुए जब फौज ने संगीने आगे कर दी और जलूस पर गोली चलाने का डर दिखाया तो उस समय यही शेर कुर्ते के बटन खोल कर सीने को आगे करके बोला—पहली गोली मेरे सीने पर चलाओ फिर जलूस की बारी आएगी। निर्भयता की अनुपम प्रतीक की आवाज पर संगीनों वाले हाथ वहीं रूक गये! जलियांवाला बाग अमृतसर के रक्तपात के दर्दनाक अत्याचार भरे गोली काण्ड के बाद यही वीर नर थे जिन्होंने कांग्रेस अधिवेशन का स्वागताध्यक्ष बनकर जो निर्भयताभरा भाषण दिया था—वह इतिहास का अमर अध्याय है। सबसे प्रथम कांग्रेस मंच से यह हिन्दी का भाषण था जो स्वामी श्रद्धानन्द जी ने दिया था। जब कांग्रेस में कार्य करते हुए कई बातों को देख

कर इन का माथा ठनका कुछ और प्रवाह देखा तो उससे बाहर आ गये। शुद्धि का इतना बड़ा कार्य किया कि सम्प्रदाय वाले हिल गये कि यह भूकम्प क्या आ गया है। आर्यसमाज के पुराने तपस्वी त्याग व तप की मौनमूर्ति, अरबी फ़ारसी संस्कृत विद्यालय अमृतसर के पूर्व आचार्य देवप्रकाश जी जब कभी शुद्धि का पुराना इतिहास सुनाते हैं तो पता चलता है कि उस वीर बलिदानी स्वामी श्रद्धानन्द जी ने कितना कार्य किया।

सारे देश विदेश में गुरुकुल काँगड़ी जैसी संस्था एक ही है। स्कूल-कालेज तो अनेकों हैं पर कांगड़ी गुरुकुल जैसा आर्यसमाज का महान संस्थान एक ही है। इस जैसी संस्था इस समय तो है नहीं—आगे की बात नहीं कहनी। कितना बड़ा बलिदान है कि गंगा के उस पार शेर चितों से भरे जंगल में जब प्रारम्भ में गुरुकुल जारी किया गया तो सबसे पहले इस देवता ने अपने ही दोनों बच्चों श्री हरिश्चन्द व श्री इन्द्र जी को साथ लेकर प्रविष्ट कराया, कहा कि यदि मैं अपने बच्चे नहीं दूंगा तो दूसरों के बच्चों को गुरुकुल के लिये कैसे मांगूंगा। उनका यह आदर्श भरा उदाहरण आज विश्वविद्यालय के रूप में चमकता है। यह बलिदान क्या कम है।

सभा का कार्य फैलाया। शुद्धि चक्र में लाखों बिछुड़े हुए भाईयों को वापस आर्य-धर्म में दीक्षित किया। अपना सब कुछ ही आर्य प्रतिनिधि सभा को समर्पित कर दिया। एक प्रचार का तूफान मच गया। शुद्धि का प्रवाह फैल गया यह बात सम्प्रदाय वालों को खटकी। षड्यन्त्र किया गया। बीमारी की अवस्था में एक पाजी आकर गोलियों से स्वामी जी को शहीद कर दिया। आज भी सभा का वह भवन बलिदान भवन के नाम से प्रसिद्ध है। अपना बलिदान देकर स्वयं भी अमर हो गए आर्य समाज भी अमर बन गया। प्रतिवर्ष आर्य समाजे यह बलिदान पर्व मना कर प्रेरणा लेती हैं। बहुत बड़ा बलिदान था यह बलिदान सारे समाज को एक विशेष प्रेरणा देता रहा है।

अन्त में थोड़ी सी पंक्तिां लिखकर मैं आर्य जनता से यही कहना चाहूंगा कि अमर बलिदानी देवता के बलिदान दिवस मनाते हुये क्या संकल्प लेंगे ? क्या हम इसी प्रकार वैर विरोध का पथ पकड़े रहेंगे ? क्या अपनी शक्तिको इसी प्रकार जनोपहास का साधन बनाये रखेंगे ? इस दिवस पर अपने अपने दिल में आर्य समाज की सेवा के लिए किसी न किसी बात को करने का प्रण लें। इस अमर बलिदानी के ध्येय को सामने रखकर कुछ तो दीक्षा लेवें कि मैं समाज के लिए क्या करूंगा। प्रत्येक सोचें दिल में—

—क्या मैं प्रति सप्ताह आर्य समाज के साप्ताहिक सत्संग में जाता हूं। यह तो छोटा सा त्याग है। यदि मै प्रति सप्ताह समाज में नहीं जाता तो मैं इतना भी समय बलिदान नहीं कर सकता तो फिर और क्या दूंगा।

—क्या मैं आर्य समाज को अपना शतांश देता हूं ? यह थोड़ा सा धन का त्याग भी यदि मैं नहीं करता तो फिर........

—क्या मैं समाज व सभा के सदस्यों को कार्य में सहयोग देता हूं ? यदि यह भी नहीं करता तो फिर सहयोग का बलिदान कहां रहा।

इस बलिदान दिवस पर उस अमर बलिदानी देवता से प्रेरणा लेवें।

———

आर्य समाज की नींव उसके अमर शहीद

श्री योगेन्द्रपाल सेठ उपमन्त्री आ. प्र. सभा पंजाब

यूं तो संसार की जितनी भी धार्मिक संस्थायें हैं अपने अमर शहीदों की शहादतों पर ही स्मरणीय हैं परन्तु बलिदान के क्षेत्र में जो स्थान आर्य समाज को प्राप्त है वह संसार भर की किसी भी धार्मिक संस्था को प्राप्त नहीं है, इतिहास का विद्यार्थी जानता है कि संसार भर के जितने भी धर्म प्रचार करने वाले मतमतान्तर हैं उन सब ने मिल कर भी अपने आरम्भिक १०० वर्षो में इतने बलिदान नहीं दिये जितने आर्य समाज ने अपनी प्रथम शताब्दी में बलिदान दिये हैं।

परन्तु ध्यान रहे कि इस तुलना का यह अर्थ नहीं कि आर्य समाज भी एक अलग मत मतान्तर या धर्म है। आर्य समाज तो एक क्रांति है, एक लाईट हाऊस है प्रकाश देने वाला एक स्तम्भ है, रेल गाड़ियों को मार्ग दिखाने वाला एक मार्ग दर्शक है, आप किसी भी धर्म अर्थात मत मानने वाले हों यदि आप के उस धर्म से कुरितियां और सृष्टि नियम विरुद्ध बातों को निकाल दिया जाये तो वह धर्म खालस आर्य समाज बन जायेगा। जैसे आप आज सब धर्मों मत मतान्तरों में एक विशेष परिवर्तन देखते हैं यदि आप उनकी १०० वर्ष पहले लिखी हुई पुस्तकों को पढ़ें तो आप को उन पुस्तकों में विचारों और अर्थ व्याख्या में एक विशेष क्रांति दिखाई देगी। यह किस बात का परिणाम है यह महर्षि दयानन्द का सत्यार्थ प्रकाश और उसकी स्थापित आर्य समाज के बलिदानों का परिणाम है। क्या सुन्दर किसी कवि ने कहा है :—

शीश जिनके धर्म पर चढ़ेंगे।
झण्डे दुनियां में उनके गढ़ेंगे॥

१. आर्य समाज में तो मानो बलिदानों की वर्षा हो रही है इसके प्रवंतक महर्षि दयानन्द जी ३० अक्तूबर १८८५ को अंग्रेजों तथा रियास्ती राजाओं के पुराणिक पण्डितों के षड्-यन्त्र का शिकार हुए।

२. अमर शहीद पण्डित लेख राम जी ६-३-१८९७ को कादयानी मुसलमानों के प्रचार परएक अज्ञात मुसलमान के छूरे का शिकार हुए।

३. फरीदकोट के स्टेशन मास्टर पं. तुलसी राम को १९०३ में वैदिक धर्म का प्रचार करने हेतु तथा जैन धर्म पर आक्षेप करने हेतु ३२ वर्ष की आयु में एक जैनी के छुरे का शिकार होना पड़ा।

४. जम्मू के राजपूतों ने वीर रामचन्द्र को अछूतोद्धार करने के कारण २०-१-१९२३ को लाठियां मार-मार कर ही मार डाला।

५. अमर शहीद स्वामी श्रद्धानन्द जी महा-राज को २३-१२-१९२६ को एक मुसलमान अब्दुल रसीद की पिस्तौल की गोली का शिकार

होना पड़ा क्योंकि उन्होंने एक मुसलमान लड़की को शुद्ध करके हिन्दु बनाया था।

६. १९ वर्ष के नवयुवक आर्य समाज के प्रचारक नन्दलाल जी को १२-११-१९२३ को गला घोंट कर मार दिया और लाश रावी नदी में फैंक दी।

७. महाशय राजपाल लाहौर के प्रसिद्ध पुस्तक विक्रेता को ६-१०-१९२७ को अपने दुकान पर बैठे छुरे से हमला किया परन्तु कातल की भूल के कारण उनका नौकर जख्मी हो गया।

८. परतु ६-४-१९२९ की पुनः महाशय राजपाल पर इहमदिल मातल ने छुरे से हमला कर करके जामे शहादत पिला दिया।

९. लुधियाना के एक गांव हमताला में में सिख जाट परिवार में पैदा हुए वीर शहीद धन्ना सिंह पर जब आर्य समाज का रंग चढ़ गया और वह चाव में आर्य समाज का प्रचार करने लगा तो कुछ लोगों ने चिढ़ कर उसे लाठियां मार २ कर मार दिया।

१० आर्य समाज के प्रचारक श्री लीडिन्दाराम एम. ए. एल. एल. बी. को ५-११-१९३४ बन्नु (कोहाट) में किसी अज्ञात मुसलमान की गोली का शिकार हुए। अब हम आप को बतायें कि निजाम हैदराबाद के जनून कितने आर्य समाजी शिकार हुये।

श्री विद्यासागर जी को १५-४-१९३९ को एक जनूनी मुसलमान ने छूरे से मार दिया।

इसी प्रकार श्री वेंकटराम जेल में जनुनी हाकमों के जुलम का शिकार हुए।

स्वामी सत्यानन्द जी महाराज ने हैदराबाद जेल में भूख हड़ताल (अनशन) रखी। और उन्हें कालकोठरी में डाल कर जुलम की बलिवेदी पर चढ़ा दिया।

हरिद्वार निवासी श्री परमानन्द जी भी हैदराबाद सत्याग्रह में जेल में परलोक सिधारे।

इसी प्रकार हैदराबाद सत्याग्रह में श्री विष्णु भगवन्त, तान्दूर ग्राम वाले, श्री छोटे लाल जी (गुलबर्गा जेल ३-५-३८), तथा श्री पाण्डूरंग जी महाराज (१७-५-१९३९ (गुलबर्गा जेल) श्री माधव रावजी (२८ मई १९३९) को, जेल में देहान्त हुआ।

श्री नानू मल जी को १-६-१९३९, हैदराबाद जेल के अधिकारियों ने मार मार कर मार दिया।

हरियाणा के श्रद्धाग्राम तहसील कैथल के श्री फकीर चन्द्र जी का ३०-६-१९३४ को तथा श्री मलखान सिंह जी रामपुर गांव (रुड़की) का १-७-१९३९ को हैदराबाद जेल में देहान्त हुआ।

मुज्जफर नगर के श्री स्वामी कल्याणा नन्द जी आयु ७५ वर्ष सत्यग्रही का जेल में ८ जुलाई १९३९ को देहान्त हुआ।

देहली के श्री शांति प्रकाश जी जो १८ वर्ष के नवयुवक थे १७ जुलाई १९३९ को तथा मलकपुर जिला हिसार के श्री भानु राय जी सत्याग्रहियों की जेल में मृत्यु हुई।

निजामाबाद में पुलिस थाने के सामने श्री राधा किशन एक अरबी मुसलमान के छुरे का शिकार हुये।

सरगोधा के भगत अरुड़ामल जी ५६ वर्ष तथा निजाम राज्य के श्री गोबिन्द सिंह जी का भी जेल में देहान्त हो गया।

इनके अतिरिक्त निम्नलिखित शहीद भी हैदराबाद सत्याग्रह में शहीद हुए श्री बदनसिंह जी मुजफ्फराबाद जिला मुलतान, श्री रतीराम सांयला रोहतक, श्री अशर्फी लाल चम्पारण,

श्री शांति प्रकाश गुरदासपुर, चौ. मातू राम मानकपुर हांसी, श्री रंगदेव राव दत्तात्रेय, श्री छोटे लाल मैनपुरी।

रोहतक के एक युवक श्रीसुनेहरा जी, जिसका गुम होना निश्चय हो चुका था परन्तु हैदराबाद सत्याग्रह में जेल के अधिकारियों के अत्याचार शिकार हुए।

श्री वेद प्रकाश जी को हैदराबाद में जनुनी मुसलमानों ने ९-८-३९ को लाठियां मार २ कर मार दिया।

हैदराबाद के मानक राव की बहन का एक पठान ने अपहरण कर लिया, उसी क्षेत्र के भीम राव पटेल जो आर्यसमाज के कार्यकर्ता थे, ने उस लड़की को पठान के पंजे से छुड़ाया और शुद्ध कर लिया परन्तु मुसलमानों ने भीमराव पर हमला किया और उसे गोली से मार दिया। मानक राव तथा उसकी नानी भी उसे बचाते २ मारी गई।

रियासत हैदराबाद के एक उत्साही आर्यवीर श्री धर्मप्रकाश नागपाल २७-६-३८ को जब आर्य समाज मन्दिर से अपने घर जा रहे थे तो रास्ते में जनूनी मुसलमानों ने उनकी लाठियों के प्रहार से मार दिया।

हैदराबाद प्रांत के २५ वर्षीय आर्य समाज के उत्साही सेवक श्री महादेव को १४-७-१९३८ को किसी जनूनी मुसलमान ने छूरे से मार कर अमर कर दिया।

हैदराबाद के तापती गांव के एक हरिजन जो आर्य समाज के सुदृढ़ कार्यकर्ता थे गांव में जब पठानों को एक मन्दिर तोड़ने से रोका तो वह उन की गोली से अमर हो गया।

श्री सत्यनारायण आर्य समाज के एक बड़े उत्साही कार्यकर्ता थे आप अम्बीलजा गांव के रहने वाले थे आप भी मुहर्रम दिल्बी में किसी जनुनी के छूरे का शिकार हुए।

श्री अर्जुनसिंह २६-६-१९३८ को हैदराबाद में अपने कुछ स्वयं सेवकों के साथ शहर जा रहे थे किसी जनूनी के छूरे का शिकार हुए।

श्री श्याम लाल जी वकील हैदराबाद के जिला विदर में झालकी ग्राम के रहने वाले थे। आर्य समाज में आपको बहुत लग्न थी और आपने सत्याग्रह में भाग लिवा परन्तु जेल में अधिकारियों के जुलमों का शिकार हुये और १६-२-१९३९ को आपका बलिदान हो गया।

हिन्दी सत्याग्रह में बहु अकबरपुर जिला रोहतक के नौजवान श्री सुमेरसिंह फिरोजपुर जेल में शहीद हुये तथा जालन्धर में सत्याग्रहियों कि रहाई पर जब जलूस निकाला गया तो अड्डा होशियारपुर के करीब गुरुद्वारा के सामने पुलिस की गोलियों से तीन नौजवान शहीद हो गये और ४० के लगभग जख्मी हुये।

इसके अतिरिक्त देश के विभिन्न भागों में शुद्धि कार्य तथा आर्य समाज के प्रचार में कई महानुभाव शहीद हुए।

इसीप्रकार और अनेकों आर्यसमाजी जो ऋषि दयानन्द जी जी जलाई हुई उस ज्योति को हाथ में लेकर प्रचार के लिये मैदान में आये, जनूनियों के हाथों शहीद हुये। आओ हम सब मिलकर उन अमर शहीदों को प्रणाम करें और वृत लें कि हम उनके अधूरे कामों को पूरा करेंगे।

शहीद अशफाक उल्ला के कवित्व के कुछ नमूने

अशफाक उल्ला कवितायें भी लिखा करते थे, और कविताओं में अपना उपनाम हसरत रखते थे, उनकी कुछ कविताओं को यहां पर उदघृत किया जाता है :—

फांसी से कुछ घन्टे पहले उन्होंने ये कवितायें लिखी—१९ दिसम्बर १९२६ ई० को फैजाबाद की जेल में फांसी हुई।

कुछ आरजू नहीं है—है आरजू तो यह,
रख दे कोई जरा सी खाके वतन कफन में।
ऐ पुख्तावार उल्फत हुशियार डिग न जाना,
मराज आशकां हैं इसदार और रसन में॥
मौत और जिन्दगी है दुनियां का सब तमाशा,
फरमान कृष्ण का था, अर्जुन को बीच रण में।
अफसोस क्यों नहीं है वह रुह अब वतन में,
जिस ने हिला दिया था दुनिया को एक पल में।
सैयाद जुल्म पेशा आया है जब से 'हसरत,'
हैं बुलबलें कफन में जागो जगन चमन में।

★ ★ ★ ★

तनहाइए गुरबत से मायूस न हो हसरत,
कब तक न खबर लेंगे याराने वतन तेरी।

★ ★ ★ ★

यूं ही लिखा था किसमत में चमन पैराये आलम ने,
कि फस्ले गुल में गुलशन छूट कर है केद जिन्दा की।

★ ★ ★ ★

न कोई इंगलिश न कोई जर्मन,
न कोई रशियन, न कोई तुर्की।
मिटाने वाले हैं अपने हिन्दी,
जो आज हम को मिटा रहे हैं।
जिसे फना वह समझ रहे हैं,
बका का राज इसी में मजमिर।
नहीं मिटाने से मिट सकेंगे।
जो लाख हम को मिटा रहे हैं,
खामोश 'हजरत' खामोश 'हसरत'।
अगर है जजवा बतन का दिल में,
सजा को पहुचेंगे अपनी बेशक।
जो आज हम को सता रहे हैं।

★ ★ ★ ★

वुजदिलों ही को सदा मौत से डरते देखा,
गो कि सौ बार उन्हें रोज ही मरते देखा।
मौत से वीर को हमने नहीं मरते देखा,
मौत एक बार जब आना है तो डरना क्या है।
हम सदा खेल ही समझा किए, मरना क्या है,
वतन हमेशा रहे शादकाम और आजाद।
हमारा क्या हैं, अगर हम रहे, रहे न रहे।

★ ★ ★ ★

फासी के तख्ते पर चढ़ते समय इस वीर देश भक्त ने कहा था :—

तंग आ कर हभ भी उनके जुल्म से बेदाद से,
चल दिये सूये अदम जिन्दाने फैजाबाद से।

वे बहुत खुशी के साथ, कुरान शरीफ का बस्ता कंधे टांगे, हाजियों की भांति 'लबेक' कहते और कलमा बढ़ते रहे फांसी के तख्ते को उन्होंनें बोसा दिया और उपस्थित जनता से कहा—

मेरे हाथ इन्सानी खून से कभी नहीं रंगे, मेरे ऊपर जी इल्जाम लगाया गया, वह गलत है, खुदा के यहां मेरा इन्साफ होगा।" (संकलित)

बलिदान की अविछिन्न धारा

(श्री ओमप्रकाश आर्य)

बलिदान की यह धारा विगतशती में गुरुवर विरजानन्द से प्रारम्भ हुई थी और निरन्तर अवाधगति से प्रवाहित है । अपने शतवर्षीय जीवन में आर्यसमाज ने जितने उत्कृष्ट और निःस्वार्थ महावीरों का बलिदान दिया हैं उतना स्यात् किसी भी धार्मिक और सांस्कृतिक संघटन के हिस्से में नहीं आया । इसका मुख्य कारण आर्य समाज के महान् प्रवर्त्तक महर्षिदयानन्द जी की उदात्त भावना, उज्ज्वल चरित्र एवम् सत्य ओर न्याय के प्रति उत्कट प्रेम और श्रद्धा ही है। निकृष्ट स्वार्थ की पूर्ति का यत् किञ्चित् विचार किए बिना ध्येय निष्ठ होकर जब कोई व्यक्ति या समाज अग्रसर होता है तब विघ्न बाधाएं उसका सामना किया ही करती है । वीर वे ही हे जो उस समय अपने लक्ष्य से भ्रष्ट नहीं होते और बाधाओं एवम् विघ्नों को दूर हटाते हुए निरन्तर आगे ही आगे बढ़ते जाते हैं । गुरुवर विरजानन्द जी तथा महर्षिदयानन्द जी को जीवन भर विघ्नों का सामना करना पड़ा परन्तु दोनों महापुरुष लक्ष्य की ओर बढ़ते ही गये और आज वह संगठन भी जो कभी इन दूरदर्शी महात्माओं के विचारों का मूल्यांकन करने में असमर्थ रहे मुक्तजण्ठ से इनका यशोगान कर रहे हैं।

इन दोनों महापुरुषों ने अपनी क्रान्तिकारी विशुद्ध विचारधारा से किस प्रकार परतन्त्रता अन्याय शोषण और अज्ञान के प्रति विद्रोह की भावना को जन्म दिया तथा किस प्रकार स्वतन्त्रता, सत्य, न्याय, समता एवम् ज्ञान के साथ प्यार करना सिखलाया यह एक लम्बी बात है जिसे कोई भी पक्षपात रहित व्यक्ति दोनों के जीवन चरित्रों एवम् क्रिया कलापो को पढ़ने और विचारने से सहज ही में समझ सकता है। स्वतन्त्रता का जब कोई नाम भी लेना उचित न समझता था और परतन्त्रता को ही वरदान समझे बैठा था उस समय इन महावीरों ने परतन्त्रता के बन्धनों को काटने के लिए मृत प्राय जातीय जीवन में से ऐसे-ऐसे रणबांकुरे बलिदानी वीर प्रगट कर दिये जो राष्ट्र की थाती है और जिन की स्मृति मात्र से ही राष्ट्र प्रेरणावान बन जाता है। ऐसे सजीले, निःस्वार्थ, धर्मपरायण, कर्मवीरों का संक्षिप्त वृत्तान्त ही इस बलिदान विशेषांक में आप को पढ़ने को मिलेगा। यह विशेषांक उस वृहदाकार बलिदान विशेषांक का नमूना मात्र है जिसे हम अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानंदजी महाराज की बलिदान अर्द्ध शताब्दी के अवसर पर दिसम्बर १९७६ में प्रकाशित करना चाहते हैं। हमारा विचार उस में आर्यसमाज के सारे शहीदों के जीवन वृत्त देने का है भगवान् की कृपा रही तो यह कार्य अवश्य सम्पन्न हो जायगा।

सुयोग्य लेखकों एवम् सुकविजनों का धन्यवाद

आर्यमर्यादा पर आप का वरदहस्त सदा से रहा है। इसके साधारण एवम् विशेषांक आपकी सहृदयता, सहयोग एवम् निःस्वार्थ संरक्षण की भावना से ही उत्तम पाठ्य सामग्री प्रस्तुत करते हैं। किन शब्दों में आप का धन्यवाद करूं यह समझ नहीं आता। वास्तविकता यह है कि आप के ऋण से उऋण होना कठिन है प्रभु करे सहयोग और आशीर्वाद से भरपूर आप के हाथ सदा हमारे सिरों पर रहे।

६ मार्च को न भूलिए

वैदिक ज्योति जला, मतवाद केअघ अन्धड़ से पथ भ्रष्टों को सुपथ पर लाने वाले वीर वर पण्डित लेखराम जी को न भूलिए। लेखराम नगर कादियां में हम अभी तक शहीद लेखराम जी का उनके नाम और काम के अनुरूप कोई स्मारक नहीं बना सके। अपने बलिदानी वीरों के प्रति उदासीनता घातक होती है। बलिदानी वीर ही सच्चे ज्योति स्तम्भ है। यदि यह ज्योति स्तम्भ सुरक्षित न रखे गये तो जातीय जीवन पुनः अन्धकारमय हो जायगा। इसलिए आर्यबन्धुओं अभी से संकल्पाग्नि को जागृत करो। लेखराम नगर कादिया में इस वर्ष शहीद का दिन प्रान्तीय स्तर पर मना कर अपनी सच्ची श्रद्धाञ्जलि भेंट करने का आप को सौभाग्य प्राप्त करना है। मुझे विश्वास है कि आप अपनी परम्पराओं की रक्षा करते हुये ऐसा अवश्य करेंगे।

भूल सुधार

६-१२-७५ के आर्य मर्यादा में मोगा सम्मेलन में आर्यसमाज शताब्दी निधि में प्राप्त धन का जो ब्यौरा प्रकाशित हुआ है उस में निम्नलिखित रीति से सुधार कर लिया जाए।

आर्य समाज सन्नौर (भठिण्डा)—३५०
श्री बलवन्त राय केदार नाथ जी
ठेकेदार, पक्का बाग, जालन्धर—२५१
आर्य समाज बरनाला—१०००
श्री ज्ञान मित्र जी सूद आर्य समाज
मोगा—५०००

———
———

आर्य प्रतिनिधि सभा का नया टैलीफोन

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब गुरुदत्त भवन चौक किशनपुरा जालन्धर के वर्तमान कार्यालय आर्य समाज अड्डा होशियारपुर जालन्धर में नया टैलीफोन लग गया है जिसका नं० ५८७७ है। सभा सम्बन्धी पूर्ण जानकारी प्राप्त करने के लिये आप टैलीफोन पर सम्पर्क कर सकते हैं।

वीरेन्द्र
सभामन्त्री

अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द

(रचयिता—श्री प्रकाशचन्द्र कविरत्न अजमेर)

दयानन्द के शिष्य परम प्रिय ज्ञानी, विद्यादानी थे
आर्य-जाति के कर्णधार वैदिक सभ्यताभिमानी थे
शुचि स्वतन्त्रता के सेनानी. देश भक्त लासानी थे
देख दु:खित-दृग में पानी हो जाते पानी पानी थे ।
सभा मञ्च पर शोभित होते थे जैसे तारों में चन्द ।
अमर हो गये कर्मवीर बलिदानी स्वामी श्रद्धानन्द ।

आंगल भाषा का प्रचार होता ही जाता था भारी
फैशन के प्रवाह में बहती जाती थी जनता सारी
पुनः पुरातन पद्धति के अनुकूल किये गुरुकुल जारी
किया प्रचार वेद-विद्या का आर्य संस्कृति विस्तारी
पिला गये अगणित तृषितों को भक्ति-सुमन-मधुरिम मकरन्द ।
अमर हो गये कर्मवीर बलिदानी स्वामी श्रद्धानन्द ।

छिड़ा समर स्वातन्त्र्य देहली में वे मन के मरदाने
गुरखों की संगीनों आगे खड़े हुए सीना ताने
झिझके नहीं मृत्यु से किञ्चित वे स्वदेश के दीवाने
थी दिल में जो चोट उसे, कोई बेदर्दी क्या जाने
अंगद सम असुरों के दल पर जमा गये आतङ्क बुलन्द ।
अमर हो गये कर्मवीर बलिदानी स्वामी श्रद्धानन्द ।

एक साल कोकोनाड़ा में हुई राष्ट्र कांग्रेस महान
बने किसी ढ़ण से थे जिसके मियां मुहम्मद अली प्रधान
बोले बचा नहीं सकते यदि दलितों को हिन्दू नादान
उन्हें हमारे सुपुर्द करदो बने सभी अहले कुरआन
सुनकर यह अति क्षुब्ध हुए वे, आर्य जाति रक्षक सुखकन्द ।
अमर हो गये कर्मवीर बलिदानी स्वामी श्रद्धानन्द ।

ले न सकोगे तुम दलितों को जब तक मेरे तन में प्राण
आर्यसमाजी इन्हें प्रेम से अपनाएंगे बन्धु समान
मुख मलीन हो गया मियां का बिल्कुल बोल कर गये बन्द ।
अमर हो गये कर्मवीर बलिदानी स्वामी श्रद्धानन्द ॥

फिर क्या था जोरों से स्वामी जी ने दलितोद्धार किया
प्रचलितकर धार्मिक शिक्षा कितनों का शुद्धाचार किया
छूत छात और जाति पाति के गढ़ का बण्टाधार किया
बना योग्य सब भांति अनेकों का ही जन्म सुधार किया
बने स्वावलम्बी कितने ही काट गये परवशता-फन्द ।
अमर हो गये कर्मवीर बलिदानी स्वामी श्रद्धानन्द ॥

शुद्धि संगठन की भारत में खूब बजाई मृदु मुरली
किन्तु, कुचाली विधर्मियों के उर ईर्ष्या की आग जली
स्वामी की हत्या करने को यह बेहूदा चाल चली
भेजा उनके पास एक अब्दुर्रशीद मक्कार, छली
भूल गया मानवता को वह मिथ्या मतवादी, मतिमन्द ।
अमर हो गये कर्मवीर, बलिदानी स्वामी श्रद्धानन्द ॥

ऋषि थे रुग्ण, उसे सेवक ने ढिग आने को मना किया
रोको मत आने कहकर, स्वामी जी ने बुला लिया
पानी मांगा, पर पानी से हुआ न उसका शान्त हिया
प्यास बुझाने को कातिल की, हृदय रक्त तक पिला दिया
मर कर भी सञ्चार कर गये जन-जन में उत्साह अमन्द ।
अमर हो गये कर्मवीर बलिदानी स्वामी श्रद्धानन्द ॥
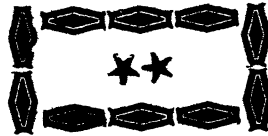
समर्पण

यह अंक समर्पित है उस मूलशंकर को, जो आज के दिन स्वामी दयानन्द बना, और सच्चे शिव की प्राप्ति के लिये नदी-नालों, जगलो को पार करके सच्चे गुरु के चरणों में शिक्षा प्राप्त करके उसे गुरु दक्षिणा के रूप में अपना जीवन अर्पण कर दिया तथा वह जीवन संसार में मानव-जाति के मध्य खड़ी भेद-भाव की समस्त दीवारो को गिराने में लगा दिया। एक अकेले संन्यासी ने अपनी विद्वता निर्भयता और अलौकिक साहस से विश्व की आसुरी शक्तियों को चुनौती देकर परास्त किया। उन्होंने एक ऐसे विश्व की आधार शिला रखो जिसमें अज्ञान-अन्याय और अभाव के लिए कोई स्थान नहीं था।

महा कवि श्री नात्थूराम 'शंकर' शर्मा के शब्दों में :—

'जो न हटा मुख फेर, बढ़ा जीवन भर आगे।
जिसका साहस हेर, विघ्न, भय संकट भागे।
सबल सत्य की हार, अनृत की जीत न होगी।
ऐसे सुबल विचार, सहित विचरा जो योगी।
उस दयानन्द ऋषिराज का प्रवृत पाठ जनता पढ़े।
प्रभु 'शंकर' आर्य समाज का, वैदिक बल गौरव बढ़े।

—वीरेन्द्र भारती

बनारसीदास गुप्त मुख्यमन्त्री हरियाणा

मुझे यह जान कर अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि साप्ताहिक हिन्दी पत्र 'आर्य मर्यादा' का आगामी विशेषांक 'ऋषि बोध' विशेषांक के रूप में प्रकाशित किया जा रहा है।

'आर्य मर्यादा' आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का प्रमुख पत्र है। इसने स्वामी दयानन्द जी की शिक्षाओं और सिद्धान्तों के प्रसार के लिए सराहनीय कार्य किया है। महर्षि दयानन्द जी को श्रद्धांजलि समर्पित करने के लिए इसका 'ऋषि बोध' विशेषांक प्रकाशित करना, एक सराहनीय पग है।

मुझे आशा है कि इस विशेषांक को सर्वांग सुन्दर बनाने के लिए सामाजिक बुराईयों के विरुद्ध नव-चेतना पैदा करने वाली प्रेरक सामग्री प्रकाशित की जाएगी।

मैं विशेषांक की सफलता की कामना करता हूं।

बनारसी दास गुप्त
मुख्य मन्त्री (हरियाणा)

सार्वदेशिक सभा के प्रधान का संदेश

श्री मान जी नमस्ते,

आपका पत्र प्राप्त हुआ। यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख पत्र आर्य मर्यादा "ऋषि बोध" विशेषांक प्रकाशित कर रहा है।

मैं इस अंक के लिए अपनी शुभ कामनाएं भेजता हूं और आशा करता हूं कि आर्य मर्यादा अपनी पूर्व परम्पराओं के अनुसार दिन दुगनी रात चौगुनी उन्नति करेगा।

भवदीय
रामगोपाल शालवाले
प्रधान
सार्वदेशिक आ. प्र. स.

सम्पादकीय—

एक बार फिर शिवरात्रि आई

हर वर्ष शिवरात्रि आती है और च जाती है और भूले-भुलके राहियों को एक बार फिर रास्ता दिखा जाती है। कुछ पुरानी घटनाओं की याद दिलाकर उन्हें समझाने का यत्न करती है कि आज की रात इस देश में एक महा पुरुष ने एक नई करवट ली थी। उनसे पहले वे स्वयं भी सो रहे थे जब वे जागे तो दुनिया जाग उठी और जो जागे वे आगे निकल गये, जो सोये रहे वे पीछे रह गये। इसीलिये एक कवि ने कहा है—

उठ जाग मुसाफिर भोर भई,
अब रैन कहां जो सोवत है।
जो जागत है सो पावत है,
जो सोवत हैं सो खोवत है।

शिवरात्रि की रात को कई लोग जागते हैं वे कुछ न कुछ पाने का प्रयत्न करते हैं और उसमें वे कई बार पाने में सफल भी हो जाते हैं जो सोते रहते हैं वे सब कुछ खो बैठते हैं उनकी आंख उसी वक्त खुलती है जब सब कुछ उनके हाथ से निकल जाता है। बालक मूल शंकर शिव मन्दिर में बैठे जागते रहे। जो कुछ उनके सामने हो रहा था उसे देखते रहे, उसी का यह परिणाम हुआ कि उन्होंने सब कुछ पा लिया। उनके पिता, चाचा और दूसरे सम्बन्धी सोये रहे। इसलिये वे कुछ भी प्राप्त न कर सके जो कुछ उस मन्दिर में लेकर आये थे, वह भी वहीं छोड़ कर चले गये। मूल शंकर कुछ लेकर नहीं आये थे, देखने ही आये थे कि वहां क्या हो रहा है? आयु की दृष्टि से बहुत छोटे थे, इसीलिये, वह यह भी न समझ सकते थे कि पत्थर की मूर्ति में भगवान् कैसे बैठ सकता है, परन्तु वे जानना अवश्य चाहते थे और जब उन्होंने स्वयं अपनी आंखों से देख लिया कि जो कुछ वहां पड़ा था वह सब एक चूहा खा गया और उसे हटाने की उस पत्थर की मूर्ति में शक्ति न थी तो उन्हें बोध हुआ कि जिस शिव के दर्शन के लिये वह इस मन्दिर में आये वे उन्हें उस मूर्ति में नहीं मिल सकते। कोई और बालक होता तो वहीं सो जाता जहां और लोग सो रहे थे वहां वह भी सो सकता था परन्तु मूल शंकर जागते रहे क्योंकि वह सच्चे शिव को जानना चाहते थे कि वह कहां है? और जब वह उन्हें उस मन्दिर में नहीं मिला तो वह अपना घर बार छोड़ कर वहां से भाग निकले। जंगलों और पहाड़ों को काटते हुए नदी नालों को पार करते हुए अन्त में वह एक प्रज्ञाचक्षु दण्डी स्वामी की कुटिया में पहुंचे। उन्होंने जाकर दरवाजा खट-खटाया। अन्दर से किसी ने पूछा कि कौन हो? दयानन्द ने उत्तर दिया कि यही जानने के लिये आया हूं कि मैं कौन हूं? उस प्रश्नोत्तर के साथ गुरु विरजानन्द और उनके शिष्य स्वामी दया-नन्द के बीच एक नये सम्बन्ध का प्रादुर्भाव हुआ। जिसने आगे चल कर भारत के इतिहास की दिशा बदल दी।

इसलिये शिवरात्रि हमें यदि कोई सन्देश देती है तो केवल यह कि वो ही व्यक्ति वह ही समाज, और वे ही राष्ट्र कुछ प्रगति कर सकते हैं जो जागते रहते हैं। जो सो जाते हैं वे पिछड़ जाया करते हैं। आज के विज्ञानक युग में विशेष कर दुनियां बड़ी तेज गति से आगे बढ़ रही है। आज से २०-२५. वर्ष पहले क्या कोई सोच सकता था कि कभी वे भी दिन आयेगा जब मानव चांद पर जाकर उतरेगा। वह दिन आया और हमने देखा एक नहीं बल्कि एक के बाद कई लोग वहां जाकर उतरे और पहली बार इस धरती पर रहने वाले लोगों को पता चला कि अढ़ाई लाख मील दूर की दुनिया कैसी है ? जो मानव आज चांद पर पहुंच सकता है वह कल को इससे भी आगे जा सकता है और जाने की तैयारियां कर रहा है। ऐसी अवस्था हमें भी गम्भीरता से सोचना होगा कि हमें किधर जाना है। १०० वर्ष हुए जबकि महर्षि दयानन्द ने आर्य समाज की स्थापना की थी एक विशेष उद्देश्य और एक विशेष लक्ष्य को सामने रख कर यह समाज बनाया गया था इसके कुछ नियम भी बनाये गए थे जिनमें एक यह भी था—'संसार का उपकार करना आर्य समाज का मुख्य उद्देश्य है।" महर्षि दयानन्द की दृष्टि केवल अपनी जाति तक या अपने देश तक ही सीमित न थी वे सारे संसार के भविष्य का सोचते थे इसीलिये उन्होंने आर्य समाज के सामने एक उद्देश्य रखा वह था —"कृण्वन्तो विश्वमार्यम् पिछले १०० वर्ष में आर्य समाज कुछ और कर सका हो या न, वह यह अवश्य कर सका है कि उसने शिक्षित वर्ग के चिन्तन की दिशा बदल दी है। नये लोग नये ढंग से सोचने लग गये हैं। रूढ़िवाद और सकीर्ण परम्पराओं से निकल कर लोगों के सामने अब विश्व कल्याण की योजनाएं आने लगी हैं। कोई समय था कि इस देश में भी वो लोग जिन्हें हम हिन्दु के नाम से पुकारते हैं जात बिरादरी की चार दीवारी से बाहिर न जा सकते थे वो एक दूसरे को भी सहन न करते थे परन्तु महर्षि दयानन्द ने उन दीवारों को तोड़ दिया और लोगों के अन्दर भ्रातृभाव, सहिष्णुता और सहनशीलता की एक नई भावना पैदा कर दी जिन्हें पहले अछूत कहा जाता था उन्हें समाज में बराबर का स्थान मिलने लगा और हिन्दुओं में एक नई जागृति पैदा होने लगी उसका प्रभाव दूसरी जातियों पर भी पड़ा है और दूसरे देशों पर भी पड़ा है और आज हम संसार में जो एक नई जागृति देख रहे हैं यह उसी महर्षि की कृपा का फल है।

इसीलिये हम कहते हैं कि शिवरात्रि सदा ही एक नया सन्देश लेकर आती है। नये जीवन का नये उत्साह का, नये संगठन का नये अनुशासन का महर्षि दयानन्द के चरणों में हमें अपनी श्रद्धांजलि भेंट करते हुये यह कभी भी न भूलना चाहिए कि वे ही लोग और वे ही राष्ट्र दुनिया में सफल हो हो सकते हैं जो जागृत रहते हैं। रात भर जागकर मूलशंकर दयानन्द बन गये दयानन्द ने संसार को जगा दिया। इसलिये जागते रहो, जागते रहो, जागते रहो, यही सोने का समय नहीं जागते रहो, यही शिवरात्रि का सन्देश है।

—वीरेन्द्र

स्व. स्वामी मुनीश्वरानन्द जी महाराज

हमारा यह परम दुर्भाग्य है कि जब भी कोई आर्य समाजी नेता अपनी निष्काम सेवा और धर्म के प्रति अपनी निष्ठा के आधार पर उभरने लगता है तो किसी न किसी कारण हम उसके नेतृत्व से वंचित हो जाते हैं। हमारे कई मूर्धन्य और कर्मठ नेता धीरे २ बूढ़े होते जा रहे हैं, कईयों का स्वास्थ्य बिगड़ रहा है और कई सदा के लिये हमसे बिछुड़ जाते हैं। श्रद्धेय स्वामी मुनीश्वरानन्द जी महाराज का पिछले ११ फरवरी को देहान्त हो गया। वे पंजाब के उन प्रमुख आर्य समाजियों में थे जिन्होंने अपना सर्वस्व आर्य समाज के लिये न्यौछावर कर दिया था। अपनी शिक्षा समाप्त करने के पश्चात् उन्होंने अपना जीवन डी० ए० वी० कालेज के लिये दान दे दिया और वर्षों से डी० ए० वी० संस्थाओं को सेवा करते रहे। यह भी एक प्रकार से आर्य समाज की ही सेवा थी। इसके पश्चात् उन्होंने संन्यास ले लिया और प्रि० ज्ञानचन्द स्वामी मुनीश्वरानन्द बन गये। संन्यासी होते हुये भी वे दिन-रात जगह २ अपने आचार्य महर्षि दयानन्द का सन्देश पहुंचाते रहे हैं। उनके ओजस्वी भाषणों का जनता पर एक विशेष प्रभाव पड़ता था। इसलिये जनता उन्हें कभी कोई आराम न लेने देती थी इसका प्रभाव उनके स्वास्थ्य पर भी पढ़ा और अन्त में हम से सदा के लिये बिछुड़ गये। उनके देहान्त के साथ आर्य समाज अपने एक उच्च कोटि के विद्वान एक कर्मठ और निष्काम सेवक की सेवाओं से सदा के लिये वंचित हो गया हैं। मैं पंजाब के आर्य जगत् की ओर से और विशेषकर आर्य मर्यादा के पाठकों की ओर से उनके चरणों में अपनी श्रद्धांजलि भेंट करता हूं।

--वीरेन्द्र

लेखराम विशेषांक

साप्ताहिक 'आर्य मर्यादा' का ऋषि बोधांक पाठकों के हाथों में है। इसे हम उच्चकोटि का पत्र बनाना चाहते हैं और इस प्रयत्न भी जारी हैं तथा इन्हीं प्रयत्नों का फल यह अंक आपके सामने हैं। अब हम आगामी विशेषांक ७ मार्च को 'लेखराम' विशेषांक के रूप में प्रकाशित कर रहे हैं। आर्य समाजों, आर्य शिक्षण संस्थाओं तथा आर्य मर्यादा के पाठकों से सानुरोध प्रार्थना है कि इस अंक को अधिक से अधिक संख्या में मंगा कर वैदिक मान्यताओं का प्रचार करें। आर्डर भेजने की अन्तिम तिथि २५ फरवरी है और एक प्रति का मूल्य ५० पैसे है।

—वीरेन्द्र भारती
व्यवस्थापक

शिव संकल्प की रात्रि

(आचार्य पृथ्वी सिंह आजाद, प्रधान—आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब, जालन्धर)

शिवरात्रि हमारे लिए एक नवजीवन देने वाली रात्रि है। इस पवित्र रात्रि को बालक मूलशंकर ने टकारा के छोटे से शिवमन्दिर में जबकि वह भक्तिभाव में मग्न, त्रिशूलधारी शिव के दर्शन की अभिलाषा लगाये बैठा था, एक चूहे को शिव की मूर्ति पर उछलता-कूदता देख कर चकित रह गया। उसे यह देख कर हैरानी हुई कि वही चूहा शिव मूर्ति पर भक्तों के चढ़ाये भक्ष पदार्थ भी खाये जा रहा है। देखने और कहने में यह छोटीसी बहुत साधारण घटना है परन्तु मेधावी मूलशंकर के मन में इसछोट सी घटना ने ही विचारों का तूफान पैदा कर दिया और उसने अपने मन में एक दृढ़ संकल्प कर लिया कि वह सच्चे शिवके दर्शन अवश्य करेगा। बाल हृदय अति पवित्र और निर्मल होता है। मूल शंकर का हृदय भी ऐसा ही था। अतः उसने शिवरात्रि को घटित उस साधारण सी घटना को देख कर जो दृढ़ संकल्प किया, वहसच्चे अर्थों में एक शिव संकल्प था। इस शिव संकल्प में भी बाल मूल शंकर को क्रांतिकारी बना दिया।

महर्षि दयानन्द के इस शिव संकल्प ने अन्धकारमय भटकते हुए करोड़ों प्राणियों को ज्ञान चक्षु दिये और उनको सच्चा सुख प्राप्त करने का मार्ग दिखाया। अनेकों नास्तिकों को आस्तिक बनाया। और तो और मुन्शी राम और गुरुदत्त जैसे महान नास्तिकों को आस्तिक बना कर भारत का कल्याण करने वाला बना दिया। कुमार्गियों को सद्मार्ग और पथभ्रष्टों को सन्मार्ग दिखाया। करोड़ों इन्सानों को जिन्हें जन्म के कारण पतित मान कर कट्टर पंथियों ने मानवता के धार्मिक और सामाजिक अधिकारों से वंचित कर रखा था, उन्हें न केवल सामाजिक जीवन में समानता प्रदान करवाई अपितु उन्हें हर प्रकार से उन्नत किया। अन्धविश्वासों और रूढ़िवाद में जकड़े हुए समाज को मुक्ति प्रदान करके सच्चे वैदिक धर्म का रास्ता दिखाया। और वेदमार्ग पर चलने वाला बनाया। ऋषि के सकल्प के पुण्य प्रताप से ही हमारे समाज का सुधार हुआ। विधवाओं और दलितों का उद्धार किया। स्वाधीनता का अन्त हुआ और देश को स्वाधीनता प्राप्त हुई। स्वाधीनता के इस युग में जो जागृति, आर्थिक, सामाजिक और धार्मिक समानता, वेद ज्ञान का प्रकाश, हम देख रहे हैं, वह सब गुरुवर दयानन्द ने उस शिव संकल्प के ही पुण्य प्रताप के कारण है जो युग प्रवर्तक स्वामी दयानन्द जी महाराज ने शिवरात्रि को किया था।

ऋषि के द्वारा किये कार्य को देख कर ही रोमा-रोलियां महान विचारक ने कहा था कि—'राष्ट्रीय पुनर्जागरण में दयानन्द से सब से प्रबल शक्ति के रूप में कार्य किया। दयानन्द राष्ट्रीय संगठन और पुनर्जागरण का सर्वाधिक उत्साही मसीहा था।'

हमने आर्य समाज की स्थापना शताब्दी तो मना ली और हमें इस बात का गर्व भी है कि हम गत सौ वर्षों से लगातार आर्य समाज के उस सद्मार्ग पर चलने का यत्न कर रहे हैं, जो हमारे लिए ऋषि ने निर्धारित किया था। परन्तु हमें खेद है कि हमने कभी यह शिव सकल्प नही लिया कि हमने ऋषि द्वारा निर्धारित आर्य समाज के उन १० नियमों को जो आर्य समाज का आधार भूत है, अपने जीवन का और दूसरों के जीवन का अग बनाना है और न पूरी तरह शक्ति के साथ यह प्रयत्न किया कि हम अपने समाज के लोगों का राष्ट्रीय चरित्र बना सके। हमने चाणक्य के इस सिद्धांत को कि—'चारित्रय बलम् स्वराज्यम्—' सर्वथा भुला दिया। ऋषि दयानन्द जो भी कुछ कर पाये, उसके चारित्रय बल की बड़ी देन थी। इसीलिए भारत के लौह पुरुष सरदार पटेल ने कहा था कि—'सरकार भवन निर्माण करायेगी और आर्य समाज चरित्र निर्माण कराये।' चरित्र निर्माण आध्यात्मकवाद के बिना नहीं हो सकता।—'आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्।' अर्थात जो अपने लिए ठीक नही है, उसे दूसरों के साथ भी नहीं करें। यदि आज दुनिया महाभारत की इस बात को मान ले तो कहीं कोई चोर, डाकू, अनाचारी, व्यभिचारी और भ्रष्टाचारी नहीं रह सकता। परन्तु उसके लिए आर्य समाज को बड़ा भारी तप करना पड़ेगा। घरों को छोड़ना होगा, सन्यास धारण करना होगा और प्रचारक, उपदेशक बड़ी भारी संख्या में विश्व की अनेक भाषाओं में बोलने के लिए तैयार करने होगे। आर्य समाज की दृष्टि में कोई विदेश नहीं है। सारी दुनिया एक है। मैं आश्चर्य करता हूं कि जब परमात्मा एक है, दुनिया एक है, सूर्य एक है, चन्द्रमा एक है, तो फिर मतमतान्तर इतने क्यों हैं—।

जो कुछ लौह पुरुष सरदार पटेल ने स्वामी दयानन्द जी महाराज को अपने हृदय के श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए अपने जीवन की संध्या के अवसर पर कहा था उस आज भी विचार करके उसे कार्यान्वित करने की अत्यान्तावश्यकता है। हम जब वर्तमान आर्यसमाज स्थापना शती को समाप्त करके दूसरी क्षति में प्रवेश कर रहे हैं, क्या हम शिवरात्रि को फिर यह संकल्प नहीं कर सकते कि हम ऋषि दयानन्द के आर्यसमाज के सिद्धांतों को देश और विदेशों के कोने-कोने तक पहुचाएं। और जो हमारे आपसी मतभेद हैं, उनका अन्त करके एक होकर वैदिक धर्म की पताका को हाथ में लेकर आगे बढ़ेगे। कोर्टों के दरवाजे न खटखटा कर आर्य समाज के मूर्धन्य सन्यासियों जिनमें महामना आनन्द स्वामी जी महाराज, परमपूज्य स्वामी सत्यप्रकाश जी महराज और श्रद्धेय स्वामी ब्रह्मानन्द जी महाराज और पूज्य स्वामी सर्वानन्द जी महाराज जैसे त्यागी और तपस्वी सन्यासी शामिल हैं, के सामने अपने सभी मतभेदों का चिट्ठा रख कर उनसे निर्णय करवा कर उन्हें हम यह वचन देगे कि हम महर्षि की आज्ञा का पालन करते हुए सत्य का ग्रहण करेंगे और असत्य का परित्याग करेंगे। यदि हम आज यह शिव संकल्प फिर से कर लें तो हम अपने समाज को एक मजबूत शक्तिशाली, कल्याणकारी दयानन्द का क्रांतिकारी समाज बना सकते हैं।

डा. केवलकृष्ण अध्यक्ष पंजाब विधान सभा का सन्देश

मुझे यह जानकर अति हर्ष हुआ कि आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का मुख पत्र साप्ताहिक 'आर्य मर्यादा' ऋषि बोधांक प्रकाशित कर रहा है।

शिवरात्रि के महान् दिन पर बालक मूलशंकर को दिव्य ज्ञान प्राप्त हुआ था और वह इस दिन को मूलशंकर से दयानन्द बन सके थे। महर्षि दयानन्द ने पाखण्ड खण्डिनी पताका लेकर जिस प्रकार अधर्म के गढ़ों को तोड़ा उसका उदाहरण संसार में कहीं भी नहीं मिलता। महर्षि दयानन्द ने जाति-पाति, ऊंच-नीच, छूआछूत, सती प्रथा, तथा राष्ट्र भाषा हिन्दी के लिये जो कार्य किया, ऐसा कार्य संसार का कोई भी महापुरुष नहीं कर सका। वेदों को जर्मन से मंगवा कर उनका प्रचार किया तथा वेदों को ही आर्ष ग्रन्थ मानकर भारत में उनका उचित स्थान दिलाने में संघर्ष किया। जहां स्वामी दयानन्द सरस्वती ने समाज में व्याप्त कुप्रथाओं को समाप्त करने के लिये संघर्ष किया, वहां उन्होंने देश को स्वतन्त्रता दिलाने के लिये भी परोक्ष रूप में काम किया। १८५७ की क्रान्ति में उन्होंने परोक्ष रूप में कार्य किया।

यह वर्ष आर्य समाज की शताब्दी का वर्ष है। जहां स्वामी जी ने आर्य समाज की स्थापना करके संसार को नई दिशा देने की कोशिश की, वहां अब हमारा कर्त्तव्य है कि हम उनके बताये हुये मार्ग पर चलकर देश की उन्नति में सहायक बन सके।

मैं इस विशेषांक के लिये शुभ कामना अर्पित करता हूं। डा. केवलकृष्ण अध्यक्ष

सन्देश

यह जान कर हर्ष हुआ कि आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के साप्ताहिक 'आर्य मर्यादा' का शिवरात्रि के अवसर पर एक विशेषांक प्रकाशित किया जा रहा है।

मुझे आशा है कि इस अंक में महर्षि दयानन्द सरस्वती के जीवन आदर्शों एवं सिद्धान्तों पर विद्वान् लेखक नवीन खोजों के आधार पर बहुमूल्य एवं खोजपूर्ण सामग्री प्रस्तुत करेंगे। ताकि इनके आदर्शों को और अधिक गहराई से समझने का सुअवसर प्राप्त हो सके।

मैं विशेषांक की सफलता की कामना करता हूं।
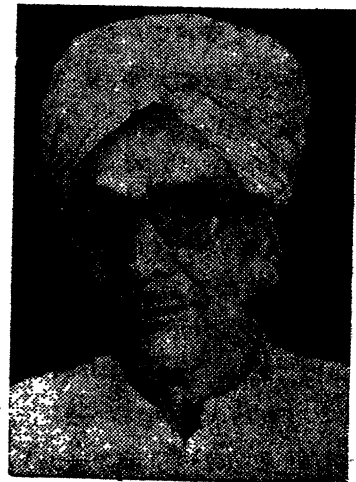
चौ. माड़ सिंह शिक्षा मन्त्री हरियाणा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के मंत्री श्री वीरेन्द्र का निर्देश

जहां दहेज लेने-देने की बात हो आर्यउपदेशक विवाह न पढ़ायें
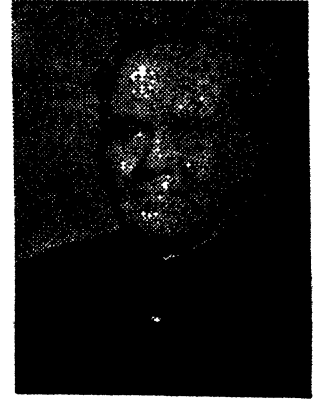
जालन्धर, (वि. प्र.)—समाज सुधार की तरफ आर्य समाज ने पहले जो पग उठाये है, उन्हें सक्रिय बनाने के लिये और समय-समय पर आर्य समाज की ओर से इस सम्बन्ध में जो निर्णय लिए गए हैं, उन्हें क्रियात्मक रूप देने के लिये आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के महामन्त्री श्री वीरेन्द्र ने आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के अधीन प्रचार करने वाले सब उपदेशक व भजनोपदेशक महानुभावों को यह निर्देश दिया है कि भविष्य में जब वह कोई विवाह पढ़ानें जायें, तो विवाह कराने से पहले निम्नलिखित बातों की ओर विशेष ध्यान दिया करें।

1—वर-पक्ष या वधु पक्ष की ओर से दहेज देने या लेने के लिए कोई कार्यवाही तो नहीं हो रही? यदि दहेज लेने या देने का कोई प्रयास हो रहा हो, तो विवाह कराने से इन्कार कर दें।

2—जिस वर का आप विवाह कराने लगे हैं, पता कर लें कि कहीं किसी समय उसका पहला विवाह तो नहीं हो चुका ? पहली पत्नी के होते दूसरा विवाह किसी भी अवस्था में न कराया जाए।

3—जहा शराब का किसी प्रकार से भी प्रयोग हो, या जिस बारात मे भंगड़ा, नाच आदि नचाया जाए, वहा भी आप विवाह कराने से इन्कार कर दें। विवाह संस्कार की पवित्रता सुरक्षित रखने का हर सम्भव प्रयास किए जाए।

4—यदि वर और वधू की आयु मे अन्तर दस वर्ष मे अधिक हो, तो वहा भी आप विवाह न करायें। केवल उसी अवस्था में अधिक आयु वाले वर-वधू का विवाह होना चाहिए, यदि दोनों इससे पहले ब्रह्मचर्य आश्रम मे रहे हों।

5—विवाह शुद्ध वैदिक रीति के अनुसार ही होना चाहिए। यदि किसी स्थान पर वर पक्ष या वधू पक्ष आपको वैदिक रीति के साथ साथ किसी और रीति से विवाह कराने के लिए कहें, तो ऐसा करने से इन्कार कर दें।

आपका ध्यान इस ओर दिलाने से मेरा अभिप्राय केवल यह है कि आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब से सम्बन्धित उपदेशक महानुभाव उन्ही नियमो और सिद्धान्तो के अनुसार विवाह करायें, जो महर्षि दयानन्द सरस्वती ने सस्कार विधि में प्रतिपादित किए है। ऐसा करते हुए हमे वर्तमान सामाजिक परिस्थितियों का भी ध्यान रखना चाहिए और दहेज आदि कुप्रथाओ के विरुद्ध देश में जो वातावरण पैदा हो रहा है, उसे सार्थक बनाने में पूरी तरह सहायक होना चाहिए। आर्य समाज के उपदेशक महानुभाव इसमे बहुत कुछ कर सकते है।

लाला रामगोपाल शालवाले का प्रधानमन्त्री को पत्र

भारत स्थित विदेशी ईसाई मिशनों की देश विरोधी कार्यों पर रोक लगाई जाये

नई दिल्ली, (वि. प्र.)-सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधिसभा के प्रधान लाला रामगोपाल शालवाले ने प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी को एक विशेष पत्र भेजकर, उनका ध्यान उन आरोपों की ओर खींचा है जो अमेरिका में ईसाई पादरियों के एक ग्रुप पर धन के दुरुपयोग और लोकोपकार के कार्यों के नाम पर उनकी आड़ में लोगों का ईमान खरीदने के आधार पर लगाए गए हैं और जिनसे अमेरीका मे बड़ी बेचैनी फैली हुई है, माग की है कि विदेशी ईसाई मिशन की इस देश में राष्ट्र एवं संस्कृति विरोधी कार्यवाहियों पर अंकुश लगाया जाये।

यह भी मांग की गई है कि विदेश से लोकोपकार के लिए भारत स्थित ईसाई पादरियों को जो धन एवं सामग्री मिलती है वह भारत सरकार की मारफत प्राप्त हो और उसी की देख-रेख में उसका वितरण एवं व्यय हो।

आर्य वीरों से

(श्री उत्तम चंद श रर एम. ए.)

(१)

अब भी बात बना सकते हो।
तुम चाहो तो उजड़े उपवन में बसन्त को ला सकते हो।
गिरने दो यह सूखी कलियां।
झड़ने दो वह पीले पत्ते।
जाने दो निर्गन्ध पुष्प यह, इन की आयु के दिन बीते।
आखिर सोचो क्या इन से उपवन में शोभा ला सकते हो?
अब भी बात .

(२)

अटल नियम है जग सृष्टा का मिटे निशां विहान मुस्काये।
नया कहां से आ सकता है यदि पुराना भी रह जाये?
धायं धायं जलने दो गत को।
तुम शव से क्या पा सकते हो?
अब भी। ..

(३)

मत प्रवाह रोको झरनों का, इस से पानी सड़ जायेगा।
कोमल किसलय फूटेगा जब, पीला पत्ता झड़ जावेगा।
वर्तमान का साथ निभा कर।
गत वैभव तुम पा सकते हो।
अब भी बात .. ...

(४)

डरो न झटकों से क्रांति में यह झटके आते रहते हैं।
सूय रश्मि है सुलभ उन्हें, जो तारों की मृत्यु सहते हैं।
तुम तारों का मोह त्याग दो।
नव प्रभात तुम ला सकते हो।
अब भी बात बना सकते हो।

मूलशंकर का मूल उपकार

(ले०—श्री रामचन्द्र जावेद एम० ए० सभा कोषाध्यक्ष)

शिवरात्रि का महर्षि दयानन्द जी के जीवन में बहुत महत्वपूर्ण स्थान है। इसे हम उनकी बोध रात कहते हैं। इस रात उनकी जिज्ञासु आत्मा ने रात भर जागकर शिवजी महाराज को समझने का पूर्ण प्रयत्न किया था। सब जानते हैं कि उनके शैव पिता ने अपने चौदह वर्षीय पुत्र मूलशंकर को शिवरात्रि का महात्म्य कुछ ऐसे आकर्षक ढंग से सुनाया और शिवजी के दर्शनों का इतना विश्वस्त प्रलोभन दिया कि वह दिन भर व्रत रखने और रात भर जागृत रहकर पूजन अर्चन के लिये उद्यत हो गया। मन्दिर के वातावरण और भक्तों की भीड़-भाड ने उसकी श्रद्धा में और भी वृद्धि की। उसके देखते ही देखते सारे टकसाली भक्त निद्रा मैया की गोद में पहुंच गये किन्तु शिव दर्शनों की उत्सुकता ने क्षण भर के लिए भी मूल की पलक न लगने दी।

जो कुछ उस रात हुआ उससे न केवल शिव की मूर्ति पर से मूलशंकर की आस्था उठ गई प्रत्युत उसने सच्चे शिव को खोज निकालने का दृढ़ संकल्प कर लिया। उसने अनुभव कर लिया कि यह मूर्ति वह शिव कदाचित नहीं हो सकती जो संसार के संहार की शक्ति रखता है। कहने की आवश्यकता नहीं कि मूलशंकर को शिव के महात्म्य की अब तक जितनी काल्पनिक गाथाएं सुनाई गई थीं। वह सब की सब इस एक घटना से उसे निर्मूल लगने लगीं और यहां तक कि उसका मूर्ति पूजा पर से सदा के लिये विश्वास उठ गया।

इतिहास साक्षी है कि जो प्रेरणाएं मूलशंकर को अपने पिता के सम्पन्न घर से बाहर खींच ले गई उनमें सच्चे शिव की खोज सर्व प्रथम थी लगभग बीस वर्ष उसने तपस्या की। साधु, सन्त और योगी महात्माओं के डेरों पर पहुंचे। नदी, नाले और पहाड़ तथा जंगल छान मारे, मूलशंकर से दयानन्द हुये अर्थात् गेरुवे वस्त्र पहन कर संन्यासी हुये, अनार्ष और आर्ष सभी ग्रंथ पढ़े और अन्ततः इस परिणाम पर पहुचे कि ईश्वर एक है जो निराकार है। हमारी सम्मति में यहीं इस देश पर मूलशंकर का मूल उपकार है।

मानना चाहिये कि उनके कार्य क्षेत्र में अवतरण से पहले इस देश में एक ईश्वर की पूजा के स्थान पर सहस्रों देवी-देवताओं का पूजन होता था। ईश्वर विश्वास रूपी पौधा चारों ओर से ऐसी बडी-बड़ी घास से घिर गया था जो उसे पनपने नही दे रही थी। कहीं यह घास अवतारवादके रूपमें कही पैगाम्बर और कहीं नबीके आकार में कहीं ईश्वर पुत्र के रूप में और कहीं देवताओं के रूप में बढ़ रही थी और वास्तविक ईश्वर भक्ति तथा उपासना लुप्तप्रायः हो रही थी। इसलिये ऋषि दयानन्द ने अपनी सारी शक्ति इस घास के उखेड़ने में लगा दी। उनके जीवन

चरित्र का गम्भीर अध्ययन करने वाले भाई मेरी इस बात का अनुमोदन करेंगे कि उनकी सब से अधिक शक्ति मूर्तिपूजा के खण्डन में लगी, उन्हें इससे बहुत चिढ़ थी क्योंकि वह इसे देश के अधः पतन का मूल कारण और सब प्रकार के रोगों की जड़ समझते थे। अपने मूल ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में उन्होंने मूर्तिपूजा की जो सोलह हानियां बताई हैं उनमें छठी यूं है कि— 'उसीके भरोसे में शत्रु की पराजय और अपनी विजय मान बैठे रहते हैं। उनकी पराजय होकर राज, स्वतन्त्र और धन का सुख उनके शत्रुओं के स्वाधीन होता है और आप पराधीन भटियारी टट्टू और कुम्हार के गधे के समान शत्रुओं के वश होकर अनेक विध दुःख पाते हैं।

आगे इसी ग्यारहवें समुल्लास में सोमनाथ के मन्दिर पर महमूद गजनवी के आक्रमण की चर्चा करते हुये आप लिखते है कि 'तब सब कोष लूट मार कर पोप और उनके चेलों को गुलाम, बेगारी बना, पिसना पिसवाया, घास खुदवाया, मलमूत्रादि उठवाया और चना खाने को दिया। हाय ! क्यों पत्थर की पूजा कर सत्यानाश को प्राप्त हुये' 'कितना दर्द है इन शब्दों में।

स्पष्ट है कि वह मूर्ति पूजा को ही देश की परतन्त्रता का प्रमुख कारण समझते थे। इनका विचार था कि मूर्तियों की सहायता के विश्वास में उस काल के पण्डों और पुरोहितों ने देव रक्षक क्षत्रियों को विदेशी आक्रमणकारियों का मुकाबला न करने दिया। वह यह कहा करते थे कि जड़ पूजन से बुद्धि भी जड़ होती है। उनकी यह निश्चित सम्मति थी कि जब से इस देश में जड़ मूर्तियों का पूजन आरम्भ हुआ तब से इस देश के लोगों के मनों में अन्धविश्वास ने घर कर लिया है फलस्वरूप उन्होंने अपनी बुद्धि से सोचना बन्द कर दिया है और यही अन्धविश्वास ही इस देश को ले डूबा है।

चूंकि ऋषि का यह विश्वास कि जड़ मूर्ति पूजन से मुक्ति में ही देश की मुक्ति है इसलिये अपने जीवन काल में वह जहां कहीं भी गये उन्होंने मूर्ति पूजा का बड़े जोरों से खण्डन किया और विशुद्ध वैदिक एकेश्वरवाद की रूपरेखा प्रस्तुत की। पौराणिक पण्डे और पुजारी उनकी उग्र आलोचना से बौखला उठे। उन्होंने समझ लिया कि यह साधु हमारी रोजी पर हाथ साफ करने को आया है। इसीलिये वे उनकी जान लेवा बन गये थे और यह एक ध्रुव सत्य है कि ऋषि दयानन्द महाराज को जितनी बार भी विष दिया गया था उसके पीछे ऐसे लोगों का ही हाथ था। परन्तु उनकी यह सब करतूतें महर्षि को सत्य के प्रमाण से न रोक सकीं।

कार्य क्षेत्र में आने के पश्चात् वह कुल बीस वर्षों में वह पूरे बल से मूर्ति पूजा का खण्डन करते रहे और उनके पश्चात् उनके अनुयायी आर्य समाज ने अपना यही लक्ष्य निश्चित कर लिया और आज उनकी उस घोर तपस्या का यह शुभ परिणाम है कि इस देश के बहुत से लोगों ने तो मूर्ति पूजा छोड़ ही दी है और बहुतों ने अपने घर के देवी देवताओं की प्रतिमाओं को तोड़ कर बाहर फेंक दिया है और बाकी के लोगों का भी विश्वास हिल गया है और वे मन ही मन शंका करने लगे हैं कि पाषाणों की पूजा से मनुष्य को कुछ लाभ हो सकता है या नहीं।

हमारी सम्मति में यह शुभ लक्षण हैं। निश्चय ही अन्धविश्वास के बादल फट रहे हैं और जागृति तथा चेतना का सूर्य सर्वत्र अपनी किरणें फैला रहा है और सत्य तो यह है कि यदि इसे अत्युक्ति न माना जाये और मुझ पर नास्तिकता का आरोप न लगाया जाये तो मैं यह कहना पसन्द करूंगा कि ईश्वर का वास्तविक स्थान दिलाने में महर्षि दयानन्द और उनके अनुयायी आर्य समाज का बड़ा हाथ है और यही उनकी संसार को सबसे बड़ी देन है।

अन्धकार से ज्योति की ओर

श्री पं० वीर वेदश्रमी, महारानी रोड इन्दौर

आज शिवरात्री है । शिव का वृत मैंने ले लिया है । परम शिव के दर्शन का भी वृत ले लिया है । जीवन के अन्तिम क्षणों तक भी इस के लिए प्रयत्न करता रहूंगा । यदि उसके दर्शन गृह को त्यागने से होते होंगे तो वह भी त्याग दूंगा । माता, पिता, भाई बहिन को त्याग कर यदि किसी के पथ निर्देशन में चलना पड़ेगा तो यह भी करूंगा । शरीर के वस्त्राभूषण त्याग कर यदि भस्म भी रमानी पड़ेगी तो भस्म भी शरीर पर रमाऊंगा—और यदि देह त्यागने से भी उसके दर्शन प्राप्त होते होंगे तो इसको भी त्याग दूंगा । यह मेरा दृढ़ निश्चय है । मेरा तो अब वही सर्वस्व है ।

टंकारा के मन्दिरों के शिव तो शिव सच्चे शिव नहीं निकले । अन्य स्थानों के मन्दिरों में तो शिव मिलेंगे ही । वहां नहीं मिलेंगे तो चाणोद में, सिद्धपुर के मन्दिरों में उन्हे ढूंढूंगा । वहां वे कहीं न कहीं होंगे ही । यदि वहां भी न हुआ तो नर्मदा का प्रत्येक पत्थर तो शिव हैं ही, वहां भी न मिले तो काशी, मथुरा, वृन्दावन, हरिद्वार, बद्रीनाथ जाऊंगा । कैलाश पर जाऊंगा । तब तो मेरे शिव मुझे अवश्य प्राप्त हो जावेंगे ।

रात्रि का अन्धकार व्याप्त है । मुझे अपने गृह के त्यागने का अच्छा अवसर है । सब निद्रा-ग्रस्त हैं । माता जी आप को प्रणाम । पिताजी आपको भी प्रणाम । आपका पुत्र आज शिव की खोज के लिए आपको निद्रावस्था में छोड़कर जा रहा है । आशीर्वाद दीजिए । ए— बाल जीवन के साथी मित्रो ! मैं आज जा रहा हूं तुम सबको छोड़कर, तुम्हें बिना मिले । मैं तो अब शिव से ही क्रीड़ा किया करूंगा । वही मेरा सखा होगा । जन्म भूमि टंकारा ! यहां शिव नहीं मिले, अतः तुम्हें प्रणाम ।

अनेक वर्ष व्यतीत हो गये । एक-एक मन्दिर का कोना-कोना छान डाला । नर्मदा का एक-एक पत्थर टटोला । बड़े-बड़े गोल पत्थरों को शिव समझ कर उन्हे सिर पर रखा । उनको बड़ी श्रद्धा और प्रेम से हृदय में प्रतिष्ठित किया । उनकी अराधना अनेक साधनों से की । हरिद्वार की गंगा की प्रवाह में से निकले एक-एक गोल पत्थर को टटोला, देखा—परन्तु कोई शिव न निकला । किसी में भी त्रिलोकी को धारण, पालन और संहार को शक्ति विद्यमान थी ।

वे सब नेत्रहीन थे—देख नहीं सकते थे ।

वे सब श्रोतहीन थे—वे मेरी अराधना क्या सुनते ? वे सब प्राणहीन थे—वे क्या मुझे प्राण एवं जीवन देते ? वे सब आत्महीन थे, जड़ थे—अतः उनसे कैसे ज्ञान का प्रकाश प्राप्त होता ? वे सब हृदयहीन थे । उनमें प्राणों का स्पन्दन नही था—वे निरे जड़ थे. पत्थर थे, निश्चेष्ठ थे और पूजा के बिल्कुल अयोग्य थे—अतः वे सबकी ठोकरें सैंकड़ों वर्षो से खा रहे थे और सदा पैरों से रौंदे जाते रहे ।

मैने सोचा था कि वे स्थितप्रज्ञ हैं । निरीह एवं निष्काम हैं । प्राणों को रोक कर समाधि की स्थिति में स्थित होने से निश्चेष्ट प्रतीत हो रहे हैं । एक न एक दिन वे अवश्य प्रसन्न होंगे । दर्शन देंगे । बोलेंगे और वरदान देंगे । परन्तु मैंने देखा कि उनमें प्राण की ज्योति नहीं थी । अन्धकार था । घोर जड़ता थी । उनमें प्रज्ञा नही थी । ज्ञान नहीं था । ज्ञान के साधन मन, बुद्धि आरि भी उनमें नहीं थे और ज्ञान का आश्रम आत्मा भी नहीं था ।

मैं आत्मवान् हूं—अनात्मा की क्यों उपासना करूं ? ये तो प्रकृति की विकृति के ढेर हैं । मुझे ऐसे नश्वर एवं जड़ शिव की प्राप्ति नही करनी है । ऐसे तो लाखो, करोड़ों शिव भी क्या किसी का कल्याण करेंगे ? मैंने अपनी झोली में तुम सब को व्यर्थ ही उठा कर बोझा ढोया है । अब मैं तुम्हें गंगा प्रवाह में अर्पित करता हूं । तुम आपस में टकरा-टकरा कर, लुढकते-लुढकते अपने नश्वर शरीर से बालू के कण उत्पन्न करते हुए कुछ ही काल में अपने अस्तित्व को भी खो बैठना ।

अब क्या करूं ? कहां जाऊं ? कहां शिव मिलेंगे ? उन्हें तो प्राप्त करना ही है । शरीर थक गया है । मार्ग प्रतीत नहीं होता । अहा ! हरिद्वार के उत्तर में विराजमान हिमालय को मालाये अत्यन्त सुशोभित हो रही हैं । इनके हिमाच्छादित धवल शिखर अत्यन्त शोभायमान प्रतीत हो रहे हैं । इन पर्वत मालाओं में से भगवान भास्कर, सहस्त्रांशु इस पृथिवी के तुषार सिक्त हरित परिधान को जब अपनी किरणों से प्रकाशित करते हैं तब जगत में नव उल्लास प्रतीत होता है । इन पर्वत मालाओं में वह शिव अवश्य विचरण करते होंगे । एक-एक पर्वत, एक-एक वन, एक-एक गुफा जाकर देखूंगा और शिव को—अपने आराध्य देव को प्राप्त करूंगा ।

बहुत दिन बीत गये । यहां पर भी शिव जी नहीं मिले । अब क्या करना ? सुना है शिव तो योगी है, परम तपस्वी हैं और शरीर पर भस्म लगाए रहते हैं । क्यों न किसी ऐसे व्यक्ति के पास जाकर उससे शिव का पता प्राप्त करूं ? ये सामने ही शिव के तुल्य बड़ी-बड़ी जटाओं वाले अनेक साधु हैं ! इनकी जटायें प्रकट कर रही है कि ये पुराण पुरुष हैं । सारे शरीर पर शोभायमान हो रही है । त्रिशूल भी इनके हाथ में है । वाघाम्बर कटि प्रदेश में विराजमान है । इस बर्फ में भी नग्न शरीर है । अवश्य ही शिव जी की ही यह मण्डली है । इनमें कोई-न कोई शिव होगा ही ।

सन्त मण्डली को प्रणाम । मुझे भी अपनी मण्डली में दीक्षित कर लीजिए । मुझे शिव के दर्शन कराइए आप लोगों ने तो उनके दर्शन किये ही होंगे । आपके शब्द-शब्द में शिव का नाद गूंज रहा है । आपके अंग-अंग से शिव की छवि प्रकट हो रही है । आप साक्षात शिव

प्रतीत हो रहे हैं और यह सारी मण्डली शिव जी में ही दीक्षित प्रतीत हो रही है। आप सब शिव की सेवा से अपने जीवन को सफल कर चुके हैं। मेरा भी जीवन सफल कर दीजिए। मैं आपके ही साथ रहूंगा। मुझे अपनाइये। मैंने सब को छोड़कर अब आपका आश्रय ग्रहण किया है। मेरा जीवन सफल हो जाएगा।

लीजिये, सब वस्त्र फेंक देता हूं। मैं भी भस्म रमा लेता हूं। अहा! अंग-अंग में भस्म! क्या ऐसे ही शिव रहते हैं?—मैं भी ऐसा ही रहूंगा। शिवजी वाघाम्बर पहनते हैं—मैं भी वाघाम्बर धारण करूंगा। त्रिशूल को भी धारण करूंगा। हां, अब सब ठीक हो गया। परन्तु तुम्हारे हाथ में और यह क्या है। तुम्हारे मुख से किस का धुआं निकल रहा है? गांजा है!! और वह क्या घोट छान रहा है?—भांग है!! और वह आग में रखकर खांसता-खांसता क्या पी रहा है? संखिया है!—अरे! मैं तो शिव को इनमें ढूंढ रहा था। मैं कहां आ फंसा। ये तो जीवित ही जड़ है। आत्मवान् होकर भी अनात्मवत् हो रहे हैं। मानव जीवन को व्यर्थ ही नष्ट कर रहे हैं। इनका संग नहीं करना चाहिए। यहां रहना भी योग्य नहीं। अन्य तपस्वियों की शरण में जाना चाहिए।

एक-एक करके सबको देख लिया। हिमालय की कन्दरायें छान डालीं। अनेक योगियों को ढूंढा। उनसे मिला। उनका शिष्य बना। उन की सेवा की। कुछ योगियों से योग की अंगभूत क्रियाओं का ज्ञान प्राप्त किया। उनका अभ्यास भी किया। योगिवर स्वामी ज्वालानन्द जी एवं पूर्णानन्द जी तुम धन्य हो। तुमने योग की क्रियाएं सिखाकर मुझे निहाल कर दिया। योग साधन में निपुण बनाया। अब तो शिव इसी देह रूपी मन्दिर में हृत्पुण्डरीक पर विराजमान हैं। कब तो उनके दर्शन अनेक अहोरात्रों की समाधि लगाकर करता रहता हूं। वहां पर हृत्पुण्डरीक में ओम् की ध्वनि होती रहती है। उसका गुंजन कांसे के घण्टी की ध्वनि होती रहती है। उसका गुंजन कांसे के घण्टे की ध्वनि के तुल्य गुंजायमान होता रहता है। पञ्चम स्वर में वह ध्वनि घण्टे के तुल्य हो जाती है। षड्ज स्वर में वह शंख ध्वनि के तुल्य हो जाती है। उस ध्वनि को ताल के साथ मेरा मन बाह्य वृत्तियों से अन्तर्मुख होकर आनन्द में निमग्न रहता है। अहा! सर्वत्र आनन्त ही आनन्द! वही सर्वत्र अब मुझे दीख रहे हैं जो प्राप्त करना था, वह प्राप्त हो गया। अब देह त्याग कर उसी शिव में सदा रमण करूंगा। अब इस संसार से क्या काम?—इस देह का भी क्या काम? यह तो साधन था। साध्य अब प्राप्त हो गया है।

हां, अब मैं मोक्ष प्राप्त करूगा। अकेला ही जाऊंगा। सांसारिक जीव अज्ञान में पड़े हैं—पड़े रहने दो। ये जड़ उपासना द्वारा अपने जीवन को नष्ट कर रहे हैं—करने दो। ये वेद विमुख हैं—रहने दो। मुझे क्या? प्राणों को ब्रह्म रन्ध्र से, सूर्य-द्वारद्वारा इन्द्रयोनि 'मुंजादि-दिवेषिकां' धैर्य पूर्वक छोड़कर मुक्त होता हूं। शिव के दर्शन कर लिये। उस दिव्य ज्योति का साक्षात्कार कर लिया। परम प्रभु परम गुरु प्राप्त हो गये। उनका साक्षात्कार कर लिया। हां, एक काम रह गया है। परमात्मा की कल्याण-कारिणी, पावमानी वेदवाणी का बाल्य-काल में अध्ययन किया था। परन्तु उसके गूढ़ रहस्यों को कोई बताते वाला न था। अब जब

परम गुरु परमात्मा ही प्राप्त हो गये हैं तो क्यों न एक बार चारों वेदों की आवृत्ति उनके सम्मुख समाधि में करलूं और उनके अर्थज्ञान भी प्राप्त करके ज्ञानी, योगी और उपासक बन कर सम्पूर्ण योग्यता से मोक्ष प्राप्त करूं ?

वेद में तो—"कृण्वन्तो विश्वमार्यम"—संसार को आर्य बनाते हुए कर्म करने का उपदेश है। मैंने तो अभी किसी को आर्य बनाया ही नहीं- अत: अभी मोक्ष में जाने से वेद की आज्ञा का उल्लंघन होगा। "देवत्तं ब्रह्म गायत" यह मन्त्र वाक्य वेद के गान एवं प्रचार करने के लिये प्रभु कह रहे हैं। मैंने ती अभी वेद का प्रचार कुछ किया ही नहीं, तो फिर मोक्ष में जाना व्यर्थ है। "संश्रुसेन गमेमहि माश्रुतेन विराधिषि" यह ऋचा वेदानुसार आचरण कहने और उसका कभी उल्लंघन न करने का आदेश दे रही है तो फिर मोक्ष में जाने से अभी क्या लाभ ? प्रभु की आज्ञा पूर्ण करनी चाहिए। इसलिए मैं मानव जाति को वेद का सन्देश दूंगा। वेद का प्रचार करूंगा। जगत् को आर्य बनाऊंगा। हे प्रभु ! आपकी वेदवाणी के प्रचार के लिये अब शेष जीवन अर्पण है। हे प्रभु ! तुम्हारे प्रति संसार में घोर अज्ञान फैला हुआ है। वेद को मानव जाति भूल चुकी है, अत: तुम्हारे ही अर्पण इस जीवन केस क्रियाकलाप हैं । मेरा प्रत्येक विश्वास अब तुम्हारे अर्पण है। शरीर का रोम-रोम अर्पण है। मेरा भोजन ग्रहण करना, तुम्हारे कार्य के लिए है। मेरा सोना-जागना सब तुम्हारे ही अर्पण है।

जीवन में अहर्निश अब यही ज्ञान-यज्ञ होता रहेगा। इस यज्ञ से समस्त संसार वेद के सौरभ से सुरभित होगा। हे प्रभु ! अभी तक मैं तुम्हारे पास आने को आतुर था, परन्तु अब मैं तुम्हारा भी हूं और तुम्हारी प्रजा का भी हूं। तुम जब मुझे बुलाने के लिये आतुर होंगे, तब मैं इस नश्वर देह को छोड़ कर तुम्हारी शरण में आ जाऊंगा। अभी तो मैं—'संस्थापनार्थ'—सर्वजन हिताय'—अपने जीवन को वेदज्ञा की पूर्ति के लिए अर्पित करता हूं।

समय का आह्वान

ले०—श्री लाखनसिंह भदौरिया सौमिन)

समय तुमको जगाता है, नयी गीता सुनाता है।
उठाता क्रान्ति की लपटें ! नया तूफान आता है।
पडा जो राह में सोता, चरण की धूल बन जाता—
उसे आंधी उड़ा देती— नहीं कोई बचाता है।
घरौंदे टूटने वाले, बबूले फूटने वाले।
खड़े विस्फोट के मुंह पर— नहीं क्यों होश आता है !
संभलने की घड़ी आयी, बदलने की घड़ी आयी।
जवानी जब उबलती है—जमाना रंग लाता है।
विलासों में न खो जाओ, समय के साथ हो जाओ !
जहां दम तोड़ती सांसें, अन्य डंका बजाता है—
समय तुमको जगाता है, नयी गीता सुनाता है।

बोध रात्रि

(ले०—कवि कस्तूरचन्द 'घनसार' कवि कुटीर पीपाड़ शहर राज०)

(१)

आती न अन्धेरी शिव-यामनी बताने शिव,
भावना न होती शिव-वृत को रखाते ना !
होते न यथार्थ शिव-ज्ञान जब देख भूषा,
भागते न सुक्ख छोड़ सत्य शिव पाते ना !!
कृत्रिम कला को जड़-मूरति पाहन शिव,
जानते उसी को शिव-सत्य को न गाते ना !
'घनसार' होते न सुधार और उद्धार आज,
मूल शिव-दर्शन को पितु साथ जाते ना !!

(२)

जानते न आज होगा, मूल को विशेष ज्ञान.
नकल में असल की खोज हेतु जाएंगे !
नहीं था विचार ऐसा, सत्य का प्रकाश होगा,
पाखण्ड को मूल जब मूल से हटायेगा !!
घूम-घूम बिहड़ वनों में गिरि कन्दरों में,
तड़फ यही थी पता शिव का लगाएंगे !
टंकारे को छोड़ मूल संन्यासी न होते तब,
'घनसार' जानते न वेद विद्या पाएंगे !!

(३)

आर्यवर्त्त देश में जो जन्म अनन्त लहे,
किया न विचार ऐसा सत्य शिव रूप का !
कई वर्ष बीते शिव रात्रि ये आती रही,
किन्तु नहीं किया ज्ञान शिव देव भूप का !!
पूजते मनाते चले शिव जड़ मूरति को,
ध्यान न लगाया शिव अमर अनूप का !
'घनसार' भ्रम मांही भ्रमित रहे थे लोग,
रहे टर्रराते ज्यों मेंढक भ्रम कूपका !!

(४)

शिव को न जाना-माना पाहन पूजक शिव,
पाहन के साथ सभी साधन जुटाया था !
चले सब एक पथ एक-एक एक साथ,
स्वयम् न विचार किया विवेक न पाया था !
जड़ के आधीन रहे चेतन स्वरूप होके,
वेद-ज्ञान बिना ध्यान जड़ में लगाया था !!
एक ही हुआ है, शिव देव को बताने वाला,
वही दयानन्द सत्य शिव को दिखाया था !!

बोध पर्व का प्रसाद

(ले०—श्री विद्या सागर 'सुमन' शास्त्री आर्य समाज हांसी (हरियाणा)

संसार को दुःखी देखकर सिद्धार्थ के मन में विचार पैदा हुआ कि उन उपायों की खोज की जाए, जिनसे दुःख की निवृत्ति हो जाये। लाठी के बल एक वृद्ध पुरुष को धीरे-धीरें चलते और मृतक को श्मशान में ले जाते हुये देखकर सिद्धार्थ पर जीवन की क्षण भंगुरता और मृत्यु की बीभत्सा अंकित होकर अमर पद प्राप्त करने की इच्छा जागृत हुई। यों तो वृद्धावस्था दुःख और मृत्यु दिन-प्रतिदिन की घटनाएं हैं जिन्हें मनुष्य देखता और सुनता है। परन्तु यही बातें संस्कारी बच्चों और जनों के लिये असाधारण घटनाएं बनकर उनकी जीवन धारा को बदल कर उन्हें महापुरुष बना देती हैं। इन्ही साधारण सी दिखने वाली घटनाओं ने सिद्धार्थ से अपना राजपाठ, अपनी प्यारी पत्नी और पुत्रादि तथा परिवार का परित्याग कराके उन्हें सद् मार्ग और सत्ज्ञान की खोज करने के लिए घर से बाहर निकल जाने को विवश कर दिया और उन्हें युग प्रवर्त्तक महान् पुरुष बना दिया।

न्यूटन के आने से पहले न जाने कितने लोगों ने पृथ्वी पर फल गिरते हुए देखा होगा लेकिन किसी के मन में यह प्रश्न नही उठा कि फल जमीन में ही क्यों गिरते हैं आकाश की ओर क्यों नही चले जाते। फलों का वृक्ष से गिरकर पृथ्वी पर आना यह उसके लिए असाधारण बात थी। जब न्यूटन ने एक फल को पृथ्वी पर गिरते हुए देखा तब ही उसके मन में विचार उत्पन्न हुआ। लेकिन उन्होंने दूसरे लोगों की नजरों से नहीं देखा बल्कि उसको अपनी नजर से एक असाधारण घटना के रूप में लिया और यही साधारण घटना उनके लिए असाधारण बन गयी और उन्होंने आकर्षण शक्ति के नियम की खोज की। जब राजा राम मोहनराय ने अपनी भाभी के बलात् सहभरण की बीभत्स घटना देखी तो उनकी आत्मा पर इतनी प्रबल प्रक्रिया हुई कि उन्हें उस समय तक शान्ति प्राप्त न हुई जब तक उन्होंने अपने प्रयत्नों द्वारा सति प्रथा को वैधानिक रूप से समाप्त न करा दिया।

अनगणित मनुष्यों ने देवाओं की मूर्तियों पर चूहों को चढ़ते देखा होगा। जब बालक मूलशंकर ने ऐसा दृश्य देखा तो उनके हृदय पर इस का एक क्रान्तिकारी प्रभाव पड़ा। उन्होंने समझ लिया कि यह सब लोगों को बहकाने का साधन है। ऐसा विचार आते ही वह सच्चे शिव(ईश्वर) की खोज के लिये आतुर हो गये। इस साधारण सी दिखने वाली घटना ने अपना अमिट प्रभाव उनके ऊपर छोड़ा और जिसने उन्हें वैराग्य धारण करने तथा माता-पिता के आतुल स्नेह को तोड़ने के लिये विवश कर दिया। इसी घटना ने मूलशंकर को युग प्रवर्त्तक महर्षि बना दिया।

यह शिवरात्रि की रात भारतवासियों के लिए सौभाग्य की रात थी। कहा भी है :—

रात तो हर रोज आती है सुलाने के लिए।
पर यह निराली रात थी हमको जगाने के लिए॥

इस कल्याणकारिणी रात्रि के प्रभाव से एक दिव्य ज्योति जली जिसने भारत ही नहीं बल्कि सारे संसार को प्रकाशमान किया। आर्यो ! आओ आज हम व्रत ग्रहण करें कि ऋषि दयानन्द द्वारा जलायी हुई ज्योति को बुझने न दें बल्कि इसकी लौ और बढ़ाते जाएं ताकि संसार का प्रत्येक व्यक्ति इस ज्ञान ज्योति से लाभ उठा सके। न जाने कितनी शिवरात्रियां आयी हैं और कितनी ही आयेंगीं। क्या हमने इतनी शिवरात्रियों में एक भी शिवरात्रि का लाभ उठाया है ? क्या हम सच्चे व्रती बन कर ऋषि ज्योति को जला रहे हैं। आओ ! आज हम सभी सच्चा व्रत लें कि कम-से-कम दस रिश्ते-दारों तथा सम्बन्धियों को ऋषि प्रणीत अमर ग्रन्थ 'सत्यार्थ प्रकाश' तथा ऋषि जीवन को वितरत करेंगे जो वेद सम्मत हैं और उन्हें उन पुस्तकों को पढ़ने के लिए प्रोत्साहित करेंगे। तभी हमारा शिवरात्रि पर्व का व्रत सच्चा व्रत हो सकता है। ऐसा व्रत लेकर फिर इसे क्रियात्मिक रूप देने पर हम स्वामी दयानन्द व उनके कार्यों को पूर्ण कर सकेंगे अन्यथा नहीं। इसलिए वैदिक धर्म के प्रचार के लिए और प्रसार के लिए तथा बुराइयों को समाप्त करने के लिए आज हमें व्रत लेना ही होगा।

"शिवरात्रि ही बोधरात्रि

(ले०—श्री सत्यपाल आर्य, वैदिक विद्या पीठ, बदायूं उ० प्र०)

यदीय सद्धर्म पथाव लम्बिनी,
महत्वदीक्षा भुवने विराजते।
विराजते विश्वतले स एव ना
यथा दयानन्द सरस्वती यतिः॥

उन्नीसवीं शताब्दी इतिहास का घोरत्तम अन्धकारमय युग था। भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति समाप्त प्रायः थी। कहीं विधवाओं का करुण क्रन्दन सुनाई पड़ रहा था, कहीं अनाथ बालक बिलबिला रहे थे। स्त्री जाति की स्थिति बड़ी शोचनीय थी। वेद का स्थान मनुष्य कृत ग्रन्थों ने ले लिया था और यह घोषणा हो चुकी थी कि वेद को शंखासुर ले गया है। प्रातदिन सूर्योदय से पहले सहस्रों गौओं पर आरा चला दिया जाता था।

ऐसे घटाटोप अन्धकार युग में अनेक गुण विभूषित एवं अलंकृत युग पुरुष महर्षि दयानन्द सरस्वती मानवमात्र के कल्याण के लिए फाल्गुन वदी दशमी सम्वत् १८८१ तदनुसार शनिवार १२ फरवरी सन् १८२५ को भारतवर्ष के पश्चिम में गुजरात प्रान्त में धरांगधरा नामक जिले की सीमा पर बहती हुई एक नदी के किनारे पर बसे एक मोरवी नामक ग्राम से कुछ मील दूर टंकारा ग्राम में अवतीर्ण हुए। इनका जन्म नाम मूलशंकर था। जब ये १८ वर्ष के हुए

तो पिता के कहने पर इन्होंने शिवरात्रि का व्रत रखा। मन्दिर में उपस्थित सभी भक्तों को निद्रा देवी ने मूर्छित कर दिया, परन्तु मूलशंकर को नींद कहां ? उन्हें भय था कि निद्रा आने से व्रत भंग हो जाएगा। शिवदर्शन के लिए बड़ी उत्सुकता से नयन पसारे हुए शिवमूर्ति को निहार रहे थे। इसी समय इन्होंने आश्चर्य से देखा कि कुछ क्षुद्र मूषक बिलों से निकल कर, शिवपिण्डी पर चढ कर उछल-कूद मचाने तथा दण्ड पेलने लगे और नैवेद्य को आनन्द से खाने लगे और मल-मूत्र से उस पिण्डी को भी अपवित्र कर दिया। इस दृश्य को देखते ही मूलशंकर के हृदय में ज्ञान ज्योति का प्रकाश हो गया। यही 'आत्मबोध' व 'ऋषिबोध' कहा जाता है। यही स्वामी दयानन्द का धार्मिक जन्म था। वस्तुतः इस शिवरात्रि ने ही दयानन्द को बोध प्रदान किया था और वही दयानन्द के जीवन भर के मूर्ति पूजा के विरुद्ध विकट संग्राम का आदि कारण थी। इसीलिए इसे आर्य समाज के इतिहास में ' शिवरात्रि को ही दयानन्द-बोध रात्रि" कहते हैं ।

महर्षि दयानन्द की दो अभिलाषाएं थीं—एक सच्चे शिव की प्राप्ति और दूसरी मृत्यु महारोग की महौषधि ढूंढ कर मृत्युञ्जय बनना। उन्होंने विद्वज्जनों और इष्टमित्रों से सुन रखा था कि सच्चे शिव की प्राप्ति और मृत्युञ्जय बनने के लिए मृत्यु यन्त्रणा से त्राण पाने का उपाय योग है, अतः वे योगियों की खोज में प्रवृत्त हुए और योग क्रिया पर पूर्ण अधिकार भी प्राप्त किया परन्तु शान्ति न मिली। अन्त में स्वामी जी मथुरा में पहुंचे और वहां गुरु विरजानन्द जी से इन्होंने यथार्थ ज्ञान प्राप्त किया। सोना, दिव्य कुन्दन बन गया, जिसने न केवल भारतवर्ष में ही अपितु सम्पूर्ण विश्व को ज्ञान ज्योति से आलोकित कर दिया।

स्वामी दयानन्द अपने ढंग के अकेले महापुरुष थे। वे ऐसे देवता थे जिन्होंने प्यार का मन्त्र देकर भेदों को मिटाया और जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में ऐसा मार्ग-दर्शन दिया जो युक्ति तर्क और ज्ञान की कसौटी पर खरा उतरता है। स्वामी दयानन्द का यह दृढ़ विश्वास था कि जब तक मनुष्य को मनुष्य से अलग करने वाली भेद भावों की प्रतीक यह मजहब की दीवारें रहेंगीं, जब तक मनुष्य इस्लाम, ईसाइयत, यहूदी और बौद्ध आदि मतों में बंटा रहेगा, तब तक संसार में झगड़े रहेंगे। इसलिए उनकी इच्छा थी कि इन सभी मजहबों की हस्ती को, जिन्होंने न जाने कितने इन्सानों का खून बहाया है, धरती से मिटा दिया जाए और मनुष्य बस मनुष्य बनकर धरती पर रहे।

स्वामी दयानन्द जी दया और आनन्द के सागर थे। मानव मात्र के प्रति मां के ममता भरे हृदय के समान वे सभी पर अपना दुलार लुटाते रहे। ऋषि दयानन्द सत्य के अनुपम उपासक थे। वे सत्य के लिए उभरे, सत्य के लिए ही संघर्ष किया, ईंट पत्थर खा कर, विष प्याला पीकर भी वे अपनी पूरी शक्ति से सत्य का उद्घोष करते रहे।

वास्तव में आधुनिक युग को प्रकाश की पहली किरण देने वाले महापुरुष स्वामी दयानन्द ही थे। वे प्रत्येक पहलू से महान् क्रान्तिकारी थे। उनकी क्रान्ति सर्जक थी, प्रेरक थी, शान्ति और प्रेम के अस्त्र से बुद्धि का विकास उनका इष्ट था। वे क्रान्ति चाहते थे, राज्य की नहीं, न नाम की अपितु विचारों की। प्रत्येक मनुष्य के सोचने का ढंग बदलना ही उनका लक्ष्य था। उन्होंने

धरती के प्रत्येक मानवों को ऐसा रास्ता दिखाया जिस पर चल कर मानव दुःख और अशान्ति से छुटकारा पाकर प्रेम और शान्ति तथा आनन्द से हंसता हुआ अपनी जीवन यात्रा पूरी कर सकता है। उन्होंने मानव मात्र के लिए वेद सन्देश सुनाया। उन्होंने वेदों को अपूर्व पाण्डित्य से यह सिद्ध कर दिखाया कि वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है और उस में कोई भी बात सत्य, विज्ञान, युक्ति और प्रकृति नियमों के विपरीत नहीं है।

जयतु जयतु लोके वेद सूर्य प्रकाशो—
भवतु भवतु पश्चादार्य धर्म प्रभावः।
नयतु नयतु दूरं न्यायकारी दयालु—
नेकमत बहुरोगं नून माय्यांधिवासात्॥

सत्य का अवतार 'ऋषि दयानन्द'

लेखक—श्री वीरेन्द्र भारती

महाकवि भभूति ने एक स्थान पर सामान्य मनुष्यों और ऋषियों कोटि के लोगों में भेद वर्णन करते हुये कहा है कि सामान्य लोगों की वाणी में नई सृष्टि करने की शक्ति नहीं होती। उनकी वाणी जो कुछ संसार में हो रहा है उस का वर्णन कर सकती है किन्तु प्रथम कोटि के ऋषियों में शक्ति होती है कि उन की वाणी जो कुछ कहती है संसार में वैसा होकर रहता है। उनकी वाणी में नई सृष्टि करने की शक्ति होती है।

ऋषि दयानन्द उसी कोटि के ऋषि थे। वो जैसा कहते थे वैसा होकर रहता था। उनकी वाणी व्यर्थ नहीं जाती थी। ऋषि ने अपनी मेघ गम्भीर वाणी में गर्जन कर भारत वासियों से कहा—"ऐ भारत वर्ष के लोगो! यदि अपना कल्याण चाहते हो तो तुम्हें जन्म की वर्ण व्यवस्था के सिद्धान्त को त्यागना होगा। छूआछूत को छोड़ना होगा। बाल-विवाह की प्रथा को दूर करना होगा। स्त्री शिक्षा का प्रचार करना होगा। पुरुषों की तरह स्त्रियों को भी पुर्नविवाह का अधिकार देना होगा। श्राध्द और मूर्ति पूजा आदि से बचना होगा। विधर्मियों की शुद्धि करके उन्हें धर्म में दाखिल करने के सिद्धान्त को स्वीकार करना होगा। समुन्द्र पार करके विदेशों में न जाने जैसी बेकार की बातों को परे फेंकना होगा। स्वदेशी वस्तुओं के प्रयोग को अपनाना होगा। प्राचीन इतिहास को गौरव के साथ देखना होगा। आर्य भाषा (हिन्दी), संस्कृत और वैदिक साहित्य के अध्ययन पर विशेष बल देना होगा" इत्यादि अनेक बातें ऋषि दयायन्द ने कही थीं। ऋषि दयानन्द की कही हुई सब बातें भारत वासियों को करनी पड़ रही हैं। दिन प्रतिदिन देश उनकी कही हुई बातों को अधिक से अधिक स्वीकार करता जा रहा है और उनको प्रयोग में लाने का प्रयत्न करता जा रहा है। ऋषि ने जैसा कहा वैसा राष्ट्र को करना पड़ा। आज ऋषि की वाणी के

पीछे पीछे नई सृष्टि हो रही है।

ऋषि दयानन्द इस प्रकार के ऋषि कैसे बन गए थे, उनकी वाणी में यह नई सृष्टि करने का गुण कहां से आ गया था ? महर्षि पातञ्जली ने योग दर्शन में कहा है जो लोग साधना द्वारा सत्य को अपने जीवन में पूर्ण रूप से प्रतिदिन कर लेते हैं उन में यह शक्ति पैदा हो जाती है कि वो जैसा कह देते हैं वैसा संसार में होने लगता है।

ऋषि में आरम्भ से ही सत्यनिष्ठा पाई जाती है। वे जीवन भर सत्य के पुजारी रहे। उनके जीवन में सत्य प्रतिष्ठित हो गया था। उन्होंने बचपन में शिव महात्मा की कथा सुनी। वह उन्हें ठीक लगी। माता पिता के मना करने पर भी शिवरात्रि का व्रत धारण करने केलिए उद्यत हो गये और पूरे जोर से व्रत का पालन किया। जब नींद के कारण मन्दिर के पुजारी तक सो रहे थे तब अकेला बालक मूलशंकर जाग रहा था। उसी रात जब चूहे वाली घटना से शिव के महात्तम में विश्वास ढीला हुआ तो पिता के क्रोध की परवाह न करते हुए मन्दिर से वापिस चले गए और उपवास तोड़ दिया।

जब बहिन और चाचा की मृत्यु से सन्सार असार दिखाई देने लगे तो सच्चे शिव की तलाश में घर छोड़ कर माता पिता के मोह की परवाह न करके सारा जन्म ब्रह्मचारी रहने का निश्चय करके सन्यासी बन गये और योगियों की खोज में वर्षों भटकते रहे।

एक बार बरेली में प्रचार कर रहे थे। एक व्याख्यान के पीछ कुछ भक्तों ने कहा कि ईसायत राजधर्म है। उसका खण्डन ना किया करे तो ऋषि हंस बोले "कलक्टर ने कुछ कहा होगा।" अगले दिन व्याख्यान के बीच में कड़क कर कहा, "मुझे सच्चाई का प्रचार करने से रोकने के लिये कलक्टर साहिब की नाराजगी का भय दिखलाया जाता है। मैं कलक्टर तो क्या वायसराय और सम्राट से भी नहीं डरता हूं। दुनिया के शासक मेरे शरीर को मार तो सकते हैं, मैं उस वीर पुरुष को देखना चाहता हूं जो आत्मा मार सकें।

एक बार ऋषि ने किसी मुकद्दमे चलाये जाने के सिलसिले में कहा कि 'यदि मुझे तोप मुंह पर बांध कर कहा जाए कि सत्य का प्रचार करना छोड़ दो तो मैं तोप से उड़ जाना स्वीकार करूंगा। परन्तु सत्य के प्रचार से नहीं रूकूंगा' यह थी ऋषि दयानन्द की सत्य प्रति भावना।

इस प्रकार अपने जीवन को प्रतिष्ठित कर लेने के कारण भगवान दयानन्द ऋषि बन सके थे। आओ हम शिवरात्रि के शुभ अवसर पर प्रण करें कि उसी मार्ग पर चलेंगे जो हमें महर्षि दयानन्द नेबतलाया था और इस दिन पर यह भी प्रण करें कि हम आर्य समाज को संगठित करते हुये उन बाधाओं का मुकाबला करेंगे जोकि अनार्य लोगों द्वारा डाली जा रही हैं। परमात्मा हमें अनुशासन में रहकर महर्षि के बताये मार्ग पर चलने की प्रेरणा प्रदान करे।

आर्य समाज की मान्यताएं

BELIEFS & FAITHS

१. ईश्वर, जीव तथा प्रकृति तीनों अनादि हैं। ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, जीव मरणरहित चेतन तथा प्रकृति के अवयव सदैव रहने वाले हैं।

२ वेद ईश्वर का ज्ञान तथा अपौरषेय हैं अर्थात मानव रचना नहीं हैं। ईश्वर ज्ञान होने के कारण वेद स्वतः (अपने आप में) प्रमाण तथा वेदानुकूल अन्य आर्ष ग्रन्थ परतः प्रमाण हैं।

३ ईश्वर की आज्ञा का यथावत् पालन और सबके हित में पक्षपात रहित न्याय करना तथा कर्तव्य कर्मों को उत्साह के साथ करना ही धर्म है।

४ इसी जीवन में प्राप्त सुख विशेष स्वर्ग तथा दुःख विशेष नरक है। सब बुरे काम और जन्म मरणादि दुःख सागर से छूट कर सुख रूप परमेश्वर को प्राप्त हो के सुख ही में रहना मुक्ति है। ईश्वर उपासना अर्थात योगाभ्यास धर्मानुष्ठान, ब्रह्मचर्य से विद्या प्राप्ति, आप्त विद्वानों का संग, सत्य विद्या, सुविचार और पुरुषार्थ आदि मुक्ति के साधन हैं।

५ मनुष्य उसी को कहना कि जो मननशील होकर स्वात्मवत् अन्यों के सुख-दुख और हानि-लाभ को समझें, अन्यायकारी बलवान से भी न डरे और धर्मात्मा निर्बल से भी डरता रहे।

६ तीर्थ वह होता है कि जिससे मनष्य दुःख सागर से पार उतरे। अर्थात सत्यभाषण, विद्या, सत्संग, यम आदि योगाभ्यास, पुरुषार्थ, विद्या-दानादि शुभ कर्म ही तीर्थ हैं।

७ पुरुषार्थ प्रारब्ध से बड़ा है क्योंकि इससे संचित प्रारब्ध (किस्मत) बनते हैं।

८ विद्वानों का सत्कार, विज्ञान एवं शिल्प (Science and Technology) का प्रसार, विद्यादि शुभ गुणों का दान तथा अग्निहोत्रादि जिनसे वायु, वृष्टि, जल, औषधि (Medicine) की पवित्रता होकर प्राणीमात्र को सुख यज्ञ के द्वारा ही सम्भव है।

९ जिससे विद्या, सभ्यता, जितेन्द्रयता आदि में वृद्धि हो और अविद्या आदि दोष छूट जावें वही शिक्षा (Education) है।

१० धर्माचरण पूर्वक ब्रह्मचर्य से विद्या ग्रहण तथा सत्य के ग्रहण करने एवं असत्य के त्यागने की वृत्ति को ही शिष्टाचार (good conduct) कहते हैं।

११ माता, पिता, आचार्य, अतिथि और पति-पत्नी ये पांचों मूर्तिमान देव हैं। जिनके संग मनुष्य देह की उत्पत्ति, पालन, सत्य शिक्षा, विद्या और सत्योपदेश की प्राप्ति होती है। ये ही परमेश्वर को प्राप्त होने की सीढ़ियां हैं।

१२ सामाजिक वरीयता का आधार वर्णाश्रम व्यवस्था का है अर्थात, गुण, कर्म एवं स्वभाव अनुसार मान-सम्मान।

१३ मनुष्य जीवन का लक्ष्य धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष प्राप्ति है।

१४ सर्वथा आलस्य छोड़कर उत्तम व्यवहारों की सिद्धि के लिए मन, शरीर, वाणी और धन से अत्यन्त उद्योग करना ही पुरुषार्थ कहलाता है।

May the grace of the Almighty God and the consent and co-opration of the learned soon spread these doctrines all over the world to facilitdate, every body's endeavour in the advancement of virtue; wealth godly pleasure, and salvation, so that peace properity and happiness may ever reign in the worid.

—Swami Dayananda

आर्य समाज का ऐतिहासिक परिचय

ARYA SAMAJ : HISTORICAL PANORMA

महर्षि दयानन्द के कार्य क्षेत्र में आने से पूर्व भारतीय समाज अनेक रूढ़ियों, कुरीतियों एवं अन्धविश्वासों के कारण अत्यन्त दुःखी तथा अनेक वर्गों में बंटा हुआ था। उसकी इस अवस्था का लाभ विदेशी आक्रांताओं ने सदियों खूब उठाया। उन्होने यहां न केवल शासन किया किन्तु हिन्दुओं को मुसलमान और ईसाई मतों का अनुयायी बनने पर बाधित किया। महर्षि दयानन्द ने अपने गुरु स्वामी विरजानन्द के आदेशानुसार वैदिक संस्कृति के प्रचार का संकल्प लिया। उन्होंने भारतीय समाज की स्थिति को देखकर प्राचीन इतिहास तथा वैदिक मान्यताओं को गौरवमय उज्जवल स्वरूप जनता के सम्मुख रखते हुए उसे आवाह्न दिया— "पुनः वेदों की ओर चलो" (Back to the Vedas)। प्रचलित रूढ़ियों, कुरीतियों तथा अन्धविश्वासों का खण्डन करते हुए वेदानुकूल तथा सृष्टिनियम अनुसार सिद्धान्तों को मानने का प्रचार किया। वैदिक संस्कृति के प्रचार एवं प्रसार हेतु उन्होंने ७ अप्रैल सन् १८७५ को बम्बई में आर्य समाज की स्थापना की।

पंजाब के आर्यों ने महर्षि दयानन्द सरस्वती की स्मृति में लाहौर में दयानन्द एंग्लो वैदिक स्कूल सन् १८८६ में स्थापित किया। महात्मा हंसराज ने अपने तप, त्याग निष्ठा और दृढ़ संकल्प से न केवल आजन्म डी० ए० वी० आन्दोलन की सेवा की अपितु अनेक युवकों को समाज एवं राष्ट्र सेवा की प्रेरणा दी। फलस्वरूप ला० लाजपतराय, भाई परमानन्द, भगतसिंह जैसे देशभक्त, प्रि०, सांईदास, मेहर चन्द, दीवानचन्द, देवीचन्द सरीखे शिक्षा शास्त्री

तथा ला० सांईदास, खुशहाल चन्द, ज्ञानचन्द, जैसे समाज सेवी आदि इस श्रृंखला में कार्य क्षेत्र में आए। महात्मा हंसराज जैसे त्यागी, तपस्वी महापुरुषों के खून से सींचा यह पौधा सारे राष्ट्र और विशेषकर उत्तर भारत में बहुत विस्तार ग्रहण कर चुका है तथा जन-सेवा का कार्य सतत कर रहा है।

मेधावी युवक गुरुदत्त विद्यार्थी महर्षि के देहावसान के समय उनकी अपूर्व प्रसन्नता एवं ईश्वर विश्वास को देख कर आस्तिक हुआ। फिर रंग चढ़ा तो इतना कि दयानन्द बन कर ऋषि का अधूरा काम पूरा करने की धुन में केवल २६ वर्ष की आयु में संसार को छोड़ कर चलता बना। वैदिक मान्यताओं के सबल प्रचारक तथा महर्षि दयानन्द के अनन्य भक्त पं० लेख-राम ने सन् १८९७ में एक मतान्ध मुसलमान के हाथों छुरे के वार से वीरगति प्राप्त की। धनी-मानी वकील मुन्शी राम ने पं० गुरुदत्त की भावना को गुरुकुल कांगड़ी स्थापित करके पूरा करने का सफल प्रयत्न किया। उनके तप, त्याग और समाज सेवा के कारण लोगों ने न केवल उन्हें महात्मा मुन्शी राम कहा बल्कि उन्होंने स्वामी श्रद्धानन्द बन कर एक वीर स्वतन्त्रता सेनानी के रूप में महात्मा गांधी के असहयोग आन्दोलन को नेतृत्व प्रदान किया, समाज सेवा, धर्म प्रचार, अछूतोद्धार तथा मुसलमान और ईसाइयों की शुद्धि आदि कार्य-क्रमों को कार्यान्वित किया। पश्चात् शुद्धि आन्दोलन की प्रतिक्रिया स्वरूप एक मुसलमान की गोलियों का प्रहार सहकर शहीद हुए।

जालन्धर में ला. देवराज के सतत् प्रयत्नों तथा स्वामी श्रद्धानन्द के सहयोग से प्रथम कन्या विद्यालय की स्थापना हुई। आर्य समाज ने नारी शिक्षा के इस कार्य को शीघ्र ही राष्ट्रीय स्तर पर स्वीकार कर अनेक कन्या पाठशालाएं खोल दीं। आरम्भ में हिन्दु समाज के कुछ रूढ़िवादी लोगों ने इसका विरोध किया किन्तु पश्चात् मजबूर होकर स्वयं भी इसे अपना लिया। पांव की जूती समझी जाने वाली नारी शिक्षित हो सामाजिक मान का पात्र बन पाई आर्य समाज ने अनाथालय, विधवा आश्रम, वनिता आश्रम, धर्मार्थ औषधालय, उपदेशक विद्यालय तथा संस्कृत विद्यालय दलितोद्धार, शिक्षा के प्रसार तथा धर्म प्रचार हेतु स्थापित किए। आर्य समाज के धर्मोपदेशकों ने रूढ़ियों, कुरीतियों एवं अवैदिक मान्यताओं को समाप्त करने के लिये भाषण, गीत, शास्त्रार्थ और साहित्य रचना के द्वारा ग्रामों, नगरों में जागृति उत्पन्न की। कितने ही पत्र-पत्रिकाओं ने इस काय में अत्यन्त सराहनीय कार्य किया।

सन् १९२५ में आर्य समाज ने अपने प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती की जन्म शताब्दी मथुरा में मनाई। असहयोग आन्दोलन में भाग लेने वाले जहां सबसे ज्यादा आर्य सज्जन थे। वहां क्रान्तिकारी आन्दोलन का संचालन पं० राम प्रसाद बिस्मिल, ठा० रोशन सिंह, पं० गेंदालाल दीक्षित जैसे आर्य वीरों ने किया। स्वामी दयानन्द के आदेशानुसार श्याम जी कृष्ण वर्मा ने विदेशों में जा कर वैदिक धर्म का प्रचार एवं स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए जन-जागरण किया। वैसे तो स्वामी दयानन्द का क्रांतिदूत अमरग्रंथ सत्यार्थप्रकाश तथा उनके जीवन का

सन् १८५७ के लगभग का अज्ञात काल एवं स्वामी विरजानन्द का प्रथम स्वातन्त्रय संग्राम से गुप्त सहयोग ही अपना विशेष स्थान रखते हैं किन्तु आर्य जनता का समय-२ पर विभिन्न राष्ट्रीय आन्दोलनों में अधिकाधिक संख्या में भाग लेकर विदेशी दासता से मुक्त होने का प्रयत्न गौरव की बात है।

निज़ाम हैदराबाद ने अपने राज्य में रहने वाले हिन्दुओं पर अनेक प्रतिबन्ध लगा कर उन की धार्मिक स्वतन्त्रता समाप्त कर दी थी। आर्य समाज ने सन् १९३८ में स्वामी स्वतन्त्रानन्द एवं महात्मा नारायण स्वामी के नेतृत्व में निज़ाम के इस अन्यायपूर्ण व्यवहार के विरुद्ध सफल आन्दोलन किया। निजाम को आर्यसमाज की शक्ति का लोहा मान कर सत्य पक्ष स्वीकार करना पड़ा। सन् १९४१ में लोहारू के नवाब द्वारा आर्यसमाज पर अत्याचारों के कारण स्वामी स्वतन्त्रानन्द कुल्हाड़ियों के आक्रमण से घायल हो कर वीरगति को प्राप्त हुए। सन् १९४७ में पंजाब की रियास्त सिन्ध में सत्यार्थ-प्रकाश पर पाबन्दी लगा दी गई किन्तु आर्य-समाज के आन्दोलन का निर्णय पाते ही इसे समाप्त करना पड़ा। कश्मीर के हिन्दू राजा ने ब्राह्मणों के कहने पर आर्य समाज के प्रचार पर प्रतिबन्ध लगा दिया था किन्तु पश्चात् ईसाई पादरी से ब्राह्मणों के शास्त्रार्थ की असमर्थता पर पं० गणपति शर्मा ने पादरी का सामना कर राजा को ईसाई होने से बचाया। तब राजा ने प्रसन्न हो कर आर्य समाज पर से प्रतिबन्ध तुरन्त समाप्त किया।

जहां आर्य समाज के अनेक महापुरुषों ने शिक्षा, समाजसेवा, राष्ट्रसेवा तथा वैदिक मान्यताओं के प्रचार का कार्य दक्षता पूर्वक किया जहां शिक्षित एवं प्रबुद्ध लोगों के लिए साहित्य रचना भी की। स्वामी वेदानन्द तीर्थ, स्वा० दर्शनानन्द, प्रो० राजा राम, पं० तुलसीराम, पं० चमूपति, इन्द्र विद्यावाचस्पति, पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय, स्वा० समर्पणानन्द, स्वा० ब्रह्ममुनि तथा पं० धर्मदेवविद्या मार्तण्ड आदि विद्वानों ने उच्चकोटि के जीवनोपयोगी साहित्य की रचना की। पं नात्थूराम शंकर शर्मा एवं कविवर प्रकाशचन्द्र जैसे राष्ट्र ख्याति के कवियों ने वैदिक सिद्धान्तों को काव्य रचना कर जनता तक पहुंचाया।

आर्य समाज ने बाहर जा कर अन्य देशों अफ्रीका, मारीशस, मलाया, ट्रिनीडाड आदि अनेक देशों में वैदिक धर्म प्रचार किया और वहां आर्य समाजें स्थापित कीं। इस लक्ष्य को लेकर श्रीभगतराम, महात्मा आनन्द स्वामी एवं डा० सत्यप्रकाश जैसे उच्चकोटि के विद्वान् अनेक देशों का भ्रमण कर, प्रचार कर आये हैं। आर्य समाज के सारे विस्तार को संगठन सूत्र में बांधने हेतु आर्य सार्वदेशिक सभा (अन्तर्राष्ट्रीय सभा) तथा अनेक प्रादेशिक सभाएं कार्य कर रही हैं। वर्तमान समय में आर्य समाज को अपने कार्य को बढ़ाने हेतु स्वार्थ रहित योग्य नेतृत्व की अपेक्षा है।

The most prominent Arya Samajists are at the same time the most influential nastionlist leaders.

—Subhash Chandera Bose

"A definite creed resting upon scriptures of great antiquite and high reputation".

—Sir, Herbert Risley

"The Arya Samaj alone has provided a manly and straight forward creed which is in all essentials thoroughly Hindu's

—Mr. Blunt

उठो आर्यो निद्रा, त्यागो : शिवरात्रि जगाने आई है !

(ले०—श्री रमेशचन्द्र वर्मा एम० ए०)

रात अन्धेरी प्रहर तीसरा, मन्दिर में शिव की माया
भक्त उनींदे लगे लेटने, छाई स्वप्नों की छाया ।
पर बालक इक जाग रहा है, भूखा प्यासा अलसाया ।
रेशम की पीली धोती में आंखें धोता अकुलाया ॥
अन्तर जाग रहा है उसका ऊपर निद्रा छाई है।
उठो आर्यो निद्रा त्यागो शिवरात्रि जगाने आई है ।१।

दीप शिखा की वृति अकंपित आलोकित पिंडी की ओर ।
प्राण हीन है ज्ञान शून्य पर जीवित सी चिन्ता की कोर ।
जागरूक चेतन बालक का चित्त ज्ञानमय दृष्टि अछोर ।
बार-बार शिवलिंग निहारे, उर में अविरल चिन्तन घोर ।
उठते मन में प्रश्न अनेकों फूट रही तरुणाई है ।
उठो आर्यो निद्रा त्यागो, शिवरात्रि जगाने आई है ।२।

कर्षन जी पितु सोते हैं पर इससे क्या उसको डरना ।
उसको व्रत धारण कर है सफल आज जीवन करना ।
लगा मूलशंकर विचराने का स्त्रवित हुआ मन का झरना —
कैसे यह संसार बना है, क्या जीवन है क्या मरना ?
क्यों कर रिश्ते हैं मानव के मात पिता क्या भाई है ?
उठो आर्यो निद्रा त्यागो शिवरात्रि जगाने आई है ।३।

'सूर्य चन्द्र जलवायु बने क्यों, किसने रचा सकल ससार ?
किसकी माया जग में फैली, किस पर सधा भूमि का भार ?
स्वर्ग नरक अरु मोक्ष वस्तु क्या, कैसे हो भव से उद्धार ?
निर्गुण सगुण ब्रह्म कैसा, निराकार है या साकार ?

यों विचार की उथल-पुथल ने हृदय तन्त्री खटकाई है।
उठो आर्यो निद्रा त्यागो शिवरात्रि जगाने आई है।४।

शिव पिण्डी के पास चढ़ावा भक्तों ने रखा आला।
क्षुद्र जन्तु चूहों ने खाकर पल में जूठा कर डाला।
पिण्डी पर फिर चढ़ा एक चूहा कूदा हो मतवाला।
इस कौतुक को देख जगी उस बालक को अन्तर्द्वंवाला।
महानीच मूषक ने देखो कीर्ति पिण्ड की ढाई है।
उठो आर्यो निद्रा त्यागो, शिवरात्रि जगाने आई है।५।

मेघों का गर्जन आलिंगन विद्युत सी चमकी मन में।
ज्यों ताड़ित हो विषम वायु से ज्वर उठा सागर तन में।
बाल सूर्य के चिदाकाश में अगणित प्रश्न उसे क्षण में।
अन्धकार में दीप जले ज्यों, तारे चमक उठे वन में।
बोध सत्य का हुआ हृदय में विमल भावना पाई है।
उठो आर्यो निद्रा त्यागो शिवरात्रि जगाने आई है।६।

'अरे वही, क्या महादेव हैं गाते मानव जिनका गान ?
पूर्व समय के ऋषि मुनि भी क्या धरतेथे इनका भी ध्यान ?
नहीं नही यह ढोंग निरा है महादेव का यह अपमान।
प्रस्तर की निर्जीव मूर्ति यह क्रियाहीन नश्वर निष्प्राण।
दिव्य मूर्ति उस बालक ने अन्तर की ज्योति जगाई है।
उठो आर्यो निद्रा त्यागो शिवरात्रि जगाने आई है।७।

——

दयानन्द वचन

— मनुष्य का आत्मा सत्य असत्य का जानने वाला है। तथापि अपने प्रयोजन की सिद्धि, हठ, दुराग्रह और अविद्या आदि दोषों से सत्य को छोड़ असत्य में झुक जाता है।

— मनुष्य उसी को कहना कि मननशील हो कर स्वात्मवत् अन्यों के सुख दुःख और हानि लाभ को समझे अन्यायकारी बलवान से भी न डरे और धर्मात्मा निर्बल से भी डरता रहे।

— छल, कपट व कृतघ्नता से अपना ही हृदय दुखित होता है तो दूसरों की क्या कथा कहनी।

— सन्तानों को उत्तम विद्या, शिक्षा, गुण,कर्म और स्वभाव रूप आभूषण का धारण कराना माता, पिता, आचार्य और सम्बन्धियों का मुख्य कर्म है।

— विवेक बिना वैराग्य और वैराग्य के बिना विज्ञान, विज्ञान के बिना शान्ति नहीं होती।

— चाहे कितना बड़ा कोष हो परन्तु जिसमें व्यय है और आय नहीं उसका कभी न कभी दिवाला निकल ही जाता है।

— जैसे अग्नि में ईन्धन और घी डालने से बढ़ता ही जाता है। वैसे ही कामों के उपभोग से काम शांत कभी नहीं होता किन्तु बढ़ता ही जाता है।

— जब आपस में भाई-भाई लड़ते हैं तभी तीसरा विदेशी आकर पंच बन बैठता है।

— देव मानों तो उन्हीं कारीगरों को मानों कि जिन शिल्पियों ने मन्दिर बनाया।

— पुरुषार्थी को कोई बात दुर्बल नहीं

— वैद्य और औषध की आवश्यकता रोगी के लिए है नीरोग के लिए नहीं।

— कोई कितना ही करे जो स्वदेशीय राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है।

— विद्या परामर्थ के लिए है न कि स्वार्थ के लिए। परमार्थ तो तभी है जब कि विद्या से अज्ञानियों को लाभ पहुंचे।

— जो मिथ्या बात न रोकी जाएं तो संसार में बहुत से अनर्थ प्रवत हो जावें।

Swami Dayanand Saraswati had not only Studies from his youth on-words that supreme Vadic culture out of which India has risen to her full height of spirtual wisdom and experience, he had lived it.

—F. C. Andrews

अमृत कलस

१. ओ३म् सह नाववतु सह नौ भुनक्तु वीर्य्यं करवाव है। तेजस्वि नावधीमस्तु मा विद्विपाव है।

हे सर्वशक्तिमान ईश्वर ! आपकी कृपा, रक्षा और सहाय से हम लोग परस्पर एक दूसरे की रक्षा करें। सब परमप्रीति से मिल कर उत्तम ऐश्वर्य को सदा भोगें, हम एक दूसरे के सामथ्य को पुरुषार्थ से बढ़ाते रहें, हमारी शिक्षा और विद्या की सदैव वृद्धि हो, पारस्परिक विरोध को छोड़ मित्र भाव से आपस में वर्तें।

२. ओ३म् भूर्भवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्।

हे सत्, चित्, आनन्द स्वरूप प्रभु ! हम सब आपके प्रेरणा देने वाले एवं अलौकिक गुणों से युक्त उस श्रेष्ठ पापनाशक तेज का ध्यान करें, जो हमारी बुद्धियों को उत्तम प्रेरणा दे।

३. ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव। यद भद्र तन्न आसुव।

हे परमेश्वर, सब को उत्पन्न करने वाले प्रभु ! आप हमारे सब दुःख एवं दुर्गुण दूर कीजिये और जो सब दु.खों से रहित कल्याण हैं, सब सुखों से युक्त भोग हैं, हमें प्राप्त कराइये।

४. ओ३म् अग्ने नय सुपथा राये अस्मान्विश्वानि देव व्युनानि विद्वान।

युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठान्ते नम उक्ति विधेम॥

हे सब को आगे ले जाने वाले भगवान् ! उत्तम ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिए आप हमें उत्तम मार्ग से ले चलिये। हे देव ! आप हमारे सभी अच्छे बुरे कर्मों को जानते हैं। कुटिलता पूर्ण पाप कर्म को आप हम से दूर कीजिये। हम आप को सर्वश्रेष्ठ श्रद्धा के वचन अर्पित करें।

५. असतो मा सद्गमय। तमसो मा ज्योतिर्गमय। मृत्योमा अमृतं गमय। (यजु)

हे सर्वज्ञ, स्वप्रकाश स्वरूप. अनादि परमेश्वर ! मुझे अज्ञान से ज्ञान, अन्धकार से प्रकाश और मृत्यु से अमरता की ओर ले चलो।

६. शतहस्त समाहर सहस्त्रहस्त संकिर।

सौ हाथों से कमाओ और हजार हाथों से दान करो।

७. अक्षैर्मा दीव्य कृषिमित्कृषस्व। (ऋग.)

जुआ मत खेलो, खेती ही करो।

८. केवलाघो भवति केवलादी। (ऋग.)

अकेला खाने वाला पाप खाता है।

६. आनो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः।

मुझे भद्र अर्थात् कल्याणकारी विचार सब ओर से प्राप्त हों।

१०. तन्मे मनः शिव संकल्पमस्तु। (यजु.)

मेरा मन शुभ सकल्पों वाला हो।

११. मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे।

हम सब को मित्र की आख देखें।

१२. मत्वा कर्माणि सीव्यति। (निरुक्त)

मनुष्य वह जो विचार कर कर्म करे।

१३. यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म ! (शतपथ)

यज्ञ ही श्रेष्ठतम कर्म है।

१४. ब्रह्मचर्येण जीवितम्। (महाभारत)
ब्रह्मचर्य से दीर्घ जीवन प्राप्त होता है।

१५. सर्वं परवशं दुःखम् (मनु.)
सभी प्रकार की पराधीनता दुःख है।

१६. कृतं मे दक्षिणे हस्ते जयो मे सव्य आहिता।
कर्म मेरे दाएं हाथ में है तो विजय बाएं हाथ में।

१७. अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि।
हे व्रतों के स्वामी ! मेरे व्रतों को सिद्ध करो।

In the matter of Vedic interpretation, I am convinced that whatever may be that final complete interpretation, Dayanand will be honoured as the first discoverer of the right clues. Amidst the chaos and obscurity of old ignorance and age long misunderstanding his was the eye of direct vision that pierced to the truth and fastened on that which was essential. He has found the keys of the doors that time had closed and kept as under the seals of the imprisoned fountains."

—Aurobindo

आर्य समाज की उपलब्धियां एवं उद्देश्य

(Objectves & Achevements)

१. वेद की श्रेष्ठता तथा वैदिक मान्यताओं का प्रचार करना। ऋषि मुनियों तथा ऐतिहासिक महापुरुषों और वैदिक संस्कृति के प्रति जनमानस में आस्था और विश्वास उत्पन्न करके राष्ट्रीय भावना का प्रसार करना।

२. अज्ञानता एवं अशिक्षा को समाप्त करने के लिए स्कूल, कालेज एवं गुरुकुल चला कर स्वराज्य तथा आत्मसम्मान की भावना का संचार करना। सामाजिक कल्याण के लिये वैदिक तथा शिल्प-विज्ञान युक्त आधुनिक शिक्षा का प्रसार करना।

३. गुण, कर्म, स्वभाव अर्थात् योग्यता के आधार पर सामाजिक सम्मान की पुष्टि करना, केवल जन्म के आधार पर जातपात और सामाजिक वरीयता को मान्यता न देना।

४. प्रचलित रूढ़ियों अर्थात् बाल विवाह, सतीप्रथा तथा अस्पृश्यता आदि का विरोध करके, नारी तथा अछूतों को समानाधिकार दिला कर उनके उत्थान के प्रयत्न करना।

५. रूढ़िग्रस्त समाज को सामाजिक, धार्मिक एवं व्यवहारिक जीवन में व्यर्थ के रीतिरिवाजों एवं वहमों से निकाल कर तर्क एवं सृष्टि नियमों पर आधारित वैज्ञानिक दृष्टिकोण देना।

६, राष्ट्रीय एकता के प्रतीक एवं गौरव हिन्दी भाषा तथा वास्तविक भारतीय इतिहास का प्रचार करना।

७. राष्ट्र में दैवी प्रकोप अर्थात् भूचाल, बाढ़,

सूखा, महामारी आदि के अवसर पर तन. मन, धन से सेवा करना।

८. अभाव एवं सामाजिक अन्याय से पीड़ित वर्ग के मजबूरी, लालच तथा तलवार के जोर से धर्म परिवर्तित लोगों को पुन: वैदिक धर्म में दीक्षा देना।

९. गोवध, मांस भक्षण तथा मद्यपानादि का विरोध करना। स्वदेशी वस्तुओं के उपयोग तथा सादा जीनव उच्च विचार वाली भावना का प्रचार करना।

१०. ब्रह्मचर्य पालन से शक्ति संजो परिपक्व आयु में स्वयंवर विवाह की प्रथा चलाना तथा बाल विवाह, अनमेल एवं वृद्ध विवाह का विरोध करना।

Arya Samaj is the sphere of social uplift. it is magnificent work, of which any single Indian organisation may be proud.

—Tennyson Ulysses

जीवन का उपासक

एक जीवन का उपासक जड़ जगत् से दूर,
था शिवालय में कहीं आराधना में चूर।
सत्य में श्रद्धा संजोये, साधना में लीन,
सरल मन, अपलक नयन, छल से कपट से हीन।
भाल पर वह तेज जो प्रतिमा को भी चमकाये,
मन में वह साहस जो हर आपत्ति पर मुस्काये।
प्रबल जिज्ञासा लिए, हो सत्य निष्ठा युक्त,
पाप से, पाखण्ड से, भय से, घृणा से मुक्त।
एक बालक हृदय का नैवेद्य ले निष्पाप,
सामने प्रतिमा के था बैठा हुआ चुप चाप।
एक दम जैसे कोई झोंका हवा का आये,
और क्षण में बादलों को घेर कर ले जाये।
सूर्य रश्मि से अचानक चमचमाये व्योम,
या उषा के अरुण आंचल में छिपे तम तोम।
भ्रांति पट यों एक घटना से हटा तत्काल,
साधना सोपान पर साधक चढ़ा तत्काल।
रात्रि के तन से किरण आलोक की फूटी,
और मानों मन से जड़ की दासता छूटी।

—शरर एम० ए०

स्वामी दयानन्द जी की शिक्षा और कार्य

(ले०—श्री बिहारी लाल शास्त्री, बरेली)

सन् १८५७ का स्वतन्त्रता संग्राम विफल हो गया था। सन् ५८ में तो अंग्रेजों का शासन पूरे दबदबे के साथ स्थापित हो गया था। सब भारतीय निराश, परास्त, किं कर्त्तव्य बिमूढ़ से हो गये थे। साम्राज्ञी विक्टोरिया की विज्ञप्ति प्रजा में बांटी गयी।

"अब ईस्ट इंडिया कम्पनी के हाथ से शासन हमने ले लिया है। अब प्रजा के साथ पक्षपात-रहित, न्याययुक्त, माता-पिता के समान दया-पूर्ण शासन होगा।"

इसे पढ़ कर, सुन कर प्रजा फूली न समायी। मुसलमान नेताओं ने सर सैय्यद अहमद के नेतृत्व में पहले ही अंग्रेज शासकों के सामने घुटने टेक दिये थे। अब हिन्दू भी साम्राज्ञी की की भक्ति में सिर झुकाने लगे। कवियों ने विक्टोरिया को त्रिजटा का अवतार लिखना प्रारम्भ कर दिया। सब ओर अंग्रेजी शासन का जय जयकार था। यह देख कर अंग्रेजों ने विचारा कि भारत पर शारीरिक विजय तो प्राप्त कर ही ली। अब सांस्कृतिक और मानसिक विजय भी प्राप्त करनी चाहिए। बस फिर क्या था, देश भर में स्कूल, कालेज खुले और पादरी घूमने लगे। हिन्दुओं की धार्मिक भावना नष्ट होने लगी। अपनी संस्कृति, सभ्यता, धर्म और इतिहास को हिन्दू नवयुवक हीन समझने लगे। हिन्दू आत्म हीनता के रोग से पूरी तरह ग्रस्त हो गया।

मुसलमानों पर प्रभाव बहुत कम इसलिये पड़ा कि वे अपने मत में बहुत कट्टर होते हैं। परन्तु फिर भी पादरी अमादुद्दीन, पादरी अब्दुल हक आदि उनमें भी बने। पादरी अमादुद्दीन ने तो 'तारीखे मुहम्मदी' और 'उम्महातुल मोमनीन, ये दो किताबें लिख कर इस्लाम की जड़ें ढीली कर दीं।

ऐसी आंधी का समय था जब ऋषि दयानन्द धर्म प्रचार के क्षेत्र में उतरे।

बहलोल लोदी का समय था जबकि एक ब्राह्मण को बादशाह ने जिन्दा ही जलवा कर मार डाला था कि वह हिन्दू और मुसलमान दोनों मतों को समान बताता था। भला कुफ्र और इस्लाम बराबर। यह भारी गुनह है।

ईस्ट इंडिया का शासन बंगाल में स्थापित हो जाने पर श्री राजा राममोहन राय ने ईसाई, मुसलमान और हिन्दू सब धर्मों को बराबर कहने का साहस किया। फिर महात्मा गांधी ने भी राजा साहब की ही बात दुहराई पर हिन्दू तो मानते चले गये। मगर ईसाई और मुसलमानों ने न राजा राम मोहन राय की बात

मानी न महात्मा गांधी की। वे लोग हिन्दू धर्म को निष्कृष्ट, कुफ्र और असत्य ही कहते रहे। महात्मा गांधी के दाहिने हाथ अली बन्धुओं ने भी हिन्दू धर्म को कुफ्र ही कहा। बस केवल स्वामी दयानन्द ही इस काल में ऐसे हुए कि जिन्होंने घोषणा की कि वैदिक धर्म ही सर्वोच्च धर्म है, सनातन है, तर्क पूर्ण और बुद्धि संगत है। भारतीय आर्य संस्कृति ही सर्वोत्तम है—

"सा प्रथमा संस्कृतिर्विश्व वारा" (यजुः)

अन्य संस्कृतियां इसकी विकृतियां हैं। अन्य धर्म, धर्म नहीं केवल मत है।

"वेद एव परो धर्मः।"

धर्म केवल वेदोक्त उपदेश हैं। यह केवल कहा ही नहीं, सत्यार्थ प्रकाश द्वारा सप्रमाण सिद्ध करके दिखा दिया।

इसका परिणाम हुआ कि शताब्दियों से नीचे झुकी हुई हिन्दू की गर्दन ऊपर उठी। आर्य-जाति का स्वधर्माभिमान जीवित हुआ। आर्य जाति की आत्महीनता की भावना आत्म गौरव में बदल गयी। जो विदेशी मत आर्य जाति को समूल मिटाने के स्वप्न देख रहे थे उनके चेहरे उतर गये। ऋषि के शास्त्रार्थों से विधर्मी दहल गये। आर्य धर्म में भी जो अन्ध विश्वास, गुरुडम और कुरीतियां प्रविष्ट हो गई थीं, स्वामी जी ने उनका घोर खंडन किया। अब आर्य धर्म स्वस्थ और निर्मल बन गया। स्वार्थरहित निष्पक्ष विद्वान आर्य समाज में बड़ी रुचि से आने लगे।

हिन्दुओं में भावनात्मक एकता (Emotional Integration) के लिए श्री स्वामी जी ने दार्शनिक एकता पर बल दिया। विधर्मीजन हिन्दुओं पर यह लाञ्छन लगाते थे कि हिन्दू बहुदेव पूजक हैं और हिन्दू सम्प्रदाय स्वयं ऐसी ही भावनाओं का प्रचार करके आपस में भेद-भाव बढ़ाते थे। शैव और वैष्णवों का विरोध मिटाने के लिए श्री गोस्वामी तुलसीदास ने भी बड़ा उद्योग किया। शिव, राम के भक्त हैं और राम शिव के पूजक हैं। यह उन्होंने बार-बार लिखा। परन्तु दो अस्तित्व पृथक् पृथक हैं—इस धारणा को वे न हटा सके। परन्तु स्वामी जी ने आर्ष ग्रंथों को पढ़ा था। वेद का भी सर्वांग पूर्ण अध्ययन उन्होंने किया था। अतः उन्होंने प्रतिपादन किया कि वेदोपनिषद में केवल एक ही ईश्वर की उपासना का विधान है। इन्द्रादि नाम भी केवल ईश्वर के ही हैं। पृथक् पृथक् देवों का अस्तित्व कहीं नहीं है और आर्ष प्रमाण अपने पक्ष की सिद्धि में प्रस्तुत किये। देखिये कितना स्पष्ट प्रमाण है—

"स ब्रह्मा स विष्णुः स रुद्रास्सशिवस्सोऽक्षरस्स परमः स्वराट् स इन्द्रस्स कालाग्निः स चन्द्रमा" (कैवल्य उपनिषद्) स० प्र० १ समु०

आगे वेदमन्त्रों के भी प्रमाण दिये हैं।

दूसरा विरोध था हिन्दुओं में दर्शन शास्त्रों पर। वेदांती अपनी बघारता या नैयायिक के नगाड़े अलग बज रहे थे। वैशेषिक की वीणा निराली थी तो सांख्य का शंख अलग गर्जना कर रहा था। मीमासा का मेल किसी से भी नहीं था। योग की युक्तियां निराली थीं। एक दूसरे के खंडन में कमर कस कर लगे हुए थे तो ईसाई-मुसलमान मतों के द्वारा किये हुए आक्षेपों के उत्तर कौन देता। ऋषि दयानन्द ने कहाकि—

"सृष्टि के छः कारण हैं। इनमें से एक-एक की व्याख्या एक-एक शास्त्राकार ने की है। इस लिए इनमें कुछ भी विरोध नहीं हैं।

(स० प्र० ३ समु०)

तीसरा रोग है हिन्दुओं में बिरादरी की छुटाई बड़ाई का। इस नीच ऊंच की भावना के कारण हिन्दू राष्ट्र को अपार हानि पहुंची है। ऋषि दयानन्द ने सप्रमाण सिद्ध कर दिया कि ऊंच, नीच, वर्ण आश्रम गुण कर्मानुसार है। बाल-विवाहों का विरोध कर जाति का बहुत ही हित किया। वैदिक धर्म केवल भारत का नहीं हिन्दुओं का नहीं किन्तु सार्व भौम धर्म है। इस घोषणा का प्रभाव यह हुआ कि विदेशी मतों को मानकर अपनी राष्ट्रीयता भी जो लोग बदल चुके थे वे लोग आर्य जाति में सम्मिलित होकर पुनः भारतीय राष्ट्र बाद के भक्त बन गये। आर्य समाज ने कई सहस्त्र आगाखानियों ईसाईयों और अन्य सुन्नी आदिको को अपने में मिलाया और कई लाख व्यक्तियों को आगा खां के जाल में जाने से रोक दिया। लाखों को ईसाई बनने से रोका और राष्ट्रहित की दृष्टि से यह काम देश के लिए अति उत्तम हुआ। स्वामी जी ने सब ही मतों की आलोचना पक्ष रहित होकर करी, क्योंकि उनका लक्ष्य सार्व भौम मानव हित था। देखिये :—

"और जो मत मतान्तर के परस्पर विरुद्ध झगड़े हैं उनको मैं पसन्द नहीं करता क्योंकि इन्ही मतवालों ने अपने मतों का प्रचार करके मनुष्य को फंसा कर परस्पर शत्रु बना दिया है। इस बात को काट सर्व सत्य का प्रचार कर सब को ऐक्यमत करा द्वेष छुड़ा परस्पर प्रीति युक्त करा के सब से सबको सुख लाभ पहुंचाने के लिएं मेरा प्रयत्न और अभिप्राय है।"

(सत्यार्थ प्र० स्वयं)

श्री स्वामी जी का उपर्युक्त लेख अक्षरेशः सत्य है। इन मतवालों ने अपने से अन्य धर्म वालों पर तो अत्याचार किये ही परन्तु आपस में भी घोर हत्याकांड किये। रोमन कैथोलिकों ने खुलकर लाखों प्रोटेस्टेन्टों की हत्या की प्रोटेस्टेन्ठों ने लालो कैथोलिकों को मौत के घाट उतारा। तनक तनक से मतभेद पर पोपों ने निर्दयता पूर्वक सहस्त्रों की हत्या करा डाली। ईसाईयों का इतिहास पढ़ो तो आश्चर्य होता है। यही दशा मुसलमानों की भी रही। शिया-सुन्नियों के संघर्ष में लाखों मुसलमान मारे गए। तैमूर ने लाखों हिन्दुओं की तो हत्या की ही, साथ लाखों हिन्दुओं सुन्नी मुसलमानों पर भी डट कर अत्याचार किये। पाकिस्तान में भी शियों की अहमदियों की हत्याएं हुई और अहमदियों की तो पाकिस्तान में अब घोर दुर्दशा हो रही हैं। लखनऊ में भी शिया-सुन्नियो का संघर्ष मारकाट चलती ही रहती है। इन हत्याओं से केवल आर्य जाति बुद्धि वाद को प्रधानता देती है। बौद्धिक खंडन, मंडन, शास्त्रार्थ होते रहे। खंडन, मंडन के अनेक ग्रंथ लिखे गये। केवल तर्क से काम लिया जाता रहा तलवार से नहीं। आर्य जाति के सब ही सम्प्रदायों में बुद्धिवाद और आचार को महत्व दिया गया है, केवल विश्वासों पर नही।

ऋषि दयानन्द जिस धर्म को सबको अपनाने के लिये प्रस्तुत करते हैं वह आचारत्मक ही है। ऋषि लिखते हैं :—

"सुनो सब लोगों, सत्य भाषण में धर्म है या मिथ्या में ? सब एक स्वर होकर बोले—सत्य भाषण धर्म और असत्य अधर्म हैं। वैसे ही विद्या पढ़ने, ब्रह्मचर्य रखने, पूर्ण युवावस्था में में बिवाह, सत्संग, पुरुषार्थ, सत्य व्यवहार आदि में धर्म और अविद्या ग्रहण, ब्रह्मचर्य न रखने,

व्यविचार करने, कुसग, आलस्य, असत्य व्यवहार छल, कपट, हिंसा पर हानि कर्मों में अधर्म है।' (सत्यार्थ प्र०—११ समु०)

यहां व्यवहारिक धर्म को स्वामी जी सार्वजनिक बता रहे हैं। वस्तुतः मतवालों और वैदिक धर्म में यह बड़ा अन्तर है। मतवादी लोग सदाचार नैतिकता (Charater and Morality) को प्रमुख स्थान नहीं देते। एक दुराचारी भी मसीह पर ईमान लाने से तर सकता है। हजरत मुहम्मद पर विश्वास रखने वाला दुराचारी भी सदाचारी अन्य धर्म वाले से अच्छा है। ऐसी मान्यताओं ने व्यवहारात्मक धर्म की विध्वंसकर डाला परन्तु वैदिक धर्म में—'आचारः परमोधर्मः सदाचार धर्म की आधारशिला माना गया है।"

यह तो हुआ स्वामी जी का धार्मिक सामाजिक विचारों का दिग्दर्शन। अब उनके राजनीतिक विचारों की भी झलक देखिये :—

१—"सृष्टि से लेकर पांच सहस्त्र वर्षो से पूर्व समय पर्यन्त आर्यों की सार्वभौम चक्रवर्ती अर्थात भूगोल में सर्वोपरि एक मात्र राज्य था।"

२—(मैत्री उप० चक्रवर्ती राजाओं के नाम) इत्यादि प्रमाणों से सिद्ध है कि सृष्टि से लेकर महाभारत पर्यन्त चक्रवर्ती सार्वभौम राजा आर्यकुल में ही हुए थे। (स० प्र० ११ समु०)

३—अब अभाग्योदय और आर्य के आलस्य प्रमाद, परस्पर के विरोध से अन्य देशों के राज्य करने की कथा ही क्या किन्तु आर्यावर्त में भी आर्य का अखण्ड, स्वतन्त्र, स्वाधीन निर्भय राज्य नहीं है। जो कुछ है सो भी विदेशियों के पादाक्रांत हो रहा है।

४—"कोई कितना ही करे परन्तु जो 'स्वदेशीय राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है। अथवा मतमतान्तर के आग्रह रहित अपने और पराये की पक्षपात शून्य प्रजा पर माता पिता के समान कृपा, न्याय और दया के साथ भी विदेशियों का राज्य पूर्ण सुख दायक नहीं है।"

(स. प्र. ८ वां समु.)

ये पंक्तियों देश की पराधीनता पर स्वामी जी की आहें हैं! देश दशा देख कर दयानन्द का हृदय क्रन्दन कर रहा है।

चतुर्थ अनुच्छेद में साम्राज्ञी विक्टोरिया की उस विज्ञप्ति का उत्तर है जो सन् १९५८ में निकली थी कि प्रजा के साथ पक्षपात रहित न्याय किया जायेगा। इस विज्ञप्ति पर सब ही भारतीय-जन सन्तुष्ट थे परन्तु दयानन्द का हृदय सन्तुष्ट नहीं था। उत्तम से उत्तम भी विदेशी शासन शासित देश वासियों में आत्महीनता पैदा कर देता है और फिर अत्याचार भी होने लगते हैं। जाति में जड़ता आ जाती है। अतः अत्याचारों के विरोध की शक्ति नहीं रहती। स्वामी दयानन्द की इस विचारधारा का प्रभाव यह हुआ कि स्वामी जी के प्रमुख शिष्य 'श्री श्याम जी कृष्ण वर्मा ने इंग्लैंड और फिर फ्रांस में रह कर श्री मदन लाल ढींगरा जैसे अनेक क्रान्तिकारी उत्पन्न कर दिए। पूज्य वीर सावरकर जी भी श्याम जी कृष्ण वर्मा की ही मण्डली के थे।

इधर पूज्य लाला लाजपतराय, सरदार अजीत सिंह आदि अनेक गर्म दल के नेता, पूज्य स्वामी श्रद्धानन्द जी जैसे सर्वस्व त्यागी देश भक्त आर्य समाज ने ही देश को दिए तथा वीर बलिदानियों में सरदार भक्त सिंह, पं. राम प्रसाद बिस्मिल, ठाकुर रोशन सिंह आदि अनेक वीर आर्य समाज से ही प्रकट हुए। केवल मात्र देश में एक ही मुसलमान हुआ है जिसने देश की

स्वतन्त्रता के लिये फांसी की रस्सी को गले लगाया—वीर अशफाकुल्ला खां शाहजहा पुरी। यह देश भक्त वीर पं. राम प्रसाद बिस्मिल के शिष्य थे। पंडित जी ने ही खानसाहब के विचार बदले थे। विचार बदलने का डाक्टर केवल आर्य समाज हैं। इसी प्रकार महात्मा गांधी के मुहम्मद अली बदल गये ! कट्टर लीगी बन गये। परन्तु आर्य समाज ने जिस मुहम्मद अली के विचार बदल कर शान्ति स्वरूप बनाया वह ९२ वर्ष की आयु तक वैदिक धर्मी रहे और दृढ़ कांग्रेसी भी। जब बाजार जाते तो कांग्रेस का झण्डा हाथ में लिए होते थे। एम. एल. ए. भी रहे थे।

महात्मा गांधी का पुत्र हीरा लाल जब अब्दुल्ला बना तो गांधी जी तो सन्तोष कर चुप रह गये किन्तु माता कस्तूरबां को धैर्य बंधाया केवल पं. विजय शंकर प्रधान आर्य समाज बंबई ने एक मास के भीतर ही अब्दुल्ला को पुन: हीरालाल बना दिया। यदि हीरालाल अब्दुल्ला ही बना रहता तो इस समय भारत में उस की समाधि बनी हुई होती और मुसलमानों के साथ साथ हिन्दू भी उस कब्र को पूजते और यह अविद्या क्रम चालू रहता। कनाडा, मारीशस और अफ्रीका में यहां से गये हुये हिन्दू ईसाई बन रहे थे परन्तु किसी भी नेता को चिन्ता न थी। तब आर्य समाज के संन्यासी पूज्य स्वामी शंकरानन्द जी ने जाकर वहां शुद्धियां करी और आगे ईसाई बनने से रोका तथा हिन्दुओं के अनेक कष्ट सरकार से दूर करवाये।

स्वामी जी के स्थापित किए आर्य समाज ने देश हित, समाज हित और धर्म संशोधन के बड़े बड़े काम किये हैं पर उनका डंका नहीं पीटा। आज भी स्वामी दयानन्द के विचारों के प्रसार की बड़ी आवश्यकता है ताकि भृष्टाचार दूर हो, साम्प्रदायिक विद्वेष नष्ट हो, मानवहित की सद्भावना फैले, अन्ध विश्वास दूर हों और इन प्रद लोलुप नेताओं ने जनहित के बहाने से जो उपद्रव मचा रक्खे हैं, वे नष्ट हों

एक और भी उत्तम विचार स्वामी जी ने दिया है—आर्यो से पूर्व यहां (भारत में) कोई भी मनुष्य नहीं बसता था। इस देश का नाव आर्यावर्त आर्यो ने ही रक्खा। मानव सृष्टि उत्पत्ति तिब्बत में हुई और वहीं से आकर मैदान में जो लोग बसे वह आर्य कहलाते थे।

आर्य कोई जाति नहीं थी किन्तु मानव जाति के दो विभाग थे—आर्य धार्मिक, वृती (सदाचारी) और दस्यु अवती (सदाचारहीन)

"आर्य लोग बाहर से आये और यहा के निवासियों को मार कर दक्षिण की ओर खदेड़ दिया आदि" इस मिथ्या प्रचार से जो अंग्रेज ने अपने हित के लिये किया था, आज देश में हिन्दुओं में फूट फैला दी है। द्रमुक (द्रविड़ संघ) और 'हिन्द ऐतरेय ब्रह्मण' की कथा है कि विश्वामित्र से जो शिष्य पढ़ना, लिखना छोड़ कर भाग गये वे द्रविड़ आदि हैं। द्रविड़ दौड़ा हुआ अर्थात् जो गुरुकुल छोड़ कर दौड़ गया, चला गया। वास्तव में यह भेद नस्ल जाति या 'रेस' का नहीं है। अत: पूरे भारत की जाति एक है—आर्य।

आर्य समाज की अगली शताब्दी में भी धूम के साथ बहुत काम करना है ताकि हमारा स्वराज्य सुराज बने और अन्य देशों से भी सांस्कृतिक भाईचारा बढ़े।

——

"अपराजेय ! उठो आर्यो ! फिर"

— श्री राधे श्याम 'आर्य' वली पुर, सुलतानपुर (उ० प्र०) —

एक शदी पहले भूतल पर
हुआ अवस्थित आर्य समाज ।
कण कण में नव आभा जागी
सजा मनुजता का शचि साज ।

ऋषिवर दयानन्द ने निर्भय
किया सुशोषित शंख निनाद ।
कांप उठा धरती पर फैला
दानवता का तत्व, विषाद ।

हिमगिरि के उतुंग शिखर से
मुखरित हुआ पुनः उद्गीथ ।
स्वर्णिम उषा लगी मुस्काने
अवसादित हो गयी निशीथ ।

भू पर बिखरा निर्भय होकर
नव जागृति का स्पन्दन ।
ली अंगड़ाई नूतन युग ने
जाग उठा जय का जन जन ।

लाखों वर्ष पुरातन संस्कृति
लेने लगी पुनः अंगड़ाई ।
नव्य चेतना की गरिमा से
जाग उठी भारत तरुणाई ।

वैदिक सूर्य उगा धरती पर
फैला स्वर्णिम दिव्यालोक ।
मुग्ध महीतल हुआ सहर्षित
वैदिक धर्म सुतत्व बिलोक ।

हिले सभी गढ़ पाखण्डों के
हुआ प्रकम्पित धर्माडम्बर ।
वेद भानु की प्रखर रश्मि से
हुआ प्रकाशित अवनी अम्बर ।

तिमिर भगा, नव खिलीं रश्मियां
महिमण्डल पर ज्योतिष्मान ।
मानवता के शुभ्र पटेल पर
उदित हुआ, शुभ भरा विहान ।

दीन, अनाथों, विधवाओं को
सत्वर मिला, सुकोमलत्राण ।
भारत मां के जर्जर तन को
फिर से मिला नवलतम प्राण ।

स्वच्छ समाज हुआ, संस्कृति भी
लेने लगी नवल उन्मेष ।
'कृण्वन्तो विश्वमार्यम' से
गूंज उठा प्यारा स्वदेश ।

स्वतन्त्रता की बलिवेदी पर
लाखों शीश लगे चढ़ने ।
जाति पाति के छुआछूत के
दानव सहस लगे भगने ।

डंका बजा पुन: वेदों का
विश्वजयी उद्घोष हुआ ।
शक्ति अपरिमित आर्यजनों
में जगी, जया जयघोष हुआ ।

अपराजेय ! उठो आर्यो ! फिर
स्वप्न अभी ऋषि के अवशेष ।
हरना है अज्ञान तिमिर, जो
फैला भू पर अभी विशेष ।

सारे जग को आर्य बनाने
का लें हम पावन संकल्प ।
मानवता की रक्षा का है
बचा न कोई अंश विकल्प ।

सुख, समृद्धि, सफलता के शुचि
स्वर धरती पर लहराएं ।
शान्ति तथा आनन्द घने घन
भू पर अमृत रस बरसाएं ।

शुचिर शताब्दी के अवसर पर
वृत ले फिर से आर्य समाज ।
अन्तिम श्वासों तक रक्खेंगे
धर्म तथा वेदों की लाज ।

दयानन्द के सैनिक बन कर
भू को स्वर्ग बनाएंगे ।
जागृत सी नव ज्योति धरा
पर, जगमग आज जगाएंगे ॥

मूलशंकर से दयानन्द

(श्री कन्हैयालाल आर्य ई—४३ इन्डस्ट्रीयल एरिया पानीपत)

महर्षि दयानन्द जी का बालक नाम मूलशंकर था। इस बालक ने 'होनहार बिरवान के होत चीकने पात' की कहावत को चरितार्थ करते हुये शिवरात्रि की रात को बोध रात्रि बना दिया। शिव का वृत रखना एवं रात्रि जागण करना तो करोड़ों व्यक्ति करते हैं। इसी प्रकार शिवलिंग पर प्रसाद को चूहों द्वारा रौंदते एवं झूठा करते भी सभी देखते हैं। परन्तु इस घटना ने बालक मूलशंकर के मन को झकझोर दिया। क्या यह सारे संसार की रक्षा करने में समर्थ हो सकता है।जबकि अपने ऊपर से एक चूहे तक को नहीं हटा पा रहा। यहीं से ही दिशा बदल गई।

मृत्यु किसके यहां नहीं होती परन्तु मृत्यु को एक होनी मान कर, मृत्यु को झलने पर प्रयत्न किया जाता है। जबकि मूलशंकर ऐसा नहीं कर सका। शिवरात्रि को घटना, चाचा व बहिन की मृत्यु ने मूलशंकर को घर बार छुड़ाकर जंगलों में ला पटका।

क्या जंगल; मूलशंकर को मानसिक शान्ति दे सके। साधु, सन्तों व महात्माओं के संग ने सच्चे शिव के दर्शन कराये। नहीं। आखिर मन को शान्ति व सच्ची राह मिली, तो मिली गुरु विरजानन्द के चरणों में। जिन्होने वेद ज्ञान की गंगा में नहला दिया। सत्य का मार्ग दिखला कर असत्य को दूर भगा दिया। दिन आया गुरु दक्षिणा का। यदि गुरु सच्चे गुरु थे तो शिष्य भी सच्चा शिष्य था। गुरु दक्षिणा में, वेद प्रचार हेतु अपना जीवन अर्पण कर दिया।

एक ओर अज्ञान. मत-मतान्तर, अन्धविश्वास अशिक्षा परतन्त्रता एवं अन्य सामाजिक बराइयों का अम्बार या तो दूसरी एक सैनिक की भांति कर्त्तव्य निष्ठ गुरु की आज्ञा का पालक, सत्य का पुजारी, क्षमा का देवता, एक संन्यासी दयानन्द था। जिसे न अपने जीवन की परवाह की और ना ही परवाह थी अपने विरोधियों के अत्याचारों की। उसे परवाह थी तो केवल दुःखों से त्रस्त मानवता की।

स्वामी दयानन्द में शारीरिक बल की कमी न थी परन्तु बल का प्रयोग किया तो एक गरीब गाड़ीवान की गाड़ी को खड्ड से बाहर करने एवं बैलों को मार से बचाने के लिये। दूसरी ओर स्वामी जी जीवन में दुःखी हुये तो अपने लिये नहीं अपितु एक मां की गरीबी को देखकर जब मां अपने बच्चे की मृत्यु पर कफन के कपड़े को भी शव के साथ न बहा सकीं। इस घटना ने ही स्वामी जी को रुला दिया।

स्वामी जी ने जीवन में कई बार जहर पिया तो अपने स्वार्थ के लिये नहीं अपितु लोगों को अज्ञान के अन्धकार से निकाल वेद ज्ञान का प्रकाश देने के लिये, अपने शत्रुओं को जेल से छुड़ाने के लिये, और और तो और अपने हत्यारे को जीवन देने के लिये। इससे बढ़कर स्वामी जी की महानता और क्या होगी कि उनकी मृत्यु भी अपनी न रही वह भी संसार को गुरुदत्त रूपी रत्न दे गई।

स्वामी जी का जीवन अपने लिए न था अपितु जीवन का एक एक क्षण संसार के लिए था। इसी से ही बालक मूलशंकर देव दयानन्द का रूप आज भी संसार में चमकते सूर्य की भांति मार्ग दिखा रहा है। ऐसा हमारे और आपके लिये भी सम्भव है परन्तु यह भी सम्भव होगा जब हम असत्य को छोड़ सत्य को ग्रहण करते हुये, वेद मार्ग पर चलकर अपने जीवन को मानव मात्र के लिये अर्पण कर देंगे। तभी यह बोध रात्रि सार्थक होगी।

शिवरात्रि से प्राप्त बोध का एक अंश

प्रा० भद्रसेन वेद-दर्शनाचार्य, साधु आश्रम, होशियारपुर

बालक मूल ने शिवरात्रि की सर्व प्रसिद्ध घटना से प्रेरित हो कर सच्चे शिव की खोज का दृढ़ संकल्प धारा। कुछ समय पश्चात् बहिन और चाचा जी के वियोग की वेदना से मृत्यु विजय का भाव भी इसमें जुड़ गया। संसार के इतिहास में यह अपने आप में अद्वितीय घटना है कि एक पढ़ा-लिखा २२ वर्ष का युवक घर से निकल कर सच्चे शिव की तलाश में लगातार पन्द्रह वर्ष तक विविध ग्रन्थों का यथावसर अध्ययन करते हुए मैदानों, पहाड़ों, जंगलों, डेरों, गुफाओं की खाक छानता है। मूल से दयानन्द तक के रुप में बदले हुए प्रौढ़ मस्तिष्क ने हर तरह के लोगों के हर रंग को देखा। अन्त में मन-पसन्द गुरु को प्राप्त कर ढाई-तीन साल के अध्ययन और विचार विमर्शके पश्चात् गुरु प्रेरणासे अपनी सच्चे शिव की तलाश को जन-जन के शिव के रूप में परिवर्तित कर दिया। महर्षि का जीवन इसका साक्षी है कि जन-जन के शिव के रूप में ही महर्षि ने १८७५ में भारत की महा-नगरी बम्बई में आर्य समाज की स्थापना की। और १८८१ में आर्य समाज के नियमों का परिष्कृत रूप दिया। वस्तुत: महर्षि द्वारा जन-जन का दिया गया शिव यही है। वेद-समाज सुधार आदि के अन्य कार्य उनसे पूर्ववर्तियों ने भी किसी न किसी रूप में किए। वेदोद्धार, समाज-सुधार, राष्ट्र भाषा प्रसार, राष्ट्रीय नव-चेतना और विधवा-अनाथ-गो-नारी-स्वदेशी सम्मान जैसे महान् कार्यों के साथ महर्षि की अपनी मौलिक देन आर्य समाज के नियम ही हैं। जो कि शिवरात्रि से प्रारम्भ हुई साधना के प्रति-फल है। हर देश काल-वर्ग के व्यक्ति के लिए यह सार्वकालिक, सार्वभौमिक और सार्वजनीन शिव मन्त्र (तन्त्र-जन्त्र-यन्त्र) है। इसी दृष्टि से स्थाली पुलाक न्याय से पाठक चतुर्थ नियम पर दृष्टिपात करेंगे।

'जीवन विकास के सबसे आवश्यक मूलमन्त्र को दर्शाते हुए चतुर्थ नियम में कहा है कि—"सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।" क्योंकि संसार के इतिहास पर विचार किया जाए तो स्पष्ट होता है कि संसार को दुःख, कष्ट, क्लेश देने वाली चीजों में से युद्ध का पहला स्थान है। इसके कुपरिणाम को समझने के लिए द्वितीय विश्व-युद्ध के आंकड़े ही आंखें खोल देने वाले हैं और यह पिछली बात ही नहीं है अपितु १९७३ का अरब इजरायल युद्ध इसका ताजा उदाहरण है। कोरिया, वियतनाम, कम्बोडिया में घटी और अंगोला में घट रही गृहयुद्ध की रोंगटे खड़ी करने वाली घटनाएं आज भी विनाश का नग्न चित्र प्रस्तुत कर रही हैं। हर देश का सबसे अधिक धन युद्ध की सामग्री जुटाने पर ही खर्च हो रहा है।

यह प्रलयंकारी युद्ध चाहे युद्ध के मैदानों में हो या मुहल्ले, गली, बाजार में, वह दो के मध्य में हो या अनेकों के। वह चाहे निकट से निकट के रिश्तेदारों में हो या देशी-विदेशी में। उसमें

निहत्थे जूझे या आधुनिक अस्त्र-शस्त्रों और उद्जन-अणु-परमाणु बमों से सज्जित। इसका एकमात्र कारण यही होता है कि दोनों पक्ष या कोई एक पक्ष 'सत्य के ग्रहण और असत्य के त्याग के लिए' अर्थात् हठ दुराग्रह को छोड़ कर सच्चाई को लेने के लिए उद्यत नहीं होते या होता। अतएव इन दुःखों, क्लेशों, कष्टों और उनके कारणों से बचने के लिए चतुर्थ नियम में संकेत किया गया है, कि सत्य के ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।

आज मानव समाज के जीवन के हर क्षेत्र में विज्ञान ने जो सुविधाएं, उपलब्धियां, सरलताएं उपस्थित कर दी हैं, वे किसी से छिपी हुई नहीं हैं। हमारे जीवन का कोई भी क्षण या क्षेत्र ऐसा नहीं है, जब हम विज्ञान से उपकृत नहीं होते। विज्ञान के इन आविष्कारों को देखते हुए किसी दूसरे प्रसंग में कहे गए कवि के शब्द स्मरण हो उठते हैं—

अन्धों को आंखें मिल गईं, मूर्दों में जान आ गई।
जादू सा क्या चला दिया, अमृत सा क्या पिला दिया॥

तभी तो आज विज्ञान अमृत, कल्पवृक्ष, कामधेनु सिद्ध हो रहा है।

यदि विज्ञान की पद्धति पर हम विचार करें तो विज्ञान की इस परिपाटी के पीछे एक तथ्य आधार, मूल बिन्दु मिलता है कि परीक्षण, विचार विमर्श करते हुए उस विषय के सम्बन्ध में जो असत्य निकले उसको सहर्ष छोड़ कर उस विषय में जो सत्य (तथ्य) सामने आए उसके ग्रहण करने में निःसंकोच उद्यत हों। वस्तुतः यही विज्ञान की सीख है, और विज्ञान का सारा इतिहास इसी तथ्य का साक्षी है। इसी रहस्य की ओर ही इस नियम में संकेत किया गया है। अर्थात् सारा का सारा विज्ञान और अन्वेषण इसी कसौटी पर ही टिका हुआ है।

मानव जीवन की हर क्षेत्र की प्रगति, विकास का यही मूलमन्त्र या सोपान है कि जब भी हमें पता लगे कि यह सत्य है और यह असत्य है तो हर प्रकार के हठ, दुराग्रह, पक्षपात को छोड़ कर असत्य का त्याग और सत्य का ग्रहण करें। क्योंकि प्रत्येक क्षेत्र और कार्य में सफलता सिद्धि उस विषय की सच्चाई को लेने से ही हो सकती है। यतो ही हम सब का प्रति दिन का यह अनुभव है कि हमारा हर कार्य उस क्षेत्र की सच्चाई को ग्रहण करने से सफल होता है।

संसार का हर व्यक्ति हर क्षेत्र में अपने साथ दूसरों से सच्चे व्यवहार की आशा करता है, क्योंकि सत्य के अपनाने से ही उसका हर कार्य बनता है। मनुष्य की इस स्वाभाविक इच्छा का ही समर्थन हमें इस नियम में दृष्टिगोचर होता है।

सारा का सारा मानव समाज आपस के व्यवहार पर ही टिका हुआ है। परस्पर के व्यवहार का आधार विश्वास ही है और विश्वास वहीं पर होता है जहां सत्य होता है। अतः यदि हम चाहते हैं कि हमारा व्यवहार ठीक चले तो व्यवहार के आधार भूत विश्वास को चिरस्थायी बनाने के लिए सत्य के ग्रहण और असत्य के छोड़ने के लिए सदा तैयार रहें और तभी हमारा जीवन सुखी एवं सुविधापूर्ण हो सकेगा। अतः मानव जीवन का एकमात्र उद्देश्य सत्य ही है, क्योंकि सत्य से ही जीवन जीवन बनता बनता है तभी तो वेद ने एक भक्त के मुख से कहलपाया हैं—"अनृतात सत्यमुपैमि" य १-५ अपने जीवन में सदा सर्वथा झूठ को छोड़ कर हर स्थिति में सत्य को ग्रहण कर सकूं।

इसी रहस्य को अपने जीवन में अनुभव करते

दिवाः सूनुः दयानन्द

(स्व० पं० चमूपति एम० ए०)

स्वामी दयानन्द एक महान् आत्मा थे। उनके मन्तव्यानुसार परमात्मा कर्मों का शुभाशुभ फल देने में पूर्ण न्याय से काम लेता है परन्तु उसकी दया का प्रकाश और प्रसार प्राणीमात्र के लिए होता है। सूर्य, पृथ्वी, तारे, वायु, जल तथा उस के अन्य प्रसादों का सभी प्राणी समान रूप से उपभोग करते हैं। यदि कोई व्यक्ति इनसे विशेष रूप से लाभान्वित होता है तो इसका कारण उसके पूर्व वा वर्तमान कर्म होते हैं ये सब सम्मिलित प्रसाद परमात्मा को दया तथा निष्पक्षता के द्योतक होने हैं।

महर्षि दयानन्द ने परमात्मा की न्याय-व्यवस्था पर बड़ा बल दिया है। एक के बाद दूसरे सन्त भाग्य पर भरोसा रखने की शिक्षा दी। इस प्रकार की शिक्षाओं ने जहां एक और मनुष्य को कर्मण्यता और उद्योग से विमुख किया वहां दूसरी ओर दुष्कर्मियों की दुष्ट प्रवृत्तियों को भी प्रोत्साहित किया बताया गया कि परमात्मा जिसे चाहे दण्ड दे सकता है और जिसे चाहे पुरस्कृत कर सकता है और वह चाहे तो पुण्य कर्मों के के लिए दण्डित और बुरे कर्मों के लिए पुरस्कृत कर सकता है। क्या इस प्रकार की धार्मिक शिक्षाओं में भलाई की कोई भावना निहित हो सकती है। परमात्मा के न्याय में निष्ठा रखने से मनुष्य कर्मण्य एवं भला बनता है और परमात्मा द्वारा मनमानी किये जाने की भावना से मनुष्य में समस्त प्रकार की बुराईयों के साथ परवशता की भावना का उदय होता है।

वेद में परमात्मा को पितॄणां पितृतमः पिताओं का पिता, अम्बिनमा माताओं की माता कहा है, पिता अपने पुत्रों में भी दया की तराजू को पकड़े रहता हैं। उनकी उद्दंडता के लिये उन्हें दण्ड देता है। उनकी बुराईयों की दूर करने का यत्न करता है। अच्छे पुत्र के लिए वह प्रेम और न्याय की मूर्ति होता है। पिता का प्रेम असीम होता है। असीम पिता की दयालुलता और प्रेम भी असीम ही होगा। इनकी वास्तविक अनुभूति उस के उन बच्चों को ही हो सकती है जिनके हृदयों में उसकी असीमता घर किये होगी। मनुष्यों अथवा परमात्मा के ऐसे बच्चों को वेद में 'अमृतस्य पुत्राः' कहा गया। इन बच्चों ने बुराई को पीछे छोड़ा होता है। वे कर्मठता और उत्साह की सजीव मूर्ति होते हैं। उनका जीवन कर्त्तव्य परायणता का जीवन होता है। परमात्मा की प्रसन्नता ही उनके कार्य का पारितोषिक होता है, उनका प्रभु प्रेम स्वतः प्रवाहित रहता है। वे निष्काम भाव से परोपकार रत रहते हैं। यदि परमात्मा के हाथों कष्ट मिलते है तो वे भी दया का रूप लिये होते हैं। उनका अभिप्रायः आत्मा का सुधार ही होता है। दुनियादार व्यक्ति पारितोषिक की आशा में किसी गुण को धारण करेगा तो परमात्म विश्वासी पुत्र जिसे वेद में 'दिवाः सूनुः कहा गया है सत्कर्म को परमात्मा प्रति भेंट रूप में अर्पण रखेगा।

महर्षि दयानन्द इसी प्रकार का 'दिवाः सूनुः' अर्थात् दिव्य पुत्र था जिसने अपना समस्त जीवन भेंट रूप में परमात्मा को अर्पण कर रखा था।

दयानन्द सच्चे अर्थ में सन्त थे। वह परम तपस्वी और त्यागी थे। वह परमात्मा के प्यारे थे। उनके गृदय में सदैव दिव्य धारा प्रवाहित रहती थीं। उस धारा में उनके ऐहिक कष्टों और कठिनाईयों की गरज शान्त हो जाया करती थी। अपने जीवन को खतरे में डालकर भी वह जिन उच्च नैतिक आदर्शों पर आरूढ़ रहते थे वे उच्च धार्मिक और नैतिक व्यवस्था के अलौकिक ढांचे के अविच्छिन्न अंग थे जिस पर विश्व का नियमन किया गया है और जिसे वह सदैव अपनी आन्तरिक आंखों से देखा करते थे। उन्हें वास्तविक का भान हो जाया करता था। यास्क की परिभाषानुसार ऋषि वह होता है जो धर्म को देखता है। आर्य समाज के प्रवर्तक महर्षि दयानन्द शब्द के ठीक-ठीक भाव में ऋषि थे।

——

राष्ट्र-निर्माता दयानन्द

(ले०—श्री दुर्गादास जी)

स्वामी दयानन्द उन महापुरुषों में थे जिनका भारत अतीव ऋणी है। संसार का समझदार शिक्षित वर्ग उनका अनुयायी प्रशंसक वा समर्थक है। शुद्धि आन्दोलन के द्वारा उन्होंने हिन्दुओं के धर्म-परिवर्तन के विरुद्ध पक्का बांध बना दिया था। अपने अगाध पांडित्य से अपने उच्च नैतिक चरित्र से और सत्य पर आरूढ़ रहने की अपनी दृढ़ता से उन्होंने हिन्दू समाज की विचार धारा को अच्छे रूप में बदल दिया था।

धर्म संशोधन के रूप में उन्होंने मूर्तिपूजा गुरूडम अन्धविश्वास और प्रत्येक प्रकार के धार्मिक कपटपंच से डटकर युद्ध किया। समाज से शोधक के रूप में उन्होंने ब्रह्मचर्य और विवाहित जीवन की पवित्रता एवं संयम का प्रचार किया। उन्होंने बालविवाह के विरुद्ध अपनी वाणी और लेखनी से काम लिया और इस दुष्प्रथा तथा इससे होने वाले शारीरिक और चरित्रिक अनिष्ट के विरुद्ध समझदार हिन्दूओं में विद्रोह की भावना भर देने में वह सफल हुए उन्होंने बालविधवाओं की दयनीय अवस्था की और हिन्दूसमाज का ध्यान आकृष्ट किया था। उनके पुर्नविवाहों को प्रोत्साहित किया। हिन्दु अनाथ बच्चों और देवियों की विधर्मियों से रक्षा के लिए उन्होंने अनाथालयों और आश्रमों की स्थापना को भी प्रोत्साहन दिया। निस्संदेह उन्हों अपने महान व्यक्तित्व से और निरन्तर प्रचार से हिन्दुओं में जागृति उत्पन की और उनकी युगों की उदासीनता एवं अकर्मण्यता को दूर भगाया।

स्वामी जी स्वदेशी थे और भारतीयों की आर्थिक दासता को भली भांति अनुभव करते थे। उन्होंने अपने उदाहरण से अपने लेखों से और अपने व्याख्यानों से भारत में बनी वस्तुओं के व्यापक प्रयोग की शिक्षा एवं प्रेरणा दी।

स्वामी जी देशभक्त थे और जो व्यक्ति सम्पर्क में आए उनमें देश प्रेम की भावना भरने में सफल हुए। उन्होंने राजनीति के साथ सीधा सम्पर्क नहीं रखा। दूरदर्शी और कुशल माली की तरह-उन्होंने भूमि को साफ करने और इच्छा बीच बोने पर ध्यान रखा। अपने को ऊपर से

पृथक रखकर एक ऋषि की भांति वह ऋषि थे वह मूल को ठीक करने में व्यस्त रहे उन्होंने देखा कि देशवासियों की सच्चरित्रता के अनुभव के कारण ही समस्त राजनैतिक अनिष्ट व्याप्त हो रहे हैं। उनकी यह मान्यता ठीक थी कि यदि भारतीय प्रजा शारीरिक दृष्टि से बलिष्ठ धार्मिक दृष्टि से शुद्ध और सामाजिक दृष्टि से परिष्कृत हो जाये तो उनका राजनैतिक योगक्षेम सुनिश्चित है। इस दृढ विश्वास के साथ वह जाति के धार्मिक एवं सामाजिक सुधार में सर्वात्मना संलग्न रहे। सामाजिक बुराइयों और धार्मिक मिथ्या विश्वासों के विरुद्ध भयंकर युद्ध करते हुये उन्होंने अपना जीवन व्यतीत किया और हिन्दू समाज मे उन्हें सफलता पूर्वक बहिष्कृत करके उन्होंने राष्ट्रीयता की सुदृढ़ नींव रखी।

यह सत्य है कि आर्यसमाज राजनैतिक संघटन नहीं है और इसलिए उसने चालू राजनीति में भाग नही लिया। विधर्मियों से हिन्दुओं की रक्षा करने में, भ्रष्टचार और सरकारी अत्याचार का निराकरण करने में और देश के हित के कार्य में सदैव अग्रसर रहने आदि विशुद्ध धर्म का परिपालन करने के वाद-विवाद में निपुण होने और दुर्बलों असहायों और पीड़तों का रक्षक होने से आर्य समाज का सदस्य जहां कही होता है वह वहां अपना स्थान बना लेता है। स्वामी दयानन्द का अनुयायी धार्मिक उत्साह, सच्ची समाज सेवा और देश प्रेम के लिए प्रसिद्ध रहता है।

इस प्रकार स्वामी दयानन्द न केवल अद्भुत धर्म के पुनरुद्धारक एवं समाज-सुधारक हा थे अपितु वह अपने समय के सर्वोच्चराष्ट्र-निर्माण भी थे ।

शिवरात्रि का प्रकाश

(श्री प० नरेन्द्र, हैदराबाद)

कितनी शिवरात्रियां आई और चली गई कितनों का कल्याण हुआ, नही कह सकते। किन्तु वह शिवरात्रि वस्तुतः शिव-कल्याणी थो जिसने बालक मूलशंकर को सच्चे शिव को खोज के लिए प्रेरणा दी और उसे महर्षि दयानन्द के रूप में युग-युग तक मनुष्यों की पूजा और अचना के पद पर बिठा दिया।

शिवरात्रि के दिन महर्षि के हृदय में एक ज्ञान की किरण-चिनगारी प्रवेश कर गई थी किन्तु उस चिनगारी को सुरक्षित रखते हुए उसे प्रज्ज्वलित अग्नि का रूप देना जो संसार व्यापी हो रही है यह उस महत्तम लोकोत्तर पुरुष का ही सामर्थ्य था। महर्षि ने इस आग को वन, उपवनों, घाटियों और पर्वतों में साधना और तप करते हुए सुरक्षित रखा, यह आग अद्भुत थीं। अमेरिका के परम विद्वान ऐंट्रोनेक्सन डेविस ने इस आग का वर्णन बड़े सुन्दर शब्दों में किया है. वे लिखते है कि मैंने एक ऐसी आग देखी है जो सार्वभौमिक है, यह असीम प्रेम की आग है जो द्वेष को जलाने वाली है और प्रत्येक वस्तु को जलाकर शुद्ध कर रही है। अमेरिका के विस्तृत मैदानों, अफ्रीका के विशाल भूखण्डों, एशिया के गगनचुम्बी पर्वतों और यूरोप के महान साम्राज्यों पर मुझे सबको एक सूत्र में पिरोने वाली, सबको पवित्र करने वाली आग दिखाई देती है।—इस असीमित आग को देखकर जो

राज्यों, साम्राज्यों और संसार भर के प्रबन्ध नीति के दोषों को जला देगी, मैं अत्यन्त आनंदित होकर एक उत्साहमय जीवन यापन कर रहा हूं—असीम उन्नति की चमक से मनुष्य की आत्मा प्रज्वलित हो उठी हैं। आज केवल उस की चिंगारियां आकाश की ओर उड़ती है। वक्ताओं, कवियों और ग्रंथ निर्माताओं की शिक्षाओं में आज उसी की पवित्र ज्वालाएं दिख पड़ रही है। यह आग सनातन वैदिक धर्म को स्वाभाविक पवित्र दशा में जाने के लिए एक भट्टी के रूप में है जिसे "आर्य समाज" कहते हैं। यह आग भारतवर्ष के परम योगी दयानन्द सरस्वती के हृदय में प्रकाशमान हुई थी।

हिन्दु और मुसलमान इस प्रचण्ड अग्नि को बुझाने के लिए चारों ओर वेग से दौड़े, परन्तु यह आग ऐसे वेग से बढ़ती गई कि जिसका इस के प्रकाशक दयानन्द को भी ध्यान न था और ईसाईयों ने भी जिनके मत को आग और पवित्र दीपक पहले पूर्व में ही प्रकाशित हुए थे, एशिया के इस प्रकाश को बुझाने में हिन्दु और मुसलमानों का साथ दिया परन्तु यह ईश्वरीय आग और भी भड़क उठी, और सर्वत्र फैल गई। सम्पूर्ण दोषों का संगठन नित्य शुद्धि करने वाली भट्ठी में जलकर भस्म हो जायेगा, यहां तक कि रोग के स्थान में अरोग्यता, झूठे विश्वास की जगह तर्क, पाप के स्थान में पुण्य; अविद्या की जगह विद्या, द्वेष की जगह मित्रता, वैर की जगह स्नेह, नरक के स्थान में स्वर्ग, दुख के स्थान में सुख, भूत-प्रेतों के स्थान में परमेश्वर और प्रकृति का राज्य हो जायेगा। मैं इस अग्नि को मांगलिक समझता हूं। जब यह अग्नि सुन्दर पृथ्वी को नवजीवन प्रदान करेगी तो सार्वजनिक सुख-अभ्युदय और आनाद का युग आरम्भ होगा।

इस ज्ञान-ज्योति को प्रज्वलित करने में ऋषि का अपना कोई स्वार्थ नहीं था। यह तो गुरु की दक्षिणा थी, जिसके लिए जीवन पर्यन्त अविराम संघर्ष और कुरीतियों से निरन्तर युद्ध करते रहे उनको अपने कार्य में कितने कष्ट आए स्वार्थी मनुष्यों ने उनके विनाश के लिए कितने षडयन्त्र रचे यह कौन नहीं जानता।

महर्षि ने अपने स्वमन्तव्या मतव्य में लिखा है यह सिद्धान्त सर्वत्र भूगोल में शीघ्र प्रवृत्त हो जावे जिससे सब लोग सहज में धर्मार्थ, काम, मोक्ष को सिद्धि करने सदा उन्नत और आनन्दित होते रहें यही मेरामुख्य प्रयोजन है "इस युग वंद्य पुरुष की महतीय कृतियों और इस प्रकार विशालता को देखकर श्रद्धा से नत हो चरणों में लौट जाने की इच्छा होती है। भारतीय समाज ज्यों-ज्यों प्रगति कर रहा है और वह महर्षि के चरणों की ओर बढ़ रहा है।

महर्षि के प्रताप से चिरकाल से होने वाली शिवरात्री अपने सभी बन्धन तोड़कर हम आर्यों के लिए बोधरात्रि हो गई है। हम आर्यों को बोधरात्रि मनाते हुए महर्षि के प्रयोजन को सामने रखकर बढ़ना चाहिये संकुचितता छोड़ कर उदार अन्तःकरण से हमारे कार्य अवश्यमेव फलीभूत होंगे। प्राणीमात्र के कल्याण के लिए कार्य हमें इतनी शक्ति देंगे कि हम शक्तिमान आग को अपने में सुरक्षित रख सकेंगे।

इस विश्व व्यापिनी आग कभी बुझ नहीं सकती हैं। यह ज्ञान की ज्योति है जो सदा प्रकाशित रहेगी।

———

ओ३म्

समर्पण

यह अंक समर्पित है आर्य जाति के प्राण, जीवन के धन पं. लेखराम जी आर्य मुसाफिर को, जिन्होंने अपने प्राणों की आहुति देकर आर्य जाति में नव-जीवन सञ्चार किया। महर्षि के आर्ष ग्रंथों को पढ़कर अपने जीवन को उसी में ढाल लिया और जीवन पर्यन्त हिन्दु धर्म की रक्षा के लिये अपने तन-मन और धन को भी आर्य जाति के अर्पण कर दिया-अपने जीवन में जो भी उद्देश्य सामने रखा उसको जब तक पूरा नहीं किया—तब तक चैन से नहीं बैठे— पुत्र की मृत्यु हो जाने पर भी शुद्धि के कार्य को बन्द नहीं किया अपितु और अधिक साहस से कार्य किया और विधर्मियों की प्रत्येक टक्कर का मुकाबिला किया!

धर्मवीर! इसलिए आर्य जाति तुम्हारी ऋणी है। तुम्हारा रक्त हमारी वह असीम निधि है जिससे गौरव पा आज हम भी तुम्हारी राह पर चलने की प्रतिज्ञा करते हैं। एक कवि के शब्दों में :—

अमर है धर्म जाति के प्राण,
अमर है वैदिक धम महान्।
अमर है कीर्ति ध्वजा अभिराम,
अमर है वीरों का बलिदान।

—वीरेन्द्र भारती

उपराष्ट्रपति श्री बी.डी. जत्ती का सन्देश

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि आप आर्य प्रतिनिधि सभा, पंजाब के मुख पत्र 'आर्य मर्यादा' साप्ताहिक का ७ मार्च, १९७६ को 'धर्मवीर पं० लेखराम' नाम से प्रकाशित करने जा रहे हैं। मैं आपके इस अंक की सफलता के लिये अपनी हार्दिक शुभ कामनायें भेजता हूं।

आपका,

ह० (ब० दा० जत्ती)

विकासमन्त्री पंजाब का सन्देश

मुझे यह जानकार हार्दिक प्रसन्नता हुई है, कि आर्य प्रतिनिधि सभा, पंजाब, ७ मार्च, १९७६ को 'धर्मवीर पं० लेखराम अंक प्रकाशित कर रही है।

अनेक ऋषियों ने प्राचीनकाल के अत्याचार, भ्रष्टाचार और माया-जाल से मनुष्यता को मुक्ति दिलाने के लिये घोर तपस्या की और अनेकों बलिदान दिये। आज फिर वही समय है, जब मनुष्य अपनी सभ्यता और आदर्शों को भूलकर भ्रष्टाचार, तस्करी हिंसात्मक और सामाजिक कुरीतियों में मग्न हैं।
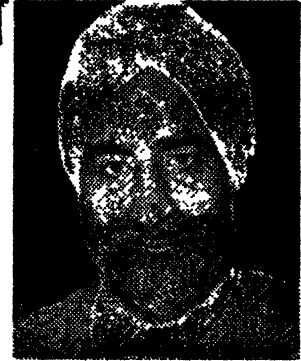
ऋषियों के विचार प्रकाशित करके लोगों तक पहुंचा कर आर्य प्रतिनिधि सभा आज के समाज को उचित नियमों पर चलाने में एक विशेष योगदान डालेगी।

मैं इस शुभ अवसर पर अपनी शुभकामनाएं भेजता हूं।

ह० सन्तोखसिंह रंधावा

सम्पादकीय—

पं. लेखराम क्या चाहते थे ?

हम प्राय: अपने शहीदों और दिवंगत नेताओं की पुण्य तिथि मनाते रहते हैं। उस दिन सभाएं की जाती हैं कई स्थानों पर जलूस भी निकाले जाते हैं और उन्हें श्रद्धांजलि भी भेंट की जाती है समाचार पत्रों में उनके गुण-गान गाए जाते हैं और जब वह दिन व्यतीत हो जाता है तो हम वर्ष भर सोये रहते हैं। किसी भी दिवंगत नेता को श्रद्धांजलि भेंट करने का यह कोई ढंग नहीं। वास्तविक श्रद्धांजलि उसी अवस्था में हो सकती है यदि हम उस उद्देश्य की पूर्ति के लिए प्रयत्न करते रहें जिसके लिये कि हमारे उस महान नेता ने अपना जीवन दिया। अपना तन मन और धन दिया और, अन्त में अपने प्राण दे दिया।

इस दृष्टि से जब हम पं० लेखराम को श्रद्धांजलि भेंट करने के लिये उनका बलिदान दिवस मनाते हैं तो हमारे लिये यह आवश्यक हो जाता है कि हम पहले यह सोचें कि उनके जीवन का आदर्श क्या था और वह क्या कुछ करना चाहते थे? कई बार कई व्यक्ति अपने देहांत से पहले इस स्थिति में नहीं होते कि वह किसी का मार्ग दर्शन कर सके या कोई ऐसा सन्देश दे सके जिस पर चलते हुए उनके बाद उनके अनुयायी उनकी विचार-धारा को क्रियान्वत कर सकें परन्तु पं० लेखराम को एक ऐसा अवसर मिल गया कि प्राण त्यागने से पहले वह आर्य समाज को एक सन्देश दे गये कि वह यह कि 'साहित्य निर्माण का काम बन्द न होने पाये। पं० जो समझते थे और उनका अनुमान बिल्कुल ठीक था कि कोई संस्था और कोई आन्दोलन उस समय तक सफल नहीं हो सकता जब तक कि उसका साहित्य जनता के हाथों में, न पहुंचे। साहित्य के द्वारा दो काम होते हैं। एक तो संस्था के अपने दृष्टिकोण का प्रचार और दूसरा संस्था के विषय में उसके विरोधी जो भ्रान्ति पैदा करें, उसका निराकरण। हमें यह मानना पड़ेगा कि आर्य समाज का सबसे उज्जवल युग वह था जब इसका उच्चकोटि का साहित्य प्रकाशित हुआ करता था। साहित्य किसी भी संस्था के लिये कहां तक सहायक हो सकता है इसका अनुमान हम इस बात से भी लगा सकते हैं कि अकेले महर्षि दयानन्द ने अपने सत्यार्थ प्रकाश के द्वारा वैदिक सिद्धान्तों और आर्यसमाज केदृष्टि-कोण का जितना प्रचार किया है वह उनके पश्चात आने वाले सब मिल कर भी नहीं कर सके। आर्य समाज की बढ़ती हुई लोकप्रियता को देख कर उसके विरोधियों ने उस पर तरह २ के आक्रमण किये परन्तु सत्यार्थ प्रकाश के द्वारा आर्य समाज प्रत्येक आपत्ति का उत्तर दे सका। महर्षि दयानन्द के पश्चात पं. गुरुदत्त विद्यार्थी, श्री स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज लाला लाजपतराय, पं. गंगा प्रसाद उपाध्याय पं. लेखराम, आचार्य रामदेव, पं. चमूपति और दूसरे कई महानुभावों ने समय २ पर कई प्रकार का

साहित्य तैयार किया और उसके द्वारा भी आर्य समाज को बहुत शक्ति और प्रोत्साहन मिला। पिछले डेढ़-दो वर्षों में आर्य समाज का जितना साहित्य प्रकाशित हुआ है उससे पहले न हुआ था। यह पं. लेखराम को हमारी वास्तविक श्रद्धांजलि है परन्तु अभी इस क्षेत्र में हमने बहुत कुछ करना है दूसरी धर्मावलम्बी संस्थाएं दिन रात नया २ साहित्य प्रकाशित करने में लगी रहती हैं और अब जो नये-२ मत हमारे सामने आ रहे हैं वे भी अपने साहित्य द्वारा ही जनता से पथ भ्रष्ट करने का प्रयत्न करते हैं। इसलिये आर्य समाज का उत्तरादायित्व और भी बढ़ जाता है हमें दो प्रकार का साहित्य तैयार करना चाहिये। एक खण्डनात्मक दूसरा मण्डनात्मक। जहां हम अपना दृष्टिकोण दूसरों के सामने रखें वहां यह भी आवश्यक है कि जो कुछ आर्य समाज और उसके प्रवर्तक के विरोध में लिखा जाता है उसका भी उत्तर दें। यदि हमने पं. लेखराम की स्मृति को सदा जीवित रखना है और उससे कुछ प्रेरणा लेनी है तो उनके अंतिम आदेश को हमें कभी भी न भूलना चाहिये कि आर्य समाज में तहरीर का काम बन्द न होने पाये।

साहित्य संस्था का प्राण होता है। जैसा साहित्य कोई संस्था तैयार करेगी वैसा ही उस का रूप जनता के सामने आयेगा। इसलिये आर्य समाज का यह कर्त्तव्य है कि पं. लेखराम जैसे अपने शहीदों और दिवंगत नेताओं की स्मृति को अमर बनाने के लिये साहित्य प्रकाशन की ओर विशेष ध्यान दें। वह इसमें जितनी रुचि लेगी उतना ही अधिक उसका प्रचार होगा और यही पं. लेखराम जैसे महान नेताओं को हमारी वास्तविक श्रद्धाञ्जलि होगी।

—वीरेन्द्र

पं. लेखराम की वसीयत और आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का कर्त्तव्य

धर्मवीर पं. लेखराम ने मरते समय एक वसीयत की थी कि आर्य समाज में साहित्य निर्माण का काम बन्द न होने पाये। हमने इस ओर इतना ध्यान नहीं दिया जितना कि हमें देना चाहिये था। आर्य समाज जन्म शताब्दी के उपलक्ष में कुछ नया साहित्य अवश्य प्रकाशित हुआ परन्तु इतना नहीं जितना कि होना चाहिये था। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब इस दिशा में अवश्य कुछ करना चाहती थी परन्तु पंजाब में जो कुछ परिस्थितियां पैदा कर दी गई हैं। उनमें कोई रचनात्मक कार्य करना कठिन हो गया है। कुछ लोगों के पास मुकद्दमे बाजी के सिवाये और कुछ काम नहीं। उनका केवल एक ही ध्येय है कि न वे स्वयं कुछ करेंगे और न किसी को करने देंगे। फिर भी आर्य प्रतिनिधि सभा धर्मवीर पं. लेखराम के प्रति अपना कर्त्तव्य निभाने का प्रयत्न कर रही है। ६—७ मार्च को कादियां में जो बलिदान सम्मेलन हो रहा है उसमें डा. भवानी लाल भारतीय को पं. लेखराम ग्रन्थ माला का पहला ग्रन्थ 'आर्य'

समाज के भावी कार्यक्रम की परिकल्पना के लिये २००० रु. का पुरस्कार दिया जावेगा। इसी के साथ आर्य समाज के विख्यात कवि श्री प्रो. उत्तमचन्द शरर को सम्मानित किया जायेगा, उर्दू साहित्य और अपनी कविता के द्वारा जितनी सेवा उन्होंने की है किसी और ने नहीं की ये दोनों महानुभाव वे हैं जिन्होंने पं. लेखराम की अन्तिम इच्छा को साकार बनाने का प्रयत्न किया है। इसके लिये हम उनके आभारी हैं और इस आधार को प्रगट करने के लिये आर्य प्रतिनिधि सभा उन्हें सम्मानित कर रही है। आशा है जो सम्मान हम इनका कर रहे हैं उसे देख कर और महानुभावों को प्रोत्साहन मिलेगा और वे भी साहित्य के निर्माण में हमारी सभा का हाथ बटाएंगे।

—वीरेन्द्र

सच्ची श्रद्धांजलि अर्पित कीजिए

लेखक—श्री भारतेन्द्रनाथ

प्राणों की आहुति देकर जिस वीर ने सत्य न्याय अधर्म की पताका को ऊंचा रखा था। जिसने सर्वस्व होम की भावना ले धरती को पूत पावन करने के लिये अपना रक्त बहाया था। अत्याचारी और अन्यायों के गढ़ों में जाकर उन को ललकारा था। प्रबल दैत्यों की सबल सेनाओं को देख जिसने कभी धीरज नहीं छोड़ा और अंतिम घड़ियों में भी जिसके शरीर का रक्त भारत-भू पर गिर इसे पवित्र कर गया उस वीर पुरुष निर्भय सिंह का अमर नाम है धर्म वीर पं० लेखराम।

लेखराम का जीवन, जीवन का हर पल, सत्य ज्ञान वेद के प्रसार के लिए था। वह जीता था अंधेरे में भटकती आत्माओं को रास्ता बताने के लिए, वह काम करता था अपने महान् गुरु महर्षि दयानन्द का—ऋण उतारने के लिये, और बलि दे गया, इस लिये कि आगे आने वाली नस्लें, उसी की राह पर चल, बलिदानों की झड़ी लगती हुई विश्व के हर अणु से इन भेद भाव भरे नारकीय पथों का संहार कर सकें।

लेखराम! तुम धन्य हो! तुम्हारी वीरता भरी भावनाएं धन्य हैं। तुम्हारी राह प्रेरणा की पावन राह है। तुम्हारा बलिदान युग को सत्य राह पर चलने का जीवित निमन्त्रण है। तुम जीवित शहीद थे मर कर तुम औरों में शहीद बनने की भावना उत्पन्न की। तुम्हारी जीवन घड़ियों को पढ़कर जीवितों का रक्त खौलता है. सोये हुए व्यक्तियों की जागरण का सन्देश मिलता है। तुम मां-भारत वसुन्धरा की अमर ललाम कीर्ति के दिव्य प्राण हो, लेखराम!

ओ लेखराम! तुमने चाहा था, धरती से अज्ञान मिटा अन्ध विश्वास समाप्त कर दूं। तुमने स्वप्न देखा था कि जो धर्म नाम लेकर घृणा ईर्ष्या और द्वेष की भट्ठी सुलगाते हैं उनके विचारों को बदल उन्हें शैतान के हाथों से निकाल प्रभु की शरण में ले आऊं और तुमने चाहा था सत्य की बुझी लौ को पुनः ज्योतित कर आह्वान करूं।

तुम केवल कल्पनाओं में ही डूबे नहीं रहे वीर! तुमने जो कहा उसे करने के लिए जीवन की आहुति दी, सत्य की आभा प्रकाशित करने के लिये तुम जले। तुम्हारा जलना विश्व की अदभत घटना थी, आर्य जाति के प्राण! मानवता के शुभ्र दीप! सखवारे! मां-भारत के ललाम मस्तक! हम तुम्हारे चरणों में कोटिशः प्रणाम करते हैं।

जीवन के अंग! आज धरती का हर कण रो रहा है। चारों ओर हाहाकार है! मानव सत्य धर्म को भूल असत्य की ज्वालाओं में धधक रहा है और हम तुम्हारे अनुयायी कि कर्तव्य मढ़ हो सोच भी नहीं पा रहे कि क्या करें?

इस निराशा को दूर करने के लिये तुम्हारी स्मृति अद्भुत प्रेरणा का कार्य कर रही है। और इसी प्रेरणा के आधार को लेकर हम यदि

कुछ भी सीख सकें, बढ़ने का संकल्प स्थिर कर सकें, तो सफलता हमारे पास आएगी ही यह विश्वास है।

आर्यों! यह देह जिसके मोह में उलझे तुम कर्तव्य पथ से विमुख हो रहे हो वह देह क्षण भंगुर है, इस लिये उठो! और इस नश्वर देह जाल में न फंस धरती पर वैदिक सूर्य का आह्वान करो। सीखो मरना, सीखो मरना, सीखो चलना और सीखो कभी कर्तव्य से विमुख न होना। ऐसा सभी कुछ सीखकर जब हम चलेंगे, तो यह असम्भव है कि महर्षि कार्य अधूरा रहे! सभी आर्य जाति के झण्डे के नीचे न आ जायें।

आर्यों! प्रण करो! जब तक भारत-भू में एक भी यवन है, ईसाई है, मूर्ति पूजक, अन्ध विश्वासी और गुरुडम प्रिय है तब तक हम चैन न लेंगे। हमारे जीवन का लक्ष्य महानाश की इन लहरों को रोकना होगा हमारा धर्म वेद-धर्म का प्रसार होगा और स्वप्न होगा मानवता की रक्षा कर दानवता का सहार करना।

वीरो! तुम लेखराम के अनुयाई हो फिर तुमने अन्यायी को मां का शिर अलग करते देखा, पैर काटते देखा, लोहूँ लुहान होते देखा? तुमने कैसे बहनों की लाज मिटते देखी? अबोध बच्चों को गुण्डों की भेंट चढ़ते देखा? और आज भी रक्षा की भीख मांगती टुकड़े हुई, मां तुम्हें पुकार रही है, मिटती सत्य की आभा तुम्हारी ओर आशा भरी निगाहों से निहार रही है, वही यवन जिन्होंने लेखराम का रक्त बहाया था भारत के दोनों ओर भारत की संस्कृति को मिटाने की तैयारी कर रहे हैं और तुम मौन होकर आलस्य और विषाद में पड़े अपनी करनी पर सफलता के गीत गा रहे हो। यह अवस्था देख परिणाम की चिन्ता में व्यग्र हो मैं तुम्हें चेतावनी दे रहा हूं।

आओ! हम एक मत होकर, आज के दिन वीर-वर-लेखराम के चरण चिन्हों पर चलने का प्रण ले सच्ची श्रद्धान्जलि अर्पित करें? क्या आप नहीं करेंगे! यह अपने हृदय से पूछिये?

—०—

शुभ विवाह

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के कार्यालयाध्यक्ष श्री पं. ओम प्रकाश जी आर्य की सुपुत्री कुमारी सुमेधा का शुभ विवाह १५ फरवरी को सहारनपुर के श्री अमरलाल के सुपुत्र श्री विजय कुमार के साथ वैदिक रीति से सम्पन्न हुआ। इसी उपलक्ष्य में ८ फरवरी को श्री आर्य के जालन्धर स्थित निवास स्थान पर परिवारिक सत्संग का आयोजन किया गया जिसमें पंजाब के भिन्न २ नगरों के आर्यजनों ने भाग लिया और सुपुत्री को आशीरवाद दिया। विवाह के अवसर पर सार्वदेशिक सभा के प्रधान श्री लाला रामगोपाल शालवाले, मन्त्री श्री ओमप्रकाश पुरुषार्थी, पंजाब सभा के मन्त्री श्री वीरेन्द्र, आर्यसमाज शक्ति नगर अमृतसर के श्री जगदीश राज, लारेंस रोड के भूतपूर्व प्रधान श्री लाला अमरनाथ महाजन. नगरपालिका अमृतसर के भूतपूर्व अध्यक्ष श्री पन्नालाल महाजन, आर्य स. पान्डुप के श्री रघुनाथ आर्य, बम्बई के श्री जयदेव आर्य इत्यादि नेताओंने शुभ सन्देश भेजे।

वीरेन्द्र भारती

धर्मवीर पं. लेखराम

(प्रेषक—कवि पं० छज्जू राम जी आर्योपदेशक जालन्धर)

महर्षि दयानन्द के लगाये हुए आर्य समाज रूपी उद्यान को सींचने और पुष्पित-पल्लवित करने वाले आदि में तीन महापुरुषों का नाम विशेष उल्लेखनीय है। एक श्री गुरुदत्त जी एम. ए. दूसरे श्री स्वामी श्रद्धानन्द और तीसरे धर्म वीर पं० लेखराम जी। यहां पर हम स्वामी श्रद्धानन्द जी द्वारा लिखित 'पं० लेखराम जी के जीवन की प्रेरणाप्रद घटनाओं' पर संक्षिप्त प्रकाश डालते हैं कि किस प्रकार आर्य समाज के वैदिक उदात्त सिद्धान्तों की रक्षा के लिये उन्होंने अपने एक-एक रक्त बिन्दु को समर्पित कर दिया था। स्वामी श्रद्धानन्द जी को भी क्या पता था कि एक दिन उन्हें भी पं० लेख राम के मार्ग का ही अनुगमन करना पड़ेगा। क्योंकि शहीद के मूल्य का अंकन सही रूप से शहीद ही कर सकता है, अन्य नहीं। जैसा कि एक नीति कार ने लिखा—

विद्वानेव विजानाति विद्वज्जन परिश्रम।
न हिवन्ध्या विजानाति गुर्वीप्रसव वेदनाम्॥

अर्थात विद्वान के परिश्रम को विद्वान ही समझ सकता है। जैसे प्रासूता स्त्री की वेदना को प्रासूता ही जानती है, वन्ध्या नहीं जान सकती

वंश परिचय तथा जन्म स्थान व अभ्यास शिक्षा नौकरी

पंजाब में झेलम जिले की चकवाल तहसील के ग्राम सय्यदपुर में मेहता नारायण सिंह के पुत्र मेहता तारा सिंह के घर ८ चैत्र संवत १९१५ वि० शुक्रवार के दिन लेखराम का जन्म हुआ था। इनके पितामह मेहता नारायण सिंह जी शाण्डिल्य गोत्रीय सारस्वत ब्राह्मणों में से थे। लेखराम के दो भाई तोता राम बालकराम और मायावन्ती नाम की एक भागिनी थी। लेखराम को छः वर्ष की आयु में ग्राम के स्कूल में उर्दू फारसी की शिक्षा दिलायी गई। दृढ़ धार्मिक संस्कार इनके बचपन में ही जम गये थे। १७ वर्ष की आयु में उन्हें उनके चचा गण्डा राम जी ने पेशावर की पुलिस में भरती करा दिया। नौकरी के पांच वर्ष पश्चात सं० १९३९ में लेखराम के विचारों में परिवर्तन होने लगा। ये शरीर से स्वस्थ्य, आकर्षक व्यक्तित्व एवं प्रतिमा सम्पन्न थे। स्मरण शक्ति तीव्र थी। आरम्भ से ही निर्भयता व स्पष्ट वक्तृता के लिये प्रसिद्ध थे। नौकरी से पूर्व ही एक धार्मिक सिक्ख सिपाही के सत्संग से लेखरामको ईश्वरीय उपासना का अभ्यास हो गया था। गुरुमुखी में लिखी हुई गीता का भी ये अभ्यास करते थे। परिणामतः उनकी श्रीकृष्ण में अगाध श्रद्धा उत्पन्न हुई और कृष्ण नाम का जाप करने लगे। उन दिनों लेखराम नवीन वेदान्तियों के रंग में रंगे हुए थे। कृष्ण भक्तिसे मन में वैराग्य के भाव उदय हुएं। सांसारिक ऐश्वर्यों से घृणा होने लगी जिससे कि आगे चल कर सरकारी नौकरी से त्यागपत्र देना पड़ा।

२१ वर्ष की आयु में इनके विवाह का प्रसंग चला तो साफ इन्कार कर दिया। परन्तु कुछ काल पश्चात बहुत कुछ समझाने पर लेखराम का विवाह भी हो गया। सौभाग्य से उन्हें धर्म पत्नी भी पति परायणा मिल गयीं जो पति की भान्ति ही धार्मिक विचार की थीं।

पं० लेखराम एक जागृत बुद्धि के व्यक्ति थे। उन्हें इस बात में भ्रम था कि जीव ही ब्रह्म कैसे हो सकता है। इसी कारण वे उस समय के धार्मिक विचारों से सन्तुष्ट न थे। उनकी धार्मिक जिज्ञासा बढ़ने लगी और सत्य धर्म की परीक्षार्थ वे इस्लाम मत की व पौराणिक मत की पुस्तकें विशेष रूप से देखने लगे। एक दिन उनसे जब पूछा गया कि आप इस्लामी पुस्तकें क्यों पढ़ते है ऐसा न हो कि आप मुसलमान हो जायें। तब लेखराम ने उत्तर दिया कि पानी से भरे हुए दस घड़ों को देखना पड़ेगा कि किस घड़े का पानी ठण्डा और मीठा है। अर्थात सब मतों की पुस्तकें पढ़ने से ही सत्य धर्म का पता लग सकेगा।

आर्य समाज में प्रवेश और महर्षि दयानन्द से भेंट—

पंजाब के मुन्शी एक अलखधारी जी ने कुछ पुस्तकें लिखी थीं। जिनमें अपने वक्तव्य की पुष्टि के लिये उन्होंने स्वामी दयानन्द सरस्वती जी के लेखों का प्रमाण दिया हुआ था। उनकी पुस्तकें लेखराम जी ने पढ़ीं तो उनको स्वामी दयानन्द के नाम और प्रशंसा का पता चला। समाचार पत्रों में भी स्वामी जी के धर्म प्रचार और काम की धूम मची थी। पण्डित लेख राम ने अपने अद्वैत मत से स्वामी जी के सिद्धान्तों से मिलान किया तो उनका झुकाव वैदिक सिद्धान्तों की ओर हो गया और अद्वैतवाद से घृणा होने लगी। निदान उन्होंने ऋषि प्रणीत ग्रन्थों को मंगा कर पूर्ण मनोयोग से पढ़ा और वैदिक सिद्धान्तों से प्रभावित होकर अद्वैतमत त्याग कर विशुद्ध वैदिक धर्मी बन गये। पश्चात उन्होंने आर्य समाज में प्रवेश लेकर संवत् १८३७ के अन्त में पेशावर में आर्य समाज की स्थापना कर दी। स्वयं नियमपूर्वक नित्य कर्म करने लगे। किन्तु दूसरे व्यक्तियों को वैदिक धर्म का सम्यक ज्ञान कराने में वे अपने को पूर्ण समर्थ न समझते थे। उस ज्ञान पूर्ति और संशय निष्टत्ति के लिये उन्होंने निश्चय किया कि स्वामी दयानन्द की शरण में जाकर उनका आशीर्वाद प्राप्त किया जाये। ऐसा दृढ़ निश्चय करके वे अमृतसर, लाहौर, मेरठ आदि नगरों की आर्य समाजों में रुकते हुए १६ मई को स्वामी दयानन्द के दर्शनार्थ अजमेर पहुंचे और १७ मई सन् १८८० ई० को सेठ फतहचन्द की वाटिका में महर्षि दयानन्द से लेखराम जी की प्रथम बार भेंट हुई। उनके दर्शनों से लेखराम हर्ष से गदगद हो गए और वे यात्रा के सब कष्टों को भूल गये। पुनः उन्होंने स्वामी से सत्य धर्म सम्बन्धी सभी संशय दूर कर लिये। स्वामी जी के सन्तोषजनक उत्तरों से उन्हें पूर्ण आत्म शान्ति मिली। परिणाम यह हुआ कि स्वामी जी के थोड़े ही सत्संग से लेखराम का जीवन बदल गया और वे पूर्ण दृढ़ वैदिक धर्मानुयायी बन गये।

अजमेर से लौटकर उन्हें धर्म प्रचार की धुन सवार हो गयी और पेशावर आर्य समाज की ओर से अपने ही सम्पादकत्व में "धर्मोपदेश' नाम से उर्दू का मासिक पत्र निकलवाया। इसके अतिरिक्त वे जनता में मौखिक प्रचार भी करते रहे। वक्तृत्व कला बढ़ जाने पर लेख लिखने और वेद विरोधियों से वाद विवाद भी आरम्भ कर दिया। बहुत से उच्च शिक्षित व्यक्ति इनके

प्रभाव में आकर वैदिक धर्मी बनने लगे। लेख राम जी के भाषणों की मतवादियों में धूम मची हुई थी। यद्यपि वे विधर्मियों के प्रश्नों का उत्तर अति प्रेम के साथ देते थे, तथापि उन दिनों प्रभाव में आकर वैदिक धर्मी बनने लगे तथापि उन अन्दर ही अन्दर मतवादी लोग उनसे द्वेष मानने लग गये थे। अभी तक लेखराम अनमने रूप से नौकरी कर रहे थे। सं० १८८२ में पंण्डित लेखराम को पेशावर में स्वामी दयानन्द के दो पत्र मिले। एक गौरक्षा विषयक प्रार्थना पत्र प्रजा के हस्ताक्षरों के लिए था, दूसरा पंजाब में हिन्दी प्रचार के लिए था। ये दोनों काम लेखराम जी ने सोत्साह सम्पन्न कराये।

लेखराम जी के बढ़ते हुए प्रभाव को देखकर कुछ मतवादियों ने आर्य समाज के सिद्धांतों के विरोध में पुस्तकें लिखी। जिनका उत्तर उन्होंने पुस्तकें लिख कर ही दिया। सभी आक्षेपों का उन्होंने मुंह तोड़ उत्तर दिया। इसी दौरान में सन् १८८३ के कार्तिक मास में महर्षि दयानन्द जी की शोक जनक मृत्यु हो गई। उनकी दुःखद मृत्यु के समाचार से पं० लेखराम अत्यन्त अधीर हो उठें। किन्तु ईश्वर की इच्छा को प्रधानता देकर हृदय में सन्तोष किया और 'यद भाव्यं तद्भविष्यति' पर विचार करते हुए साहस पूर्वक और भी तीव्रता से वेद प्रचार में संलग्न हो गये। उनका उद्देश्य था कि संसार के अधिकतम लोगों को वैदिक धर्मी बना कर ऋषि दयानन्द के स्वप्न को साकार बनाया जाए।

सर्विस त्याग के पश्चात शीघ्र ही प्रथम लेख राम जी आर्यसमाज रावलपिंडी के वार्षिक उत्सव पर पहुंचे। वहां 'सद्धर्म प्रचारक पत्र में छपा एक उदारता पूर्ण लेख पढ़कर सुनाया। उसका भाव था कि स्वामी दयानन्द और बाबा नानक जी के ख्यालात लगभग समान थे। बाबा नानक जी के उपदेश वेद के विरुद्ध न थे और उन्हीं उपदेशों के प्रचार से उन्होंने आर्य धर्म फैलाने का बड़ा प्रयत्न किया था। रावलपिन्डी से पं० लेखराम जी गुरदासपुर पहुंचे। वहां व्याख्यान देने के पश्चात लाहौर चले गये। लाहौर में प्रचार जारी रखते हुए संस्कृत व्याकरण का अभ्यास करते रहे। वे वैदिक साहित्य का स्वाध्याय विशेष रूप से करने लगे। अविद्यान्धकार को देखकर उनके हृदय में उथल-पुथल मची हुई थी कि किस प्रकार लोगों को वैदिक मान्यताओं से परिचय कराया जाये। ऋषि दयानन्द की मृत्यु के पश्चात लेखराम जी ने १८ अप्रैल को पेशावर के लिए प्रस्थान किया और २५, २६, अप्रैल को आर्य समाज के वार्षिक उत्सव में सम्मिलित हुए। वहां २८ अप्रैल तक प्रचार किया। आगामी वर्ष के चुनाव में पं० लेखराम ही प्रधान नियत हुये फिर निरन्तर प्रचार और मतवादियों से शास्त्रार्थ करते रहे। साथ-साथ ही विधर्मी बने हुए आर्यों (हिन्दुओं) को वैदिक धर्मी बनाने में भी भारी प्रयत्न करते रहे।

सन् १८८६ के आरम्भ में पं० लेखराम की वक्तृता एवं योग्यता की सर्वत्र प्रशंसा होने लगी थी। विधर्मियों के हौंसले पस्त होने लगे। उन्हें सर्वत्र मुंह की खानी पड़ती थी। वेद विरोधी मतानुयायियों के उत्तर देने के लिए उन्होंने कई पुस्तकें लिखी। जिनमें कुलियात आर्य मुसाफिर विशेष उल्लेखनीय है। अरबी फारसी के वे बड़े

ज्ञाता थे। स्कूली शिक्षा अधिक न होने पर भी उन्होंने अपने अथक परिश्रम से भारी ज्ञान का संचय कर लिया था। उनका अध्यवसाय एवं कार्य कुशलता सराहनीय थी। इसी से उनकी योग्यता व अनुभव का पता चलता है। सन् १८८७ में पं० लेखराम जी 'आर्य गजट' फिरोज पुर' के सम्पादक बने और लगभग २ वर्ष तक वे उसका सम्पादन करते रहे। उनके लेखों को पढ़ कर अनार्यों का हृदय डोल जाता था। उनकी युक्तियां अकाटय थी।

उस समय ऋषि दयानन्द निर्वाण के साढ़े चार वर्ष व्यतीत हो चुके थे। जनता ऋषि दयानन्द के जीवन चरित्र की मांग कर रही थी। आर्य-समाज मुलतान ने अपने १८८८ के एक अधिवेशन में ऋषि जीवन लिखने और उस सामग्री को इकट्ठा करने के लिए पं. लेखराम को नियत करने की राय दी। पुनः आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के १ जुलाई सन् १८८८ के अधिवेशन में में यह प्रस्ताव पेश हो कर स्वीकार किया गया। तब पं. लेखराम ने "आर्यगजट" का सम्पादन कार्य त्याग दिया और सच्चे आर्य मुसाफिर बन कर ऋषि जीवन की घटनाऐं एकत्रित करने के लिये निकल पड़े। १२ दिसम्बर की शाम को वे जालन्धर पहुंचे। वहां "ईश्वरीय ज्ञान वेदों के विषय में उन्होंने सारगर्भित भाषण दिया।

जालन्धर से चल कर पं. लेखराम जी मथुरा पहुंचे। वहां एक मास तक स्वामी दयानन्द जी व उनके गुरु के जीवन सम्बन्धी वृत्तान्तों का लोगों से पता लगाया और उसे लिखा। स० १८८९ में वे निरन्तर उत्तरप्रदेश में काम करते रहे। पश्चात् मथुरा से वे अजमेर पहुंचे और ऋषि जीवन की सामिग्री इकट्ठी करते रहे। आर्यसमाज की उन्नति देख कर अजमेर के विधर्मियों में बड़ी अशान्ति छायी हुई थी। उन्होंने समय पर आर्यों पर आक्रमण कर दिया था और सैंकड़ों ने मिल कर यह धमकी दी कि जो कोई दूसरा आर्य बीच में बोलेगा तो यह मारा जायगा। बोलने वालों में लेखराम ही विशेष थे। अत: ऐसे अशान्त वातावरण में आर्यों को अपनी चिन्ता तो न रही पर पं. लेखराम के रक्षा की चिन्ता बढ़ गयी। उनकी रक्षार्थ चार व्यक्ति नियत कर दिये। यह देख कर पं. लेखराम ने कहा कि तुम लोग बड़े डरपोक हो। मुझे कोई भय नहीं मेरी रक्षा की आवश्यकता नहीं है। इस प्रकार ऋषि जीवन लिखते हुए भ्रमणकाल में वे रुग्ण हो गये और दो सप्ताह में स्वस्थ हुए।

उन दिनों कुछ दूषित वातावरण देखकर पं. लेखराम को सावधान किया कि ऐसा न हो कोई विधर्मी आपके ऊपर घातक आक्रमण कर दे। पं. जी ने उत्तर में यही कहा-धर्म के लिये शहीद होने के बराबर और क्या उत्तम कार्य हो सकता है, इसकी मुझे परवाह नहीं है। उनका विचार था कि स्वामी जी का जीवन पूरा लिख कर अफगानिस्तान, तुर्कीस्तान आदि में भी वैदिक धर्म का प्रचार किया जाये। जीवन चरित्र लिखते हुए पं. जी के कार्य में कई बार रुकावटें भी आयीं। परन्तु वे अडिग रह कर कार्य करते ही रहे। जीवन चरित्र पूरा करने के पश्चात् स० १८८६ में पं. लेखराम जी के पिता का देहान्त हो गया। फिर भी उन्होंने अपने जिम्मेवारी के कार्यों को पूर्णतया निभाया। उन्होंने कितने ही शास्त्रार्थ किये। सहस्रों को विधर्मी होने से बचाया। ३३ छोटी बड़ी पुस्तकें लिखीं और ८८० पृष्ठ का स्वामी दयानन्द का जीवन चरित्र लिखा। वे बड़े ही सदाचारी कर्मनिष्ठ ब्राह्मण थे, दैनिक जीवन नियमित और आदर्श था। वैसी ही उनकी धर्मपत्नी लक्ष्मी देवी थीं।

(शेष पृष्ठ १८ पर)

लेखनी के धनी धर्मवीर पं. लेखराम

(ले०—प्रि० श्री रामचन्द्र जावेद)

आर्य समाज का यह सौभाग्य ही समझिये कि उसे एक दूसरे के पश्चात ऐसे नेता मिलते गये जिन्होंने ऋषि दयानन्द के मिशन को अपना मिशन समझा और बड़े मान तथा गौरव के साथ जिनके सम्बन्ध में यह कहा जा सकता है कि वह जिये तो आर्यसमाज के लिये जिये और मरे तो आर्यसमाज के लिये मरे।

पण्डित गुरुदत्तजी के पश्चात् उनका स्थान पण्डित लेखराम जी को मिला। वैसे तो वह १८८४ ई० में ही अपनी सरकारी नौकरी छोड़ कर आर्य समाज में आ गये थे किन्तु सर्वस्व त्यागियों के इस मण्डल में उनका नम्बर अभी बहुत पीछे था। परन्तु वह इस सुदृढ़ता और कर्मठता से आगे बढ़े कि गुरुदत्त जी के पश्चात् उनका नाम आर्यसमाज के दीवानों में प्रथम पंक्ति में था।

१८८४ से १८९७ तक केवल तेहर वर्ष उन्हें काम करने को मिले। इन तेरह वर्षों में उन्होंने अपना एक-एक क्षण आर्यसमाज के अर्पण किया। प्रचार, शंकासमाधान, शास्त्रार्थ और अपने भोले-भाले भाइयों की धर्म रक्षा के अतिरिक्त वह पहले व्यक्ति थे, जिन्होंने पहली बार आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द का जीवन चरित्र लिखने का गौरव प्राप्त किता। इन सब कामों के अतिरिक्त इस संक्षिप्त काल में उन्होंने आर्यसमाज की छोटी बड़ी ३३ बहुमूल्य पुस्तकें लिखीं जिन्हें उनके देहांत के पश्चात संकलित करके महात्मा मुन्शी राम जी ने 'कुलियात आर्य मुसाफिर' के नाम से प्रकाशित कराया।

चूंकि उनके जीवन का प्रारम्भिक काल पेशावर जैसे मुस्लिम बहुमत वाले प्रदेश में बीता था, इसीलिए उनका उर्दू, फारसी और अरबी का अध्ययन बहुत विस्तृत था। जिसके द्वारा इन्होंने इस्लाम को ठीक-ठीक समझ कर आर्यसमाज द्वारा इस्लाम के खण्डन का नया आंदोलन आरम्भ किया और शुद्धि का चक्र चला कर इस्लाम में गये हुए अपने अबोध भाइयों को हिन्दू धर्म में वापिस लेना आरम्भ किया। निश्चय ही पण्डित जी के यह दोनों आन्दोलन सर्वथा नये थे। जिस हिन्दू धर्म पर अब तक सब ओर से आक्रमण हो रहे थे और जिस हिन्दू जाति ने अब तक अपनी गोदी के लाल और जिगर के टुकड़े लुटाना और अपने से जुदा करना ही सीखा था वह जाति कभी इस योग्य भी हो सकेगी, यह किसी के स्वप्नों में भी न था। अहिन्दू जाति में विशेषतः इस्लाम वालों के लिए यह सर्वथा असहनीयथी। इसलिए सन् १८९० में पण्डित जी के क्रोध और रोष का शिकार होना पड़ा। ६ मार्च १८९७ को उन्हें शहादत का ताज पहनाया गया और वह चालीस वर्ष की चढ़ती जवानी में पण्डित गुरुदत्त जी के साथ हो गये।

स्वर्गीय मिर्जा गुलाम अहमद ने उन दिनों इस्लाम में मिर्जाई अहमदी अथवा कादियानी सम्प्रदाय को जन्म दिया था। वह अपने चमत्कारों से मुसलमानों की एक बड़ी संख्या को अपनी ओर आर्कषित कर लेने में सफल हो गये थे। पण्डित लेखराम जी ने उनको भी शास्त्रार्थ के लिये ललकारा। यद्यपि उन दोनों में एक बार भी आमने सामने शास्त्रार्थ न हो सका था किन्तु दोनों में लिखित शास्त्रार्थ बड़े जोर से हुआ। स्व. मिर्जा साहब ने "सुरमा चश्मे आर्य" नामक पुस्तक आर्य समाज के विरुद्ध लिखी। और स्वर्गीय पण्डित जी ने इसके उत्तर में "नुस्खा खब्त अहमदियां" पुस्तक लिखी, पंडित जी की एक और पुस्तक "तकजीब बुराहीन अहमदियां" इससे पूर्व निकल चुकी थी। अहमदियों के सम्बन्ध में पण्डित जी की तीसरी पुस्तक का नाम था "अबताले बुशारत अहमदियां" इन पुस्तकों के अतिरिक्त उन्होंने "रिसाला जहाद" "हुज्जतुल इस्लाम" और "रद्दे खिलअत इस्लाम" आदि कई पुस्तकें इस्लाम के सम्बन्ध में लिखीं। जिस से इस्लामी संसार में बहुत हलचल मच गई। अमृतसर, मिर्जापुर, प्रयाग, लाहौर, मेरठ और देहली में एक दूसरे के पश्चात् मुसलमानों के दिल दुखाने के आरोप में उन पर अभियोग चलवाये गये। किन्तु वह सबमें सम्मानित तौर पर रिहा हो गये। देहली का अभियोग वहां के कप्तान डेविस की कचहरी में प्रस्तुत हुआ था। कप्तान साहब ने उन पुस्तकों मंगवा कर स्वयं सुना था जिनके उत्तर में पण्डित जी ने अपनी पुस्तकें लिखी थीं। उन पर कुछ ऐसा प्रभाव पड़ा कि उन्होंने लेखक और प्रकाशक दोनों को बुलाये बिना मुकद्दमा खारिज कर दिया। सितम्बर १८९६ में इसकी पुन: निगरानी हुई। जो बाद में खारिज हो गई। इस प्रकार सितम्बर १८९६ में पण्डित लेखराम जी पर बम्बई में मुसलमानों की ओर से अन्तिम अभियोग चलाया गया जिसकी असफलता पर मुसलमान बिगड़ गये और उन्होंने पण्डित जी को इस्लाम के विरोध का मजा चखाने का निर्णय कर लिया।

फरवरी १८९७ में एक बिहारी मुसलमान पण्डित लेखराम जी के पास शुद्ध होने के लिये आया। वह अपने आप को बंगाली कहता था और यह बताता था कि दो वर्ष पूर्व वह हिन्दु था। गलती से मुसलमान हो गया है और अब पुन: शुद्ध होना चाहता है। वास्तव में वह चार मार्च की ईद के दिन पण्डित जी को शहीद करके "गाजी" बनना चाहता था। इस काल में उस का काम पण्डित जी से सम्पर्क बनाना था। चार मार्च को तो पण्डित जी मुलकात समाज के उत्सव के लिए गए हुये थे। ६ मार्च को वह वापिस लौटे। दो बजे मध्याह्न वह पण्डित जी को सभा कार्यालय से घर ले आया और सायं काल को जब वह महर्षि दयानन्द के जीवन चरित्र का अन्तिम दृश्य लिख कर उठें थे तो उस बिहारी मुसलमान ने जो सम्भवत: बूचड़ था, पण्डित जी के पेट में छुरा घोंप दिया। जिससे आठ-दस भीषण घाव उनको ऐसे लगे कि सारी अन्तड़ियां बाहर आ गईं। पण्डित लेखराम एक हाथ से अन्तड़ियां सम्भाल कर दूसरे हाथ से आततायी का मुकाबला करते रहे। उन की धर्म पत्नी और माता जी भी उनकी सहायता को पहुंचीं किन्तु वह निर्दयी अपना काम पूरा करके उन सब की पकड़ से ऐसा भागा कि फिर हाथ न आया। धर्मवीर को ऐसी हालत में

हस्पताल पहुंचाया गया। दो घण्टे तक डा. पेरी कटी हुई अन्तड़ियों को सीते रहे। डाक्टर जी पं. जी के धैर्य पर हैरान थे। वह सोचते थे कि इतना खून निकल जाने के पश्चात् भी यह व्यक्ति किस प्रकार जीवित है? आखिर वह अभागी घड़ी भी आ पहुची जिसके लिये उस समय के मुसलमान अधीर हो रहे थे, रात्रि के दो बजे पण्डित जी ने अपने प्यारे साथियों को यह अन्तिम सन्देश दिया कि आर्य समाज से लेख का काम बन्द न हो' और पुनः सदा की नींद सो गये।

दूसरे दिन शहीद की अर्थी निकली। धर्मवीर के शव का जलूस जिस शान से निकला उसका आंखों देखा हाल महात्मा मुन्शीराम जी के शब्दों में पढ़िए—

"अर्थी उठाई गई और शहीद की सवारी सीधी अनारकली में पहुंची। थोड़ी ही देर में दस हजार का तांता साथ था। यहां माता जी भी आ पहुंचीं जिनका विलाप सुन कर बीस हजार आंखों से नदियां बहने लगीं। एक युवक अचेत होकर गिर पड़ा। अर्थी नगर में प्रविष्ट हुई, वे लोग जो कभी अपनी दुकान से हिलकर किसी सभा या सोसाइटी में नहीं गये, गुलाब जल के कनस्तर अर्थी पर बहा रहे थे। किसी-किसी स्थान पर तीस-तीस हजार की भीड़ हो जाती थी। फूल बेचने वालों ने मुंह मांगे दाम पाये। भूमि फूलों की वर्षा से रंगी पड़ी थी। ऐसा लगता था कि चिर से सोई हुई आर्य जाति जाग उठी है।"

ऋषि दयानन्द को अपनों ने विष दिया था। किन्तु पण्डित लेखराम जी एक अहिन्दु की छुरी का शिकार हुए थे। इसलिये स्वाभाविक तौर पर पण्डित जी की शहादत पर हिन्दू मात्र को आर्य समाज से सहानुभूति हो गई थी। जिससे आज तक आर्य समाज का नाम नहीं सुना था, पण्डित लेखराम की मृत्यु ने उसके कानों तक आर्य समाज को पहुचा दिया। निःसन्देह उनकी शहादत ने जहां जाति में नवजीवन का संचार किया वहां आर्य समाज की झोली भी नये फूलों से भर दी। स्वयं आर्य समाज के दो धड़ों में उनकी शहादत ने फिर एक होने की इच्छा उत्पन्न की। जो श्मशान भूमि के वैराग्य के साथ धीरे-धीरे अपने आप कुछ काल पश्चात् समाप्त हो गई।

("पंजाब का आर्य समाज" के "लेखराम काल") से साभार।

अवकाश सूचना

आर्य मर्यादा के पाठकों को सूचित किया जाता है कि धर्मवीर पं० लेखराम बलिदान दिवस ६ मार्च के कारण आर्य मर्यादा कार्यालय बन्द रहेगा तथा अगामी १४ मार्च का अंक भी प्रकाशित नहीं होगा। पाठक महानुभाव नोट करें। —व्यवस्थापक

ऋषि बोधोत्सव

दीनानगर—दयानन्द मठ दीनानगर में भी ऋषि बोधोत्सव मनाये जाने का समाचार प्राप्त हुआ है। १४ फरवरी से त्यागमूर्ति स्वामी सर्वानन्द जी सरस्वती की वेद कथा होती रही—२८ फरवरी को बृहत यज्ञ हुआ और ऋषि के जीवन पर प्रभावशाली भाषण हुये। शाम को दंगल हुये—विशाल ऋषि लंगर का भी आयोजन किया गया।

आर्य बहनों से

आज वह पवित्र दिन है जिस दिन महर्षि दयानन्द के सच्चे शिष्य धर्मवीर पं० लेखराम ने अपने गुरु के महान कार्य को पूरा करने के लिए अपनी आहुति दी थी। उनका केवल एक ही लक्ष्य था, मेरे गुरु का कार्य अधूरा न रहे।

बहनों! दिन बीतते जा रहे हैं, वर्ष दौड़ रहे हैं पर महर्षि दयानन्द का काम अधूरा पड़ा है। वह हमारी ओर देख रहा है। आज को पुकार रहा है। क्या हम इस बारे में कुछ सोचेंगे?

मैं इसके लिए कोई लम्बी चौड़ी स्कीम आप के सामने नहीं रख रहा, कहना केवल यह है कि आप क्या इस अधूरे काम को पूरा करने के लिये कुछ त्याग करेंगे। अपनी अंधकार में भटकने वाली बहनों को सही राह पर लाने के लिए, उनके अंध विश्वासों को दूर करने के लिए प्रयत्न करेंगी।

एक ही श्रद्धांजलि है जो आप अमर शहीद के पुण्य नाम पर अर्पित कर सकती हैं और वह यह कि कठिन आपत्तियों को देखकर भी हम पीछें न हटें। सत्य धर्म पर दृढ़ रहने के लिए यदि हमें अपने प्राणों की भी आहुति देनी पड़े तो हम न हिचकिचाएं और वीरता त्याग व बलिदान की प्रेरणा अपने बच्चों को घुट्टी में पिलाएं, ताकि साहसी बच्चे लेखराम की राह पर चलते हुए धर्म की ध्वजा फहराने में सफल हो सकें।

क्या ऐसा होगा? आप जीवन का पथ बदलेंगी? यही एक प्रश्न है जिसका उत्तर भली भांति विचार कर आपने देना है।

—भारती

वीर! लेखराम!

(१)

धन्य! धन्य! प्राण!
वीर!...... ..लेखराम!
धर्म राष्ट्र के शहीद!
सत्य, न्याय पुंज दीप!
धीर-वीर शुद्ध रूप!
पाप-काल न्याय दूत!
ज्ञान के विहान!
वीर!... ......लेखराम!!

(२)

तुम बढ़े, धरा बढ़ी!
प्रेम की ध्वजा चढ़ी!
उच्च वेद श्रृंग पर!
गूंजते सुबन्ध स्वर,
रक्त बिन्दु जब गिरे,
आर्य भाग्य भी फिरे!
दीप्त हो ललाम!
वीर!.........लेखराम!!

(३)

हम बढ़े, चले चलें!
भव्य भाव, सीख लें!!
प्राण दान दे सकें!
शुभ्र चाह ले सकें!!
लेखराम से बनें।
ताप विश्व खो सकें।।
लें न थक विराम।
वीर!.........लेखराम!!

—भारतेन्द्र नाथ

वेद प्रचार विभाग की सूचनायें

१. आर्य समाज अड्डा होशियारपुर जालन्धर का वार्षिकोत्सव समारोह सम्पन्न।

आ० स० अड्डा होशियारपुर जालन्धर, जिला जालन्धर का एक प्रसिद्ध और सबसे पुराना समाज है। स्वामी श्रद्धानन्द और ला० देवराज जी इसके निर्मातओं में से थे। इस वर्ष समाज के उत्सव से पूर्व सभा के सुयोग्य महोपदेशक इतिहास केसरी श्री पं० निरन्जन देव जी द्वारा प्रातः यज्ञ और रात्रि को सुन्दर वेद कथा होती रही सभा की प्रसिद्ध भजनमण्डली श्री राम नाथ यात्री और साईं दास जी तबलावादक भजनों ने खूब रंग जमाया।

२७ फरवरी को आर्य प्रतिनिधि सभा के मंत्री श्री वीरेन्द्र ने ध्वजारोहण किया।

आपने भाषण में श्री वीरेन्द्र ने कहा कि आर्य समाज की यह ध्वजा वैदिक मान्यताओं की प्रतीक है। इसलिए यह ध्वजा हमें एकता का सन्देश देती है वहां के अन्याय के विरुद्ध संघर्ष को भी आह्वान करती है। इसलिये हमें सामाजिक बुराईयों के विरुद्ध संघर्ष करने के लिए कटिबद्ध हो जाना चाहिये। उत्सव में आचार्य प्रियव्रत जी वेदालंकार भूतपूर्व उपकुलपति गुरुकुल कांगड़ी, प्रो० राजेन्द्र जिज्ञासु एम० ए० प्रो० राम विचार जी एम० ए०, श्री पं० नन्द लाल जी वानप्रस्थी और श्री पं० छाजु राम जी पुरोहित समाज और सभा कार्यालयध्यक्ष श्री ओमप्रकाश आर्य के मनोहर प्रवचन और व्याख्यान हुये। विभिन्न स्कूलों के छात्र-छात्राओं ने तथा कालेज के विद्यार्थियों ने भाषण प्रतियोगिताओं द्वारा अच्छा प्रभाव डाला। उत्सव पूर्णरूपेण सफल रहा।

आर्यसमाज बस्तीगुजां जालन्धर में बोध उत्सव सप्ताह

सभा के सुयोग्य उपदेशक श्री पं. सत्यव्रत जी तथा श्री श्याम सिंह हितकर की प्रसिद्ध भजनमण्डली ने इस समाज में निरन्तर २२ से २९-२-७६ तक प्रभावशाली ढग से प्रचार किया। सभा का वेद प्रचारार्थ २०१) प्राप्त हुए।

आर्य समाज समराला

२२-२ ७६ से २८-२-७६ तक ऋषिबोधोत्सव के उपलक्ष्य में सभा के गायक श्री ओमप्रकाश पाराशर तथा श्री अमर सिंह जी ने अपने भजनोपदेश से सभी को प्रभावित किया। १०२) सभा को वेद प्रचारनिधि में प्राप्त हुए।

४. आर्य समाज सै. २२ चण्डीगढ़

चण्डीगढ़ का यह सबसे पुराना और प्रचार की दृष्टि से अत्यन्त रुचि और श्रद्धा से प्रचार कराने वाला प्रसिद्ध समाज है निरन्तर दो सप्ताह से अर्थात् २६-२-७६ से ८-३-७६ तक वहां प्रचार का आयोजन किया गया सामने इस प्रचारायोजन को सफल बनाने के लिए पहले पूज्य स्वामी सुकर्मानन्द जी तथा श्री सुरेन्द्रनाथ गुलशन जी को भेजा था अब श्री पं. निरंजनदेव जी और श्री हितकर भजनमण्डली वहां प्रचारार्थ भेज दी गई है यज्ञ, कथा और उत्सव का सारा कार्य प्रभावशाली ढंग से चल रहा है।

यार्यसमाज माडल टाऊन पटानकोट

२२ से २८ फरवरी तक ऋषिबोध सप्ताह में समाजी की ओर से श्री पं. मथुरादास जी आर्योपदेशक और श्री स्नेही जी निरन्तर प्रचार करते रहे। मेजिक लेण्टर्न द्वारा किए गए इस प्रचार

आर्य समाज जालन्धर छावनी

इस समाज में भी ऋषि बोधोत्सव बड़ी धूम-धाम से मनाया गया। प्रातः काल यज्ञ हुआ। स्कूल तथा कालेज में छात्राओं के गीत तथा भाषण हुए। तत्पश्चात पंडित टेकचन्द वेद विद्यार्थी तथा 'आर्य मर्यादा' के व्यवस्थापक श्री वीरेन्द्र भारती के भाषण हुए। यज्ञशेष भी बांटा गया।

की सभी ने बड़ी सराहना की। श्री स्नेही जिसके सुमधुर गानों ने भी अपना विशेष प्रभाव उत्पन्न किया।

आर्यसमाजों से विशेष निवेदन

अब ऋतु में काफी तब्दीली आ गई है। अपने समाज का उत्सव शीघ्र निश्चित करा लीजिए। सभा आपके उत्सव को सफल बनाने में पूरा-पूरा सहयोग देगी।

ओमप्रकाश आर्य
कार्यालयध्यक्ष

(१२ पृष्ठ का शेष)

पंजी ने उनके नाम जी तेजी हो २ हजार रुपयों का जीवन बीमा करा दिया था। उनकी पत्नी ऐसी उदार निकली कि वे २ हजार रु, उन्होंने गुरुकुल कोष में जमा करा दिये। ताकि आर्य-पथिक स्मारक में एक छात्र सदा उनके व्यय से पढ़ता रहे। यद्यपि विधर्मियों द्वारा पं. लेखराम के मारे जाने के कई स्थानों से उन्हें समाचार मिले। परन्तु, 'ईश्वरेच्छा वरीयसी, के विश्वास पर उन्होंने परवाह नहीं की। अन्त में वह दुर्दिन भी आ पहुंचे जब कि पं० लेखराम को एक विधर्मी ने ६ मार्च १८८७ को छुरा घोंप कर शहीद कर दिया। पं० लेख राम जी गायत्री का जाप करते हुई सदैव के लिए अनन्त में विलीन हो गये और मृत्यु से पूर्व उपस्थित आर्यों को अंतिम सन्देश दे गए कि आर्यसमाज से लेख का कार्य बन्द न हो। इस प्रकार उन्होंने अपनी लोक लीला संवरण कर दी और अमर हुतात्मा आर्य मुसाफिर नाम से आर्यजगत में प्रसिद्ध हुए। बन्धुओं। पं० लेखराम के महान कार्यों का कहां तक वर्णन किया जाय। अब हमारा कर्तव्य है कि आज ६ मार्च को पं० लेखराम बलिदान दिवस के अवसर पर उनके कार्यकलापों और संस्वरणों पर विचार करें और उनके बताये मार्ग का अनुसरण करें। यदि बलिदानी महापुरुषों के इस कार्य में उपेक्षा की जाएगी तो यह सबसे बड़ी कृतघ्नता होगी।

धर्मवीर पं. लेखराम जी का बलिदान

(ले०—आचार्य धर्मदेव जी विद्या मार्तण्ड, अध्यक्ष विश्व वेद परिषद् आनन्द कुटीर ज्वालापुर)

१. धर्मवीर वर लेखराम का, याद करें उत्तम बलिदान ।
याद करें श्रद्धया से उनको, धर्म हेतु जिसने दे दी जान ॥

२. जान हथेली पर रखकर जो, निर्भय विचरण करते थे ।
हो प्रचार वेदों का जग मे, यही सदा रहता था ध्यान ॥

३. निर्भयता के सत्साहस के वे सचमुच थे उज्ज्वल रूप ।
तन-धन की परवाह नही थी, सदा गरजते सिंह समान ॥

४. बान विधर्मा बनने उद्यत, सुनते ही प्रस्थान किया ।
बच्चे को बीमार छोड कर, निकल गई फिर जिसकी ज.न ॥

५. लिखी पुस्तकें मुस्लिम मत पर, तर्क तर्कु का ले आश्रय ।
हाय यवन हत्यारों ने ली, धोखे से उनकी भी जान ॥

६. लेख कार्य नही बन्द कभी है, चलता जाए वह अविराम ।
अन्तिम यह सन्देश दे गये, वे गुण गण की खान ॥

७ शुद्धियां कार्य भी शिथिल न होवे, इस मे उन्नति होवे ।
श्रद्धाजलि यह आर्य पथिक को, जिनकी अद्भुत शान ॥

बलिदान

(ले०—डा० मुन्शीराम शर्मा 'सोम')

गाओ गान, गाओ गान । जीवन दे रहे बलिदान ॥

बलि पथी नर वीर देते राष्ट्र को सम्मान ।१।
धर्म ध्वज ले हाथ में व चल पड़े सज्ञान ।
मोह प्राणों का रहा कब, था अमर पथ ध्यान ।२।
सत्य की जय हो सदा, नव शक्ति पावे ज्ञान ।
दम्भ, छल, पाखण्ड खण्डित हों, रहे यह आन ।३।
मान्य मानवता रहे, हो ध्वस्त अघ-अभियान ।
दैत्य दानव दल अबल यों, देवदल बलवान ।४।
लक्ष्य एक समक्ष सबके वक्ष में द्युतिमान ।
आर्य हम कर्त्तव्य पालक, हम अमर सन्तान ।५।
धर्म हित दो प्राण वीरों, धर्म हित दो प्राण ।
कह गये ऋषि मुनि तपस्वी, है यही कल्याण ।६।

श्री ओम कुमार आर्य एम० ए०

ऋषि ! यदि तू न होता; तो प्रकाश विहीन हो जाती
यह धरती ! जीते जी तूने जलाया स्वयं को,
तप त्याग की भीषण अनल में, तेरे जीवन की उन लपटों ने
प्रचण्ड, धधकती ज्वालाओं ने अंधकार का उर छेदन कर
अज्ञान दैत्य का तन भेदन कर, फैलाया प्रकाश जगत में
दमकाया जगती का कण-२, दिखलाया पथ भूले भटकों को।
चमकाया वेदों का भानु, विश्व के काले गगन में ।

तेरा मिटना भी तो एक चमत्कार था।
तू बुझा, पर प्रकाश तेरा आलोकित कर गया औरों को
तुझको पाकर धन्य हो गई यह भारत भूमि।
जिसके क्षीण मद-मद मरणासन्न धुंधले दीपकों का
प्रकाश गिन रहा था अन्तिम सांसें !

अपने को बलिदान करके तूने नव जीवन दिया
ज्योति जगायी ! और उस विमल प्रकाश में
भारतीय आत्मा ने पहचाना अपना दिव्य रूप
देदीप्यमान गौरव ! रुपहली छवि।
ऋषि तू न होता तो कैसे धुलता वह कलंक ।

———

लेखराम जी का पुण्य स्मरण

(ले०—आचार्य श्री नरदेव जी शास्त्री, वेदतीर्थ भूतपूर्व संसद सदस्य)

ऐसे सरल प्रकृति पुरुष थे कि किसी पर भी पूर्ण विश्वास कर बैठते थे। अन्त में एक विश्वासघाती ने विश्वासघात करके उनका घात कर ही डाला। जिस दिन उनकी शमशान यात्रा निकली थी मैं उस समय लाहौर में ही था, आर्य विद्यार्थी आश्रम में रहता था। कितना लम्बा था वह जलूस। शाहालमी दरवाजे से होकर निकला था, और शमशान तक आदमी ही आदमी थे। शमशान में अग्नि-प्रदान के पूर्व महात्मा हंसराज, महात्मा मुन्शीराम, चौ० रामभजदत्त आदि के व्याख्यान हुए थे। म० मुन्शीराम ने कहा था कि "यदि दोनों पार्टिएं मिलकर कार्य न करेंगी तो मैं पृथक हो जाऊंगा" बड़ा सन्नाटा छा गया था। इसके पश्चात रविवार को वच्छोवाली समाज में जो अधिवेशन हुआ उसमें भी बड़े गरमागरम भाषण हुये। मुन्शीराम, म० हंसराज, ला० लाजपत राय, मास्टर सुन्दर लाल बी० ए०, मास्टर आत्माराम अमृतसरी आदि के व्याख्यान हुए। समाज खचाखच भरा हुआ था। मास्टर आत्माराम जी ने कहाकि अब तक हम आपस में तीर चला कर अभ्यास करते थे, अब मिल कर आर्य समाज के शत्रुओं पर प्रहार करेंगे।

श्री लेखराम जी अक्खड़ भी परले सिरे के थे, मुंहफट भी थे। घर वाले तथा बाहर वालों को कोरी कोरी सुनाते थे। उनके भाषण स्पष्ट-वादिता और निर्भयता के ज्वलन्त उदाहरण थे। वे आर्य समाज के लिये जीये और आर्य समाज के लिये ही मरे। ऐसे लग्न के उपदेशक प्रचारक अब कहां देखने को मिलते हैं। वस्तुतः आय समाज को बनाने वाले उस समय के ऐसे ही निर्भय धुन के व्यक्ति थे। मैं उस समय आर्य विद्यार्थी आश्रम नामक बोर्डिंग में रहता था। हमारे पिता जी रावसाहेब श्री निवासराव इन्हीं पण्डित जी के व्याख्यानों को सुन कर आर्य-समाजी हुए थे। जब पिता जी ने हमें लाहौर में छोड़ा तब पण्डित जी से कह गये थे कि इनकी देखभाल करते रहना। पण्डित जी जब लाहौर में होते थे तब वे हमारे बोर्डिंग में आकर हमारी खबर ले जाते थे। इसीलिये हमारा उनका अच्छा खासा घनिष्ठ सम्बन्ध बन गया था।

पण्डित जी से व्याख्यानों में बड़ी भीड़ रहती थी। महात्मा मुन्शी राम के भाषणों को सुनने के लिये भी बहुत भीड़ हो जाती थी। वे महात्मा पार्टी के नेता थे। इन दोनों की मृत्यु में समानता ही है। दोनों ने अविश्वासियों पर विश्वास किया और दोनों दशाओंमें दोनों के साथ ही विश्वासघातियों ने विश्वासघात किया। दैवी गति! दोनों ही अमर हो गये।

पर आर्य समाज ने क्या किया। स्वा० श्रद्धानन्द दिवस को आर्य समाज धूमधाम से मनाती है परन्तु अभी भी स्वा. श्रद्धानन्द का काम पूरा

नहीं हुआ । लेखराम दिवस को भी श्रद्धानन्द दिवस की तरह मनाया जाना चाहिए। आर्य समाजी लोग इन दिनों को उत्साह से मनायें अथवा न मनाएं परन्तु ये दोनों व्यक्ति अमर हो गये हैं मैं तो दोनों महापुरुषों का कृतज्ञ हूं—यदि समाज जीवित रह सकेगा तो वे ऐसे निर्भय, सच्ची लगन वाले व्यक्तियों के आश्रय से ही जीवित रह सकेगा।

ये बलिदान राष्ट्रों का कायाकल्प करते हैं!

(ले०—पं० आनन्दप्रिय बी० ए० एल० एल० बी०, मन्त्री आर्य कन्या महाविद्यालय बड़ौदा)

पं० लेखराम जी का बलिदान कुछ भी राष्ट्रीय महत्व नहीं रखता, ये भ्रम प्रायः अपने आपको राष्ट्रीय मानने वाले व्यक्तियों में साधरण रूप में प्रचलित है।

आज राष्ट्र के नाम पर बलि होने वाले व्यक्तियों के नाम ही हमारे राष्ट्र के उत्थान के इतिहास में अंकित होंगे।

परन्तु महर्षि दयानन्द और उनके अनुयाइयों के बलिदान केवल साम्प्रदायिक बलिदान न थे !!

महर्षि देश के अभ्युदय के लिये समाज को त्रिविध दासता से मुक्ति दिलाना चाहते थे।

जो राष्ट्र धार्मिक अन्धश्रद्धा में और सामाजिक कुरूढ़ियों में फंसा हुआ हो, उसकी राजनैतिक योग्यता कभी भी नहीं बढ़ सकती, अतः राजनैतिक क्रान्ति के पूर्वगामी रूप में धार्मिक और सामाजिक क्रान्ति आर्य समाज के विशाल कार्यक्रम का एक अंग था।

आज धर्म के नाम पर संसार में उत्पात खड़े करने वाले कठमुल्ला जो संसार का विभाजन दारूल इस्लाम और दारूल हरब के सिद्धान्त पर करते हैं। जो संसार की विश्व शान्ति के लिए भय रूप है, उनकी इस धार्मिक अन्ध श्रद्धा पर कुठाराघात करना ही होगा।

पं० लेखराम जी ने क्या इस्लाम के अनुयाइयों का दिल दुःखाया नहीं। उनका दोष इस कठमुल्लापन को मिटाना था।

हमारे राजनैतिक नेता महात्मा गांधी जी के नेतृत्व में इस कठमूल्लापन को मिटाये बिना स्वराज्य लाने चल पड़े।

इसका दुष्परिणाम हुआ भारत का विभाजन।

पं० लेखराम जी के मांग पर चल कर देश ने ऐसे अमूल्य बलिदानों का मूल्यांकन कर उन खुदाई फरमानों को मिटा दिया होता, जिनके द्वारा काफिरो की लूट, अपहरण सर्व-साधारण बात है तो हमें ये दुर्दिन न देखने पड़ते।

पं० लेखराम जी ने अपने बलिदान से महर्षि दयानन्द जी की क्रान्ति का मार्ग बतला कर भारत को सबल राष्ट्र बनने का मार्ग दिखलाया।

देश में अज्ञानता का साम्राज्य जब तक रहेगा फिर वह धर्म के नाम पर हो, समाज नियम के आधार पर हो व किसी दैवी पुरुष के नाम पर हो, तब तक देश की स्वतन्त्रता शंकास्पद

रहेगी।

अतः हुतात्मा पं० लेख राम जी के बलिदान का महत्व अब भी देशवासी समझ जावें तो जो राजनैतिक दिवालियापन का प्रदर्शन हम संसद् में बैठ कर कर रहे हैं, न करें।

अब भी हम आर्य समाज के वीरों का सच्चा मूल्यांकन कर देश में धर्म के नाम पर और समाज में, समाज के नाम पर जो अन्धाधुन्धी चल रही है उससे बच जावें।

भारत का नवनिर्माण करने के लिये अपने पेट में खजर खाने वाले हुतात्मा लेखराम जी हमारे समाज के राष्ट्र के गौरव है। उनका बलिदान हमें धार्मिक अन्धश्रद्धा की दासता से मुक्ति दिलावे और धर्म के नाम पर अशान्ति करने वालों को मटियामेट कर दें।

——

शहीद लेखराम का अंतिम समय

मार्च १८९७ के आरम्भ की बात है कि एक मुसलमान पं० लेखरामजी के पास शुद्धि के लिये आया। उन्होने उससे कोई भी पूछ-ताछ न की, अपितु पूर्ण विश्वाससे अपने पास रख लिया. ३ मार्च को वह कम्बल ओढ़ कर आया और कांपने लगा। पूछने पर उसने बताया कि उसे बुखार और पेट का दर्द है। पंडित जी उसे डाक्टर के पास ले गए। डा० ने कम्बल उतार कर लेप करना चाहा पर उसने पीने की दवाई मांगी। कई व्यक्तियों ने पंडित जी को सावधान किया कि यह भयंकर आकृति का मनुष्य मृत्यु की मूर्ति प्रतीत होता है। परन्तु पण्डित जी तो उस दिन स्वयं मृत्यु से प्यार करने चले थे। यम के दूत को ही सभी का घर पर निमन्त्रण दे रखा था. उसी को यह धर्म का प्रेमी समझते रहे। कितनी महान उदारता थी।

घर पर आ ऋषि की जीवनी लिखने बैठे। वह भी पास की कुर्सी पर बैठ गया। ज्यों ही थक कर उन्होंने कर कलम रखा और छाती खोल कर अंगड़ाई लेने लगे उस अभ्यस्त हत्यारे ने वही छूरी निकाल कर उनके पेट में घोंप दी और घुमा-२ कर एक अतड़ी तो काट ही डाली और आठ बड़े और अनेक छोटे घाव कर दिए। पण्डित जी ने एक हाथ से अपनी अंतड़ियों को सम्भाला और दूसरे हाथ से उसे पकड़ा। इसी कशमकश में सीड़ियों तक पहुंच गए। इनकी धर्मपत्नी ने पहुंच कर इन्हें सम्भाला और वृद्धा माता ने घातक को जाकर पकडा, पर हत्यारे के हाथ में बेलन आ गया जिसकी दो चोटों से उससे उन्हें घायल कर दिया और फिर भाग गया।

इसी घायलावस्था में पण्डित जी को हस्पताल ले जाया गया। वहां भी इनका ध्यान प्रभु विश्वास और अटूट धैर्य नहीं टूटा। गायत्री मंत्र तथा प्रार्थना मन्त्रों का पाठ करते रहे। मरते मरते दम तक न माता की चिन्ता थी न पत्नी की। चिन्ता केवल यह थी कि 'आर्य समाज के लेख का कार्य न बन्द हो, यह कहा और रात के दो बजे शरीर छोड़ दिया।

————

देश द्वार पर खड़ा पुकारता

(रचयिता—श्री राधेश्याम पाण्डेय हरदुआ गंज दिल्ली)

देश द्वार पर खड़ा पुकारता,
आर्य देश के सपूत जाग जा,
जल उठी मशाल ज्ञान मान की—
गा रही है गीत आन-बान की
कर्म क्षेत्र पर गुबार छा गया
मांगती है भीख आज ज्ञान को।
शान्ति से विराट इन्कलाब ला,
देश द्वार पर खड़ा पुकारता
भ्रम बिगडना अजीब हो गया
देव दयानन्द बीज बो गया
कह रही परिस्थिति विचार कर
बढ़ गया कदम दरिद्र धो गया।
अब विशिष्ट भाव का प्रकाश ला,
दश द्वार पर खड़ा पुकारता,
वक्त विदोध के भगा भुजंग को.
जाति भेद के कुसग रंग को,
भ्रान्ति को सुबुद्धि वस्त्र नग को,
दे, विराग राष्ट्र के कुसंग को।
कारवां है कौन की शिनाख्त का,
देश द्वार पर खड़ा पुकारता,
रुग्ण औ गरीब की विपत्ति में
कर प्रयास भक्ति धार शक्ति में
एकता की राह को सम्भाल ले
प्यार भर महान् देश भक्ति में
दूर कर सभी के बीच फासला,
देश द्वार पर खड़ा पुकारता,
आर्य देश के सपूत जाग जा

अनुशासन का पर्व आय अनुशासित रहना।
सब को रखना लाज भावना में मत बहना।

बसन्तोत्सव

हरिद्वार—गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार में भव्य बसन्तोत्सव मनाया गया। प्रातः ९ बजे गुरुकुल के छात्र, अध्यापक, प्राध्यापक, अधिष्ठाता, कर्मचारी, कुलपति, आचार्य, वित्तनियन्त्रक, स. मुख्याधिष्ठाता आदि पैदल, ट्रक एवं कार से चलकर १२ बजे पुण्यभूमि कांगड़ी (पुराने गुरुकुल) में पहुंच गये। इनके अतिरिक्त गुरुकुल के पुराने स्नातक पं. धर्मदेव विद्यामार्तंड, पं. अर्जुदेव एव पं. घारेश्वर, टी. इ. पी. प्राचार्य आदि भी पहुंचे।

सर्व प्रथम कुलपति बलभद्र कुमार जी ने दयानन्द परिवार के सदस्यों का अभिनन्थन किया एवं धर्मदेव विद्यामार्तण्ड को माला पहनाई। कुलपति ने कुल पताका लहराई एवं कुल गीत हुआ। पं. धर्मदेव विद्यामार्तण्ड ने अपने संदेश में स्वामी श्रद्धानन्द के त्याग एवं बलिदान का उल्लेख करते हुए गुरुकुल का गौरव बढ़ाने के लिए प्रेरणाप्रद उपदेश दिया। आचार्य रामनाथ वेदालंकार ते आभय प्रदर्शन किया। संयोजन प्रो. रामाश्रय ने किया।

तत्पश्चात गंगा की रेती में ९वीं एवं दसवीं, षष्ठ-सप्तम एवं अष्ठम के मध्य कबड्डी की दो प्रतियोगिताएं हुई जिनमें दसम एवं अष्टम कक्षा के ब्रह्मचारी विजयी रहे। सब ने मिलकर भोजन किया।

भोजनोपरान्त पं. विद्यानिधि की अध्यक्षता में एक सांस्कृतिक गोष्ठी का संयोजन प्रो. रामाश्रय मिश्र ने किया। गोष्ठी जहां आनन्द दायिनी थी वहां प्रेरणात्मक भी। ब्रह्मचारी इन्द्रपाल मुरादाबाद, श्री वेदप्रकाश, प्रो. रामनरेश मिश्र तथा पं. धर्मपाल विद्यामार्तण्ड ने कविताएं सुनायी। कु. सध्या, कु. मंजु-मीरा एवं कु. रेखा-रजनो ने गीत सुनाये। पं. हरिवंश, पं. घारेश्वर, प. अर्जुनदेव आदि ने गुरुकुल के अपने प्रेरणात्मक अनुभव सुनाये। जिसमें अध्ययन, अनुशासन, खेलकूद के साथ-साथ, शिकारादि के अनेक रोचक संस्मरण भी थे। नवम एवं दशम के छात्रों की अंत्याक्षरी भी हुई।

अध्यक्षीय भाषण में पं. विद्यानिधि ने दो कविताएं सुनाई तथा कहा कि बसन्त आमोद-प्रमोद का उत्सव हैं। इसलिए वर्ष में एक बार स्वच्छन्दता के वातावरण में इस उत्सव को मनाया जाना चाहिए।

आज को इस पावन तिथि पुण्यभूमि में पधारे हैं। ऐसी प्रेरणा लेकर जाएं कि अपना सर्वांगीण विकास करके राष्ट्र के उत्थान में सक्रिय योगदान दे सकें।

श्री रामाश्रय मिश्र ने कृतज्ञता ज्ञापन करते समय गुरुकुल के चार पुराने स्नातकों पं. धर्मदेव विद्यामार्तण्ड, पं. अर्जुन देव, पं. घारेश्वर एवं विद्यानिधि के सम्मेलन पर अपार हर्ष का अनुभव किया तथा इन्हें ब्रह्म चतुष्ठय की संज्ञा दी। सभी उपस्थितों को धन्यवाद देते हुए कुलपति, आचार्य, वित्तनियत्रंक एव स. मुख्याधिष्ठाता के प्रति आभार प्रदर्शन किया। जिन की प्रेरणा एवं सहयोग से यह कार्यक्रम सफल हुआ।

वीरवर लेखराम से

(श्री उत्तम चन्द शरर, एम० ए०)

क्या विचित्र विह्वलता ले कर तुम आये थे ?

(१)

दीपक पर जलते पतङ्ग को भी देखा है
लेखराम ! तेरी उमङ्ग को भी देखा है
वह जलता है पर जैसे कुछ सोच सोच कर
दीपक के चहूं दिश मंडरा, साहस बटोर कर
पर तू सीधा दीपक की लौ से टकराया
क्या अरमान हृदय में जलने के पाये थे ?

(२)

विह्वलता जो रूकी न संघर्षो में जूझ कर
किया निमन्त्रित मृत्यु को भी जान बूझ कर
जिसके वश हो विकल हृदय कुछ सोच न पाया
हंसते हंसते अन्धकार में कदम बढ़ाया
हृदय रक्त से सींच दिया उजड़े उपवन को
मृतकों में जीवन फूंका वे निज जीवन को
प्राणों में अङ्गार धधकते तुम लाये थे ?

(३)

पुत्र मोह, जिससे दशरथ को मरते देखा
पुत्र मोह, मानव मन को कोमलतम रेखा
छोड़ न पाये थे प्रताप भी जिस ममता को
लेखराम ! तुम जीत गये उस दुर्बलता को
धन्य धन्य कहता है युग तेरी श्रद्धा पर
अमर रहेगा नाम सदा जग की जिह्वा पर
दयानन्द के सैनिक तुम ही बन पाये थे
क्या विचित्र विह्वलता लेकर तुम आये थे ?

लेखराम से—

—निर्मला कुमारी, नाहन

हम लेखराम से बच्चे हैं,
कैसे बन जाएं लेखराम ।
वह वीर बहादुर सच्चा था,
इसलिये करो सब मिलकर प्रणाम !!

माता का नाम बढ़ाने को,
लाखों कठिनाई सह लेंगे ।
हम धर्म ध्वजा फहराने को,
आन्धी तूफां से लड़ लेंगे !!

हो जाओ पापो ! सावधान,
अब बहने का व्रत ठाना है ।
हमने अपनी आभा लेकर,
ऋषि गाथा को पहचाना है !!

पाखण्डी धर्म बिगाड़ो ना,
हमने तुम से ही लड़ना है ।
तुम हारोगे हम जीतेंगे,
तुम ने जेलों में सड़ना हैं !!

अब आओ चलें, विजय करने,
दुनिया सारी पर छाने को ।
या लहर लहर कर जीवित हो,
वैदिक गीतों को गाने को !!

——

शहीद लेखराम की जीवन-झांकी

प लेखराम का जन्म १८५८ में जेहलम जिले के अन्तर्गत चकवाल नाम की तहसील में सैयदपुर नाम के ग्राम में हुआ। लेखराम के दादा नारायण सिंह कान्ह सिंह मजीठिया के यह घुड़सवार थे। अपनी कुल परम्परा के अनुसार इन्हें फारसी का अभ्यास कराया गया। अपने चाचा गंडाराम के पास रहते हुए, एक सिख सिपाही के सत्संग से लेखराम जी को ईश्वर भक्ति की लगन लग चुकी थी। १७ वर्ष की आयु में यह पुलिस में भर्ती हो गए। धार्मिक अन्वेषण की चाट उन्हें प्रारम्भ से ही थी ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों के अध्ययन से पूर्व इन का विश्वास नवीन वेदान्त में था। पर अब तो वह विश्वास सहसा हट गया। पेशावर में ये भाई रजी की धर्मशाला में रहते थे, इनके साथ चार और साथी थे उन्हें साथ मिला कर १८८० में इन्होने उस धर्मशाला में ही आर्य समाज की स्थापना कर दी और तभी ऋषि दयानन्द के दर्शन के लिए अजमेर की ओर चल पड़े। अजमेर से लौटने पर तो पुलिस की नौकरी के स्थान पर यह बिना दाम के महर्षि के नौकर हो गए। धर्म चर्चा की धुन हर स्थान पर २४ घण्टे चलती अन्त में १८८४ में नौकरी से त्याग पत्र दे डाला।

इस समय कई स्थानों पर अपनी महानता का परिचय देने से इनकी धाक फैलती जा रही थी, यह लेखक, वक्ता, शास्त्रार्थी सभी दृष्टियों से प्रसिद्ध हो चुके थे। १८८७ में 'आर्य गजट' के सम्पादक हुये। १८८८ में सभा ने ऋषि जीवनी लिखवाने का कार्य इन्हें सौंपा तभी से दिन रात भ्रमण के कारण इनका मुसाफिर नाम सार्थक हुआ। इसी खोज के लिये इन्होंने सारे भारत का भ्रमण किया। अपने सुगंठित शरीर, प्रबल चरित्र, धारावाहिक भाषण अकाट्य तर्क तथा अदम्य निर्भयता द्वारा हर स्थान पर नवजीवन का संचार कर आते थे। १८९१ में हरिद्वार कुम्भ के प्रचार का भार अधिकांशत: पंडित जी के कन्धों पर रहा। आर्य जाति को मुसलमानों के फंदे से बचाना इनका विशेष लक्ष्य था। १८ मई १८९५ को इनके पुत्र पैदा हुआ। उस का नाम रक्खा गया सुखदेव। पर वह भी इन्हें सदा के लिए छोड़ा गया। परन्तु पण्डित जी इस महान् दु:ख को भी पी गए और अधिक उत्साह से प्रचार कार्य में लग गए।

पं. लेखराम जी का विचार तो इस्लामी देशों में जाकर प्रचार करने का था। पर विधि ही अनुकूल न रहा। भारत भर के यवन इन के प्रचार की मार को न सह सके। वे कांपे, घबराए और इन्हें अपना शत्रु समझ बैठे। जो रक्षक था उसे भक्षक समझा और अपने पापों को कायम रखने के लिए इस्लाम के अन्धे पुजारियों ने लेखराम को विदा करने की ठानी और वे सफल हो गए।

किन्तु क्या उनकी सफलता लेखराम की हार थी? नहीं वह वीर आज भी अमर है लाखों हृदयों में जीवित है। समय आएगा जब कि उस के रक्त की बून्दों से लाखों लेखराम पैदा होंगे और धरातल से यवन विचारों का उन्मूलन करने की प्रतिज्ञा करेंगे। कब आएगा वह दिन? धरती इस की बाट देख रही है लेखराम के अनुयायी आर्यों की ....

वीर-लेखराम

(रच०—श्री 'प्रणव' जी शास्त्री फिरोजाबाद)

आर्य जाति के गौरव गेय, आर्य जाति के पावन प्राण ।
ज्ञान के अभिनव उज्वल स्रोत, धन्य हैं लेखराम मतिमान् ॥

विवेकी वन्दनीय व्रतवीर, विजय के ताने विमल वितान ।
विधर्मी जाते थे रण छोड़, देखकर अद्भुत तर्क-कृपाण ॥

जगी जीवन की विस्तृत ज्योति धरा पर जब छिटकी पवमान ।
छिपे जो मतके अन्ध उलूक, जानकर बौद्धिक वेद विद्वान ॥
सोच कर लिखना लेख अनूप, गर्ज कर देना बस व्याख्यान ।
अडिग हो करना रण शास्त्रार्थ, यही नर पुङ्गव की पहचान ॥

देखकर प्रबल प्रताप प्रचण्ड, भागते फिरते पोप पुरान ।
बिलों में बाइबिल होती बन्द, कांपती थर थर खडी कुरान ॥
खड्ग खण्डन के प्रखर प्रहार. न सह पाया जब मिथ्या मान ।
मतों का हो न सका जब वार, ढाल मण्डल की दृढतर जान ॥

हार ने रख इस्लामी वेश किया, वह जो न करे इन्सान ।
छुरी पर रख पापों की धार, लिये आ 'लेखराम' के प्राण ॥
विचारों का आपस मे भेद भावना का होना न समान ।
मनुज की हत्या का आदेश, नही दे सकता विषम विधान ॥

किन्तु वीरों की ऐसी मृत्यु, जाति को दे जाती है जान ।
अवनि में गल जाता जो बीज, वही हो जाता वृक्ष महान् ॥

रक्त धारा का कण कण एक, उगाता है नूतन अभिमान ।
नवांकुर फूट फूट कर तेज, अनी बन जाते करते त्राण ॥

व्रती का बुझता जीवन दीप, मशाले देता ज्योतिष्मान् ।
उसी की सोयी हुई समाधि, जगाती रहती है अरमान ।
आज भी बलिदानी की याद, दे रही हैं आदेश महान् ।
सत्य का सम्बल लेकर साथ, प्रगति के पथ पर बढ़ो सुजान ॥

'प्रणव' के मंजुल मन्त्र महोच्च, करेंगे जन जन का कल्याण ।
अमृत—आर्यत्व बांट दो आज, बन्धु वसुधा को अपना जान ॥

लेखराम अमर हैं

(ले०— पं० बिहारी लाल जी शास्त्री बरेली)

इस्लाम का प्रारम्भ से लेकर अब तक का इतिहास केवल मार-काट से ही भरा पड़ा है। अन्य मतस्थों के साथ नहीं अपनों के साथ भी मुसलमानों का यही व्यवहार रहा है। करबला की घटना इसका ज्वलन्त प्रमाण है। पर इस सारी मार-काट के बाद भी इस्लाम को सफलता न मिली। उनके मत के आलोचकों की कलम विजयी रही और उनकी तलवार की धार कुन्द हो गई। भौतिक बल पर आधारित सिद्धान्तों की जो दशा होनी है वही इस्लाम की हुई। आज संसार के उच्चकोटि के विद्वानों में उपनिषद का आदर से, गीता का मान है पर कुरान की कदर नहीं। पं० लेखराम का कातिल अपने जीवन में ही 'तर्के इस्लाम' को देख करके हाथ मलता रहा होगा। लाखों शुद्धियों की चर्चा सुनकर पछताया होगा। छुरे और पिस्तौलों से विचार धारा को जीता नहीं जा सकता। कायरों की विचारधारा दब जाती है मगर वीरों का उत्साह इससे दुगुना उभर जाता है।

महात्मा गांधी और उनके चेले विनोबा भावे आदि कुरान की प्रशंसा करके जनता को कुछ दिन के लिये ही भुला सकते हैं। जमीअत के मौलाने कुरान के उलट-पलट अर्थ समझाकर उन्हें भ्रान्ति से दूर रख सकते हैं। पर कुरान का असली [illegible] करोड़ों मुसलमानों का वह व्यवहार है जो पं० लेखराम का कातिल, स्वामी श्रद्धानन्द का हत्यारा, सहस्रों अबलाओं को लाज लूटने वाले लोगी, अबोध बालकों की हत्याओं के अपराधी पंजाब और सीमा प्रान्त के मुसलमान कुरान शरीफ के शिक्षा के अनुकूल हैं या प्रतिकूल ?

जमीअतुल उलमी के मौलाना इन्हें कुछ शिक्षा देते हैं या नहीं ?

'सीरतुलनबी' के लेखक मौ० सुलैमान नदवी आज कल पाकिस्तान में ही हैं। यह भी आततायियों को समझते नहीं थे बल्कि 'द्विजिव्ह' से बात करते रहे।

हमारे सामने इस्लाम का और रूप रखते हैं और चेलों के सामने दूसरा।

वस्तुतः कुरान शरीफ की कत्ल और जिहाद के हुकम देने वाली आयतों का अर्थ हम व्यवहार से परख सकते हैं। जब तक तर्क का उत्तर तलवार से मिलता रहेगा तब तक हमारा दावा विजयी रहेगा कि इस्लाम ईश्वरीय धर्म नहीं, छुरों और पिस्तौलों का प्रयोग बुद्धिवाद में परास्त मनुष्य ही करता है। मिर्जा की जब पोल खुलने लगी तो अपनी पेशीन गोइयों को इस प्रकार सिद्ध किया गया। पर इसका परिणाम क्या निकला। यह आग अब घर को जलाने लगी। कादियानियों का जीवन पाकिस्तान में संकट पूर्ण हो रहा है।

शहीदे अकबर पं० लेखराम ने पाखण्ड खण्डन के लिये जो लेखनी चलाई वह आज तक चालू हैं और प्रलय पर्यन्त रहेगी। पाखण्डोन्मूलन से आर्य समाजी कभी विरत न होगा। पण्डित जी ने अपने रक्त से जो वैदिक धर्म की जय' का घोष लिखा है वह पृथ्वी से आकाश तक लिख गया है। उनके रक्त का एक-एक बिन्दु आर्यो को अमरता का सन्देश दे रहा है। छुरियां पिस्तौलें, पाकिस्तानी अत्याचार वैदिक धर्म की जय को मिटाने में असमर्थ हैं। सत्य सत्य है। अमर है, ध्रुव है। राजनैतिक अवर्चनाओं से पृथक होकर सत्य अन्वेषण करने पर क्या कुरान कल्याणमय पुस्तक ठहर सकता है? क्या विश्व को शान्ति प्रदान करने वाले शास्त्रों में इसका कोई स्थान है? पढ़ो, चाहे जिस भाष्य को पढ़ो चाहे जैसे अर्थ करके पढ़ो पर प्रसंग और अब तक का इस्लामी इतिहास सब स्पष्ट कर देता है। यह सब अरबो सामृाज्य का षड्यन्त्र मात्र था।

आर्य समाजी भाइयों को संसार के उपकारार्थ करोड़ों मनुष्यों को अन्धकार से निकलने के लिए वैदिक भानु का प्रकाश सर्वत्र फैलाना है। इन्होंने एशिया, जावा, ईरान में अपने मिश्नरी भेजने का यही समय है। हिंसा-वादी भौतिक मत भूतल पर सदा शान्ति भंग करते हैं। अतः इनको वेदामृत पिलाना चाहिये। स्मरण रखिये असुर भाव रखते हुये अमृतपान राहु केतु बना देता है। अतः विष को दूर कर अमृत पिलाना चाहिए। यही है खण्डन मण्डन का रहस्य।

— —

लेख का काम बन्द न हो!

(लेखक—महान् विद्वान् श्री स्वा० आतमानन्द जी, सरस्वती)

ध्येय की उपासना मनुष्य जीवन की सबसे बड़ी विशेषता है। वह मनुष्य, मनुष्य कहलाने का अधिकारी ही नहीं जिसके जीवन का कोई लक्ष्य न हो। जिसने किसी लक्ष्य को अपने जीवन में सिद्ध करने के लिये निश्चित तो कर लिया हो, परन्तु समय आने पर वह उसकी दृष्टि से ओझल हो गया हो। वह मनुष्य भी अपने जीवन की सफलता से वंचित ही रहता है। तीसरी प्रकार का मनुष्य वह है जिसने अपने किसी विशेष लक्ष्य को सिद्ध करने के लिये बड़े विचार-विमर्श से चुन भी लिया है और जीवन के अन्तिम क्षण तक अपने उस लक्ष्य को भूलता भी नहीं। वह उसे केवल भूलता ही न हो यह बात नही प्रत्युत अपना प्रत्येक पग उस ही की सिद्धि के लिये उठाता है, बस उसी मनुष्य का जीवन सफल जीवन कहा जा सकता हैं। वह उस लक्ष्य को अवश्य सिद्ध कर लेता है। वेद में लक्ष्य का अनुसरण करने के लिये विशेष आदेश आता है, मन्त्र नीचे पढ़िये—

आकूतिं देवीं सुभगां पुरोदधे चित्तस्य माता सुहवा नो अस्तु। यामाशामेमि केवली सामे

अस्तु विदेय मेनां मनसि प्रविष्टाम् ।

मैं (सुभगाम्) सुन्दर ऐश्वर्य से सम्पन्न (आकूतिम्-देवीम्) संकल्प नामक दिव्य भावना को (पुरोदधे) अपनी दृष्टि के सामने रखता हूं। (न:) वह हमारे (चित्तस्य) चित्त की (माता) निर्माण करने वाली (सुहवा) भली-भांति आह्वान की अधिकारिणी (अन्तु) हो। (याम्) जिस (आशाम्) दिशा में (ए मि) जाऊं (सा मे) वह मेरी (केवली) अकेली ही (अस्तु) हो (एनाम्) मैं इसे (मनसि प्रविष्टाम्) मन में प्रविष्ट हुई २ को (बिदेमम्) जानूं अथवा प्राप्त करूं।

संकल्प नाम की देवी की कैसी सुन्दर पूजा है, लक्ष्य का कितना भावुक अनुसरण है। हम जिस महापुरुष के लक्ष्यानुसारी आदर्श जीवन की, लेखनी से गूंथी हुई अक्षर माला से पूजा करने चले हैं, वह ही सर्वोत्तम जीवन है जिस का हम ऊपर उल्लेख कर आये हैं। इस आदर्श जीवन काव्य के नायक हैं श्री पूज्य पण्डित लेखराम।

श्री पण्डित जी ने वैदिक धर्म के उद्धार का कार्यक्रम, अपने पूज्य गुरुवर महर्षि दयानन्द से मिलने के पूर्व साहित्य के अध्ययन मात्र से ही प्रभावित होकर आरम्भ कर दिया था। ऋषि की प्रभावशालिनी लेखनी के प्रताप से ही आप वैदिक धर्म की दीक्षा से दीक्षित हुए थे, इसीलिये उनकी लेखनी ने अपने पूज्य गुरुदेव की लेखनी का जीवन भर अनुसरण किया। इसी लेखनी के बल पर उन्होंने वैदिक धर्म के प्रचार में अपूर्व सफलता प्राप्त की, अपने जीवन की अन्तिम भेंट भी अपने उसी परम लक्ष्य वैदिक धर्म प्रचार के अर्पण की और अन्त में यह सन्देश दे भगवान् की गोद में गये कि लेख का काम बन्द न हो।

महर्षि दयानन्द के जीवन का लक्ष्य था सच्चे शिव की प्राप्ति और ईश्वर की इच्छा के अनुसार कर्म करना, अपना यह लक्ष्य जीवन भर उनकी दृष्टि के सामने रहा और अन्तिम श्वास यह कहते हुए ही लिया कि ईश्वर तेरी इच्छा पूर्ण हो। अपने परम गुरु महर्षि की भांति ही पण्डित लेखराम जी के जीवन में भी आदर्श की पूजा हम इसी प्रकार पाते हैं।

पण्डित लेखराम जी के जीवन काल में लेखमाला की आवश्यकता और प्रकार की थी और अब और प्रकार की है। उस समय उसकी टक्कर इस्लाम ईसाइयत और रूढ़िवाद से थी, परन्तु अब विद्वानों की सीधी टक्कर वेद विरोधियों से है। पाश्चात्य विद्वानों के लिखे हुए वेद के अशुद्ध भाष्यों के आधार पर, पाश्चात्य शिक्षा से शिक्षित अनेक महानुभाव आजकल वेदों के ऊपर अनेक प्रकार के कुतर्क कर रहे हैं, और वेदों के विरोध में अनेक ग्रन्थ लिख रहे हैं। इन विरोधी ग्रन्थों की तुलना में आर्यसमाज का प्रत्युत्तर में लिखा हुआ साहित्य नहीं के बराबर है। ऐसा साहित्य लिखने वाले विद्वान् हैं नहीं ऐसी बात नहीं है। इन लेखों अथवा पुस्तकों का मूंह तोड़ उत्तर देने वाले अनेक विद्वान् हैं। परन्तु प्रथम तो अपने योग क्षेत्र की चिन्ता में ही उनका सारा समय लग जाता है और यदि समय बचा कर कुछ लिखा भी तो उस साहित्य के बेचने का भार भी उन्हीं के सिर पर आ पड़ता है। जो पैसे उन्होंने प्रकाशन में लगा दिये होते हैं, पुस्तकें बिकने पर वे पैसे आवें तो वे और कुछ लिखें। परन्तु

वर्षों तक वे पुस्तक बिकती हैं नहीं क्योंकि आर्य-समाज के सभासदों में नये साहित्य को खरीद-खरीद कर स्वाध्याय करने की प्रथा ही समाप्त हो चुकी है। मैंने इन्हीं दिनों में आर्य समाज के दो चोटी के विद्वानों को अपनी लिखी हुई पुस्तकें बोरी में उत्सवों पर अपने साथ लाते हुए देखा है। इसलिए जहां हमें पण्डित जी के शब्दों में आर्य जनता से यह निवेदन करना है "लेख का काम बन्द न हो" इसके साथ ही हम यह भी बलपूर्वक कहेंगे कि स्वाध्याय का काम बन्द न हो।

किसी भी वेद विरोधी साहित्य के उत्तर में कोई भी विद्वान् जो कोई पुस्तक लिखे प्रत्येक आर्य सभासद का यह कर्त्तव्य होना चाहिये कि वह उसे मंगा कर अवश्य पढ़ें। इससे आर्य सभासदों के ज्ञान में वृद्धि होगी, लेखकों को उत्साह मिलेगा और विरोधी साहित्य का मुंह तोड़ उत्तर दिया जा सकेगा।।

मैं आर्य विद्वानों से भी यह निवेदन करूंगा कि वे लिखने के बाद अपनी पुस्तक को यदि छपवा न सकते हों, तो जितना भी पारिश्रमिक वे उचित समझते हों, किसी भी सभा अथवा समाज से लेकर, वह पुस्तक उस सभा अथवा समाज के अर्पण दें जिससे कि उसे अति शीघ्र छपा कर साधारण मूल्य पर बेचा जा सके।

मैं सभाओं और आर्य समाजों से भी निवेदन करूंगा कि वे ऐसी पुस्तकों के तत्काल छपवाने और बेचने का अवश्य प्रबन्ध करें और ऐसी पुस्तकों को अवश्य खरीदने और पढ़ने का आर्य-समाजों और आर्य सभासदों को आदेश दें।

यदि हम वीरवर पण्डित लेखराम जी के इस परम पवित्र बलिदान दिवस को मनाना चाहते हैं तो इसका सबसे उत्तम उपाय यह है कि वेद विरोधी साहित्य के उत्तर लिखने का विद्वान् संकल्प करें और आर्य जनता उस साहित्य के खरीदने और पढ़ने का संकल्प करे, तभी हम श्री पं० लेखराम जी के बलिदान दिवस को मनाते हुए उनके इस आदेश का अनुसरण कर सकेंगे कि—

"लेख का काम बन्द न हो।"

चुनाव

आर्य समाज मलोट के सदस्यों की एक आवश्यक बैठक एक फरवरी १९७६ को प्रातः १० बजे आर्य समाज मन्दिर में हुई जिसमें १९७६-७७ के लिए आर्य समाज मलोट के निम्नलिखित पदाधिकारी सर्वसम्मति से निर्वाचित हुए—

प्रधान—श्री ओम् प्रकाश जी ग्रोवर, उपप्रधान—श्रीमती इन्दिरावती आर्य, मन्त्री—श्री हरबिलास गुप्ता, उपमन्त्री—श्री अशोक रत्न छाबड़ा, कोषाध्यक्ष—श्री लखमीचन्द जी धूड़िया पुस्तकाध्यक्ष—पं० विनयकुमार जी, लेखा निरीक्षक—श्री नन्दकिशोरजी दीवान, प्रतिनिधि—श्री ओम् प्रकाश ग्रोवर, श्री हरविलास गुप्ता तथा श्री कशमीरीलाल ढींगरा।

अन्तरंग सदस्य—महाशय वेद प्रकाश आर्य, डा. ओम् प्रकाश वर्मा, श्रीमती शान्ता गुलाटी तथा श्री प्रभुदयाल जी।

लेखराम के खून की पुकार

(ले०—पं० शांतिप्रकाश जी. 'व्याख्यान-वाचस्पति' महोपदेशक 'साहित्य शास्त्री गुड़गांव'

६ मार्च १८५७ को आज ७६ वर्ष हो चुके जबकि शहीदे अकबर श्री पं० लेखराम जी का धर्म के नाम पर आर्य जाति की ओर से महा बलिदान हुआ। धीरे-२ आर्य लोग इस खून को भुलाते जा रहे हैं किन्तु आज यह खून संसार को पुकार-पुकार करके आह्वान कर रहा हैं कि ऐ वेद धर्म के उपासको ! धरती के कण २ में वेद की ज्योति फैलाने के लिए अपने प्राणों की आहुति दो।

पं० लेखराम जी का जन्म स्थान सैयदपुर जिला जेहलम था। ये स्थान अब हमारे देखते-देखते पाकिस्तान में चला गया। यदि हम इस बलिदान की याद रखते और उनके अनुसार बलिदानों का एक लम्बा सिलसिला स्थिर रख कर इस्लाम को प्यारे वैदिक धर्म में बदल देते तो आज शहीदे अकबर की जननी जन्म भूमि और हमारी अपनी मातृ भूमि हम से रूठ कर पाकिस्तान में न चली जाती। काश ! कि आज भी आर्य जाति के लोग इस रहस्य को समझ कर भारत में बैठे अपने मुद्दतों से बिछड़े हुए मुस्लिम ईसाई बन्धुओं को पुराने पुनीत वैदिक धर्म में लाने का प्रयास करें। अन्यथा भय है कि भव्य भारत के कुछ और भाग भी हम से रूठ न जायें। क्योंकि अभी २ मुझे सूचना मिली है कि भारत में अब भी आर्य जाति के लाल शिखा सूत्र विहीन होकर एक सौ सत्ताईस ईसाई प्रति-दिन बन रहे हैं। मुसलमान बनने वालों की संख्या भी इससे कुछ कम नहीं है। स्त्रियों को अब भी भगाया जा रहा है, लड़के चुराये जा रहे हैं. दलित वर्ग पर डाका डाला जा रहा है। गऊ माता का कष्ट कम नहीं हुआ, विद्वानों की और सच्चे ब्राह्मणों की दुर्दशा है वेद पर आघात हो रहे हैं. और हम हैं कि ये सब बातें सहे चले जा रहे हैं। लेखराज का खून आर्यो ! तुम्हें पुकार-पुकार करके कह रहा है कि क्या तुम में कोई खून का कतरा शेष नहीं रहा। अब इसका प्रमाण हमने देना है कि लेखराम की तरह बलि-वेदी पर आहुति देने वालों की भी कमी नहीं है।

जब मिर्जा गुलाम अहमद कादयानी ने २० फरवरी १८९७ को एक इश्तिहार में पं० लेखराम को सम्बोधित करके लिखा। भला ऐ दुश्मने नादान बेराह बतर्स अज तेगे बुरीने मुहम्मद। ओ अविद्या ग्रस्त पथ विहीन जन्तु ! सावधान मोहम्मद की तेज चमकती हुई तलवार से डर, और इस मार्ग को छोड़ दे। जिसे तूने स्वीकार किया है। इसको पढकर स्वर्गीय हुतात्मा श्री पं० लेखराम जी ने निर्भीकता के साथ उत्तर दिया कि मैं इस वेद के ईश्वरी पथ पर चलता हुआ कत्ल कर दिया जाऊं या लोग मुझे अग्नि में फेंक कर जला दें तो भी मैं पवित्र वेद के मार्ग से पग पीछे न हटाऊंगा। अपितु इसी

मार्ग का राही बनकर सर से पावों तक कुर्बान हो जाऊंगा! क्योंकि मैं केवल एक परमेश्वर पर विश्वास और भरोसा रखता हूं। शेष सारे संसार की मुझे चिन्ता नहीं। क्या ही वीरता तथा धीरता पूर्ण गम्भीरता युक्त उत्तर है। क्या ही अच्छा हो कि आज भी ऐसा ही उत्तर देने वाले सहस्त्रों आर्य नर नारी उत्पन्न हों तो पाप को कम्पा दें। महात्मा बुद्ध धर्म को दूर के प्रांतों तक फैलाया शंकर स्वामी के चेलों ने भी अपने सिद्धांतों के प्रचार में कोई न्यूनता शेष न रखी स्वामी दयानन्द के सिद्धांत वेद के सिद्धांत हैं वेद ईश्वरी प्रेरणा द्वारा आरम्भ सृष्टि में संसार के आरम्भ से अन्त तक की सकल आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए भी ऋषियों की अन्तर आत्मा में प्रकट हुआ। इस के प्रचार के लिए भी योग्य अनुयायियों की आवश्यकता है जो समय आने पर पूर्ण तप और त्याग का प्रदर्शन कर सकें। पं० लेखराम ऋषि दयानन्द के इसी प्रकार के योग्य शिष्य अनुयाई थे। आजीवन इस रंग में रंगे हुए थे। पायल पटियाला में एक बड़ा व्यक्ति इस्लाम ग्रहण कर रहा था. ज्ञात होते पर पंडित जी लाहौर से बाम्बे एक्सप्रेस द्वारा भागे-२ वहां पहुंचे परन्तु डाक गाड़ी चावापैहल के स्टेशन पर न रुकी। इसलिए जब गाड़ी सिगनल पाकर बढ़ी तो पण्डित जी ने बिस्तरा नीचे फैंक दिया और उसके साथ ही खुद भी कूद पड़े। जब मस्जिद में मुसलमान मत स्वीकार करने वाले व्यक्ति के पास पहुंच कर उसको मुसलमान बनने से रोका और वैदिक धर्म को स्वीकार करने की प्रेरणा की तो उस व्यक्ति ने प्रश्न ये पूछा कि आपका शरीर जख्मी क्यों हैं? तब पण्डित जी ने उसको बचाने के खातिर गाड़ी से कूदने की सारी कथा सुनाई आगे वो व्यक्ति कोई भी प्रश्न न कर सका और कहने लगा कि वैदिक धर्म की सच्चाई में एक ही बात पर्याप्त है कि उसका प्रचारक अपने धर्म की रक्षा के लिए इतनी बड़ी भारी कुर्बानी कर सकता है। वो भाई मस्जिद से उठके वापिस चला आया और आर्य धर्म का अनुयायी बन गया। आज भी ऐसे प्रचारकों की आवश्यकता है। आज का दिन पं० लेखराम के बलिदान को याद दिला रहा है। उस खून की जो वैदिक धर्म की क्यारी को सींचने के लिए बहाया गया। थे बगीचा सूख ना जाये। इसलिए निरन्तर ऐसे इसी प्रकार के बलिदानों के खून की आवश्यकता है। तभी वैदिक धर्म की खेती लहलहाकर संसार के सब कष्टों को मिटाती हुई सुख व शांति का साम्राजय स्थापित कर सकेगी।

बोलो हुतआत्मा शहीदे अकबर पंडित लेख राम की जय।

———

जलता दीपक

(बाबू पूर्ण चन्द एडवोकेट, पूर्व प्रधान, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा)

श्रीयुत आर्य मुसाफिर पं. लेखराम की स्मृति में बलिदान दिवस बड़ी उत्साह से मनाया जाता है। उनका जीवन उनका तप और त्याग हर दृष्टि से अनुकरणीय था। साहित्य प्रेम और साहित्य का प्रकाशन उनके जीवन के बड़े महत्व के कार्य थे। उनकी स्मृति में हमें अपने कर्तव्य को भी लक्ष्य में रखना है केवल प्रशंसा करने से, उनकी जीवन की घटनाओं को याद करने से कोई विशेष लाभ उस समय तक नहीं हो सकता जब तक प्रशंसा करने वाले और सुनने वाले अपने क्रियात्मक जीवन में यथा शक्ति अनुकरण न करे। राजाओं के दरबार में प्रशंशक और कवि नियुक्त थे और पौराणिक भाई अपने इष्टदेव की प्रशंसा में बड़े आदर से कीर्तन करते हैं। मुसलमान भाई हसन हुसैन की स्मृति में मरशिय ख्वानो करते हैं। कई वर्ष हुये आगरे में शिया मुसलमानों ने १३०० वर्ष की यादगार मनाई थी। मुझे भी उसमें भाषण देने के लिए बुलाया गया था मैंने अपने भाषण में कहा कि एक जलता चिराग हजारों को रोशन कर सकता है। परन्तु वही चिराग रोशन हो सकेंगे जिनमें तेल और बती होगी और वो भी जितनी होनी चाहिए उस मात्रा में। तेल और बत्ती चरित्र निर्माण की दृष्टि से ईल्म और अमल अर्थात् (कर्म) के प्रतीक हैं। यदि एक जलते चिराग की प्रशंसा की जाए और प्रशंसा करने वालों में ज्ञान और कर्म नहीं तो क्या लाभ हो सकता है। आज भारत वर्ष में और भारत के बाहर भी अनेक बनावटी पाखण्डी मतों का प्रचार और विस्तार हो रहा है। महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश को ग्यारहवें समुदास में जिन मतों का खण्डन किया वो अब भी किसी न किसी रूप में कम या ज्यादा पनप रहे हैं और उनके अतिरिक्त अनेक गुरु मुक्तिदाता उत्पन्न हो गये हैं। ऐसे भी मत हैं या समुदाय हैं जो वाम मार्ग का स्थान ले रहे हैं। जैसे ब्रह्मकुमारी वाले या आचार्य रजनीश के मानने वाले। आवश्यकता ये है कि पं. लेखराम बलिदान दिवस के उपलक्ष्य में एक विद्वानों की समिति बना दी जाये तो ऐसे मतों का स्वाध्याय करके वैदिक धर्म की दृष्टि से उनका खण्डन करें। सत्यार्थ प्रकाश के ग्यारहवें समुदाय में प्रविष्ट (Appendir) प्रकाशित होना चाहिये आगरे में राधा स्वामी मत का मुख्य स्थान है और राधा स्वामी की शाखा दयालबाग के नाम से प्रसिद्ध है। उनका भी मुख्य कार्यालय और प्रचार केन्द्र आगरे में ही है। दयालबाग वालों ने अपनी स्वर्ण जयन्ती मनाई और उस अवसर पर अंग्रेजी में एक पुस्तक प्रकाशित की। उसमें लिखा कि महर्षि दयानन्द राधा स्वामी मत के प्रथम गुरु के चेले बन गए थे और जब इस पुस्तक का प्रथम संस्करण छपा तो सार्वदेशिक सभा की ओर से उनको एक पत्र लिखा गया कि ये बात आपने किस आधार पर लिखी और जब उन्होंने दूसरा संस्करण प्रकाशित किया तो

उसमें सार्वदेशिक सभा के उस पत्र को भी प्रकाशित कर दिया था एक उर्दू में एक पत्र की फोटो कापी भी प्रकाशित की जिसमें ये लिखा था कि मेरे सामने ऋषि दयानन्द चेले बने थे और उस के साथ ही एक तर्क में प्रकाशित किया कि ऋषि दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश के ग्यारहवें समुल्लास में राधा स्वामी मत का खण्डन नहीं किया है। औरों का किया है। इससे उपरोक्त बात की पुष्टि होती है। एक सज्जन दूसरे संस्करण की एक पुस्तक मेरे पास लाए। मैंने उसको पढ़कर उसका उत्तर 'सार्वदेशिक' में 'आर्य मित्र' में प्रकाशित कराया और वह उत्तर अनेक पत्रों में छपा। मैंने उसमें लिखा कि ऋषि दयानन्द मथुरा में गुरु विरजानन्द से दीक्षित होकर आगरा में दो वर्ष रहे। उनके जीवन चरित्र में लिखा है कि एक दिन राधा स्वामी मत की कुछ साधु ऋषि दयानन्द से मिलने आए और उनसे कहा कि हमारा मत तो अच्छा है। महर्षि ने जबाव दिया कि तुम सबसे बुरे हो ईश्वर को मानने वाले तो है तुम तो अपने गुरु को ही ईश्वर से ऊंचा मानते हो। इसी प्रकार परलोक सम्बन्धी पाखंड अनेक रूपों में प्रचलित हो रहा है और उसकी आड़ में लोक सम्बन्धी पाखंड भी प्रचलित हो रहा है। आर्य समाज में भी इसी अंश में वेदों के मोह में कुछ न कुछ पाखंड का समावेश हो गया है। आवश्यकता इस बात की है कि पं० लेखराम के बलिदान से शिक्षा लेकर आर्य समाजी अपनी आन्तरिक दशा को स्वार्थवाद से मुक्त होकर ठीक बनाएं और जैसा ऊपर लिखा है संसार के उपकार को दृष्टि से असत्य के निराकरण और सत्य के विस्तार के लिये सुन्दर और आकर्षक साहित्य का निर्माण करें। एक दैनिक पत्र ईमान के शीर्षक से निकाला जाये। विशेषांक बड़े आवश्यक हैं। परन्तु इससे भी विशेष आवश्यक क्रियात्मक जीवन और व्यवहार है। आर्य समाज क्रियात्मक दृष्टि से पवित्र आर्य बनने का यत्न करना है। आर्य समाज तो केवल सदाचारियों की संस्था है और जो शताब्दी समारोह देहली में हुआ था उसमें चरित्र निर्माण सबसे आवश्यक कार्य माना गया है। हम इस लेख को अपनी एक कविता से समाप्त करना चाहते हैं।

आप जलता जलाता लाखों को,
एक रोशन चिराग ऐसा है।
न काम अपने न काम औरों के,
दिल में जलता चिराग ऐसा है।
आग जलती हवा से बढ़ती है,
हवा से बुझाता चिराग ऐसा है।

अमर शहीद पं. लेखराम !

(ले० – श्री किशनलाल 'कुसुमाकर' आर्य नगर फिरोजाबाद (आगरा)

हे शहीदों के शिरोमणि ! धर्म के अवतार थे तुम !

दीन, हीन भागी, निराश्रित जो भटकते थे दुःखी जन।
भूख की ज्वाला बुझाने नित्य करते थे समर्पण ।
आर्य संस्कृति से विमुख होकर विवश जीवन बिताते।
पाशविक व्यवहार से पीड़ित सदा आंसू बहाते ।
कोढ़ में करुणा लिए उन निर्बलों के प्यार थे तुम। हे शहीदो···

वेद का कोदण्ड कर में, तर्क का तूणीर भर कर।
सिंह सा साहस संजोए, तुम बढ़े रणधीर बनकर ।
शर-प्रखर बरसे, विपक्षी छोड़ कर मैदान भागे ।
युक्तियों की मार से, दल डट सका कोई आगे ।
मानते लोहा सभी थे, ज्ञान के भण्डार थे तुम। हे शहीदो,

धर्म के रक्षार्थ मिथ्या मोह का संसार लागा ।
मृत्यु शैय्या पर पड़े शिशु का असीम दुलार त्यागा।
लाल जगती के बचाने, द्वंद्व सह, दिन-रात दौड़े ।
त्याग दी सब ऐषणाएं, विश्व के सुख-साज छोड़ें ।
आर्य संस्कृति-सभ्यता की साधना साकार थे तुम। हे शहीदो

ग्रन्थ थे जितने विरोधी, जो असत् की सीख देते।
पोल खोली बे-धड़क, पर बात सच्ची मान लेते ।
वेद का वरदान देते, आत्म शुद्धि विधान देते ।
बन गये जो थे विधर्मी, शुद्ध कर सम्मान देते ।
पुण्य की पावन प्रभा थे—सत्य के आगार थे तुम। हे शहीदो···

धर्म के सम्मुख अधर्मी से कभी डरना न सीखे ।
कर्म-पथ में कायरों की भांति हम मरना न सीखें ।
छल-कपट पाखण्ड का सागर कभी तरना न सीखें ।
लेखनी के कार्य में कोई कमी करना न सीखें।
दे गए सन्देश अन्तिम, प्रेम—पारावार थे तुम। हे शहीदो···

कल नहीं उनको पड़ी जो अन्धामतवादी विकल थे ।
घात में बैठे हुए थे क्रूर—कपटी—मूढ़—रूप थे तुम। हे शहीदो···
सूर्य को ढकने वहां तब पातकी घन ऐक छाया ।
दे गया अमरत्व वह, ली छीन नश्वर क्षीण काया।
दे गये बलिदान अनुपम, 'आर्य पथिक' उदार थे तुम। हे शहीदो···

शुद्धि का देवता—पंडित लेखराम जी

(श्री कन्हैया लाल आर्य ई. ४३ इन्डस्ट्रीयल एरिया, पानीपत)

महर्षि दयानन्द जी की प्रेरणा से जिन दीपकों में तेल का कार्य किया एवं जिन व्यक्तियों ने अपने को उस दीपक की बाती बना प्रकाश फैलाने में अपना सर्वस्व न्यौछावर कर दिया, उन्हीं प्रकाश पुञ्जों में से ही एक थे पण्डित लेखराम जी। जिन्होंने अपने जीवन के पल-पल को महर्षि दयानन्द जी के प्रति ऋणी समझा और संसार की हर प्रकार की कठिनाई को झेलते हुये वेद प्रचार शुद्धि एवं लेख के कार्य में एक-एक पल को लगाकर अपने जीवन को सार्थक किया।

जब हमारा ध्यान पं० जी के आरम्भिक जीवन की ओर जाता है तो एक घटना ऐसी दृष्टिगोचर होती है। यह घटना जीवन के उस काल से सम्बन्धित है जब कि आप अभी पुलिस की नौकरी में थे। इन दिनों आपका परिचय एक नवीन वेदान्ती से हुआ। जिसके विचारों का आप पर इतना प्रभाव पड़ा कि आप में वैराग्य की भावना प्रबल हो उठी। परन्तु ऐसा अधिक देर तक न हो सका और आपका मन उस प्रभाव उस पथ से हट गया और आपने मुहम्मदी मत की पुस्तकों का अध्ययन करना आरम्भ कर दिया। इस स्थिति में देख कर आपके एक मित्र महता कृपा राम जी ने पूछा कि आप आज कल मुहम्मदी मत की पुस्तकें बहुत पढ़ रहे हैं यदि मुहम्मदी मत आपको अच्छा लगा तो क्या आप मुसलमान हो जाएंगे। आपने उत्तर दिया बेशक और उदाहरण देते हुए कहा कि यदि पानी के दस घड़े रखे हों और यह न मालूम हो कि कौन से घड़े में ठण्डा पानी है तो निश्चय ही जब तक सब घड़ों में से थोड़ा थोड़ा चखा न जावेगा तब तक मालूम न हो सकेगा कि कौन से घड़े का पानीपत ठण्डा एवं मीठा है। इसी प्रकार सभी धर्मों की पुस्तकें पढ़ कर ही सच्चे धर्म का पता लगाया जा सकता है। इसी विचारधारा का ही परिणाम था कि आपको कन्हैयालाल अलखधारी के लेखों को पढ़ने का अवसर मिला और आप आर्य समाज की ओर आकर्षित हुए।

पंडित लेखराम जी का लक्ष्य था शुद्धि एवं वेद प्रचार। जिनके लिए आप कभी भी किसी कठिनाई अथवा असुविधा को आड़े नहीं आने देते थे। यदि कभी ऐसी परिस्थिति आई भी तो आपने समाज के कार्य को अधिक महत्व दिया, यहां तक कि १८ जून १८७५ को जब आप कोटे में उत्सव पर थे तो आपको अपने चाचा जी से छोटे भाई की मृत्यु का समाचार मिला जिसे सुन कर भी आप घर न पहुंचे अपितु पत्र लिखा कि यदि परिवार वाले आपको आज्ञा दें तो आप जुलाई के अन्त तक कोट रहें अन्यथा पत्र आने पर सूचना देंगे।

ऐसे साहस एवं धर्म प्रचार के प्रति लगन का ही यह परिणाम होता है कि मनुष्य कठिन से कठिन कार्य कर पाने में सफल होता है। इसी बल पर ही आपने शुद्धि का कार्य किया। जहां कहीं से भी आपकी खबर लगी कुछ लोग मुसलमान व ईसाई होने जा रहे हैं अथवा कुछ मुसलमान व ईसाई शुद्ध हो वैदिक धर्म में आना चाहते हैं आप कठिन से कठिनत्तर परिस्थिति में भी वहां पहुंचे। एक बार आप शिमले में आप को मुसलमानों का कड़ा मुकाबला करना पड़ा और आपको धमकियां भी दी गई परन्तु आप अडिग रहे। एक व्याख्यान में जब आप मुसलमान मत का खण्डन कर रहे थे तो एक युवक ने चीख कर कहा 'काफिरों को काटने वाली मुहम्मदी शमशीर को मत भूलना।' आप एक मिनट के लिये शान्त हो गए। फिर जिधर से आवाज आई थी उधर आंख फेर कर कहने लगे 'मुझे मुहम्मदी तलवार की धमकी देता है। मैंने अधर्मी निर्बल मनुष्यों से डरना नहीं सीखा। जानते नहीं कि मैं जान हथेली पर लिये फिरता हूं।'

पंडित जी को आर्य समाज के लिए लगन थी, चिन्ता थी और उसे बढ़ाने की इच्छा थी। तभी तो एक बार जब आप करनाल में काफी दिन के लिए ठहरे, आप उन दिनों टांग के फोड़े से पीड़ित थे, आपने वहां के सदस्यों से अनुरोध किया कि वो आपको किसी आर्य डाक्टर के पास ले चलें जिस आप अपना फोड़ा दिखला सकें। आपको उस समय घोर निराशा हुई जब आपको यह मालूम हुआ कि कोई भी डाक्टर आर्य समाजी नहीं है। तब आपने कहा कि जिस आर्य समाज ने डाक्टरों स्कूल के अध्यापकों एवं विद्यार्थियों को आर्य नहीं बनाया तो उसने क्या खाक किया। जड़ को सींचने से ही वृक्ष हरा होता है।

लिखने को तो बहुत कुछ लिखा जा सकता है। पंडित जी की के जीवन की एक एक घटना मोतियां समान थी। अधिक न लिखते हुए एक घटना की ओर आपका ध्यान अवश्य खींचना चाहूंगा जो कि पंडित जी के पूर्ण जीवन का सार कही जा सकती है। एक बार आप देहलोसेपंजाब की ओर गाड़ी से आ रहे थे उसी डिब्बे में जिस में पं० दीनदयाल जी बैठे हुये थे। परिचय होने के बाद आपने कहा कि "पं. दीन दयाल जी आप हमें कोसने में तो बड़े बहादुर हो लेकिन इस्लाम आपके धर्म की जड़ें खोदने में व्यस्त हैं और आप चुप बैठे हैं।" तब पं. दीन दयाल जी ने उतर दिया कि "यह काम हमने आपके सुपुर्द कर रखा है, जब तक आर्य मुसाफिर जीवित हैं तब तक हमारे धर्म की जड़ें कौन खोद सकता है।" कोई शक नहीं यह बात शत प्रतिशत सही थी। जब तक पंडित लेखराम जी रहे विधर्मियों का डटकर मुकाबला किया। अनेकों विधर्मियों को शुद्ध किया और इसी शुद्धि कार्य को करते हुए आपने प्राणों को त्यागा। आप सच्चे आर्यों में महर्षि दयानन्द जी के बाद शुद्धि के देवता थे।

———

अटल विश्वास का देवता

(श्री त्रिलोक चन्द्र शास्त्री आर्योपदेशक, कादियां पंजाब)

आर्य मर्यादा, साप्ताहिक जालन्धर के उत्साही योग्य नवयुवक व्यवस्थापक श्री वीरेन्द्र भारती जी ने प्यार भरे आग्रह से कहा है कि आर्य मर्यादा से शहीदी अंक के लिये अमर शहीद पं. लेखराम जी आर्य पथिक के सम्बन्ध में जरूर लिखूं। इस प्यार भरे आदेश पर कुछ लिख रहा हूं—

आर्य समाज एक विशाल आन्दोलन है। इस के स्वर्णिम इतिहास में बलिदानों का चित्र अध्याय २ में मिलता है। इन तमाम बलिदानी देवों से बड़ी चेतना, प्रेरणा मिलती है। अमर-शहीद पण्डित लेखराम जी आर्य मुसाफिर का अमर बलिदान भी विचारों में बहुत बड़ा संदेश भर देता है। लेखराम नगर कादियां के समाज के सज्जन निरन्तर ३५ वर्षों से भी अधिक समय से इस नगरी में अमर शहीदी मेला बड़ी आस्था से मानते चले आ रहे हैं। समय-२ पर इसमें दोनों सभाओं के स्तम्भ मान्यवर स्व. पं. ठाकुर-दत्त जी अमृतधारा, स्व. मान्यवर महाशय कृष्ण जी, महात्मा आनन्द स्वामी जी, बाबा गुरु मुख सिंह जी, स्वामी समर्पणनन्द जी आदि पधार कर अपनी प्रेरणा देते रहे। इस बार प्रसन्नता है कि यह सभा के माध्यम से सम्पन्न हो रहा है। श्रीयुत वीरेन्द्र जी सभा मन्त्री इस नगर में सभा द्वारा समारोह से इस को मनाने के प्रबन्ध में जुटे हैं। यह बहुत ही प्रसन्नता है।

अमर शहीद पं. लेखराम जी का जीवन एक चेतनाप्रद पुस्तक है बालपन में श्रद्धा का यह

रूप थे। मन में कुछ शंकाएं थीं। देवदयानन्द जी की सेवा में पहुंचे और तब से उनके ही हो गये। अमर शहीद तो वेदों के अटलविश्वासी थे, प्रभु के अनन्यभक्त थे। देवदयानन्द जी के अमर जीवन से आस्तिकता, निर्भयता तथा वेद विश्वास का सन्देश लिया।

अमर शहीद सीधे कादियां पहुंच गये और श्री मिर्जा साहिब से कहा कि मैं आपके घर आ गया हूं—मुझे अपना कोई चमत्कार तो दिखलाओ। श्री पण्डित जी इस नगरी में लगातार दो महीने तक रहे। बार-२ पुकारते रहे किन्तु कोई भी सामने नही आया तथा न किसी ने चमत्कार ही दिखाया। उन दिनों अमर शहीद ने यहां पर आर्य समाज की स्थापना की यह बहुत बड़ी विजय थी। फिर वेद प्रचार के कार्य के लिये बाहर चले गए। इसके बाद अमर शहीद के जीवन की शहादत के बारे में नाना प्रकार की पेशगोई की गई। वह तो सर्वथा असत्य सिद्ध हुई। हां एक पापी, नीच, कृतघ्न एवं कायर व्यक्ति ने जिस नीचपन के साथ उनके घर जाकर उनके पेट में छूरा मार कर उनको शहीद किया—वह एक अलग विषय है। इस विषय पर आर्य जगत के महान् तपस्वी, लेखक, अर्बी संस्कृत कालेज अमृतसर के पूर्व आचार्य देवप्रकाश जी अर्बी फारसी फाजिल ने एक विशेष पुस्तक—'दाफे-उल्ल् अवहाम' लिख कर कादियां की जमायत का सदा के लिये मुख बंद कर दिया। इस पुस्तक का आज तक कोई उत्तर नही दे सका। आर्य समाज के साहित्यिक इतिहास मे आचार्य जी की यह पुस्तक भी एक अमर पुस्तक है। इसके साथ-२ आर्य समाज के प्रकाण्ड विद्वान् शास्त्रार्थ महारथी श्री पं. शान्ति प्रकाश जी ने वर्षों तक निरन्तर प्रति वर्ष यहां के अमर शहीद मेले में इस पेशगोई के विषय पर बहुत ही खोज-पूर्ण और मौन करा देने वाले भाषण देकर आह्वान भी किया।

अमर शहीद पं. लेखराम जी का बलिदान सारे जनजीवन को बहुत बड़ी प्रेरणा देता है। उनकी आस्तिकता, निडरता और वेदश्रद्धा सभी के लिये चेतना का महान् स्रोत है। वह अपना सभी कुछ आर्य समाज को भेंट कर गये, अपना शरीर भी आहुत कर दिया। उनका बलिदान पर्व सारे समाज को समाज के लिये बलिदान का सन्देश देता है। क्या हम इस देवता से शिक्षा लेगे या नही? इस विषय में एक बात सारे आर्य जगत् से कहानी है और जोरदार शब्दों में कहानी है। आर्य समाज को टंकारा, मथुरा, अजमेर, करतारपुर के महान् स्मारकों पर गौरव है। प्रति वर्ष यहां भारी समारोह होते हैं। जनता से प्रेरणा के ये सभी केन्द्र हैं। बहुत उत्तम बात है। किन्तु आर्य समाज ने क्या कभी अमर शहीद पं. लेखराम जी आर्य-पथिक के बलिदान पर्व पर यह भी सोचा है कि क्या इनका भी स्मारक है या नही? लेखराम नगर कादियां का समाज, जनता गत पैंतीस, चालीस वर्षों से यहां पर बलिदान मेला मनाते चले आते हैं। इस वर्ष यहां इस शहीदी पर्व पर इस बात का निश्चय करना चाहिये कि प्रति वर्ष यहां पर सभा के माध्यम से अमर शहीद मेला मनाया जाए। अब यह कार्य सभा सम्भाले तथा यहां पर उचित अमर शहीद स्मारक भी स्थापित करे।

———

वैदिक रीति और सादगी से विवाह

श्री पं. त्रिलोक चन्द्र शास्त्री आर्योपदेशक पंजाब की सुपुत्री विजयश्री एम. ए. बी. एड का शुभ विवाह प्रो. वेद सुमन जी वेदालंकार एम. ए. सुपुत्र श्री राम प्रसाद जी करनाल के साथ कादियां में पूर्ण वैदिकरीति से सम्पन्न हुआ। बरात में २२ सज्जन आये इनमें चण्डीगढ़ के माननीय श्री कृष्ण लाल जी डी. एस. पी करनाल के डा. गणेश दास जी, अम्बाला के चौ. देसराज जी एडवोकेट आदि भी साथ पधारे। बरात का कादियां नगर की जनता एवं आर्य समाज ने बड़ा स्वागत किया। इसमें न भंगड़ा था, न आतिशबाजी थी और न सेहरा पढ़ा गया। स्वागत सम्मान में कमी नहीं थी। विवाह संस्कार आर्य समाज मन्दिर में श्री पं. गंगाराम जी शर्मा ने सम्पन्न कराया। युगल जोड़ी को श्री डी. एस. पी. जी., डा. गणेशी दास जी एवं समाज सदस्यों ने अपना आशीर्वाद दिया। देहली शताब्दी पर पारित प्रस्ताव अनुसार विवाह आर्य समाज मन्दिर में किया गया। बाहर से पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी, सभा मन्त्री श्री वीरेन्द्र जी एम. ए., प्रिंसिपल जावेद जी जालन्धर, प्रिंसिपल बहल जी, प्रिंसिपल विद्यावती आनन्द जी, प्रि. महता जी, प्रिंसिपल त्रिलोकी नाथ जी, प्रि. हंस स्वरूप जी, मान्यवर मुंजाल जी, आदि महानुभावों के आशीर्वाद प्राप्त हुये। इनके लिये हार्दिक कृतज्ञता प्रकट की गई।

—आर्य प्रतिनिधिसभा पंजाब कार्यालयाध्यक्ष श्री पं. ओम प्रकाश आर्य की सुपुत्री कु. सुमेधा का शुभ विवाह सहारनपुरमें चि. विजयके साथ वैदिक रीति से सम्पन्न हुआ। आर्य प्रतिनिधि उत्तर प्रदेश के मन्त्री श्री धर्मेन्द्र सिंह ने भाग लिया पंजाब सभा के मन्त्री श्री वीरेन्द्र ने इस अवसर पर अपनी शुभ कामनायें भेजीं।

अमर है लेखराम का नाम

अमर है धर्म जाति के प्राण,
अमर है वैदिक धर्म महान्,
अमर है कीर्ति ध्वजा अभिराम,
अमर है वीरों का बलिदान,
गगन में रवि का जब तक स्थान,
धरा पर शेष पुण्य का ज्ञान,
अटल है हिमगिरि की चट्टान,
सुनाती गंगा गौरव गान,
सत्य का जब तक जीवन शेष,
मनुज में मानवता का लेश,
हृदय में गूंजेगा सन्देश,
रुकेगा कैसे चिर अभियान,
पूछते रक्त बिन्दु हैं मौन,
देखता हमको है वह कौन.
बताओ अन्यायी था कौन,
व्यर्थ क्या होता है बलिदान ?
चढ़ा है पाप ताप पर रंग,
सजे हैं दानवता के ढंग,
उजड़ता धर्म ज्ञान का अंग,
बचाये कौन ! करे बलिदान ?
प्रश्न है साथ, किन्तु आह्वान,
अगर है इष्ट वीर का मान,
न चल सकता सोने से काम,
उठाओ वैदिक शस्त्र महान् ?
स्वप्न यदि करने हैं साकार,
लक्ष्य को देना है आकार,
व्यर्थ के छोड़ सभी व्यापार,
हमें करना है युग निर्माण,
उठो हे वीर करो संघर्ष,
जगत् में छितराने को हर्ष,
चलो युग मांग रहा बलिदान,
उठाओ वैदिक पुण्य विहान !

—राकेश

लेखराम के शिष्यों से

(लेखिका—श्रीमती सावित्री देवी जी देहली)

भारत वर्ष में बहुत से पर्व और त्योहार मनाने जाते हैं तथा बहुत से दिवस किन्हीं विशेष महा पुरुषों की स्मृति में मनाये जाते हैं। पर्वों के मनाने से हमें उस ऋतु का विशेष ज्ञान होता है जिस २ ऋतु में वह पव आता है। उसे मनाने से हम अपनी प्राचीन भारतीय परम्परा से परिचित होते हैं कि हमारे पूर्वजों का वैदिक जीवन कैसा था, जैसे श्रावणी की विशेषता वेदाध्ययन का प्रारम्भ करना है। दशहरा आर्य क्षत्रियों विशेष कर मर्यादा पुरुषोत्तम रामचन्द्र जी के क्षात्र बल तथा रावण जैसे पापियों को क्या दण्ड मिलना चाहिए ? इस का ध्यान दिलाता है।

दिवाली को जहां हम ऋतु परिवर्तन होने पर घरों की सफाई करके कूड़ा करकट बाहिर फैंक देते हैं वहां हमें यह शिक्षा मिलती है कि वर्ष भर में कम से कम एक बार तो आत्म शुद्धि भी अवश्य करें और आत्म शुद्धि करते समय अवगुण रूपी कूड़ा करकट को भी अपने हृदय रूपी गृह से बाहिर फैंक दें। जैसे गृह शुद्धि से शरीर स्वस्थ रहता है इसी प्रकार आत्म शुद्धि से आत्मा बलवान् तथा स्वस्थ रहता है अतः प्रत्येक वर्ष नई स्फूर्ति का द्योतक है। कई पर्व तो महापुरुषों की घटनाओं के साथ ऐसे जुड़ गए हैं कि उन पर्वों में मुख्यतया महापुरुषों की स्मृतियां हो जाती हैं जैसे दिवाली को महर्षि दयानन्द जी का निर्वाण दिवस, बसन्त को हकीकतराय बलिदान दिवस और शिवरात्रि को ऋषि बोधोत्सव आदि।

पर्व जहां हमें ऋतुओं का ज्ञान कराते हैं वहां महापुरुषों की स्मृति दिवस उन दिव्य आत्माओं के विशेष गुणों का निर्देशन करते हैं। यह दिवस मनाये ही इसी उद्देश्य से जाते हैं कि हम भी उनके गुणों का बखान करें जिन लोगों को उन का ज्ञान नहीं, उन्हें बताएं तथा स्वयं भी वैसा ही बनने का प्रयत्न करें, देखें कि उनके आत्म बलिदान से हमें क्या सन्देश मिलता है और उस सन्देश को हम कहां तक पूरा कर रहे हैं।

६ मार्च सन् १८९७ ई० को धर्मवीर पं० लेखराम का बलिदान हुआ था। पण्डित जी के जीवन की ओर यदि हम ध्यान दें तो हमें बहुत शिक्षा मिल सकती है। पण्डित जी के बाल्यकाल के समय शिक्षा का आज कल की भान्ति प्रबन्ध नहीं था उन्होंने मौलवी से फारसी भाषा का ज्ञान प्राप्त किया। १५-१६ वर्ष की आयु में उनको गुरुमुखी में छपी गीता पढ़ने का सुअवसर प्राप्त हुआ, यहीं से धार्मिक ग्रन्थों के पढ़ने की रुचि हो गई। पढ़ते २ श्री स्वामी जी के ग्रन्थों को पढ़ कर वैदिक धर्म की ओर आकर्षण बढ़ा। स्वामी जी के दर्शन करके मन के सब संशय मिटकर वैदिक धर्म की उन्नति में तन, मन व धन लगा दिया। जिस सत्य की खोज में इतने वर्ष अध्ययन किया, सत्य के मुख ऋषि दयानन्द से उस सत्य को प्राप्त कर उस को कहने में जीवन भर कभी भयभीत नहीं हुए पीछे नहीं रहे। सरकारी नौकरी में रहते हुये भी वैदिक धर्म के प्रचार में कमी नहीं आने दी। पण्डित जी दृढ़ विचारों के मनुष्य थे जो निश्चय एक बार कर लिया उसी पर अटल रहे। अन्त

में ऋषि द्वारा चलाये हुए यज्ञ में अपने आप को आहुति रूप में भेंट कर गए। आज ७८ वर्षों से हम पं. लेखराम स्मृति दिवस मना रहे हैं और देखते हैं कि वैदिक धर्म के सच्चे अनुयाई किस प्रकार लोहे से कुन्दन बन जाते हैं। आज जब हम स्वतन्त्र हो चुके हैं शिक्षा की प्रत्येक सुविधा हमें प्राप्त है हमारे बच्चों के लिए आर्य शिक्षा-णालय भी सुलभ हैं तो भी मैं देखती हूं कि वह पण्डित लेखराम जैसी भावना हमारे अन्दर नहीं रही। बचपन में पण्डित जी के विषय में अपनी पाठशाला में 'लिफाफा हाथ में लाकर दिया जिस जिस वक्त माता ने, लगे झट खोल कर पढ़ने बिया है छोड़खाने को' यह भजन हम सब बड़े प्रेम से गाती थीं तो सचमुच बड़ा ही जोश आ जाता था। आज भी मैं तो उसी दिन की प्रतीक्षा में हूं जबकि हम आर्य नर और नारियों के जीवन का मुख्य उद्देश्य हो वैदिक धर्म का प्रचार होगा फिर चाहे कितने ही कष्ट क्यों न उठाने पड़ें। आज वैदिक धर्म के सभी अनुयायी अनुभव करते हैं कि आर्य समाज की अग्नि उतनी प्रदीप्त नहीं रही, मन्द पड़ती जा रही है। उन भाई और बहिनों से मेरा निवेदन है कि यह अग्नि अब आहुति चाहती है। जब पण्डित लेखराम जी, स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज, महाशय राजपाल जी आदि अपनी २ आहुतियां डालते रहे यह अग्नि बढ़ती ही गई। बिना हवि के अग्नि कब तक प्रज्ज्वलित रह सकेगी? उठो पण्डित लेखराम की स्मृति में हम भी अपनी हवि देने की प्रतीक्षा करें और वेद के शब्दों में—

उतिष्ठ अब पश्यत इन्द्रस्य भागम् ऋत्वियम्।
यदि श्रातं जुहोतन यद्यश्रातं ममत्तन। ऋग्वेद
१०।१७९।१

यह मन्त्र भी हमें यही शिक्षा देता है कि उठ खड़े होओ। सावधानी से देखो इन्द्र के अनुकूल दिये जाने वाले हवि (बलिदान) के भाग को देखो, यदि यह हवि पक चुकी है तो इसका हवन कर कर दो और यदि नहीं पकी तो इसे और पकाते जाओ?

हमारी हवि कच्ची है या पक्की यह तो प्रश्न पैदा होता है जब हम दृढ़ निश्चय कर लें कि हमें ऋषि द्वारा प्रज्वलित अग्नि में आहुति देनी ही है तब यह देखें कि हवि कच्ची न हो फिर इसे पकाने का प्रयत्न करें। परन्तु आज यह भावना हमारे में से लोप होती जा रही है। प्रभु से प्रार्थना है कि हमें वह शक्ति प्रदान करें। ताकि हम अपने कर्तव्य का पालन कर सकें और अपने बिछुड़े भाईयों को पुनः गले लगाने का कार्य बहुत तेजी से कर सकें तथा पण्डित लेखरामजी की अन्तिम अभिलाषा कि लेख का कार्य बन्द न हो उसे आगे बढ़ाते जाएं।

आर्य वीरों के प्रति आह्वान

(ले. श्री लाखन सिंह भदौदिया साहित्यालंकार, एम. ए.)

(१)

ऊषा खड़ी रक्त-अभिषेक करने के लिये,
खगों के स्वरों में सुनो जागृति की टेर है ।
समय समीर झकझोर रही बार बार,
दीर्घ मूचता में हुई युगों की अबेर है ।
जब रहा, तब रहा बुद्धि का ही फेर बन्धु,
झूठ बात है कि रहा काल का ही फेर है ।
भाग्य का ही फेर बता चादरें न तानों मित्र,
उठो उठो अरे अंगड़ाई की ही देर है ।

(२)

विश्व की निराश दृष्टि तुम को निहारती है,
नूतन प्रकाश भरो, दीपक अमन्द का ।
वेद का प्रकाश, चेतना की चन्द्रहास लिये,
गाते हुये गीत मीत सविता के छन्द का ।
कूद पड़ो युद्ध हेतु तम की अनी को चीर,
ध्वस्त करो अनूप, अभाव व्यूह द्वन्द का ।
बाल बांका कौन कर सकता है तुम्हारा बन्धु,
दायां हाथ शीश पर है ऋषि दयानन्द का ।

धर्म-शहीद पं. लेखराम

(श्री वीरेन्द्र भारती)

मिर्जा साहिब के ढोल का पोल किस से खोला उनके चमत्कारों का भण्डा किस ने फोड़ा ?

कुरान को ईश्वरीय वाली कहलाने वालों के प्रमाद को किसने झुठलाया ?

वेद की तान भरी वीना से आर्य जाति को किसने बचाया। इन सब प्रश्नों का उत्तर है कि धर्म वीर पं. लेखराम ।

उसी धर्म वीर पं. लेखराम जी का बलिदान दिवस ६ मार्च को बड़ी धूमधाम से मनाया जा रहा है ।

आर्य समाज की वेदी पावन एवं सत्य सनातन वैदिक धर्म का प्रसार करती है। इसी पावन आर्य समाज रूपी भट्ठी में जो भी आया सोना बन कर निकला। धर्म वीर पं. लेखराम भी उन्हीं में से एक थे। पं. लेखराम क्रान्तिकारी की पुनीत आत्मा था। वे सही अर्थों में ऋषि के उद्देश्य की पूर्ति करते हुए ही पुलिस की नौकरी करते थे। जब देखा कि सत्यपथ से हटाया एवं दबोचा जा रहा है तो धन, वैभव तथा इतनी बड़ी नौकरी को छोड़ दिया क्योंकि उनके दिलों दिमाग में ऋषि मिशन तथा सत्य का प्रभाव था।

लोगों पर सह-ज्ञान का प्रकाश देना आर्य जाति का महान कार्य है, इसी कार्य को मूर्त रूप देने के लिए पं. लेखराम भी मैदान में निकल पड़े। एक बार घर में पं. जी खाना खा रहे थे कि एक तार आई जिसमें लिखा था कि हिन्दुओं को लालच देकर मुसलमान उनको अपने धर्म में प्रविष्ट करा रहे हैं उसी समय कमर कस ली, उस वीर ने और उसी जगह जाने को तैयार हो गये जहां हिन्दु मुसलमान होने वाले थे। चलती गाड़ी भी मेरे इस वीर की गति को गतिहीन न कर सकी। हिन्दु झुके मुसलमानों को रुकना पड़ा और कुरानियों को हाथ मलना पड़ा। चारों ओर जय-जयकार धर्म प्रियता का चक्र छोड़ती थी। अब तो लेखराम का सितारा चमचम करता अहमदियों के सिद्धान्तों को धमकाने लगा। मुक्ति के धनी दिमाग से क्या भ्रममूलक भ्रम भयभीत भागे नहीं। मिर्जा साहिब के ढोल का पोल उन्होंने खोला ? उनके चमत्कारों का भण्डा फोड़ा और कुरान को ईश्वरीय बाणी कहलाने वालों के प्रमाद को झूठला दिया वेद की तान भरी वीना से आर्य जाति को जगा दिया ?

कादियां नगरी में आकर मिर्जा साहिब के चलाये दम्यों पर वैदिक मन्तव्यों का बम्ब फैंका, आर्य समाज अपने कर कमलों से स्थापित किया। इस वेद के परमोपासक भक्त को तर्क एवं मुक्ति से कोई विजय न कर सका। मुस्लिम मत फीका दिखाई देने लगा । मिर्जईयत को झूठलाना इनका ही कार्य था। वीर की वीरता

रग लाई हिन्दु हृदय से दृढ़ थे। अब तर्क एवं मुक्ति का राज्य है। पं लेखराम जी का हृदय हिन्दुओं के प्रति प्रेम वाले थे।

विरोधी जान गये कि तर्क के प्रहार से उनके किले छिन्न भिन्न हो जावेंगे। एक मुसलमान को मारने के लिए भेजा। कृतघ्नता बढ़ गई उस धर्मान्ध ने प जी का पानी एवं भोजन खाया। उसने सत्यवृती को छूरों से घायल कर दिया परन्तु उस वृती ने अपने वृत को नही छोड़ा, वह धर्मी तो छुरा खा गया पर धर्म नही छोड़ा। एक कवि के शब्दों में :—

लेखराम सा वीर बहादुर
वीर गति नू पा गया
छुरिया विच कलेजे खाके
जिन्दडी घोल कमा गया ।

आर्य समाज का पताका ऊंची रही इस के अपना जीवन बलिदान कर दिया।

पण्डित लेखराम जी ने तो धर्म के बचाव के लिए तथा पाखण्डों के नाश के लिए अधर्मी लोगों का मुकाबिला किया, आओ! उनके बलिदान दिवस पर हम उनसे प्रेरणा लें कि हम लेख का क्रम बन्द नही होने देगे, धर्म की रक्षा के लिए अपना बलिदान तक देने को तैयार हो जाएंगे और निराशा को छोड़ कर आर्य बनकर, वेद मार्ग अपनाएगे तो कोई कारण नही कि हम अपनी मन्जिल को प्राप्त न कर सकें। आज भी हमे बुला रही है ऋषिवर दयानन्द की गुरु गंभीर वाणी, पुकारता है लेखराम के शरीर के खून की फुहारे, तुम्हे गुहराती है श्रद्धानन्द की बलिदान बेला, सुनो इन सबकी पुकार सुनो, किनारे पहुचाने के लिए पूरी शक्ति से हाथ पैर चलाओ, तब सफलता स्वय चरण चूमेगी और यही आज के दिन धर्म वीर प. लेखराम को सच्ची श्रद्धांजलि होगी। एक कवि ने शब्दों में :—

ठोकर अगर किसी पत्थर से खाई है मैंने
मन्जिल का निशां भी तो उसी पत्थर से मिला है।

———

'वेदों का उदय भी सृष्टि के साथ हुआ'

वाराणसी, — (वि० प्र०) "पुराने ऋषियो की परम्परा मे महर्षि दयानन्द ने भी वेदो के प्रति आस्था प्रकट की। सृष्टि मे व्याप्त ज्ञान और वेद ज्ञान मे कोई विरोध और सघर्ष सम्भव नही है।"

उपरोक्त विचार यहा पर हो रहे आर्यसमाज शताब्दी समारोह के अवसर पर आयोजित वेद सम्मेलन की अध्यक्षता करते हुए स्वामी सत्यप्रकाश जी ने व्यक्त किये।

स्वामी जी ने आगे कहा कि स्वामी दयानन्द ने वेदो को जीवन की प्रेरणा की वस्तु बताया अर्थात आधिभौतिक जगत मे भी और परमार्थ जगत मे भी वेद की दृष्टि मेससार का रचयिता ईश्वर ब्रह्म से भिन्न कोई सत्ता नहीं है।

उन्होने कहा कि वेद का पूर्ण प्रभाव तभी सम्भव है, जब इसे भी जगत के समान ईश्वर की रचना माना जाए।

वह भी पुराने ऋषियो की परम्परा मे थे। वेद के सम्बन्ध मे प्रत्येक युग मे नई उलझने प्रस्तुत की जाती रही है और आज के युग मे भी वैसा ही ही रहा है। पाश्चात्य पाडित्य भी हमे अध्ययन की एक नई पद्धति की ओर इ गित कर रहा है।

आर्य पथिक पं. लेखराम

(रचयिता—कवि कस्तूरचन्द "घनसार" कवि कुटीर पीपाड़ शहर (राज.))

(१)

दयानन्द देव के सैनानी, लेखराम आर्य,
वही लक्ष लो के देव, किया काम देश में ।
प्रचार की तड़फ रही थी भर-जीवन में,
जीवन लगाया देव, किया नाम देश में ।।
स्वामी जी का सपन-साकार करने की रही,
आर्यों के प्रकाण्ड नेता अभिराज देश में ।
अहर्निश काम की थी लग्न रही सुअपूर्व,
'घनसार' बनाने को आर्य-धाम देश में ।।

(२)

आर्य्य थे पथिक आर्य पथ को बताने हेतु,
लेखराम पंडित चलाई आर्य लेखनी ।
कुपथ के राही लोग, कुस्तिक भावी बन,
सुपथ को छोड़ चले, छद्म भरी छेखनी ।।
सर्व सुख त्याग रहे, आर्य राही, बन आर्य,
आर्यों को जगाते रहे, द्वेष की न देखनी ।
वही था प्रकोप-पोप, छाए थे भ्रान्ति के भूप,
"घनसार" लेखराम के भी साथी एकनो ।।

(३)

विषम विशाल रूप, अविद्या की आंधी चढ़ी,
लेखराम, अकेले सुपथ को न छोड़ा था ।
अरियों की अधिक सेना, देखती कुदृष्टि भरी,
आर्य वीर-धीर कदम-आगे जोड़ा था ।।
आपत्ति अनन्त सही, तितिक्षा सहन कर,
आर्य्य पथिक, आर्य पथ से न मोड़ा था ।
'घनसार' लेखराम, करके दिखाया काम,
आर्य शास्त्र ले के गढ़ जालियों का तोड़ा था ?

(३)

धर्म के थे धुरन्धर धीर-ध्यानी शक्ति धर,
वैदिक विचार ओत-प्रोत ज्ञान वाला था !
मृत्यु से न डरा खरा, आर्य अखाड़ें लड़ा,
भय न तनिक रखा, दृढ़ ध्यान वाला था ।।
कर्मठ कार्य कर्त्ता देव, विशाद विचार साथ
वैदिक सुधर्म सत्य अभिमान वाला था ।
लेखराम, धनसार, अमर कहानी रखी,
स्वामी के परम शिष्य वेद विद्यावान था ।।

अमर बलिदान

रचयिता : —कविवर "प्रणव" शास्त्री एम० ए० फीरोजाबाद, (उ० प्र०)

अमर बलिदान वीरों का सदा ही रंग लाता है ।
कि दाना खाक में मिलकर नये अंकुर उगाता है ।। १ ।।

सचाई छिप नहीं सकती कभी झूठे उमूलों से ।
कि खुशबू आ नही सकती कभी कागज के फूलों से ।
यही सिद्धांत जगती में चला सदियों से आता है ।। २ ।।

मशालें सत्य की जलती अंधेरे को मिटाने को
प्रपञ्ची, छल, फरेबों की दीवारां के हटाने को ।
प्रगति का पन्थ पथिकों को तभी तो पुण्य पाता है ।। ३ ।।

उदित हो सूर्य की किरणें सहस्रों भूमि पर नाचीं
पिघलते स्वर्ण के रंग में धरित्री सुन्दरी रांची ।
न तो भी कुछ उलूकों को कहीं दिनमान आता है ।। ४ ।।

न हारा सत्य धरिणी में कभी मिथ्या प्रहारों से
हिमालय क्या हिला सोचो कभी झञ्झा विचारों से ।
खड़ा यों सत्य वंशो धर विजय वंशी बजाता है ।। ५ ।।

हजारों विघ्नवारों में नहीं मुख सत्य से मोड़ा
दिये हैं प्राण वीरों ने नहीं पर सत्य छोड़ा ।
यही इतिहास संसृति में उमंगें नव उगाता है ।। ६ ।।

इसी की श्रृंखला में लेखराम का नाम आया है
बजाने धर्म का डंका न शंका मन में लाया है ।
"प्रणव" उस वीर को वन्दन हमारा मन मनाता है ।। ७ ।।

———